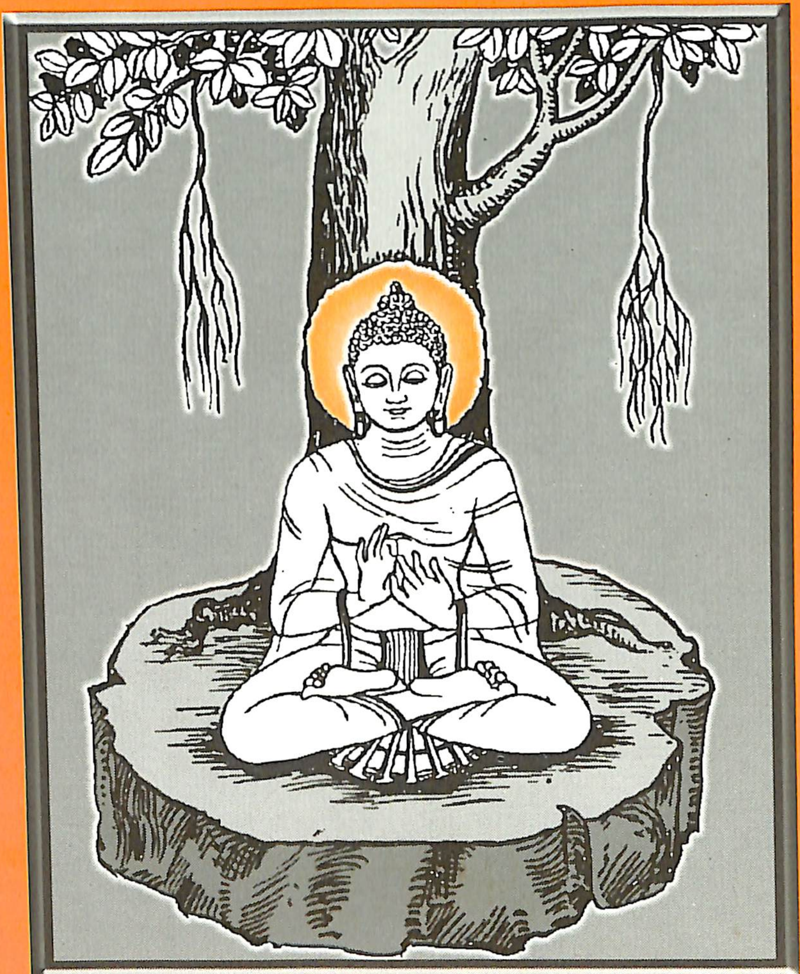
बौद्धभारतीग्रन्थमाला-47

सुत्तपिटके

# अङ्गुत्तरनिकायपालि

[ हिन्दी-अनुवादसहिता ]

( छक्क-सत्तक-अट्ठकनिपाता )



प्रधान सम्पादक

स्वामी द्वारिकादासशास्त्री

बौद्धभारतीग्रन्थमाला—४७

Bauddha Bharati Series—47

सुत्तपिटक

# अङ्गुत्तरनिकायपालि

[ हिन्दी अनुवाद सहित ]

(षट्क-सप्तक-अष्टकनिपात)

[ तृतीय भाग ]

प्रधानसम्पादक

स्वामी द्वारिकादासशास्त्री

बौद्धभारतीग्रन्थमाला–४७

Baudha Bharati Series-47

सुत्तपिटके

# अङ्गुत्तरनिकायपालि

[ हिन्दी अनुवादसहिता ]

( छक्क-सत्तक-अट्ठकनिपाता )

3

प्रधानसम्पादक

स्वामी द्वारिकादासशास्त्री

Bauddha Bharati Series-47

The

# ANGUTTARANIKĀYAPĀLI

## (Chakka -Sattaka-Aṭṭhaka Nipāta)

*with*

HINDI TRANSLATION

Vol. - 3

Edited & Translated By

*Swāmī Dwārikādās Śāstrī*

**BAUDDHA BHARATI**

**Varanasi**

B. 2545] **2002** [V. 2058

बौद्धभारतीग्रन्थमाला-४७

सुत्तपिटक

# अङ्गुत्तरनिकायपालि

[ हिन्दी अनुवादसहित ]

( षट्क-सप्तक-अष्टकनिपात )

तृतीय भाग


सम्पादक एवं अनुवादक

*स्वामी द्वारिकादासशास्त्री*



बौद्धभारती

वाराणसी

बु० २५४५] सन् २००२ ई० [वि० २०५८

प्रकाशक :
**बौद्धभारती**
पोस्ट बाक्स नं. : १०४९,
वाराणसी-२२१ ००१. (भारत)

Publisher by :
**Bauddha Bharati**
Post Box No. : 1049,
Varanasi-221 001 (India)

E-mali :· bauddhabhrti@satyam.net.in



सहसम्पादक :
*धर्मकीर्तिशास्त्री*
*चन्द्रकीर्तिशास्त्री*

**प्रथम संस्करण : २००२ ई.**

**First Edition : 2002 E.**

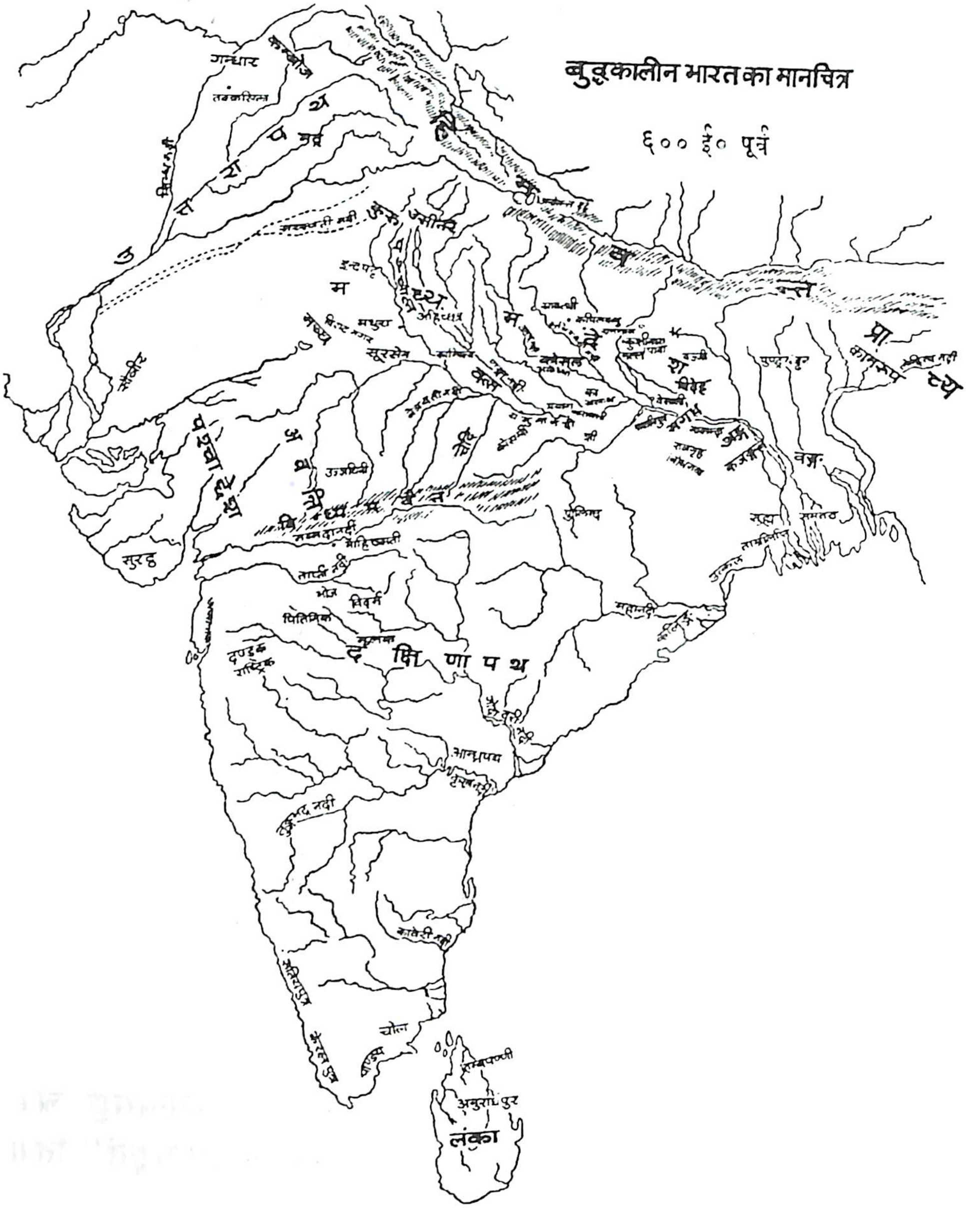
**Price Rs. 2250/- (In 4 Vol's set)**

मुद्रक :
**साधना प्रेस**
वाराणसी-२२१ ००२

*Printed By :*
**Sadhana Press**
Varanasi- 221 002



''एसोहं, भन्ते, भगवन्तं सरणं गच्छामि, धम्मं च, भिक्खुसङ्घं च।
उपासकं मं, भन्ते, भगवा धारेतु, अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणङ्गतं'' ति॥




बुद्धकालीन भारत का मानचित्र

६०० ई० पूर्व

# प्रकाशकीय वक्तव्य

**"अनुजानामि, भिक्खवे, सकाय निरुत्तिया परियापुणितुं" ति**

—विनयपिटके, भगवा बुद्धो।

सन् १९५८-१९६१ ई० में पालित्रिपिटकप्रकाशनसमिति, नालन्दा द्वारा सम्पूर्ण त्रिपिटक प्रकाशन में कार्य करते समय से ही हमारा यह सङ्कल्प था कि समस्त त्रिपिटक (बुद्धवचन) का हिन्दी-रूपान्तर (अनुवाद) के साथ भी प्रकाशन होना चाहिये, जिससे वह अन्य भाषाओं के विद्वानों के लिये भी उपयोगी हो सके।

एतदर्थ, हमने विगत पन्द्रह वर्षों में अत्यधिक प्रयास किया; भारत के अनेक साधनसम्पन्न प्रकाशकों तथा धनपतियों एवं बुद्धिजीवियों से इस कार्य के लिये आर्थिक साधन संगृहीत कराने हेतु निवेदन किया; परन्तु किसी ने भी, इस कार्यहेतु, हमारा उत्साहवर्धन नहीं किया।

अन्त में, हमने विवश होकर, अपने अल्प साधनों के बल पर ही इस कार्य को आगे बढ़ाने का निश्चय किया। तदनुसार, सर्वप्रथम सुत्तपिटक का **मज्झिमनिकाय** (सम्पूर्ण) हिन्दी अनुवाद के साथ पाँच भागों में प्रकाशित किया, जो कि पाँच वर्ष में पूर्ण हुआ।

तदनन्तर, हमने सुत्तपिटक का **दीघनिकाय** (सम्पूर्ण) (हिन्दी अनुवाद के साथ) तीन भागों में प्रकाशित किया।

इसी क्रम में हमने समस्त **संयुत्तनिकायपालि** का हिन्दी अनुवाद के साथ चार भागों में दो वर्ष के कठिन परिश्रम एवं प्रयास के बाद, (चार भागों में सम्पूर्ण) आप के सम्मुख प्रस्तुत किया। यह ग्रन्थ २२५० पृष्ठों में पूर्ण हो पाया, अतः ग्रन्थ का कलेवर कुछ विशाल हो गया। परन्तु हमें इस बात की प्रसन्नता है कि यह ग्रन्थ पालि एवं हिन्दी-दोनों भाषाओं में एक साथ सुलभ हो गया है।

अब, इसी क्रम में सुत्तपिटक का यह चतुर्थ विशालकाय **अङ्गुत्तरनिकायपालि** ग्रन्थ (चार भागों में) प्रस्तुत किया जा रहा है। इस के, इस **तृतीय भाग** में केवल **षट्क, सप्तक** एवं **अष्टक निपात** दिये जा रहे हैं। पूर्व ग्रन्थों के समान ही इसमें भी हमने पालि-पाठ के लिये बर्मा में हुए छट्ठ सङ्गायन पर आधृत, और श्रीलंका, स्याम (थाईलैण्ड) तथा पालि **टैक्स्ट** सोसाइटी, लन्दन के संस्करणों का सहयोग लेकर १९६० में **'पालि त्रिपिटक प्रकाशन बोर्ड'** नालन्दा से प्रकाशित एवं आदरणीय भिक्षु जगदीश काश्यप द्वारा सम्पादित **देवनागरी-संस्करण** को आदर्श रूप में रखा है। इसमें हमने कहीं कहीं मुद्रणाशुद्धियों के **संशोधन के अतिरिक्त** अधिक कुछ नहीं किया है।

साथ ही हमने उक्त बर्मा, नालन्दा एवं रोमन संस्करणों की पृष्ठ-संख्या भी रोमन अक्षरों में क्रमशः यथास्थान दे दी है। अनुसन्धाता इससे भी लाभान्वित होंगे।

इसमें हमने, आचार्य बुद्धघोष की अट्ठकथा को प्रमाण मान कर, अपना स्वतन्त्र **हिन्दी अनुवाद** सम्पन्न करते हुए, उसे पालि-पाठ के साथ नीचे दिया है।

यहाँ हमें एक निवेदन अवश्य करना है कि विषय-वैशद्य (बात को समझाने) के लिये त्रिपिटक में विषय का अनुकूल-प्रतिकूल, या आरोह-अवरोह दोनों क्रमों से विस्तृत (अक्षरशः) वर्णन किया जाता है। इस शैली में भाषाच्छटा तो अवश्य आ जाती है, परन्तु इस शब्द-समूह में फँस कर पाठक से मूल विषय दूर दूर सा होने लगता है। इसके लिये पालि-संग्रहकारों ने ऐसे विशेष स्थानों (जहाँ पाठ पुनः पुनः आवृत्त हो) के लिये '...पे०...' की परम्परा रखी है। इसे हमने भी अपने हिन्दी-अनुवाद में स्वीकार किया है। परन्तु '...पे०...' का अनुवाद हमने '...पूर्ववत्...' करके दिया है, या प्रायः '...' इस चिह्न का प्रयोग किया है, जिससे पाठक प्रसङ्ग के प्रधान विषय से दूर न हो जाय।

ग्रन्थ में वर्णित सूत्रों का संक्षेप हिन्दी, अंग्रेजी दोनों भाषाओं में ग्रन्थ के प्रारम्भ में दे दिया है, जिससे पाठकों को सूत्रों का वर्ण्य विषय एक ही दृष्टि में हृदयङ्गम हो जाय।

यों हमने एक अभिनव पद्धति में बुद्ध-वचन (त्रिपिटक) का प्रकाशन प्रारम्भ किया है। यदि विद्वानों को यह पद्धति रुचिकर व अनुकूल प्रतीत हुई तो हम आगामी काल में त्रिपिटक के अवशिष्ट ग्रन्थों का प्रकाशन भी इसी पद्धति से करेंगे।

अन्ते च, इस पवित्र ग्रन्थ का यह अनुवाद हमने स्वकीय ज्ञानवृद्धिहेतु लिखा था, लिखने के बाद यह ध्यान में आया कि यह हमारे समानधर्मा अन्य जिज्ञासुओं का भी प्रयोजन सिद्ध कर सकता है। इसी उद्देश्य से यह प्रकाशित किया जा रहा है।

इतने विस्तृत अनुवाद में, हो सकता है हम से कहीं परम्परा का निर्वाह न हो पाया हो, एतदर्थ हमारा विज्ञ जनों से विनम्र निवेदन है कि इस प्रमाद को क्षमा करते हुए हमें सूचित करने का कष्ट करें; जिससे आगामी संस्करण में उस का परिहार किया जा सके।

वसन्तपञ्चमी, २०५८ वि०
वाराणसी.

विद्वद्वशंवद

स्वा० द्वा० शा०

**स्वामी द्वारिकादासशास्त्री**
अध्यक्ष, बौद्धभारती

# अङ्गुत्तरनिकायपालि

## छक्क-सत्तक-अट्ठकनिपातानं

## सुत्तसूची

सुत्तपिटक

# अङ्गुत्तरनिकायपालि

[ हिन्दीअनुवादसहित ]

( छक्क, सत्तक, अट्ठकनिपात )

❁ नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स ❁

# अङ्गुत्तरनिकायपालि

## ६. छक्कनिपातो

### १. आहुनेय्यवग्गो

### पठमो पण्णासको

**१. पठमआहुनेय्यसुत्तं :** १. एवं मे [N. Vol. II. 2, B. Vol. II, 247, R. Vol. III, 279] सुतं। एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—''भिक्खवो'' ति। ''भदन्ते'' ति ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

२. ''छहिं, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति पाहुनेय्यो दक्खिणेय्यो अञ्जलिकरणीयो अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमेहि छहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु चक्खुना रूपं दिस्वा नेव सुमनो होति न दुम्मनो, उपेक्खको विहरति सतो सम्पजानो। सोतेन सद्दं सुत्वा... घानेन गन्धं घायित्वा... जिव्हाय रसं सायित्वा... कायेन फोट्ठब्बं फुसित्वा... मनसा धम्मं विञ्ञाय नेव सुमनो होति न दुम्मनो, उपेक्खको विहरति

---

❁ उन भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध को प्रणाम ❁

# अङ्कोत्तरनिकायपालि

## षट्क निपात

### १. आह्वनीयवर्ग

### प्रथम पञ्चाशत्क

**१. प्रथम आह्वनीयसूत्र : : छह धर्मों से युक्त भिक्षु आह्वनीय**

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवन विहार में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय भगवान् ने ''भिक्षुओ'' कहकर भिक्षुओं को अपने पास बुलाया। भिक्षुजन भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य कर वहाँ आये। भगवान् ने उनको यह उपदेश किया—

२. ''भिक्षुओ! छह धर्मों से युक्त भिक्षु ही भेंट देने योग्य, स्वागत करने योग्य, दान करने योग्य, प्रणाम करने योग्य होता है; क्योंकि वह इस लोक के लिये अनुपम पुण्यभूमि है। किन छह धर्मों से? यहाँ भिक्षुओ! कोई भिक्षु चक्षु (इन्द्रिय) से रूप (विषय) को देखकर न सुख मानता है, न दुःख, अपितु वह उसके प्रति बुद्धिमत्तापूर्वक उपेक्षाभाव ही रखता है। इसी प्रकार श्रोत्र से शब्द सुनकर ...पूर्ववत्... घ्राण से गन्ध सूँघकर... जिह्वा से रस का स्वाद लेकर... काया से स्प्रष्टव्य

सतो सम्पजानो। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति पाहुनेय्यो दक्खिणेय्यो अञ्जलिकरणीयो अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा'' ति।

३. ''इदमवोच भगवा। अत्तमना ते भिक्खू भगवतो भासितं अभिनन्दुं ति॥ ●

**२. दुतियआहुनेय्यसुत्तं** : १. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु [B.248,R.280] आहुनेय्यो होति ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमेहि छहि? [N.4] इध, भिक्खवे, भिक्खु अनेविहितं इद्धिविधं पच्चनुभोति—एको पि हुत्वा बहुधा होति, बहुधा पि हुत्वा एको होति; आविभावं तिरोभावं; तिरोकुड्डं तिरोपाकारं तिरोपब्बतं असज्जमानो गच्छति, सेय्यथापि आकासे; पथविया पि उम्मुज्जनिमुज्जं करोति, सेय्यथापि उदके; उदके पि अभिज्जमाने गच्छति, सेय्यथापि पथवियं; आकासे पि पल्लङ्केन कमति, सेय्यथापि पक्खी सकुणो; इमे पि चन्दिमसुरिये एवं महिद्धिके एवंमहानुभावे पाणिना परिमसति परिमज्जति; याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेति।

२. ''दिब्बाय सोतधातुया विसुद्धाय अतिक्कन्तमानुसिकाय उभो सद्दे सुणाति—दिब्बे च मानुसे च, ये दूरे सन्तिके च।

३. ''परसत्तानं परपुग्गलानं चेतसा चेतो परिच्च पजानाति। सरागं वा चित्तं सरागं चित्तं ति पजानाति, वीतरागं वा चित्तं... सदोसं वा चित्तं... वीतदोसं वा चित्तं... समोहं वा

---

(विषय) का स्पर्श कर... मन से धर्म को जानकर न सुख का अनुभव करता है, न दुःख, अपितु वह उसके प्रति स्मृतिसम्प्रजन्यपूर्वक उपेक्षाभाव ही रखता है। भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु ही ...पूर्ववत्... अनुपम पुण्यभूमि है।''

भगवान् ने यह उपदेश किया। प्रसन्न एवं सन्तुष्ट भिक्षुओं ने भगवान् के भाषण का अभिनन्दन किया॥ ●

**२. द्वितीय आह्वनीयसूत्र : : छह धर्मों से युक्त भिक्षु आह्वनीय**

१. ''भिक्षुओ! छह धर्मों से युक्त भिक्षु ही ...पूर्ववत्... अनुपम पुण्यभूमि है। किन छह धर्मों से? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु नाना प्रकार की सिद्धियों (चमत्कारों) का अनुभव करता है; जैसे—एक होते हुए भी अनेक हो जाना; अनेक होते हुए एक हो जाना; प्रत्यक्ष दिखायी देना, सर्वथा न दिखायी देना; कुड्य (दीवार), प्राकार, (परकोटा) एवं पर्वत आदि का व्यवधान होने पर भी उनसे सम्पृक्त हुए विना ही आगे निकल जाता है, जैसे खुले आकाश में उड़ रहा हो। पृथ्वी में भी डूबते उतराते रहता है, मानो जल में डूब या उतरा रहा हो। जल में विना आर्द्र (गीला) हुए चलता है, मानो पृथ्वी पर चल रहा हो। आकाश में भी पद्मासन (पलथी) लगाकर चलता है, मानो पक्षी उड़ रहा हो। इन दूरस्थ प्रतापी एवं तेजस्वी सूर्य एवं चन्द्रमा को भी हाथ से अनायास स्पर्श कर लेता है। कहने का तात्पर्य यह है कि ब्रह्मलोक तक उसके वश में होते हैं।

२. ''विशुद्ध एवं दिव्य श्रोत्रधातु से, जो कि साधारण मनुष्यों को प्राप्त नहीं होती, दोनों प्रकार के शब्द सुनता है—इस लोक के भी तथा अन्य स्वर्गादि लोकों के भी, दूर के भी पास के भी।

३. ''दूसरे प्राणियों के, दूसरे पुद्गलों के चित्त से स्वचित्त का संयोजन कर उनके विषय में सब

चित्तं... वीतमोहं वा चित्तं... सङ्खित्तं वा चित्तं... विक्खित्तं वा चित्तं... महग्गतं वा चित्तं... अमहग्गतं वा चित्तं... सउत्तरं वा चित्तं... अनुत्तरं वा चित्तं... समाहितं वा चित्तं ... असमाहितं वा चित्तं ... विमुत्तं वा चित्तं ... अविमुत्तं वा चित्तं अविमुत्तं चित्तं ति पजानाति।

४. ''अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, सेय्यथीदं—एकं पि जातिं द्वे पि जातियो ...पे०...। इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति। [R.281]

५. ''दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन सत्ते पस्सति चवमाने उपपज्जमाने हीने पणीते सुवण्णे दुब्बण्णे, सुगते दुग्गते यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति—'इमे वत भोन्तो सत्ता कायदुच्चरितेन समन्नागता वचीदुच्चरितेन समन्नागता मनोदुच्चरितेन समन्नागता अरियानं उपवादका मिच्छादिट्ठिका मिच्छादिट्ठिकम्मसमादाना, ते कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपन्ना। इमे वा पन भोन्तो सत्ता [B.249] कायसुचरितेन समन्नागता वचीसुचरितेन समन्नागता मनोसुचरितेन समन्नागता अरियानं अनुपवादका सम्मादिट्ठिका सम्मादिट्ठिकम्मसमादाना, ते कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपन्ना' ति। इति दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन सत्ते [N.5] पस्सति चवमाने उपपज्जमाने हीने पणीते सुवण्णे दुब्बण्णे, सुगते दुग्गते यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति।

---

कुछ जानने का सामर्थ्य रखता है। कोई सरागचित्त है तो उसको 'यह सरागचित्त है'—ऐसा जान लेता है, जो रागरहित चित्त वाला है उसको 'यह रागरहित चित्त वाला है'—ऐसा जान लेता है, द्वेषयुक्त चित्त वाले को... द्वेषरहित चित्त वाले को... मोहसहित चित्त वाले को... मोहरहित चित्त वाले को... संक्षिप्त चित्त वाले को... विक्षिप्त चित्त वाले को... महद्गत (बहुत ऊँचे) चित्त वाले को... अमहद्गत (बहुत नीचे) चित्त वाले को... उत्तर सहित चित्त वाले को... अनुत्तर (सर्वोत्तम) चित्त वाले को... समाहित चित्त वाले को... असमाहित चित्त वाले को... विमुक्त चित्त वाले को ... अविमुक्त (आबद्ध) चित्त वाले को 'यह आबद्धचित्त है'—ऐसा जानता है।

४. ''वह अपने भोगे हुए जन्मों का अनुस्मरण करने में समर्थ है; एक जन्म को भी ...पूर्ववत्...। इस प्रकार वह रूप एवं उद्देश सहित अपने अनेक पूर्वजन्मों को स्मरण कर सकता है।

५. ''वह दिव्य चक्षुधातु से, जो कि साधारण मनुष्यों को प्राप्त नहीं होती, मरते हुए, उत्पन्न होते हुए, हीन, उत्तम, सुरूप, कुरूप प्राणियों को देखने में समर्थ होता है; वह प्रारब्धवश धनवान् या निर्धन प्राणियों के विषय में जान लेता है—'ये प्राणी काय, वाक् एवं मन के असत्कर्मों से युक्त थे अत: श्रेष्ठ जनों के निन्दक एवं मिथ्यादृष्टि तथा मिथ्यादृष्टियुक्त कर्म करते थे, ये इस देहपात के बाद, निश्चय ही दुर्गतिमय नरक में गिरे हैं। या ये प्राणी काय, वाक् एवं मन के द्वारा कृत सत्कर्मों से युक्त थे, अत: ये न आर्यों की निन्दा करते थे, न मिथ्यादृष्टि ही थे और न मिथ्यादृष्टियुक्त कर्म ही करते थे, अत: ये अवश्य ही अपने इस देहपात के बाद सुगतिमय स्वर्गलोक में वास कर रहे हैं'। इस प्रकार वह साधारण मानव को दुर्लभ विशुद्ध चक्षुरिन्द्रिय से मरने वाले, उत्पन्न होने वाले, पतित उत्तम, सुरूप कुरूप, प्रारब्धवश सुगति या दुर्गति को प्राप्त प्राणियों के विषय में जान लेता है।

६. ''आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा'' ति॥ ●

**३. इन्द्रियसुत्तं :** १. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमेहि छहि? सद्धिन्द्रियेन, विरियिन्द्रियेन, [R.282] सतिन्द्रियेन, समाधिन्द्रियेन, पञ्ञिन्द्रियेन, आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं धम्मेहि सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति पाहुनेय्यो दक्खिणेय्यो अञ्जलिकरणीयो अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा'' ति॥ ●

**४. बलसुत्तं :** १. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमेहि छहि? सद्धाबलेन, विरियबलेन, सतिबलेन, समाधिबलेन, पञ्ञाबलेन, आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा'' ति॥●

[B.250] **५. पठमआजानीयसुत्तं :** १. ''छहि, भिक्खवे, अङ्गेहि समन्नागतो रञ्ञो भद्रो अस्साजानीयो राजारहो होति राजभोग्गो, रञ्ञो अङ्गं त्वेव सङ्खं गच्छति। कतमेहि छहि?

---

६. ''तथा आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति एवं प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में स्वयं जानकर, साक्षात् कर, साधना करता है। भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु भेंट देने योग्य... लोक के लिये अनुपम पुण्यभूमि है॥'' ●

**३. इन्द्रियसूत्र : : छह धर्मों से युक्त भिक्षु आह्वनीय**

१. ''भिक्षुओ! छह धर्मों से युक्त भिक्षु ही उपहार देने योग्य ...पूर्ववत्... लोक हेतु अनुपम पुण्यभूमि है। किन छह से? (१) जो श्रद्धेन्द्रिय से, (२) वीर्येन्द्रिय से, (३) स्मृतीन्द्रिय से, ( ) समाधीन्द्रिय से, (५) प्रज्ञेन्द्रिय से, (६) आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति एवं प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में स्वयं जानकर, साक्षात् कर, साक्षात्कार कर साधना करता है। भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु ही ...पूर्ववत्... लोक के लिये अनुपम पुण्यभूमि है॥'' ●

**४. बलसूत्र : : छह धर्मों से युक्त भिक्षु आह्वनीय**

१. ''भिक्षुओ! छह धर्मों से युक्त भिक्षु उपहार देने योग्य ...पूर्ववत्... लोक के अनुपम पुण्यभूमि है। किन छह धर्मों से? (१) श्रद्धाबल से, (२) वीर्यबल से, (३) स्मृतिबल से, ( ) समाधिबल से, (५) प्रज्ञाबल से, तथा (६) आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति एवं प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में स्वयं जानकर, साक्षात् कर साधना करता है। भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु ही ...पूर्ववत्... लोक के लिये अनुपम पुण्यभूमि है॥'' ●

**५. प्रथम आजानेयसूत्र : : छह धर्मों से युक्त भिक्षु आह्वनीय**

१. भिक्षुओ! छह अङ्गों से युक्त श्रेष्ठ अश्व ही राजा का प्रिय, राजा के योग्य एवं राजा का

इध, भिक्खवे, रञ्ञो भद्रो अस्साजानीयो खमो होति रूपानं, खमो सद्दानं, खमो [N.6] गन्धानं, खमो रसानं, खमो फोट्ठब्बानं, वण्णसम्पन्नो च होति। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि अङ्गेहि समन्नागतो रञ्ञो भद्रो अस्साजानीयो राजारहो होति राजभोग्गो, रञ्ञो अङ्गं त्वेव सङ्ख्यं गच्छति।

२. ''एवमेव खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमेहि छहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु खमो होति रूपानं, खमो सद्दानं, खमो गन्धानं, खमो रसानं, खमो फोट्ठब्बानं, खमो धम्मानं। [R.283] इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा'' ति॥ ●

**६. दुतियआजानीयसुत्तं :** १. ''छहि, भिक्खवे, अङ्गेहि समन्नागतो रञ्ञो भद्रो अस्साजानीयो राजारहो होति राजभोग्गो, रञ्ञो अङ्गं त्वेव सङ्ख्यं गच्छति। कतमेहि छहि? इध, भिक्खवे, रञ्ञो भद्रो अस्साजानीयो खमो होति रूपानं, खमो सद्दानं, खमो गन्धानं, खमो रसानं, खमो फोट्ठब्बानं, बलसम्पन्नो च होति। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि अङ्गेहि समन्नागतो रञ्ञो भद्रो अस्साजानीयो राजारहो होति राजभोग्गो, रञ्ञो अङ्गं त्वेव सङ्ख्यं गच्छति।

२. ''एवमेव खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमेहि छहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु खमो होति रूपानं, ...पे०... खमो धम्मानं। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा'' ति॥ ●

---

भोग्य तथा 'राजा का अङ्ग' कहलाता है। किन छह अङ्गों से? राजा का श्रेष्ठ अश्व रूप, शब्द, गन्ध, रस, स्प्रष्टव्य विषयों को सम्यक्तया ग्रहण करने में समर्थ होता है तथा आकार प्रकार से श्रेष्ठ होता है। भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त ऐसा राजा का अश्व ही राजा को प्रिय, राजा के योग्य, राजा का भोग्य एवं राजा का अङ्ग कहलाता है।

२. ''इसी प्रकार, भिक्षुओ! छह धर्मों से युक्त भिक्षु उपहार योग्य ...पूर्ववत्... लोक के लिये अनुपम पुण्यभूमि है। किन छह धर्मों से? यहाँ, भिक्षुओ! जो भिक्षु इन रूप, शब्द, गन्ध, रस, स्प्रष्टव्य विषय एवं मनोधर्मों को यथातथ रूप से ग्रहण करने में समर्थ है। भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु ही आह्वनीय ...पूर्ववत्... लोक के लिये अनुपम पुण्यभूमि होता है॥'' ●

**६. द्वितीय आजानेयसूत्र : : छह धर्मों से युक्त भिक्षु आह्वनीय**

१. ''भिक्षुओ! छह अङ्गों से युक्त कोई श्रेष्ठ अश्व ही ...पूर्ववत्... स्प्रष्टव्य विषयों को ग्रहण करने में समर्थ होता है तथा बलसम्पन्न होता है। भिक्षुओ! इन छह अङ्गों से युक्त ...राजा का अङ्ग कहलाता है।

२. ''इसी प्रकार, भिक्षुओ! कोई छह अङ्गों से युक्त भिक्षु ...पूर्ववत्... लोक के लिये अनुपम पुण्यभूमि होता है॥ ●

[B.251] **७. ततियआजानीयसुत्तं :** १. "छहि, भिक्खवे, अङ्गेहि समन्नागतो रञ्ञो भद्रो अस्साजानीयो राजारहो होति राजभोग्गो, रञ्ञो अङ्गं त्वेव सङ्ख्यं गच्छति। कतमेहि छहि? [N.7] इध, भिक्खवे, रञ्ञो भद्रो अस्साजानीयो खमो होति रूपानं, खमो सद्दानं, खमो गन्धानं, खमो रसानं, खमो फोट्ठब्बानं, जवसम्पन्नो च होति। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि [R.284] अङ्गेहि समन्नागतो रञ्ञो भद्रो अस्साजानीयो राजारहो होति राजभोग्गो, रञ्ञो अङ्गं त्वेव सङ्ख्यं गच्छति।

२. "एवमेव खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमेहि छहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु खमो होति रूपानं, ...पे०... खमो धम्मानं। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा" ति॥ ●

**८. अनुत्तरियसुत्तं :** १. "छयिमानि, भिक्खवे, अनुत्तरियानि। कतमानि छ? दस्सनानुत्तरियं, सवनानुत्तरियं, लाभानुत्तरियं, सिक्खानुत्तरियं, पारिचरियानुत्तरियं, अनुस्सतानुत्तरियं—इमानि खो, भिक्खवे, छ अनुत्तरियानी" ति॥ ●

**९. अनुस्सतिट्ठानसुत्तं :** १. "छयिमानि, भिक्खवे, अनुस्सतिट्ठानानि। कतमानि छ? बुद्धानुस्सति, धम्मानुस्सति, सङ्घानुस्सति, सीलानुस्सति, चागानुस्सति, देवतानुस्सति—इमानि खो, भिक्खवे, छ अनुस्सतिट्ठानानी" ति॥ ●

**१०. महानामसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा सक्केसु विहरति कपिलवत्थुस्मिं निग्रोधारामे। अथ खो महानामो सक्को येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं

---

**७. तृतीय आजानेयसूत्र : : छह धर्मों से युक्त भिक्षु आह्वनीय**

१. "भिक्षुओ! छह धर्मों से युक्त राजा का कोई श्रेष्ठ अश्व ही ...पूर्ववत्... स्प्रष्टव्य विषयों को ग्रहण करने में समर्थ होता है तथा जव (गति) सम्पन्न होता है। भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त अश्व ही राजा को प्रिय, राजा के योग्य, राजा का भोग्य एवं राजा का अङ्ग कहलाता है।

२. "इसी तरह, भिक्षुओ! छह अङ्गों से युक्त भिक्षु उपहार योग्य ...पूर्ववत्... लोक के लिये अनुपम भूमि होता है॥" ●

**८. अनुत्तर्यसूत्र : : छह अद्वितीय धर्म**

१. "भिक्षुओ! ये छह धर्म अनुत्तर्य (या अनौत्तर्य=अद्वितीय) होते हैं। कौन छह धर्म? (१) अद्वितीय दर्शन, (२) अद्वितीय श्रवण, (३) अद्वितीय लाभ, (४) अद्वितीय शिक्षा, (५) अद्वितीय परिचर्या एवं (६) अद्वितीय अनुस्मृति—भिक्षुओ! ये छह अनुत्तर्य (अद्वितीय) धर्म होते हैं॥" ●

**९. अनुस्मृतिस्थानसूत्र : : छह अनुस्मृति-स्थान**

१. भिक्षुओ! ये छह धर्म अनुस्मृतिस्थान होते हैं। कौन से छह? (१) बुद्धानुस्मृति, (२) धर्मानुस्मृति, (३) सङ्घानुस्मृति, (४) शीलानुस्मृति, (५) त्यागानुस्मृति, एवं (६) देवतानुस्मृति—भिक्षुओ! ये छह अनुस्मृतिस्थान होते हैं॥ ●

अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो, खो महानामो सक्को भगवन्तं एतदवोच—

२. "यो सो, भन्ते, अरियसावको आगतफलो विञ्ञातसासनो, सो कतमेन विहारेन बहुलं विहरती" ति?

३. "यो सो, महानाम, अरियसावको आगतफलो [N.8,B.252,R.285] विञ्ञातसासनो, सो इमिना विहारेन बहुलं विहरति। इध, महानाम, अरियसावको तथागतं अनुस्सरति—'इति पि सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो विज्जाचरणसम्पन्नो सुगतो लोकविदू अनुत्तरो पुरिसदम्मसारथि सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। यस्मिं, महानाम, समये अरियसावको तथागतं अनुस्सरति नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति तथागतं आरब्भ। उजुगतचित्तो खो पन, महानाम, अरियसावको लभति अत्थवेदं, लभति धम्मवेदं, लभति धम्मूपसंहितं पामोज्जं। पमुदितस्स पीति जायति, पीतिमनस्स कायो पस्सम्भति, पस्सद्धकायो सुखं वेदियति, सुखिनो चित्तं समाधियति। अयं वुच्चति, महानाम—'अरियसावको विसमगताय पजाय समप्पत्तो विहरति, सब्यापज्झाय पजाय अब्यापज्झो विहरति, धम्मसोतं समापन्नो धम्मानुस्सतिं भावेति'।

---

**१०. महानामसूत्र : : महानाम के प्रश्नों का उत्तर**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) शाक्यों की (राजधानी) कपिलवस्तु नगरी के न्यग्रोधाराम में साधनाहेतु विराजमान थे। तब महानाम शाक्य भगवान् के सम्मुख आया। आकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे महानाम शाक्य ने भगवान् से यह जिज्ञासा की—

२. "भन्ते! जो साधक आर्यश्रावकफल प्राप्त कर चुका है, शासन (धर्म) का ज्ञान प्राप्त कर चुका है वह किस साधनापद्धति से साधना करता है?"

३. "महानाम! जो आर्यश्रावक फल प्राप्त कर चुका है, धर्मज्ञान प्राप्त कर चुका है, वह इस साधनापद्धति से साधना करता है। यहाँ, महानाम! वह आर्यश्रावक तथागत का इस प्रकार अनुस्मरण करता है—'वे भगवान् अर्हत्, सम्यक्सम्बुद्ध, विद्या एवं आचरण से सम्पन्न, सुगत, लोकविद्, अनुपम, पुरुषदम्यसारथि, देवमनुष्यों के शास्ता, बुद्ध भगवान् हैं।' महानाम, जिस समय वह आर्यश्रावक भगवान् बुद्ध का इस प्रकार अनुस्मरण करता है उस समय इसका चित्त राग से पर्युत्थित (विस्तृत) नहीं होता; न द्वेष या मोह से पर्युत्थित होता है। अपितु तथागत में लगा हुआ चित्त अन्यत्र सांसारिक विषयों में अनासक्त ही रहता है। चित्त पर ऐसा नियन्त्रण प्राप्त कर वह आर्यश्रावक अर्थज्ञान, धर्मज्ञान तथा धर्मज्ञान से प्राप्त होने वाले प्रमोद (हर्ष) का अनुभव करता है। इस प्रकार प्रमुदित होने पर उसके चित्त में प्रीति उत्पन्न होती है, प्रीति से उसकी काया स्थिर होती है। स्थिरकाय होने पर वह सुख का अनुभव करता है। इस प्रकार उसके सुखानुभव करते रहने पर उसका चित्त एकाग्र हो जाता है। महानाम! ऐसे साधक के लिये यह कहा जा सकता है कि यह आर्यश्रावक विषम (जगत्प्रपञ्च) में फँसे हुए प्राणियों में रहता हुआ भी समतापूर्वक व्यवहार करता

४. ''पुन च परं, महानाम, अरियसावको धम्मं अनुस्सरति—'स्वाक्खातो भगवता धम्मो सन्दिट्ठिको अकालिको एहिपस्सिको ओपनेय्यिको पच्चत्तं वेदितब्बो विञ्ञूही' ति। यस्मिं, महानाम, समये अरियसावको धम्मं अनुस्सरति नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति धम्मं आरब्भ। उजुगतचित्तो खो पन, महानाम, अरिसावको लभति अत्थवेदं, लभति धम्मवेदं, लभति धम्मूपसंहितं पामोज्जं। पमुदितस्स पीति जायति, पीतिमनस्स कायो पस्सम्भति, पस्सद्धकायो सुखं वेदियति, सुखिनो चित्तं समाधियति। अयं [R.286] वुच्चति, महानाम—'अरियसावको विसमगताय पजाय समप्पत्तो विहरति, सब्यापज्झाय पजाय अब्यापज्झो विहरति, धम्मसोतं समापन्नो धम्मानुस्सतिं भावेति'।

५. ''पुन च परं, महानाम, अरियसावको सङ्घं अनुस्सरति—'सुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो उजुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, ञायप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, [B.253] सामीचिप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो, यदिदं चत्तारि पुरिसयुगानि अट्ठ [N.9] पुरिसपुग्गला एस भगवतो सावकसङ्घो आहुनेय्यो पाहुनेय्यो दक्खिणेय्यो अञ्जलिकरणीयो अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा' ति। यस्मिं, महानाम, समये अरियसावको सङ्घं अनुस्सरति नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति सङ्घं आरब्भ। उजुगतचित्तो खो पन, महानाम, अरियसावको लभति अत्थवेदं, लभति धम्मेवदं, लभति धम्मूपसंहितं पामोज्जं। पमुदितस्स पीति जायति, पीतिमनस्स कायो पस्सम्भति,

---

हुआ साधनारत है, द्वेष में फँसे हुए प्राणियों में निर्द्वेष होकर साधना करता है, धर्मस्रोत का आश्रयण कर **बुद्धानुस्मृति** की भावना करता है। (१)

४. ''महानाम! तदनन्तर, वह आर्यश्रावक धर्म का अनुस्मरण भी इस प्रकार करता है—'भगवान् का धर्म सुन्दर व्याख्यानपूर्वक उपदिष्ट है। वह इसी जन्म में फलप्रद है, कालान्तर में नहीं। तत्काल ही फल (परिणाम) देने वाला है, यहीं (इसी जन्म में) अपना चमत्कार (प्रभाव) दिखाने वाला है। निर्वाण तक पहुँचाने वाला तथा विज्ञजनों को व्यक्तिगत रूप से (साक्षात्) भी दिखायी देने वाला है।' महानाम! जिस समय कोई आर्यश्रावक इस बुद्धोपदिष्ट धर्म का अनुस्मरण करता है उस समय उसका चित्त ...पूर्ववत्... धर्मस्रोत का आश्रयण कर **धर्मानुस्मृति** की भावना करता है।' (२)

५. ''महानाम! तदनन्तर वह आर्यश्रावक सङ्घ का अनुस्मरण इस प्रकार करता है—'भगवान् का यह श्रावकसङ्घ सन्मार्ग पर चलने वाला, सरल मार्ग पर चलने वाला, न्यायमार्ग पर चलने वाला, तथा सम्यङ्मार्ग पर चलने वाला है। स्रोतआपन्न, सकृदागामी, अनागामी, एवं अर्हत्—ये चार पुरुषपुद्गल एवं इन चारों अवस्थाओं के फलों का साक्षात्कार करने में तत्पर—ये चार पुरुष-पुद्गल—यों आठ प्रकार के साधक ही इस सङ्घ में उपलब्ध हैं जो कि (सत्कर्मों में) आह्वान के योग्य हैं, आतिथ्य के योग्य हैं, दान करने योग्य हैं, प्रणाम करने योग्य हैं तथा लोक के लिये

पस्सद्धकायो सुखं वेदयति, सुखिनो चित्तं समाधियति। अयं वुच्चति, महानाम— 'अरियसावको विसमगताय पजाय समप्पत्तो विहरति, सब्यापज्झाय पजाय अब्यापज्झो विहरति, धम्मसोतं समापन्नो सङ्घानुस्सतिं भावेति'।

६. "पुन च परं, महानाम, अरियसावको अत्तनो सीलानि अनुस्सरति अखण्डानि अच्छिद्दानि असबलानि अकम्मासानि भुजिस्सानि विञ्ञुप्पसत्थानि अपरामट्ठानि समाधिसंवत्तनिकानि। यस्मिं, महानाम, समये अरियसावको सीलं अनुस्सरति नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति सीलं आरब्भ। उजुगतचित्तो खो पन, महानाम, अरियसावको लभति अत्थवेदं, लभति धम्मवेदं, लभति धम्मूपसंहितं पामोज्जं। पमुदितस्स पीति जायति, पीतिमनस्स कायो पस्सम्भति, पस्सद्धकायो सुखं वेदियति, सुखिनो चित्तं समाधियति। अयं वुच्चति, महानाम—'अरियसावको विसमगताय पजाय [R.287] समप्पत्तो विहरति, सब्यापज्झाय पजाय अब्यापज्झो विहरति, धम्मसोतं समापन्नो सीलानुस्सतिं भावेति'।

७. "पुन च परं, महानाम, अरियसावको अत्तनो चागं अनुस्सरति—'लाभा वत मे, सुलद्धं वत मे! योहं मच्छेरमलपरियुट्ठिताय पजाय विगतमलमच्छेरेन चेतसा अगारं अज्झावसामि मुत्तचागो पयतपाणि वोस्सग्गरतो याचयोगो दानसंविभागरतो' ति। यस्मिं, महानाम, समये अरियसावको चागं अनुस्सरति नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं [B.254] होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स [N.10] तस्मिं समये चित्तं होति चागं आरब्भ। उजुगतचित्तो खो पन, महानाम, अरियसावको लभति अत्थवेदं, लभति धम्मवेदं, लभति धम्मूपसंहितं पामोज्जं। पमुदितस्स पीति जायति,

---

पुण्योत्पादक क्षेत्र हैं।' जिस समय, महानाम! वह आर्यश्रावक सङ्घ का अनुस्मरण करता है उस समय उसका चित्त ...पूर्ववत्... धर्मस्रोत में अवगाहन कर **सङ्घानुस्मृति** की भावना करता है।' (३)

६. "तदनन्तर, महानाम! वह आर्यश्रावक अपने उन शीलों का अनुस्मरण करता है जो अखण्ड, अछिद्र एवं शुद्ध हैं, कल्मषरहित हैं, साधुजन के योग्य हैं, विद्वत्प्रशंसित हैं, अनिन्द्य हैं एवं समाधि (चित्तनिरोध) के प्रेरक हैं। महानाम! जिस समय वह आर्यश्रावक अपने शीलों का अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त ...पूर्ववत्... धर्मस्रोत में अवगाहन कर **शीलानुस्मृति** की भावना करता है। (४)

७. "पुन: महानाम! वह आर्यश्रावक अपने त्याग का अनुस्मरण करता है—'मुझे बहुत लाभ हुआ, मैंने बहुत कुछ पा लिया कि मैं इस मात्सर्यमल से मलिन चित्त वाली प्रजा के बीच रहता हुआ भी मात्सर्यरहित चित्त से गृह में रहता हुआ मुक्तहस्त से त्याग करता हूँ, दान में उत्साही रहता हूँ, कुछ भी त्याग के लिये तत्पर रहता हूँ। याचक को मुँहमाँगा दान देता हूँ। इस प्रकार निरन्तर दान

पीतिमनस्स कायो पस्सम्भति, पस्सद्धकायो सुखं वेदियति, सुखिनो चित्तं समाधियति। अयं वुच्चति, महानाम—'अरियसावको विसमगताय पजाय समप्पत्तो विहरति, सब्यापज्झाय पजाय अब्यापज्झो विहरति, धम्मसोतं समापन्नो चागानुस्सतिं भावेति'।

८. ''पुन च परं, महानाम, अरियसावको देवतानुस्सतिं भावेति—'सन्ति देवा चातुमहाराजिका, सन्ति देवा तावतिंसा, सन्ति देवा यामा, सन्ति देवा तुसिता, सन्ति देवा निम्मानरतिनो, सन्ति देवा परनिम्मितवसवत्तिनो, सन्ति देवा ब्रह्मकायिका, सन्ति देवा तदुत्तरि। यथारूपाय सद्धाय समन्नागता ता देवता इतो चुता तत्थ उपपन्ना, मय्हं पि तथारूपा सद्धा संविज्जति। यथारूपेन सीलेन समन्नागता ता देवता इतो चुता तत्थ उपपन्ना, मय्हं पि तथारूपं सीलं संविज्जति। यथारूपेन सुतेन समन्नागता ता देवता इतो चुता तत्थ उपपन्ना, मय्हं पि तथारूपं सुतं संविज्जति। यथारूपेन चागेन समन्नागता ता देवता इतो चुता तत्थ उपपन्ना, मय्हं पि तथारूपो चागो संविज्जति। यथारूपाय पञ्ञाय समन्नागता ता देवता इतो [R.288] चुता तत्थ उपपन्ना, मय्हं पि तथारूपा पञ्ञा संविज्जती' ति। यस्मिं, महानाम, समये अरियसावको अत्तनो च तासं च देवतानं सद्धं च सीलं च सुतं च चागं च पञ्ञं च अनुस्सरति नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति ता देवता आरब्भ। उजुगतचित्तो खो पन, महानाम, अरियसावको लभति अत्थवेदं, लभति धम्मवेदं, लभति धम्मूसंहितं पामोज्जं। पमुदितस्स पीति जायति, पीतिमनस्स कायो [B.255] पस्सम्भति, पस्सद्धकायो सुखं वेदियति, सुखिनो चित्तं समाधियति। अयं वुच्चति, महानाम—'अरियसावको विसमगताय पजाय समप्पत्तो विहरति, सब्यापज्झाय पजाय अब्यापज्झो विहरति, धम्मसोतं समापन्नो देवतानुस्सतिं भावेति'।

[N.11] ९. ''यो सो, महानाम, अरियसावको आगतफलो विञ्ञातसासनो सो इमिना विहारेन बहुलं विहरती'' ति॥

आहुनेय्यवग्गो पठमो॥ ●

---

क्रिया में लगा रहता हूँ।' महानाम! जिस समय वह आर्यश्रावक अपने त्याग का अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त ...पूर्ववत्... धर्मस्रोत में अवगाहन कर **त्यागानुस्मृति** की भावना करता है। (५)

८. ''तदनन्तर, महानाम! वह आर्यश्रावक इस प्रकार देवतानुस्मृति की भावना करता है—'ये जितने भी देवता हैं; जैसे चातुर्महाराजिक, त्रायस्त्रिंश, याम, तुषित, निर्माणरति, निर्माणरति, ब्रह्मकायिक एवं उनसे भी ऊपर के देवता—ये सभी देवता जैसी 'श्रद्धा' से युक्त होते हुए, यहाँ से च्युत होकर, वहाँ उत्पन्न हुए हैं, वैसी श्रद्धा मुझमें भी है। जैसे 'शील' से युक्त होते हुए... जैसी 'प्रज्ञा' से युक्त होते हुए, यहाँ से च्युत होकर, वहाँ उत्पन्न हुए हैं वैसी प्रज्ञा मुझमें भी है।' महानाम! जिस समय वह आर्यश्रावक अपने और इन देवताओं के श्रद्धा, शील, श्रुत, त्याग एवं प्रज्ञा का अनुस्मरण करता है उस समय उसका चित्त रागपर्युत्थित एवं मोहपर्युत्थित नहीं होता ...पूर्ववत्... धर्मस्रोत में अवगाहन कर **देवतानुस्मृति** की भावना करता है। (६)

तस्सुद्दानं

द्वे आहुनेय्या इन्द्रिय, बलानि तयो आजानीया।
अनुत्तरिय अनुस्सती, महानामेन ते दसा ति॥ ●

## २. सारणीयवग्गो

**१. पठमसारणीयसुत्तं :** १. "छयिमे, भिक्खवे, धम्मा सारणीया। कतमे छ? इध, भिक्खवे, भिक्खुनो मेत्तं कायकम्मं पच्चुपट्ठितं होति सब्रह्मचारीसु आवि चेव रहो च, अयं पि धम्मो सारणीयो।

२. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खुनो मेत्तं वचीकम्मं पच्चुपट्ठितं होति सब्रह्मचारीसु आवि चेव रहो च, अयं पि धम्मो सारणीयो।

३. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खुनो मेत्तं मनोकम्मं पच्चुपट्ठितं होति सब्रह्मचारीसु आवि चेव रहो च, अयं पि धम्मो सारणीयो।

४. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु ये ते लाभा धम्मिका धम्मलद्धा [R.289]

---

९. "महानाम! जो आर्यश्रावक फल प्राप्त कर चुका है, धर्मज्ञान प्राप्त कर चुका है वह इस साधनापद्धति से साधनारत रहता है॥" ●

**आह्वनीयवर्ग प्रथम सम्पन्न॥**

**इस वर्ग में व्याख्यात सूत्रों की सूची**

१. प्रथम आह्वनीयसूत्र, २. द्वितीय आह्वनीयसूत्र, ३. इन्द्रियसूत्र, ४. बलसूत्र, ५. प्रथम आजानेयसूत्र, ६. द्वितीय आजानेयसूत्र, ७. तृतीय आजानेयसूत्र, ८. अनुत्तर्यसूत्र, ९. अनुस्मृतिसूत्र, १०. महानामसूत्र॥ ●

## २. स्मरणीयवर्ग

**१. प्रथम स्मरणीयसूत्र : : छह स्मरणीय धर्म**

१. "भिक्षुओ! ये छह धर्म स्मरणीय होते हैं। कौन से छह? यहाँ, भिक्षुओ! भिक्षु का अपने साथियों के साथ कोई गुप्त या प्रकट मैत्रीपूर्ण **कायकर्म** किया गया होता है, ऐसे धर्म का भी स्मरण करना चाहिये। (१)

२. "पुनः, भिक्षुओ! भिक्षु का अपने साथियों के साथ कोई गुप्त या प्रकट मैत्रीपूर्ण **वाक्कर्म** किया गया होता है, ऐसे धर्म का भी स्मरण करना चाहिये। (२)

३. "पुनः, भिक्षुओ! भिक्षु का ...पूर्ववत्... मैत्रीपूर्ण **मनःकर्म** किया गया होता है, ऐसे धर्म का भी स्मरण करना चाहिये। (३)

अन्तमसो पत्तपरियापन्नमत्तं पि तथारूपेहि लाभेहि अप्पटिविभत्तभोगी होति सीलवन्तेहि सब्रह्मचारीहि साधारणभोगी, अयं पि धम्मो सारणीयो।

५. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु यानि तानि सीलानि अखण्डानि अच्छिद्दानि असबलानि अकम्मासानि भुजिस्सानि विञ्ञुप्पसत्थानि अपरामट्ठानि समाधिसंवत्तनिकानि [B.256] तथारूपेहि सीलेहि सीलसामञ्ञगतो विहरति सब्रह्मचारीहि आवि चेव रहो च, अयं पि धम्मो सारणीयो।

६. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु यायं दिट्ठि अरिया निय्यानिका निय्याति तक्करस्स [N.12] सम्मा दुक्खक्खयाय तथारूपाय दिट्ठिया दिट्ठि सामञ्ञगतो विहरति सब्रह्मचारीहि आवि चेव रहो च, अयं पि धम्मो सारणीयो। इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मा सारणीया" ति॥●

२. **दुतियसारणीयसुत्तं** : १. "छयिमे, भिक्खवे, धम्मा सारणीया पियकरणा गरुकरणा सङ्गहाय अविवादाय सामग्गिया एकीभावाय संवत्तन्ति। कतमे छ? इध, भिक्खवे, भिक्खुनो मेत्तं कायकम्मं पच्चुपट्ठितं होति सब्रह्मचारीसु आवि चेव रहो च, अयं पि धम्मो सारणीयो पियकरणो गरुकरणो सङ्गहाय अविवादाय सामग्गिया एकीभावाय संवत्तति।

२. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खुनो मेत्तं वचीकम्मं पच्चुपट्ठितं होति ...पे०... मेत्तं मनोकम्मं पच्चुपट्ठितं होति सब्रह्मचारीसु आवि चेव रहो च, अयं पि धम्मो सारणीयो पियकरणो गरुकरणो सङ्गहाय अविवादाय सामग्गिया एकीभावाय संवत्तति।

३. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु ये ते लाभा धम्मिका धम्मलद्धा अन्तमसो [R.290] पत्तपरियापन्नमत्तं पि तथारूपेहि लाभेहि अप्पटिविभत्तभोगी होति सीलवन्तेहि

---

४. "पुनः, भिक्षुओ! भिक्षु को जो धर्मानुमोदित धर्मलब्ध **लाभ** प्राप्त होते हों, भले ही वे थाली में लगे हुए घी जितने ही क्यों न हों, उन लाभों को वह भिक्षु अपने सदाचारी साथियों में विभक्त कर उनका सामान्यतः उपभोग करता है, ऐसे धर्म का भी स्मरण करना चाहिये। (४)

५. पुनः, भिक्षुओ! जो भिक्षु अपने अखण्ड, छिद्ररहित एवं शुद्ध, कल्मषरहित, साधुजनयोग्य, विद्वत्प्रशंसित, अनिन्द्य एवं समाधि के प्रेरक **शील** के साथ अपने साथियों में प्रकट या गुप्त आचरण करता है; ऐसे धर्म का भी स्मरण करना चाहिये। (५)

६. पुनः, भिक्षुओ! जो दृष्टि आर्य, निर्वाण की ओर ले जाने वाली तथा दुःखक्षय तक पहुँचाने वाली है, ऐसी **दृष्टि** से युक्त होकर जो भिक्षु अपने साथियों के साथ आचरण करता है, ऐसे धर्म का भी स्मरण करना चाहिये। (६)

इस प्रकार भिक्षुओ! ये छह धर्म स्मरणीय हैं॥ ●

**२. द्वितीय स्मरणीयसूत्र : : अन्य छह स्मरणीय धर्म**

१. "भिक्षुओ! ये छह धर्म स्मरणीय, परस्पर स्नेहवर्धक, गौरववर्धक, संग्रह, कलहशान्ति एवं एकता के उत्पादक हैं। कौन से छह? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु अपने साथियों के साथ कोई

सब्रह्मचारीहि साधारणभोगी, अयं पि धम्मो सारणीयो पियकरणो गरुकरणो सङ्गहाय अविवादाय सामग्गिया एकीभावाय संवत्तति।

४. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु यानि तानि सीलानि अखण्डानि अच्छिद्दानि असबलानि अकम्मासानि भुजिस्सानि विञ्ञुप्पसत्थानि अपरामट्ठानि समाधिसंवत्तनिकानि तथारूपेहि सीलेहि सीलसामञ्ञगतो विहरति सब्रह्मचारीहि आवि चेव रहो च, अयं पि धम्मो सारणीयो पियकरणो गरुकरणो सङ्गहाय अविवादाय सामग्गिया एकीभावाय संवत्तति।

५. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु यायं दिट्ठि अरिया निय्यानिका निय्याति [B.257] तक्करस्स सम्मा दुक्खक्खयाय तथारूपाय दिट्ठिया दिट्ठिसामञ्ञगतो विहरति सब्रह्मचारीहि आवि चेव रहो च, अयं पि धम्मो सारणीयो पियकरणो गरुकरणो सङ्गहाय अविवादाय सामग्गिया एकीभावाय संवत्तति। इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मा सारणीया पियकरणा गरुकरणा सङ्गहाय अविवादाय सामग्गिया एकीभावाय संवत्तन्ती" ति॥ [N.13] ●

**३. निस्सारणीयसुत्तं** : १. "छयिमा, भिक्खवे, निस्सारणीया धातुयो। कतमा छ? इध, भिक्खवे, भिक्खु एवं वदेय्य—'मेत्ता हि खो मे चेतोविमुत्ति भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा; अथ च पन मे ब्यापादो चित्तं परियादाय तिट्ठती' ति। सो 'मा हेवं,' तिस्स वचनीयो—'मायस्मा, एवं अवच; मा भगवन्तं अब्भाचिक्खि, न हिं साधु भगवतो अब्भक्खानं, न हि भगवा एवं वदेय्य। अट्ठानमेतं, आवुसो, अनवकासो यं मेत्ताय चेतोविमुत्तिया भाविताय बहुलीकताय यानीकताय वत्थुकताय अनुट्ठिताय परिचिताय सुसमारद्धाय; अथ च पनस्स ब्यापादो चित्तं परियादाय ठस्सति, नेतं ठानं विज्जति। निस्सरणं हेतं, आवुसो, ब्यापादस्स यदिदं मेत्ताचेतोविमुत्ती' ति। [R.291]

---

गुप्त या प्रकट ...पूर्ववत्... ऐसे धर्म का भी स्मरण करना चाहिये॥ (१-६) *(पूर्वसूत्र का अक्षरशः विस्तार कर लें)।* ●

**३. निस्सारणीयसूत्र : : छह निस्सारणीय धर्म**

१. "भिक्षुओ! ये निस्सारणीय (बाहर निकालने योग्य) धातु होती हैं। कौन सी छह? (१) यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु यह कहे—'मैंने मैत्रीचेतोविमुक्ति की अत्यधिक साधना की है, अभ्यास किया है, इस मार्ग पर चला हूँ, उसकी वास्तविकता समझी है, उससे परिचित हुआ हूँ; परन्तु अभी मेरा चित्त व्यापाद (द्वेष) की ओर झुका हुआ है।' उसको 'ऐसा न कहो'—कहकर रोकना चाहिये। उसको बताना चाहिये—'आयुष्मन्! ऐसा न कहो! तुम भगवान् की निन्दा अनावश्यक रूप से न करो, भगवान् पर आरोप लगाना उचित नहीं है; क्योंकि भगवान् ने ऐसा कहा ही नहीं। यह सम्भव नहीं है कि मैत्रीचेतोविमुत्ति की साधना एवं अभ्यास आदि किया जाय तथा उधर द्वेष भी चित्त में अपना स्थान बनाये रखे; क्योंकि व्यापाद का निराकरण ही मैत्रीचेतोविमुक्ति कहलाता है।' (१)

२. ''इध पन, भिक्खवे, भिक्खु एवं वदेय्य—'करुणा हि खो मे चेतोविमुत्ति भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा; अथ च पन मे विहेसा चित्तं परियादाय तिट्ठती' ति। सो 'मा हेवं,' तिस्स वचनीयो—'मायस्मा, एवं अवच; मा भगवन्तं अब्भाचिक्खि, न हि साधु भगवतो अब्भक्खानं, न हि भगवा एवं वदेय्य। अट्ठानमेतं, आवुसो, अनवकासो यं करुणाय चेतोविमुत्तिया भाविताय बहुलीकताय यानीकताय वत्थुकताय अनुट्ठिताय परिचिताय सुसमारद्धाय; अथ च पनस्स विहेसा चित्तं परियादाय ठस्सति, नेतं ठानं विज्जति। निस्सरणं हेतं, आवुसो, विहेसाय यदिदं करुणाचेतोविमुत्ती' ति।

[B.258] ३. ''इध पन, भिक्खवे, भिक्खु एवं वदेय्य—'मुदिता हि खो मे चेतोविमुत्ति भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा; अथ च पन मे अरति चित्तं परियादाय तिट्ठती' ति। सो 'मा हेवं,' तिस्स वचनीयो—'मायस्मा, एवं अवच; मा भगवन्तं अब्भाचिक्खि, न हि साधु भगवतो अब्भक्खानं, न हि भगवा एवं वदेय्य। अट्ठानमेतं, आवुसो, अनवकासो यं मुदिताय चेतोविमुत्तिया भाविताय बहुलीकताय [N.14] यानीकताय वत्थुकताय अनुट्ठिताय परिचिताय सुसमारद्धाय; अथ च पनस्स अरति चित्तं परियादाय ठस्सति, नेतं ठानं विज्जति। निस्सरणं हेतं, आवुसो, अरतिया यदिदं मुदिताचेतोविमुत्ती' ति।

४. ''इध पन, भिक्खवे, भिक्खु एवं वदेय्य—'उपेक्खा हि खो मे चेतोविमुत्ति भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा; अथ च पन मे रागो चित्तं परियादाय तिट्ठती' ति। सो 'मा हेवं,' तिस्स वचनीयो—'मायस्मा, एवं अवच; मा भगवन्तं अब्भाचिक्खि, न हि साधु भगवतो अब्भक्खानं, न हि भगवा एवं वदेय्य। अट्ठान-[R.292] मेतं, आवुसो, अनवकासो यं उपेक्खाय चेतोविमुत्तिया भाविताय बहुलीकताय

---

२. ''भिक्षुओ! यहाँ कोई भिक्षु यह कहे—'मैंने करुणाचेतोविमुक्ति की पूर्ण साधना एवं अभ्यास किया है... परन्तु उसकी विरोधी विहेसा (हिंसा) अब भी मेरे चित्त का पीछा नहीं छोड़ती।' उसको भी 'ऐसा न कहो' कहकर रोकना चाहिये। उससे कहना चाहिये—'आयुष्मन्! ऐसा न कहो।...पूर्ववत्... क्योंकि विहिंसा का निस्सरण ही करुणाचेतोविमुक्ति कहलाता है।' (२)

३. ''भिक्षुओ! यदि कोई भिक्षु यह कहे—'मैंने मुदिता चेतोविमुक्ति की पूर्ण साधना एवं अभ्यास किया है... परन्तु उसके विपरीत अरति (अरुचि) मेरे चित्त को बाँधे रखती है।' उसको भी 'ऐसा न कहो' कहकर रोकना चाहिये। उससे कहना चाहिये—'आयुष्मन्! ऐसा न कहो ...पूर्ववत्... क्योंकि अरति का चित्त से निराकरण ही मुदिताचेतोविमुक्ति कहलाता है।' (३)

४. ''पुनः, भिक्षुओ! यदि कोई भिक्षु यह कहे—'मैंने उपेक्षाचेतोविमुक्ति की अत्यधिक साधना एवं अभ्यास किया है... परन्तु उसके विपरीत राग मेरे चित्त पर अधिकार किये रहता है।' उसको भी 'ऐसा न कहो' कहकर रोकना चाहिये। उसको बताना चाहिये—'तुम ऐसा कहकर

यानीकताय वत्थुकताय अनुट्ठिताय परिचिताय सुसमारद्धाय; अथ च पनस्स रागो चित्तं परियादाय ठस्सति, नेतं ठानं विज्जति। निस्सरणं हेतं, आवुसो, रागस्स यदिदं उपेक्खा-चेतोविमुत्ती' ति।

५. ''इध पन, भिक्खवे, भिक्खु एवं वदेय्य—'अनिमित्ता हि खो मे चेतोविमुत्ति भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा; अथ च पन मे निमित्तानुसारि विञ्ञाणं होती' ति। सो 'मा हेवं,' तिस्स वचनीयो—'मायस्मा, एवं अवच; मा भगवन्तं अब्भाचिक्खि, न साधु भगवतो अब्भक्खानं, न हि भगवा एवं वदेय्य। अट्ठानमेतं, आवुसो, अनवकासो यं अनिमित्ताय चेतोविमुत्तिया भाविताय बहुलीकताय यानीकताय वत्थुकताय अनुट्ठिताय परिचिताय सुसमारद्धाय; अथ च पनस्स निमित्तानुसारि विञ्ञाणं भविस्सति, नेतं ठानं विज्जति। निस्सरणं हेतं, आवुसो, सब्बनिमित्तानं यदिदं अनिमित्ता चेतोविमुत्ती' ति।

६. ''इध पन भिक्खवे, भिक्खु एवं वदेय्य—'अस्मी ति खो मे विगतं, [B.259] अयमहमस्मी ति च न समनुपस्सामि; अथ च पन मे विचिकिच्छाकथङ्कथासल्लं चित्तं परियादाय तिट्ठती' ति। सो 'मा हेवं,' तिस्स वचनीयो—'मायस्मा, एवं अवच; मा भगवन्तं अब्भाचिक्खि, न हि साधु भगवतो अब्भक्खानं, न हि भगवा एवं वदेय्य। अट्ठानमेतं, आवुसो, अनवकासो यं अस्मी ति विगते अयमहमस्मी ति च न समनुपस्सतो; अथ च पनस्स विचिकिच्छाकथङ्कथासल्लं चित्तं परियादाय ठस्सति, नेतं ठानं विज्जति। [N.15] निस्सरणं हेतं, आवुसो, विचिकिच्छाकथङ्कथासल्लस्स यदिदं अस्मी ति मानसमुग्घातो' ति। इमा खो, भिक्खवे, छ निस्सारणीया धातुयो'' ति॥ ●

---

भगवान् पर निरर्थक आरोप लगा रहे हो ...पूर्ववत्... क्योंकि राग का निराकरण ही 'उपेक्षाचेतोविमुक्ति' कहलाता है।' (४)

५. ''यहाँ पुन: भिक्षुओ! यदि कोई भिक्षु ऐसा कहे—'अनिमित्त (रागादि निमित्तों का अभावरूप विमोक्ष) चेतोविमुक्ति की मैंने बहुत साधना एवं अभ्यास किया है, परन्तु रागादि-निमित्तक विज्ञान तब भी मेरे चित्त से सम्पृक्त रहता है।'' 'ऐसा न कहो'—कहकर उसको रोकना चाहिये। ...पूर्ववत्... क्योंकि सर्वविध निमित्तों का निराकरण ही 'अनिमित्ता चेतोविमुक्ति' कहलाता है। (५)

६. ''यहाँ, पुन: कोई भिक्षु यदि ऐसा कहे—'मेरा अहन्त्व भाव नष्ट हो चुका है, मैं 'यह मैं हूँ'—ऐसा भाव भी अपने चित्त में नहीं देखता; फिर भी विचिकित्सा (सन्देह) मेरे चित्त पर आरूढ रहती है।' ऐसे भिक्षु को भी 'ऐसा न कहो'—कह कर रोकना चाहिये। और कहना चाहिये—'आयुष्मन्! ऐसा न कहो, भगवान् पर मिथ्या आरोप न लगाओ! भगवान् ऐसा नहीं कह सकते; क्योंकि यह सम्भव नहीं है; न यह उचित ही है कि किसी का अहन्त्व नष्ट होने पर भी उसके चित्त पर विचिकित्सा आदि आरूढ रहें। क्योंकि विचिकित्सा आदि का चित्त से निस्सरण ही अहन्त्व का विनाश कहलाता है।' (६)

**४. भद्दकसुत्तं** : १. तत्र खो आयस्मा सारिपुत्तो भिक्खू आमन्तेसि—"आवुसो, [R.293] भिक्खवो" ति। "आवुसो" ति खो ते भिक्खू आयस्मतो सारिपुत्तस्स पच्चस्सोसुं। आयस्मा सारिपुत्तो एतदवोच—

२. "तथा तथा, आवुसो, भिक्खु विहारं कप्पेति यथा यथास्स विहारं कप्पयतो न भद्दकं मरणं होति न भद्दिका कालङ्किरिया। कथं चावुसो, भिक्खु तथा तथा विहारं कप्पेति यथा यथास्स विहारं कप्पयतो न भद्दकं मरणं होति न भद्दिका कालङ्किरिया?

३. "इधावुसो, भिक्खु कम्मारामो होति कम्मरतो कम्मारामतं अनुयुत्तो, भस्सारामो होति भस्सरतो भस्सारामतं अनुयुत्तो, निद्दारामो होति निद्दारतो निद्दारामतं अनुयुत्तो, सङ्गणिकारामो होति सङ्गणिकरतो सङ्गणिकारामतं अनुयुत्तो, संसग्गारामो होति संसग्गरतो संसग्गारामतं अनुयुत्तो, पपञ्चारामो होति पपञ्चरतो पपञ्चारामतं अनुयुत्तो। एवं खो, आवुसो, भिक्खु तथा तथा विहारं कप्पेति यथा यथास्स विहारं कप्पयतो न भद्दकं मरणं होति न भद्दिका कालङ्किरिया। अयं वुच्चतावुसो—'भिक्खु सक्कायाभिरतो नप्पजहासि सक्कायं सम्मा दुक्खस्स अन्तकिरियाय'।

[B.260] ४. "तथा तथावुसो, भिक्खु विहारं कप्पेति यथा यथास्स विहारं कप्पयतो भद्दकं

---

"भिक्षुओ! ये छह निस्सारणीय धातु कहलाती हैं॥" ●

**४. भद्रकसूत्र : : उत्तम मृत्यु की प्राप्ति के लिये छह धर्म आवश्यक**

१. वहाँ आयुष्मान् सारिपुत्र ने भिक्षुओं को अपने पास बुलाया। भिक्षु वहाँ आये। तब आयुष्मान् सारिपुत्र ने उन भिक्षुओं को यह उपदेश दिया—

२. "आयुष्मानो! कोई भिक्षु अपना वैसा क्रियाकलाप करता रहता है कि जिस क्रियाकलाप के कारण न उसको उत्तम मृत्यु हो पाती है और न उसके बाद इसके शरीर के प्रति होने वाली क्रियाएँ हीं उत्तम कही जा सकती हैं। आयुष्मानो! वह भिक्षु कैसे क्रियाकलाप करता है कि जिसके कारण होनेवाली न उसकी मृत्यु उत्तम कहलाती है और न उसके बाद होनेवाली क्रियाएँ ही उत्तम कहलाती हैं?"

३. "आयुष्मानो! यहाँ कोई भिक्षु सांसारिक विषयों में सुख मानता है, उन ही विषयों में फँसा रहता है; नाना प्रकार के कलहों में सुख मानता है, उन ही विषयों में फँसा रहता है, दिन रात सोता रहता है, निद्रा में ही सुख मानता है; लोगों की भीड़ में फँसा रहता है, उसी में सुख मानता है; विविध प्रकार के जनसमूह से सम्पृक्त रहता है तथा उस जनसमूह के सम्पर्क में ही सुख मानता है; विविध प्रपञ्चों (झगड़े झंझटों) में फँसा रहता है तथा उनहीं में सुख मानता है। आयुष्मानो! ऐसा भिक्षु वैसी वैसी साधनाओं (क्रिया-कलापों) की कल्पना करता रहता है, जिनके कारण न उसकी उत्तम मृत्यु होती है और न मरणानन्तर उसकी औध्र्वदैहिक क्रिया ही उत्तम हो पाती है। आयुष्मानो! ऐसा भिक्षु 'यह सत्कायदृष्टि में फँसे रहने के कारण सत्कायदृष्टि को न त्यागते हुए अपने दुःखों का अन्त भलीभाँति नहीं कर पाया' कहलाता है।

४. "और कोई भिक्षु अपनी साधनाएँ ऐसे कल्पित करता है कि उन साधनाओं के कारण

मरणं होति भद्दिका कालङ्किरिया। कथञ्चावुसो, भिक्खु तथा तथा विहारं कप्पेति यथा यथास्स विहारं कप्पयतो भद्दकं मरणं होति भद्दिका कालङ्किरिया?

५. "इधावुसो, भिक्खु न कम्मारामो होति न कम्मरतो न कम्मारामतं अनुयुत्तो, न भस्सारामो होति न भस्सरतो न भस्सारामतं अनुयुत्तो, न निद्दारामो होति न निद्दारतो न निद्दारामतं अनुयुत्तो, न सङ्गणिकारामो होति न सङ्गणिकरतो न सङ्गणिकारामतं [N.16] अनुयुत्तो, न संसग्गारामो होति न संसग्गरतो न संसग्गारामतं अनुयुत्तो, न पपञ्चारामो होति न पपञ्चरतो न पपञ्चारामतं अनुयुत्तो। एवं खो आवुसो, भिक्खु तथा तथा विहारं [R.294] कप्पेति यथा यथास्स विहारं कप्पयतो भद्दकं मरणं होति भद्दिका कालङ्किरिया। अयं वुच्चतावुसो—'भिक्खु निब्बानाभिरतो पजहासि सक्कायं सम्मा दुक्खस्स अन्तकिरियाया' ति।

"यो पपञ्चमनुयुत्तो, पपञ्चाभिरतो मगो।
विराधयी सो निब्बानं, योगक्खेमं अनुत्तरं॥
"यो च पपञ्चं हित्वान, निप्पपञ्चपदे रतो।
आराधयी सो निब्बानं, योगक्खेमं अनुत्तरं" ति॥ ●

---

उसकी मृत्यु उत्तम होती है तथा उसकी औध्र्वदैहिक क्रिया भी उत्तम ही होती है। आयुष्मानो! वह कैसे?

५. "आयुष्मानो! यहाँ जो भिक्षु १. सांसारिक विषयों में सुख नहीं मानता और न उन विषयों में अनुरक्त ही होता है; २. व्यर्थ के कलहों में सुख नहीं मानता और न उनमें अनुरक्त ही होता है; ३. न दिन रात सोता रहता है, न निद्रा में सुख ही मानता है; ४. न विविध जनसमूहों में सम्पृक्त रहता है और न उन जनसमूहों में सुख मानता है; ५. न विविध प्रपञ्चों में अनुरक्त रहता है और न उनमें किसी प्रकार का सुख मानता है; तथा ६. वह भीड़ के सम्पर्क में नहीं रहता और वह भीड़ से दूर रहने का निरन्तर प्रयास करता है। आयुष्मानो! ऐसा भिक्षु ऐसी साधनाओं की योजना बनाता है, जिनको क्रियान्वित करने से उसकी मृत्यु तथा उसके बाद की सभी क्रियाएँ भी उत्तम ही होती हैं। आयुष्मानो! ऐसा भिक्षु 'यह निर्वाणप्राप्ति के लिये सतत प्रयत्नशील है; सत्कायदृष्टि का त्याग कर दुःख का अन्त करने में लगा हुआ है'—कहलाता है।

"जो सांसारिक प्रपञ्चों में लगा हुआ है, प्रपञ्चों में ही सुख मानता है उसके लिये ऐसा समझ लेना चाहिये कि वह निर्वाणगामी मार्ग से, जो कि अद्वितीय योगक्षेम[१] का दायक है, भटक गया है॥

"परन्तु जो जगत्प्रपञ्च को छोड़कर प्रपञ्चरहित निर्वाण मार्ग पर चल निकला है वही अद्वितीय योगक्षेमयुक्त निर्वाण की आराधना (उपासना) कर रहा है॥" ●

---

१. आचार्य बुद्धघोष ने **धम्मपद** की २३वीं गाथा में **योगक्षेमं अनुत्तरं** का विशेष अर्थ यह किया है—"काम, भव, दृष्टि एवं अविद्या—ये चार धर्म योगसाधक को संसारावर्त में फँसाकर दुःखी रखते हैं। इन चारों से निर्भय होकर लौकिक एवं लोकोत्तर धर्मों में श्रेष्ठता प्राप्त होने से ही यह (निर्वाण) अनुत्तर (अद्वितीय) है। द्र०—धम्मपद अट्ठकथा, २३ गा०। —सं०

**५. अनुतप्पियसुत्तं :** १. तत्र खो आयस्मा सारिपुत्तो भिक्खू आमन्तेसि—''तथा तथावुसो, भिक्खु विहारं कप्पेति यथा यथास्स विहारं कप्पयतो कालङ्किरिया अनुतप्पा होति। कथं चावुसो, भिक्खु तथा तथा विहारं कप्पेति यथा यथास्स विहारं कप्पयतो कालङ्किरिया अनुतप्पा होति?

२. ''इधावुसो, भिक्खु कम्मारामो होति कम्मरतो कम्मारामतं अनुयुत्तो, भस्सारामो होति... निद्दारामो होति... सङ्गणिकारामो होति... संसग्गारामो होति... पपञ्चारामो होति पपञ्चरतो पपञ्चारामतं अनुयुत्तो। एवं खो, आवुसो, भिक्खु तथा तथा विहारं कप्पेति यथा [B.261] यथास्स विहारं कप्पयतो कालङ्किरिया अनुतप्पा होति। अयं वुच्चतावुसो—'भिक्खु सक्कायाभिरतो नप्पजहासि सक्कायं सम्मा दुक्खस्स अन्तकिरियाय'।

३. ''तथा तथावुसो, भिक्खु विहारं कप्पेति यथा यथास्स विहारं कप्पयतो कालङ्किरिया अननुतप्पा होति। कथं चावुसो, भिक्खु तथा तथा विहारं कप्पेति यथा यथास्स विहारं कप्पयतो कालङ्किरिया अननुतप्पा होति?

४. ''इधावुसो, भिक्खु न कम्मारामो होति न कम्मरतो न कम्मारामतं अनुयुत्तो, [R.295] न भस्सारामो होति... न निद्दारामो होति... न सङ्गणिकारामो होति... न संसग्गारामो [N.17] होति... न पपञ्चरामो होति न पपञ्चरतो न पपञ्चारामतं अनुयुत्तो। एवं खो, आवुसो, भिक्खु तथा तथा विहारं कप्पेति यथा यथास्स विहारं कप्पयतो कालङ्किरिया अननुतप्पा होति। अयं वुच्चतावुसो—'भिक्खु निब्बानाभिरतो पजहासि सक्कायं सम्मा दुक्खस्स अन्तकिरियाया' ति।

''यो पपञ्चमनुयुत्तो, पपञ्चाभिरतो मगो।
विराधयी सो निब्बानं, योगक्खेमं अनुत्तरं॥
''यो च पपञ्चं हित्वान, निप्पपञ्चपदे रतो।
आराधयी सो निब्बानं, योगक्खेमं अनुत्तरं'' ति॥ ●

**६. नकुलपितुसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा भग्गेसु विहरति सुंसुमारगिरे

---

**५. अनुतप्यसूत्र : : छह धर्मों से युक्त पुरुष की मृत्यु पश्चात्ताप योग्य**

१. वहाँ आयुष्मान् सारिपुत्र ने भिक्षुओं को आमन्त्रित कर यों उपदेश किया—''आयुष्मानो! कोई भिक्षु अपनी साधना इस तरह करने लगता है जिसके फलस्वरूप उसकी मृत्यु पश्चात्ताप (अनुताप) योग्य हो जाती है। आयुष्मानो! कैसे वह भिक्षु अपनी साधना (क्रियाकलाप) को ऐसा मोड़ दे देता है कि उसकी मृत्यु पश्चत्ताप योग्य हो जाती है?

२. ''यहाँ कोई भिक्षु सांसारिक विषयों में ही सुख मानता है ...पूर्ववत्... ॥ ●

*(पूर्वसूत्र के समान ही इस सूत्र का भी विस्तार कर लें।)*

**६. नकुलपितासूत्र : : नकुलमाता द्वारा छह धर्मों का व्याख्यान**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) भर्गप्रदेश के सुंसुमार गिरि (चुनार) स्थित भेसकड़ावन के

भेसकळावने मिगदाये। तेन खो पन समयेन नकुलपिता गहपति आबाधिको होति दुक्खितो बाळ्हगिलानो। अथ खो नकुलमाता गहपतानी नकुलपितरं गहपतिं एतदवोच—

२. "मा खो त्वं, गहपति, सापेक्खो कालमकासि। दुक्खा, गहपति, सापेक्खस्स कालङ्किरिया; गरहिता च भगवता सापेक्खस्स कालङ्किरिया। सिया खो पन ते, गहपति, एवमस्स—'न नकुलमाता गहपतानी ममच्चयेन सक्खिस्सति दारके पोसेतुं, घरावासं सन्धरितुं' ति। न खो पनेतं, गहपति, एवं दट्ठब्बं। कुसलाहं, गहपति, कप्पासं [B.262] कन्तितुं वेणिं ओलिखितुं। सक्कोमहं, गहपति, तवच्चयेन दारके पोसेतुं, घरावासं [R.296] सन्धरितुं। तस्मातिह त्वं, गहपति, मा सापेक्खो कालमकासि। दुक्खा, गहपति, सापेक्खस्स कालङ्किरिया; गरहिता च भगवता सापेक्खस्स कालङ्किरिया।

३. "सिया खो पन ते, गहपति एवमस्स—'नकुलमाता गहपतानी ममच्चयेन अञ्ञं घरं गमिस्सती' ति। न खो पनेतं, गहपति, एवं दट्ठब्बं। त्वं चेव खो, गहपति, जानासि अहं च, यं नो सोळसवस्सानि गहट्ठकं ब्रह्मचरियं समाचिण्णं। तस्मातिह त्वं, [N.18] गहपति, मा सापेक्खो कालमकासि। दुक्खा, गहपति, सापेक्खस्स कालङ्किरिया; गरहिता च भगवता सापेक्खस्स कालङ्किरिया।

४. "सिया खो पन ते, गहपति, एवमस्स—'नकुलमाता गहपतानी ममच्चयेन न

---

मृगदाव में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय नकुलपिता गृहपति किसी भयङ्कर रोग से ग्रस्त होकर अत्यधिक दुःखी था। उस समय गृहपति नकुलपिता की पत्नी नकुलमाता ने उससे यों कहा—

२. "गृहपति! आप मेरी ओर से किसी प्रकार की आशङ्का मन में रखकर अपना देहत्याग न करना; क्योंकि आशङ्कायुक्त देहत्याग की भगवान् ने भी निन्दा की है। सम्भवतः आपके मन में यह आशङ्का हो—'यह मेरी पत्नी नकुलमाता मेरे देहत्याग के बाद मेरे बाल-बच्चों का पालन-पोषण न कर पायगी, घर को आज के समान सुव्यवस्थित न रख सकेगी।' गृहपति! आपको यह शङ्का नहीं करनी चाहिये; क्योंकि मैं रूई से सूत कातना एवं चोटी गूँथना बहुत अच्छा जानती हूँ, ये कार्य कर, आपके मरणानन्तर भी इन बाल-बच्चों का यथावत् पालन-पोषण करने में समर्थ हूँ। अतः आप, गृहपति! अपने मन में एतद्विषयक किसी प्रकार की आशङ्का रखते हुए देहत्याग न करना; क्योंकि मन में किसी प्रकार की आशङ्का रखते हुए देहत्याग करना बहुत दुःखप्रद होता है; ऐसे देहत्याग की भगवान् ने भी निन्दा ही की है। (१)

३. "या फिर, गृहपति! आपके मन में मेरे प्रति यह आशङ्का हो—'यह नकुलमाता मेरे मरणानन्तर किसी दूसरे के साथ विवाह कर उसके घर चली जायगी।' गृहपति! आपको मेरे प्रति यह भी शङ्का न करनी चाहिये; क्योंकि गृहपति! आप और मैं दोनों ही जानते हैं कि हम दोनों ने अपना वह सोलह वर्ष का वैवाहिक जीवन कितने सौमनस्य एवं परस्पर सहमतिपूर्वक बिताया है। अतः गृहपति! आप एतद्विषयक आशङ्का रखते हुए भी देहत्याग न करना; क्योंकि मन में ...पूर्ववत्... भगवान् ने भी निन्दा ही की है। (२)

४. "या, गृहपति! आपके मन में मेरे प्रति यह आशङ्का हो—'यह नकुलमाता मेरे मरने के

दस्सनकामा भविस्सति भगवतो, न दस्सनकामा भिक्खुसङ्घस्सा' ति। न खो पनेतं, गहपति, एवं दट्ठब्बं। अहं हि, गहपति, तवच्चयेन दस्सनकामतरा चेव भविस्सामि भगवतो, दस्सनकामतरा च भिक्खुसङ्घस्स। तस्मातिह त्वं, गहपति, मा सापेक्खो कालमकासि। दुक्खा, गहपति, सापेक्खस्स कालङ्किरिया; गरहिता च भगवता सापेक्खस्स कालङ्किरिया।

५. ''सिया खो पन ते, गहपति, एवमस्स—'न नकुलमाता गहपतानी ममच्चयेन सीलेसु परिपूरकारिनी' ति। न खो पनेतं, गहपति, एवं दट्ठब्बं। यावता खो, गहपति, तस्स भगवतो साविका गिही ओदातवसना सीलेसु परिपूरकारिनियो, अहं तासं अञ्ञतरा। यस्स खो पनस्स कङ्खा वा विमति वा—अयं सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो भग्गेसु विहरति [R.297] सुंसुमारगिरे भेसकळावने मिगदाये—तं भगवन्तं उपसङ्कमित्वा पुच्छतु। तस्मातिह त्वं, गहपति, मा सापेक्खो कालमकासि। दुक्खा, गहपति, सापेक्खस्स कालङ्किरिया; गरहिता च भगवता सापेक्खस्स कालङ्किरिया।

[B.263] ६. ''सिया खो पन ते, गहपति, एवमस्स—'न नकुलमाता गहपतानी लाभिनी अज्झत्तं चेतोसमथस्सा' ति। न खो पनेतं, गहपति, एवं दट्ठब्बं। यावता खो, गहपति, तस्स भगवतो साविका गिही ओदातवसना लाभिनियो अज्झत्तं चेतोसमथस्स, अहं तासं अञ्ञतरा। यस्स खो पनस्स कङ्खा वा विमति वा—अयं सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो भग्गेसु विहरति सुंसुमारगिरे भेसकळावने मिगदाये—तं भगवन्तं उपसङ्कमित्वा पुच्छतु। तस्मातिह त्वं, गहपति, मा सापेक्खो कालमकासि। दुक्खा, गहपति, सापेक्खस्स कालङ्किरिया; गरहिता च भगवता सापेक्खस्स कालङ्किरिया।

---

बाद न भगवान् के दर्शन करने की इच्छा करेगी, और न सङ्घ की प्रतिष्ठा रखेगी।' यह आशङ्का भी गृहपति! आप अपने मन से निकाल दें; क्योंकि मैं इन दोनों (भगवान् और सङ्घ) के दर्शन आज से भी अधिक उत्सुकतापूर्वक करूँगी। अत: गृहपति! ...पूर्ववत्... भगवान् ने भी निन्दा की है। (३)

५. ''या, गृहपति! आपके मन में मेरे प्रति यह आशङ्का हो—'यह नकुलमाता मेरे मरने के बाद अपने धार्मिक शीलों का यथावत् पालन न करेगी।' गृहपति! आपको यह आशङ्का भी नहीं करनी चाहिये; क्योंकि वर्तमान में उन भगवान् की श्वेतवस्त्रधारी जितनी भी गृहस्थ श्राविकाएँ शील का पालन करने वाली हैं उन सबमें मैं भी एक हूँ। यदि इस विषय में किसी को कोई शङ्का या सन्देह हो तो वह भगवान् के पास जाकर, जो इस समय भेसकड़ावन में विराज रहे हैं, पूछ सकता है। अत: गृहपति! ...पूर्ववत्... भगवान् ने भी निन्दा की है। (४)

६. ''या, गृहपति! आपके मन में मेरे प्रति यह आशङ्का हो—'यह नकुलमाता आध्यात्मिक चित्तसमाधि की अधिकारिणी न हो पायगी।' यह आशङ्का भी गृहपति! आपको यह आशङ्का भी मेरे प्रति नहीं करनी चाहिये; क्योंकि वर्तमान में उन भगवान् की जितनी भी गृहस्थ श्राविकाएँ आध्यात्मिक चित्तसमाधि की अधिकारिणी हैं उनमें मैं भी एक हूँ। यदि किसी को इस विषय में ...पूर्ववत्... भगवान् ने निन्दा की है। (५)

७. ''सिया खो पन ते, गहपति, एवमस्स—'न नकुलमाता गहपतानी इमस्मिं धम्मविनये ओगाधप्पत्ता पतिगाधप्पत्ता अस्सासप्पत्ता तिण्णविचिकिच्छा विगतकथङ्कथा वेसारज्जप्पत्ता अपरप्पच्चया सत्थु सासने विहरती' ति। न खो पनेतं, गहपति, एवं [N.19] दट्ठब्बं। यावता खो, गहपति, तस्स भगवतो साविका गिही ओदातवसना इमस्मिं धम्मविनये ओगाधप्पत्ता पतिगाधप्पत्ता अस्सासप्पत्ता तिण्णविचिकिच्छा विगतकथङ्कथा वेसारज्जप्पत्ता अपरप्पच्चया सत्थुसासने विहरन्ति, अहं तासं अञ्ञतरा। यस्स खो पनस्स कङ्खा वा विमति वा—अयं सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो भग्गेसु विहरति सुंसुमारगिरे भेसकळावने मिगदाये—तं भगवन्तं उपसङ्कमित्वा पुच्छतु। तस्मातिह त्वं, गहपति, मा सापेक्खो कालमकासि। दुक्खा, गहपति, सापेक्खस्स कालङ्किरिया; गरहिता च भगवता सापेक्खस्स कालङ्किरिया'' ति।

८. अथ खो नकुलपितुनो गहपतिस्स नकुलमातरा गहपतानिया इमिना [R.298] ओवादेन ओवदियमानस्स सो आबाधो ठानसो पटिप्पस्सम्भि। वुट्ठाहि च नकुलपिता गहपति तम्हा आबाधा; तथा पहीनो च पन नकुलपितुनो गहपतिस्स सो आबाधो अहोसि। अथ खो नकुलपिता गहपति गिलाना वुट्ठितो अचिरवुट्ठितो गेलञ्ञा दण्डमोलुब्भ [B.264] येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो नकुलपितरं गहपतिं भगवा एतदवोच—

९. ''लाभा ते, गहपति, सुलद्धं ते, गहपति! यस्स ते नकुलमाता गहपतानी अनुकम्पिका अत्थकामा ओवादिका अनुसासिका। यावता खो, गहपति, मम साविका गिही ओदातवसना सीलेसु परिपूरकारिनियो, नकुलमाता गहपतानी तासं अञ्ञतरा। यावता खो

---

७. ''या, गृहपति! आपके मन में मेरे प्रति यह आशङ्का हो—'यह नकुलमाता इस धर्मविनय के अन्तस्तल तक नहीं पहुँची है, डुबकी नहीं लगा सकी है, आश्वास नहीं प्राप्त कर सकी है, असन्दिग्ध नहीं हुई है, तर्क-वितर्क से ऊपर नहीं उठी है, कुशलता नहीं प्राप्त कर सकी है, पूर्ण निष्ठा वाली होकर शास्ता के धर्म की साधना नहीं कर सकी है।' गृहपति! आपको यह सन्देह भी नहीं करना चाहिये, क्योंकि गृहपति वर्तमान में भगवान् की जितनी भी गृहस्थ श्राविकाएँ उपर्युक्त गुणों से युक्त हैं उनमें से एक मैं भी हूँ। यदि किसी को मेरे इस कथन में सन्देह हो तो ...पूर्ववत्... भगवान् ने भी निन्दा की है।'' (६)

८. तब नकुलमाता द्वारा नकुलपिता गृहपति को ऐसा उपदेश दिये जाने पर नकुलपिता गृहपति का वह भीषण रोग शान्त हो गया। रोग के शान्त होने पर, नकुलपिता रोग से हुई दुर्बलता के कारण दण्ड (लाठी) के सहारे से भगवान् के सम्मुख पहुँचा। वहाँ पहुँचकर, भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे नकुल गृहपति को भगवान् ने यह कहा—

९. ''गृहपति! तुमने बहुत कुछ पा लिया, तुमको बहुत लाभ हुआ कि तुम्हारी पत्नी नकुलमाता तुम पर इतनी कृपालु है, तुम्हारा हित चाहने वाली है, तुमको ऐसा उत्तम उपदेश एवं अनुशासन करती है। गृहपति! वर्तमान में जितनी भी श्वेतवस्त्रधारिणी गृहस्थ श्राविकाएँ सदाचार का

गहपति, मम साविका गिही ओदातवसना लाभिनियो अज्झत्तं चेतोसमथस्स, नकुलमाता गहपतानी तासं अञ्ञतरा। यावता खो, गहपति, मम साविका गिही ओदातवसना इमस्मिं धम्मविनये ओगाधप्पत्ता पतिगाधप्पत्ता अस्सासप्पत्ता तिण्ण-विचिकिच्छा विगतकथङ्कथा वेसारज्जप्पत्ता अपरप्पच्चया सत्थुसासने विहरन्ति, नकुलमाता गहपतानी तासं अञ्ञतरा। लाभा ते, गहपति, सुलद्धं ते, गहपति! यस्स ते नकुलमाता गहपतानी अनुकम्पिका अत्थकामा ओवादिका अनुसासिका'' ति॥ ●

[N.20] **७. सोप्पसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथ-पिण्डिकस्स आरामे। अथ खो भगवा सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठितो येनुपट्ठानसाला तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। आयस्मा पि खो सारिपुत्तो सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठितो येनुपट्ठानसाला तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा [R.299] एकमन्तं निसीदि। आयस्मा पि खो महामोग्गल्लानो... आयस्मा पि खो महा-कस्सपो... आयस्मा पि खो महाकच्चायनो... आयस्मा पि खो महाकोट्ठिको... आयस्मा पि खो महाचुन्दो... आयस्मा पि खो महाकप्पिनो... आयस्मा पि खो अनुरुद्धो... आयस्मा पि रेवतो... आयस्मा पि खो आनन्दो सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठितो येनुपट्ठानसाला तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। अथ खो भगवा [B.265] बहुदेव रत्तिं निसज्जाय वीतिनामेत्वा उट्ठायासना विहारं पाविसि। ते पि खो आयस्मन्तो अचिरपक्कन्तस्स भगवतो उट्ठायासना यथाविहारं अगमंसु। ये पन तत्थ भिक्खू नवा अचिरपब्बजिता अधुनागता इमं धम्मविनयं ते याव सुरियुग्गमना काकच्छमाना सुपिंसु।

---

पूर्णत: पालन करनेवाली हैं उनमें नकुलमाता भी एक है। ...आध्यात्मिक चित्तसमाधि की अधिकारिणी हैं... इस धर्मविनय के अन्तस्तल तक पहुँची हुई हैं, नकुलमाता उनमें से एक हैं। अत:, गृहपति! तुमने बहुत कुछ पा लिया, तुमको बहुत लाभ हुआ कि तुमको नकुलमाता जैसी पत्नी मिली, जिसने तुमको ऐसा उत्तम उपदेश एवं अनुशासन किया॥'' ●

**७. स्वापसूत्र : : षड्विध साधनाओं में सावधानता**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवन विहार में साधनाहेतु विराजमान थे। तब भगवान् सायङ्काल एकान्त साधना से उठकर उपस्थानशाला में पधारे। आयुष्मान् सारिपुत्र भी... आयुष्मान् मौद्गल्यायन भी... आयुष्मान् महाकाश्यप भी... आयुष्मान् महाकात्यायन भी... आयुष्मान् महाकौष्ठिक भी... आयुष्मान् महाचुन्द भी... आयुष्मान् महाकप्पिन भी... आयुष्मान् अनुरुद्ध भी... आयुष्मान् रेवत भी... तथा आयुष्मान् आनन्द भी सायङ्काल एकान्त साधना से उठकर उस उपस्थानशाला (सभाभवन) में आये। वहाँ आकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। तब भगवान् रात्रि का बहुत सा भाग बैठकर ध्यान भावना करते हुए बिताकर आसन से उठकर गन्धकुटी में पधार गये। तदनन्तर अन्य स्थविर भिक्षु भी, भगवान् के पधार जाने के कुछ काल बाद अपने अपने आसन पर चले गये। तदनन्तर ऐसे नये भिक्षु, जो कुछ समय पूर्व ही इस धर्मविषय में दीक्षित हुए थे, वे सूर्योदय के बाद तक नाक बजाते हुए

अद्दसा खो भगवा दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन ते भिक्खू याव सुरियुग्गमना काकच्छमाने सुपन्ते। दिस्वा येनुपट्ठानसाला तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। निसज्ज खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—

२. ''कहं नु खो, भिक्खवे, सारिपुत्तो? कहं महामोग्गल्लानो? कहं महाकस्सपो? कहं महाकच्चायनो? कहं महाकोट्ठिको? कहं महाचुन्दो? कहं महाकप्पिनो? कहं अनुरुद्धो? कहं रेवतो? कहं आनन्दो? कहं नु खो ते, भिक्खवे, थेरा सावका गता'' ति?

''ते पि खो, भन्ते, आयस्मन्तो अचिरपक्कन्तस्स भगवतो उट्ठायासना यथाविहारं अगमंसू'' ति।

३. ''केन नो तुम्हे, भिक्खवे, थेरा भिक्खू नागता ति याव सुरियुग्गमना काकच्छमाना सुपथ? तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, अपि नु तुम्हेहि दिट्ठं वा सुतं वा—[R.300] 'राजा खत्तियो मुद्धाभिसित्तो यावदत्थं सेय्यसुखं पस्ससुखं मिद्धसुखं अनुयुत्तो [N.21] विहरन्तो यावजीवं रज्जं कारेन्तो जनपदस्स वा पियो मनापो''' ति?

''नो हेतं, भन्ते''।

''साधु, भिक्खवे! मया पि खो एतं, भिक्खवे, नेव दिट्ठं न सुतं—'राजा खत्तियो मुद्धाभिसित्तो यावदत्थं सेय्यसुखं पस्ससुखं मिद्धसुखं अनुयुत्तो विहरन्तो यावजीवं रज्जं कारेन्तो जनपदस्स वा पियो मनापो' ति।

४. ''तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, अपि नु तुम्हेहि दिट्ठं वा सुतं वा—'रट्ठिको ...पे०...

---

(खर्राटे लेते हुए) सोये पड़े रहे। भगवान् ने अपने दिव्य नेत्रों से, जो साधारण मानव को प्राप्त नहीं होते, उन नवप्रव्रजित भिक्षुओं को उस समय तक वैसे सोते हुए देखकर वे उपस्थानशाला में पधारे। वहाँ प्रज्ञप्त आसन पर विराजमान हुए। विराज कर भगवान् ने उन भिक्षुओं से पूछा—

२. ''सारिपुत्र कहाँ हैं? मौद्गल्यायन... महाकाश्यप... महाकात्यायन... महाकौष्ठिक... महाचुन्द... महाकप्पिन... अनुरुद्ध... रेवत... आनन्द कहाँ हैं?'' भिक्षुओ! ये सब स्थविर कहाँ हैं?

''भन्ते! वे आयुष्मान् भी आप (भगवान्) के पधारने के कुछ समय बाद ही आसन से उठकर अपने अपने स्थान पर चले गये।''

३. ''तुम लोग क्यों नहीं गये? और यहाँ सूर्योदय के बाद भी नाक बजाते हुए क्यों सोये पड़े हो? तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! क्या तुमने कभी ऐसा देखा या सुना है कि कोई मूर्धाभिषिक्त क्षत्रिय (राजा) जब तक चाहे तब तक सोया पड़ा रहे, करवटें बदलता रहे। और इस तरह का आचरण करता हुआ, जीवनपर्यन्त राज्य करता हुआ भी वह प्रजा का प्रिय एवं मनोनुकूल रह सकता है?''

''नहीं, भन्ते!''

''ठीक है, भिक्षुओ! उचित ही कह रहे हो। मैंने भी ऐसा न देखा न सुना कि कोई मूर्धाभिषिक्त क्षत्रिय (राजा) जब तक चाहे तब तक सोया पड़ा रहकर, करवटें बदलता रहकर जीवनपर्यन्त राज्य करता रहकर भी जनता का प्रिय एवं मनोनुकूल बन सके।

पेत्तणिको ... सेनापतिको ... गामगामणिको ... पूगगामणिको यावदत्थं सेय्यसुखं पस्ससुखं मिद्धसुखं अनुयुत्तो विहरन्तो यावजीवं पूगगामणिकत्तं कारेन्तो पूगस्स वा पियो मनापो''' ति? "नो हेतं, भन्ते"।

"साधु, भिक्खवे! मया पि खो एतं, भिक्खवे, नेव दिट्ठं न सुतं—'पूगगामणिको यावदत्थं सेय्यसुखं पस्ससुखं मिद्धसुखं अनुयुत्तो विहरन्तो यावजीवं पूगगामणिकत्तं वा कारेन्तो पूगस्स वा पियो मनापो' ति।

[B.266] ५. "तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, अपि नु तुम्हेहि दिट्ठं वा सुतं वा—'समणो वा ब्राह्मणो वा यावदत्थं सेय्यसुखं पस्ससुखं मिद्धसुखं अनुयुत्तो इन्द्रियेसु अगुत्तद्वारो भोजने अमत्तञ्ञू जागरियं अननुयुत्तो अविपस्सको कुसलानं धम्मानं पुब्बरत्तापररत्तं बोधिपक्खियानं धम्मानं भावनानुयोगं अननुयुत्तो आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्तो''' ति?

"नो हेतं, भन्ते"।

"साधु, भिक्खवे! मया पि खो एतं, भिक्खवे, नेव दिट्ठं न सुतं—'समणो वा [R.301] ब्राह्मणो वा यावदत्थं सेय्यसुखं पस्ससुखं मिद्धसुखं अनुयुत्तो इन्द्रियेसु अगुत्तद्वारो भोजने अमत्तञ्ञू जागरियं अननुयुत्तो अविपस्सको कुसलानं धम्मानं पुब्बरत्तापररत्तं बोधिपक्खियानं धम्मानं भावनानुयोगं अननुयुत्तो आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे समयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्तो' ति।

[N.22] ६. "तस्मातिह, भिक्खवे, एवं सिक्खितब्बं—'इन्द्रियेसु गुत्तद्वारा भविस्साम,

---

४. "तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! क्या तुमने यह भी देखा या सुना है कि राज्य का कोई उच्चतम अधिकारी... कोई पिता से प्राप्त सम्पत्ति पर जीने वाला (जमींदार)... कोई सेनापति... कोई ग्राम का प्रधान... कोई समूह का प्रधान जब तक चाहे तब तक सोता रहे तथा करवटें बदलता रहे, समूह की जीवनपर्यन्त प्रधानता करता हुआ भी समूह का प्रिय एवं मनोनुकूल बना रह सके।"

"नहीं, भन्ते!"

"ठीक कह रहे हो, भिक्षुओ! मैंने भी कभी नहीं सुना है ...पूर्ववत्...मनोनुकूल बना रहे।"

५. "तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! कि तुमने देखा या सुना है कि कोई श्रमण या ब्राह्मण यथेच्छ सोता हुआ करवट बदलता हुआ, इन्द्रियों से असंयत रहकर, भोजन की मात्रा में अज्ञानी रहकर, जागरण में सावधानी न रखकर, कुशल धर्मों की पालना में पहले-पीछे का ध्यान न रखकर, बोधिपक्षीय धर्मों की भावना में ध्यान न लगाकर, आश्रवों के क्षय से अनाश्रव चेतोविमुक्ति को इसी जन्म में स्वयं जानकर, साक्षात् कर प्राप्त कर साधना कर रहा हो?" "नहीं, भन्ते!"

"भिक्षुओ! यह भी तुम ठीक ही कह रहे हो कि कोई श्रमण या ब्राह्मण ...पूर्ववत्... प्राप्त कर साधना कर रहा हो।"

६. "अत: भिक्षुओ! तुम्हें यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये—'हम इन्द्रियों में संयत रहेंगे,

भोजने मत्तञ्ञुनो, जागरियं अनुयुत्ता, विपस्सका कुसलानं धम्मानं, पुब्बरत्तापररत्तं बोधिपक्खियानं धम्मानं, भावनानुयोगमनुयुत्ता विहरिस्सामा' ति। एवं हि वो, भिक्खवे, सिक्खितब्बं'' ति॥ ●

**८. मच्छबन्धसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा कोसलेसु चारिकं चरति महता भिक्खुसङ्घेन सद्धिं। अद्दसा खो भगवा अद्धानमग्गप्पटिपन्नो अञ्ञतरस्मिं पदेसे मच्छिकं मच्छबन्धं मच्छे वधित्वा वधित्वा विक्किणमानं। दिस्वा मग्गा ओक्कम्म अञ्ञतरस्मिं रुक्खमूले पञ्ञत्ते आसने निसीदि। निसज्ज खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—

२. ''पस्सथ नो तुम्हे, भिक्खवे, अमुं मच्छिकं मच्छबन्धं मच्छे वधित्वा वधित्वा विक्किणमानं'' ति? ''एवं, भन्ते''।

३. ''तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, अपि नु तुम्हेहि दिट्ठं वा सुतं वा—'मच्छिको मच्छबन्धो मच्छे वधित्वा वधित्वा विक्किणमानो तेन कम्मेन तेन आजीवेन [R.302] हत्थियायी वा अस्सयायी वा रथयायी वा यानयायी वा भोगभोगी वा महन्तं वा भोगक्खन्धं अज्झावसन्तो''' ति? ''नो हेतं, भन्ते''। [B.267]

''साधु, भिक्खवे! मया पि खो एतं, भिक्खवे, नेव दिट्ठं न सुतं—'मच्छिको मच्छबन्धो मच्छे वधित्वा वधित्वा विक्किणमानो तेन कम्मेन तेन आजीवेन हत्थियायी वा अस्सयायी वा रथयायी वा यानयायी वा भोगभोगी वा महन्तं वा भोगक्खन्धं अज्झावसन्तो' ति। तं किस्स हेतु? तेहि सो, भिक्खवे, मच्छे वज्झे वधायुपनीते पापकेन मनसानुपेक्खति,

---

भोजन की मात्रा का ज्ञान रखेंगे, जागरण में सावधानी रखेंगे, कुशल धर्मों के पालन की समीक्षा करते रहेंगे तथा बोधिपक्षीय धर्मों की पूर्वापरता का ध्यान रखते हुए साधना में तत्पर रहेंगे।' भिक्षुओ! तुम्हें यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये॥'' ●

**८. मत्स्यबन्धसूत्र : : हिंसक मनुष्य की भौतिक उन्नति असम्भव**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) कोसल प्रदेश में विशाल भिक्षुसङ्घ के साथ चारिका कर रहे थे। इसी समय मार्ग में चलते हुए भगवान् ने कहीं किसी स्थान पर किसी मछुआरे को मछली मार मारकर बेचते हुए देखा। यह देखकर भगवान् मार्ग से हटकर किसी वृक्ष के नीचे आसन पर विराजे। विराजकर भगवान् ने भिक्षुओं से पूछा—

२. ''भिक्षुओ! क्या तुम इस मछुआरे को मछलियाँ मार मारकर बेचते हुए देख रहे हो?''

''हाँ, भन्ते!''

३. तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! तुमने कभी देखा या सुना है—'कोई मछुआरा मछलियाँ मारकर उनको बेचकर उस कर्म से, उस आजीविका से हाथी की सवारी, घोड़े की सवारी, रथ की सवारी या किसी अन्य यान की सवारी करता हुआ विविध ऐश्वर्य भोग वाली विशाल सम्पत्ति का स्वामी हो सकता है?' ''नहीं, भन्ते!''

''उचित कह रहे हो, भिक्षुओ! ऐसे हीनकर्म (मछली मारना) से हाथी घोड़े की सवारी या विशाल सम्पत्ति एकत्र नहीं की जा सकती। वह किस कारण? क्योंकि उस मछुआरे के चित्त पर

तस्मा सो नेव हत्थियायी होति न अस्सयायी न रथयायी न यानयायी न भोगभोगी, न महन्तं भोगक्खन्धं अज्झावसति।

४. ''तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, अपि नु तुम्हेहि दिट्ठं वा सुतं वा—'गोघातको गावो वधित्वा वधित्वा विक्किणमानो तेन कम्मेन तेन आजीवेन हत्थियायी वा अस्सयायी वा [N.23] रथयायी वा यानयायी वा भोगभोगी वा महन्तं भोगक्खन्धं अज्झावसन्तो''' ति?

''नो हेतं, भन्ते''।

''साधु, भिक्खवे! मया पि खो एतं, भिक्खवे, नेव दिट्ठं न सुतं—'गोघातको गावो वधित्वा वधित्वा विक्किणमानो तेन कम्मेन तेन आजीवेन हत्थियायी वा अस्सयायी वा रथयायी वा यानयायी वा भोगभोगी वा महन्तं वा भोगक्खन्धं अज्झावसन्तो' ति। तं किस्स हेतु? तेहि सो, भिक्खवे, गावो वज्झे वधायुपनीते पापकेन मनसानुपेक्खति, तस्मा सो नेव हत्थियायी होति न अस्सयायी न रथयायी न यानयायी न भोगभोगी, न महन्तं भोगक्खन्धं अज्झावसति।

[R.303] ५. ''तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, अपि नु तुम्हेहि दिट्ठं वा सुतं वा—'ओरब्भिको ...पे०... सूकरिको ...पे०... साकुणिको ...पे०... मागविको मगे वधित्वा वधित्वा विक्किणमानो तेन कम्मेन तेन आजीवेन हत्थियायी वा अस्सयायी वा रथयायी वा यानयायी वा भोगभोगी वा महन्तं वा भोगक्खन्धं अज्झावसन्तो''' ति?

''नो हेतं, भन्ते''।

''साधु, भिक्खवे! मया पि खो एतं, भिक्खवे, नेव दिट्ठं न सुतं—'मागविको मगे

---

दिनरात निरन्तर मछलियों की हत्या ही चढ़ी रहती है। इस पाप के फलस्वरूप वह हाथी घोड़ों की दुर्लभ सवारी एवं विशाल सम्पत्ति का भागी नहीं हो पाता। (१)

४. ''तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! तुम लोगों ने कभी देखा या सुना है—'कोई गौओं का वध करने वाला गौओं को काट काटकर बेचने वाला उस कर्म से उस व्यापार से हाथी घोड़ों की सवारी ... या विशाल सम्पत्ति अर्जित कर सका हो?' '' ''नहीं, भन्ते!''

''यह भी उचित कह रहे हो, भिक्षुओ! क्योंकि ऐसा कभी न देखा न सुना गया कि कोई गौओं का हत्यारा गौओं को काटकर बेचता हुआ इस हीन कर्म से हाथी घोड़ों की सवारी या विशाल सम्पत्ति अर्जित कर पाया हो। वह किस कारण? क्योंकि, भिक्षुओ! उस गोवधक के चित्त पर गोहत्या ही निरन्तर चढ़ी रहती है, इस हीन कर्म के फलस्वरूप वह हाथी घोड़ों की सवारी... न प्राप्त करता है और विशाल सम्पत्ति भी अर्जित नहीं कर पाता। (२)

५. ''तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! तुमने कभी देखा या सुना है—'कोई भेड़ों को काटने वाला ...पूर्ववत्... सूअरों को काटने वाला ...पूर्ववत्... पक्षियों को मारने वाला ...पूर्ववत्... मृगों को मारने वाला मृगों को मार मारकर उनको बेचकर ...पूर्ववत्... विशाल सम्पत्ति का स्वामी हो सकता है?'

''नहीं, भन्ते!''

''भिक्षुओ! तुम उचित ही कह रहे हो। मैंने भी कहीं न देखा न सुना कि कोई मृगों को मार

वधित्वा वधित्वा विक्किणमानो तेन कम्मेन तेन आजीवेन हत्थियायी वा अस्सयायी वा रथयायी वा यानयायी वा भोगभोगी वा महन्तं वा भोगक्खन्धं अज्झावसन्तो' ति। तं किस्स हेतु? ते हि सो, भिक्खवे, मगे वज्झे वधायुपनीते पापकेन मनसानुपेक्खति, तस्मा सो नेव हत्थियायी होति न अस्सयायी न रथयायी न यानयायी न भोगभोगी, न महन्तं भोगक्खन्धं अज्झावसति। ते हि नाम सो, भिक्खवे, तिरच्छानगते पाणे वज्झे वधायुपनीते [B.268] पापकेन मनसानुपेक्खमानो नेव हत्थियायी भविस्सति न अस्सयायी न रथयायी न यानयायी न भोगभोगी, न महन्तं भोगक्खन्धं अज्झावसिस्सति। को पन वादो यं मनुस्सभूतं वज्झं वधायुपनीतं पापकेन मनसानुपेक्खति! तं हि तस्स, भिक्खवे, होति दीघरत्तं अहिताय दुक्खाय। कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जती'' ति॥ ●

**९. पठममरणस्सतिसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा नातिके विहरति गिञ्ज- [N.24] कावसथे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—''भिक्खवो'' ति। ''भदन्ते'' ति ते [R.304] भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

२. ''मरणस्सति, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना। भावेथ नो तुम्हे, भिक्खवे, मरणस्सतिं'' ति?

३. एवं वुत्ते अञ्ञतरो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—''अहं खो, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं'' ति।

---

मारकर बेचने वाला इस हीन कर्म से पापमय आजीविका से हाथी घोड़ों की सवारी या विशाल सम्पत्ति अर्जित कर पाया हो। वह किस कारण? वह इसलिये कि भिक्षुओ! उन मृगों के हत्यारे के चित्त पर निरन्तर इन मृगों की हत्या का पाप ही चढ़ा रहता है। इस पापकर्म के फलस्वरूप न वह हाथी की सवारी, न घोड़े की सवारी, न रथ की सवारी प्राप्त कर पाता है, न कोई अन्य किसी प्रकार की विशाल सम्पत्ति ही अर्जित कर पाता है। फिर उस पापी के विषय में तो बात ही क्या की जाय जो निरन्तर मनुष्यों का वध कर अपने चित्त पर मनुष्यवध का पाप लाद लेता है। वह पाप ही उसके लिये चिरकाल तक अहितकर एवं दुःखप्रद होता रहता है। इस देहपात के बाद, मरणानन्तर, वह पापी अपायभूत दुर्गतिमय नरक में जाकर प्रादुर्भूत होता है॥'' ●

**९. प्रथम मरणस्मृतिसूत्र : : छह प्रकार की मरणस्मृति**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) नादिका या नाटिका (वज्जिप्रदेश) के गृञ्जकावसथ में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को अपने सम्मुख बुलाया, और उनको यह उपदेश किया—

२. ''भिक्षुओ! मरणस्मृति की भावना एवं अभ्यास अत्यधिक शुभ फलदायी होता है। इसका प्रभूत माहात्म्य है, यह निर्वाण के अन्तस्तल तक पहुँचाने वाली है; क्योंकि निर्वाण ही इसकी सीमा है। अतः, भिक्षुओ! तुम लोग मरणस्मृति की भावना करो।''

३. भगवान् द्वारा ऐसा कहे जाने पर उपस्थित भिक्षुओं में से कोई भिक्षु बोला—''भन्ते! मैं मरणस्मृति की भावना करता हूँ।''

"यथा कथं पन त्वं, भिक्खु, भावेसि मरणस्सतिं" ति?

"इध मय्हं, भन्ते, एवं होति—'अहो वताहं रत्तिन्दिवं जीवेय्यं, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति। एवं खो अहं, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं" ति।

४. अञ्ञतरो पि खो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—"अहं पि खो, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं" ति।

"यथा कथं पन त्वं, भिक्खु, भावेसि मरणस्सतिं" ति?

"इध मय्हं, भन्ते, एवं होति—'अहो वताहं दिवसं जीवेय्यं, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति। एवं खो अहं, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं" ति।

५. अञ्ञतरो पि खो भिक्खू भगवन्तं एतदवोच—"अहं पि खो, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं" ति।

[B.269] "यथा कथं पन त्वं, भिक्खु भावेसि मरणस्सतिं" ति?

"इध मय्हं, भन्ते, एवं होति—'अहो वताहं तदन्तरं जीवेय्यं यदन्तरं एकपिण्डपातं भुञ्जामि, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति। एवं खो अहं, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं" ति।

६. अञ्ञतरो पि खो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—"अहं पि खो, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं" ति।

---

"भिक्षु! तुम इस मरणस्मृति की भावना कैसे करते हो?"

(भिक्षु बोला—) "भन्ते! मैं अपने चित्त में ऐसी भावना करता हूँ—'भले ही मैं एक रातदिन ही जीवित रहूँ, परन्तु उतने समय में अपने मन में भगवान् के उपदेश को दृढ़ता से बैठा सकूँ तो यह मेरे लिये बहुत उपयोगी होगा।' इस प्रकार, भन्ते! मैं मरणस्मृति की भावना करता हूँ।" (१)

४. इसी प्रसङ्ग में, दूसरा भिक्षु भी बोला—"भन्ते! मैं भी मरणस्मृति की भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तुम इस मरणस्मृति की भावना किस प्रकार करते हो?"

"भन्ते! मैं अपने चित्त में ऐसी भावना करता हूँ—'भले ही मैं एक ही दिन जीवित रहूँ, पर मैं उतने समय भगवान् के उपदेश को अपने मन में दृढ़ता से बैठाये रहूँ, यही मेरे लिये अतिशय उपयोगी होगा।' भन्ते! मैं इस प्रकार इस मरणस्मृति की भावना करता हूँ।" (२)

५. तीसरा भिक्षु भगवान् से यों निवेदन करने लगा—"भन्ते! मैं भी इस मरणस्मृति की भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! इस मरणस्मृति की भावना कैसे करते हो?"

"भन्ते! मैं अपने चित्त में ऐसी भावना करता हूँ—'भले ही मैं उतने समय तक ही जीवित रहूँ जितने समय में एक बार भोजन किया जाता है; उतने समय भी मैं अपने मन में भगवान् के उपदेश को दृढ़ता से धारण किये रहूँ, यही मेरे लिये अतिशय उपयोगी होगा।' भन्ते! मैं इस प्रकार मरणस्मृति की भावना करता हूँ। (३)

"यथा कथं पन त्वं, भिक्खु भावेसि मरणस्सतिं" ति?

"इधं मय्हं, भन्ते, एवं होति—'अहो वताहं तदन्तरं जीवेय्यं यदन्तरं चत्तारो [N.25] पञ्च आलोपे सङ्खादित्वा अज्झोहरामि, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे [R.305] कतं अस्सा' ति। एवं खो अहं, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं" ति।

७. अञ्ञतरो पि खो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—"अहं पि खो, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं" ति।

"यथा कथं पन त्वं, भिक्खु भावेसि मरणस्सतिं" ति?

"इध मय्हं, भन्ते, एवं होति—'अहो वताहं तदन्तरं जीवेय्यं यदन्तरं एकं आलोपं सङ्खादित्वा अज्झोहरामि, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति। एवं खो अहं, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं" ति।

८. अञ्ञतरो पि खो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—"अहं पि खो, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं" ति।

"यथा कथं पन त्वं, भिक्खु, भावेसि मरणस्सतिं" ति?

"इध मय्हं, भन्ते, एवं होति—'अहो वताहं तदन्तरं जीवेय्यं यदन्तरं अस्ससित्वा वा पस्ससामि पस्ससित्वा वा अस्ससामि, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति। एवं खो अहं, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं" ति।

---

६. एक अन्य भिक्षु ने भी भगवान् से यों निवेदन किया—"भन्ते! मैं भी इस मरणस्मृति की भावना करता हूँ।" "भिक्षु! तुम इस मरणस्मृति की भावना कैसे करते हो?"

"भन्ते! मेरे चित्त में ऐसी भावना उठती है—'अरे! भले ही मैं उतने समय तक ही जीवित रहूँ, जितने समय में भोजन के चार पाँच ग्रास खाये जा सकते हों, उतने समय तक मैं अपने मन में भगवान् का उपदेश बैठाये रखूँ, यही मेरे लिये अतिशय हितकर होगा।' भन्ते! मैं इस प्रकार मरणस्मृति की भावना करता हूँ।" (४)

७. दूसरा कोई भिक्षु यों निवेदन करने लगा—"भन्ते! मैं भी मरणस्मृति की भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तुम इस मरणस्मृति की भावना कैसे करते हो?"

"भन्ते! मेरे चित्त में ऐसा विचार होता है—'भले ही मैं उतने ही समय जीवित रहूँ जितने समय में एक ग्रास मुख में लेकर चबाता हूँ, उतने समय भी मैं भगवान् के धर्मोपदेश पर ही अपना ध्यान लगाये रखूँ।' भन्ते! मैं इस प्रकार मरणस्मृति की भावना करता हूँ।" (५)

८. एक अन्य भिक्षु भी भगवान् से निवेदन करने लगा—"भन्ते! मैं भी मरणस्मृति की भावना करता हूँ।"

"भिक्षु! तुम इस मरणस्मृति की भावना कैसे करते हो?"

"भन्ते! मेरे चित्त में ऐसा विचार होता है—'भले ही मैं उतने ही समय जीवित रहूँ जितने समय एक आश्वास लेकर प्रश्वास छोड़ने की तय्यारी की जाती है, या प्रश्वास छोड़कर आश्वास लेने

९. एवं वुत्ते भगवा ते भिक्खू एतदवोच—"यो चायं, भिक्खवे, भिक्खु एवं मरणस्सतिं भावेति—'अहो वताहं रत्तिन्दिवं जीवेय्यं, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति।

"यो चायं, भिक्खवे, भिक्खु एवं मरणस्सतिं भावेति—'अहो वताहं दिवसं जीवेय्यं, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति।

"यो चायं, भिक्खवे, भिक्खु एवं मरणस्सतिं भावेति—'अहो वताहं तदन्तरं [B.270] जीवेय्यं यदन्तरं एकपिण्डपातं भुञ्जामि, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति।

"यो चायं, भिक्खवे, भिक्खु एवं मरणस्सतिं भावेति—'अहो वताहं तदन्तरं जीवेय्यं चत्तारो पञ्च आलोपे सङ्खादित्वा अज्झोहरामि, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, [N.26,R.306] बहु वत मे कतं अस्सा' ति। इमे वुच्चन्ति, भिक्खवे, भिक्खू पमत्ता विहरन्ति दन्धं मरणस्सतिं भावेन्ति आसवानं खयाय।

"यो च ख्वायं, भिक्खवे, भिक्खु एवं मरणस्सतिं भावेति—'अहो वताहं तदन्तरं जीवेय्यं यदन्तरं एकं आलोपं सङ्खादित्वा अज्झोहरामि, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति।

"यो चायं, भिक्खवे, भिक्खु एवं मरणस्सतिं भावेति—'अहो वताहं तदन्तरं जीवेय्यं यदन्तरं अस्ससित्वा वा पस्ससामि पस्ससित्वा वा अस्ससामि, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति। इमे वुच्चन्ति, भिक्खवे, भिक्खू अप्पमत्ता विहरन्ति तिक्खं मरणस्सतिं भावेन्ति आसवानं खयाय।

१०. "तस्मातिह, भिक्खवे, एवं सिक्खितब्बं—'अप्पमत्ता विहरिस्साम, तिक्खं

---

की तय्यारी की जाती है; उतने समय भी बुद्धोपदेश में ही मेरा मन लगा रहे—यही मेरे लिये बहुत होगा।' भन्ते! इस प्रकार मैं मरणस्मृति की भावना करता हूँ।" (६)

९. भिक्षुओं द्वारा (क्रमश:) ऐसा कहे जाने पर भगवान् ने (उनके प्रत्युत्तर में) यह कहा—भिक्षुओ! जो भिक्षु अपने जीवन की एक रात दिन की कल्पना कर बुद्धोपदेश में अपना मन दृढ़ता से लगाता है... या जो एक दिन मात्र ही अपने जीवन के स्थैर्य की कल्पना कर... या जो एक दिन का भोजन करने तक के समय की ही अपने जीवन की स्थिरता की कल्पना कर...। भिक्षुओ! इस प्रकार के ये तीनों ही भिक्षु 'प्रमत्त साधक' कहलाते हैं। तथा इनकी यह मरणस्मृति भावना उनके आश्रवों के क्षय में 'धुँधली' होती है।

"या जो भोजन के चार पाँच ग्रास खाने के समय तक अपने जीवन की कल्पना कर... या जो एक ग्रास खाने तक... या जो एक श्वास प्रश्वास तक अपने जीवन की कल्पना कर उतने समय के लिये भगवान् के उपदेशों को अपने मन में दृढ़ता से धारण करता है। भिक्षुओ! ये तीन प्रकार के भिक्षु अप्रमत्त मरणस्मृति भावना करनेवाले कहलाते हैं। तथा इनकी यह मरणस्मृतिभावना उनके आश्रवों के क्षय के लिये 'तीक्ष्ण' कहलाती है।

मरणस्सतिं भावेस्साम आसवानं खयाया' ति। एवं हि वो, भिक्खवे, सिक्खितब्बं'' ति॥●

**१०. दुतियमरणस्सतिसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा नातिके विहरति गिञ्जकावसथे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—

२. ''मरणस्सति, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना। कथं भाविता च, भिक्खवे, मरणस्सति कथं बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना?

३. ''इध, भिक्खवे, भिक्खु दिवसे निक्खन्ते रत्तिया पतिगताय इति पटिसञ्चिक्खति—'बहुका खो मे पच्चया मरणस्स—अहि वा मं डंसेय्य, विच्छिको वा मं डंसेय्य, सतपदी वा मं डंसेय्य; तेन मे अस्स कालङ्किरिया सो ममस्स अन्तरायो। [B.271] उपक्खलित्वा वा पपतेय्यं, भत्तं वा मे भुत्तं ब्यापज्जेय्य, पित्तं वा कुप्पेय्य, सेम्हं वा [R.307] मे कुप्पेय्य, सत्थका वा मे वाता कुप्पेय्युं; तेन मे अस्स कालङ्किरिया सो ममस्स अन्तरायो' ति। तेन, भिक्खवे, भिक्खुना इति पटिसञ्चिक्खितब्बं—'अत्थि नु खो मे पापका अकुसला धम्मा अप्पहीना ये मे अस्सु रत्तिं कालं करोन्तस्स अन्तरायाया' ति।

४. ''सचे, भिक्खवे, भिक्खु पच्चवेक्खमानो एवं जानाति—'अत्थि मे [N.27] पापका अकुसला धम्मा अप्पहीना ये मे अस्सु रत्तिं कालं करोन्तस्स अन्तरायाया' ति, तेन,

---

१०. ''इसलिये भिक्षुओ! तुमको यह शिक्षा लेनी चाहिये—'हम अप्रमत्त होकर मरणस्मृति की भावना करेंगे; तथा अपने आश्रवों के क्षय के लिये तीक्ष्ण मरणस्मृति की ही साधना करेंगे॥' ''

**१०. द्वितीय मरणस्मृतिसूत्र : : छह प्रकार की मरणस्मृति**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) नादिका या नाटिका के गृञ्जकावसथ में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को यह उपदेश दिया—

२. ''भिक्षुओ! मरणस्मृति की भावना एवं अभ्यास बहुत फलदायी, विशिष्ट माहात्म्य वाला, निर्वाण तक पहुँचाने वाला तथा निर्वाण की सीमा वाला कहलाता है। भिक्षुओ! यह कैसे?

३. ''यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु रात्रि के व्यतीत होने पर तथा दिन निकलने पर यह चिन्तन करता है—'मेरी मृत्यु के अनेक कारण हो सकते हैं—मुझको कोई विषधर सर्प या बिच्छू डस ले, शतपदी (कनखजूरा) डस ले, उससे मेरी मृत्यु हो सकती है, इससे मेरी साधना में विघ्न आ सकता है। या मैं कहीं ठोकर खाकर या लड़खड़ा कर गिर पड़ूँ, खाया हुआ भोजन विकृत हो जाय, शरीरस्थ पित्त या कफ बिगड़ जायँ, या विषमय शस्त्र के प्रहार से शरीरस्थ वायु विकृत हो जाय तो उससे भी मेरी मृत्यु हो सकती है, तथा इस कारण भी मेरी साधना में विघ्न आ सकता है।' इसलिये, भिक्षुओ! ऐसे भिक्षु को यह विचार करना चाहिये—'मेरे पापमय अकुशल धर्म अभी क्षीण नहीं हुए हैं; हो सकता है रात्रिकाल में मेरी मृत्यु हो जाय। इस प्रकार की मृत्यु से मेरी साधना में विघ्न ही होगा।'

४. ''भिक्षुओ! ऐसा विचार करते हुए उस भिक्षु को यदि यह ध्यान में आये—'अभी मेरे पापमय अकुशल कर्म क्षीण नहीं हुए हैं, हो सकता है, इसी समय के बीच,रात्रि में मेरी मृत्यु हो

भिक्खवे, भिक्खुना तेसंयेव पापकानं अकुसलानं धम्मानं पहानाय अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं। सेय्यथापि, भिक्खवे, आदित्तचेलो वा आदित्तसीसो वा तस्सेव चेलस्स वा सीसस्स वा निब्बापनाय अधिमत्तं छन्दं च वायामं च उस्साहं च उस्सोळ्हिं च अप्पटिवानिं च सतिं च सम्पजञ्ञं च करेय्य; एवमेव खो, भिक्खवे, तेन भिक्खुना तेसंयेव पापकानं अकुसलानं धम्मानं पहानाय अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं।

५. "सचे पन, भिक्खवे, भिक्खु पच्चवेक्खमानो एवं जानाति—'नत्थि मे पापका अकुसला धम्मा अप्पहीना ये मे अस्सु रत्तिं कालं करोन्तस्स अन्तरायाया' ति, तेन, भिक्खवे, भिक्खुना तेनेव पीतिपामोज्जेन विहातब्बं अहोरत्तानुसिक्खिना कुसलेसु धम्मेसु।

६. "इध पन, भिक्खवे, भिक्खु रत्तिया निक्खन्ताय दिवसे पतिगते इति पटिसञ्चिक्खति—'बहुका खो मे पच्चया मरणस्स—अहि वा मं डंसेय्य, विच्छिको वा मं डंसेय्य, सतपदी वा मं डंसेय्य, सतपदी वा मं डंसेय्य; तेन मे अस्स कालङ्किरिया सो ममस्स अन्तरायो। उपक्खलित्वा वा पपतेय्यं, भत्तं वा मे भुत्तं ब्यापज्जेय्य, पित्तं वा कुप्पेय्य, सेम्हं वा मे कुप्पेय्य, सत्थका वा मे वाता कुप्पेय्युं; तेन·मे अस्स कालङ्किरिया सो ममस्स [R.308] अन्तरायो' ति। तेन, भिक्खवे, भिक्खुना इति पटिसञ्चिक्खितब्बं—'अत्थि नु खो मे पापका अकुसला धम्मा अप्पहीना ये मे अस्सु दिवा कालं करोन्तस्स अन्तरायाया' ति।

[B.272] ७. "सचे, भिक्खवे, भिक्खु पच्चवेक्खमानो एवं जानाति—'अत्थि मे पापका अकुसला धम्मा अप्पहीना ये मे अस्सु दिवा कालं करोन्तस्स अन्तरायाया' ति, तेन, भिक्खवे, भिक्खुना तेसंयेव पापकानं अकुसलानं धम्मानं पहानाय अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं।

---

जाय, यह मेरी साधना में विघ्न ही होगा।' तब, भिक्षुओ! उस भिक्षु को अपने उन पापमय अकुशल धर्मों के प्रहाणहेतु पूर्णमात्रा में इच्छा, प्रयास, उत्साह, पीछे न हटना तथा तदर्थ स्मृति सम्प्रजन्य रखना चाहिये। जैसे कोई पुरुष अपने वस्त्रों में या शिर पर अग्नि लग जाने पर उसको बुझाने के लिये प्रयास रुचि, उत्साह, निराशा (घबराहट) से पीछे न हटना आदि स्मृति सम्प्रजन्यपूर्वक करता है; उसी प्रकार उस भिक्षु को अपने पापमय अकुशल धर्मों के प्रहाणहेतु प्रयास करना चाहिये।

५. "यदि भिक्षुओ! इस प्रकार विचार करते हुए भिक्षु को ...पूर्ववत्... तो भिक्षुओ! उस भिक्षु को प्रीति एवं प्रमोद (हर्ष) के साथ दिनरात कुशल धर्मों के विषय में विचार करना चाहिये।

६. "यदि, भिक्षुओ! कोई भिक्षु रात्रि के आने पर दिन के बीतने पर, यह चिन्तन करता है—'मेरी मृत्यु के अनेक कारण हो सकते हैं—मुझको साँप या बिच्छू डँस ले...पूर्ववत्... इस प्रकार की मृत्यु से मेरी साधना में विघ्न ही होगा।'...

७. "भिक्षुओ! ऐसा विचार करते हुए भिक्षु यदि यह जान जाय—'अभी मेरे पापमय अकुशल धर्म प्रहीण नहीं हुए हैं; यदि इसी समय के बीच दिन में मेरी मृत्यु हो जाय तो ये अप्रहीण

सेय्यथापि, भिक्खवे, आदित्तचेलो वा आदित्तसीसो वा तस्सेव चेलस्स वा सीसस्स [N.28] वा निब्बापनाय अधिमत्तं छन्दं च वायामं च उस्साहं च उस्सोळ्हिं च अप्पटिवानिं च सतिं च सम्पजञ्ञं च करेय्य; एवमेव खो, भिक्खवे, तेन भिक्खुना तेसंयेव पापकानं अकुसलानं धम्मानं पहानाय अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं।

८. "सचे पन, भिक्खवे, भिक्खु पच्चवेक्खमानो एवं जानाति—'नत्थि मे पापका अकुसला धम्मा अप्पहीना ये मे अस्सु दिवा कालं करोन्तस्स अन्तरायाया' ति, तेन, भिक्खवे, भिक्खुना तेनेव पीतिपामोज्जेन विहातब्बं अहोरत्तानुसिक्खिना कुसलेसु धम्मेसु। एवं भाविता खो, भिक्खवे, मरणस्सति एवं बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना" ति॥

**सारणीयवग्गो दुतियो॥ ●**

### तस्सुद्दानं

द्वे सारणी निसारणीयं, भद्दकं अनुतप्पियं।
नकुलं सोप्पमच्छा च, द्वे होन्ति मरणस्सती ति॥ ●

## ३. अनुत्तरियवग्गो

**१. सामकसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा सक्केसु विहरति सामगामके [R.309]

---

पापमय धर्म मेरी साधना में विघ्नकारक ही होंगे। तब भिक्षुओ! ...पूर्ववत्... उस भिक्षु को अपने पापमय अकुशल धर्मों के प्रहाण के लिये... स्मृतिसम्प्रजन्यपूर्वक प्रयास करना चाहिये।'

८. "यदि भिक्षुओ! इस भिक्षु को ...पूर्ववत्... प्रीति एवं प्रमोद के साथ दिनरात कुशल धर्मों की प्राप्ति के विषय में विचार करना चाहिये। भिक्षुओ! इस प्रकार साधनाकृत एवं अभ्यासकृत यह मरणस्मृति अति महत्त्वशाली एवं महान् फलदायक तथा निर्वाण तक पहुँचाने वाली होती है॥ ●

**सारणीयवर्ग द्वितीय सम्पन्न॥**

### इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची

१. प्रथम स्मरणीयसूत्र, २. द्वितीय स्मरणीयसूत्र, ३. निस्सारणीयसूत्र, ४. भद्रकसूत्र, ५. अनुतप्यसूत्र, ६. नकुलपितासूत्र, ७. स्वापसूत्र, ८. मत्स्यबन्धसूत्र, ९. प्रथम मरणस्मृतिसूत्र, एवं १०. द्वितीय मरणस्मृतिसूत्र॥ ●

## ३. अनुत्तर्यवर्ग

**१. सामकसूत्र : : अधःपतन के हेतु छह धर्म**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) शाक्य प्रदेश के सामग्राम की पुष्करिणी (के तट) पर

पोक्खरणियायं। अथ खो अञ्ञतरा देवता अभिक्कन्ताय रत्तिया अभिक्कन्तवण्णा [B.273] केवलकप्पं पोक्खरणियं ओभासेत्वा येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठिता खो सा देवता भगवन्तं एतदवोच—

[N.29] २. ''तयोमे, भन्ते, धम्मा भिक्खुनो परिहाय संवत्तन्ति। कतमे तयो ? कम्मारामता, भस्सारामता, निद्दारामता—इमे खो, भन्ते, तयो धम्मा भिक्खुनो परिहानाय संवत्तन्ती'' ति।

३. इदमवोच सा देवता। समनुञ्ञो सत्था अहोसि। अथ खो सा देवता ''समनुञ्ञो मे सत्था'' ति भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा तत्थेवन्तरधायि।

४. अथ खो भगवा तस्सा रत्तिया अच्चयेन भिक्खू आमन्तेसि—''इमं, भिक्खवे, रत्तिं अञ्ञतरा देवता अभिक्कन्ताय रत्तिया अभिक्कन्तवण्णा केवलकप्पं पोक्खरणियं ओभासेत्वा येनाहं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा मं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठिता खो, भिक्खवे, सा देवता मं एतदवोच—'तयोमे, भन्ते, धम्मा भिक्खुनो परिहानाय संवत्तन्ति। कतमे तयो ? कम्मारामता, भस्सारामता, निद्दारामता—इमे खो, भन्ते, तयो धम्मा भिक्खुनो परिहानाय संवत्तन्ती' ति। इदमवोच, भिक्खवे, सा देवता। इदं वत्वा मं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा तत्थेवन्तरधायि। तेसं वो, भिक्खवे, अलाभा तेसं दुल्लद्धं, ये वो देवता पि जानन्ति कुसलेहि धम्मेहि परिहायमाने।

५. ''अपरे पि, भिक्खवे, तयो परिहानिये धम्मे देसेस्सामि। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

---

साधनाहेतु विराजमान थे। तब कोई सुन्दर देवता चाँदनी रात में प्रायः प्रकाशमान उस पुष्करिणी को विशेष रूप से प्रकाशित करते हुए भगवान् के सम्मुख आया। तथा उनको प्रणाम कर एक ओर खड़ा हो गया। एक ओर खड़े हुए उसने भगवान् से यह कहा—

२. ''भन्ते! ये तीन धर्म भिक्षु के अधःपतन के कारण हो सकते हैं। कौन से तीन ? (१) कम्मारामता (सांसारिक कृत्यों में मन लगाये रखना), (२) भस्सारामता (व्यर्थ की बातचीत में रुचि), एवं (३) निद्रारामता (दिन रात जब चाहे तब सोये रहना=निद्राप्रियता) भन्ते! ये तीन धर्म भिक्षु को अधःपतन की ओर ले जाते हैं।''

३. उस देवता ने यह कहा। भगवान् ने उसके कथन का अनुमोदन किया। तब वह देवता 'भगवान् भी मेरी बात का समर्थन कर रहे हैं'—यह मानकर, भगवान् को प्रणाम प्रदक्षिणा कर वहीं अन्तर्हित हो गया।

४. तब भगवान्, उस रात्रि के बीतने पर, भिक्षुओं से यह बोले—''यहाँ भिक्षुओ ! विगत रात्रि में कोई देवता चाँदनी रात्रि में ...पूर्ववत्... यह मानकर, मुझको प्रणाम प्रदक्षिणा कर वहीं अन्तर्हित हो गया। भिक्षुओ ! ऐसे भिक्षुओं का यह दौर्भाग्य ही है कि उन्होंने कुछ भी आध्यात्मिक लाभ प्राप्त नहीं किया तथा उनके दुर्गुणों (कुशल धर्मों से हीनता) को देवता भी जानते हैं !

६. ''कतमे च, भिक्खवे, तयो परिहानिया धम्मा? सङ्गणिकारामता, [R.310] दोवच्चस्सता, पापमित्तता—इमे खो, भिक्खवे, तयो परिहानिया धम्मा।

७. ''ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं परिहायिंसु कुसलेहि धम्मेहि, सब्बेते इमेहेव छहि धम्मेहि परिहायिंसु कुसलेहि धम्मेहि। ये पि हि केचि, भिक्खवे, अनागतमद्धानं परिहायिस्सन्ति कुसलेहि धम्मेहि, सब्बेते इमेहेव छहि धम्मेहि परिहायिस्सन्ति [B.274] कुसलेहि धम्मेहि। ये पि हि केचि भिक्खवे, एतरहि परिहायन्ति कुसलेहि धम्मेहि, सब्बेते इमेहेव छहि धम्मेहि परिहायन्ति कुसलेहि धम्मेही'' ति॥ ●

**२. अपरिहानियसुत्तं :** १. ''छयिमे, भिक्खवे, अपरिहानिये धम्मे [N.30] देसेस्सामि, तं सुणाथ ...पे०... कतमे च, भिक्खवे, छ अपरिहानिया धम्मा? न कम्मारामता, न भस्सारामता, न निद्दारामता, न सङ्गणिकारामता, सोवचस्सता, कल्याणमित्तता—इमे खो, भिक्खवे, छ अपरिहानिया धम्मा।

२. ''ये हि केचि, भिक्खवे, अतीतमद्धानं न परिहायिंसु कुसलेहि धम्मेहि, सब्बेते इमेहेव छहि धम्मेहि न परिहायिंसु कुसलेहि धम्मेहि। ये पि हि केचि, भिक्खवे, अनागतमद्धानं न परिहायिस्सन्ति कुसलेहि धम्मेहि, सब्बेते इमेहेव छहि धम्मेहि न परिहायिस्सन्ति कुसलेहि धम्मेहि। ये पि केचि, भिक्खवे, एतरहि न परिहायन्ति कुसलेहि धम्मेहि, सब्बेते इमेहेव छहि धम्मेहि न परिहायन्ति कुसलेहि धम्मेही'' ति॥ ●

---

५. ''भिक्षुओ! कुशल धर्मों का नाश करने वाले तीन धर्म अन्य भी हैं। उनको भी मैं तुमको बताता हूँ। तुम उनको अच्छी तरह मन में बैठा लो।''

''अच्छा, भन्ते!'' कहकर भिक्षुओं ने उत्तर दिया।

६. ''भिक्षुओ! वे भिक्षुओं के तीन अध:पतनकारक धर्म कौन हैं? (१) सङ्गणिकारामता (जनसमाज में रहने की रुचि), (२) दौर्वचस्य (कटु वचन बोलना), एवं (३) पापमित्रता (पापियों का सङ्ग)—ये तीन धर्म भिक्षुओं का अध:पात करने वाले हैं।

७. ''भिक्षुओ! जो लोग प्राचीन काल में कुशल धर्मों से हीन हुए वे इन छह धर्मों के कारण ही हीन हुए थे तथा जो भविष्य में कुशल धर्मों से हीन होंगे वे भी सब इनके कारण ही होंगे। और, भिक्षुओ! जो भिक्षु वर्तमान में कुशल धर्मों से हीन हो रहे हैं वे भी इन छह धर्मों के कारण ही कुशल धर्मों से हीन हो रहे हैं॥'' ●

**२. अपरिहाणीय धर्म : : न छोड़ने योग्य छह धर्म**

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको अपरिहाणीय धर्मों की देशना करूँगा, उनको सुनो, और मन में बैठा लो। ...पूर्ववत्...। कौन से छह अपरिहाणीय धर्म हैं? १. कर्मारामता का न होना, २. भस्सारामता का न होना, ३. निद्रारामता का न होना, ४. सङ्गणिकारामता का न होना, ५. सौवचस्य, एवं ६. कल्याणमित्रता—भिक्षुओ! ये छह धर्म अपरिहाणीय हैं।

२. ''भिक्षुओ! भूतकाल में ...पूर्वसूत्रवत्... वे भी इन छह धर्मों के कारण कुशल धर्मों से हीन न होंगे॥'' ●

**३. भयसुत्तं :** १. "'भयं' ति, भिक्खवे, कामानमेतं अधिवचनं; 'दुक्खं' ति, भिक्खवे, कामानमेतं अधिवचनं; 'रोगो' ति, भिक्खवे, कामानमेतं अधिवचनं; 'गण्डो' ति, [R.311] भिक्खवे, कामानमेतं अधिवचनं; 'सङ्गो' ति, भिक्खवे कामानमेतं अधिवचनं; 'पङ्को' ति, भिक्खवे, कामानमेतं अधिवचनं।

२. "कस्मा च, भिक्खवे, 'भयं' ति कामानमेतं अधिवचनं? कामरागरत्तायं, भिक्खवे, छन्दरागविनिबद्धो दिट्ठधम्मिका पि भया न परिमुच्चति, सम्परायिका पि भया न परिमुच्चति, तस्मा 'भयं' ति कामानमेतं अधिवचनं। कस्मा च, भिक्खवे, दुक्खं ति ...पे०... रोगो ति... गण्डो ति... सङ्गो ति... पङ्को ति कामानमेतं अधिवचनं? कामरागरत्तायं, भिक्खवे, छन्दरागविनिबद्धो दिट्ठधम्मिका पि पङ्का न परिमुच्चति, सम्परायिका पि पङ्का न परिमुच्चति, तस्मा 'पङ्को' ति कामानमेतं अधिवचनं ति।

"भयं दुक्खं रोगो गण्डो, सङ्गो पङ्को च उभयं।
एते कामा पवुच्चन्ति, यत्थ सत्तो पुथुज्जनो॥
[B.275,N.31] "उपादाने भयं दिस्वा, जातिमरणसम्भवे।
अनुपादा विमुच्चन्ति, जातिमरणसङ्खये॥
"ते खेमप्पत्ता सुखिनो, दिट्ठधम्माभिनिब्बुता।
सब्बवेरभयातीता, सब्बदुक्खं उपच्चगुं" ति॥ ●

---

**३. भयसुत्त :** : : **काम के छह नाम**

१. भिक्षुओ! **भय**—यह 'काम' का ही पर्याय (समानार्थक शब्द) है। **दुःख**—यह भी भिक्षुओ! 'काम' का पर्याय है। **रोग**—यह भी 'काम' का ही पर्याय है। **गण्ड**—यह भी 'काम' का ही पर्याय है। **सङ्ग**—यह भी 'काम' का ही पर्याय है। **पङ्क**—यह भी 'काम' का ही पर्याय है।

२. भिक्षुओ! भय—यह 'काम' का पर्याय कैसे है? क्योंकि भिक्षुओ! कोई कामराग (कामचेतना) से आबद्ध प्राणी उत्तेजक कामना के वश में होकर न लौकिक भय से छुटकारा पाता है, न पारलौकिक भय से; अतः यह 'भय' शब्द 'काम' का ही पर्याय है।

"फिर, भिक्षुओ! दुःख, ...पूर्ववत्... रोग ...पूर्ववत्... गण्ड ...पूर्ववत्... सङ्ग ...पूर्ववत्... पङ्क—यह 'काम' का ही पर्याय कैसे है? क्योंकि, भिक्षुओ! कोई कामराग से आबद्ध प्राणी उत्तेजक कामनाओं के वश में होकर न लौकिक पङ्क (कीचड़) से छुटकारा पा सकता है, न पारलौकिक पङ्क से; अतः यह 'पङ्क' शब्द भी 'काम' शब्द का ही पर्याय है। (इसीलिये कहते हैं—)

"द्विविध भय, दुःख, रोग, गण्ड तथा सङ्ग एवं पङ्क—ये सभी 'काम' ही कहलाते हैं; क्योंकि यहाँ मूर्ख प्राणी जन्म-मरण से सम्भूत उपादान (कारण) में भय मानकर काम के वशीभूत होता रहता है॥

"परन्तु ऐसे साधक जो जन्म मरण की परम्परा से मुक्त हो चुके हैं वे निर्भय होकर इसी जन्म में निर्वाण प्राप्त कर सभी प्रकार के वैर, भय एवं दुःखों से छुटकारा पा जाते हैं॥" ●

**४. हिमवन्तसुत्तं** : १. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु हिमवन्तं पब्बतराजं पदालेय्य, को पन वादो छवाय अविज्जाय! कतमेहि छहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु समाधिस्स समापत्तिकुसलो होति, समाधिस्स ठितिकुसलो होति, समाधिस्स वुट्ठानकुसलो होति, समाधिस्स कल्लितकुसलो होति, समाधिस्स गोचरकुसलो होति, समाधिस्स अभिनीहारकुसलो होति। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्ना- [R.312] गतो भिक्खु हिमवन्तं पब्बतराजं पदालेय्य, को पन वादो छवाय अविज्जाया'' ति!॥ ●

**५. अनुस्सतिट्ठानसुत्तं** : १. ''छयिमानि, भिक्खवे, अनुस्सतिट्ठानानि। कतमानि छ? इध, भिक्खवे, अरियसावको तथागतं अनुस्सरति—'इति पि सो भगवा ...पे०... सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। यस्मिं, भिक्खवे, समये अरियसावको तथागतं अनुस्सरति, नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति, निक्खन्तं मुत्तं वुट्ठितं गेधम्हा। 'गेधो' ति खो, भिक्खवे, पञ्चन्नेतं कामगुणानं अधिवचनं। इदं पि खो, भिक्खवे, आरम्मणं करित्वा एवमिधेकच्चे सत्ता विसुज्झन्ति।

२. ''पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको धम्मं अनुस्सरति—'स्वाक्खातो भगवता धम्मो ...पे०... पच्चत्तं वेदितब्बो विञ्ञूही' ति। यस्मिं, भिक्खवे, समये अरियसावको धम्मं

---

**४. हिमवत्सूत्र :: छह धर्मों से युक्त साधक अविद्या को लाँघ सकता है**

१. भिक्षुओ! छह धर्मों से युक्त भिक्षु हिमवान् पर्वत को भी लाँघ सकता है, फिर इस मृत अविद्या की तो बात ही क्या? किन छह धर्मों से? (१) यहाँ भिक्षुओ! जो भिक्षु समाधि लगाने में कुशल होता है, (२) समाधि को स्थिर रखने में कुशल होता है; (३) समाधि से उत्थान में कुशल होता है; (४) समाधि की दक्षता में कुशल होता है; (५) समाधि का गोचर (क्षेत्र) जानने में कुशल होता है, तथा (६) जो समाधि के अभिनीहार (सङ्कल्प=अधिष्ठान) में कुशल होता है— इन छह धर्मों से समन्वित भिक्षु पर्वतराज हिमालय को भी लाँघ सकता है, फिर इस मृतप्राय अविद्या की तो बात ही क्या है!''॥ ●

**५. अनुस्मृतिस्थानसूत्र :: छह अनुस्मृतियाँ**

१. ''भिक्षुओ! ये छह अनुस्मृतिस्थान है। कौन से छह? (१) यहाँ, भिक्षुओ! आर्यश्रावक तथागत का इस प्रकार अनुस्मरण करता है—'वे भगवान् ...पूर्ववत्... देवमनुष्यों के शास्ता बुद्ध भगवान् हैं।' जिस समय वह आर्यश्रावक तथागत का अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त राग, द्वेष तथा मोह के वश में होकर चञ्चल (पर्युत्थित) नहीं होता, अपितु उसका चित्त सरल एवं स्थिर ही रहता है, अर्थात् वह लोभ (गेध) से मुक्त रहता है। यहाँ 'गेध' (लोभ) पाँच कामगुणों का ही बोधक है। भिक्षुओ! यह आलम्बन (बुद्धानुस्मृति) प्राप्त कर भी कुछ प्राणी विशुद्ध हो जाते हैं।

२. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक धर्म का यों अनुस्मरण करता है—'भगवान् द्वारा धर्म भलीभाँति उपदिष्ट है ...पूर्ववत्... विज्ञजन इसको व्यक्तिगत रूप से भी साक्षात् जान सकते हैं।'

[B.276] अनुस्सरति, नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं [N.32] होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति, निक्खन्तं मुत्तं वुट्ठितं गेधम्हा। 'गेधो' ति खो, भिक्खवे, पञ्चन्नेतं कामगुणानं अधिवचनं। इदं पि खो, भिक्खवे, आरम्मणं करित्वा एवमिधेकच्चे सत्ता विसुज्झन्ति।

३. ''पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको सङ्घं अनुस्सरति—'सुप्पटिपन्नो भगवतो [R.313] सावकसङ्घो ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा' ति। यस्मिं, भिक्खवे, समये अरियसावको सङ्घं अनुस्सरति, नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति, निक्खन्तं मुत्तं वुट्ठितं गेधम्हा। 'गेधो' ति खो, भिक्खवे, पञ्चन्नेतं कामगुणानं अधिवचनं। इदं पि खो, भिक्खवे, आरम्मणं करित्वा एवमिधेकच्चे सत्ता विसुज्झन्ति।

४. ''पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको अत्तनो सीलानि अनुस्सरति अखण्डानि अच्छिद्दानि ...पे०... समाधिसंवत्तनिकानि। यस्मिं, भिक्खवे, समये अरियसावको सीलं अनुस्सरति, नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति, निक्खन्तं मुत्तं वुट्ठितं गेधम्हा। 'गेधो' ति खो, भिक्खवे, पञ्चन्नेतं कामगुणानं अधिवचनं। इदं पि खो, भिक्खवे, आरम्मणं करित्वा एवमिधेकच्चे सत्ता विसुज्झन्ति।

५. ''पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको अत्तनो चागं अनुस्सरति—'लाभा वत मे! सुलद्धं वत मे ...पे०... याचयोगो दानसंविभागरतो' ति। यस्मिं ...पे०... एवमिधेकच्चे सत्ता विसुज्झन्ति।

---

भिक्षुओ! जिस समय वह आर्यश्रावक धर्म का अनुस्मरण करता है तब उसका चित्त द्वेष के वश होकर चञ्चल नहीं होता ...पूर्ववत्... कुछ प्राणी विशुद्ध हो जाते हैं।

३. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक सङ्घ का यों अनुस्मरण करता है—'भगवान् का यह श्रावकसङ्घ सन्मार्ग पर चलने वाला ...पूर्ववत्... तथा लोक के लिये अनुपम पुण्यभूमि है।' ...पूर्ववत्... उस समय उसका चित्त न राग, न द्वेष, न मोह से चञ्चल होता है, अपितु सरल एवं स्थिर ही रहता है और लोभ से मुक्त हुआ रहता है। ...पूर्ववत्... कुछ प्राणी विशुद्ध हो जाते हैं।

४. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक शील का अनुस्मरण करता है—'ये अखण्ड, अच्छिद्र ...पूर्ववत्... समाधि के लिये चित्त के प्रेरक हैं।' भिक्षुओ! जिस समय वह आर्यश्रावक शील का अनुस्मरण करता है, उस समय उसका चित्त ...पूर्ववत्... कुछ प्राणी विशुद्ध हो जाते हैं।

५. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक अपने त्याग का अनुस्मरण करता है—'मुझे बहुत लाभ हुआ, मैंने बहुत कुछ पा लिया ...पूर्ववत्... निरन्तर दानक्रिया में लगा रहता हूँ।' भिक्षुओ! जिस समय वह आर्यश्रावक अपने त्याग का अनुस्मरण करता है उस समय उसका चित्त ...पूर्ववत्... कुछ प्राणी विशुद्ध हो जाते हैं।

६. "पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको देवता अनुस्सरति—'सन्ति देवा चातुमहाराजिका, सन्ति देवा तावतिंसा, सन्ति देवा यामा, सन्ति देवा तुसिता, सन्ति देवा निम्मानरतिनो, सन्ति देवा परनिम्मितवसवत्तिनो, सन्ति देवा ब्रह्मकायिका, सन्ति [R.314] देवा ततुत्तरि। यथारूपाय सद्धाय समन्नागता ता देवता इतो चुता तत्थ उपपन्ना; मय्हं पि तथारूपा सद्धा संविज्जति। यथारूपेन सीलेन ... सुतेन ... चागेन ... पञ्ञाय समन्नागता ता देवता इतो चुता तत्थ उपपन्ना; मय्हं पि तथारूपा पञ्ञा संविज्जती' ति।

७. "यस्मिं, भिक्खवे, समये अरियसावको अत्तनो च तासं च [N.33, B.277] देवतानं सद्धं सीलं च सुतं च चागं च पञ्ञं च अनुस्सरति नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति, निक्खन्तं मुत्तं गेधम्हा। 'गेधो' ति खो, भिक्खवे, पञ्चन्नेतं कामगुणानं अधिवचनं। इदं पि खो, भिक्खवे, आरम्मणं करित्वा एवमिधेकच्चे सत्ता विसुज्झन्ति। इमानि खो, भिक्खवे, छ अनुस्सतिट्ठानानी" ति॥ ●

**६. महाकच्चानसुत्तं :** १. तत्र खो आयस्मा महाकच्चानो भिक्खू आमन्तेसि— "आवुसो भिक्खवे" ति। "आवुसो" ति खो ते भिक्खू आयस्मतो महाकच्चानस्स पच्चस्सोसुं। आयस्मा महाकच्चानो एतदवोच—

२. "अच्छरियं, आवुसो, अब्भुतं आवुसो! यावञ्चिदं तेन भगवता जानता पस्सता अरहता सम्मासम्बुद्धे न सम्बाधे ओकासाधिगमो अनुबुद्धो सत्तानं विसुद्धिया सोकपरिदेवानं समतिक्कमाय दुक्खदोमनस्सानं अत्थङ्गमाय ञायस्स अधिगमाय निब्बानस्स सच्छि-किरियाय, यदिदं छ अनुस्सतिट्ठानानि। कतमानि छ? इधावुसो, अरियसावको तथागतं

---

६. "पुनः, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक देवताओं का अनुस्मरण करता है—'ये जितने भी देवता है; जैसे—चातुर्महाराजिक, त्रायस्त्रिंश ...पूर्ववत्... वैसी प्रज्ञा मुझमें भी है।'

७. "भिक्षुओ! जिस समय वह आर्यश्रावक अपने त्याग का अनुस्मरण करता है उस समय उसका चित्त राग द्वेष या मोह के वश में नहीं होता, अपितु उस समय उसका चित्त सरल एवं स्थिर ही रहता है। ...पूर्ववत्... इस देवतानुस्मृति का आलम्बन लेकर भी कुछ प्राणी विशुद्ध हो जाते हैं।

"भिक्षुओ! इस प्रकार ये छह अनुस्मृतिस्थान हैं॥" ●

**६. महाकात्यायनसूत्र : : छह अनुस्मृति स्थान**

१. वहाँ आयुष्मान् कात्यायन ने "आयुष्मन् भिक्षुओ!" कहकर भिक्षुओं को अपने पास बुलाया। भिक्षुओं ने भी "अच्छा आयुष्मन्!" कहकर स्वीकृति दी तथा वे आयुष्मन् महाकात्यायन के पास गये। आयुष्मन् कात्यायन ने उनको यों समझाया—

२. "आयुष्मानो! यह आश्चर्यजनक एवं अद्भुत बात है कि उन भगवान् ज्ञानी सर्वदर्शी सम्यक्सम्बुद्ध ने इस घोर प्रपञ्च से भी मुक्त होने का मार्ग निकाल ही लिया, जो कि प्राणियों का चित्तविशुद्धिकारक, शोक परिदेव आदि का नाशक, दुःख एवं दौर्मनस्य का विघातक, ज्ञान का प्रापक, तथा निर्वाण का साक्षात्कारक है। छह अनुस्मृतिस्थान (का अभ्यास) ही वह मार्ग है। कौन

अनुस्सरति—'इति पि सो भगवा ...पे०... सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। यस्मिं, आवुसो, समये अरियसावको तथागतं अनुस्सरति नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं [R.315] होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति, निक्खन्तं मुत्तं वुट्ठितं गेधम्हा। 'गेधो' ति खो, आवुसो, पञ्चन्नेतं कामगुणानं अधिवचनं। स खो सो, आवुसो, अरियसावको सब्बसो आकाससमेन चेतसा विहरति विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्झेन। इदं पि खो, आवुसो, आरम्मणं करित्वा एवमिधेकच्चे सत्ता विसुद्धिधम्मा भवन्ति। (१)

३. "पुन च परं, आवुसो, अरियसावको धम्मं अनुस्सरति—'स्वाक्खातो भगवता [N.34] धम्मो ...पे०... पच्चत्तं वेदितब्बो विञ्ञूही' ति। यस्मिं, आवुसो, समये अरियसावको धम्मं अनुस्सरति नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति; न [B.278] दोसपरियुट्ठितं ...पे०... न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति, निक्खन्तं मुत्तं वुट्ठितं गेधम्हा। 'गेधो' ति खो, आवुसो, पञ्चन्नेतं कामगुणानं अधिवचनं। स खो सो, आवुसो अरियसावको सब्बसो आकाससमेन चेतसा विहरति विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्झेन। इदं पि खो, आवुसो, आरम्मणं करित्वा एवमिधेकच्चे सत्ता विसुद्धिधम्मा भवन्ति। (२)

४. "पुन च परं, आवुसो, अरियसावको सङ्घं अनुस्सरति—'सुप्पटिपन्नो भगवतो सावकसङ्घो ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा' ति। यस्मिं, आवुसो, समये अरियसावको सङ्घं अनुस्सरति नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति, निक्खन्तं मुत्तं वुट्ठितं गेधम्हा। 'गेधो' ति खो, आवुसो, पञ्चन्नेतं कामगुणानं अधिवचनं। स खो सो, आवुसो, अरियसावको सब्बसो आकाससमेन चेतसा विहरति [R.316] विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्झेन। इदं पि खो, आवुसो, आरम्मणं करित्वा एवमिधेकच्चे सत्ता विसुद्धिधम्मा भवन्ति। (३)

५. "पुन च परं, आवुसो, अरियसावको अत्तनो सीलानि अनुस्सरति अखण्डानि ...पे०... समाधिसंवत्तनिकानि। यस्मिं, आवुसो, समये अरियसावको अत्तनो सीलं अनुस्सरति नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति, निक्खन्तं मुत्तं वुट्ठितं गेधम्हा। 'गेधो' ति

---

से छह? (१) आयुष्मानो! यहाँ कोई आर्यश्रावक तथागत का यों अनुस्मरण करता है— ...पूर्ववत्...[१] कुछ प्राणी विशुद्ध हो जाते हैं।"

---

१. इसी निपात के प्रथम वर्ग में पठित दशम **महानामसुत्त** के अनुबन्ध सं० ३ से ७ अनुबन्ध तक का विस्तार कर लें।

खो, आवुसो, पञ्चन्नेतं कामगुणानं अधिवचनं। स खो सो, आवुसो, अरियसावको सब्बसो आकाससमेन चेतसा विहरति विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्झेन। इदं पि खो, आवुसो, आरम्मणं करित्वा एवमिधेकच्चे सत्ता विसुद्धिधम्मा भवन्ति। (४)

६. ''पुन च परं, आवुसो, अरियसावको अत्तनो चागं अनुस्सरति—'लाभा वत मे, सुलद्धं वत मे ...पे०... याचयोगो दानसंविभागरतो' ति। यस्मिं, आवुसो, समये [N.35] अरियसावको अत्तनो चागं अनुस्सरति नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं [B.279] होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति, निक्खन्तं मुत्तं गेधम्हा। 'गेधो' ति खो आवुसो पञ्चन्नेतं कामगुणानं अधिवचनं। स खो सो, आवुसो, अरियसावको सब्बसो आकाससमेन चेतसा विहरति विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्झेन। इदं पि खो, आवुसो, आरम्मणं करित्वा एवमिधेकच्चे सत्ता विसुद्धिधम्मा भवन्ति।

७. ''पुन च परं, आवुसो, अरियसावको देवता अनुस्सरति—'सन्ति देवा चातुमहाराजिका, सन्ति देवा ...पे०... ततुत्तरि। यथारूपाय सद्धाय समन्नागता ता देवता इतो चुता तत्थ उपपन्ना; मय्हं पि तथारूपा सद्धा संविज्जति। यथारूपेन सीलेन... सुतेन... चागेन... पञ्ञाय समन्नागता ता देवता इतो चुता तत्थ उपपन्ना; मय्हं पि तथारूपा [R.317] पञ्ञा संविज्जती' ति। यस्मिं, आवुसो, समये अरियसावको अत्तनो च तासं च देवतानं सद्धं च सुतं च चागं च पञ्ञं च अनुस्सरति नेवस्स तस्मिं समये रागपरियुट्ठितं चित्तं होति, न दोसपरियुट्ठितं चित्तं होति, न मोहपरियुट्ठितं चित्तं होति; उजुगतमेवस्स तस्मिं समये चित्तं होति, निक्खन्तं मुत्तं वुट्ठितं गेधम्हा। 'गेधो' ति खो, आवुसो, पञ्चन्नेतं कामगुणानं अधिवचनं। स खो सो, आवुसो, अरियसावको सब्बसो आकाससमेन चेतसा विहरति विपुलेन महग्गतेन अप्पमाणेन अवेरेन अब्यापज्झेन। इदं पि खो, आवुसो, आरम्मणं करित्वा एवमिधेकच्चे सत्ता विसुद्धिधम्मा भवन्ति। (६)

८. ''अच्छरियं, आवुसो; अब्भुतं, आवुसो! यावञ्चिदं तेन भगवता जानता पस्सता अरहता सम्मासम्बुद्धेन सम्बाधे ओकासाधिगमो अनुबुद्धो सत्तानं विसुद्धिया सोकपरिदेवानं समतिक्कमाय दुक्खदोमनस्सानं अत्थङ्गमाय ञायस्स अधिगमाय निब्बानस्स सच्छिकिरियाय, यदिदं छ अनुस्सतिट्ठानानी'' ति॥ ●

**७. पठमसमयसुत्तं** : १. अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु येन भगवा तेनुप- [N.36] सङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो [B.280] खो सो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—

---

८. ''आयुष्मानो! यह आश्चर्यजनक एवं अद्भुत बात है कि ...पूर्ववत्... छह अनुस्मृति स्थान (का अभ्यास) ही वह मार्ग है॥'' ●

"कति नु खो, भन्ते, समया मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं" ति?

२. "छयिमे, भिक्खु, समया मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं। कतमे छ? इध, भिक्खु, यस्मिं समये भिक्खु कामरागपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति कामरागपरेतेन, उप्पन्नस्स च कामरागस्स निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानाति तस्मिं समये मनोभावनीयो भिक्खु उपसङ्कमित्वा एवमस्स वचनीयो—'अहं खो, आवुसो, कामराग- [R.318] परियुट्ठितेन चेतसा विहरामि कामरागपरेतेन, उप्पन्नस्स च कामरागस्स निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानाति। साधु वत मे आयस्मा कामरागस्स पहानाय धम्मं देसेतू' ति। तस्स मनोभावनीयो भिक्खु कामरागस्स पहानाय धम्मं देसेति। अयं, भिक्खु पठमो समयो मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं।

३. "पुन च परं, भिक्खु, यस्मिं समये भिक्खु ब्यापादपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति ब्यापादपरेतेन, उप्पन्नस्स च ब्यापादस्स निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानाति तस्मिं समये मनो-भावनीयो भिक्खु उपसङ्कमित्वा एवमस्स वचनीयो—'अहं खो, आवुसो, ब्यापाद-परियुट्ठितेन चेतसा विहरामि ब्यापादपरेतेन, उप्पन्नस्स च ब्यापादस्स निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानामि। साधु वत मे आयस्मा ब्यापादस्स पहानाय धम्मं देसेतू' ति। तस्स मनो-

---

**७. प्रथम समयसूत्र : : पूज्य भिक्षु के दर्शन हेतु जाने के छह अवसर**

१. तब कोई भिक्षु भगवान् के पास गया। वहाँ जाकर वह भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे उस भिक्षु ने भगवान् से यह निवेदन किया—

"भन्ते! पूजनीय भिक्षु के दर्शन हेतु जाने का कौन सा उचित अवसर है?"

२. "भिक्षु! पूजनीय भिक्षु के दर्शन हेतु जाने के ये छह उचित अवसर हैं। कौन से छह? यहाँ, भिक्षु! जिस समय किसी साधक भिक्षु का चित्त साधना के समय काम से सम्पृक्त होने के कारण चञ्चल होने लगे तथा उसे उस उत्पन्न कामराग से मुक्ति का कोई उपाय न सूझे, उस समय उसको अपने पूजनीय भिक्षु के पास जाकर यह पूछना चाहिये—'आयुष्मन्! मेरा चित्त कामराग से सम्पृक्त होने के कारण चञ्चल है तथा मैं इस कामराग से मुक्ति का कोई उपाय भी नहीं समझ पा रहा हूँ। अच्छा हो, आयुष्मन्! कि आप मुझको इससे मुक्ति के किसी उपाय की देशना करें।' तब वह पूजनीय भिक्षु उस साधक भिक्षु को कामराग से मुक्ति का उपाय बताता है। भिक्षु! यह **पहला अवसर** है, जब किसी पूजनीय भिक्षु के दर्शनहेतु उसके पास जाना चाहिये। (१)

३. पुनः, भिक्षु! जिस समय किसी भिक्षु का चित्त साधना में किसी के प्रति द्वेषभाव से सम्पृक्त होकर चञ्चल होने लगे तथा उस द्वेष से मुक्ति का मार्ग उस साधक को न दिखायी दे, उस समय उस भिक्षु को अपने किसी पूजनीय भिक्षु के सम्मुख जाकर यों निवेदन करना चाहिये—'आयुष्मन्! मेरा चित्त साधना के समय, किसी के प्रति द्वेषभाव से सम्पृक्त होने के कारण, चञ्चल हो जाता है। उससे मुक्ति का उपाय मैं नहीं जानता। अतः अच्छा हो, आयुष्मन्! कि आप मुझे इस द्वेष से मुक्ति के किसी उपाय की देशना करें।' तब वह पूज्य भिक्षु उस साधक को द्वेष से मुक्ति का

भावनीयो भिक्खु ब्यापादस्स पहानाय धम्मं देसेति। अयं, भिक्खु, दुतियो समयो मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं।

४. ''पुन च परं, भिक्खु, यस्मिं समये भिक्खु थीनमिद्धपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति थीनमिद्धपरेतेन, उप्पन्नस्स च थीनमिद्धस्स निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानाति तस्मिं समये मनोभावनीयो भिक्खु उपसङ्कमित्वा एवमस्स वचनीयो—'अहं खो, आवुसो, थीनमिद्ध-परियुट्ठितेन चेतसा विहरामि थीनमिद्धपरेतेन, उप्पन्नस्स च थीनमिद्धस्स निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानामि। साधु वत मे आयस्मा थीनमिद्धस्स पहानाय धम्मं देसेतू' ति। तस्स [N.37] मनोभावनीयो भिक्खु थीनमिद्धस्स पहानाय धम्मं देसेति। अयं, भिक्खु, ततियो [B.281] समयो मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं।

५. ''पुन च परं, भिक्खु, यस्मिं समये भिक्खु उद्धच्चकुक्कुच्चपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति उद्धच्चकुक्कुच्चपरेतेन, उप्पन्नस्स च उद्धच्चकुक्कुच्चस्स निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानाति तस्मिं समये मनोभावनीयो भिक्खु उपसङ्कमित्वा एवमस्स वचनीयो—'अहं खो, आवुसो, उद्धच्चकुक्कुच्चपरियुट्ठितेन चेतसा विहरामि उद्धच्चकुक्कुच्चपरेतेन, उप्पन्नस्स च उद्धच्चकुक्कुच्चस्स निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानामि। साधु वत मे [R.319] आयस्मा उद्धच्चकुक्कुच्चस्स पहानाय धम्मं देसेतू' ति। तस्स मनोभावनीयो भिक्खु उद्धच्चकुक्कुच्चस्स पहानाय धम्मं देसेति। अयं, भिक्खु, चतुत्थो समयो मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं।

६. ''पुन च परं, भिक्खु, यस्मिं समये भिक्खु विचिकिच्छापरियुट्ठितेन चेतसा विहरति विचिकिच्छापरेतेन, उप्पन्नाय च विचिकिच्छाय निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानाति

---

उपाय बताते हुए धर्मदेशना करता है। भिक्षु! यह **दूसरा अवसर** है, जब साधक भिक्षु को किसी पूजनीय भिक्षु के दर्शनहेतु उसके पास जाना चाहिये। (२)

४. ''पुनः, भिक्षु! जिस समय किसी साधक भिक्षु का चित्त साधना के समय स्त्यानमृद्ध (आलस्य) से सम्पृक्त होकर चञ्चल होने लगे तथा वह साधक उस स्त्यानमृद्ध से मुक्त होने का उपाय भी न जानता हो, तब उस साधक को पूजनीय भिक्षु के पास जाकर यों निवेदन करना चाहिये—आयुष्मन्! मेरा चित्त ...पूर्ववत्...। तब वह पूजनीय भिक्षु उसको स्त्यानमृद्ध से मुक्ति हेतु धर्मदेशना करता है। भिक्षु! यह **तीसरा अवसर** है जब किसी साधक को पूजनीय भिक्षु के दर्शनहेतु उसके पास जाना चाहिये। (३)

५. ''पुनः, भिक्षु! जिस समय किसी साधक भिक्षु का चित्त साधना के समय औद्धत्य कौकृत्य (अविनय) से सम्पृक्त होकर चञ्चल होने लगे...पूर्ववत्...। तब वह पूजनीय भिक्षु उसको औद्धत्य कौकृत्य से मुक्ति हेतु धर्मदेशना करता है। भिक्षु! यह **चतुर्थ अवसर** है जब किसी साधक को पूजनीय भिक्षु के दर्शन हेतु उसके पास जाना चाहिये। (४)

६. ''पुनः. भिक्षु! जिस समय किसी साधक भिक्षु का चित्त साधना के समय किसी विचिकित्सा (सन्देह) से सम्पृक्त होने के कारण चञ्चल होने लगे ...पूर्ववत्...। तब वह पूजनीय

तस्मिं समये मनोभावनीयो भिक्खु उपसङ्कमित्वा एवमस्स वचनीयो—'अहं, आवुसो, विचिकिच्छापरियुट्ठितेन चेतसा विहरामि विचिकिच्छापरेतेन, उप्पन्नाय च विचिकिच्छाय निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानामि। साधु वत मे आयस्मा विचिकिच्छाय पहानाय धम्मं देसेतू' ति। तस्स मनोभावनीयो भिक्खु विचिकिच्छाय पहानाय धम्मं देसेति। अयं, भिक्खु, पञ्चमो समयो मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं।

७. ''पुन च परं, भिक्खु, यस्मिं समये भिक्खु यं निमित्तं आगम्म यं निमित्तं मनसिकरोतो अनन्तरा आसवानं खयो होति तं निमित्तं नप्पजानाति तस्मिं समये मनोभावनीयो भिक्खु उपसङ्कमित्वा एवमस्स वचनीयो—'अहं खो, आवुसो, यं निमित्तं आगम्म यं निमित्तं मनसिकरोतो अनन्तरा आसवानं खयो होति, तं निमित्तं नप्पजानामि। साधु वत मे आयस्मा आसवानं खयो धम्मं देसेतू' ति। तस्स मनोभावनीयो भिक्खु आसवानं खयाय धम्मं देसेति। अयं, भिक्खु, छट्ठो समयो मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं। इमे खो, भिक्खु, छ समया मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं'' ति॥ ●

[N.38,B.282,R.320] **८. दुतियसमयसुत्तं** : १. एकं समयं सम्बहुला थेरा भिक्खू बाराणसियं विहरन्ति, इसिपतने मिगदाये। अथ खो तेसं थेरानं भिक्खूनं पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तानं मण्डलमाळे सन्निसिन्नानं सन्निपतितानं अयमन्तराकथा उदपादि— ''को नु खो, आवुसो, समयो मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं'' ति?

२. एवं वुत्ते अञ्ञतरो भिक्खु थेरे भिक्खू एतदवोच—''यस्मिं, आवुसो, समये

---

भिक्षु उसकी विचिकित्सा की निवृत्ति हेतु उसको धर्मदेशना करता है। भिक्षु! यह **पञ्चम अवसर** है जब ...पूर्ववत्... उसके पास जाना चाहिये। (५)

७. ''पुनः, भिक्षु! जिस समय कोई साधक किसी निमित्त का आलम्बन कर या उसको स्वचित्त में बैठाकर अपने आश्रवों का क्षय करना चाहे, परन्तु वह उस निमित्त को ही न जानता हो, उस समय उस साधक को पूजनीय भिक्षु के पास ...पूर्ववत्...। तब वह पूजनीय भिक्षु उस निमित्त की अधिगति कराने हेतु उसको धर्मदेशना करता है। भिक्षु! यह **षष्ठ अवसर** है जब ...पूर्ववत्... उसके पास जाना चाहिये।

''भिक्षु ये छह अवसर हैं जब किसी साधक भिक्षु को पूजनीय भिक्षु के पास जाना चाहिये॥'' ●

**८. द्वितीय समयसूत्र : : पूज्य भिक्षु के पास जाने के छह अवसर**

१. एक समय बहुत से स्थविर भिक्षु वाराणसी के ऋषिपतन मृगदाव में साधनाहेतु ठहरे हुए थे। तब कभी भिक्षाकर्म के बाद वृत्ताकारमण्डप में एकत्र बैठे उन भिक्षुओं में आध्यात्मिक वार्तालाप में यह प्रसङ्ग उठ गया—''आयुष्मानो! किसी पूज्य गुरु के पास जाने का कौन सा उचित अवसर है?''

२. यह प्रसङ्ग उठने पर एक भिक्षु ने अन्य उपस्थित भिक्षुओं से यह कहा—''जिस समय,

मनोभावनीयो भिक्खु पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तो पादे पक्खालेत्वा निसिन्नो होति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा, सो समयो मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं'' ति।

३. एवं वुत्ते अञ्ञतरो भिक्खु तं भिक्खु एतदवोच—''न खो, आवुसो, सो समयो मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं। यस्मिं, आवुसो, समये मनोभावनीयो भिक्खु पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तो पादे पक्खालेत्वा निसिन्नो होति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा, चारित्तकिलमथो पिस्स तस्मिं समये अप्पटिप्पस्सद्धो होति, भत्तकिलमथो पिस्स तस्मिं समये अप्पटिप्पस्सद्धो होति। तस्मा सो असमयो मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं। यस्मिं, आवुसो समये मनोभावनीयो भिक्खु सायन्हसमयं पटिल्लाना वुट्ठितो विहारपच्छायाय निसिन्नो होति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा, सो समयो मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं'' ति।

४. एवं वुत्ते अञ्ञतरो भिक्खु तं भिक्खुं एतदवोच—''न खो, आवुसो, सो समयो मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं। यस्मिं, आवुसो, समये मनो- [R.321] भावनीयो भिक्खु सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठितो विहारपच्छायायं निसिन्नो होति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा, यदेवस्स दिवा समाधिनिमित्तं मनसिकतं होति तदेवस्स तस्मिं समये समुदाचरति। तस्मा सो असमयो मनो- [B.283] भावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं। यस्मिं, आवुसो, समये मनोभावनीयो [N.39] भिक्खु रत्तिया पच्चूससमयं पच्चुट्ठाय निसिन्नो होति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा, सो समयो मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं'' ति।

---

आयुष्मानो! पूज्य भिक्षु भिक्षाचर्या के बाद भोजनकर्म से निवृत्त होकर, पैर धोकर, आसन लगाकर, शरीर को सरल कर स्मृतिपूर्वक विराजमान हो—वह समय उनके दर्शन करने का सबसे उचित है''। (१)

३. ऐसा कहे जाने पर कोई दूसरा भिक्षु बोला—''आयुष्मानो! उन पूज्य गुरु के दर्शन का वह उचित समय नहीं हैं जब वे भोजनक्रिया से निवृत्त होकर विराजमान हों; क्योंकि हो सकता है उनका उस समय धर्मदेशना का स्वाभाविक अभ्यास न हो, या भुक्त भोजन का मद उनको कुछ कष्ट दे रहा हो। अत: उस समय पूजनीय भिक्षु का दर्शन करना अनुचित ही होगा। अच्छा तो यह होगा कि जब वे पूजनीय भिक्षु सायङ्काल एकान्त साधना से निवृत्त होकर साधनास्थल के बाहर सुख एवं स्मृतिपूर्वक आसन पर बैठे हों उस समय उनका दर्शन करना उचित होगा।'' (२)

४. ऐसा कहे जाने पर कोई तीसरा भिक्षु बोला—''नहीं, आयुष्मानो! यह समय भी मुझको उचित नहीं लगता; क्योंकि उस समय उन पूजनीय भिक्षु का शरीर अपेक्षाकृत अधिक ओज:सम्पन्न रहता है, अत: उस समय वे स्वयं बुद्धोपदेशों का चिन्तन-मनन करते हैं, ऐसे पवित्र कार्य में किसी

५. एवं वुत्ते अञ्ञतरो भिक्खु तं भिक्खुं एतदवोच—"न खो, आवुसो, सो समयो मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं। यस्मिं, आवुसो, समये मनोभावनीयो भिक्खु रत्तिया पच्चूससमयं पच्चुट्ठाय निसिन्नो होति पल्लङ्कं आभुजित्वा उजुं कायं पणिधाय परिमुखं सतिं उपट्ठपेत्वा, ओजट्ठायिस्स तस्मिं समये कायो होति फासुस्स होति बुद्धानं सासनं मनसि कातुं। तस्मा सो असमयो मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं" ति।

६. एवं वुत्ते आयस्मा महाकच्चानो थेरे भिक्खू एतदवोच—"सम्मुखा मेतं, आवुसो, भगवतो सुतं सम्मुखा पटिग्गहितं—'छयिमे, भिक्खु समया मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं। कतमे छ? इध, भिक्खु, यस्मिं समये भिक्खु कामराग-परियुट्ठितेन चेतसा विहरति कामरागपरेतेन, उप्पन्नस्स च कामरागस्स निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानाति, तस्मिं समये मनोभावनीयो भिक्खु उपसङ्कमित्वा एवमस्स वचनीयो—अहं [R.322] खो, आवुसो, कामरागस्स निस्सरणं यथाभूतं नप्पजानाति। साधु वत मे आयस्मा कामरागस्स पहानाय धम्मं देसेतू' ति। तस्स मनोभावनीयो भिक्खु कामरागस्स पहानाय धम्मं देसेति। अयं भिक्खु पठमो समयो मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं।

७. 'पुन च परं, भिक्खु यस्मिं समये भिक्खु ब्यापादपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति ...पे०... थीनमिद्धपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति... उद्धच्चकुक्कुच्चपरियुट्ठितेन चेतसा विहरति ... विचिकिच्छापरियुट्ठितेन चेतसा विहरति... यं निमित्तं आगम्म यं निमित्तं मनसिकरोतो अनन्तरा आसवानं खयो होति, तं निमित्तं न जानाति न पस्सति, तस्मिं समये मनोभावनीयो [B.284] भिक्खु उपसङ्कमित्वा एवमस्स वचनीयो—अहं खो, आवुसो, यं निमित्तं आगम्म [N.40] यं निमित्तं मनसिकरोतो अनन्तरा आसवानं खयो होति तं निमित्तं न जानामि न पस्सामि। साधु वत मे आयस्मा आसवानं खयाय धम्मं देसेतू ति। तस्स मनोभावनीयो भिक्खु आसवानं खयाय धम्मं देसेति। अयं, भिक्खु, छट्ठो समयो मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं'।

---

के द्वारा विघ्न डालना उचित नहीं कहलायगा। अत: वह समय भी उन पूजनीय भिक्षु के दर्शन का उचित अवसर नहीं है।"

६. ऐसा कहे जाने पर आयुष्मान् महाकात्यायन उन स्थविर भिक्षुओं से यों बोले—"आयुष्मानो! मैंने भगवान् को देशना करते हुए स्वयं सुना है तथा उनही के सम्मुख मैंने इस प्रसङ्ग को समझा है। इस विषय में उनकी देशना यह है—'भिक्षु! पूजनीय भिक्षु के दर्शन करने के छह उचित अवसर हैं। ...पूर्ववत्...[१]। भिक्षुओ! यह छठा उचित अवसर उस पूजनीय भिक्षु के पास जाने का।

७. ...पूर्ववत्... *(उपर्युक्त छठे उपबन्ध का पुन: विस्तार कर लें।)*॥ •

---

१. यहाँ अनुपद में वर्णित **प्रथम समयसूत्र** के अविकल पाठ का विस्तार कर लें।

८. ''सम्मुखा मेतं, आवुसो, भगवतो सुतं सम्मुखा पटिग्गहितं—'इमे खो, भिक्खु, छ समया मनोभावनीयस्स भिक्खुनो दस्सनाय उपसङ्कमितुं''' ति॥ ●

**९. उदायीसुत्तं :** १. अथ खो भगवा आयस्मन्तं उदायिं आमन्तेसि—''कति नु खो, उदायि, अनुस्सतिट्ठानानी'' ति? एवं वुत्ते आयस्मा उदायी तुण्ही अहोसि। दुतियं पि खो भगवा आयस्मन्तं उदायिं आमन्तेसि—''कति नु खो, उदायि, अनुस्सतिट्ठानानी'' ति? दुतियं पि खो आयस्मा उदायी तुण्ही अहोसि। ततियं पि खो भगवा आयस्मन्तं उदायिं आमन्तेसि—''कति नु खो, उदायि, अनुस्सतिट्ठानानी'' ति? ततियं पि खो आयस्मा उदायी तुण्ही अहोसि।

२. अथ खो आयस्मा आनन्दो आयस्मन्तं उदायिं एतदवोच—''सत्था तं, आवुसो उदायि, आमन्तेसी'' ति?

''सुणोमहं, आवुसो आनन्द, भगवतो। इध, भन्ते, भिक्खु अनेकविहितं [R.323] पुब्बेनिवासं अनुस्सरति—सेय्यथीदं एकं पि जातिं द्वे पि जातियो ...पे०...। इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति। इदं, भन्ते, अनुस्सतिट्ठानं'' ति।

३. अथ खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—''अञ्ञासिं खो अहं, आनन्द—'नेवायं उदायी मोघपुरिसो अधिचित्तं अनुयुत्तो विहरती' ति। कति नु खो, आनन्द, अनुस्सतिट्ठानानी'' ति?

४. ''पञ्च, भन्ते, अनुस्सतिट्ठानानि। कतमानि पञ्च? इध, भन्ते, भिक्खु विविच्चेव कामेहि ...पे०... ततियं झानं उपसम्पज्ज विहरति। इदं, भन्ते, अनुस्सतिट्ठानं एवं भावितं एवं बहुलीकतं दिट्ठधम्मसुखविहाराय संवत्तति।

---

**९. उदायिसूत्र : : छह अनुस्मृतिस्थान**

१. तब भगवान् ने आयुष्मान् उदायी से पूछा—'उदायि! अनुस्मृतिस्थान कितने होते हैं?' प्रश्न सुनकर भी आयुष्मान् उदायी चुप ही रहा। तब भगवान् ने दूसरी बार ...पूर्ववत्... तीसरी बार भी यही प्रश्न किया, तब भी आयुष्मान् उदायी चुप ही रहा।

२. तब आयुष्मान् आनन्द आयुष्मान् उदायी से बोले—''आयुष्मान् उदायि! भगवान् तुमसे कुछ पूछ रहे हैं!''

''हाँ, आयुष्मान् आनन्द! मैं भगवान् का प्रश्न सुन रहा हूँ। भन्ते! यहाँ कोई भिक्षु अपने पूर्व जन्मों का स्मरण करता है; जैसे—एक जन्म को भी, दो जन्मों को भी ...पूर्ववत्... यों वह आकार एवं उद्देशसहित अपने अनेक जन्मों का स्मरण करता है। भन्ते! यही 'अनुस्मृतिस्थान' कहलाता है।''

३. तब भगवान् ने आयुष्मान् आनन्द से कहा—''आनन्द! मैं जानता था कि यह मूर्ख उदायी मन लगाकर साधना नहीं कर रहा है। अच्छा, आनन्द! तुम बताओ—अनुस्मृतिस्थान कितने होते हैं?''

४. ''भन्ते! अनुस्मृतिस्थान पाँच होते हैं। कौन से पाँच? यहाँ, भन्ते! कोई भिक्षु कामभोगों

[N.41] ५. ''पुन च परं, भन्ते, भिक्खु आलोकसञ्ञं मनसि करोति, दिवा सञ्ञं अधिट्ठाति, यथा दिवा तथा रत्तिं, यथा रत्तिं तथा दिवा; इति विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन [B.285] सप्पभासं चित्तं भावेति। इदं, भन्ते, अनुस्सतिट्ठानं एवं भावितं एवं बहुलीकतं ञाणदस्सनप्पटिलाभाय संवत्तति।

६. ''पुन च परं, भन्ते, भिक्खु इममेव कायं उद्धं पादतला अधो केसमत्थका तचपरियन्तं पूरं नानप्पकारस्स असुचिनो पच्चवेक्खति—'अत्थि इमस्मिं काये केसा लोमा नखा दन्ता तचो मंसं न्हारु अट्ठि अट्ठिमिञ्जं वक्कं हदयं यकनं किलोमकं पिहकं पप्फासं अन्तं अन्तगुणं उदरियं करीसं पित्तं सेम्हं पुब्बो लोहितं सेदो मेदो अस्सु वसा खेळो सिङ्घाणिका लसिका मुत्तं' ति। इदं, भन्ते, अनुस्सतिट्ठानं एव भावितं एवं बहुलीकतं कामरागप्पहानाय संवत्तति।

[R.324] ७. ''पुन च परं, भन्ते, भिक्खु सेय्यथापि पस्सेय्य सरीरं सीवथिकाय छड्डितं एकाहमतं वा द्वीहमतं वा तीहमतं वा उद्धुमातकं विनीलकं विपुब्बकजातं, सो इममेव कायं एवं उपसंहरति—'अयं पि खो कायो एवंधम्मो एवंभावी एवंअनतीतो' ति।

८. ''सेय्यथापि वा पन पस्सेय्य सरीरं सीवथिकाय छड्डितं काकेहि वा खज्जमानं कुललेहि वा खज्जमानं गिज्झेहि वा खज्जमानं सुनखेहि वा खज्जमानं सिङ्गालेहि वा

---

से दूर रहकर ...पूर्ववत्... तृतीय ध्यान प्राप्त कर साधना करता है। भन्ते! इस अनुस्मृतिस्थान की भावना एवं अभ्यास सत्य के साक्षात्कार में बहुत अधिक उपयोगी होते हैं। (१)

५. ''पुनः, भन्ते! साधक भिक्षु आलोकसंज्ञा की मन में भावना करता है, दिवासंज्ञा की भावना करता है। 'जैसे दिन वैसी रात्रि या जैसी रात्रि वैसा दिन'—इस प्रकार खुले एवं स्वतन्त्र मन से आलोकमय चित्त की भावना करता है। भन्ते! यह भी एक अनुस्मृतिस्थान है, जिसकी साधना ज्ञानदर्शन की प्राप्ति में अत्यधिक उपयोगी होती है। (२)

६. ''पुनः, भन्ते! साधक भिक्षु अपनी काया में विविध अशुचि का, ऊपर से पैरों तक तथा नीचे से केशमस्तक तक, प्रत्यवेक्षण करता है—'इस काया में केश, लोम, नख, दाँत, त्वचा, मांस, स्नायु, अस्थि, मज्जा, वृक्क, हृदय, यकृत् क्लोम, प्लीहा, फुफ्फुस, छोटी आँत, बड़ी आँत, उदर में पड़ा मल, पित्त, कफ, पूय, रक्त, स्वेद, मेद, आँसू क्ष्वेड़ (खंखार) सिङ्घाणिका (नाक का मल), लसीका एवं मूत्र हैं। भन्ते! ऐसा प्रत्यवेक्षण भी एक अनुस्मृतिस्थान होता है, जिसकी साधना एवं अभ्यास कामराग के प्रहाण में अतिशय उपयोगी होते हैं।' (३)

७. ''पुनः, भन्ते! साधक भिक्षु कभी किसी श्मशान में फेंका हुआ एक दिन, दो दिन या तीन दिन पूर्व मरे हुए मानव का शरीर देखे, जो फूला हुआ, नीला पड़ा हुआ, मवाद (पूय) से भरा हुआ हो। वह उस शरीर की अपने शरीर से तुलना करता हुआ यह निष्कर्ष निकाले—'यह शरीर भी इसी स्वभाव वाला, इसी धर्मवाला, इसी गतिवाला है। इसकी भी गति इसके विपरीत नहीं हो सकती।'

८. ''अथवा, भिक्षुओ! कोई साधक मानव के मृत शरीर को कहीं पड़ा हुआ देखे, जो कौओं से खाया जा रहा हो, चील, गिद्ध या कुत्तों या गीदड़ों से नोंचा जा रहा हो या नाना प्रकार के जीवों

खज्जमानं विविधेहि वा पाणकजातेहि खज्जमानं, सो इममेव कायं एवं उपसंहरति—'अयं पि खो कायो एवंधम्मो एवंभावी एवंअनतीतो' ति।

९. "सेय्यथापि वा पन पस्सेय्य सरीरं सीवथिकाय छड्डितं अट्ठिकसङ्खलिकं समंसलोहितं न्हारुसम्बन्धं ...पे०... अट्ठिकसङ्खलिकं निम्मंसलोहितमक्खितं न्हारुसम्बन्धं ... अट्ठिकसङ्खलिकं अपगतमंसलोहितं न्हारुसम्बन्धं। अट्ठिकानि अपगतसम्बन्धानि दिसाविदिसाविक्खित्तानि, अञ्ञेन हत्थट्ठिकं अञ्ञेन पादट्ठिकं अञ्ञेन जङ्घट्ठिकं अञ्ञेन ऊरुट्ठिकं अञ्ञेन कटिट्ठिकं अञ्ञेन फासुट्ठिकं अञ्ञेन पिट्ठिकण्टकट्ठिकं [N.42,B.286] अञ्ञेन खन्धट्ठिकं अञ्ञेन गीवट्ठिकं अञ्ञेन हनुकट्ठिकं अञ्ञेन दन्तकट्ठिकं अञ्ञेन सीसकटाहं, अट्ठिकानि सेतानि सङ्खवण्णप्पटिभागानि अट्ठिकानि पुञ्जकितानि [R.325] तेरोवस्सिकानि अट्ठिकानि पूतीनि चुण्णकजातानि, सो इममेव कायं एवं उपसंहरति—'अयं पि खो कायो एवंधम्मो एवंभावी एवंअनतीतो' ति। इदं, भन्ते, अनुस्सतिट्ठानं एवं भावितं एवं बहुलीकतं अस्मिमानसमुग्घाताय संवत्तति।

१०. "पुन च परं, भन्ते, भिक्खु सुखस्स च पहाना ...पे०... चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति। इदं, भन्ते, अनुस्सतिट्ठानं एवं भावितं एवं बहुलीकतं अनेकधातुपटिवेधाय संवत्तति। इमानि खो, भन्ते, पञ्च अनुस्सतिट्ठानानी" ति।

११. ""साधु, साधु, आनन्द! तेन हि त्वं, आनन्द, इदं पि छट्ठं अनुस्सतिट्ठानं धारेहि। इधानन्द, भिक्खु सतो व अभिक्कमति सतो व पटिक्कमति सतो व तिट्ठति सतो व निसीदति सतो व सेय्यं कप्पेति सतो व कम्मं अधिट्ठाति। इदं, आनन्द, अनुस्सतिट्ठानं एवं भावितं एवं बहुलीकतं सतिसम्पजञ्ञाय संवत्तती" ति॥ ●

---

से खाया जा रहा हो। उसे देखकर उससे अपने शरीर की तुलना करें और यह निष्कर्ष निकाले ...पूर्ववत्... इसकी भी उसके विपरीत गति नहीं हो सकती।

९. "या जैसे वह किसी ऐसे मृत शरीर को देखे जिसका अस्थिसमूह मांस, रक्त एवं स्नायुओं से बँधा हो... या जिसका अस्थिसमूह (कङ्काल) मांस, रक्त एवं स्नायुओं से रहित हो। उसकी हड्डियाँ इधर उधर ऐसी बिखरी हों, जैसे—कहीं पैर की, कहीं हाथ की, कहीं घुटने की, कहीं जङ्घा की... कहीं कटि की, कहीं पीठ की, कहीं गले की, कहीं ठोड़ी (हनु) की, कहीं दाँतों की, और कहीं सिर का कपाल। वह इस बिखरे हुए श्वेत शङ्खतुल्य चूर्ण, विचूर्ण अस्थिसमूह से अपने शरीर की तुलना कर यही निष्कर्ष निकालता है कि एक दिन उसके शरीर की भी यही दशा होगी, इसके विपरीत नहीं। भन्ते! यह भी एक अनुस्मृतिस्थान है इसकी साधना एवं अभ्यास भी संसार के प्रति ममत्व (अभिमान) के नाश के लिये अतिशय उपयोगी होता है। (४)

१०. "पुनः, भन्ते! कोई साधक भिक्षु सुख के प्रहाण से ...पूर्ववत्... चतुर्थ ध्यान प्राप्त कर साधना करता है। भन्ते! यह अनुस्मृतिस्थान भी इस तरह साधना एवं अभ्यास करने पर अनेक धातुओं (मानसिक अवस्थाओं) के प्रतिवेध के लिये अत्यधिक उपयोगी होता है।" (५)

११. "साधु साधु, आनन्द! साधु! तुमने बहुत उचित कहा। अब तुम एक छठे अनुस्मृति-

**१०. अनुत्तरियसुत्तं :** १. ''छयिमानि, भिक्खवे, अनुत्तरियानि। कतमानि छ? दस्सनानुत्तरियं, सवनानुत्तरियं, लाभानुत्तरियं, सिक्खानुत्तरियं, पारिचरियानुत्तरियं, अनुस्सतानुत्तरियं ति।

२. ''कतमं च, भिक्खवे, **दस्सनानुत्तरियं**? इध, भिक्खवे, एकच्चो हत्थिरतनं पि दस्सनाय गच्छति, अस्सरतनं पि दस्सनाय गच्छति, मणिरतनं पि दस्सनाय गच्छति, उच्चावचं वा पन दस्सनाय गच्छति, समणं वा ब्राह्मणं वा मिच्छादिट्ठिकं मिच्छापटिपन्नं दस्सनाय गच्छति। अत्थेतं, भिक्खवे, दस्सनं; नेतं नत्थी ति वदामि। तं च खो एतं, भिक्खवे, दस्सनं हीनं गम्मं पोथुज्जनिकं अनरियं अनत्थसंहितं, न निब्बिदाय न विरागाय न निरोधाय
[N.43] न उपसमाय न अभिञ्ञाय न सम्बोधाय न निब्बानाय संवत्तति। यो च खो,
[R.326] भिक्खवे, तथागतं वा तथागतसावकं वा दस्सनाय गच्छति निविट्ठसद्धो निविट्ठपेमो
[B.287] एकन्तगतो अभिप्पसन्नो, एतदानुत्तरियं, भिक्खवे, दस्सनानं सत्तानं विसुद्धिया सोकपरिदेवानं समतिक्कमाय दुक्खदोमनस्सानं अत्थङ्गमाय ञायस्स अधिगमाय निब्बानस्स सच्छिकिरियाय, यदिदं तथागतं वा तथागतसावकं वा दस्सनाय गच्छति निविट्ठ-सद्धो निविट्ठपेमो एकन्तगतो अभिप्पसन्नो। इदं वुच्चति, भिक्खवे, दस्सनानुत्तरियं। इति दस्सनानुत्तरियं।



---

स्थान को और जोड़ लो। इसकी भी साधना करो। साधक भिक्षु अथवा अभिक्रमण, प्रतिक्रमण, खड़े रहना, बैठना, सोना—आदि सभी क्रियाएँ स्मृतिपूर्वक ही करे। आनन्द! इस अनुस्मृतिस्थान की साधना साधक के स्मृतिसम्प्रजन्य को बढ़ाती है॥''

**१०. अनुत्तर्यसूत्र : : छह अनुत्तर्य धर्म**

१. ''भिक्षुओ! ये छह अनुत्तर्य धर्म होते हैं। कौन से छह? (१) दर्शनानुत्तर्य, (२) श्रवणा-नुत्तर्य, (३) लाभानुत्तर्य, (४) शिक्षानुत्तर्य, (५) परिचर्यानुत्तर्य, एवं (६) अनुस्मृतानुत्तर्य।

२. ''भिक्षुओ! इनमें **दर्शनानुत्तर्य** क्या होता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई अच्छा हाथी देखने जाता है, कोई अच्छा घोड़ा देखने जाता है, कोई अच्छा मणिरत्न, कोई ऊँची-नीची चीजों को देखने जाता है, कोई मिथ्यादृष्टि और मिथ्यासाधना में रत श्रमण या ब्राह्मण के दर्शन करने जाता है। भिक्षुओ! ये सब भी 'दर्शन' हैं। 'ये 'दर्शन' नहीं हैं'—ऐसा मैं नहीं कहता; परन्तु ये उपर्युक्त दर्शन निकृष्ट, ग्राम्य (अलक्ष्मीकर), मूर्खों द्वारा ही करणीय तथा अनार्यों द्वारा सेवित एवं अनर्थबहुल हैं। ये दर्शन न संसार से ग्लानि या वैराग्य कराने में समर्थ हैं, न चित्त को शान्त कराने वाले हैं, न चित्तनिरोध, न चित्त की शान्ति, न अभिज्ञा, न सम्बोधि (बुद्धत्व), या निर्वाण की ओर ले जाने वाले हैं। परन्तु, भिक्षुओ! जो श्रावक तथागत या तथागतशिष्य में श्रद्धा कर लेता है, वह वैसा श्रद्धालु, प्रेमी, एकान्तवासी और तथागत का धर्मश्रवण कर सर्वथा प्रसन्न होता है। उस आर्यश्रावक की श्रद्धालाभ की यह अनुत्तरता (अद्वितीयता) ही, भिक्षुओ! प्राणियों की चित्त-विशुद्धि के लिये, सांसारिक शोक विलाप को दूर करने के लिये, दु:ख एवं दौर्मनस्य के नाश के लिये, ज्ञान की प्राप्ति के लिये, निर्वाण के साक्षात्कार के लिये उपयोगी है। अत: तथागत या तथागतश्रावक में श्रद्धा, स्नेह

३. "**सवनानुत्तरियं** च कथं होति? इध, भिक्खवे, एकच्चो भेरिसद्दं पि सवनाय गच्छति, वीणासद्दं पि सवनाय गच्छति, गीतसद्दं पि सवनाय गच्छति, उच्चावचं वा पन सवनाय गच्छति, समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा मिच्छादिट्ठिकस्स मिच्छापटिपन्नस्स धम्मस्सवनाय गच्छति। अत्थेतं, भिक्खवे, सवनं; नेतं नत्थी ति वदामि। तं च खो एतं, भिक्खवे, सवनं हीनं गम्मं पोथुज्जनिकं अनरियं अनत्थसंहितं, न निब्बिदाय न विरागाय न निरोधाय न उपसमाय न अभिञ्ञाय न सम्बोधाय न निब्बानाय संवत्तति। यो च खो, भिक्खवे, तथागतस्स वा तथागतसावकस्स वा धम्मस्सवनाय गच्छति निविट्ठसद्धो निविट्ठपेमो एकन्तगतो अभिप्पसन्नो, एतदानुत्तरियं, भिक्खवे, सवनानं सत्तानं विसुद्धिया सोकपरिदेवानं समतिक्कमाय दुक्खदोमनस्सानं अत्थङ्गमाय ञायस्स अधिगमाय निब्बानस्स सच्छिकिरियाय, यदिदं तथागतस्स वा तथागतसावकस्स वा धम्मस्सवनाय गच्छति निविट्ठसद्धो निविट्ठपेमो एकन्तगतो अभिप्पसन्नो। इदं, वुच्चति, भिक्खवे, सवनानुत्तरियं। इति दस्सनानुत्तरियं, सवनानुत्तरियं।

४. "**लाभानुत्तरियं** च कथं होति? इध, भिक्खवे, एकच्चो पुत्तलाभं पि लभति, दारलाभं पि लभति, धनलाभं पि लभति, उच्चावचं वा पन लाभं लभति, समणे वा ब्राह्मणे वा मिच्छादिट्ठिके मिच्छापटिपन्ने सद्धं पटिलभति। अत्थेसो, भिक्खवे, लाभो; नेसो [R.327] नत्थी ति वदामि। सो च खो एसो, भिक्खवे, लाभो हीनो गम्मो पोथुज्जनिको अनरियो अनत्थसंहितो, न निब्बिदाय न विरागाय न निरोधाय न उपसमाय न अभिञ्ञाय न [N.44] सम्बोधाय न निब्बानाय संवत्तति। यो च खो, भिक्खवे, तथागते वा तथागतसावके [B.288] वा सद्धं पटिलभति निविट्ठसद्धो निविट्ठपेमो एकन्तगतो अभिप्पसन्नो, एतदानुत्तरियं भिक्खवे, लाभानं सत्तानं विसुद्धिया सोकपरिदेवानं समतिक्कमाय दुक्खदोमनस्सानं

---

तथा ऐकान्तिक प्रेम ही भिक्षुओ! 'अनुपम लाभ' कहलाता है। इस प्रकार दर्शनानुत्तर्य का व्याख्यान समझना चाहिये। (१)

३. "**श्रवणानुत्तर्य** कैसे होता है? भिक्षुओ! यहाँ कोई पुरुष भेरी (ढोल) या वीणा का वादन अथवा किसी का गायन सुनने जाता है, या कुछ ऊँचा-नीचा (अच्छा बुरा) सुनने जाता है, अथवा किसी मिथ्यादृष्टि श्रमण या ब्राह्मण से धर्मश्रवण करने जाता है। भिक्षुओ! यह भी कहने को 'श्रवण' ही है। मैं नहीं कहता कि यह श्रवण नहीं है। परन्तु यह श्रवण ...पूर्ववत्...। जो तथागत या तथागतश्रावक से धर्मश्रवण करने जाता है ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यह कहलाता है श्रवणानुत्तर्य। इस प्रकार दर्शनानुत्तर्य एवं श्रवणानुत्तर्य का व्याख्यान समाप्त हुआ। (२)

४. "**लाभानुत्तर्य** कैसे होता है? भिक्षुओ! यहाँ कोई पुत्रलाभ करता है, कोई स्त्रीलाभ, कोई धनलाभ या कोई ऊँचा नीचा लाभ करता है, मिथ्यादृष्टि श्रमण एवं ब्राह्मणों में श्रद्धालाभ करता है। भिक्षुओ! कहने को तो ये सब भी लाभ हैं, ये लाभ नहीं हैं—ऐसा मैं नहीं कहता। यह लाभ ...पूर्ववत्...। परन्तु जो तथागत या तथागतश्रावक में श्रद्धालाभ करता है ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यह

अत्थङ्गमाय ञायस्स अधिगमाय निब्बानस्स सच्छिकिरियाय, यदिदं तथागते वा तथागतसावके वा सद्धं पटिलभति निविट्ठसद्धो निविट्ठपेमो एकन्तगतो अभिप्पसन्नो। इदं वुच्चति, भिक्खवे, लाभानुत्तरियं। इति दस्सनानुत्तरियं, सवनानुत्तरियं, लाभानुत्तरियं।

५. "**सिक्खानुत्तरियं** च कथं होति? इध, भिक्खवे, एकच्चो हत्थिस्मिं पि सिक्खति, अस्सस्मिं पि सिक्खति, रथस्मिं पि सिक्खति, धनुस्मिं पि सिक्खति, थरुस्मिं पि सिक्खति, उच्चावचं वा पन सिक्खति, समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा मिच्छादिट्ठिकस्स मिच्छापटिपन्नस्स सिक्खति। अत्थेसा, भिक्खवे, सिक्खा; नेसा नत्थी ति वदामि। सा च खो एसा, भिक्खवे, सिक्खा हीना गम्मा पोथुज्जनिका अनरिया अनत्थसंहिता, न निब्बिदाय न विरागाय न निरोधाय न उपसमाय न अभिञ्ञाय न सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तति। यो च खो, भिक्खवे, तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अधिसीलं पि सिक्खति, अधिचित्तं पि सिक्खति, अधिपञ्ञं पि सिक्खति निविट्ठसद्धो निविट्ठपेमो एकन्तगतो अभिप्पसन्नो, एतदानुत्तरियं, भिक्खवे, सिक्खानं सत्तानं विसुद्धिया सोकपरिदेवानं समतिक्कमाय दुक्ख- [R.328] दोमनस्सानं अत्थङ्गमाय ञायस्स अधिगमाय निब्बानस्स सच्छिकिरियाय, यदिदं तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अधिसीलं पि सिक्खति, अधिचित्तं पि सिक्खति, अधिपञ्ञं पि सिक्खति, निविट्ठसद्धो निविट्ठपेमो एकन्तगतो अभिप्पसन्नो। इदं वुच्चति, भिक्खवे, सिक्खानुत्तरियं। इति दस्सनानुत्तरियं, सवनानुत्तरियं, लाभानुत्तरियं, सिक्खानुत्तरियं।

६. "**पारिचरियानुत्तरियं** च कथं होति? इध, भिक्खवे, एकच्चो खत्तियं पि परिचरति, ब्राह्मणं पि परिचरति, गहपतिं पि परिचरति, उच्चावचं वा पन परिचरति, समणं वा ब्राह्मणं वा मिच्छादिट्ठिकं मिच्छापटिपन्नं परिचरति। अत्थेसा, भिक्खवे, पारिचरिया; नेसा नत्थी ति वदामि। सा च खो एसा, भिक्खवे, पारिचरिया हीना गम्मा पोथुज्जनिका अनरिया

---

कहलाता है लाभानुत्तर्य। इस प्रकार दर्शनानुत्तर्य, श्रवणानुत्तर्य एवं लाभानुत्तर्य का व्याख्यान सम्पन्न हुआ। (३)

५. **शिक्षानुत्तर्य** कैसे होता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई हाथियों का सञ्चालन, कोई अश्वों का, कोई रथों का सञ्चालन सीखता है, कोई धनुष् का, कोई तलवार का सञ्चालन या कोई ऐसी ही ऊँची नीची कला सीखता है। या कोई मिथ्यादृष्टि एवं मिथ्यासाधनारत श्रमण या ब्राह्मण से कुछ सीखता है। भिक्षुओ! ये सब भी शिक्षाएँ ही हैं, ये शिक्षा नहीं हैं—ऐसा मैं नहीं कहता। परन्तु यह शिक्षा ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! जो तथागत द्वारा उपदिष्ट धर्मविनय में, शील के विषय में, चित्त के विषय में, प्रज्ञा के विषय में श्रद्धा, प्रेम एवं एकान्त निष्ठा के साथ शिक्षा ग्रहण करता है, ऐसी अद्वितीय शिक्षा ही प्राणियों की चित्तविशुद्धि के लिये ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यह कहलाती है अद्वितीय शिक्षा। इस प्रकार दर्शनानुत्तर्य, श्रवणानुत्तर्य, लाभानुत्तर्य एवं शिक्षानुत्तर्य का व्याख्यान सम्पन्न हुआ। (४)

६. "**परिचर्यानुत्तर्य** कैसे होता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई क्षत्रिय की, कोई ब्राह्मण की, कोई गृहपति की सेवा करता है। यों लोग ऊँची नीची सेवा में लगे रहते हैं। या कोई मिथ्यादृष्टि एवं मिथ्यासाधक श्रमण ब्राह्मण की सेवा करता है। यद्यपि, भिक्षुओ! यह परिचर्या (सेवा) भी परिचर्या

अनत्थसंहिता, न निब्बिदाय ...पे०... न निब्बानाय संवत्तति। यो च खो, भिक्खवे, तथागतं वा तथागतसावकं वा परिचरति निविट्ठसद्धो निविट्ठपेमो एकन्तगतो अभिप्पसन्नो, [N.45] एतदानुत्तरियं, भिक्खवे, पारिचरियानं सत्तानं विसुद्धिया सोकपरिदेवानं समतिक्क- [B.289] माय दुक्खदोमनस्सानं अत्थङ्गमाय ञायस्स अधिगमाय निब्बानस्स सच्छिकिरियाय, यदिदं तथागतं वा तथागतसावकं वा परिचरति निविट्ठसद्धो निविट्ठपेमो एकन्तगतो अभिप्पसन्नो। इदं वुच्चति, भिक्खवे, पारिचरियानुत्तरियं। इति दस्सनानुत्तरियं, सवनानुत्तरियं, लाभानुत्तरियं, सिक्खानुत्तरियं, पारिचरियानुत्तरियं।

७. "**अनुस्सतानुत्तरियं** च कथं होति? इध, भिक्खवे, एकच्चो पुत्तलाभं पि अनुस्सरति, दारलाभं पि अनुस्सरति, धनलाभं पि अनुस्सरति, उच्चावचं वा पन लाभं अनुस्सरति, समणं वा ब्राह्मणं वा मिच्छादिट्ठिकं मिच्छापटिपन्नं अनुस्सरति। अत्थेसा, भिक्खवे, अनुस्सति; नेसा नत्थी ति वदामि। सा च खो एसा, भिक्खवे, अनुस्सति हीना गम्मा पोथुज्जनिका अनरिया अनत्थसंहिता, न निब्बिदाय न विरागाय न निरोधाय न उपसमाय न अभिञ्ञाय न सम्बोधाय न निब्बानाय संवत्तति। यो च खो, भिक्खवे, तथागतं वा तथागतसावकं वा अनुस्सरति निविट्ठसद्धो निविट्ठपेमो एकन्तगतो अभिप्पसन्नो, [R.329] एतदानुत्तरियं, भिक्खवे, अनुस्सतीनं सत्तानं विसुद्धिया सोकपरिदेवानं समतिक्कमाय दुक्खदोमनस्सानं अत्थङ्गमाय ञायस्स अधिगमाय निब्बानस्स सच्छिकिरियाय, यदिदं तथागतं वा तथागतसावकं वा अनुस्सरति निविट्ठसद्धो निविट्ठपेमो एकन्तगतो अभिप्पसन्नो। इदं वुच्चति, भिक्खवे, अनुस्सतानुत्तरियं। इमानि खो, भिक्खवे, छ अनुत्तरियानी ति॥

"ये दस्सनानुत्तरं लद्धा, सवनं च अनुत्तरं।

---

ही है; यह परिचर्या नहीं है—ऐसा मैं नहीं कहता। परन्तु ये परिचर्याएँ हीन ...पूर्ववत्... निर्वाण के साक्षात्कार के लिये उपयोगी नहीं है। हाँ, श्रद्धा, प्रेम एवं एकान्तनिष्ठा के साथ जो तथागत या तथागतश्रावक की परिचर्या करता है भिक्षुओ! यह परिचर्या अद्वितीय (श्रेष्ठ) होती है। भिक्षुओ! यह परिचर्यानुत्तर्य कहलाता है। इस प्रकार दर्शनानुत्तर्य, श्रवणानुत्तर्य, लाभानुत्तर्य, शिक्षानुत्तर्य एवं परिचर्यानुत्तर्य का व्याख्यान सम्पन्न हुआ। (५)

७. "**अनुस्मृतानुत्तर्य** कैसे होता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई पुत्रलाभ का अनुस्मरण (पुनः पुनः स्मरण) करता है, कोई स्त्रीलाभ का, कोई धनलाभ का; यों प्रत्येक साधारण जन किसी न किसी ऊँचे नीचे लाभ का अनुस्मरण करता रहता है। या फिर कोई मिथ्यादृष्टि एवं मिथ्यासाधक श्रमण ब्राह्मण का अनुस्मरण करता है। भिक्षुओ! इन सब साधारण लाभों की अनुस्मृति भी अनुस्मृति ही होती है; मैं नहीं कहता कि ये अनुस्मृति नहीं होती। परन्तु ये ...पूर्ववत्... निर्वाण के साक्षात्कार के लिये उपयोगी नहीं है। जो श्रद्धा, भक्ति एवं एकान्त निष्ठा के साथ तथागत या तथागत श्रावक का अनुस्मरण करता है, वही अनुस्मरण अद्वितीय कहलाता है। भिक्षुओ! यह कहलाता है—अनुस्मृतानुत्तर्य। भिक्षुओ! ये छह अनुत्तर्य कहलाते हैं॥ (६)

लाभानुत्तरियं लद्धा, सिक्खानुत्तरिये रता॥
"उपट्ठिता पारिचरिया, भावयन्ति अनुस्सतिं।
विवेकप्पटिसंयुत्तं, खेमं अमतगामिनिं॥
"अप्पमादे पमुदिता, निपका सीलसंवुता।
ते वे कालेन पच्चेन्ति, यत्थ दुक्खं निरुज्झती" ति॥ ●

अनुत्तरियवग्गो ततियो॥

### तस्सुद्दानं

[N.46,B.290] सामको अपरिहानियो, भयं हिमवानुस्सति।
कच्चानो द्वे च समया, उदायी अनुत्तरियेना ति॥ ●

## ४. देवतावग्गो

**१. सेखसुत्तं :** १. "छयिमे, भिक्खवे, धम्मा सेखस्स भिक्खुनो परिहानाय [R.330] संवत्तन्ति। कतमे छ? कम्मारामता, भस्सारामता, निद्दारामता, सङ्गणिकारामता,

---

"जो साधक दर्शनानुत्तर्य को प्राप्त कर, अनुत्तर (अद्वितीय) श्रवण को प्राप्त करता है, तदनन्तर वह लाभानुत्तर्य को प्राप्त कर शिक्षानुत्तर्य से सम्पृक्त होते हैं॥

"वे परिचर्यानुस्मृति में परिनिष्ठित हो जाते हैं, इस के बाद वे विवेकयुक्त क्षेमदायक एवं निर्वाण मार्ग में आरूढ करने वाली अनुस्मृति की भावना करते हैं॥

"ऐसे बुद्धिमान् साधक अप्रमाद युक्तआचरण में ही हर्ष मानते हुए, शील से संवृत रहते हुए यथासमय उस सत्य का साक्षात्कार करने में समर्थ हो जाते हैं, जहाँ पहुँचने पर दुःखनिरोध हो जाता है॥ ●

अनुत्तर्यवर्ग तृतीय सम्पन्न॥

### इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची

१. सामकसूत्र, २. अपरिहाणीयसूत्र, ३. भयसूत्र, ४. हिमवत्सूत्र, ५. अनुस्मृतिस्थानसूत्र, ६. महाकात्यायनसूत्र, ७. प्रथमसमयसूत्र, ८. द्वितीयसमयसूत्र, ९. उदायिसूत्र, १०. अनुत्तर्यसूत्र॥●

## ४. देवतावर्ग

**१. शैक्ष्य सूत्र : : छह धर्मों से भिक्षु का अधःपात**

१. "भिक्षुओ! ये छह धर्म शैक्ष्य भिक्षु के अधःपतन के हेतु होते हैं। कौने से छह? (१) कर्मारामता, (२) भाष्यारामता, (३) निद्रारामता, (४) सङ्गणिकारामता, (५) इन्द्रियों की

इन्द्रियेसु अगुत्तद्वारता, भोजने अमत्तञ्ञुता—इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मा सेखस्स भिक्खुनो परिहानाय संवत्तन्ति।

२. "छयिमे, भिक्खवे, धम्मा सेखस्स भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ति। कतमे छ? न कम्मारामता, न भस्सारामता, न निद्दारामता, न सङ्गणिकारामता, इन्द्रियेसु गुत्तद्वारता, भोजने मत्तञ्ञुता—इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मा सेखस्स भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ती" ति॥ ●

**२. पठमअपरिहानसुत्तं** : १. अथ खो अञ्ञतरा देवता अभिक्कन्ताय रत्तिया अभिक्कन्तवण्णा केवलकप्पं जेतवनं ओभासेत्वा येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठिता खो सा देवता भगवन्तं एतदवोच—

२. "छयिमे, भन्ते, धम्मा भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ति। कतमे छ? सत्थुगारवता, धम्मगारवता, सङ्घगारवता, सिक्खागारवता, अप्पमादगारवता, पटिसन्थारगारवता—इमे खो, भन्ते, छ धम्मा भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ती" ति।

३. इदमवोच सा देवता। समनुञ्ञो सत्था अहोसि। अथ खो सा देवता "समनुञ्ञो मे सत्था" ति भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा तत्थेवन्तरधायि।

४. अथ खो भगवा तस्मा रत्तिया अच्चयेन भिक्खू आमन्तेसि—[N.47,B.291]

---

अगुप्तद्वारता एवं (६) भोजन की मात्रा का न जानना—भिक्षुओ! ये छह धर्म शैक्ष्य भिक्षु के अध:पात के कारण होते हैं।

२. परन्तु, भिक्षुओ! इन छह धर्मों का पालन शैक्ष्य भिक्षु के अध:पात को रोकता है। कौन से छह धर्म? कर्मारामता से, भाष्यारामता से, निद्रारामता से, सङ्गणिकारामता से, इन्द्रियों की अगुप्तद्वारता से एवं भोजन की मात्रा न जानने से दूर रहना—भिक्षुओ! ये छह धर्म शैक्ष्य भिक्षु के अध:पात को रोकते हैं॥" ●

**२. प्रथम अपरिहाणसूत्र : : छह अपरिहाणीय धर्म**

१. तब उस चाँदनी रात में सुन्दर रूप-आकार वाला कोई देवता प्राय: प्रकाशमान जेतवन को और अधिक प्रकाशित करते हुए भगवान् के सम्मुख आया, तथा उन को प्रणाम कर एक ओर खड़ा हो गया। एक ओर खड़ा वह देवता भगवान् से यों निवेदन करने लगा—

२. "भन्ते! ये छह धर्म भिक्षु की अपरिहानि (अभ्युन्नति) के कारण होते हैं। कौन से छह? (१) शास्ता के प्रति गौरव, (२) धर्म के प्रति गौरव, (३) सङ्घ के प्रति गौरव, (४) बुद्धोपदिष्ट शिक्षा के प्रति गौरव, (५) अप्रमाद (साधना में सावधानी) के प्रति गौरव एवं (६) प्रतिसंस्तार (आगत का स्वागत सत्कार) के प्रति गौरव (सम्मानप्रदर्शन)—भन्ते! ये छह धर्म भिक्षु की अभ्युन्नति में सर्वथा सहायक होते हैं।"

३. उस देवता ने यह कहा। शास्ता ने भी उसके कथन को स्वीकृति दी। तब वह देवता भगवान् को प्रणाम प्रदक्षिणा कर वहीं अन्तर्धान हो गया।

४. तदनन्तर, भगवान् ने उस रात्रि के बीतने पर भिक्षुओं को बुलाया तथा उनको यह उपदेश

"इमं, भिक्खवे, रत्तिं अञ्ञतरा देवता अभिक्कन्ताय रत्तिया अभिक्कन्तवण्णा केवलकप्पं जेतवनं ओभासेत्वा येनाहं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा मं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठिता खो, भिक्खवे, सा देवता मं एतदवोच—'छयिमे, भन्ते, धम्मा भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ति। कतमे छ? सत्थुगारवता, धम्मगारवता, सङ्घगारवता, सिक्खा- [R.331] गारवता, अप्पमादगारवता, पटिसन्थारगारवता—इमे खो, भन्ते, छ धम्मा भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ती' ति। इदमवोच, भिक्खवे, सा देवता। इदं वत्वा मं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा तत्थेवन्तरधायी ति।

"सत्थुगरु धम्मगरु, सङ्घे च तिब्बगारवो।
अप्पमादगरु भिक्खु, पटिसन्थारगारवो।
अभब्बो परिहानाय, निब्बानस्सेव सन्तिके" ति॥ ●

**३. दुतियअपरिहानसुत्तं** : १. "इमं, भिक्खवे, रत्तिं अञ्ञतरा देवता अभिक्कन्ताय रत्तिया अभिक्कन्तवण्णा केवलकप्पं जेतवनं ओभासेत्वा येनाहं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा मं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठिता खो, भिक्खवे, सा देवता मं एतदवोच—'छयिमे, भन्ते, धम्मा भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ति। कतमे छ? सत्थुगारवता, धम्मगारवता, सङ्घगारवता, सिक्खागारवता, हिरिगारवता, ओत्तप्पगारवता—इमे खो, भन्ते, छ धम्मा भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ती' ति। इदमवोच, भिक्खवे, सा देवता। इदं वत्वा मं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा तत्थेवन्तरधायी ति॥

"सत्थुगरु धम्मगरु, सङ्घे च तिब्बगारवो।

---

दिया—"भिक्षुओ! विगत रात्रि में कोई देवता चाँदनी रात में प्राय: प्रकाशित जेतवन को विशेषत: प्रकाशित करता हुआ मेरे पास आया, तथा मुझ को प्रणाम कर एक ओर खड़े हो कर यह कहने लगा—"भन्ते! ...पूर्ववत्... अभ्युन्नतिकारक ही होते हैं।" यह कह कर वह देवता ...पूर्ववत्... अन्तर्धान हो गया।

"शास्ता, धर्म एवं सङ्घ का पूर्णत: सम्मान करने वाला, साधना में सर्वथा सावधान (अप्रमत्त) रहने वाला तथा आये गये का हृदय से स्वागत करने वाला भिक्षु स्वकर्तव्य से कथमपि च्युत नहीं हो सकता। वह इन धर्मों का पालन करते हुए निर्वाण के समीप ही पहुँच गया—ऐसा समझो॥" ●

**३. द्वितीय अपरिहाणसूत्र : : दूसरे छह अपरिहाणीय धर्म**

१. ...भिक्षुओ! विगत रात्रि में कोई सुन्दर देवता चाँदनी रात में प्राय: प्रकाशित जेतवन को विशेषरूप से प्रकाशित करता हुआ मेरे पास आया, तथा मुझ को प्रणाम कर एक ओर खड़े हुए उसने मुझ से यह कहा—'भन्ते! शास्ता के प्रति, धर्म के प्रति, सङ्घ के प्रति, बुद्धोपदिष्ट शिक्षा के प्रति, लज्जा के प्रति एवं पापभीरूता के प्रति गौरव—ये छह धर्म भिक्षु की अभ्युन्नति में ही हेतु होते हैं।' वह देवता, भिक्षुओ! यह कह कर, मुझको प्रणाम प्रदक्षिणा करते हुए वहीं अन्तर्धान हो गया।

हिरिओत्तप्पसम्पन्नो, सप्पतिस्सो सगारवो।
अभब्बो परिहानाय, निब्बानस्सेव सन्तिके" ति॥ ●

**४. महामोग्गल्लानसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। अथ खो आयस्मतो महामोग्गल्लानस्स रहोगतस्स [B.292] पटिसल्लीनस्स एवं चेतसो परिवितक्को उदपादि—"कतमेसानं देवानं एवं ञाणं [N.48] होति—'सोतापन्ना नाम अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा''' ति? [R.332]

२. तेन खो पन समयेन तिस्सो नाम भिक्खु अधुनाकालङ्कतो अञ्ञतरं ब्रह्मलोकं उपपन्नो होति। तत्र पि नं एवं जानन्ति—"तिस्सो ब्रह्मा महिद्धिको महानुभावो" ति।

३. अथ खो आयस्मा महामोग्गल्लानो—सेय्यथापि नाम बलवा पुरिसो सम्मिञ्जितं वा बाहं पसारेय्य पसारितं वा बाहं सम्मिञ्जेय्य, एवमेव—जेतवने अन्तरहितो तस्मिं ब्रह्मलोके पातुरहोसि। अद्दसा खो तिस्सो ब्रह्मा आयस्मन्तं महोमोग्गल्लानं दूरतो व आगच्छन्तं। दिस्वान आयस्मन्तं महामोग्गल्लानं एतदवोच—"एहि खो, मारिस मोग्गल्लान; स्वागतं, मारिस मोग्गल्लान; चिरस्सं खो, मारिस मोग्गल्लान, इमं परियायमकासि, यदिदं इधागमनाय। निसीद, मारिस मोग्गल्लान, इदमासनं पञ्ञत्तं" ति। निसीदि खो आयस्मा महामोग्गल्लानो पञ्ञत्ते आसने। तिस्सो पि खो ब्रह्मा आयस्मन्तं महामोग्गल्लानं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो तिस्सं ब्रह्मानं आयस्मा महामोग्गल्लानो एतदवोच—

---

"शास्ता, धर्म एवं सङ्घ का पूर्णतः सम्मान करने वाला ...पूर्ववत्... निर्वाण के समीप ही पहुँच गया— ऐसा समझो॥" ●

**४. महामौद्गल्यायनसूत्र** : :

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती स्थित अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवन विहार में साधनाहेतु विराजमान थे। तब एकान्तसाधनारत आयुष्मान् महामौद्गल्यायन के मन में यह विचार आया—"किन देवताओं को यह ज्ञान होता है—स्रोतआपन्न साधक धर्म से च्युत न होते हुए निश्चय ही सम्बोधि (ज्ञान) को आधार बना लेते हैं?"

२. उस समय तिष्य नामक भिक्षु कुछ ही समय पूर्व इस देह से च्युत होकर किसी ब्रह्मलोक में उत्पन्न हुआ। वहाँ (उस लोक में) भी वह महान् ऋद्धि एवं प्रताप से सम्पन्न तिष्य ब्रह्मा ही कहलाता था।

३. तब वे आयुष्मान् महामौद्गल्यायन, जैसे कोई बलवान् पुरुष सिकुडी हुई बाहु को सरलता से पसार लेता है या पसरी हुई बाहु को सिकोड़ (सङ्कुचित कर) लेता है वैसे ही जेतवन से अन्तर्हित होकर उस ब्रह्मलोक में प्रादुर्भूत हुए। वहाँ उस ब्रह्मा ने आयुष्मान् महामौद्गल्यायन को दूर से आते हुए देख लिया। आयुष्मान् को देखकर वह ब्रह्मा उन से यों बोला—"आइये, मार्ष मौद्गल्यायन! आप का स्वागत है, मार्ष मौद्गल्यायन! आपने इधर आने का, बहुत समय बाद, अवसर निकाला। विराजिये मार्ष मौद्गल्यायन! आसन बिछा हुआ है।" आयुष्मान् महामौद्गल्यायन प्रज्ञप्त आसन पर

४. "कतमेसानं खो, तिस्स, देवानं एवं ञाणं होति—'सोतापन्ना नाम अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा''' ति?

"चातुमहाराजिकानं खो, मारिस मोग्गल्लान, देवानं एवं ञाणं होति—'सोतापन्ना नाम अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा''' ति।

५. "सब्बेसञ्ञेव नु खो, तिस्स, चातुमहाराजिकानं देवानं एवं ञाणं होति—'सोतापन्ना नाम अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा''' ति?

"न खो, मारिस मोग्गल्लान, सब्बेसं चातुमहाराजिकानं देवानं एवं ञाणं होति—'सोतापन्ना नाम अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा' ति। ये खो ते, मारिस मोग्गल्लान, चातुमहाराजिका देवा बुद्धे अवेच्चप्पसादेन असमन्नागता धम्मे अवेच्चप्पसादेन [B.293] असमन्नागता सङ्घे अवेच्चप्पसादेन असमन्नागता अरियकन्तेहि सीलेहि [N.49,R.333] असमन्नागता न तेसं देवानं एवं ञाणं होति—'सोतापन्ना नाम अविनिपात-धम्मा नियता सम्बोधिपरायणा' ति। ये च खो ते, मारिस मोग्गल्लान, चातुमहाराजिका देवा बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागता धम्मे अवेच्चप्पसादेन सङ्घे समन्नागता अवेच्चप्पसादेन समन्नागता अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागता तेसं एवं ञाणं होति—'सोतापन्ना नाम अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा''' ति।

६. "चातुमहाराजिकानञ्ञेव नु खो, तिस्स, देवानं एवं ञाणं होति—'सोतापन्ना नाम अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा' ति उदाहु तावतिंसानं पि देवानं ...पे०...

---

विराजे। तिष्य ब्रह्मा भी आयुष्मान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे उस तिष्य ब्रह्मा से आयुष्मान् महामौद्गल्यायन ने यह पूछा—

४. "तिष्य! किन देवताओं को ऐसा ज्ञान होता है—'स्रोतआपन्न साधक धर्म से च्युत हुए विना निश्चय ही सम्बोधिपरायण होते है?'''

"मार्ष मौद्गल्यायन! चातुर्महाराजिक देवताओं को ऐसा ज्ञान होता है—'स्रोतआपन्न ...पूर्ववत्... परायण होते हैं।'''

५. "तिष्य! क्या सभी चातुर्महाराजिक देवताओं को ऐसा ज्ञान हो जाता है—'स्रोतआपन्न ...पूर्ववत्... परायण होते हैं?'''

"नहीं, मार्ष मौद्गल्यायन! ऐसा उपर्युक्त ज्ञान सभी चातुर्महाराजिक देवताओं को नहीं होता; अपि तु मार्ष मौद्गल्यायन! जो बुद्ध, धर्म एवं सङ्घ के प्रति स्थायी एवं अचल श्रद्धा से युक्त नहीं हैं, उत्तम आर्यजनोचित शील (सदाचार) से सम्पन्न नहीं है उन देवताओं को यह ज्ञान नहीं होता; पर चातुर्महाराजिक देवताओं में भी जो बुद्ध, धर्म एवं सङ्घ के प्रति स्थायी एवं अचल श्रद्धा प्रकट करते हैं तथा जो उत्तम आर्यजनोचित शील से सम्पन्न होते हैं, उनको ही यह ज्ञान होता है—'स्रोतआपन्न साधक धर्म से च्युत न होते हुए निश्चय ही सम्बोधिपरायण होते हैं।'''

६. "तिष्य! क्या चातुर्महाराजिक देवताओं को यह उपर्युक्त ज्ञान हो पाता है? या त्रायस्त्रिंश देवताओं को... या याम देवताओं को... तुषित देवताओं को... निर्माणरति देवताओं को...

यामानं पि देवानं... तुसितानं पि देवानं... निम्मानरतीनं पि देवानं... परनिम्मितवसवत्तीनं पि देवानं एवं ञाणं होति—'सोतापन्ना नाम अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा''' ति?

"परनिम्मितवसवत्तीनं पि खो, मारिस मोग्गल्लान, देवानं, एवं ञाणं होति—'सोतापन्ना नाम अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा''' ति?

"न खो, मारिस मोग्गल्लान, सब्बेसं परनिम्मितवसवत्तीनं देवानं एवं ञाणं होति—'सोतापन्ना नाम अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा' ति। ये खो ते, मारिस मोग्गल्लान, परनिम्मितवसवत्ती देवा बुद्धे अवेच्चप्पसादेन असमन्नागता धम्मे अवेच्चप्पसादेन असमन्नागता सङ्घे अवेच्चप्पसादेन असमन्नागता अरियकन्तेहि सीलेहि असमन्नागता न तेसं देवानं एवं ञाणं होति—'सोतापन्ना नाम अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा' ति। ये च खो ते, मारिस मोग्गल्लान, परनिम्मितवसवत्ती देवा बुद्धे अवेच्चप्पसादेन समन्नागता धम्मे अवेच्चप्पसादेन समन्नागता सङ्घे अवेच्चप्पसादेन समन्नागता अरियकन्तेहि सीलेहि समन्नागता तेसं एवं ञाणं होति—'सोतापन्ना नाम अविनिपातधम्मा नियता सम्बोधिपरायणा''' ति।

८. अथ खो आयस्मा महोमोग्गल्लानो तिस्सस्स ब्रह्मुनो भासितं अभि-[N.50] नन्दित्वा अनुमोदित्वा—सेय्यथापि नाम बलवा पुरिसो सम्मिञ्जितं वा बाहं पसारेय्य, [R.334] पसारितं वा बाहं सम्मिञ्जेय्य, एवमेव—ब्रह्मलोके अन्तरहितो जेतवने पातुरहोसी ति॥ ●

**५. विज्जाभागियसुत्तं** : १. "छयिमे, भिक्खवे, धम्मा विज्जाभागिया। [B.294]

---

परनिर्मितवशवर्ती देवताओं को भी यह ज्ञान होता है—'स्रोतआपन्न साधक धर्म से च्युत न होकर सम्बोधिपरायण हो जाते हैं?' "

"मार्ष मौद्गल्यायन! परनिर्मितवशवर्ती देवताओं को भी ऐसा (उपर्युक्त) ज्ञान होता है।"

७. "क्या, तिष्य! सभी परनिर्मितवशवर्ती देवताओं को ऐसा (उपर्युक्त) ज्ञान होता है?"

"नहीं, मार्ष मौद्गल्यायन! सभी परनिर्मितवशवर्ती देवताओं को यह (उपर्युक्त) ज्ञान नहीं होता। मार्ष मौद्गल्यायन! उनमें जो बुद्ध, धर्म एवं सङ्घ के प्रति स्थायी एवं अविचल श्रद्धा नहीं रखते, या जो उत्तम, आर्यजनोचित शील से सम्पन्न नहीं होते उनको यह ज्ञान नहीं होता; अपितु जो परनिर्मितवशवर्ती देवता बुद्ध, धर्म एवं सङ्घ के प्रति स्थायी एवं अविचल श्रद्धा से युक्त तथा उत्तम आर्यजनोचित शील से सम्पन्न होते हैं उनको ही यह ज्ञान होता है—'स्रोतआपन्न साधक धर्म से च्युत न होते हुए निश्चय ही सम्बोधिपरायण होते हैं।' "

८. तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायन तिष्य ब्रह्मा के इस उपर्युक्त कथन का अभिनन्दन एवं अनुमोदन कर, जैसे कोई बलवान् पुरुष सङ्कुचित बाहु को प्रसारित कर दे, या प्रसारित बाहु को सङ्कुचित कर दे, उसी प्रकार उस ब्रह्मलोक से अन्तर्हित होकर जेतवन में पुनः प्रकट हुए॥ ●

**५. विद्याभागीयसूत्र : : छह विद्यभागीय सूत्र**

१. "भिक्षुओ! ये छह धर्म विद्या से सम्बद्ध हैं। कौन से छह? (१) अनित्यसंज्ञा, (२)

कतमे छ? अनिच्चसञ्ञा, अनिच्चे दुक्खसञ्ञा, दुक्खे अनत्तसञ्ञा, पहानसञ्ञा, विरागसञ्ञा, निरोधसञ्ञा—इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मा विज्जाभागिया'' ति॥ ●

६. **विवादमूलसुत्तं :** १. ''छयिमानि, भिक्खवे, विवादमूलानि। कतमानि छ? इध, भिक्खवे, भिक्खु कोधनो होति उपनाही। यो सो, भिक्खवे, भिक्खु कोधनो होति उपनाही सो सत्थरि पि अगारवो विहरति अप्पतिस्सो, धम्मे पि अगारवो विहरति अप्पतिस्सो, सङ्घे पि अगारवो विहरति अप्पतिस्सो, सिक्खाय पि न परिपूरकारी होति। यो सो, भिक्खवे, भिक्खु सत्थरि अगारवो विहरति अप्पतिस्सो, धम्मे अगारवो विहरति अप्पतिस्सो, सङ्घे अगारवो विहरति अप्पतिस्सो, सिक्खाय पि न परिपूरकारी। सो सङ्घे विवादं जनेति, यो होति विवादो बहुजनाहिताय बहुजनासुखाय बहुनो जनस्स अनत्थाय अहिताय दुक्खाय देवमनुस्सानं। एवरूपं चे तुम्हे, भिक्खवे, विवादमूलं अज्झत्तं वा बहिद्धा वा समनुपस्सेय्याथ, तत्र तुम्हे, भिक्खवे, तस्सेव पापकस्स विवादमूलस्स पहानाय वायमेय्याथ। एवरूपं चे तुम्हे, भिक्खवे, विवादमूलं अज्झत्तं वा बहिद्धा वा न [R.335] समनुपस्सेय्याथ, तत्र तुम्हे, भिक्खवे, तस्सेव पापकस्स विवादमूलस्स आयतिं अनवस्सवाय पटिपज्जेय्याथ। एवमेतस्स पापकस्स विवादमूलस्स पहानं होति। एवमेतस्स पापकस्स विवादमूलस्स आयतिं अनवस्सवो होति।

२. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु मक्खी होति पळासी ...पे०... इस्सुकी होति मच्छरी... सठो होति मायावी... पापिच्छो होति मिच्छादिट्ठि... सन्दिट्ठिपरामासी होति

---

अनित्य में दुःखसंज्ञा, (३) दुःख में अनात्मसंज्ञा, (४) प्रहाणसंज्ञा, (५) विरागसंज्ञा एवं (६) निरोधसंज्ञा। भिक्षुओ! ये छह धर्म विद्या के कारण हैं॥'' ●

**६. विवादमूलसूत्र : : विवादमूलक छह धर्म**

१. ''भिक्षुओ! ये छह धर्म विवादमूल (विवादकारक) होते हैं। कौन से छह? (१) यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु क्रोधी एवं वैरभाव रखने वाला होता है। ऐसा भिक्षु क्रोधी एवं वैरभाव वाला होने के कारण शास्ता का भी सम्मान नहीं करता, अपितु उनका विद्रोही (अप्पतिस्स) बन जाता है। धर्म का भी .... सङ्घ का भी सम्मान नहीं करता, अपितु उसका विद्रोही बन जाता है। बुद्धशासन (सिक्खा) का पालन नहीं करता, अपितु सङ्घ में विवाद करता रहता है। ऐसा विवाद बहुत जनों के लिये अहितकर एवं असुखकर हो जाता है। साथ ही वह विवाद देवता और मनुष्यों को अहित एवं अनर्थ तथा दुःख का दायक हो जाता है। अतः, भिक्षुओ! यदि तुम ऐसा विवाद बाहर या अन्दर देखो तो, तुमको उसके शमन के लिये तत्काल कोई प्रयास करना चाहिये। यदि, भिक्षुओ! ऐसा विवाद तुम बाहर या अन्दर न देखो तो, भिक्षुओ, वैसा विवाद कभी भविष्य में सामने न आ पड़े—एतदर्थ तुम्हें सावधान रहना चाहिये। इस प्रकार इस विवादमूल का तत्काल प्रहाण हो सकता है तथा भविष्य में उसके होने की सम्भावना भी समाप्त हो जाती है। (१)

२. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु म्रक्षी (दूसरे के गुणों को कम महत्त्व देने वाला) एवं प्रदासी (ईर्ष्यालु) होता है...पूर्ववत्... ईर्ष्यालु एवं मत्सरी (स्वार्थी एवं अभिमानी) होता है...शठ (धूर्त)

आधानग्गाही दुप्पटिनिस्सग्गी। यो सो, भिक्खवे, भिक्खु सन्दिट्ठिपरामासी होति [N.51] आधानग्गाही दुप्पटिनिस्सग्गी सो सत्थरि पि अगारवो विहरति अप्पतिस्सो, धम्मे पि अगारवो विहरति अप्पतिस्सो, सङ्घे पि अगारवो विहरति अप्पतिस्सो, सिक्खाय पि न परिपूरकारी होति। यो सो, भिक्खवे, भिक्खु सत्थरि अगारवो विहरति अप्पतिस्सो, धम्मे... सङ्घे अगारवो विहरति अप्पतिस्सो, सिक्खाय न परिपूरकारी· सो सङ्घे विवादं जनेति, यो होति विवादो बहुजनाहिताय बहुजनासुखाय बहुनो जनस्स अनत्थाय अहिताय [B.295] दुक्खाय देवमनुस्सानं। एवरूपं चे तुम्हे, भिक्खवे, विवादमूलं अज्झत्तं वा बहिद्धा वा समनुपस्सेय्याथ, तत्र तुम्हे, भिक्खवे, तस्सेव पापकस्स विवादमूलस्स पहानाय वायमेय्याथ। एवरूपं चे तुम्हे, भिक्खवे, विवादमूलं अज्झत्तं वा बहिद्धा वा न समनुपस्सेय्याथ, तत्र तुम्हे, भिक्खवे, तस्सेव पापकस्स विवादमूलस्स आयतिं अनवस्सवाय पटिपज्जेय्याथ। एवमेतस्स पापकस्स विवादमूलस्स पहानं होति। एवमेतस्स पापकस्स विवादमूलस्स आयतिं अनवस्सवो होति। इमानि खो, भिक्खवे, छ विवादमूलानी'' ति॥ ●

**७. दानसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तेन खो पन समये वेळुकण्डकी नन्दमाता उपासिका [R.336] सारिपुत्तमोग्गल्लानप्पमुखे भिक्खुसङ्घे छळङ्गसमन्नागतं दक्खिणं पतिट्ठापेति। अद्दसा खो भगवा दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन वेळुकण्डकिं नन्दमातरं उपासिकं सारिपुत्तमोग्गल्लानप्पमुखे भिक्खुसङ्घे छळङ्गसमन्नागतं दक्खिणं पतिट्ठापेन्तिं। दिस्वा भिक्खू आमन्तेसि—''एसा, भिक्खवे, वेळुकण्डकी नन्दमाता उपासिका सारिपुत्तमोग्गल्लानप्पमुखे भिक्खुसङ्घे छळङ्गसमन्नागतं दक्खिणं पतिट्ठापेति।

२. ''कथं च, भिक्खवे, छळङ्गसमन्नागता दक्खिणा होति? इध, भिक्खवे,

---

एवं मायावी (चालबाज) होता है... पापेच्छु (प्रतिक्षण पाप की बातें मन में रखने वाला) एवं मिथ्यादृष्टि (मिथ्यामतानुयायी)... सन्दृष्टिपरामर्शक (नास्तिक) एवं आधानग्राही (दुराग्रही) तथा दुष्प्रतिनिसर्गी (महान् कंजूस) होता है। भिक्षुओ! जो ऐसा सन्दृष्टिपरामर्शक, आधानग्राही एवं दुष्प्रतिनिसर्गी होता है वह बुद्ध का भी .... धर्म का भी... सङ्घ का भी सम्मान नहीं करता ...पूर्ववत्... तथा भविष्य में उस (विवाद) के होने की सम्भावना भी समाप्त हो जाती है॥'' ●

**७. दानसूत्र** : : **छह अङ्गों से युक्त दान**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती स्थित अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवनाराम में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय वेणुकण्टकी नन्दमाता उपासिका सारिपुत्र एवं मौद्गल्यायन सहित भिक्षुसङ्घ को छह अङ्गों से युक्त दान कर रही थी। उस समय भगवान् ने अपने मानवदुर्लभ, विशुद्ध दिव्यचक्षुओं से वेणुकण्टकी नन्दमाता द्वारा दिया जा रहा यह दानकर्म देखा। देखकर भगवान् ने इस दानकर्म के विषय में वहाँ उपस्थित भिक्षुओं को बताया कि कैसे वह वेणुकण्टकी नन्दमाता भिक्षुओं को षडङ्गयुक्त दान कर रही है। (तदनन्तर उनने भिक्षुओं से पूछा)

२. ''कैसे, भिक्षुओ! कोई दान छह अङ्गों से युक्त होता है? (इसका उत्तर उनने स्वयं

दायकस्स तीणङ्गानि होन्ति, पटिग्गाहकानं तीणङ्गानि। कतमानि दायकस्स तीणङ्गानि? [N.52] इध, भिक्खवे, दायको पुब्बेव दाना सुमनो होति, ददं चित्तं पसादेति, दत्वा अत्तमनो होति। इमानि दायकस्स तीणङ्गानि।

३. "कतमानि पटिग्गाहकानं तीणङ्गानि? इध, भिक्खवे, पटिग्गाहका वीतरागा वा होन्ति रागविनयाय वा पटिपन्ना, वीतदोसा वा होन्ति दोसविनयाय वा पटिपन्ना, वीतमोहा वा होन्ति मोहविनयाय वा पटिपन्ना। इमानि पटिग्गाहकानं तीणङ्गानि। इति दायकस्स तीणङ्गानि, पटिग्गाहकानं तीणङ्गानि। एवं खो, भिक्खवे, छळङ्गसमन्नागता दक्खिणा होति।

[B.296] ४. "एवं छळङ्गसमन्नागताय, भिक्खवे, दक्खिणाय न सुकरं पुञ्ञस्स पमाणं गहेतुं—'एत्तको पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो सोवग्गिको सुखविपाको सग्गसंवत्तनिको इट्ठाय कन्ताय मनापाय हिताय सुखाय संवत्तती' ति। अथ खो असङ्ख्येय्यो अप्पमेय्यो महापुञ्ञक्खन्धो त्वेव सङ्ख्यं गच्छति।

[R.337] ५. "सेय्यथापि, भिक्खवे, महासमुद्दे न सुकरं उदकस्स पमाणं गहेतुं—'एत्तकानि उदकाळ्हकानी ति वा एत्तकानि उदकाळ्हकसतानी ति वा एत्तकानि उदकाळ्हकसहस्सानी ति वा एत्तकानि उदकाळ्हकसतसहस्सानी' ति वा। अथ खो असङ्ख्येय्यो अप्पमेय्यो महा-उदकक्खन्धो त्वेव सङ्ख्यं गच्छति। एवमेव खो, भिक्खवे, एवं छळङ्गसमन्नागताय दक्खिणाय

---

दिया—). "यहाँ, भिक्षुओ! इन छह अङ्गों में दाता के तीन अङ्ग होते हैं तथा प्रतिग्राहक (दान लेनेवाले) के तीन अङ्ग होते हैं। दाता के तीन अङ्ग कौन से होते हैं? यहाँ, भिक्षुओ! (१) दाता को दान देने से पूर्व ही सौमनस्य सम्पन्न होता है, (२) दान करता हुआ अपने मन में प्रतिग्राहक के प्रति श्रद्धा रखता है, (३) तथा दान देने के बाद उस दानक्रिया से प्रसन्न एवं सन्तुष्ट होता है। ये दाता के तीन अङ्ग होते हैं।

३. "पुनः, भिक्षुओ! प्रतिग्राहक (दान लेने वाले) के तीन अङ्ग कौन से होते हैं? यहाँ, भिक्षुओ! दान लेने वाले वीतराग (आसक्तिरहित) होते हैं, या आसक्ति को दबाये रखने के अभ्यासी होते हैं; द्वेषरहित होते हैं, या द्वेष को दबाये रखने के अभ्यासी होते हैं; मोहरहित होते हैं, या मोह को दबाये रखने के अभ्यासी होते हैं—भिक्षुओ! दान लेनेवालों के ये तीन अङ्ग होते हैं। भिक्षुओ! मैंने दाता तथा प्रतिग्राहक के तीन तीन अङ्ग—यों दान के छह अङ्ग बता दिये।

४. "इस प्रकार, भिक्षुओ! छह अङ्गों से युक्त दान के पुण्य का सङ्ख्या से वर्णन करना सम्भव नहीं है कि यह दान इतना पुण्य, इतना कुशल (शुभ) इतना सुख, इतने काल तक स्वर्गसुख का मिलना, इतने काल तक इससे इतने सुख की प्राप्ति, या यह (दान) इतना इष्ट, इतना प्रिय, इतना मनःप्रसादक, या इतना हितकर या सुखवर्धक है। ऐसे दान के लिये यही समझो कि यह पुण्य की एक असङ्ख्य, अप्रमेय एवं विशाल राशि है।

५. "भिक्षुओ! जैसे महासमुद्र के जल का परिमाण किसी तरह मापकर नहीं बताया जा सकता कि इसमें इतने आढक, इतने सौ आढक, इतने हज़ार आढक या इतने लाख आढक जल है। अपितु उसमें वह जलराशि सङ्ख्यारहित अतएव अप्रमेय ही मानी जाती है; इसी प्रकार, भिक्षुओ!

न सुकरं पुञ्ञस्स पमाणं गहेतुं—'एत्तको पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो सोवग्गिको सुखविपाको सग्गसंवत्तनिको इट्ठाय कन्ताय मनापाय हिताय सुखाय संवत्तती' ति। अथ खो असङ्ख्येय्यो अप्पमेय्यो महापुञ्ञक्खन्धो त्वेव सङ्ख्यं गच्छती ति।

"पुब्बेव दाना सुमनो, ददं चित्तं पसादये।
दत्वा अत्तमनो होति, एसा यञ्ञस्स सम्पदा॥
"वीतरागा वीतदोसा, वीतमोहा अनासवा।
खेत्तं यञ्ञस्स सम्पन्नं, सञ्ञता ब्रह्मचारयो॥
"सयं आचमयित्वान, दत्वा सकेहि पाणिभि।
अत्तनो परतो चेसो, यञ्ञो होति महप्फलो॥
"एवं यजित्वा मेधावी, सद्धो मुत्ते चेतसा। [N.53]
अब्यापज्जं सुखं लोकं, पण्डितो उपपज्जती" ति॥

**८. अत्तकारीसुत्तं** : १. अथ खो अञ्ञतरो ब्राह्मणो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—"अहं हि, भो गोतम, एवंवादी एवंदिट्ठि—'नत्थि अत्तकारो नत्थि परकारो'" ति। [B.297]

"माहं, ब्राह्मण, एवंवादिं एवंदिट्ठिं अद्दसं वा अस्सोसिं वा। कथं हि नाम सयं

---

इन छह अङ्गों से युक्त दानक्रिया के पुण्य का परिमाण भी नहीं बताया जा सकता कि इसमें इतना पुण्य, इतना कुशल ...पूर्ववत्... यह पुण्य की असङ्ख्य, अप्रमेय एवं विशाल राशि है।

"दान देने से पूर्व दाता को अपने मन में प्रसन्नता लानी चाहिये, दान देते समय मन में श्रद्धा रखनी चाहिये तथा दान देने के बाद प्रसन्न एवं सन्तुष्ट होना चाहिये—यह इस दानयज्ञ की सम्पत्ति है॥

"राग, द्वेष एवं मोह से रहित, इन्द्रियसंयमी एवं स्वयं धर्मसाधक प्रतिग्रहीता ही इस दानयज्ञ की उपजाऊ भूमि हैं॥

"स्वयं (दान सङ्कल्प हेतु) आचमन कर, स्वयं अपने हाथों से दान देकर (दाता का) यह दानयज्ञ अपने एवं पराये—सभी के लिये महान् फलदायी होता है॥

"इस प्रकार बुद्धिमान् पुरुष श्रद्धासहित एवं दोषमुक्त चित्त से यह यज्ञ कर इसके पुण्यफल से दुःखरहित सुखमय लोक में उत्पन्न होता है॥"

**८. आत्मकारिसूत्र** : :

१. तब कोई ब्राह्मण, जहाँ भगवान् विराजमान थे, वहाँ पहुँचा। पहुँच कर उनसे कुशल-मङ्गल पूछ कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए उसने भगवान् से यह कहा—"भो गौतम! मैं इस सिद्धान्त का मानने वाला हूँ, मेरा यह अभिमत है—'न कोई आत्मक्रिया (स्वकृत कर्म) है और न कोई परक्रिया' (परकृत कर्म)।

"ब्राह्मण! आज तक मैंने ऐसा कहने वाला या ऐसी दृष्टि (अभिमत) वाला कोई पुरुष न

[R.338] अभिक्कमन्तो सयं पटिक्कमन्तो एवं वक्खति—'नत्थि अत्तकारो नत्थि परकारो' ति!

२. "तं किं मञ्ञसि, ब्राह्मण, अत्थि आरब्भधातू" ति? "एवं, भो"।

"आरब्भधातुया सति आरब्भवन्तो सत्ता पञ्ञायन्ती" ति? "एवं भो"।

"यं खो, ब्राह्मण, आरब्भधातुया सति आरब्भवन्तो सत्ता पञ्ञायन्ति, अयं सत्तानं अत्तकारो अयं परकारो।

३. "तं किं मञ्ञसि, ब्राह्मण, अत्थि निक्कमधातु ...पे०... अत्थि परक्कमधातु ... अत्थि थामधातु ... अत्थि ठितिधातु ... अत्थि उपक्कमधातू" ति?

"एवं भो"।

"उपक्कमधातुया सति उपक्कमवन्तो सत्ता पञ्ञायन्ती" ति? "एवं भो"।

"यं खो, ब्राह्मण, उपक्कमधातुया सति उपक्कमवन्तो सत्ता पञ्ञायन्ति, अयं सत्तानं अत्तकारो अयं परकारो।

[N.54] ४. "माहं, ब्राह्मण, एवंवादिं एवंदिट्ठिं अद्दसं वा अस्सोसिं वा। कथं हि नाम सयं अभिक्कमन्तो सयं पटिक्कमन्तो एवं वक्खति—'नत्थि अत्तकारो नत्थि परकारो''' ति।

५. "अभिक्कन्तं, भो गोतम ...पे०... अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं" ति!॥ ●

---

देखा न सुना। कैसे तुम आगे बढ़ना, पीछे हटना—आदि क्रियाएँ करते हुए भी ऐसा कहने का साहस कर रहे हो कि न कोई आत्मक्रिया है, न परक्रिया।

२. "तो क्या मानते हो, ब्राह्मण! कोई आरम्भधातु (आरम्भक्रिया) है?" "हाँ, भन्ते! है।"

"तब तो आरम्भक्रिया के होने पर उसके करने वाले प्राणी भी दिखायी देंगे?"

"हाँ, भन्ते!"

"अत:, ब्राह्मण! आरम्भक्रिया के होने पर, ये जो उसके करने वाले प्राणी दिखायी देते हैं, ये ही आत्मकारी एवं परकारी हैं।

३. "तो क्या मानते हो, ब्राह्मण! कोई निष्क्रमधातु हैं? ...पूर्ववत्... पराक्रमधातु हैं?... कोई स्थामधातु है?... कोई स्थितिधातु है?... कोई उपक्रमधातु है? "हाँ, भन्ते! है।"

"उपक्रमधातु (क्रिया) के होने पर उस क्रिया के करने वाले प्राणी भी दिखायी देंगे?"

"हाँ, भन्ते!"

"तो, ब्राह्मण! यह जो उपक्रमक्रिया के होने पर उस क्रिया के करनेवाले प्राणी पहचान में आते हैं वही आत्मक्रिया एवं परक्रिया है।

४. "ब्राह्मण! आज तक मैंने ऐसा कहने वाला या ऐसी दृष्टि वाला कोई पुरुष न देखा, न सुना। कैसे तुम आगे बढ़ना, पीछे हटना—आदि क्रियाएँ करते हुए भी ऐसा कहने का साहस कर रहे हो कि न कोई आत्मक्रिया है, न परक्रिया!"

५. "भन्ते! आपने बहुत उत्तम कहा ...पूर्ववत्... आज से प्राण रहने तक मुझको आप शरणागत उपासक समझें॥" ●

**९. निदानसुत्तं** : १. ''तीणिमानि, भिक्खवे, निदानानि कम्मानं समुदयाय। कतमानि तीणि? लोभो निदानं कम्मानं समुदयाय, दोसो निदानं कम्मानं समुदयाय, मोहो निदानं कम्मानं समुदयाय। न, भिक्खवे, लोभा अलोभो समुदेति; अथ खो, भिक्खवे, लोभा लोभो व समुदेति। न, भिक्खवे, दोसा अदोसो समुदेति; अथ खो, भिक्खवे, दोसा दोसो व समुदेति। न, भिक्खवे, मोहा अमोहो समुदेति; अथ खो, भिक्खवे, मोहा मोहो व [R.339] समुदेति। न, भिक्खवे, लोभजेन कम्मेन दोसजेन कम्मेन मोहजेन कम्मेन देवा पञ्ञायन्ति, मनुस्सा पञ्ञायन्ति, या वा पनञ्ञा पि काचि सुगतियो। अथ खो, भिक्खवे, लोभजेन कम्मेन दोसजेन कम्मेन मोहजेन कम्मेन निरयो पञ्ञायति तिरच्छानयोनि [B.298] पञ्ञायति पेत्तिविसयो पञ्ञायति, या वा पनञ्ञा पि काचि दुग्गतियो। इमानि खो, भिक्खवे, तीणि निदानानि कम्मानं समुदयाय।

२. ''तीणिमानि, भिक्खवे, निदानानि कम्मानं समुदयाय। कतमानि तीणि? अलोभो निदानं कम्मानं समुदयाय, अदोसो निदानं कम्मानं समुदयाय, अमोहो निदानं कम्मानं समुदयाय। न, भिक्खवे, अलोभा लोभो समुदेति; अथ खो, भिक्खवे, अलोभा अलोभो व समुदेति। न, भिक्खवे, अदोसा दोसो समुदेति; अथ खो, भिक्खवे, अदोसा अदोसो व समुदेति। न, भिक्खवे, अमोहा मोहो समुदेति; अथ खो, भिक्खवे, अमोहा अमोहो व समुदेति। न, भिक्खवे, अलोभजेन कम्मेन अदोसजेन कम्मेन अमोहजेन कम्मेन निरयो पञ्ञायति तिरच्छानयोनि पञ्ञायति पेत्तिविसयो पञ्ञायति, या वा पनञ्ञा पि काचि दुग्गतियो। अथ खो, भिक्खवे, अलोभजेन कम्मेन अदोसजेन कम्मेन अमोहजेन कम्मेन

---

**९. निदानसूत्र : : कर्मोत्पत्ति के छह कारण**

१. ''भिक्षुओ! कर्मों की उत्पत्ति में तीन कारण होते हैं। कौन से तीन? (१) लोभ, (२) द्वेष एवं (३) मोह—ये तीन धर्म कर्मों की उत्पत्ति में कारण हैं। भिक्षुओ! लोभ से अलोभ नहीं उत्पन्न होता, अपितु लोभ ही उत्पन्न होता है। भिक्षुओ! द्वेष से अद्वेष उत्पन्न नहीं होता, अपितु द्वेष ही उत्पन्न होता है। तथा, भिक्षुओ! मोह से अमोह उत्पन्न नहीं होता, अपितु मोह ही उत्पन्न होता है। इसी प्रकार, भिक्षुओ! लोभजन्य, द्वेषजन्य एवं मोहजन्य कर्मों से देवता नहीं बनते, मनुष्य नहीं बनते, और न कोई अन्य सुगतिमय प्राणी ही बनते हैं। अपितु, भिक्षुओ! लोभजन्य, द्वेषजन्य एवं मोहजन्य कर्मों से निरय (नरक), तिरश्चीनयोनि, प्रेतयोनि या ऐसी ही अन्य कोई दुर्गतिमय योनि ही प्राप्त होती है। भिक्षुओ! कर्मों की उत्पत्ति में ये तीन कारण होते हैं। (१)

२. ''भिक्षुओ! कर्मों की उत्पत्ति में ये तीन कारण भी होते हैं। कौन से तीन? (१) अलोभ, (२) अद्वेष, एवं (३) अमोह—ये तीन धर्म कर्मों की उत्पत्ति में कारण होते हैं। भिक्षुओ! अलोभ से लोभ उत्पन्न नहीं होता, अपितु अलोभ से अलोभ ही उत्पन्न होता है। भिक्षुओ! अद्वेष से द्वेष उत्पन्न नहीं होता, अपितु अद्वेष ही होता है। इसी प्रकार, भिक्षुओ! अमोह से मोह उत्पन्न नहीं होता, अपितु अमोह ही उत्पन्न होता है। भिक्षुओ! अलोभजन्य, अद्वेषजन्य एवं अमोहजन्य कर्म से निरय (नरक), तिरश्चीनयोनि, प्रेतयोनि या ऐसी ही अन्य कोई दुर्गतिमय योनि नहीं प्राप्त होती। अपितु,

[N.55] देवा पञ्ञायन्ति, मनुस्सा पञ्ञायन्ति, या वा पनञ्ञा पि काचि सुगतियो। इमानि खो, भिक्खवे, तीणि निदानानि कम्मानं समुदयाया'' ति॥

**१०. किमिलसुत्तं :** १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा किमिलायं विहरति वेळुवने। अथ खो आयस्मा किमिलो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा किमिलो भगवन्तं [R.340] एतदवोच—''को नु खो, भन्ते, हेतु को पच्चयो येन तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो न चिरट्ठितिको होती'' ति?

''इध, किमिल, तथागते परिनिब्बुते भिक्खू भिक्खुनियो उपासका उपासिकायो सत्थरि अगारवा विहरन्ति अप्पतिस्सा, धम्मे अगारवा विहरन्ति अप्पतिस्सा, सङ्घे अगारवा विहरन्ति अप्पतिस्सा, सिक्खाय अगारवा विहरन्ति अप्पतिस्सा, अप्पमादे अगारवा विहरन्ति अप्पतिस्सा, पटिसन्थारे अगारवा विहरन्ति अप्पतिस्सा। अयं खो, किमिल, हेतु अयं पच्चयो येन तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो न चिरट्ठितिको होति''।

[B.299] २. ''को पन, भन्ते, हेतु को पच्चयो येन तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो चिरट्ठितिको होती'' ति?

''इध, किमिल, तथागते परिनिब्बुते भिक्खू भिक्खुनियो उपासका उपासिकायो सत्थरि सगारवा विहरन्ति सप्पतिस्सा, धम्मे सगारवा विहरन्ति सप्पतिस्सा, सङ्घे सगारवा विहरन्ति सप्पतिस्सा, सिक्खाय सगारवा विहरन्ति सप्पतिस्सा, अप्पमादे सगारवा विहरन्ति

---

भिक्षुओ! अलोभजन्य, अद्वेषजन्य एवं अमोहजन्य कर्म से प्राणी देवता, मनुष्य बनते हैं, या उनको कोई अन्य सुगति प्राप्त होती है। भिक्षुओ! कर्मों की उत्पत्ति में ये तीन कारण हैं॥''

**१०. किमिलसूत्र : : सद्धर्म की चिरस्थिति में छह कारण**

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) किमिला के वेणुवन में साधनाहेतु विराजमान थे। तब आयुष्मान् किमिल भगवान् के सम्मुख गये, तथा उनको प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे आयुष्मान् किमिल ने भगवान् से यह जिज्ञासा प्रकट की—''भन्ते! क्या हेतु एवं क्या प्रत्यय है कि भगवान् के परिनिर्वृत्त होने पर सद्धर्म चिरस्थायी नहीं रह पाता?''

''यहाँ, किमिल! तथागत के परिनिर्वृत होने पर भिक्षु, भिक्षुणियाँ, उपासक, उपासिकाएँ (१) शास्ता के प्रति, (२) धर्म के प्रति, (३) सङ्घ के प्रति (४) तथागतोपदिष्ट शिक्षा के प्रति, (५) अनुशासन में सावधानी के प्रति तथा (६) आये गये अतिथि के प्रति सम्मान (गौरव) नहीं दिखाते, अपितु उनसे विरोध प्रकट करते हैं। किमिल! ये हेतु तथा ये प्रत्यय हैं, कि भगवान् के परिनिर्वृत होने पर सद्धर्म चिरस्थायी नहीं रह पाता।

२. ''पुनः, भन्ते! कौन हेतु या कौन प्रत्यय है कि भगवान् (तथागत) के परिनिर्वृत होने पर सद्धर्म बहुत काल तक ठहरा रहता है?''

''यहाँ किमिल! तथागत के परिनिर्वृत होने पर भी भिक्षु, भिक्षुणियाँ, उपासक, उपासिकाएँ (१) शास्ता के प्रति ...पूर्ववत्... तथा (६) अतिथि के प्रति सम्मान प्रकट करते हैं, विरोध प्रकट

सप्पतिस्सा। अयं खो, किमिल, हेतु अयं पच्चयो येन तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो चिरट्ठितिको होती'' ति॥ ●

**११. दारुक्खन्धसुत्तं :** १. एवं मे सुतं। एकं समयं आयस्मा सारिपुत्तो राजगहे विहरति गिज्झकूटे पब्बते। अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय सम्बहुलेहि भिक्खूहि सद्धिं गिज्झकूटा पब्बता ओरोहन्तो अद्दस [N.56] अञ्ञतरस्मिं पदेसे महन्तं दारुक्खन्धं। दिस्वा भिक्खू आमन्तेसि—''पस्सथ नो, आवुसो, तुम्हे अमुं महन्तं दारुक्खन्धं'' ति? ''एवमावुसो'' ति।

२. ''आकङ्खमानो, आवुसो, भिक्खु इद्धिमा चेतोवसिप्पत्तो अमुं दारुक्खन्धं पथवी त्वेव अधिमुच्चेय्य। तं किस्स हेतु? अत्थि, आवुसो, अमुम्हि दारुक्खन्धे [R.341] पथवीधातु, यं निस्साय भिक्खु इद्धिमा चेतोवसिप्पत्तो अमुं दारुक्खन्धं पथवी त्वेव अधिमुच्चेय्य। आकङ्खमानो, आवुसो, भिक्खु इद्धिमा चेतोवसिप्पत्तो अमुं दारुक्खन्धं आपो त्वेव अधिमुच्चेय्य ...पे०... तेजो त्वेव अधिमुच्चेय्य... वायो त्वेव अधिमुच्चेय्य... सुभं त्वेव अधिमुच्चेय्य... असुभं त्वेव अधिमुच्चेय्य। तं किस्स हेतु? अत्थि, आवुसो, अमुम्हि दारुक्खन्धे असुभधातु, यं निस्साय भिक्खु इद्धिमा चेतोवसिप्पत्तो अमुं दारुक्खन्धं असुभं त्वेव अधिमुच्चेय्या'' ति॥ ●

**१२. नागितसुत्तं :** १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा कोसलेसु चारिकं चरमानो महता भिक्खुसङ्घेन सद्धिं येन इच्छानङ्गलं नाम कोसलानं ब्राह्मणगामो तदवसरि। तत्र सुदं

---

नहीं करते। किमिल! ये हेतु या ये प्रत्यय हैं कि तथागत के परिनिर्वृत होने पर भी सद्धर्म चिरस्थायी रहता है॥'' ●

**११. दारुस्कन्धसूत्र : : अधिमुक्ति के छह कारण**

१. ऐसा मैने सुना है। एक समय आयुष्मान् सारिपुत्र राजगृह के गृध्रकूट पर्वत पर साधना हेतु ठहरे हुए थे। तब आयुष्मान् सारिपुत्र ने प्रात: वस्त्रों को व्यवस्थित कर, पात्र चीवर लेकर बहुत से भिक्षुओं के साथ गृध्रकूट से उतरते हुए किसी स्थान पर काष्ठ का एक विशाल स्कन्ध (लट्ठा) देखा। देखकर उन ने भिक्षुओं से पूछा—''भिक्षुओ! क्या तुम काष्ठ के इस विशाल स्कन्ध को देख रहे हो?'' ''हाँ, आयुष्मन्!''

२. ''आयुष्मानो! यदि कोई ऋद्धिमान् एवं निगृहीतचित्त भिक्षु चाहे तो इस दारुस्कन्ध को पृथ्वी धातु समझ ले। ऐसा किस कारण? ऐसा इस लिये, आयुष्मानो! कि इस दारुस्कन्ध में पृथ्वी धातु विद्यमान है। अत: वह भिक्षु इस दारुस्कन्ध को पृथ्वी धातु समझ सकता है। यदि कोई ऋद्धिमान् भिक्षु चाहे तो इस दारुस्कन्ध को जल धातु... तेजो धातु... वायु धातु... शुभ धातु... अशुभ धातु समझ सकता है। वह किस कारण? क्योंकि इस दारुस्कन्ध में अशुभधातु विद्यमान है, अत: वह ऋद्धिमान् एवं निगृहीतचित्त भिक्षु इस दारुस्कन्ध को अशुभ धातु भी मान सकता है''॥ ●

**१२. नागितसूत्र : :**

१. ऐसा मैने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) कोसल प्रदेश में चारिका करते हुए विशाल

[B.300] भगवा इच्छानङ्गले विहरति इच्छानङ्गलवनसण्डे। अस्सोसुं खो इच्छानङ्गलका ब्राह्मणगहपतिका—"समणो खलु, भो, गोतमो सक्यपुत्तो सक्यकुला पब्बजितो इच्छानङ्गलं अनुप्पत्तो इच्छानङ्गले विहरति इच्छानङ्गलवनसण्डे। तं खो पन भवन्तं गोतमं एवं कल्याणो कित्तिसद्दो अब्भुग्गतो—'इति पि सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो विज्जाचरणसम्पन्नो ...पे०... बुद्धो भगवा' ति। सो इमं लोकं सदेवकं ...पे०... अरहतं दस्सनं होती" ति। अथ खो इच्छानङ्गलका ब्राह्मणगहपतिका तस्सा रत्तिया अच्चयेन पहूतं खादनीयं भोजनीयं आदाय येन इच्छानङ्गलवनसण्डो तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा बहिद्वारकोट्ठके अट्ठंसु उच्चासद्दा महासद्दा।

[N.57] २. तेन खो पन समयेन आयस्मा नागितो भगवतो उपट्ठाको होति। अथ खो भगवा [R.342] आयस्मन्तं नागितं आमन्तेसि—"के पन ते, नागित, उच्चासद्दा महासद्दा केवट्टा मञ्ञे मच्छविलोपे" ति?

"एते, भन्ते, इच्छानङ्गलका ब्राह्मणगहपतिका पहूतं खादनीयं भोजनीयं आदाय बहिद्वारकोट्ठके ठिता भगवन्तंयेव उद्दिस्स भिक्खुसङ्घं चा" ति।

"माहं, नागित, यसेन समागमं, मा च मया यसो। यो खो, नागित, नयिमस्स नेक्खम्मसुखस्स पविवेकसुखस्स उपसमसुखस्स सम्बोधसुखस्स निकामलाभी अस्स अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, यस्साहं नेक्खम्मसुखस्स पविवेकसुखस्स उपसमसुखस्स सम्बोधसुखस्स निकामलाभी अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, सो तं मीळ्हसुखं मिद्धसुखं लाभसक्कारसिलोकसुखं सादियेय्या" ति!

---

भिक्षुसङ्घ के साथ कोसल प्रदेश के इच्छानङ्गल के इच्छानङ्गलवनषण्ड में साधनाहेतु विराजे। तब इच्छानङ्गलग्रामवासी ब्राह्मण गृहपतियों ने सुना—"शाक्य कुल से प्रव्रजित, शाक्यपुत्र श्रमण गौतम इस इच्छानङ्गल ग्राम में आकर ग्राम के बाहर इच्छानङ्गल वनषण्ड में साधनाहेतु विराजमान हैं। उन पूज्य श्रमण गौतम के विषय में ऐसा मङ्गलमय यश:शब्द सुना जा रहा है—'ऐसा भी है कि वे भगवान् अर्हन्, सम्यक्सम्बुद्ध ...पूर्ववत्... बुद्ध भगवान् हैं'। वे देवलोक सहित इस लोक को ...पूर्ववत्... अर्हतों का दर्शन होता है।" तब वे इच्छानङ्गलवासी ब्राह्मणगृहपति, उस रात्रि के बीतने पर, इच्छानङ्गलवनप्रदेश में पहुँचे तथा बाहरी द्वार पर खड़े होकर कोलाहल करने लगे।

२. उस समय आयुष्मान् नागित भगवान् के उपस्थायक (परिचारक) थे। तब भगवान् ने आयुष्मान् नागित से पूछा—"नागित! ये बाहर कौन कोलाहल कर रहे हैं, मानो मछली बाजार में मछुआरे मछली बेच रहे हों?"

"भन्ते! ये इच्छानङ्गलवासी ब्राह्मण गृहपति प्रभूत खाद्यसामग्री ले कर भगवान् तथा सङ्घ को देने के उद्देश्य से ही बाहर दरवाजे पर खड़े हैं।"

"नागित! मैने कभी लौकिक यश को गले नहीं लगाया, न वह यश ही कभी मेरे पीछे लगा। इस लौकिक सुख को वह स्वीकार करे जिस को इस नैष्काम्यसुख का, एकान्तसाधना के सुख का, शान्तिसुख का, सम्बोधिसुख का लाभ अत्यधिक सरलता से तथा कठिनाई के विना न मिला हो;

३. ''अधिवासेतु दानि, भन्ते, भगवा; अधिवासेतु, सुगतो; अधिवासनकालो दानि, भन्ते, भगवतो। येन येनेव दानि, भन्ते, भगवा गमिस्सति, तन्निन्ना व भविस्सन्ति ब्राह्मणगहपतिका नेगमा चेव जानपदा च। सेय्यथापि, भन्ते थुल्लफुसितके देवे वस्सन्ते यथानिन्नं उदकानि पवत्तन्ति; एवमेव खो, भन्ते, येन येनेव दानि भगवा गमिस्सति, तन्निन्ना व भविस्सन्ति ब्राह्मणगहपतिका नेगमा चेव जानपदा च। तं किस्स हेतु? तथा हि, भन्ते, भगवतो सीलपञ्ञाणं'' ति।

४. ''माहं, नागित, यसेन समागमं, मा च मया यसो। यो खो, नागित, नयिमस्स नेक्खम्मसुखस्स पविवेकसुखस्स उपसमसुखस्स सम्बोधसुखस्स निकामलाभी [B.301] अस्स अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, यस्साहं नेक्खम्मसुखस्स पविवेकसुखस्स उपसमसुखस्स सम्बोधसुखस्स निकामलाभी अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, सो तं मीळ्हसुखं मिद्धसुखं लाभसक्कारसिलोकसुखं सादियेय्य।

५. ''इधाहं, नागित, भिक्खुं पस्सामि गामन्तविहारिं समाहितं निसिन्नं। तस्स मय्हं, नागित, एवं होति—'इदानिमं आयस्मन्तं आरामिको वा समणुद्देसो वा सहधम्मिको [R.343] वा तम्हा समाधिम्हा चावेस्सती' ति। तेनाहं, नागित, तस्स भिक्खुनो न अत्तमनो [N.58] होमि गामन्तविहारेन। इध पनाहं, नागित, भिक्खुं पस्सामि आरञ्ञकं अरञ्ञे पचलायमानं निसिन्नं। तस्स मय्हं, नागित, एवं होति—'इदानि अयमायस्मा इमं निद्दाकिलमथं पटिविनोदेत्वा अरञ्ञसञ्ञंयेव मनसि करिस्सति एकत्तं' ति। तेनाहं, नागित, तस्स भिक्खुनो अत्तमनो होमि अरञ्ञविहारेन।

---

मैं तो इस नैष्काम्य सुख का, एकान्तसुख का, शान्तिसुख का, सम्बोधिसुख का लाभ अतिशय, सरलता से, विना किसी कठिनाई के प्राप्त करता रहता हूँ तो मैं इस पुरुषमल (मीळ्ह) जैसे निकृष्ट लौकिक यश:सुख को क्यों पाना चाहूँगा!''

३. भन्ते! भगवान् इसे भी स्वीकार करें, सुगत! इसे भी स्वीकार करें; क्योंकि आप जैसा (लौकिक) व्यवहार करेंगे जनता भी उसी का अनुकरण करेगी। ये निगम एवं जनपद वासी ब्राह्मण गृहपति भी उसी का अनुकरण करेंगे। भन्ते! जैसे भारी वर्षा का जल नीची भूमि की ओर बहता है; वैसे ही, आप जैसा व्यवहार करेंगे ये निगम या जनपद वासी भी वैसा ही आचरण करेंगे। वह किस लिये? क्यों कि आपका आचार लोक में सर्वोत्तम है।''

४. ''नागित! मैने कभी लौकिक यश को गले नहीं लगाया... निकृष्ट लौकिक यश:सुख को क्यों पाना चाहूँगा!''

५. ''नागित! जब मैं यहाँ किसी भिक्षु को ग्राम से एकान्त में समाधिनिष्ठ देखता हूँ, तो नागित! मुझको यह विचार होता है—'इस आयुष्मान् को कोई विहारवासी श्रमणप्रत्याशी या इस का कोई साथी आकर इसकी साधना में कुछ विघ्न न डाल दे'। अत: नागित! मैं उस भिक्षु की ग्राम के पास ही एकान्त में की जा रही साधना से सन्तुष्ट या प्रसन्न नहीं होता। परन्तु, नागित! जब मैं किसी भिक्षु को अरण्य में एकान्त में बैठ कर साधना करते हुए देखता हूँ, तब, नागित! मुझ को यह

६. ''इध पनाहं, नागित, भिक्खुं पस्सामि आरञ्ञकं अरञ्ञे असमाहितं निसिन्नं। तस्स मय्हं, नागित, एवं होति—'इदानि अयमायस्मा इमं असमाहितं वा चित्तं समादहिस्सति, समाहितं वा चित्तं अनुरक्खिस्सती' ति। तेनाहं, नागित, तस्स भिक्खुनो अत्तमनो होमि अरञ्ञविहारेन।

७. ''इध पनाहं, नागित, भिक्खुं पस्सामि आरञ्ञकं अरञ्ञे समाहितं निसिन्नं। तस्स मय्हं, नागित, एवं होति—'इदानि अयमायस्मा अविमुत्तं वा चित्तं विमोचेस्सति, विमुत्तं वा चित्तं अनुरक्खिस्सती' ति। तेनाहं, नागित, तस्स भिक्खुनो अत्तमनो होमि अरञ्ञविहारेन।

८. ''इध पनाहं, नागित, भिक्खूं पस्सामि गामन्तविहारिं लाभिं चीवरपिण्डपात-[R.344] सेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारानं। सो तं लाभसक्कारसिलोकं निकामयमानो रिञ्चति पटिसल्लानं रिञ्चति अरञ्ञवनपत्थानि पन्तानि सेनासनानि; गामनिगमराजधानिं ओसरित्वा वा सङ्कप्पेति। तेनाहं, नागित, तस्स भिक्खुनो न अत्तमनो होमि गामन्तविहारेन।

[B.302] ९. ''इध पनाहं, नागित, भिक्खुं पस्सामि आरञ्ञकं लाभिं चीवरपिण्डपात-

---

विचार होता है—'अब यह आयुष्मान् निद्रा की विश्रान्ति से दूर रह कर अरण्यसाधना से अपने असमाहित चित्त को समाहित एवं एकाग्र कर लेगा।' अतः नागित! उस अरण्यसाधक भिक्षु को देखकर मैं प्रसन्न एवं सन्तुष्ट होता हूँ।''

६. ''इसी प्रकार, नागित! जब मैं किसी अरण्यसाधक भिक्षु को अरण्यसाधना में असमाहित चित्त हुए बैठे देखता हूँ, तब मुझ को यह विचार होता है—'अब यह आयुष्मान् अपने असमाहित चित्त को समाहित कर लेगा, तथा समाहित चित्त की रक्षा कर लेगा।' अतः, नागित! मैं उस आरण्यक साधक भिक्षु को देख कर प्रसन्न होता हूँ।''

७. ''और, नागित! जब मैं किसी आरण्यक भिक्षु को वहाँ समाहितचित्त होकर साधना करते हुए देखता हूँ, तब मुझको यों विचार होता है—'अब यह अपने अविमुक्त चित्त को विमुक्त कर लेगा या विमुक्तचित्त की रक्षा करता रहेगा'। अतः नागित! मैं उस आरण्यक भिक्षु की साधना से प्रसन्न होता हूँ।''

८. ''और, नागित! जब मैं किसी भिक्षु को ग्राम की सीमा के पास ही साधना करते देखता हूँ, तथा जब मुझे उसके विषय में ज्ञात होता है कि उसको, उस समीपता के कारण, चीवर, पिण्डपात, शयनासन एवं रुग्णावस्था के समय की ओषधियाँ—आदि सभी का अतिशय लाभ है। वह उक्त वस्तुओं के लाभ सत्कार में ही आसक्त होकर एकान्त साधना की उपेक्षा करने लगता है, और एकान्त साधना में उपयोगी आरण्यक स्थानों का त्याग कर बैठता है, तथा वह उक्त वस्तुओं की अतिरिक्त प्राप्ति हेतु उससे भी सम्पन्न ग्राम, निगम एवं राजधानियों की ओर बढ़ने का सङ्कल्प करता है। नागित! मैं ऐसे साधक भिक्षु के इस क्रियाकलाप से प्रसन्न नहीं होता।

९. ''परन्तु जो आरण्यक साधक भिक्षु चीवर, पिण्डपात आदि वस्तुओं के लाभ सत्कार में

सेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारानं। सो तं लाभसक्कारसिलोकं पटिपणा-मेत्वा न रिञ्चति पटिसल्लानं न रिञ्चति अरञ्ञवनपत्थानि पन्तानि सेनासनानि। तेनाहं, नागित, तस्स भिक्खुनो अत्तमनो होमि अरञ्ञविहारेन। यस्माहं, नागित, समये [N.59] अद्धानमग्गप्पटिपन्नो न कञ्चि पस्सामि पुरतो वा पच्छतो वा, फासु मे, नागित, तस्मिं समये होति अन्तमसो उच्चारपस्सावकम्माया'' ति॥ ●

देवतावग्गो चतुत्थो॥

तस्सुद्दानं

सेखा द्वे अपरिहानि, मोग्गल्लान विज्जाभागिया।
विवाददानत्तकारी निदानं, किमिलदारुक्खन्धेन नागितो ति॥ ●

## ५. धम्मिकवग्गो

**१. नागसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। अथ खो भगवा पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय सावत्थियं पिण्डाय पाविसि। सावत्थियं पिण्डाय चरित्वा पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तो आयस्मन्तं आनन्दं

---

ही रमा नहीं रहता, तथा एकान्त साधना की उपेक्षा नहीं करता, अपितु एकान्त साधना-स्थलों में अनुराग रखता है, तो नागित! मैं उस भिक्षु की इस कुशल चर्या से प्रसन्न होता हूँ। नागित! मैं भी जब चारिका के समय मार्ग में चलता हूँ तब भी मुझको एकान्त अच्छा लगता है, यहाँ तक कि मूत्रोत्सर्ग आदि नित्य क्रियाओं में भी सुविधा रहती है॥'' ●

**देवतावर्ग चतुर्थ सम्पन्न॥**

**इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची**

१. शैक्ष्यसूत्र, २. प्रथम अपरिहाणसूत्र, ३. द्वितीय अपरिहाणसूत्र, ४. महामौद्गल्यायनसूत्र, ५. विद्याभागीयसूत्र, ६. विवादमूलसूत्र, ७. दानसूत्र, ८. आत्मकारीसूत्र, ९. निदानसूत्र, १०. किमिलसूत्र, ११. दारुस्कन्धसूत्र एवं १२. नागितसूत्र॥ ●

## ५. धार्मिक वर्ग

**१. नागसूत्र : : 'नाग' का विशद वर्णन**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती स्थित, अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवन विहार में साधनाहेतु विराजमान थे। तब कभी भगवान् पूर्वाह्ण में वस्त्र सुव्यवस्थित कर, पात्र चीवर लेकर श्रावस्ती में भिक्षाचर्याहेतु प्रविष्ट हुए। वहाँ भिक्षाचर्या कर भोजन क्रिया से निवृत्त होकर उनने आयुष्मान् आनन्द को बुलाया—''आओ, आनन्द! आज दैवसिक साधनाहेतु पूर्वाराम के

[R.345] आमन्तेसि—''आयामानन्द, येन पुब्बारामो मिगारमातुपासादो तेनुपसङ्कमिस्साम दिवाविहाराया'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पच्चस्सोसि।

२. अथ खो भगवा आयस्मता आनन्देन सद्धिं येन पुब्बारामो मिगारमातुपासादो तेनुपसङ्कमि। अथ खो भगवा सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठितो आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—''आयामानन्द, येन पुब्बकोट्ठको तेनुपसङ्कमिस्साम गत्तानि परिसिञ्चितुं'' ति। [B.303] ''एवं, भन्ते'' ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पच्चस्सोसि। अथ खो भगवा आयस्मता आनन्देन सद्धिं येन पुब्बकोट्ठको तेनुपसङ्कमि गत्तानि परिसिञ्चितुं। पुब्बकोट्ठके गत्तानि परिसिञ्चित्वा पच्चुत्तरित्वा एकचीवरो अट्ठासि गत्तानि पुब्बापयमानो।

३. तेन खो पन समयेन रञ्ञो पसेनदिस्स कोसलस्स सेतो नाम नागो महातूरियताळितवादितेन पुब्बकोट्ठका पच्चुत्तरति। अपिस्सु तं जनो दिस्वा एवमाह— [N.60] ''अभिरूपो वत, भो, रञ्ञो नागो; दस्सनीयो वत, भो, रञ्ञो नागो; पासादिको वत, भो, रञ्ञो नागो; कायुपपन्नो वत, भो, रञ्ञो नागो'' ति! एवं वुत्ते आयस्मा उदायी भगवन्तं एतदवोच—''हत्थिमेव नु खो, भन्ते, महन्तं ब्रहन्तं कायुपपन्नं जनो दिस्वा एवमाह—'नागो वत, भो, नागो' ति, उदाहु अञ्ञं पि कञ्चि महन्तं ब्रहन्तं कायुपपन्नं जनो दिस्वा एवमाह—'नागो वत, भो, नागो''' ति?

---

मृगारमातृप्रसाद चलेंगे।'' आयुष्मान् आनन्द ने ''अच्छा, भन्ते!'' कहकर भगवान् की आज्ञा का स्वीकार किया।

२. तब भगवान् आयुष्मान् आनन्द के साथ पूर्वाराम के मृगारमातृप्रासाद में दिवाकालीन साधनाहेतु गये। तथा सायङ्काल तक वहाँ दिवाकालीन साधना कर, साधना से निवृत्त होकर आयुष्मान् आनन्द से बोले—''चलो, आनन्द! पूर्वकोष्ठक (जलाशय) चलें वहाँ स्नान करेंगे। ''अच्छा, भन्ते!'' कहकर आनन्द ने भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य की। तब भगवान् आयुष्मान् आनन्द के साथ पूर्वकोष्ठक जलाशय गये। वहाँ जलाशय में स्नान कर, वहाँ से निकल कर, शरीर से जल सुखाने के लिये एक चीवर धारण कर खड़े हो गये।

३. उस समय राजा प्रसेनजित् कौसल का श्वेत हाथी नगाड़े आदि बाजे बजाकर उस पूर्वकोष्ठक जलाशय से निकाला जा रहा था। वह श्वेत हाथी इतना सुन्दर था कि उसे देखकर किसी मार्ग चलते साधारण आदमी के मुख से यह वचन निकला—''अरे यह राजा का हाथी तो बहुत सुन्दर है, यह अतिशय दर्शनीय है, इसे देखकर चित्त प्रसन्न हो जाता है, इस हाथी ने अच्छा (सुपुष्ट) शरीर पाया है।'' उस पुरुष द्वारा ऐसा कहे जाने पर, आयुष्मान् उदायी[१] ने भगवान् से यों जिज्ञासा प्रकट की—''भन्ते! क्या कोई पुरुष किसी बलिष्ठ, सुन्दर एवं नयनाभिराम शरीर वाले हाथी को देखकर ही यह कहता है—'अरे! यह हाथी तो वस्तुतः हाथी है'; या किसी अन्य बलिष्ठ, सुन्दर एवं नयनाभिराम शरीर वाले प्राणी को देखकर भी वह यह कह सकता है—'अरे! यह तो हाथी है'?''

---

१. संवाद में उदायी कैसे आ गये? भगवान् के साथ तो स्नानहेतु आयुष्मान् आनन्द चले थे। —सं०

"हत्थिं पि खो, उदायि, महन्तं ब्रहन्तं कायुपपन्नं जनो दिस्वा एवमाह—'नागो वत, भो, नागो' ति! अस्सं पि खो, उदायि, महन्तं ब्रहन्तं ...पे०... गोणं पि खो, उदायि, [R.346] महन्तं ब्रहन्तं ...पे०... उरगं पि खो, उदायि, महन्तं ब्रहन्तं ...पे०... रुक्खं पि खो, उदायि, महन्तं ब्रहन्तं ...पे०... मनुस्सं पि खो, उदायि, महन्तं ब्रहन्तं कायुप्पन्नं जनो दिस्वा एवमाह—'नागो वत, भो, नागो' ति! अपि च, उदायि, यो सदेवके सस्समणब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय आगुं न करोति कायेन वाचाय मनसा, तमहं 'नागो' ति ब्रूमी" ति।

४. "अच्छरियं, भन्ते, अब्भुतं, भन्ते! याव सुभासितं चिदं, भन्ते, भगवता—'अपि च, उदायि, यो सदेवके लोके समारके सब्रह्मके सस्समणब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय आगुं न करोति कायेन वाचाय मनसा, तमहं नागो ति ब्रूमी' ति।

"इदं च पनाहं, भन्ते, भगवता सुभासितं इमाहि गाथाहि अनुमोदामि—

"मनुस्सभूतं सम्बुद्धं, अत्तदन्तं समाहितं।
इरियमानं ब्रह्मपथे, चित्तस्सूपसमे रतं॥
"यं मनुस्सा नमस्सन्ति, सब्बधम्मान पारगुं। [B.304]
देवा पि तं नमस्सन्ति, इति मे अरहतो सुतं॥
"सब्बसंयोजनातीतं, वना निब्बनमागतं।

---

"हाँ, उदायि! कोई पुरुष पुष्ट एवं बलवान् शरीर वाले हाथी को देखकर...पूर्ववत्... अश्व को देखकर... ऊँट को देखकर... वृषभ को देखकर... तथा सुपुष्ट एवं बलिष्ठ शरीर वाले किसी पुरुष को देखकर भी यह कह सकता है—'अरे! यह तो हाथी जैसा लगता है।' परन्तु, उदायि! मेरी दृष्टि में तो वही 'नाग' कहलाने योग्य है जो देवताओं सहित इस मारलोक एवं ब्रह्मलोक में देव-मनुष्य, श्रमण एवं ब्राह्मणी प्रजा सहित किसी के प्रति मन, वचन या कर्म से कोई अपराध न करता हो।"

४. "आश्चर्य है, भन्ते! आपका यह कथन बहुत ही अच्छा और अद्भुत है कि 'मेरी दृष्टि में वही 'नाग' कहलाने योग्य हैं जो देवताओं सहित इन मारलोक और ब्रह्मलोक में देव, मनुष्य, श्रमण एवं ब्राह्मण प्रजासहित किसी के प्रति मन वचन या कर्म से कोई अपराध न करता हो। मैं उसी को 'नाग' कहता हूँ।

"भन्ते! भगवान् के इस सुभाषित का इन (अधोलिखित) गाथाओं से मैं भी अनुमोदन करता हूँ।

"जिस आत्मसंयमी, समाधिनिष्ठ, निर्वाणपथ पर आरूढ़, स्वकीय चित्तशान्ति में लगे हुए, सभी धर्मों के अन्तस्तल तक पहुँचे हुए, मनुष्य रूप में अवतरित सम्बुद्ध को जो मनुष्य प्रणाम करेंगे, देवता भी उसी को प्रणाम करेंगे—ऐसा मैंने ज्ञानी जनों से सुना है॥

"वे सम्बुद्ध सभी संयोजनों (भवबन्धनों) से दूर हुए, तृष्णा से तृष्णारहित स्थिति में पहुँचे हुए तथा कामभोगों से दूर रहकर प्रव्रज्यासुख का भोग करते हुए संसार में ऐसे शोभित होते हैं जैसे कोई सुवर्णखण्ड पर्वत से नीचे आ गिरा हो॥

कामेहि नेक्खम्मरतं, मुत्तं सेला व कञ्चनं॥

[N.61] "सब्बे अच्चरुची नागो, हिमवाञ्ञे सिलुच्चये।
सब्बेसं नागनामानं, सच्चनामो अनुत्तरो॥

"नागं वो कित्तयिस्सामि, न हि आगुं करोति सो।
सोरच्चं अविहिंसा च, पादा नागस्स ते दुवे॥

"तपो च ब्रह्मचरियं, चरणा नागस्स त्यापरे।
सद्धाहत्थो महानागो, उपेक्खासे तदन्तवा॥

"सति गीवा सिरो पञ्ञा, वीमंसा धम्मचिन्तना।
धम्मकुच्छिसमातपो, विवेको तस्स वालधि॥

"सो झायी अस्सासरतो, अज्झत्तं सुसमाहितो।
गच्छं समाहितो नागो, ठितो नागो समाहितो॥

"सेय्यं समाहितो नागो, निसिन्नो पि समाहितो।
[R.347] सब्बत्थ संवुतो नागो, एसा नागस्स सम्पदा॥

"भुञ्जति अनवज्जानि, सावज्जानि न भुञ्जति।
घासमच्छादनं लद्धा, सन्निधिं परिवज्जयं॥

"संयोजनं अणुं थूलं, सब्बं छेत्वान बन्धनं।
येन येनेव गच्छति, अनपेक्खो व गच्छति॥

"यथा पि उदके जातं, पुण्डरीकं पवड्ढति।

---

"यों तो सभी नाग ऐसे ज्वलन्त देदीप्यमान लगते हैं मानो हिमालय पर्वत का कोई चमकीला शिखर हो; परन्तु इन सभी नागों में 'सत्य' नामक नाग अनुपम (अद्वितीय) है॥

"अब मैं उस 'नाग' का सविस्तर करूँगा, जो किसी प्रकार का पाप नहीं करता। उस नाग के दो चरण होते हैं—१. विनम्रता (सोरच्च) एवं २. दया (अविहिंसा)॥

"तथा उस नाग के दो चरण ये हैं—१. तप एवं २. ब्रह्मचर्य (धर्मसाधना) और उस हाथी की सूँड़ श्रद्धा और उसका पृष्ठभाग उपेक्षा का प्रतीक हैं॥

"स्मृति ही उसकी ग्रीवा है, प्रज्ञा उसका शिर है, धर्मचिन्तन उसका सोचना विचारना है तथा धर्म की कोंख उसका पेट एवं मीमांसा उसकी पूँछ है॥

"वह सतत ध्यानरत, निर्वाण के लिये आश्वस्त, आध्यात्मिक रूप से भलीभाँति समाहित (एकाग्रचित्त) रहता है—भले ही वह चल रहा हो या खड़ा हो; सोया हो या बैठा हो। इस प्रकार वह नाग सर्वथा सब प्रकार से संयत रहता है। यही उस (सत्य नामक) नाग की सम्पदा है।

"यह निर्दोष वस्तु का ही उपभोग करता है, सदोष का नहीं। शरीर धारण मात्र के लिये ही भोजन पाकर वह सन्तुष्ट रहता है। वह किसी भी प्रकार का संग्रह (सन्निधि) नहीं करता।

"वह अपने सभी प्रकार के छोटे या बड़े संयोजनों एवं भवबन्धनों को काट कर जिधर भी जाता है किसी प्रकार की प्राप्ति की आशा त्याग कर ही जाता है॥

नुपलिप्पति तोयेन, सुचिगन्धं मनोरमं॥
"तथेव लोके सुजातो, बुद्धो लोके विहरति।
नुपलिप्पति लोकेन, तोयेन पदुमं यथा॥
"महागिनी व जलितो, अनाहारूपसम्मति। [B.305]
सङ्खारेसूपसन्तेसु, निब्बुतो ति पवुच्चति॥
"अत्थस्सायं विञ्ञापनी, उपमा विञ्ञूहि देसिता।
विञ्ञस्सन्ति महानागा, नागं नागेन देसितं॥
"वीतरागो वीतदोसो, वीतमोहो अनासवो। [N.62]
सरीरं विजहं नागो, परिनिब्बिस्सति अनासवो" ति॥ ●

**२. मिगसालासुत्तं** : १. अथ खो आयस्मा आनन्दो पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय येन मिगसालाय उपासिकाय निवेसनं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। अथ खो मिगसाला उपासिका येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं आनन्दं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्ना खो मिगसाला उपासिका आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच—

२. "कथं कथं नामायं, भन्ते आनन्द, भगवता धम्मो देसितो अञ्ञेय्यो, यत्र हि नाम ब्रह्मचारी च अब्रह्मचारी च उभो समसमगतिका भविस्सन्ति अभिसम्परायं? [R.348]

---

"जैसे जल में उत्पन्न सुन्दर एवं सुगन्धियुक्त कमल जल से वृद्धि पाकर भी उसमें कभी लिप्त नहीं होता; उसी प्रकार उच्च जाति वाला ज्ञानी लोक में किसी प्रकार की आसक्ति न रखता हुआ वहाँ विचरण करता है, जैसे जल में कमल वास करता है॥

"जैसे भयङ्कर रूप से प्रज्वलित अग्नि भी आहार (इन्धन) न पाने पर स्वयं शान्त हो जाती है; उसी प्रकार वह भी, सर्वविध संस्कारों के शान्त होने पर, 'निर्वृत हो गया' कहलाता है।

विद्वानों ने इस उपमा (दृष्टान्त) को अर्थ (वास्तविकता) बताने वाली कहा है। इस (उपरिवर्णित) नाग को वे महानाग (महान् ज्ञानी) ही जान सकेंगे, जो नाग (भगवान् बुद्ध) द्वारा उपदेश प्राप्त कर चुके हैं।

जो राग, द्वेष एवं मोह को सर्वथा त्याग चुका है, आश्रव (विकार) रहित हो चुका है, ऐसा नाग (ज्ञानी साधक) देहत्याग के बाद आश्रवरहित रहता हुआ ही परिनिर्वृत होगा॥" ●

**२. मृगशालासूत्र : : छह प्रकार के पुद्गल**

१. तब आयुष्मान् आनन्द पूर्वाह्ण काल में वस्त्रों को व्यवस्थित कर, पात्रचीवर लेकर, मृगशाला उपासिका के घर पहुँचे। पहुँचकर वहाँ प्रज्ञप्त आसन पर बैठे। तब मृगशाला उपासिका आनन्द के सम्मुख आयी। आकर आयुष्मान् आनन्द को प्रणाम कर एक ओर बैठ गयी। एक ओर बैठी उस मृगशाला उपासिका ने आयुष्मान् आनन्द से यह जिज्ञासा प्रकट की—

२. "भन्ते आनन्द! आपके भगवान् यह कैसा कैसा उपदेश करते हैं जो समझ में ही नहीं आता! वे उपदेश में कहते हैं कि ब्रह्मचारी एवं अब्रह्मचारी—दोनों की ही, देहपात के बाद, समान

पिता मे, भन्ते, पुराणो ब्रह्मचारी अहोसि आराचरी विरतो मेथुना गामधम्मा। सो कालङ्कतो भगवता ब्याकतो सकदागामिपत्तो तुसितं कायं उपपन्नो ति। पेत्तेय्यो पि मे, भन्ते, इसिदत्तो अब्रह्मचारी अहोसि सदारसन्तुट्ठो। सो पि कालङ्कतो भगवता ब्याकतो सकदागामिपत्तो तुसितं कायं उपपन्नो ति। कथं कथं नामायं, भन्ते, आनन्द, भगवता धम्मो देसितो अञ्ञेय्यो, यत्र हि नाम ब्रह्मचारी च अब्रह्मचारी च उभो समसमगतिका भविस्सन्ति अभिसम्परायं'' ति?

''एवं खो पनेतं, भगिनि, भगवता ब्याकतं'' ति।

[B.306] ३. अथ खो आयस्मा आनन्दो मिगसालाय उपासिकाय निवेसने पिण्डपातं गहेत्वा उट्ठायासना पक्कामि। अथ खो आयस्मा आनन्दो पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—

४. ''इधाहं, भन्ते, पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय येन मिगसालाय उपासिकाय निवेसनं तेनुपसङ्कमिं; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदिं। अथ खो, भन्ते, मिगसाला उपासिका येनाहं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा मं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। [N.63] एकमन्तं निसिन्ना खो, भन्ते, मिगसाला उपासिका मं एतदवोच—'कथं कथं नामायं, भन्ते आनन्द, भगवता धम्मो देसितो अञ्ञेय्यो, यत्र हि नाम ब्रह्मचारी च अब्रह्मचारी च उभो समसमगतिका भविस्सन्ति अभिसम्परायं। पिता मे, भन्ते, पुराणो ब्रह्मचारी अहोसि आराचारी विरतो मेथुना गामधम्मा। सो कालङ्कतो भगवता ब्याकतो सकदागामिपत्तो तुसितं कायं उपपन्नो ति। पेत्तेय्यो पि मे, भन्ते, इसिदत्तो अब्रह्मचारी अहोसि सदारसन्तुट्ठो। सो पि

---

ही गति होती है। १. भन्ते, मेरे पिता पुराण धर्मसाधक थे, वे ग्राम्यधर्म एवं मैथुनधर्म से सर्वथा दूर रहते थे। उनके देहपात के बाद, भगवान् ने उनके विषय में बताया कि वे सकृदागामिता की स्थिति प्राप्त कर तुषित लोक में उत्पन्न हुए हैं। २. उधर मेरा पितृभक्त (भाई) ऋषिदत्त धर्मसाधक तो नहीं था, पर व्यभिचारी भी नहीं था; क्योंकि अपनी पत्नीमात्र से सन्तुष्ट रहता था। उसके देहपात के बाद, उसके विषय में पूछने पर भी यही बताया कि वह भी सकृदागामिता की भूमिका प्राप्त कर तुषित लोक में उत्पन्न हुआ है। भन्ते आनन्द! भगवान् ने यह कैसी धर्मदेशना की कि जिसमें ब्रह्मचारी एवं अब्रह्मचारी दोनों को ही देहपातानन्तर समानगतिक बता दिया?''

''हाँ, बहन! भगवान् ने ऐसी ही देशना की है।''

३. तब आयुष्मान् आनन्द मृगशाला उपासिका के घर भिक्षान्न ग्रहण कर आसन से उठकर चले आये। तब आयुष्मान् आनन्द भोजन के बाद भगवान् के सम्मुख आये। आकर, प्रणाम कर, एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् से यह निवेदन किया—

४. ''यहाँ, भन्ते! मैं आज पूर्वाह्न काल में...पूर्ववत्... समानगतिक बता दिया? इसके उत्तर में भन्ते! मैंने कहा—'भगवान् ने ऐसी ही देशना की है'।''

कालङ्कतो भगवता ब्याकतो सकदागामिपत्तो तुसितं कायं उपपन्नो ति। कथं कथं [R.349] नामायं, भन्ते आनन्द, भगवता धम्मो देसितो अञ्ञेय्यो, यत्र हि नाम ब्रह्मचारी च अब्रह्मचारी च उभो समसमगतिका भविस्सन्ति अभिसम्परायं' ति? एवं वुत्ते अहं, भन्ते, मिगसालं उपासिकं एतदवोचं—'एवं खो पनेतं, भगिनि, भगवता ब्याकतं''' ति।

५. "का चानन्द, मिगसाला उपासिका बाला अब्यत्ता अम्मका अम्मकसञ्ञा, के च पुरिसपुग्गलपरोपरियञाणे? छयिमे, आनन्द, पुग्गला सन्तो संविज्जमाना लोकस्मिं। कतमे छ?

६. "इधानन्द, एकच्चो पुग्गलो सोरतो होति सुखसंवासो, अभिनन्दन्ति सब्रह्मचारी एकत्तवासेन। तस्स सवनेन पि अकतं होति, बाहुसच्चेन पि अकतं होति, दिट्ठिया पि अप्पटिविद्धं होति, सामायिकं पि विमुत्तिं न लभति। सो कायस्स भेदा [B.307] परं मरणा हानाय परेति नो विसेसाय, हानगामीयेव होति नो विसेसगामी।

७. "इध पनानन्द, एकच्चो पुग्गलो सोरतो होति सुखसंवासो, अभिनन्दन्ति सब्रह्मचारी एकत्तवासेन। तस्स सवनेन पि कतं होति, बाहुसच्चेन पि कतं होति, दिट्ठिया पि पटिविद्धं होति, सामायिकं पि विमुत्तिं लभति। सो कायस्स भेदा परं मरणा विसेसाय परेति नो हानाय, विसेसगामीयेव होति नो हानगामी।

८. "तत्रानन्द, पमाणिका पमिणन्ति—'इमस्स पि तेव धम्मा अपरस्स पि तेव धम्मा, कस्मा तेसं एको हीनो एको पणीतो' ति! तं हि तेसं, आनन्द, होति दीघरत्तं अहिताय दुक्खाय।

---

५. (भगवान् बोले—) "आनन्द! कहाँ वह मूर्ख मन्दमति नारी, नारी की कोंख से जन्मी मृगशाला उपासिका और कहाँ ये पुरुष पुद्गल की पहुँच से ऊपर के दोनों ज्ञान! आनन्द! लोक में ये छह प्रकार के पुद्गल होते हैं। कौन से छह?

६. "आनन्द! यहाँ कोई पुद्गल विनम्र होता है, सुख से जीवन बिताने वाले स्वभाव वाला होता है। उसके साथी उसके इस अनुकूल एवं एकाकी जीवन की प्रशंसा करते हैं। उसको धर्मश्रवण से भी कोई प्रयोजन नहीं रहता, न अधिक विद्वत्ता से उसका कोई प्रयोजन होता है, न वह सम्यग्दृष्टि में ही गहरा प्रविष्ट हुआ रहता है, न वह सामायिक विमुक्ति को ही प्राप्त हुआ रहता है। वह अपने इस देहपात के बाद मरणानन्तर, हानि ही प्राप्त करता है, विशेष लाभ नहीं। (१)

७. "और, आनन्द! यहाँ कोई दूसरा पुद्गल भी विनम्र होता है, सुख से जीवन बिताने वाला होता है। उसके साथी भी उसके इस अनुकूल एवं एकाकी जीवन की प्रशंसा करते हैं। परन्तु उसको धर्मश्रवण से भी प्रयोजन रहता है, अधिक विद्वत्ता से भी; वह सम्यग्दृष्टिपूर्वक साधना में गम्भीर प्रवेश भी रखता है, और वह सामायिक विमुक्ति को भी प्राप्त हुआ रहता है। अतः वह, अपने देहपात के बाद, मरणानन्तर विशेष लाभ ही प्राप्त करता है, कोई हनि नहीं। (२)

८. "वहाँ, आनन्द! विचारक जन विचारने लगते हैं—'इनमें एक के भी वही धर्म (आचरण) हैं, दूसरे के भी वही आचरण हैं, फिर उनमें से एक हानि प्राप्त करता है और दूसरा

[N.64] ९. ''तत्रानन्द, य्वायं पुग्गलो सोरतो होति सुखसंवासो, अभिनन्दन्ति सब्रह्मचारी एकत्तवासेन, तस्स सवनेन पि कतं होति, बाहुसच्चेन पि कतं होति, दिट्ठिया पि पटिविद्धं [R.350] होति, सामायिकं पि विमुत्तिं लभति। अयं, आनन्द, पुग्गलो अमुना पुरिमेन पुग्गलेन अभिक्कन्ततरो च पणीततरो च। तं किस्स हेतु? इमं हानन्द, पुग्गलं धम्मसोतो निब्बहति, तदन्तरं को जानेय्य अञ्ञत्र तथागतेन! तस्मातिहानन्द, मा पुग्गलेसु पमाणिका अहुवत्थ; मा पुग्गलेसु पमाणं गण्हित्थ। खञ्ञति हानन्द, पुग्गलेसु पमाणं गण्हन्तो। अहं वा, आनन्द, पुग्गलेसु पमाणं गण्हेय्यं यो वा पनस्स मादिसो।

१०. ''इध पनानन्द, एकच्चस्स पुग्गलस्स कोधमानो अधिगतो होति, समयेन समयं चस्स लोभधम्मा उप्पज्जन्ति। तस्स सवनेन पि अकतं होति, बाहुसच्चेन पि अकतं होति, दिट्ठिया पि अप्पटिविद्धं होति, सामायिकं पि विमुत्तिं न लभति। सो कायस्स भेदा परं मरणा हानाय परेति नो विसेसाय, हानगामीयेव होति नो विसेसगामी।

११. ''इध पनानन्द, एकच्चस्स पुग्गलस्स कोधमानो अधिगतो होति, समयेन समयं चस्स लोभधम्मा उप्पज्जन्ति। तस्स सवनेन पि कतं होति ...पे०... नो हानगामी।

[B.308] १२. ''तत्रानन्द, पमाणिका पमिणन्ति ...पे०... यो वा पनस्स मादिसो।

१३. ''इध, पनानन्द, एकच्चस्स पुग्गलस्स कोधमानो अधिगतो होति, समयेन

---

लाभ। ऐसा क्यों?' आनन्द! इन विचारकों का ऐसा विचार करना उनके लिये दीर्घकाल तक अहितकर एवं दुःखप्रद ही होता है।

९. ''वहाँ, आनन्द! जो पुद्गल विनम्र एवं सुख से जीवन बिताने वाला होकर भी, धर्मश्रवण, विद्वत्ता, सम्यग्दृष्टिपूर्वक साधना में गम्भीर प्रवेश, एवं सामायिक विमुक्ति प्राप्त कर चुका है, वह यह दूसरा पुद्गल उस पहले पुद्गल से अपेक्षाकृत योग्य है, अच्छा है। वह किस कारण? वह इसलिये कि इस दूसरे पुद्गल को उसका धर्मस्रोत प्रथम पुद्गल से पृथक् किये हुए हैं। इस अन्तर (भेद) को तथागत के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं जान सकेगा। अतः आनन्द! वैसे विचारक इन पुद्गलों की ओर न देखें और न इनपर कोई विचार करें। ऐसे पुद्गलों पर विचार करने वाला विचारक अपना नाश ही करता है। उनपर विचार करने का एकमात्र अधिकार मेरा है, या मेरे ही समान किसी अन्य ज्ञानी का।

१०. ''पुनः, आनन्द! यहाँ कोई पुद्गल क्रोधी एवं अभिमानी होता है, और समय समय पर उसको लोभधर्म भी उत्पन्न होते रहते हैं। उसको न धर्मश्रवण से...पूर्ववत्... उसकी हानि ही होती है, वह यहाँ कुछ विशेष प्राप्त नहीं कर पाता। (३)

११. ''पुनः, आनन्द! यहाँ कोई दूसरा पुद्गल भी यद्यपि क्रोधी, अभिमानी होता है, समय समय पर उसको लोभधर्म भी उत्पन्न होते रहते हैं; परन्तु वह धर्मश्रवण भी करता है...पूर्ववत्... वह विशेष (लाभ) ही प्राप्त करता है उसकी हानि नहीं होती। (४)

१२. ''वहाँ, आनन्द! विचारक जब विचार करने लगते हैं कि ...पूर्ववत्... या मेरे ही समान किसी अन्य ज्ञानी का।

समयं चस्स वचीसङ्खारा उप्पज्जन्ति। तस्स सवनेन पि अकतं होति ...पे०... सामायिकं पि विमुत्तिं न लभति। सो कायस्स भेदा परं मरणा हानाय परेति नो विसेसाय, हानगामीयेव होति नो विसेसगामी।

१४. ''इध पनानन्द, एकच्चस्स पुग्गलस्स कोधमानो अधिगतो होति, समयेन समयं चस्स वचीसङ्खारा उप्पज्जन्ति। तस्स सवनेन पि कतं होति, बाहुसच्चेन पि कतं होति, दिट्ठिया पि पटिविद्धं होति, सामायिकं पि विमुत्तिं लभति। सो कायस्स भेदा परं [R.351] मरणा विसेसाय परेति नो हानाय, विसेसगामीयेव होति नो हानगामी।

१५. ''तत्रानन्द, पमाणिका पमिणन्ति--'इमस्स पि तेव धम्मा, अपरस्स [N.65] पि तेव धम्मा। कस्मा तेसं एको हीनो, एको पणीतो' ति ? तं हि तेसं, आनन्द, होति दीघरत्तं अहिताय दुक्खाय।

१६. ''तत्रानन्द, यस्स पुग्गलस्स कोधमानो अधिगतो होति, समयेन समयं चस्स वचीसङ्खारा उप्पज्जन्ति, तस्स सवनेन पि कतं होति, बाहुसच्चेन पि कतं होति, दिट्ठिया पि पटिविद्धं होति, सामायिकं पि विमुत्तिं लभति। अयं, आनन्द, पुग्गलो अमुना पुरिमेन पुग्गलेन अभिक्कन्ततरो च पणीततरो च। तं किस्स हेतु? इमं हानन्द, पुग्गलं धम्मसोतो निब्बहति। तदन्तरं को जानेय्य अञ्ञत्र तथागतेन! तस्मातिहानन्द, मा पुग्गलेसु पमाणं गण्हन्तो। अहं वा, आनन्द, पुग्गलेसु पमाणं गण्हेय्यं, यो वा पनस्स मादिसो।

१७. ''का चानन्द, मिगसाला उपासिका बाला अब्यत्ता अम्मका अम्मकसञ्ञा, के च पुरिसपुग्गलपरोपरियञाणे! इमे खो, आनन्द, छ पुग्गला सन्तो संविज्जमाना लोकस्मिं।

---

१३. ''पुनः, आनन्द! यहाँ कोई पुद्गल क्रोधी एवं अभिमानी होता है, तथा समय समय पर उसको वाक्संस्कार भी उत्पन्न होते रहते हैं। उसको न धर्मश्रवण से ...पूर्ववत्... हानि ही होती है, वह विशेष प्राप्त नहीं कर पाता। (५)

१४. ''पुनः आनन्द! यहाँ कोई दूसरा पुद्गल क्रोधी एवं अभिमानी होता है, तथा समय समय पर उसके वाक्संस्कार भी उत्पन्न होते रहते हैं; परन्तु वह धर्मश्रवण भी करता है ...पूर्ववत्... वह विशेष ही प्राप्त करता है, उसकी हानि नहीं होती। (६)

१५. ''वहाँ, आनन्द! विचारक जन विचार करने लगते हैं— ...पूर्ववत्... ऐसा विचार करना उनको चिरकाल के लिये अहितकर एवं दुःखप्रद ही होगा।

१६. ''वहाँ, आनन्द! जो पुद्गल क्रोधी एवं अभिमानी होता है... पूर्ववत्... या मेरे जैसे किसी अन्य ज्ञानी का।

१७. ''आनन्द! कहाँ वह मूर्ख, मन्दगति, नारी की कोंख से पैदा हुई नारी मृगशाला उपासिका और कहाँ पुरुष॰पुद्गल की पहुँच से ऊपर के ये दोनों ज्ञान! आनन्द! लोक में ये छह उपर्युक्त प्रकार के पुद्गल उपलब्ध होते हैं।

१८. "यथारूपेन, आनन्द, सीलेन पुराणो समन्नागतो अहोसि, तथारूपेन सीलेन इसिदत्तो समन्नागतो अभविस्स। नयिध पुराणो इसिदत्तस्स गतिं पि अञ्ञस्स। यथारूपाय च, आनन्द, पञ्ञाय इसिदत्तो समन्नागतो अहोसि, तथारूपाय पञ्ञाय पुराणो समन्नागतो [B.309] अभविस्स। नयिध इसिदत्तो पुराणस्स गतिं पि अञ्ञस्स। इति खो, आनन्द, इमे पुग्गला उभो एकङ्गहीना" ति॥ ●

**३. इणसुत्तं :** १. "दालिद्दियं, भिक्खवे, दुक्खं लोकस्मिं कामभोगिनो" ति।

"एवं, भन्ते"।

"यं पि, भिक्खवे, दलिद्दो अस्सको अनाळ्हिको इणं आदियति, इणादानं पि, [R.352] भिक्खवे, दुक्खं लोकस्मिं कामभोगिनो" ति। "एवं, भन्ते"।

[N.66] "यं पि, भिक्खवे, दलिद्दो अस्सको अनाळ्हिको इणं आदियित्वा वड्ढिं पटिस्सुणाति, वड्ढिं पि, भिक्खवे, दुक्खा लोकस्मिं कामभोगिनो" ति। "एवं, भन्ते"।

"यं पि, भिक्खवे, दलिद्दो अस्सको अनाळ्हिको वड्ढिं पटिस्सुणित्वा कालाभतं वड्ढिं न देति, चोदेन्ति पि नं। चोदना पि, भिक्खवे, दुक्खा लोकस्मिं कामभोगिनो" ति।

"एवं, भन्ते"।

"यं पि, भिक्खवे, दलिद्दो अस्सको अनाळ्हिको चोदियमानो न देति, अनुचरन्ति पि नं। अनुचरिया पि, भिक्खवे, दुक्खा लोकस्मिं कामभोगिनो" ति। "एवं, भन्ते"।

---

१८. "आनन्द! मृगशाला का पिता जिस प्रकार के शील से सम्पन्न था, उसी प्रकार के शील से सम्पन्न ऋषिदत्त भी होता (तब उन दोनों में समानता मानी जाती)। परन्तु उसका पिता ऋषिदत्त की साधना को नहीं जान पाया। या फिर, आनन्द! ऋषिदत्त जैसी प्रज्ञा से युक्त था वैसी ही प्रज्ञा पिता में भी होती (तब उन दोनों में समानता होती)। परन्तु ऋषिदत्त भी पिता की साधनापद्धति को नहीं जान पाया। इस प्रकार, आनन्द! ये दोनों ही पुद्गल (साधना के एक-) एक अङ्ग से हीन थे। (अतः उन दोनों का सकृदागामी की स्थिति तक पहुँचना ही उचित था।)॥ ●

**३. ऋणसूत्र** : :

१. "भिक्षुओ! लोक में कामभोगी (इन्द्रियसुखों को भोगनेवाले) के लिये दरिद्रता दुःखरूप है।" "हाँ, भन्ते!"

"भिक्षुओ! जो (कामभोगी) दरिद्र है, निर्धन है, सम्पत्तिरहित है, ऋण लेता है; यह ऋण लेना, भिक्षुओ! उस कामभोगी के लिये दुःखप्रद ही है।" "हाँ, भन्ते!"

"भिक्षुओ! जो (कामभोगी) दरिद्र है, निर्धन है, सम्पत्तिरहित है, ऋण लेता है; तथा उस ऋण पर चक्रवृद्धि व्याज भी चुकाने की प्रतिज्ञा करता है; भिक्षुओ! यह चक्रवृद्धि भी यहाँ उस कामभोगी के लिये दुःखरूप ही है।" "हाँ, भन्ते!"

"और, भिक्षुओ! जो दरिद्र, निर्धन, सम्पत्तिरहित है, ऋण लेता है, ऋण पर चक्रवृद्धि व्याज देने की प्रतिज्ञा करता है; परन्तु व्याज न देने पर साहूकार उससे बलपूर्वक व्याज माँगते हैं, भिक्षुओ! इस प्रकार बलपूर्वक व्याज माँगा जाना भी उस ऋणी कामभोगी के लिये दुःखप्रद ही होता है।"

''यं पि, भिक्खवे, दलिद्दो अस्सको अनाळ्हिको अनुचरियमानो न देति, बन्धन्ति पि नं। बन्धनं पि, भिक्खवे, दुक्खं लोकस्मिं कामभोगिनो'' ति। ''एवं, भन्ते''।

२. ''इति खो, भिक्खवे, दालिद्दियं पि दुक्खं लोकस्मिं कामभोगिनो, इणादानं पि दुक्खं लोकस्मिं कामभोगिनो, वड्ढि पि दुक्खा लोकस्मिं कामभोगिनो, चोदना पि दुक्खा लोकस्मिं कामभोगिनो, अनुचरिया पि दुक्खा लोकस्मिं कामभोगिनो, बन्धनं पि दुक्खं लोकस्मिं कामभोगिनो; एवमेव खो, भिक्खवे, यस्स कस्सचि सद्धा नत्थि कुसलेसु धम्मेसु, हिरी नत्थि कुसलेसु धम्मेसु, ओत्तप्पं नत्थि कुसलेसु धम्मेसु, विरियं नत्थि कुसलेसु धम्मेसु, पञ्ञा नत्थि कुसलेसु धम्मेसु—अयं वुच्चति, भिक्खवे, अरियस्स विनये दलिद्दो अस्सको अनाळ्हिको।

३. ''स खो सो, भिक्खवे, दलिद्दो अस्सको अनाळ्हिको सद्धाय असति कुसलेसु धम्मेसु, हिरिया असति कुसलेसु धम्मेसु, ओत्तप्पे असति कुसलेसु धम्मेसु, विरिये [B.310] असति कुसलेसु धम्मेसु, पञ्ञाय असति कुसलेसु धम्मेसु, कायेन दुच्चरितं चरति, वाचाय दुच्चरियं चरति, मनसा दुच्चरितं चरति। इदमस्स इणादानस्मिं वदामि।

४. ''सो तस्स कायदुच्चरितस्स पटिच्छादनहेतु पापिकं इच्छं पणिदहति। [R.353] 'मा मं जञ्ञू' ति इच्छति, 'मा मं जञ्ञू' ति सङ्कप्पति, 'मा मं जञ्ञू' ति वाचं [N.67] भासति, 'मा मं जञ्ञू' ति कायेन परक्कमति। सो तस्स वचीदुच्चरितस्स पटिच्छादनहेतु

---

''हाँ, भन्ते!''

''और, भिक्षुओ! जो ...पूर्ववत्... साहूकार उसका पीछा (उसपर मुकदमा आदि) करते हैं। भिक्षुओ! साहूकार का इस तरह उसका पीछा किया जाना भी उसके लिये दुःखद ही होता है।''

''हाँ, भन्ते!''

''और, भिक्षुओ! जो ...पूर्ववत्... पीछा किये जाने पर भी जो ऋण नहीं चुका पाता तो अन्त में उसको कारावास (बन्धन) हो जाता है; भिक्षुओ! यह कारावास भी उस ऋणग्रस्त कामभोगी के लिये दुःखप्रद ही होता है।'' ''हाँ, भन्ते!''

२. ''इस प्रकार, भिक्षुओ! जैसे किसी दरिद्र कामभोगी के लिये ऋण, चक्रवृद्धि व्याज, उसको देने की प्रेरणा (तकाजा), तब मुकदमा तथा अन्त में कारावास—ये सब कर्म दुःखदायी होते हैं; उसी प्रकार, भिक्षुओ! जिस किसी पुद्गल की कुशल धर्मों के प्रति श्रद्धा, लज्जा, पापभीरुता, वीर्य (साधना की शक्ति) एवं प्रज्ञा नहीं है, भिक्षुओ! ऐसा भिक्षु भी 'दरिद्र', 'निर्धन' एवं 'सम्पत्तिविहीन' ही कहलाता है।

३. ''भिक्षुओ! ऐसा दरिद्र, निर्धन एवं सम्पत्तिविहीन भिक्षु कुशल धर्मों के प्रति श्रद्धा, लज्जा, पापभीरुता, वीर्य एवं प्रज्ञा के न रहने पर काय, वाणी एवं मन से दुराचार करने लगता है। भिक्षुओ! मैं भिक्षु के इन कर्मों को उस लौकिक पुद्गल के 'ऋण लेने' के कृत्य के समान समझता हूँ। (१)

४. तदनन्तर, वह भिक्षु अपने इन कायिक दुश्चरितों को दूसरों से छिपाने की इच्छा करता है। वह चाहता है कि दूसरे लोग मेरे इन दुष्कृत्यों को न जाने—ऐसी इच्छा करता है, ऐसा सङ्कल्प करता

...पे०... सो तस्स मनोदुच्चरितस्स पटिच्छादनहेतु ...पे०... 'मा मं जञ्ञू' ति कायेन परक्कमति। इदमस्स वड्डिया वदामि।

५. "तमेनं पेसला सब्रह्मचारी एवमाहंसु—'अयं च सो आयस्मा एवंकारी एवंसमाचारो' ति। इदमस्स चोदनाय वदामि।

६. "तमेनं अरञ्ञगतं वा रुक्खमूलगतं वा सुञ्ञागारगतं वा विप्पटिसारसहगता पापका अकुसलवितक्का समुदाचरन्ति। इदमस्स अनुचरियाय वदामि।

७. "स खो सो, भिक्खवे, दलिद्दो अस्सको अनाळ्हिको कायेन दुच्चरितं चरित्वा वाचाय दुच्चरितं चरित्वा मनसा दुच्चरितं चरित्वा कायस्स भेदा परं मरणा निरयबन्धने वा बज्झति तिरच्छानयोनिबन्धने वा। नाहं, भिक्खवे, अञ्ञं एकबन्धनं पि समनुपस्सामि एवंदारुणं एवंकटुकं एवंअन्तरायकरं अनुत्तरस्स योगक्खेमस्स अधिगमाय, यथयिदं, भिक्खवे, निरयबन्धनं वा तिरच्छानयोनिबन्धनं वा ति।

"दालिद्दियं दुक्खं लोके, इणादानं च वुच्चति।
दलिद्दो इणमादाय, भुञ्जमानो विहञ्ञति॥
"ततो अनुचरन्ति नं, बन्धनं पि निगच्छति।
एतं हि बन्धनं दुक्खं, कामलाभाभिजप्पिनं॥

---

है, 'दूसरे लोग न जानें'—ऐसी वाणी बोलता है, शरीर से पराक्रम करता है। इसी प्रकार अपने वाग्दुश्चरितों को ...पूर्ववत्... मनोदुश्चरितों को छिपाने के लिये 'मेरे इन मनोदुश्चरितों को दूसरा कोई न जानें'—ऐसी इच्छा, सङ्कल्प... वाणी... शरीर से पराक्रम करता है। भिक्षुओ! मैं भिक्षु के इस कर्म को लौकिक दरिद्र के समान 'चक्रवृद्धि व्याज स्वीकार करना' मानता हूँ।

५. तदनन्तर, वहाँ उसके कुछ समझदार साथी उसके विषय में कहने लगते हैं—'यह ऐसा है', 'इसके ऐसे आचरण हैं' आदि। उनका उसके प्रति ऐसा कहना उस लौकिक दरिद्र पर 'साहूकार द्वारा किये गये तकाजे' के समान है।

६. तदनन्तर उस भिक्षु को किसी अरण्य में, किसी वृक्ष के नीचे या किसी शून्यागार में साधना करते समय उसके ये दुश्चरित प्रायश्चित के साथ उसके सम्मुख आते हैं। इन दुश्चरितों का इस प्रकार आना भिक्षुओ! मैं उस लौकिक दरिद्र के समान इसकी 'अनुचरिया' (मुकद्दमा) समझता हूँ।

७. भिक्षुओ! ऐसा दरिद्र, निर्धन एवं सम्पत्तिरहित भिक्षु काय, वाक् एवं मन से दुश्चरित कर, देहपात के बाद, मरणानन्तर नरक या पशुपक्षियों की योनि के बन्धन में बँध जाता है। भिक्षुओ! मैं भिक्षु के इस बन्धन को लौकिक दरिद्र के कारागर में जाने के समान समझता हूँ; क्योंकि भिक्षुओ! मैं लोक में ऐसा कोई एक बन्धन नहीं देखता जो निर्वाणप्राप्ति में इतना कठोर, इतना कष्टप्रद तथा विघ्नकारक हो, जैसा नरकगमन या पशुपक्षियोनि में जन्म लेना होता है।

"भिक्षुओ! लोक में दरिद्रता एवं उसकी निवृत्ति के लिये ऋण लेना—ये दोनों ही 'दुःख' कहलाते हैं। ऐसा ऋण लेकर लोक में सुख भोगाने वाला दरिद्र अन्त में विनाश को ही प्राप्त होता है॥

''तथेव अरियविनये, सद्धा यस्स न विज्जति।
अहिरीको अनोत्तप्पी, पापकम्मविनिब्बयो॥ [R.354]
''कायदुच्चरितं कत्वा, वचीदुच्चरितानि च।
मनोदुच्चरितं कत्वा, 'मा मं जञ्ञू' ति इच्छति॥
''सो संकप्पति कायेन, वाचाय उद चेतसा। [B.311]
पापकम्मं पवड्ढेन्तो, तत्थ तत्थ पुनप्पुनं॥
''सो पापकम्मो दुम्मेधो, जानं दुक्कटमत्तनो।
दलिद्दो इणमादाय, भुञ्जमानो विहञ्ञति॥
''ततो अनुचरन्ति नं, सङ्कप्पा मानसा दुखा। [N.68]
गामे वा यदि वारञ्ञे, यस्स विप्पटिसारजा॥
''सो पापकम्मो दुम्मेधो, जानं दुक्कटमत्तनो।
योनिमञ्ञतरं गन्त्वा, निरये वा पि बज्झति॥
''एतं हि बन्धनं दुक्खं, यम्हा धीरो पमुच्चति।
धम्मलद्धेहि भोगेहि, ददं चित्तं पसादयं॥
''उभयत्थ कटग्गाहो, सद्धस्स घरमेसिनो।

---

''अन्त में उस पर मुकद्दमा चलता है, कारागार भोगना पड़ता है। यह कारागार-बन्धन उस कामराग की पूर्ति न होने की अपेक्षा अधिक कष्टप्रद है॥

''उसी प्रकार, भिक्षुओ! आर्यविनय (बुद्धशासन) में जिसकी श्रद्धा, लज्जा या पापभीरुता न हो, और जो कायदुश्चरित, वाग्दुश्चरित एवं मनोदुश्चरित करके भी जो यह इच्छा करे कि मेरे इस दुश्चरित को दूसरा कोई न जाने। वह इन तीनों दुश्चरितों को करता हुआ उनको पुनः पुनः करने के लिये सङ्कल्प करता है॥

''इस प्रकार वह पापकर्मा दुर्बुद्धि साधक स्वकृत दुष्कर्मों की वास्तविकता जानने के बाद उसी प्रकार विनष्ट हो जायगा जैसे कोई कामभोगी ऋण के सहारे सुखभोग की कामना करता हुआ अन्त में विनष्ट हो जाता है॥

''तब ग्राम के बाहर या अरण्य में साधना करते समय उसके दुःखमय मानसिक सङ्कल्प एवं प्रायश्चितयुक्त उसका पीछा करते हैं। इसके परिणामस्वरूप वह पापी दुर्बुद्धि अपने पापमय कर्मों का स्मरण करता हुआ देहपात के बाद मरणानन्तर नरक अथवा किसी पशुपक्षियोनि में जाकर बँध जाता है॥

''यह बन्धन अत्यन्त कष्टप्रद है, इससे कोई धीर गम्भीर साधक ही छुटकारा पा सकता है। यदि वह अपने धर्मप्राप्त भोगों में से कुछ का दान करता हुआ तथागत के प्रति श्रद्धा प्रकट करे॥

''अन्यथा, उपर्युक्त पापात्मा मन्दबुद्धियों के लिये तो यह बन्धन दोनों ओर से गले की फाँस (गाँठ) ही है। अतः साधक गृहस्थ अपने लौकिक एवं पारमार्थिक हितों को ध्यान में रखते हुए इन पापमय कर्मों का त्याग करके ही पुण्य प्राप्त कर सकता है॥ (क)

दिट्ठधम्महितत्थाय, सम्परायसुखाय च।
एवमेतं गहट्ठानं, चागो पुञ्ञं पवड्ढति॥ (क)
"तथेव अरियविनये, सद्धा यस्स पतिट्ठिता।
हिरीमनो च ओत्तप्पी, पञ्ञवा सीलसंवुतो॥
"एसो खो अरियविनये, 'सुखजीवी' ति वुच्चति।
निरामिसं सुखं लद्धा, उपेक्खं अधितिट्ठति॥
"पञ्च नीवरणे हित्वा, निच्चं आरद्धविरियो।
झानानि उपसम्पज्ज, एकोदि निपको सतो॥
"एवं ञत्वा यथाभूतं, सब्बसंयोजनक्खये।
सब्बसो अनुपादाय, सम्मा चित्तं विमुच्चति॥
"तस्स सम्माविमुत्तस्स, ञाणं चे होति तादिनो।
'अकुप्पा मे विमुत्ती' ति, भवसंयोजनक्खये॥
"एतं खो परमं ञाणं, एतं सुखमनुत्तरं।
असोकं विरजं खेमं, एतं आणण्यमुत्तमं" ति॥ (ख) ●

[B.312,R.355] **४. महाचुन्दसुत्तं** : १. एवं मे सुतं। एकं समयं आयस्मा महाचुन्दो चेतीसु विहरति सयंजातियं। तत्र खो आयस्मा महाचुन्दो भिक्खू आमन्तेसि—"आवुसो भिक्खवे" ति। "आवुसो" ति खो ते भिक्खू आयस्मतो महाचुन्दस्स पच्चस्सोसुं। आयस्मा महाचुन्दो एतदवोच—

---

इसी प्रकार, जिस साधक की आर्यविनय में स्थिर श्रद्धा है, जो इसके प्रति लज्जालु एवं पापभीरु है, प्रज्ञावान् एवं शील (सदाचार) से युक्त है॥

"ऐसा साधक ही इस आर्यविनय में 'सुखजीवी' कहलाने योग्य है निरामिष (अभौतिक=दिव्य) सुख का प्रापक एवं उपेक्षा ध्यान का लाभी होता है॥

"पाँचों नीरवणों (ध्यान सम्पत्ति के आवरणों) का त्याग कर ध्यान भावना में सतत उद्योगरत रहता है तथा सभी ध्यान भावनाओं को प्राप्त कर, स्मृति एवं बुद्धिसहित एकाग्रता में प्रवृत्त रहता है॥

"इस प्रकार जो (साधना का) यथार्थ जानकर सभी संयोजनों का क्षय हो जाने पर सर्वत्र अनासक्त रहता हुआ चित्त को सांसारिक कर्मों से पूर्णत: विमुक्त कर लेता है॥

"वैसे सम्यग्विमुक्त को, भवसंयोजन क्षीण हो जाने पर 'मेरी यह चित्तविमुक्ति अब अकोप्य है'—ऐसा ज्ञान हो जाता है॥

"यही ज्ञान सर्वोत्कृष्ट (=परम) है, सुखमय है, अद्वितीय है, शोकरहित है, निर्मल है, क्षेमप्रद है। इसी को उत्तम 'आनृण्य' (ऋण का अभाव) कहते हैं॥" (ख) ●

**४. महाचुन्दसूत्र** : :

१. ऐसा मैंने सुना है। एक समय आयुष्मान् महाचुन्द चेदि प्रदेश के स्वयञ्जाति ग्राम में

२. "इधावुसो, धम्मयोगा भिक्खू झायी भिक्खू अपसादेन्ति—'इमे पन [N.69] झायिनोम्हा, झायिनोम्हा ति झायन्ति पज्झायन्ति निज्झायन्ति अवज्झायन्ति। किमिमे झायन्ति, किन्तिमे झायन्ति, कथं इमे झायन्ती' ति! तत्थ धम्मयोगा च भिक्खू नप्पसीदन्ति, झायी च भिक्खू नप्पसीदन्ति, न च बहुजनहिताय पटिपन्ना होन्ति बहुजनसुखाय बहुनो जनस्स अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानं।

३. "इध पनावुसो, झायी भिक्खू धम्मयोगे भिक्खू अपसादेन्ति—'इमे पन धम्मयोगम्हा, धम्म-योगम्हा ति उद्धता उन्नळा चपला मुखरा विकिण्णवाचा मुट्ठस्सती असम्पजाना असमाहिता विब्भन्तचित्ता पाकतिन्द्रिया। किमिमे धम्मयोगा, किन्तिमे धम्मयोगा, कथं इमे धम्मयोगा' ति! तत्थ झायी च भिक्खू नप्पसीदन्ति, धम्मयोगा च भिक्खू नप्पसीदन्ति, न च बहुजनहिताय पटिपन्ना होन्ति बहुजनसुखाय बहुनो जनस्स अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानं।

४. "इध पनावुसो, धम्मयोगा भिक्खू धम्मयोगानञ्ञेव भिक्खूनं वण्णं भासन्ति, नो झायीनं भिक्खूनं वण्णं भासन्ति। तत्थ धम्मयोगा च भिक्खू नप्पसीदन्ति, झायी [R.356] च भिक्खू नप्पसीदन्ति, न च बहुजनहिताय पटिपन्ना होन्ति बहुजनसुखाय बहुनो जनस्स अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानं।

---

साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ आयुष्मान् महाचुन्द ने भिक्षुओं को सम्बोधन किया—"आयुष्मन् भिक्षुओ!" भिक्षुओं ने भी, "आयुष्मन्" कहकर उत्तर दिया। तब आयुष्मान् महाचुन्द यह बोले—

२. "भिक्षुओ! यहाँ धर्मसाधना को ही उत्तम समझने वाले भिक्षु ध्यानी भिक्षुओं को यह कहकर अपने पास से दूर हटा देते हैं—'ये ध्यानयोगी—'हम ध्यान करते हैं'—ऐसा कहते हुए ध्यान भावना करते हैं, परन्तु ये ऐसा करते हुए क्षीण होते रहते हैं, बुझते रहते हैं, साधना की दृष्टि से अधोगामी होते रहते हैं। अरे ये क्या ध्यान करेंगे! किसका ध्यान करेंगे! कैसे ध्यान करेंगे!' परस्पर के इस व्यवहार से न वे धर्मसाधक भिक्षु प्रसन्न रह पाते हैं, और न वे ध्यानी भिक्षु ही प्रसन्न रह पाते हैं। ऐसी स्थिति में वे दोनों ही वर्ग अपनी चेष्टाओं को 'बहुजनहिताय, बहुजनसुखाय' नहीं लगा पाते और न वे देवता या मनुष्यों के हित सुख की कोई बात कर पाते हैं।

३. "इधर, आयुष्मानो! वे ध्यायी भिक्षु धर्माराधक भिक्षुओं को अपने पास से यह कहकर दूर भगा देते हैं—'ये अपने को धर्मसाधक कहते हैं; परन्तु ये वस्तुतः उद्धत, अहङ्कारी, चञ्चलेन्द्रिय, बकवादी, बिखरी बिखरी बात करने वाले, भ्रष्टस्मृति (बहके हुए), असम्प्रज्ञ (न जानने बूझने वाले), उन्मत्तचित्त एवं अदक्ष इन्द्रिय-चेष्टाओं से युक्त हैं, अतः ये क्या धर्मसाधना करेंगे, क्यों साधना करेंगे, कैसे साधना करेंगे!' इस पारस्परिक व्यवहार से न ये ध्यायी भिक्षु ही और न वे धर्मसाधक भिक्षु ही ...पूर्ववत्... हित सुख की कोई बात कर पाते हैं।

४. "पुनश्च, आयुष्मानो! वे स्वाध्यायाभ्यास भिक्षु अन्य स्वाध्यायी भिक्षुओं की ही प्रशंसा करते हैं, ध्यानी भिक्षुओं की नहीं; इस पारस्परिक व्यवहार से ...पूर्ववत्... हित सुख की कोई बात कर पाते हैं।

५. ''इध पनावुसो, झायी भिक्खू झायीनञ्ञेव भिक्खूनं वण्णं भासन्ति, नो धम्मयोगानं भिक्खूनं वण्णं भासन्ति। तत्थ झायी च भिक्खू नप्पसीदन्ति, धम्मयोगा च भिक्खू नप्पसीदन्ति, न च बहुजनहिताय पटिपन्ना होन्ति बहुजनसुखाय बहुनो जनस्स [B.313] अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानं।

६. ''तस्मातिहावुसो, एवं सिक्खितब्बं—'धम्मयोगा समाना झायीनं भिक्खूनं वण्णं भासिस्सामा' ति। एवं हि वो, आवुसो, सिक्खितब्बं। तं किस्स हेतु ? अच्छरिया हेते, आवुसो, पुग्गला दुल्लभा लोकस्मिं, ये अमतं धातुं कायेन फुसित्वा विहरन्ति। तस्मातिहावुसो, एवं सिक्खितब्बं—'झायी समाना धम्मयोगानं भिक्खूनं वण्णं भासिस्सामा' [N.70] ति। एवं हि वो, आवुसो, सिक्खितब्बं। तं किस्स हेतु ? अच्छरिया हेते, आवुसो, पुग्गला दुल्लभा लोकस्मिं ये गम्भीरं अत्थपदं पञ्ञाय अतिविज्झ पस्सन्ती'' ति॥

**५. पठमसन्दिट्ठिकसुत्तं** : १. अथ खो मोळियसीवको परिब्बाजको येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो मोळियसीवको परिब्बाजको भगवन्तं एतदवोच— '''सन्दिट्ठिको धम्मो, सन्दिट्ठिको धम्मो' ति, भन्ते, वुच्चति। कित्तावता नु खो भन्ते, सन्दिट्ठिको धम्मो होति अकालिको एहिपस्सिको ओपनेय्यिको पच्चत्तं वेदितब्बो विञ्ञूही'' ति ?

---

५. ''उधर, आयुष्मानो ! वे ध्यानसाधनारत भिक्षु अन्य ध्यानी भिक्षुओं की ही प्रशंसा करते हैं, धर्माराधक भिक्षुओं की नहीं; इस पारस्परिक व्यवहार से ...पूर्ववत्... हित सुख की कोई बात कर पाते हैं।

६. ''अत:, भिक्षुओ ! हम सबको यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये—'हम धर्माराधक भिक्षुओं के समान ध्यानी भिक्षुओं की भी प्रशंसा करेंगे।' ऐसा हमें सीखना चाहिये। वह किसलिये ? क्योंकि, आयुष्मानो ! ये ध्यानी भिक्षु ऐसा आश्चर्यमय कर्म करने के कारण लोक में दुर्लभ होते हैं कि जो निर्वाण धातु का काया से स्पर्श (साक्षात्कार) कर साधना करते हैं। और, आयुष्मानो ! हमें यह भी शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये—'ध्यायी होते हुए भी हम धर्माराधक भिक्षुओं की भी प्रशंसा करेंगे।' आयुष्मानो ! हमें ऐसा सीखना चाहिये। वह किसलिये ? क्योंकि, आयुष्मानो ! ये धर्माराधक भिक्षु भी ऐसा आश्चर्यमय कर्म करने के कारण लोक में दुर्लभ ही होते हैं कि जो (तथागत के) गम्भीर अर्थपद की गम्भीरता को स्वकीय विमल प्रज्ञा से भलीभाँति जान लेते हैं॥''

**५. प्रथम सान्दृष्टिकसूत्र** : :

१. तब मोलियसीवक परिव्राजक भगवान् के सम्मुख आया, तथा उनसे कुशल मङ्गल के प्रश्न कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए उसने भगवान् से पूछा—''भन्ते ! आप अपने धर्म के विषय में 'यह धर्म इस लोक में ही प्रत्यक्ष किया जा सकने योग्य है'—ऐसा कहते हैं। कैसे, भन्ते ! आपके द्वारा उपदिष्ट यह धर्म इस लोक में ही प्रत्यक्ष किया जा सकने योग्य है; इसकी आराधना के लिये कोई समयसीमा निर्धारित क्यों नहीं है; यह 'आओ, देखो' कहकर कैसे कुछ ही

२. "तेन हि, सीवक, तञ्ञेवेत्थ पटिपुच्छामि। यथा ते खमेय्य तथा नं [R.357] ब्याकरेय्यासि। तं किं मञ्ञसि, सीवक, सन्तं वा अज्झत्तं लोभं 'अत्थि मे अज्झत्तं लोभो' ति पजानासि, असन्तं वा अज्झत्तं लोभं 'नत्थि मे अज्झत्तं लोभो' ति पजानासी" ति?

"एवं, भन्ते"।

"यं खो त्वं, सीवक, सन्तं वा अज्झत्तं लोभं 'अत्थि मे अज्झत्तं लोभो' ति पजानासि, असन्तं वा अज्झत्तं लोभं 'नत्थि मे अज्झत्तं लोभो' ति पजानासि—एवं पि खो, सीवक, सन्दिट्ठिको धम्मो होति ...पे०...।

३. "तं किं मञ्ञसि, सीवक, सन्तं वा अज्झत्तं दोसं ...पे०... सन्तं वा अज्झत्तं मोहं ...पे०... सन्तं वा अज्झत्तं लोभधम्मं ...पे०... सन्तं वा अज्झत्तं दोसधम्मं ...पे०... सन्तं वा अज्झत्तं मोहधम्मं 'अत्थि मे अज्झत्तं मोहधम्मो' ति पजानासि, असन्तं वा अज्झत्तं [B.314] मोहधम्मं 'नत्थि मे अज्झत्तं मोहधम्मो' ति पजानासी" ति?

"एवं, भन्ते"।

"यं खो त्वं, सीवक, सन्तं वा अज्झत्तं मोहधम्मं 'अत्थि मे अज्झत्तं मोहधम्मो' ति पजानासि, असन्तं वा अज्झत्तं मोहधम्मं 'नत्थि मे अज्झत्तं मोहधम्मो' ति पजानासि—एवं खो, सीवक, सन्दिट्ठिको धम्मो होति अकालिको एहिपस्सिको ओपनेय्यिको पच्चत्तं [N.71] वेदितब्बो विञ्ञूही" ति।

---

समय में साक्षात्कार कराये जा सकने योग्य है? या कैसे (निर्वाण के) समीप ले जानेवाला है? तथा कैसे यह विद्वानों द्वारा प्रत्यात्मवेद्य (प्रत्येक पुद्गल द्वारा पृथक् पृथक् साक्षात्कार किये जा सकने योग्य) है?

२. "तो, सीवक! मैं यहाँ तुम से ही पूछता हूँ। तुम जैसा उचित समझो इसका उत्तर दो। तो क्या मानते हो, सीवक! तुम्हारे मन में लोभ के रहने पर तुम जान लेते हो न कि मुझमें लोभ ने घर कर रखा है, और उसके न रहने पर तुम यह भी जान लेते हो कि मेरे मन में लोभ नहीं है?"

"ऐसा ही है, भन्ते!"

"तो सीवक! तुम्हारे मन में लोभ के रहने पर लोभ का रहना जान लेना, और उसके न रहने पर उसका न रहना जान लेना ही मेरे धर्म का इसी लोक में या इसी शरीर के रहते प्रत्यक्ष किया जा सकने में प्रमाण है। ...पूर्ववत्...।

३. "तो क्या मानते हो, सीवक! तुम्हारे मन में द्वेष के रहने पर ...पूर्ववत्... तुम्हारे मन में मोह के रहने पर ...पूर्ववत्... तुम्हारे मन में उपस्थित लोभधर्म को ...द्वेषधर्म को... मोहधर्म को तुम जान लेते हो न कि मुझमें मोहधर्म है तथा उसके न रहने पर तुम यह भी जान लेते हो कि मुझमें मोहधर्म नहीं है?"

"ऐसा ही है, भन्ते!"

"तो, सीवक! तुम्हारे मन में मोहधर्म के रहने पर तुम जान लेते हो कि मुझमें मोहधर्म है, तथा न रहने पर यह भी जान लेते हो कि मुझमें मोहधर्म नहीं है; सीवक! इस प्रकार तुम्हारी यह

४. "अभिक्कन्तं, भन्ते, अभिक्कन्तं, भन्ते ...पे०... उपासकं मं, भन्ते, भगवा धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं" ति॥

**६. दुतियसन्दिट्ठिकसुत्तं :** १. अथ खो अञ्ञतरो ब्राह्मणो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—"'सन्दिट्ठिको धम्मो, [R.358] सन्दिट्ठिको धम्मो' ति, भो गोतम, वुच्चति। कित्तावता नु खो, भो गोतम, सन्दिट्ठिको धम्मो होति अकालिको एहिपस्सिको ओपनेय्यिको पच्चत्तं वेदितब्बो विञ्ञूही" ति?

२. "तेन हि, ब्राह्मण, तञ्ञेवेत्थ पटिपुच्छिस्सामि। यथा ते खमेय्य तथा नं ब्याकरेय्यासि। तं किं मञ्ञसि, ब्राह्मण, सन्तं वा अज्झत्तं रागं 'अत्थि मे अज्झत्तं रागो' ति पजानासि, असन्तं वा अज्झत्तं रागं 'नत्थि मे अज्झत्तं रागो' ति पजानासी" ति?

"एवं, भो"।

"यं खो त्वं, ब्राह्मण, सन्तं वा अज्झत्तं रागं 'अत्थि मे अज्झत्तं रागो' ति पजानासि, असन्तं वा अज्झत्तं रागं 'नत्थि मे अज्झत्तं रागो' ति पजानासि—एवं पि खो, ब्राह्मण सन्दिट्ठिको धम्मो होति ...पे०...।

३. "तं किं मञ्ञसि, ब्राह्मण, सन्तं वा अज्झत्तं दोसं ...पे०... सन्तं वा अज्झत्तं मोहं ...पे०... सन्तं वा अज्झत्तं कायसन्दोसं ...पे०... सन्तं वा अज्झत्तं वचीसन्दोसं ...पे०... सन्तं वा अज्झत्तं मनोसन्दोसं 'अत्थि मे अज्झत्तं मनोसन्दोसो' ति पजानासि, असन्तं वा अज्झत्तं मनो सन्दोसं 'नत्थि मे अज्झत्तं मनोसन्दोसो' ति पजानासी" ति?

"एवं, भो"।

---

स्वीकृति ही मेरे द्वारा उपदिष्ट धर्म को भी इसी लोक में प्रत्यक्ष (साक्षात्) किया जा सकने योग्य ...पूर्ववत्... प्रमाणित करती है।"

४. "आश्चर्य है, भन्ते! आपने बहुत ही उचित कहा, भन्ते ...पूर्ववत्... भन्ते! आज से मेरे जीवनपर्यन्त मुझको अपना शरणागत उपासक समझें॥"

**६. द्वितीय सान्दृष्टिकसूत्र　　:　:　　छह धर्म**

१. तब कोई ब्राह्मण भगवान् के सम्मुख आया। आकर उनसे कुशल मङ्गल पूछकर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए उसने भगवान् से यह प्रश्न किया—"श्रमण गौतम! आप अपने धर्म के विषय में—मेरा यह धर्म इस लोक में ही ...पूर्ववत्... साक्षात्कार किये जा सकने योग्य है? ...पूर्ववत्... मुझे अपना शरणागत उपासक समझें॥"

*[अनुपद में वर्णित प्रथम सान्दृष्टिक सूत्र के समान ही इस सूत्र का भी विस्तार कर लें। सम्बोधन में 'सीवक' के स्थान पर 'ब्राह्मण' शब्द रखें तथा 'लोभ', 'द्वेष' एवं 'मोह' के साथ साथ 'कायसन्दृष्टिक', 'वाक्सन्दृष्टिक' एवं 'मन:सन्दृष्टिक' शब्द भी रखें।]*

"यं खो त्वं, ब्राह्मण, सन्तं वा अज्झत्तं मनोसन्दोसं 'अत्थि मे अज्झत्तं मनोसन्दोसो' ति पजानासि, असन्तं वा अज्झत्तं मनोसन्दोसं 'नत्थि मे अज्झत्तं [N.72,B.315] मनोसन्दोसो' ति पजानासि—एवं खो, ब्राह्मण, सन्दिट्ठिको धम्मो होति अकालिको एहिपस्सिको ओपनेय्यिको पच्चत्तं वेदितब्बो विञ्ञूही" ति।

४. "अभिक्कन्तं, भो गोतम, अभिक्कन्तं, भो गोतम ...पे०... उपासकं मं भवं गोतमो धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं" ति॥ ●

**७. खेमसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथ-पिण्डिकस्स आरामे। तेन खो पन समयेन आयस्मा च खेमो आयस्मा च सुमनो सावत्थियं विहरन्ति अन्धवनस्मिं। अथ खो आयस्मा च खेमो आयस्मा च सुमनो येन भगवा [R.359] तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा खेमो भगवन्तं एतदवोच—

२. "यो सो, भन्ते, भिक्खु अरहं खीणासवो वुसितवा कतकरणीयो ओहितभारो अनुप्पत्तसदत्थो परिक्खीणभवसंयोजनो सम्मदञ्ञा विमुत्तो तस्स न एवं होति—'अत्थि मे सेय्यो ति वा अत्थि मे सदिसो ति वा अत्थि मे हीनो ति वा''' ति। इदमवोचायस्मा खेमो। समनुञ्ञो सत्था अहोसि। अथ खो आयस्मा खेमो "समनुञ्ञो मे सत्था" ति उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कामि।

३. अथ खो आयस्मा सुमनो, अचिरपक्कन्ते आयस्मन्ते खेमे, भगवन्तं एतदवोच—"यो सो, भन्ते, भिक्खु अरहं खीणासवो वुसितवा कतकरणीयो ओहितभारो अनुप्पत्तसदत्थो परिक्खीणभवसंयोजनो सम्मदञ्ञा विमुत्तो तस्स न एवं होति—'नत्थि मे सेय्यो ति वा नत्थि मे सदिसो ति वा नत्थि मे हीनो ति वा''' ति। इदमवोचायस्मा सुमनो।

---

**७. क्षेमसूत्र** : :

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्तीस्थित अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवन विहार में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय आयुष्मान् क्षेम एवं आयुष्मान् सुमन भगवान् के सम्मुख पहुँचे। पहुँचकर, भगवान् को प्रणाम कर, एक ओर बैठकर आयुष्मान् क्षेम ने भगवान् से यों निवेदन किया—

२. "भन्ते! जो भिक्षु ज्ञानी, क्षीणास्रव, ब्रह्मचर्यवास (धर्मसाधना) पूर्ण कर चुका हो, कृतकृत्य हो चुका हो, कन्धे से सांसारिक भार उतार चुका हो, लक्ष्य तक पहुँच चुका हो, सांसारिक बन्धनों को क्षीण कर चुका हो, सम्यग्ज्ञान प्राप्त कर विमुक्त हो चुका हो, उसको ऐसा विचार नहीं होता—'मुझसे कोई श्रेष्ठ है, या मुझसे कोई हीन है, या कोई मेरे तुल्य है'।" आयुष्मान् क्षेम ने अपने विचार यों प्रकट किये। भगवान् ने भी क्षेम के विचारों का अनुमोदन किया। तब आयुष्मान् क्षेमे, यह जानकर कि भगवान् ने भी मेरे विचारों का अनुमोदन कर दिया, आसन से उठकर भगवान् को प्रणाम कर चले गये।

३. तब आयुष्मान् सुमन ने भी, आयुष्मान् क्षेम के जाने के कुछ समय बाद ही, भगवान् के

समनुञ्ञो सत्था अहोसि। अथ खो आयस्मा सुमनो "समनुञ्ञो मे सत्था" ति उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कामि।

४. अथ खो भगवा, अचिरपक्कन्ते आयस्मन्ते च खेमे आयस्मन्ते च सुमने, भिक्खू आमन्तेसि—"एवं खो, भिक्खवे, कुलपुत्ता अञ्ञं ब्याकरोन्ति। अत्थो च वुत्तो [B.316] अत्ता व अनुपनीतो। अथ च पन इधेकच्चे मोघपुरिसा हसमानका मञ्ञे अञ्ञं [N.73] ब्याकरोन्ति। ते पच्छा विघातं आपज्जन्ती ति।

"न उस्सेसु न ओमेसु, समत्ते नोपनीयरे।
खीणा जाति वुसितं ब्रह्मचरियं, चरन्ति संयोजनविप्पमुत्ता" ति॥ ●

**८. इन्द्रियसंवरसुत्तं** : १. "इन्द्रियसंवरे, भिक्खवे, असति इन्द्रियसंवरविपन्नस्स [R.360] हतूपनिसं होति सीलं; सीले असति सीलविपन्नस्स हतूपनिसो होति सम्मासमाधि; सम्मासमाधिम्हि असति सम्मासमाधिविपन्नस्स हतूपनिसं होति यथाभूतञाणदस्सनं; यथाभूतञाणदस्सने असति यथाभूतञाणदस्सविपन्नस्स हतूपनिसो होति निब्बिदाविरागो; निब्बिदाविरागे असति निब्बिदाविरागविपन्नस्स हतूपनिसं होति विमुत्तिञाणदस्सनं। सेय्यथापि, भिक्खवे, रुक्खो साखापलासविपन्नो। तस्स पपटिका पि न पारिपूरिं गच्छति, तचो पि न पारिपूरिं गच्छति, फेग्गु पि न पारिपूरिं गच्छति, सारो पि न पारिपूरिं गच्छति।

---

सम्मुख अपने विचार यों प्रकट किये—"भन्ते! जो भिक्षु ज्ञानी क्षीणास्रव... पूर्ववत्... सम्यग्ज्ञान प्राप्त कर विमुक्त हो चुका हो, उसको ऐसा विचार कभी नहीं होता—'मुझसे कोई श्रेष्ठ है... पूर्ववत्... भगवान् को प्रणाम कर एक ओर चले गये।'

४. तब, आयुष्मान् क्षेम एवं आयुष्मान् सुमन के वहाँ से चले जाने के कुछ समय बाद भगवान् ने उपस्थित भिक्षुओं को यों समझाया—"भिक्षुओ! कुछ कुलपुत्र अपने ज्ञान का व्याख्यान इस प्रकार भी कर देते हैं कि अपने मन की बात भी कह देते हैं, तथा अपने को उसमें सम्मिलित भी नहीं करते। परन्तु कुछ दूसरे मूर्खजन ऐसे होते हैं कि वे दूसरों का परिहास करते हुए से ही अपनी बात पूर्ण करते हैं। ऐसे लोग बाद में विनाश को ही प्राप्त होते हैं।"

"जो न सांसारिक विषयों में आसक्त होते हैं, न उनमें लिप्त ही होते हैं, स्वयं को उनमें सम्मिलित नहीं मानते, ऐसे ज्ञानी साधकजनों की भवपरम्परा (जन्म-मरण) क्षीण हो जाती है, उनकी धर्मसाधना पूर्ण हो जाती है, तथा वे भवबन्धनक्षीण कर संसार में विचरण करते हैं॥"●

**८. इन्द्रियसंवरसूत्र : : छह धर्म**

१. "भिक्षुओ! साधक का इन्द्रिय संयम न रहने पर, ऐसे उस इन्द्रिय-असंयमी का शील भी नष्ट हो जाता है, साधनविहीन होने पर उसकी समाधि भी साधनविहीन हो जाती है, उसकी सम्यक्समाधि के साधनरहित होने पर उसका यथाभूत ज्ञानदर्शन भी असफल हो जाता है, उसके यथाभूत ज्ञानदर्शन के न रहने पर उस यथाभूतज्ञानदर्शनविहीन के संसार के प्रति ग्लानि एवं वैराग्य भी क्षीण हो जाते हैं। तब उस ग्लानि एवं वैराग्य से हीन साधक का विमुक्तिज्ञानदर्शन भी समाप्त हो जाता है। जैसे, भिक्षुओ! कोई ऐसा वृक्ष हो जो शाखा एवं पत्रों से विहीन हो चुका हो, तब

एवमेव खो, भिक्खवे, इन्द्रियसंवरे असति इन्द्रियसंवरविपन्नस्स हतूपनिसं होति सीलं ...पे०... विमुत्तिञाणदस्सनं।

२. "इन्द्रियसंवरे, भिक्खवे, सति इन्द्रियसंवरसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति सीलं; सीले सति सीलसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति सम्मासमाधि; सम्मासमाधिम्हि सति सम्मासमाधिसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति यथाभूतञाणदस्सनं; यथाभूतञाणदस्सने सति यथाभूतञाणदस्ससम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति निब्बिदाविरागो; निब्बिदाविरागे सति निब्बिदाविरागसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति विमुत्तिञाणदस्सनं। सेय्यथापि, भिक्खवे, रुक्खो साखापलाससम्पन्नो। तस्स पपटिका पि पारिपूरिं गच्छति, तचो पि पारिपूरिं गच्छति, फेग्गु पि पारिपूरिं गच्छति, सारो पि पारिपूरिं गच्छति। एवमेव खो, भिक्खवे, [B.317] इन्द्रियसंवरे सति इन्द्रियसंवरसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति सीलं ...पे०... विमुत्ति-ञाणदस्सनं" ति। ●

**९. आनन्दसुत्तं** : १. अथ खो आयस्मा आनन्दो येनायस्मा [N.74,R.361] सारिपुत्तो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मता सारिपुत्तेन सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो आयस्मन्तं सारिपुत्तं एतदवोच—

२. "कित्तावता नु खो, आवुसो, सारिपुत्त, भिक्खु अस्सुतं चेव धम्मं सुणाति, सुता चस्स धम्मा न सम्मोसं गच्छन्ति, ये यस्स धम्मा पुब्बे चेतसा सम्फुट्ठपुब्बा ते च समुदाचरन्ति, अविञ्ञातं च विजानाती" ति?

"आयस्मा खो आनन्दो बहुस्सुतो। पटिभातु आयस्मन्तंयेव आनन्दं" ति।

"तेनहावुसो सारिपुत्त, सुणाहि, साधुकं मनसि करोहि; भासिस्सामी" ति।

---

उसकी बाहरी मोटी छाल भी धीरे धीरे नष्ट होती चलती है, त्वचा भी, सूक्ष्म छाल भी, तथा अन्त में उस वृक्ष का सार (स्कन्ध) भाग भी शनैः शनैः क्षीण होता जाता है; इसी प्रकार, भिक्षुओ! साधक का इन्द्रियसंयम न रहने पर ...पूर्ववत्... विमुक्तिज्ञानदर्शन भी समाप्त होता रहता है।

२. "परन्तु भिक्षुओ! साधक भिक्षु के इन्द्रियसंयत रहने पर उसका शील ...पूर्ववत्... *(अनुलोम क्रम से विस्तार कर लें।)* विमुक्तिज्ञानदर्शन भी सम्पन्न रहता है॥" ●

**९. आनन्दसूत्र : : छह धर्मों से युक्त आनन्द**

१. तब आयुष्मान् आनन्द आयुष्मान् सारिपुत्र के पास गये, तथा उनसे कुशल-मङ्गल पूछकर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्द ने आयुष्मान् सारिपुत्र से यह पूछा—

२. "आयुष्मन् सारिपुत्र! किस प्रकार कोई भिक्षु अश्रुत धर्म को भी सुन पाता है, तथा उसके सुने हुए धर्म स्मृति से विलुप्त नहीं होते, तथा जो धर्म कभी मन में धारण कर रखे थे, उनका पुनः स्मरण हो जाता है, और उसको अज्ञात का ज्ञान हो जाता है?"

"आयुष्मन् आनन्द! आप तो बहुश्रुत हैं, अतः आपही अपने इस प्रश्न का उत्तर बताइये?"

"एवमावुसो" ति खो आयस्मा सारिपुत्तो आयस्मतो आनन्दस्स पच्चस्सोसि। आयस्मा आनन्दो एतदवोच—

३. "इधावुसो सारिपुत्त, भिक्खु धम्मं परियापुणाति—सुत्तं गेय्यं वेय्याकरणं गाथं उदानं इतिवुत्तकं जातकं अब्भुतधम्मं वेदल्लं। सो यथासुतं यथापरियत्तं धम्मं वित्थारेन परेसं देसेति, यथासुतं यथापरियत्तं धम्मं वित्थारेन परेसं वाचेति, यथासुतं यथापरियत्तं धम्मं वित्थारेन सज्झायं करोति, यथासुतं यथापरियत्तं धम्मं चेतसा अनुवितक्केति अनुविचारेति मनसानुपेक्खति। यस्मिं आवासे थेरा भिक्खू विहरन्ति बहुस्सुता आगतागमा धम्मधरा विनयधरा मातिकाधरा तस्मिं आवासे वस्सं उपेति। ते कालेन कालं उपसङ्कमित्वा परिपुच्छति परिपञ्हति—'इदं, भन्ते, कथं; इमस्स क्वत्थो' ति ? ते तस्स आयस्मतो अविवटं [R.362] चेव विवरन्ति, अनुत्तानीकतं च उत्तानीकरोन्ति, अनेकविहितेसु च कङ्खाठानियेसु धम्मेसु कङ्खं पटिविनोदेन्ति। एत्तावता खो, आवुसो सारिपुत्त, भिक्खु अस्सुतं चेव धम्मं सुणाति, सुता चस्स धम्मा न सम्मोसं गच्छन्ति, ये चस्स धम्मा पुब्बे चेतसा सम्फुट्ठपुब्बा ते च समुदाचरन्ति, अविञ्ञातं च विजानाती" ति।

४. "अच्छरियं, आवुसो, अब्भुतं, आवुसो, याव सुभासितं चिदं आयस्मता [N.75,B.318] आनन्देन। इमेहि च मयं छहि धम्मेहि समन्नागतं आयस्मन्तं आनन्दं धारेम। आयस्मा हि आनन्दो धम्मं परियापुणाति—सुत्तं गेय्यं वेय्याकरणं गाथं उदानं इतिवुत्तकं

---

"तो, आयुष्मन् सारिपुत्र! सुनो, मैं इसका उत्तर देता हूँ। इसे सुनकर अपने मन में भली प्रकार बैठा लो।"

"ठीक है, आयुष्मन्!"—यह आयुष्मान् सारिपुत्र ने आयुष्मान् आनन्द को उत्तर दिया। आयुष्मान् आनन्द यों बोले—

३. "आयुष्मन् सारिपुत्र! यहाँ कोई भिक्षु (१) किसी धर्मविशेष का श्रवण करता है; जैसे—सूत्र, गेय, व्याकरण (व्याख्यान), गाथा, उदान, इत्युक्तक, जातक, अद्भुत धर्म या वेदल्ल (प्रश्नोत्तरयुक्त) धर्म। (२) वह उस यथाश्रुत, यथाज्ञात धर्म का दूसरे जिज्ञासुओं को उपदेश करता है, (३) स्वयं उस धर्म का विस्तृत स्वाध्याय करता है; (४) उसका अपने मन में चिन्तन, मनन एवं निदिध्यासन करता है, तर्क वितर्क करता है। (५) जिस आवास में बहुश्रुत, आगमज्ञ, धर्मधर, विनयधर, मातृकाधर स्थविर भिक्षु साधनारत रहते हैं, उस आवास में जाकर वह स्वयं जिज्ञासा करता है—"भन्ते! यह कैसे है ? या इसका क्या अर्थ है ?' (६) वे स्थविर भिक्षु उसको उसके प्रश्न का स्पष्ट एवं विस्तृत अर्थ बताते हैं, वहाँ जो उलझा हुआ है उसे सुलझा देते हैं, जहाँ विविध शङ्का-सन्देह उठते हैं उन शङ्का-सन्देहों का निराकरण कर देते हैं। इस उपाय से, आयुष्मन् सारिपुत्र! वह साधक भिक्षु अश्रुत को सुन लेता है, तथा उसके द्वारा श्रुत धर्म स्मृतिभ्रष्ट नहीं होते और उसको अज्ञात धर्मों का ज्ञान हो जाता है।"

४. "यह कितना आश्चर्य एवं अद्भुत है आनन्द! कि आपने यह अनुपम सुभाषित कहा। आपके मुख से यह सुभाषित सुनने के बाद हमें विश्वास हो गया है कि आप इन छह धर्मों से युक्त

जातकं अब्भुतधम्मं वेदल्लं। आयस्मा आनन्दो यथासुतं यथापरियत्तं धम्मं वित्थारेन परेसं देसेति, आयस्मा आनन्दो यथासुतं यथापरियत्तं धम्मं वित्थारेन परेसं वाचेति, आयस्मा आनन्दो यथासुतं यथापरियत्तं धम्मं वित्थारेन सज्झायं करोति, आयस्मा आनन्दो यथासुतं यथापरियत्तं धम्मं चेतसा अनुवितक्केति अनुविचारेति मनसानुपेक्खति। आयस्मा आनन्दो यस्मिं आवासे थेरा भिक्खू विहरन्ति बहुस्सुता आगतागमा धम्मधरा विनयधरा मातिकाधरा तस्मिं आवासे वस्सं उपेति। ते आयस्मा आनन्दो कालेन कालं उपसङ्कमित्वा परिपुच्छति परिपञ्हति—'इदं, भन्ते, कथं, इमस्स क्वत्थो' ति? ते आयस्मतो आनन्दस्स अविवटं चेव विवरन्ति, अनुत्तानीकतं च उत्तानीकरोन्ति, अनेकविहितेसु च कङ्खाठानियेसु धम्मेसु कङ्खं पटिविनोदेन्ती'' ति॥ ●

**१०. खत्तियसुत्तं** : १. अथ खो जाणुस्सोणि ब्राह्मणो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो जाणुस्सोणि ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—

२. ''खत्तिया, भो गोतम, किंअधिप्पाया, किंउपविचारा, किंअधिट्ठाना, [R.363] किंअभिनिवेसा, किंपरियोसाना'' ति?

''खत्तिया खो, ब्राह्मण, भोगाधिप्पाया पञ्ञूपविचारा बलाधिट्ठाना पथवीभिनिवेसा इस्सरियपरियोसाना'' ति।

३. ''ब्राह्मणा पन, भो गोतम, किंअधिप्पाया, किंउपविचारा, किंअधिट्ठाना, किंअभिनिवेसा, किंपरियोसाना'' ति?

---

हैं—१. आयुष्मान् आनन्द सूत्र, गेय आदि धर्मविशेष का ध्यानपूर्वक श्रवण करते हैं; २. आयुष्मान् आनन्द ध्यानपूर्वक सुने हुए धर्म का दूसरों को भी गम्भीरता से उपदेश करते हैं; ३. आयुष्मान् आनन्द ध्यानपूर्वक सुने हुए धर्म का स्वयं भी सतत स्वाध्याय करते हैं; ५. आयुष्मान् आनन्द उस धर्म के उठे शङ्का सन्देहों को दूर करने हेतु स्थविर भिक्षुओं का सङ्ग करते हैं; तथा आयुष्मान् आनन्द समय समय पर उन स्थविर भिक्षुओं से उस धर्म के विषय में प्रश्न एवं जिज्ञासा करते रहते हैं कि भन्ते! यह कैसे हैं? या इसका क्या अर्थ है? ६. तब वे स्थविर भिक्षु आप आनन्द को उस धर्म का स्पष्ट एवं विस्तृत अर्थ बताते हैं, उलझे को सुलझा देते हैं, तथा विविध शङ्का-सन्देहों का निराकरण करते रहते हैं॥'' ●

**१०. क्षत्रियसूत्र : : छह पुद्गलों के धर्म**

१. तब जानुश्रोणि ब्राह्मण भगवान् (बुद्ध) के पास आया, तथा भगवान् से कुशल मङ्गल पूछकर एक ओर बैठ गया एक ओर बैठे उस ब्राह्मण ने भगवान् से यह जिज्ञासा की—

२. ''भो गौतम! क्षत्रियों का क्या प्रधान अभिप्राय (इच्छा) होता है, क्या उपविचार (चिन्तन-मनन) होते हैं? क्या अधिष्ठान (निश्चय) होता है? क्या अभिनिवेश (झुकाव=प्रवृत्ति) होता है? तथा उनका अन्तिम लक्ष्य क्या होता है?''

''ब्राह्मण! क्षत्रियों का राज्यभोग ही प्रधान अभिप्राय होता है, प्रज्ञा ही उनका विचार होती है,

[N.76] "ब्राह्मणा खो, ब्राह्मण, भोगाधिप्पाया पञ्ञूपविचारा मन्ताधिट्ठाना यञ्ञाभिनिवेसा ब्रह्मलोकपरियोसाना" ति।

[B.319] ४. "गहपतिका पन, भो गोतम, किंअधिप्पाया, किंउपविचारा, किंअधिट्ठाना, किंअभिनिवेसा, किंपरियोसाना" ति?

"गहपतिका खो, ब्राह्मण, भोगाधिप्पाया पञ्ञूपविचारा सिप्पाधिट्ठाना कम्मन्ताभिनिवेसा निट्ठितकम्मन्तपरियोसाना" ति।

५. "इत्थी पन, भो गोतम, किंअधिप्पाया, किंउपविचारा, किंअधिट्ठाना, किंअभिनिवेसा, किंपरियोसाना" ति?

"इत्थी खो, ब्राह्मण, पुरिसाधिप्पाया अलङ्कारूपविचारा पुत्ताधिट्ठानाधिट्ठाना असपतीभिनिवेसा, इस्सरियपरियोसाना" ति।

६. "चोरा पन, भो गोतम, किंअधिप्पाया, किंउपविचारा, किंअधिट्ठाना, किंअभिनिवेसा, किंपरियोसाना" ति?

"चोरा खो, ब्राह्मण, आदानाधिप्पाया गहणूपविचारा सत्थाधिट्ठाना अन्धकाराभिनिवेसा अदस्सनपरियोसाना" ति।

---

उनके सभी निश्चय बल (शक्ति) पर आधृत होते हैं, पृथ्वी पर उनका एकमात्र अभिनिवेश (झुकाव) होता है तथा ऐश्वर्यभोग उनका अन्तिम लक्ष्य होता है।"

३. "भो गौतम! ब्राह्मणों का क्या प्रधान अभिप्राय होता है? क्या उपविचार होता है? क्या अधिष्ठान होता है? क्या अभिनिवेश होता है? तथा उनका अन्तिम लक्ष्य क्या होता है?"

"ब्राह्मण! ब्राह्मणों का भी भोग ही प्रधान अभिप्राय, प्रज्ञा उनका उपविचार तथा उनके सभी निश्चय मन्त्रों पर प्रतिष्ठित होते हैं और यज्ञों में उनका एकमात्र अभिनिवेश एवं ब्रह्मलोक प्राप्ति ही उनका चरम लक्ष्य होता है।

४. "भो गौतम! गृहपति (गृहस्थजन) क्या अभिप्राय वाले, क्या उपविचार वाले, क्या अधिष्ठान वाले, क्या अभिनिवेश वाले तथा क्या चरम लक्ष्य वाले होते हैं?"

"ब्राह्मण! गृहपति (वैश्य) भोग में अपनी वृत्ति रखने वाले, प्रज्ञा उपविचार वाले, शिल्प पर आधृत रहने वाले, कर्मों में (व्यापार में) अभिरुचि रखने वाले, स्वीकृत व्यापार को चरम कोटि पर पहुँचाने वाले होते हैं।"

५. "भो गौतम! स्त्री किस पर आधृत रहती है? उसके क्या विचार होते हैं? उसका क्या अधिष्ठान होता है? क्या अभिनिवेश होता है? तथा उसका अन्तिम लक्ष्य क्या होता है?"

"ब्राह्मण! स्त्री पुरुष पर आधृत होती है, अलङ्कारों पर उसका सतत ध्यान रहता है, पुत्रों पर आश्रित रहती है, उसकी कोई सौत न हो—यही वह चाहती रहती है, तथा उसको ऐश्वर्य की उपलब्धि होती रहे—यही उसका चरम लक्ष्य है।"

६. "भो गौतम! चौर किस पर आधृत रहते हैं? उनका सतत ध्यान (उपविचार) कहाँ रहता है? उनका अधिष्ठान क्या है? तथा उनका अभिनिवेश एवं चरम लक्ष्य क्या होता है?"

७. "समणा पन, भो गोतम, किंअधिप्पाया, किंउपविचारा, किंअधिट्ठाना, किंअभिनिवेसा, किंपरियोसाना" ति?

"समणा खो, ब्राह्मण, खन्तिसोरच्चाधिप्पाया पञ्ञूपविचारा सीलाधिट्ठाना आकिञ्चञ्ञाभिनिवेसा निब्बानपरियोसाना" ति।

८. "अच्छरियं, भो गोतम, अब्भुतं, भो गोतम! खत्तियानं पि भवं गोतमो जानाति अधिप्पायं च उपविचारं च अधिट्ठानं च अभिनिवेसं च परियोसानं च। ब्राह्मणानं पि भवं गोतमो जानाति ...पे०... गहपतीनं पि भवं गोतमो जानाति... इत्थीनं पि भवं गोतमो [R.364] जानाति... चोरानं पि भवं गोतमो जानाति... समणानं पि भवं गोतमो जानाति अधिप्पायं च उपविचारं च अधिट्ठानं च अभिनिवेसं च परियोसानं च। अभिक्कन्तं, भो गोतम ...पे०... उपासकं मं भवं गोतमो धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं" ति॥ ●

**११. अप्पमादसुत्तं** : १. अथ खो अञ्ञतरो ब्राह्मणो येन भगवा तेनुप- [N.77] सङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच— [B.320]

२. "अत्थि नु खो, भो गोतम, एको धम्मो भावितो बहुलीकतो यो उभो अत्थे समधिग्गय्ह तिट्ठति—दिट्ठधम्मिकं चेव अत्थं, यो च अत्थो सम्परायिको" ति?

---

"ब्राह्मण! चौरों का यही अभिप्राय रहता है कि जिससे जो मिले छीन लिया जाय, दूसरे की सम्पत्ति लेने में उनका सतत ध्यान रहता है, वे शस्त्रों पर ही आधृत रहते हैं, अन्धकार में ही उनकी प्रवृत्ति रहती है तथा (अपना कार्य=चौरी करते समय) दूसरों को न दिखायी दें—यही उनका चरम लक्ष्य रहता है।"

७. "भो गौतम! श्रमण किस अभिप्राय वाले, किस उपविचार वाले, किस अधिष्ठान वाले, किस अभिनिवेश वाले तथा किस अन्तिम लक्ष्य वाले होते हैं?"

"ब्राह्मण! श्रमण सहनशील एवं विनम्र स्वभाव वाले, प्रज्ञा पर सतत ध्यान रखने वाले, शील (सदाचार) अधिष्ठान वाले, आकिञ्चन्य (शून्य) में अभिनिवेश रखने वाले तथा निर्वाण को ही अपना चरम लक्ष्य मानते हैं।"

"आश्चर्य है, भो गौतम! अद्भुत है, भो गौतम! आप तो १. क्षत्रियों के भी, २. ब्राह्मणों के भी, ३. गृहपतियों के भी, ४. स्त्रियों के भी, ५. चौरों तथा ६. श्रमणों के भी अभिप्राय, उपविचार, अधिष्ठान, अभिनिवेश एवं चरम लक्ष्य जानते हैं। ...पूर्ववत्... आज से आप मुझको मेरे प्राण रहने तक अपना शरणागत उपासक समझें॥" ●

**११. अप्रमादसूत्र : : एक धर्मसाधना से उभयलोकप्राप्ति**

१. तब कोई ब्राह्मण भगवान् के सम्मुख आया तथा उनसे कुशल मङ्गल पूछकर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे उस ब्राह्मण ने भगवान् से यह प्रश्न किया—

२. "भो गौतम! क्या कोई ऐसा एक धर्म है, जिसकी साधना या अभ्यास करने पर साधक के दोनों ही अर्थ सिद्ध हो जायँ—इस लोक के तथा परलोक के भी?"

"अत्थि खो, ब्राह्मण, एको धम्मो भावितो बहुलीकतो यो उभो अत्थे समधिग्गय्ह तिट्ठति—दिट्ठधम्मिकं चेव अत्थं, यो च अत्थो सम्परायिको" ति।

३. "कतमो पन, भो गोतम, एको धम्मो भावितो बहुलीकतो यो उभो अत्थे समधिग्गय्ह तिट्ठति—दिट्ठधम्मिकं चेव अत्थं, यो च अत्थो सम्परायिको" ति ?

"अप्पमादो खो, ब्राह्मण, एको धम्मो भावितो बहुलीकतो उभो अत्थे समधिग्गय्ह तिट्ठति—दिट्ठधम्मिकं चेव अत्थं, यो च अत्थो सम्परायिको।

४. "सेय्यथापि, ब्राह्मण, यानि कानिचि जङ्गलानं पाणानं पदजातानि, सब्बानि तानि हत्थिपदे समोधानं गच्छन्ति; हत्थिपदं तेसं अग्गमक्खायति, यदिदं महन्तत्तेन। एवमेव खो, ब्राह्मण, अप्पमादो एको धम्मो भावितो बहुलीकतो उभो अत्थे समधिग्गय्ह तिट्ठति—दिट्ठधम्मिकं चेव अत्थं, यो च अत्थो सम्परायिको।

"सेय्यथापि, ब्राह्मण, कूटागारस्स या काचि गोपानसियो सब्बा ता कूटङ्गमा [R.365] कूटसमोसरणा, कूटं तासं अग्गमक्खायति; एवमेव खो, ब्राह्मण ...पे०... ।

"सेय्यथापि, ब्राह्मण, पब्बजलायको पब्बजं लायित्वा अग्गे गहेत्वा ओधुनाति निधुनाति निच्छादेति; एवमेव खो, ब्राह्मण ...पे०... ।

[N.78] "सेय्यथापि, ब्राह्मण, अम्बपिण्डिया वण्टच्छिन्नाय यानि कानिचि अम्बानि वण्टूपनिबन्धनानि सब्बानि तानि तदन्वयानि भवन्ति; एवमेव खो, ब्राह्मण ...पे०... ।

---

"हाँ, ब्राह्मण! है ऐसा एक धर्म, जिसकी साधना या अभ्यास करने पर साधक के दोनों ही अर्थ सिद्ध हो जायँ—इस लोक के भी तथा परलोक के भी।"

३. "भो गौतम! वह कौन सा एक धर्म है ...पूर्ववत्... परलोक के भी ?"

"ब्राह्मण! जैसे सभी जङ्गली प्राणियों के पदचिह्न हाथी के पदचिह्न में समा जाते हैं, अर्थात् हाथी का पैर उन सब प्राणियों में बड़ा होने के कारण श्रेष्ठ होता है; उसी प्रकार ब्राह्मण! साधक का अप्रमाद—यह एक धर्म ही साधना एवं अभ्यास करने पर उसके उभयविध प्रयोजन—ऐहलौकिक एवं पारलौकिक—सिद्ध कर सकता है। (१)

"जैसे, ब्राह्मण! किसी कूटागार की सभी धरण (बल्ली) कूट की ओर ही मुख किये हुई, कूट की ओर ही झुकी हुई तथा कूट पर ही आधृत होती हैं; उसी प्रकार ब्राह्मण...पूर्ववत्... सिद्ध कर सकता है। (२)

"जैसे, ब्राह्मण! कोई मूँज को कूटने वाला उसका अग्रभाग पकड़ कर ही उसको कूटता है, पीटता है, धुनता है; उसी प्रकार ब्राह्मण! ...पूर्ववत्... सिद्ध कर सकता है। (३)

"जैसे, ब्राह्मण! किसी आम्र वृक्ष से वृन्त टूटने के बाद भी आम्रफल उस वृन्त से सम्पृक्त रहते हैं, उस वृन्त की ओर ही झुके रहते हैं; उसी प्रकार ...ब्राह्मण! ...पूर्ववत्... सिद्ध कर सकता है। (४)

"जैसे, ब्राह्मण! सभी छोटे राजा चक्रवर्ती सम्राट् के अधीन होते हैं; उसी प्रकार ...पूर्ववत्... सिद्ध कर सकता है। (५)

"सेय्यथापि, ब्राह्मण, ये केचि खुद्दराजानो सब्बेते रञ्ञो चक्कवत्तिस्स अनुयन्ता भवन्ति, राजा तेसं चक्कवत्ती अग्गमक्खायति; एवमेव खो, ब्राह्मण ...पे०... ।

"सेय्यथापि, ब्राह्मण, या काचि तारकरूपानं पभा सब्बा ता चन्दस्स पभाय [B.321] कलं नाग्घन्ति सोळसिं, चन्दप्पभा तासं अग्गमक्खायति। एवमेव खो, ब्राह्मण, अप्पमादो एको धम्मो भावितो बहुलीकतो उभो अत्थे समधिग्गय्ह तिट्ठति—दिट्ठधम्मिकं चेव अत्थं, यो च अत्थो सम्परायिको।

"अयं खो, ब्राह्मण, एको धम्मो भावितो बहुलीकतो उभो अत्थे समधिग्गय्ह तिट्ठति—दिट्ठधम्मिकं चेव अत्थं, यो च अत्थो सम्परायिको" ति।

५. "अभिक्कन्तं, भो गोतम, अभिक्कन्तं, भो गोतम ...पे०... उपासकं मं भवं गोतमो धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं" ति॥ ●

**१२. धम्मिकसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा राजगहे विहरति गिज्झकूटे [R.366] पब्बते। तेन खो पन समयेन आयस्मा धम्मिको जातिभूमियं आवासिको होति सब्बसो जातिभूमियं सत्तसु आवासेसु। तत्र सुदं आयस्मा धम्मिको आगन्तुके भिक्खू अक्कोसति परिभासति विहिंसति वितुदति रोसेति वाचाय। ते च आगन्तुका भिक्खू आयस्मता धम्मिकेन अक्कोसियमाना परिभासियमाना विहेसियमाना वितुदियमाना रोसियमाना वाचाय पक्कमन्ति, न सण्ठन्ति, रिञ्चन्ति आवासं।

२. अथ खो जातिभूमकानं उपासकानं एतदहोसि—"मयं खो भिक्खुसङ्घं पच्चुपट्ठिता चीवरपिण्डपातसेनासगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारेन। अथ च पन [N.79]

---

"जैसे, ब्राह्मण! सभी तारासमूहों का सम्मिलित प्रकाश भी चन्द्रमा की चाँदनी की समता नहीं कर सकता, वह चाँदनी ही प्रधान कहलाती है; उसी प्रकार, ब्राह्मण! ...पूर्ववत्... सिद्ध कर सकता है। (६)

"इस प्रकार, ब्राह्मण! एक धर्म ही साधना किये जाने पर, अभ्यास किये जाने पर साधक के ऐहलौकिक एवं पारलौकिक—दोनों ही प्रयोजन सिद्ध कर सकता है।

"भो गौतम! आपने बहुत ही सुन्दर कहा, ...पूर्ववत्... भो गौतम! आप आज से मेरे जीवनपर्यन्त मुझको अपना शरणागत उपासक समझें॥ ●

**१२. धार्मिकसूत्र : : श्रमणधर्म का पालन हितकर**

१. एक समय भगवान् राजगृह के गृध्रकूट पर्वत पर साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय आयुष्मान् धार्मिक जातिभूमि में सात भिक्षुविहारों का आवासिक (स्थानप्रबन्धक) था। वहाँ वह आयुष्मान् धार्मिक आगन्तुक भिक्षुओं को कठोर वाणी द्वारा आक्रोशमय, द्वेषमय, क्रोधमय एवं व्यङ्ग्यवचन बोलता रहता था। उससे खिन्न एवं दु:खी होकर आगन्तुक भिक्षु उस विहार में न रह पाते थे, अत: वे उस विहार को छोड़कर आगे अन्यत्र चल देते थे, और वह आवास खाली कर देते थे।

२. तब उन विहारों को भिक्षुओं से रिक्त देखकर, जातिभूमिवासी उपासक यह सोचते थे—

आगन्तुका भिक्खू पक्कमन्ति, न सण्ठन्ति, रिञ्चन्ति, आवासं। को नु खो हेतु को पच्चयो येन आगन्तुका भिक्खू पक्कमन्ति, न सण्ठन्ति, रिञ्चन्ति आवासं'' ति? अथ खो जातिभूमकानं उपासकानं एतदहोसि—''अयं खो आयस्मा धम्मिको आगन्तुके भिक्खू अक्कोसति परिभासति विहिंसति वितुदति रोसेति वाचाय। ते च आगन्तुका भिक्खू [B.322] आयस्मता धम्मिकेन अक्कोसियमाना परिभासियमाना विहेसियमाना वितुदियमाना रोसियमाना वाचाय पक्कमन्ति, न सण्ठन्ति, रिञ्चन्ति आवासं। यन्नून मयं आयस्मन्तं धम्मिकं पब्बाजेय्यामा'' ति।

३. अथ खो जातिभूमका उपासका येन आयस्मा धम्मिको तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं धम्मिकं एतदवोचुं—''पक्कमतु, भन्ते, आयस्मा धम्मिको इमम्हा आवासा; अलं ते इध वासेना'' ति। अथ खो आयस्मा धम्मिको तम्हा आवासा अञ्ञं आवासं अगमासि। तत्र पि सुदं आयस्मा धम्मिको आगन्तुके भिक्खू अक्कोसति परिभासति विहिंसति वितुदति रोदेति वाचाय। ते च आगन्तुका भिक्खू आयस्मता धम्मिकेन [R.367] अक्कोसियमाना परिभासियमाना विहेसियमाना वितुदियमाना रोसियमाना वाचाय पक्कमन्ति, न सण्ठन्ति, रिञ्चन्ति आवासं।

४. अथ खो जातिभूमकानं उपासकानं एदतहोसि—''मयं खो भिक्खुसङ्घं पच्चुपट्ठिता चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारेन। अथ च पन आगन्तुका भिक्खू पक्कमन्ति, न सण्ठन्ति, रिञ्चन्ति आवासं। को नु खो हेतु को पच्चयो येन आगन्तुका भिक्खू पक्कमन्ति, न सण्ठन्ति, रिञ्चन्ति, आवासं'' ति? अथ खो जातिभूमकानं उपासकानं एतदहोसि—''अयं खो आयस्मा धम्मिको आगन्तुके भिक्खू

---

''हम भिक्षुसङ्घ की चीवर, पिण्डपात, शयनासन आदि से यथेष्ट सेवा करने का प्रयास करते हैं; फिर भी कोई भी भिक्षु यहाँ नहीं ठहरता, शीघ्र ही चला जाता है। इसमें क्या कारण है? ''तब सोच-विचार करने पर उन जातिभूमिवासी उपासकों को यह समझ में आया—''अवश्य ही यह आरामव्यवस्थापक आयुष्मान् धार्मिक आगन्तुक भिक्षुओं को आक्रोश एवं निन्दामय तथा व्यङ्ग्यात्मक कठोर वचन बोलता है, अतएव वे भिक्षु इससे क्लान्त होकर यहाँ नहीं ठहरते।

''तो क्यों न हम इस आयुष्मान् धार्मिक को इस आवास से निकाल दें।''

३. तब वे जातिभूमिवासी उपासक आयुष्मान् धार्मिक के पास गये और उससे यह कहा—''आयुष्मन् धार्मिक! आप इस आवास को छोड़ दें। अब आपका यहाँ कोई प्रयोजन नहीं है।'' तब वह आयुष्मान् धार्मिक उस आवास को छोड़कर अन्य आवास में चला गया। वहाँ भी वह आगन्तुक भिक्षुओं को अपनी कठोर एवं रूक्ष वाणी से आक्रोशमय निन्दात्मक एवं व्यङ्ग्ययुक्त वचन बोलकर आगन्तुक भिक्षुओं को दुःखी करने लगा। वे भी उसके इस रूक्ष व्यवहार से दुःखी एवं क्लान्त होकर उस आवास को भी खाली कर गये।

४. तब वहाँ के जातिभूमिवासी उपासकों को यह विचार हुआ—''हम ; भिक्षुसङ्घ की ...पूर्ववत्... क्यों न हम इस आयुष्मान् को इस आवास से निकाल दें।''

अक्कोसति परिभासति विहिंसति वितुदति रोसेति वाचाय। ते च आगन्तुका भिक्खू आयस्मता धम्मिकेन अक्कोसियमाना परिभासियमाना विहेसियमाना वितुदियमाना रोसियमाना वाचाय पक्कमन्ति, न सण्ठन्ति, रिञ्चन्ति आवासं। यन्नून मयं आयस्मन्तं धम्मिकं पब्बाजेय्यामा'' ति।

५. अथ खो जातिभूमका उपासका येनायस्मा धम्मिको तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं धम्मिकं एतदवोचुं—''पक्कमतु, भन्ते, आयस्मा धम्मिको इमम्हा पि आवासा; अलं ते इध वासेना'' ति। अथ खो आयस्मा धम्मिको तम्हा पि [N.80] आवासा अञ्ञं आवासं अगमासि। तत्र पि सुदं आयस्मा धम्मिको आगन्तुके भिक्खू अक्कोसति परिभासति विहिंसति वितुदति रोसेति वाचाय। ते च आगन्तुका भिक्खू आयस्मता धम्मिकेन अक्कोसियमाना परिभासियमाना विहेसियमाना वितुदियमाना रोसियमाना वाचाय पक्कमन्ति, न सण्ठन्ति, रिञ्चन्ति आवासं।

६. अथ खो जातिभूमकानं उपासकानं एदतहोसि—''मयं खो [B.323] भिक्खुसङ्घं पच्चुपट्ठिता चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारेन। अथ च पन आगन्तुका भिक्खू पक्कमन्ति, न सण्ठन्ति, रिञ्चन्ति आवासं। को नु को हेतु को पच्चयो येन आगन्तुका भिक्खू पक्कमन्ति, न सण्ठन्ति, रिञ्चन्ति आवासं'' ति? अथ खो जातिभूमकानं उपासकानं एतदहोसि—''अयं खो आयस्मा धम्मिको आगन्तुके भिक्खू अक्कोसति ...पे०...। यन्नून मयं आयस्मन्तं धम्मिकं पब्बाजेय्याम सब्बसो [R.368] जातिभूमियं सत्तहि आवासेही'' ति। अथ खो जातिभूमका उपासका येनायस्मा धम्मिको तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं धम्मिकं एतदवोचुं—''पक्कमतु, भन्ते, आयस्मा धम्मिको सब्बसो जातिभूमियं सत्तहि आवासेही'' ति।

अथ खो आयस्मतो धम्मिकस्स एतदहोसि—''पब्बाजितो खोम्हि जातिभूमकेहि उपासकेहि सब्बसो जातिभूमियं सत्तहि आवासेहि। कहं नु खो दानि गच्छामी'' ति? अथ खो आयस्मतो धम्मिकस्स एतदहोसि—''यन्नूनाहं येन भगवा तेनुपसङ्कमेय्यं'' ति।

७. अथ खो आयस्मा धम्मिको पत्तचीवरमादाय येन राजगहं तेन पक्कामि।

---

५. तब वे... उपासक ...पूर्ववत्...। एतदनन्तर वह आयुष्मान् धार्मिक उस आवास को भी छोड़कर अन्य आवास में चला गया। वहाँ भी उसने आगन्तुक भिक्षुओं से ...पूर्ववत्...।

६. तब जातिभूमिवासी उपासकों को यह विचार हुआ ...पूर्ववत्... ''क्यों न हम इस आयुष्मान् धार्मिक भिक्षु को अपने अधीन सातों आवासों से ही निकाल दें।'' उन्होंने यह निश्चयकर आयुष्मान् धार्मिक भिक्षु को सातों आवासों से ही निष्कासित कर दिया। तब आयुष्मान् धार्मिक को यह विचार हुआ—''अरे! इन जातिभूमिवासी उपासकों ने मुझको सातों ही आवासों से निकाल दिया, अब मैं कहाँ जाऊँ?'' अन्त में उसको यह बात ध्यान में आयी—''क्यों न मैं इस समस्या के समाधानहेतु भगवन् की शरण में चलूँ।''

अनुपुब्बेन येन राजगहं गिज्झकूटो पब्बतो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो आयस्मन्तं धम्मिकं भगवा एतदवोच—"हन्द कुतो नु त्वं, ब्राह्मण धम्मिक, आगच्छसी" ति?

"पब्बाजितो अहं, भन्ते, जातिभूमकेहि उपासकेहि सब्बसो जातिभूमियं सत्तहि आवासेही" ति।

"अलं, ब्राह्मण धम्मिक, किं ते इमिना, यं तं ततो ततो पब्बाजेन्ति, सो त्वं ततो ततो पब्बाजितो ममेव सन्तिके आगच्छसि।

[N.81] ८. "भूतपुब्बं, ब्राह्मण धम्मिक, सामुद्दिका वाणिजा तीरदस्सिं सकुणं गहेत्वा नावाय समुद्दं अज्झोगाहन्ति। ते अतीरदक्खिणिया नावाय तीरदस्सिं सकुणं मुञ्चन्ति। सो गच्छतेव पुरत्थिमं दिसं, गच्छति पच्छिमं दिसं, गच्छति उत्तरं दिसं, गच्छति दक्खिणं दिसं, गच्छति उद्धं, गच्छति अनुदिसं। सचे सो समन्ता तीरं पस्सति, तथागतको व [B.324] होति। सचे पन सो समन्ता तीरं न पस्सति तमेव नावं पच्चागच्छति। एवमेव खो, ब्राह्मण धम्मिक, यं तं ततो ततो पब्बाजेन्ति सो त्वं ततो ततो पब्बाजितो ममेव सन्तिके आगच्छसि।

९. "भूतपुब्बं, ब्राह्मण धम्मिक, रञ्ञो कोरब्यस्स सुप्पतिट्ठो नाम निग्रोधराजा [R.369] अहोसि पञ्चसाखो सीतच्छायो मनोरमो। सुप्पतिट्ठस्स खो पन, ब्राह्मण धम्मिक, निग्रोधराजस्स द्वादसयोजनानि अभिनिवेसो अहोसि, पञ्च योजनानि मूलसन्तानकानं।

---

७. तब वह आयुष्मान् धार्मिक भिक्षु अपने पात्र चीवर लेकर भगवान् की शरण में राजगृह पहुँचा, और भगवान् के सम्मुख पहुँच कर उनको प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे उस आयुष्मान् धार्मिक से भगवान् ने पूछा —"अरे! ब्राह्मण धार्मिक! इस समय कहाँ से आ रहे हो?"

"भन्ते! मुझको जातिभूमिवासी उपासकों ने उनके अधीन सातों आवासों से निकाल दिया (अब मैं क्या करूँ? कहाँ रहूँ?)"

"रहने भी दे, ब्राह्मण! तूँ तो जब तब जहाँ तहाँ से निकाला जाता है तो भाग कर मेरे पास चला आता है!

८."ब्राह्मण धार्मिक! प्राचीन समय में समुद्र के व्यापारी अपने जहाजों पर, समुद्र का किनारा ज्ञात करने के लिये, एक पक्षी रखा करते थे। व्यापारी उसको किनारे का ज्ञान करने के लिये जहाज से उड़ा दिया करते थे। वह जहाज से उड़कर बहुत दूर तक जा कर भी समुद्र का किनारा न देख कर पुनः उसी जहाज पर लौट आता था। इसी तरह, ब्राह्मण! तूँ भी जब किसी आवास से भगाया जाता है तो वहाँ से मेरे पास चला आता है।

९."ब्राह्मण धार्मिक! प्राचीन काल में राजा कौरव्य के राज्य में एक बहुत विशाल पञ्चविध शाखाओं वाला, ठण्ढी छाया वाला, मनोहर सुप्रतिष्ठ नामक वट वृक्ष (न्यग्रोधराज) था। ब्राह्मण! उस सुप्रतिष्ठ का बारह योजन लम्बा चौड़ा घेरा था। जिस में पाँच योजन लम्बी उसकी प्रधान

सुप्पतिट्ठस्स खो पन, ब्राह्मण धम्मिक, निग्रोधराजस्स ताव महन्तानि फलानि अहेसुं; सेय्यथापि नाम आळ्हकथालिका। एवमस्स सादूनि फलानि अहेसुं; सेय्यथापि नाम खुद्दं मधुं अनेळकं। सुप्पतिट्ठस्स खो पन, ब्राह्मण धम्मिक, निग्रोधराजस्स एकं खन्धं राजा परिभुञ्जति सद्धिं इत्थागारेन, एकं खन्धं बलकायो परिभुञ्जति, एकं खन्धं नेगमजानपदा परिभुञ्जन्ति, एकं खन्धं समणब्राह्मणा परिभुञ्जन्ति, एकं खन्धं मिगा परिभुञ्जन्ति। सुप्पतिट्ठस्स खो पन, ब्राह्मण धम्मिक, निग्रोधराजस्स न कोचि फलानि रक्खति, न च सुदं अञ्ञमञ्ञस्स फलानि हिंसन्ति।

१०. "अथ खो, ब्राह्मण धम्मिक, अञ्ञतरो पुरिसो सुप्पतिट्ठस्स निग्रोधराजस्स यावदत्थं फलानि भक्खित्वा साखं भञ्जित्वा पक्कामि। अथ खो, ब्राह्मण धम्मिक, सुप्पतिट्ठे निग्रोधराजे अधिवत्थाय देवताय एतदहोसि—'अच्छरियं वत, भो, अब्भुतं वत, भो! याव पापो मनुस्सो, यत्र हि नाम सुप्पतिट्ठस्स निग्रोधराजस्स यावदत्थं फलानि भक्खित्वा साखं भञ्जित्वा पक्कमिस्सति, यन्नून सुप्पतिट्ठो निग्रोधराजा आयतिं फलं न ददेय्या' ति। अथ खो, ब्राह्मण धम्मिक, सुप्पतिट्ठो निग्रोधराजा आयतिं फलं न अदासि।

११. "अथ खो, ब्राह्मण धम्मिक, राजा कोरब्यो येन सक्को [N.82,R.370] देवानमिन्दो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा सक्कं देवानमिन्दं एतदवोच—'यग्घे, मारिस, जानेय्यासि सुप्पतिट्ठो निग्रोधराजा फलं न देती' ति? अथ खो, ब्राह्मण धम्मिक, सक्को देवानमिन्दो तथारूपं इद्धाभिसङ्खारं अभिसङ्खासि, यथा भुसा वातवुट्ठि आगन्त्वा [B.325] सुप्पतिट्ठं निग्रोधराजं पवत्तेसि उम्मूलमकासि। अथ खो, ब्राह्मण धम्मिक, सुप्पतिट्ठे निग्रोधराजे अधिवत्था देवता दुक्खी दुम्मना अस्सुमुखी रुदमाना एकमन्तं अट्ठासि।

---

शाखाएँ ही थी। उस सुप्रतिष्ठ वृक्ष के इतने बड़े फल लगते थे जैसे आढक माप का कोई थाल हो। उसके फल मधु के समान मीठे होते थे। उस सुप्रतिष्ठ वृक्ष के एक भाग का उपयोग अपने परिवार सहित राजा करता था, एक भाग का उपयोग राजा की सेना करती थी, एक भाग का उसके नगरवासी प्रजाजन करते थे, एक भाग का उपयोग श्रमण ब्राह्मण करते थे तथा एक भाग का उपयोग पशु-पक्षी करते थे। इतने पर भी, उसका न कोई रखवाला था और न कोई उसके फलों को हानि ही पहुँचाता था।

१०. "ब्राह्मण! तब कभी कोई पुरुष उस सुप्रतिष्ठ न्यग्रोधराज के पास आया, और यथेष्ट फल खाकर चलते समय उसकी एक डाल तोड़ गया। तब, ब्राह्मण! उस वृक्ष की अधिष्ठात्री देवता ने विचार किया—"अब मनुष्य पापी होने लग गये हैं तभी तो यह मनुष्य यहाँ से यथेष्ट फल खाकर भी चलते समय डालें तोड़कर भाग गया। अब तो इस न्यग्रोधराज के फल नहीं लगें तो अच्छा है।" तब, ब्राह्मण! भविष्य में उस न्यग्रोधराज को फल लगने बन्द हो गये।

११. "तब, ब्राह्मण! राजा कौरव्य देवराज शक्र के पास गये, तथा उनसे यह बोले—'मार्ष! आप जानते हैं—हमारे सुप्रतिष्ठ न्यग्रोधराज ने फल देना बन्द कर दिया है।' तब देवेन्द्र शक्र ने अपने

१२. "अथ खो, ब्राह्मण धम्मिक, सक्को देवानमिन्दो येन सुप्पतिट्ठे निग्रोधराजे अधिवत्था देवता तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा सुप्पतिट्ठे निग्रोधराजे अधिवत्थं देवतं एतदवोच—'किं नु त्वं, देवते, दुक्खी दुम्मना अस्सुमुखी रुदमाना एकमन्तं ठिता' ति ?

'तथा हि पन मे, मारिस, भुसा वातवुट्ठि आगन्त्वा भवनं पवत्तेसि उम्मूलमकासी' ति।

'अपि नु त्वं, देवते, रुक्खधम्मे ठिताय भुसा वातवुट्ठि आगन्त्वा भवनं पवत्तेसि उम्मूलमकासी' ति ?

'कथं पन, मारिस, रुक्खो रुक्खधम्मे ठितो होती' ति ?

'इध, देवते, रुक्खस्स मूलं मूलत्थिका हरन्ति, तचं तचत्थिका हरन्ति, पत्तं पत्तत्थिका हरन्ति, पुप्फं पुप्फत्थिका हरन्ति, फलं फलत्थिका हरन्ति। न च तेन देवताय अनत्तमनता वा अभिनन्दि वा करणीया। एवं खो, देवते, रुक्खो रुक्खधम्मे ठितो होती' ति।

'अट्ठितायेव खो मे, मारिस, रुक्खधम्मे भुसा वातवुट्ठि आगन्त्वा भवनं पवत्तेसि उम्मूलमकासी' ति।

'सचे खो त्वं, देवते, रुक्खधम्मे तिट्ठेय्यासि, सिया ते भवनं यथापुरे' ति ?

[R.371] 'ठस्सामहं, मारिस, रुक्खधम्मे, होतु मे भवनं यथापुरे' ति।

---

ऋद्धिबल से ऐसी भयङ्कर वातवृष्टि की कि उसके कारण वह न्यग्रोध वृक्ष जड़ से ही उखड़ गया। तब, ब्राह्मण! उस वृक्ष की अधिष्ठात्री देवता दुःखी होती हुई एक तरफ खड़ी होकर रोने लगी।

१२. "तदनन्तर, देवराज शक्र उस न्यग्रोध वृक्ष की अधिष्ठात्री देवता के पास आये। पास आकर उस देवता से यों बोले—"देवते! एक तरफ खड़ी होकर इस तरह क्यों रो रही हो ?"

"मार्ष! मेरा वासस्थान भयङ्कर वातवृष्टि के कारण जड़ से उखड़ गया।"

"देवते! जब यह न्यग्रोध भयङ्कर वातवृष्टि के जड़ से उखड़ा, तब तुम क्या अपने 'वृक्षधर्म' का पालन कर रही थी ?"

"मार्ष! यह वृक्ष का 'वृक्षधर्म' क्या होता है ?"

"देवते! जिन को वृक्ष के मूल (जड़) से प्रयोजन है, वे उसका वह मूल ले जाते हैं, जिनको उस वृक्ष की छाल (त्वचा) से प्रयोजन है वे छाल ले जाते हैं, जिनको उनके फूलों से प्रयोजन हैं वे फूल ले जाते हैं, तथा जिनको उसके फलों के प्रयोजन हैं वे उसके फल ले जाते हैं। इन सबके कारण, उस वृक्ष की अधिष्ठात्री देवता को कोई दुःख या कष्ट नहीं मानना चाहिये। देवते! यही वृक्ष का 'वृक्षधर्म' है।"

"तब तो, मार्ष! मैं अपने वृक्षधर्म में स्थित नहीं थी, इसीलिये सम्भवतः मेरा वृक्ष वातवृष्टि के कारण समूल उखड़ गया।"

"देवते! यदि तुम अपने वृक्षधर्म में स्थित रहोगी तो तुम्हारा यह वासवृक्ष पुनः यथापूर्व (पहले की तरह) हो जायगा।"

"अवश्य, मार्ष! मैं अपने वृक्षधर्म में स्थित रहूँगी।"

१३. "अथ खो, ब्राह्मण धम्मिक, सक्को देवानमिन्दो तथारूपं इद्धाभिसङ्खारं अभिसङ्खासि, यथा भुसा वातवुट्ठि आगन्त्वा सुप्पतिट्ठं निग्रोधराजं उस्सापेसि, सच्छवीनि मूलानि अहेसुं। एवमेव खो, ब्राह्मण धम्मिक, अपि नु तं समणधम्मं ठितं जातिभूमका उपासका पब्बाजेसुं सब्बसो जातिभूमियं सत्तहि आवासेही" ति? [N.83]

"कथं पन, भन्ते, समणो समणधम्मे ठितो होती" ति?

"इध, ब्राह्मण धम्मिक, समणो अक्कोसन्तं न पच्चक्कोसति, रोसन्तं न पटिरोसति, भण्डन्तं न पटिभण्डति। एवं खो, ब्राह्मण धम्मिक, समणो समणधम्मे ठितो होती" ति।

"अट्ठितंयेव मं, भन्ते, समणधम्मे जातिभूमका उपासका पब्बाजेसुं सब्बसो जातिभूमियं सत्तहि आवासेही" ति।

१४. "भूतपुब्बं, ब्राह्मण धम्मिक, सुनेत्तो नाम सत्था अहोसि तित्थकरो [B.326] कामेसु वीतरागो। सुनेत्तस्स खो पन, ब्राह्मण धम्मिक, सत्थुनो अनेकानि सावकसतानि अहेसुं। सुनेत्तो सत्था सावकानं ब्रह्मलोकसहब्यताय धम्मं देसेसि। ये खो पन, ब्राह्मण धम्मिक, सुनेत्तस्स सत्थुनो ब्रह्मलोकसहब्यताय धम्मं देसेन्तस्स चित्तानि न पसादेसुं ते कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जिंसु। ये खो पन, ब्राह्मण धम्मिक, सुनेत्तस्स सत्थुनो ब्रह्मलोकसहब्यताय धम्मं देसेन्तस्स चित्तानि पसादेसुं ते कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जिंसु।

१५. "भूतपुब्बं, ब्राह्मण धम्मिक, मूगपक्खो नाम सत्था अहोसि ...पे०... अरनेमि

---

१३. "तब, ब्राह्मण! देवेन्द्र शक ने अपने ऋद्धिबल से पुनः वातवृष्टि उत्पन्न कर उस वृक्ष को पूर्ववत् यथास्थान खड़ा कर दिया। तथा वह वृक्ष पूर्ववत् हरा भरा एवं फलों और पुष्पों से लद गया। क्या, ब्राह्मण! तुमको अपने श्रमण-धर्म में स्थित रहते हुए उन जातिभूमि के उपासकों ने आवास से निकाल दिया था?"

"भन्ते!, कैसे कोई श्रमण 'श्रमणधर्म' में स्थित रहता है?"

**श्रमणधर्म** : "यहाँ, ब्राह्मण! जो श्रमण निन्दा करने वाले की स्वयं निन्दा नहीं करता, क्रोध करने वाले पर स्वयं क्रोध नहीं करता, कलह करनेवाले से भी स्वयं कलह नहीं करता—ऐसा श्रमण 'श्रमणधर्म में स्थित' कहलाता है।"

"तब तो उन जातिभूमि के उपासकों ने श्रमणधर्म का पालन न करते हुए ही मुझको उन सातों आवासों से निकाला है।"

१४. "ब्राह्मण धार्मिक! प्राचीन काल में कामभोगों में आसक्तिरहित **सुनेत्र** नामक तीर्थङ्कर शास्ता हुआ था। उस शास्ता के सैकड़ों श्रावक थे। वह उन श्रावकों को ब्रह्मलोक तक पहुँचने के मार्ग का उपदेश करता था। जो उस शास्ता के उस उपदेश पर श्रद्धा नहीं करते थे, वे देहपात के बाद, मरणानन्तर अपायभूत दुर्गतिमय नरकयोनि में जा गिरते थे। तथा जो उस शास्ता के उस उपदेश पर श्रद्धा रखते थे, वे मरणानन्तर सुगतिमय स्वर्गलोक में पहुँच जाते थे।

१५. "ब्राह्मण! प्राचीन काल में **मूकपक्ष** नामक शास्ता हुआ था... **अरनेमि** नामक शास्ता

नाम सत्था अहोसि... कुद्दालको नाम सत्था अहोसि... हत्थिपालो नाम सत्था अहोसि... [R.372] जोतिपालो नाम सत्था अहोसि तित्थकरो कामेसु वीतरागो। जोतिपालस्स खो पन, ब्राह्मण धम्मिक, सत्थुनो अनेकानि सावकसतानि अहेसुं। जोतिपालो सत्था सावकानं ब्रह्मलोकसहब्यताय धम्मं देसेसि। ये खो पन, ब्राह्मण धम्मिक, जोतिपालस्स सत्थुनो ब्रह्मलोकसहब्यताय धम्मं देसेन्तस्स चित्तानि न पसादेसुं ते कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जिसु। ये खो पन, ब्राह्मण धम्मिक, जोतिपालस्स सत्थुनो ब्रह्मलोकसहब्यताय धम्मं देसेन्तस्स चित्तानि पसादेसुं ते कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जिसु।

[N.84] १६. "तं किं मञ्ञसि, ब्राह्मण धम्मिक, यो इमे छ सत्थारे तित्थकरे कामेसु वीतरागे, अनेकसतपरिवारे ससावकसङ्घे पदुट्ठचित्तो अक्कोसेय्य परिभासेय्य, बहुं सो अपुञ्ञं पसवेय्या" ति? "एवं, भन्ते"।

"यो खो, ब्राह्मण धम्मिक, इमे छ सत्थारे तित्थकरे कामेसु वीतरागे अनेक–सतपरिवारे ससावकसङ्घे पदुट्ठचित्तो अक्कोसेय्य परिभासेय्य, बहुं सो अपुञ्ञं पसवेय्य। यो एकं दिट्ठिसम्पन्नं पुग्गलं पदुट्ठचित्तो अक्कोसति परिभासति, अयं ततो बहुतरं अपुञ्ञं [B.327] पसवति। तं किस्स हेतु? नाहं, ब्राह्मण धम्मिक, इतो बहिद्धा एवरूपिं खन्तिं वदामि, यथा मं सब्रह्मचारीसु। तस्मातिह, ब्राह्मण धम्मिक, एवं सिक्खितब्बं—'न नो समसब्रह्मचारीसु चित्तानि पुदुट्ठानि भविस्सन्ती' ति। एवं हि ते, ब्राह्मण धम्मिक, सिक्खितब्बं ति।

[R.373] "सुनेत्तो मूगपक्खो च, अरनेमि च ब्राह्मणो।

---

हुआ था... **कुद्दालक** नामक शास्ता हुआ था... **हस्तिपाल** नामक शास्ता हुआ था... **ज्योतिष्पाल** नामक शास्ता हुआ था जो कि कामराग में अनासक्त एवं एक सम्प्रदायविशेष का संस्थापक था। उसके सैकड़ों श्रावक थे। ...पूर्ववत्... सुगतिमय स्वर्गलोक में पहुँच जाते थे।

१६. "तो क्या मानते हो, ब्राह्मण! कोई इन छह तीर्थङ्कर वीतराग शास्ताओं के प्रति, जिनके सैकड़ों हजारों श्रावक थे, अपने मन में द्वेष भाव उत्पन्न कर उनकी निन्दा करें, उनको अपशब्द कहें तो क्या उसको पाप नहीं लगेगा?" "अवश्य लगेगा, भन्ते!"

"और, ब्राह्मण! इन छह शास्ताओं प्रति द्वेषचित्त होकर इनकी निन्दा करने वाले अपशब्द कहने वाले की अपेक्षा उसको अधिक पाप का भागी होना पड़ता है जो एक सम्यग्दृष्टिसम्पन्न पुद्गल के प्रति द्वेषभाव रखता हुआ उसकी निन्दा करता है, उसको अपशब्द कहता है। वह किसलिये? वह इसलिये कि मुझको अपने साथियों द्वारा की गयी सहनशीलता से बढ़कर किसी अन्य सहनशीलता का ज्ञान नहीं है। इसलिये, ब्राह्मण! तुमको यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये—"हमारे चित्त अपने सब्रह्मचारियों के प्रति कभी द्वेषयुक्त न हों'। ब्राह्मण! तुमको यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये।

"ब्राह्मण! सुनेत्र, मूकपक्ष, अरनेमि कुद्दालक शास्ता, हस्तिपाल माणव, एवं ज्योतिष्पाल

कुद्दालको अहु सत्था, हत्थिपालो च माणवो॥
"जोतिपालो च गोविन्दो, अहु सत्थपुरोहितो।
अहिंसका अतीतंसे, छ सत्थारो यसस्सिनो॥
"निरामगन्धा करुणेधिमुत्ता, कामसंयोजनातिगा।
कामरागं विराजेत्वा, ब्रह्मलोकूपगा अहुं॥
"अहेसुं सावका तेसं, अनेकानि सतानि पि।
निरामगन्धा करुणेधिमुत्ता, कामसंयोजनातिगा।
कामरागं विराजेत्वा, ब्रह्मलोकूपगा अहुं॥
"येते इसी बाहिरके, वीतरागे समाहिते।
पदुट्ठमनसङ्कप्पो, यो नरो परिभासति।
बहुं च सो पसवति, अपुञ्ञं तादिसो नरो॥
"यो चेकं दिट्ठिसम्पन्नं, भिक्खुं बुद्धस्स सावकं।
पदुट्ठमनसङ्कप्पो, यो नरो परिभासति।
अयं ततो बहुतरं, अपुञ्ञं पसवे नरो॥
"न साधुरूपं आसीदे, दिट्ठिट्ठानप्पहायिनं। [N.85]
सत्तमो पुग्गलो एसो, अरियसङ्घस्स वुच्चति॥
"अवीतरागो कामेसु, यस्स पञ्चिन्द्रिया मुदू।
सद्धा सति विरियं, समथो च विपस्सना॥

---

शास्ता तथा गोविन्द नामक शास्ता का पुरोहित हुआ था। भूतकाल में ये छह शास्ता अहिंसाव्रती एवं लोक में यशस्वी हुए थे॥

"ये अपनी साधना में पूर्ण (निरामगन्धा), करुणा ब्रह्मविहार से युक्त, कामबन्धनों से अतिक्रान्त, तथा सांसारिक वासनाओं की आसक्ति का त्याग कर ब्रह्मलोक में जाकर प्रतिष्ठित हुए थे॥

"इनके अनेक शत (हजार) श्रावक भी उपर्युक्त गुणों से युक्त थे, तथा वे भी ब्रह्मलोक में जाकर प्रतिष्ठित हुए थे॥

"और इनसे बाहर के ऋषि, यदि वे भी वीतराग एवं इन्द्रियसंयत हों, इनके प्रति अपना हृदय कलुषित कर जो मनुष्य इनकी निन्दा करता है, इनको अपशब्द बोलता है, वह बहुत अधिक पाप का भागी होता है। इतना ही नहीं, वह उन शास्ताओं की निन्दा करने से भी अधिक पाप का भागी होता है॥

"और जो एक सम्यग्दृष्टिसम्पन्न बौद्ध साधक के प्रति द्वेषभाव रखता हुआ उसकी निन्दा करता है या उसको अपशब्द बोलता है, वह भी अत्यधिक पाप का भागी होता है॥

"दृष्टिस्थानों का त्याग कर चुके साधुपुरुष को अपने किसी व्यवहार से कष्ट नहीं देना चाहिये; क्योंकि ऐसा साधक आर्य सङ्घ में श्रेष्ठ सत्पुरुष कहलाता है॥

"तादिसं भिक्खुमासज्ज, पुब्बेव उपहञ्ञति।
अत्तानं उपहन्त्वान, पच्छा अञ्ञं विहिंसति॥
"यो च रक्खति अत्तानं, रक्खितो तस्स बाहिरो। [B.328]
तस्मा रक्खेय्य अत्तानं, अक्खतो पण्डितो सदा'' ति॥

**धम्मिकवग्गो पञ्चमो॥**

**तस्सुद्दानं**

नागमिगसाला इणं, चुन्दं द्वे सन्दिट्ठिका दुवे। [R.374]
खेमइन्द्रिय आनन्द, खत्तिया अप्पमादेन धम्मिको ति॥

**पठमो पण्णासको समत्तो॥**

---

"जो कामभोगों में आसक्ति का त्याग कर चुका है, इसकी श्रद्धा, स्मृति, वीर्य, शमथ एवं विपश्यना—ये पाँचों ही इन्द्रियाँ निर्दोष होने के कारण मृदु (कोमल) हैं॥

"ऐसे भिक्षु को पाकर भी जो इसका अपमान करता है वह पहले अपना ही नाश कर रहा है। वह पहले अपना नाश कर, बाद में अन्य के नाश हेतु बढ़ता है॥

("इसके विपरीत) जो अपनी रक्षा करता है उसने मानो बाहर वालों की रक्षा कर ही ली। अत: सर्वप्रकार से बुद्धिमान् पुरुष को आत्मरक्षा करनी चाहिये, तभी वह 'अक्षत' रह सकता है''॥

**धार्मिकवर्ग पञ्चम सम्पन्न॥**

**इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची**

१. नागसूत्र, २. मृगशालासूत्र, ३. ऋणसूत्र, ४. महाचुन्दसूत्र, ५. प्रथम सान्दृष्टिकसूत्र, ६. द्वितीय सान्दृष्टिकसूत्र, ७. क्षेमसूत्र, ८. इन्द्रियसंवरसूत्र, ९. आनन्दसूत्र, १०. क्षत्रियसूत्र, ११. अप्रमादसूत्र, एवं १२. धार्मिकसूत्र॥

**प्रथम पञ्चाशत्क समाप्त॥**

# ६. महावग्गो

## दुतियो पण्णासको

**१. सोणसुत्तं[१] :** १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा राजगहे विहरति [B.329] गिज्झकूटे पब्बते। तेन खो पन समयेन आयस्मा सोणो राजगहे विहरति सीतवनस्मिं।

अथ खो आयस्मतो सोणस्स रहोगतस्स पटिसल्लीनस्स एवं चेतसो परिवितक्को उदपादि—"ये खो केचि भगवतो सावका आरद्धविरिया विहरन्ति, अहं तेसं अञ्ञतरो। अथ च पन मे न अनुपादाय आसवेहि चित्तं विमुच्चति, संविज्जन्ति खो पन मे कुले भोगा, सक्का भोगा च भुञ्जितुं पुञ्ञानि च कातुं। यन्नूनाहं सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तित्वा भोगे च भुञ्जेय्यं पुञ्ञानि च करेय्यं" ति।

२. अथ खो भगवा आयस्मतो सोणस्स चेतसा चेतोपरिवितक्कमञ्ञाय—सेय्यथापि नाम बलवा पुरिसो सम्मिञ्जितं वा बाहं पसारेय्य, पसारितं वा बाहं [N.86] सम्मिञ्जेय्य, एवमेव खो—गिज्झकूटे पब्बते अन्तरहितो सीतवने आयस्मन्तो सोणस्स सम्मुखे पातुरहोसि। निसीदि भगवा पञ्ञत्ते आसने। आयस्मा पि खो सोणो भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो आयस्मन्तं सोणं भगवा एतदवोच—

---

# ६. महावर्ग

## द्वितीय पञ्चाशत्क

**१. सोणसूत्र[१] : : छह धर्मों से युक्त भिक्षु आह्वनीय**

१. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) राजगृह में गृध्रकूट पर्वत पर साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय आयुष्मान् सोण राजगृह के शीतवन में साधना कर रहे थे।

उस समय एकान्त साधना में बैठे आयुष्मान् सोण के मन में यह विचार उत्पन्न हुआ—"भगवान् बुद्ध के निरन्तर साधनारत रहने वाले शिष्यों में मैं भी एक हूँ। परन्तु सचाई यह है कि मेरा चित्त आश्रवों से मुक्त नहीं हो पाया है। मेरे मन में अब भी गृहस्थ काल के भोग भोगने की इच्छा होती रहती है। वहाँ मुझको दो लाभ हैं, मैं उनका उपभोग भी कर सकता हूँ तथा उनके सहारे पुण्यप्राप्ति के कर्म भी कर सकता हूँ। अत: क्यों न अब यह धर्मसाधना छोड़कर पुन: गृहस्थधर्म में ही लौट जाऊँ, जिससे मैं वहाँ रहकर भोगों का भी यथेच्छ उपभोग कर सकूँगा तथा कुछ पुण्यकर्म भी कर सकूँगा।"

२. तब भगवान् ने आयुष्मान् सोण के इस मन:सङ्कल्प को अपने चित्त से जानकर, जैसे कोई बलवान् पुरुष अनायास ही अपनी सङ्कुचित बाहु को पसार लेता है तथा पसरी हुई बाहु को समेट लेता है; उसी प्रकार (भगवान्) गृध्रकूट पर्वत से अन्तर्हित होकर शीतवन में आयुष्मान् सोण के

---

१. यह सूत्र **महावग्ग** (विनयपिटक) के 'चम्मक्खन्धक' में भी '**सोणस्स पब्बज्जा**' शीर्षक से वर्णित है, अत: इसका विस्तार वहाँ भी (बौद्धभारती ग्रन्थमाला ३७ , पृ० ३०५ से ३१० तक) देखें।—स०।

[R.375] ''ननु ते, सोण, रहोगतस्स पटिसल्लीनस्स एवं चेतसो परिवितक्को उदपादि—'ये खो केचि भगवतो सावका आरद्धविरिया विहरन्ति, अहं तेसं अञ्ञतरो। अथ च पन मे न अनुपादाय आसवेहि चित्तं विमुच्चति, संविज्जन्ति खो पन मे कुले भोगा, सक्का भोगे च भुञ्जितुं पुञ्ञानि च कातुं। यन्नूनाहं सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तित्वा भोगे च भुञ्जेय्यं पुञ्ञानि च करेय्यं''' ति?

''एवं, भन्ते''।

[B.330] ''तं किं मञ्ञसि, सोण, कुसलो त्वं पुब्बे अगारियभूतो वीणाय तन्तिस्सरे'' ति?

''एवं, भन्ते''।

''तं किं मञ्ञसि, सोण, यदा ते वीणाय तन्तियो अच्चायता होन्ति, अपि नु ते वीणा तस्मिं समये सरवती वा होति कम्मञ्ञा वा'' ति? ''नो हेतं, भन्ते''।

''तं किं मञ्ञसि, सोण, यदा ते वीणाय तन्तियो अतिसिथिला होन्ति, अपि नु ते वीणा तस्मिं समये सरवती वा होति कम्मञ्ञा वा'' ति?

''नो हेतं, भन्ते''।

''यदा पन ते, सोण, वीणाय तन्तियो न अच्चायता होन्ति नातिसिथिला समे गुणे पतिट्ठिता, अपि नु ते वीणा तस्मिं समये सरवती वा होति कम्मञ्ञा वा'' ति?

''एवं, भन्ते''।

''एवमेव खो, सोण, अच्चारद्धविरियं उद्धच्चाय संवत्तति, अतिसिथिलविरियं [N.87] कोसज्जाय संवत्तति। तस्मातिह त्वं, सोण, विरियसमतं अधिट्ठहं, इन्द्रियानं च समतं पटिविज्झ, तत्थ च निमित्तं गण्हाही'' ति।

''एवं, भन्ते'' ति खो आयस्मा सोणो भगवतो पच्चस्सोसि। अथ खो भगवा आयस्मन्तं सोणं इमिना ओवादेन ओवदित्वा—सेय्यथापि नाम बलवा पुरिसो सम्मिञ्जितं वा बाहं पसारेय्य, पसारितं वा बाहं सम्मिञ्जेय्य, एवमेव खो—सीतवने अन्तरहितो गिज्झकूटे पब्बते पातुरहोसि।

---

सम्मुख प्रकट हुए। वहाँ प्रज्ञप्त आसन पर विराजमान हुए। आयुष्मान् सोण भी भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। तब भगवान् ने उससे यह पूछा—

''क्या आयुष्मन् सोण! वस्तुतः तुम्हें अभी एकान्तसाधना करते हुए यह विचार हुआ ...पूर्ववत्... कुछ पुण्यकर्म भी कर सकूँ?''

''हाँ, भन्ते!''

''तो क्या मानते हो, सोण! जब तुम गृहस्थ थे तब तुम वीणावादन में भी कुशल थे?''

''हाँ, भन्ते!''

''तो क्या मानते हो, सोण! वहाँ जब तुम्हारी वीणा के तार बहुत अधिक खिंच जाते थे तो क्या उस समय तुम्हारी उस वीणा से मधुर स्वर निकलते थे?'' ...पूर्ववत्...।

३. अथ खो आयस्मा सोणो अपरेन समयेन विरियसमतं अधिट्ठासि, इन्द्रियानं च समतं पटिविज्झि, तत्थ च निमित्तं अग्गहेसि। अथ खो आयस्मा सोणो एको [R.376] वूपकट्ठो अप्पमत्तो आतापी अहितत्तो विहरन्तो नचिरस्सेव—यस्सत्थाय कुलपुत्ता सम्मदेव अगारस्मा अनागारियं पब्बजन्ति तदनुत्तरं—ब्रह्मचरियपरियोसानं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहासि। "खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया" ति अब्भञ्ञासि। अञ्ञतरो च पनायस्मा सोणो अरहतं अहोसि।

४. अथ खो आयस्मतो सोणस्स अरहत्तप्पत्तस्स एतदहोसि—"यन्नूनाहं येन भगवा तेनुपसङ्कमेय्यं; उपसङ्कमित्वा भगवतो सन्तिके अञ्ञं ब्याकरेय्यं" ति। अथ [B.331] आयस्मा सोणो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा सोणो भगवन्तं एतदवोच—

"यो सो, भन्ते, भिक्खु अरहं खीणासवो वुसितवा कतकरणीयो ओहितभारो अनुप्पत्तसदत्थो परिक्खीणभवसंयोजनो सम्मदञ्ञा विमुत्तो, सो छ ठानानि अधिमुत्तो होति—नेक्खम्माधिमुत्तो होति, पविवेकाधिमुत्तो होति, अब्यापज्झाधिमुत्तो होति, तण्हाक्खयाधिमुत्तो होति, उपादानक्खयाधिमुत्तो होति, असम्मोहाधिमुत्तो होति।

५. "सिया खो पन, भन्ते, इधेकच्चस्स आयस्मतो एवमस्स—'केवलं सद्धामत्तकं नून अयमायस्मा निस्साय नेक्खम्माधिमुत्तो' ति। न खो पनेतं, भन्ते, एवं दट्ठब्बं। खीणासवो, भन्ते, भिक्खु वुसितवा कतकरणीयो करणीयं अत्तनो असमनुपस्सन्तो कतस्स वा [N.88] पटिचयं, खया रागस्स वीतरागत्ता नेक्खम्माधिमुत्तो होति, खया दोसस्स वीतदोसत्ता नेक्खम्माधिमुत्तो होति, खया मोहस्स वीतमोहत्ता नेक्खम्माधिमुत्तो होति।

६. "सिया खो पन, भन्ते, इधेकच्चस्स आयस्मतो एवमस्स—[R.377] 'लाभसक्कारसिलोकं नून अयमायस्मा निकामयमानो पविवेकाधिमुत्तो' ति। न खो पनेतं, भन्ते, एवं दट्ठब्बं। खीणासवो, भन्ते, भिक्खु वुसितवा कतकरणीयो करणीयं अत्तनो असमनुपस्सन्तो कतस्स वा पटिचयं, खया रागस्स वीतरागत्ता पविवेकाधिमुत्तो होति, खया दोसस्स वीतदोसत्ता पविवेकाधिमुत्तो होति, खया मोहस्स वीतदोसत्ता अब्यापज्झाधिमुत्तो होति, खया मोहस्स वीतमोहत्ता अब्यापज्झाधिमुत्तो होति।

७. "सिया खो पन, भन्ते, इधेकच्चस्स आयस्मतो एवमस्स—'सीलब्बतपरामासं नून अयमायस्मा सारतो पच्चागच्छन्तो अब्यापज्झाधिमुत्तो' ति। न खो पनेतं, भन्ते, एवं दट्ठब्बं। खीणासवो, भन्ते, भिक्खु वुसितवा कतकरणीयो करणीयं अत्तनो असमनुपस्सन्तो कतस्स वा पटिचयं, खया रागस्स वीतरागत्ता अब्यापज्झाधिमुत्तो होति, खया दोसस्स वीतदोसत्ता अब्यापज्झाधिमुत्तो होति, खया मोहस्स वीतमोहत्ता अब्यापज्झाधिमुत्तो होति।

---

"नहीं, भन्ते! ...पूर्ववत्... क्योंकि वह इन विषयों की अनित्यता, उत्पाद एवं विनाश को भलीभाँति समझ चुका है॥" ●

[B.332] ८. ''खया रागस्स वीतरागत्ता तण्हाक्खयाधिमुत्तो होति, खया दोसस्स वीतदोसत्ता तण्हाक्खयाधिमुत्तो होति, खया मोहस्स वीतमोहत्ता तण्हाक्खयाधिमुत्तो होति।

९. ''खया रागस्स वीतरागत्ता उपादानक्खयाधिमुत्तो होति, खया दोसस्स वीत-दोसत्ता उपादानक्खयाधिमुत्तो होति, खया मोहस्स वीतमोहत्ता उपादानक्खयाधिमुत्तो होति।

१०. ''खया रागस्स वीतरागत्ता असम्मोहाधिमुत्तो होति, खया दोसस्स वीतदोसत्ता असम्मोहाधिमुत्तो होति, खया मोहस्स वीतमोहत्ता असम्मोहाधिमुत्तो होति।

[N.89] ११. ''एवं सम्मा विमुत्तचित्तस्स, भन्ते, भिक्खुनो भुसा चे पि चक्खुविञ्ञेय्या रूपा चक्खुस्स आपाथं आगच्छन्ति, नेवस्स चित्तं परियादियन्ति। अमिस्सीकतमेवस्स चित्तं होति [R.378] ठितं आनेञ्जप्पत्तं वयं चस्सानुपस्सति। भुसा चे पि सोतविञ्ञेय्या सद्दा... घानविञ्ञेय्या गन्धा... जिव्हाविञ्ञेय्या रसा... कायविञ्ञेय्या फोट्ठब्बा... मनोविञ्ञेय्या धम्मा मनस्स आपाथं आगच्छन्ति, नेवस्स चित्तं परियादियन्ति। अमिस्सीकतमेवस्स चित्तं होति ठितं आनेञ्जप्पत्तं वयं चस्सानुपस्सति। सेय्यथापि, भन्ते, सेलो पब्बतो अच्छिद्दो असुसिरो एकग्घनो। अथ पुरत्थिमाय चे पि दिसाय आगच्छेय्य भुसा वातवुट्ठि नेव न सङ्कम्पेय्य न सम्पकम्पेय्य न सम्पवेधेय्य, अथ पच्छिमाय चे पि दिसाय आगच्छेय्य भुसा वातवुट्ठि... अथ उत्तराय चे पि दिसाय आगच्छेय्य भुसा वातवुट्ठि... अथ दक्खिणाय चे पि दिसाय आगच्छेय्य भुसा वातवुट्ठि नेव नं सङ्कम्पेय्य न सम्पकम्पेय्य न सम्पवेधेय्य; एवमेव खो, भन्ते, एवं सम्माविमुत्तचित्तस्स भिक्खुनो भुसा चे पि चक्खुविञ्ञेय्या रूपा चक्खुस्स आपाथं आगच्छन्ति, नेवस्स चित्तं परियादियन्ति। अमिस्सीकतमेवस्स चित्तं होति ठितं आनेञ्जप्पत्तं वयं चस्सानुपस्सति। भुसा चे पि सोतविञ्ञेय्या सद्दा... घानविञ्ञेय्या गन्धा... जिव्हाविञ्ञेय्या रसा... कायविञ्ञेय्या फोट्ठब्बा... मनोविञ्ञेय्या धम्मा मनस्स आपाथं आगच्छन्ति, नेवस्स चित्तं परियादियन्ति। अमिस्सीकतमेवस्स चित्तं होति ठितं आनेञ्जप्पत्तं वयं चस्सानुपस्सती ति।

[B.333] ''नेक्खम्मं अधिमुत्तस्स, पविवेकं च चेतसो।
अब्यापज्झाधिमुत्तस्स, उपादानक्खयस्स च॥

''तण्हाक्खयाधिमुत्तस्स, असम्मोहं च चेतसो।
दिस्वा आयतनुप्पादं, सम्मा चित्तं विमुच्चति॥

''तस्स सम्मा विमुत्तस्स, सन्तचित्तस्स भिक्खुनो।
कतस्स पटिचयो नत्थि, करणीयं न विज्जति॥

[R.379] ''सेलो यथा एकग्घनो, वातेन न समीरति।
एवं रूपा रसा सद्दा, गन्धा फस्सा च केवला॥

[N.90] ''इट्ठा धम्मा अनिट्ठा च, नप्पवेधेन्ति तादिनो।
ठितं चित्तं विप्पमुत्तं, वयं चस्सानुपस्सती'' ति॥

**२. फग्गुनसुत्तं :** १. तेन खो पन समयेन आयस्मा फग्गुनो आबाधिको होति दुक्खितो बाळ्हगिलानो। अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—''आयस्मा, भन्ते, फग्गुनो आबाधिको दुक्खितो बाळ्हगिलानो। साधु, भन्ते, भगवा येनायस्मा फग्गुनो तेनुपसङ्कमतु अनुकम्पं उपादाया'' ति। अधिवासेसि भगवा तुण्हीभावेन।

२. अथ खो भगवा सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठितो येनायस्मा फग्गुनो तेनुपसङ्कमि। अद्दसा खो आयस्मा फग्गुनो भगवन्तं दूरतो व आगच्छन्तं। दिस्वान मञ्चके समधोसि। अथ खो भगवा आयस्मन्तं फग्गुनं एतदवोच—''अलं, फग्गुन, मा त्वं मञ्चके समधोसि। सन्तिमानि आसनानि परेहि पञ्ञत्तानि, तत्थाहं निसीदिस्सामी'' ति। निसीदि भगवा पञ्ञत्ते आसने। निसज्ज खो भगवा आयस्मन्तं फग्गुनं एतदवोच—''कच्चि ते, फग्गुन, खमनीयं कच्चि यापनीयं? कच्चि ते दुक्खा वेदना पटिक्कमन्ति, नो अभिक्कमन्ति; पटिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो अभिक्कमो'' ति?

[B.334] ''न मे, भन्ते, खमनीयं न यापनीयं। बाळ्हा मे दुक्खा वेदना अभिक्कमन्ति, नो पटिक्कमन्ति; अभिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो पटिक्कमो।

''सेय्यथापि, भन्ते, बलवा पुरिसो तिण्हेन सिखरेन मुद्धनि अभिमत्थेय्य; एवमेव

---

**२. फग्गुनसूत्र : : समय से धर्मश्रवण के छह फल**

१. उस समय आयुष्मान् फग्गुन किसी भयङ्कर रोग के आक्रमण से अत्यधिक पीड़ित थे। तब आयुष्मान् आनन्द भगवान् (बुद्ध) के सम्मुख आये तथा उनको अभिवादन कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् से निवेदन किया—''भन्ते! आयुष्मान् फग्गुन किसी भयङ्कर रोग से अत्यधिक त्रस्त हैं। अच्छा हो कि आप भगवान् आयुष्मान् फग्गुन को देखने के लिये कृपापूर्वक वहाँ पधारे।'' भगवान् ने मौनभाव से आयुष्मान् आनन्द का निवेदन स्वीकार कर लिया।

२. तब भगवान् सायङ्काल एकान्त साधना से उठकर आयुष्मान् फग्गुन के पास आये। आयुष्मान् फग्गुन ने भगवान् को आते हुए दूर से ही देख लिया। देखकर वह मञ्च को व्यवस्थित करने लगा। यह देखकर भगवान् ने कहा—''रहने दो, फग्गुन! तुम अपना मञ्च (मेरे बैठने के लिये) व्यवस्थित न करो। मैं दूसरे बिछे आसन पर बैठ जाऊँगा।'' (यह कहकर) भगवान् दूसरे बिछे आसन पर विराज गये। विराज कर भगवान् आयुष्मान् फग्गुन से पूछने लगे—''फग्गुन! तुम ठीक तो हो! तुम्हारा समय ठीक से बीत रहा है ना! तुम्हें अपनी व्याधि का कम होना लग रहा है, या उसमें कुछ वृद्धि हो रही है?''

''भन्ते! मैं ठीक नहीं हूँ। मुझे अपनी व्याधि का कम होना नहीं लग रहा, अपितु वह बढ़ती ही जा रही है।

''भन्ते! जैसे कोई बलवान् पुरुष तीक्ष्ण मुद्गरशिखर (हथौड़ा) से शिर पर चोट मारे, वैसे ही

[R.380] खो मे, भन्ते, अधिमत्ता वाता मुद्धनि ऊहनन्ति। न मे, भन्ते, खमनीयं न यापनीयं। बाळ्हा मे दुक्खा वेदना अभिक्कमन्ति, नो पटिक्कमन्ति; अभिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो पटिक्कमो।

[N.91] "सेय्यथापि, भन्ते, बलवा पुरिसो दळ्हेन वरत्तक्खण्डेन सीसवेठनं ददेय्य; एवमेव खो मे, भन्ते, अधिमत्ता सीसे सीसवेदना। न मे, भन्ते, खमनीयं न यापनीयं। बाळ्हा मे दुक्खा वेदना अभिक्कमन्ति, नो पटिक्कमन्ति; अभिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो पटिक्कमो।

"सेय्यथापि, भन्ते, दक्खो गोघातको वा गोघातकन्तेवासी वा तिण्हेन गोविकन्तनेन कुच्छिं परिकन्तेय्य; एवमेव खो मे, भन्ते, अधिमत्ता वाता कुच्छिं परिकन्तन्ति। न मे, भन्ते, खमनीयं न यापनीयं। बाळ्हा मे दुक्खा वेदना अभिक्कमन्ति, नो पटिक्कमन्ति; अभिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो पटिक्कमो।

"सेय्यथापि, भन्ते, द्वे बलवन्तो पुरिसा दुब्बलतरं पुरिसं नानाबाहासु गहेत्वा अङ्गारकासुया सन्तापेय्युं सम्परितापेय्युं; एवमेव खो मे, भन्ते, अधिमन्तो कायस्मिं डाहो। न मे, भन्ते, खमनीयं न यापनीयं। बाळ्हा मे दुक्खा वेदना अभिक्कमन्ति, नो पटिक्कमन्ति; अभिक्कमोसानं पञ्ञायति, नो पटिक्कमो" ति। अथ खो भगवा आयस्मन्तं फग्गुनं धम्मिया कथाय सन्दस्सेत्वा समादपेत्वा समुत्तेजेत्वा सम्पहंसेत्वा उट्ठायासना पक्कामि।

३. अथ खो आयस्मा फग्गुनो अचिरपक्कन्तस्स भगवतो कालमकासि। तम्हि चस्स समये मरणकाले इन्द्रियानि विप्पसीदिंसु। अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा

---

मेरे शिर में उठती हुई वायु चोट मार रही है। इस चोट को मैं सहन नहीं कर पा रहा हूँ। मेरे शरीर में तीव्र वेदनाएँ बढ़ती ही जा रही है, ये कम होती नहीं जान पड़तीं। ...पूर्ववत्...।

"भन्ते! जैसे कोई चतुर कसाई (गोघातक) या उसका कोई साथी तीक्ष्ण छुरा लेकर किसी गौ का पेट काटता हो; इसी प्रकार, भन्ते! मेरे पेट में तीक्ष्ण वेदनाएँ हो रही हैं। वे बढ़ती ही दिखायी दे रही हैं, उनमें कोई कमी होती नहीं दिखायी देती।

"भन्ते! जैसे कोई दो बलवान् किसी निर्बल पुरुष को दोनों भुजाएँ पकड़कर उसे अग्नि के ढेर (राशि) में फेंकने का प्रयास करें; उस समय उसको जो दाह होता है; उसी प्रकार भन्ते! मेरे समस्त शरीर में अत्यधिक दाह हो रहा है। वह दाह बढ़ता ही जा रहा है, उसमें कोई कमी आती नहीं दिखायी देती। इस प्रकार मुझको अपनी शारीरिक वेदना में निरन्तर वृद्धि ही दिखायी दे रही है, उसमें कमी नहीं दिखायी देती।"

तब भगवान्, आयुष्मान् फग्गुन को धार्मिक कथाओं की देशना कर, उसको धर्म के प्रति उत्साहित कर आसन से उठकर चले आये।

३. तब उस आयुष्मान् फग्गुन का, भगवान् के पधारने के कुछ समय बाद देहपात हो गया। हाँ, इस मरणकाल के समय भी, उसकी सभी इन्द्रियाँ सुप्रसन्न ही रहीं; उनमें कोई विकृति नहीं आयी। तब आयुष्मान् आनन्द पुनः भगवान् की सेवा में पहुँचे। पहुँचकर, भगवान् को प्रणाम कर

तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं [R.381] निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—"आयस्मा, भन्ते, फग्गुनो अचिर-पक्कन्तस्स भगवतो कालमकासि। तम्हि चस्स समये मरणकाले इन्द्रियानि [B.335] विप्पसीदिंसू'' ति।

"किं, हानन्द, फग्गुनस्स भिक्खुनो इन्द्रियानि न विप्पसीदिस्सन्ति! फग्गुनस्स, आनन्द, भिक्खुनो पञ्चहि ओरम्भागियेहि संयोजनेहि चित्तं अविमुत्तं अहोसि। तस्स तं धम्मदेसनं सुत्वा पञ्चहि ओरम्भागियेहि संयोजनेहि चित्तं विमुत्तं।

४. "छयिमे, आनन्द, आनिसंसा कालेन धम्मस्सवने कालेन अत्थुपपरिक्खाय। कतमे छ? इधानन्द, भिक्खुनो पञ्चहि ओरम्भागियेहि संयोजनेहि चित्तं अविमुत्तं [N.92] होति। सो तम्हि समये मरणकाले लभति तथागतं दस्सनाय। तस्स तथागतो धम्मं देसेति आदिकल्याणं मज्झेकल्याणं परियोसानकल्याणं सात्थं सब्यञ्जनं, केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं पकासेति। तस्स तं धम्मदेसनं सुत्वा पञ्चहि ओरम्भागियेहि संयोजनेहि चित्तं विमुच्चति। अयं, आनन्द, **पठमो आनिसंसो** कालेन धम्मस्सवने।

५. "पुन च परं, आनन्द, भिक्खुनो पञ्चहि ओरम्भागियेहि संयोजनेहि चित्तं अविमुत्तं होति। सो तम्हि समये मरणकाले न हेव खो लभति तथागतं दस्सनाय, अपि च खो तथागतसावकं लभति दस्सनाय। तस्स तथागतसावको धम्मं देसेति आदिकल्याणं मज्झेकल्याणं परियोसानकल्याणं सात्थं सब्यञ्जनं, केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं पकासेति। तस्स तं धम्मदेसनं सुत्वा पञ्चहि ओरम्भागियेहि संयोजनेहि चित्तं विमुच्चति। अयं, आनन्द, **दुतियो आनिसंसो** कालेन धम्मस्सवने।

---

एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् से निवेदन किया—"भन्ते! वह आयुष्मान् फग्गुन, आपके वहाँ से पधार आने के कुछ समय बाद ही, मरणभाव को प्राप्त हो गया। परन्तु मरणानन्तर भी उसके शरीर की इन्द्रियों में कोई विकृति नहीं दिखायी दी थी।"

"आनन्द! उस की इन्द्रियों में विकृति क्यों आती! क्योंकि, आनन्द! उस का चित्त पाँचों अवरभागीय संयोजनों से पूर्णतः मुक्त हो चुका था। उसने मेरी धर्मदेशना सुनकर उसके प्रभाव से अपने चित्त को पाँचों अवरभागीय संयोजनों से मुक्त कर लिया था।

४. "आनन्द! समय पर धर्मश्रवण से, समय पर तत्त्व (आध्यात्मिक अर्थ) के सम्परीक्षण से छह लाभ (फल) होते हैं। कौन से छह? यहाँ, आनन्द! जिस साधक का चित्त पाँच अवरभागीय संयोजनों से मुक्त नहीं हो पाता है; वह साधक यदि मरणकाल में तथागत के दर्शन कर लेता है। उस समय तथागत उसको आदि मध्य एवं अन्त में कल्याणमय, ज्ञान से परिपूर्ण सार्थक पदों से धर्म की देशना करते हैं। ऐसी धर्मदेशना सुनकर उसका चित्त पाँचों अवरभागीय संयोजनों से छुटकारा पा जाता है। आनन्द! यह समय पर धर्मश्रवण का **प्रथम लाभ** है। (१)

५. "पुनः, आनन्द! जिस साधक भिक्षु का चित्त पाँच अवरभागीय संयोजनों से मुक्त नहीं होता; वह मरणकाल में किसी कारणवश तथागत के दर्शन तो प्राप्त नहीं कर पाता; परन्तु सौभाग्य

[R.382] ६. "पुन च परं, आनन्द, भिक्खुनो पञ्चहि ओरम्भागियेहि संयोजनेहि चित्तं अविमुत्तं होति। सो तम्हि समये मरणकाले न हेव खो लभति तथागतं दस्सनाय, न पि [B.336] तथागतसावकं लभति दस्सनाय; अपि च खो यथासुतं यथापरियत्तं धम्मं चेतसा अनुवितक्केति अनुविचारेति मनसानुपेक्खति। तस्स यथासुतं यथापरियत्तं धम्मं चेतसा अनुवितक्कयतो अनुविचारयतो मनसानुपेक्खतो पञ्चहि ओरम्भागियेहि संयोजनेहि चित्तं विमुच्चति। अयं, आनन्द, **ततियो आनिसंसो** कालेन अत्थुपपरिक्खाय।

७. "इधानन्द, भिक्खुनो पञ्चहि ओरम्भागियेहि संयोजनेहि चित्तं विमुत्तं होति, अनुत्तरे च खो उपधिसङ्खये चित्तं अविमुत्तं होति। सो तम्हि समये मरणकाले लभति तथागतं दस्सनाय। तस्स तथागतो धम्मं देसेति आदिकल्याणं मज्झेकल्याणं ...पे०... ब्रह्मचरियं पकासेति। तस्स तं धम्मदेसनं सुत्वा अनुत्तरे उपधिसङ्खये चित्तं विमुच्चति। अयं, आनन्द, **चतुत्थो आनिसंसो** कालेन धम्मस्सवने।

८. "पुन च परं, आनन्द, भिक्खुनो पञ्चहि ओरम्भागियेहि संयोजनेहि चित्तं विमुत्तं होति, अनुत्तरे च खो उपधिसङ्खये चित्तं अविमुत्तं होति। सो तम्हि समये मरणकाले [N.93] न हेव खो लभति तथागतं दस्सनाय, अपि च खो तथागतसावकं लभति दस्सनाय। तस्स तथागतसावको धम्मं देसेति आदिकल्याणं ...पे०... परिसुद्धं ब्रह्मचरियं पकासेति। तस्स तं धम्मदेसनं सुत्वा अनुत्तरे उपधिसङ्खये चित्तं विमुच्चति। अयं, आनन्द, **पञ्चमो आनिसंसो** कालेन धम्मस्सवने।

९. "पुन च परं, आनन्द, भिक्खुनो पञ्चहि ओरम्भागियेहि संयोजनेहि चित्तं

---

से उसको किसी तथागतशिष्य के दर्शन हो जायँ, वह तथागतशिष्य उसको आदि मध्य... पूर्ववत्... छुटकारा पा जाता है। आनन्द! यह समय पर धर्मश्रवण का **दूसरा लाभ** है। (२)

६. "पुनः, आनन्द! जिस साधक भिक्षु का चित्त पाँच अवरभागीय संयोजनों से मुक्त न हो, वह भिक्षु मरणकाल में किसी कारणवश तथागत या तथागतशिष्य का दर्शन न भी कर सके; परन्तु वह उस समय अपने यथाश्रुत एवं यथाअधीत धर्म का स्वचित्त से चिन्तन-मनन करता है। वह उस धर्म के चिन्तन-मनन के प्रभाव से स्वचित्त को पाँच अवरभागीय संयोजनों से मुक्त कर लेता है। आनन्द! समय पर धर्मचिन्तन-मनन का यह **तीसरा लाभ** है। (३)

७. "पुनः, आनन्द! जिस साधक भिक्षु का चित्त उन पाँच अवरभागीय संयोजनों से तो मुक्त हो चुका हो, परन्तु पुनर्जन्म के व्यामोह में फँसा हो। ऐसे साधक को मरणकाल में तथागत के दर्शन हो जायँ, वे उससे आदि मध्य... धर्मदेशना करें। ऐसी धर्मदेशना सुनकर उस साधक का चित्त पुनर्जन्म के मोह से भी छुटकारा पा जाता है—आनन्द! यह इस 'समय पर धर्मश्रवण' का **चतुर्थ लाभ** है। (४)

८. "पुनः, आनन्द! किसी साधक भिक्षु का चित्त ...पूर्ववत्... तथागत-शिष्य के दर्शन हो जायँ ...पूर्ववत्... उस साधक का चित्त पुनर्जन्म के मोह से भी छुटकारा पा जाय—आनन्द! यह 'समय पर धर्मश्रवण' का **पाँचवाँ लाभ** है। (५)

विमुत्तं होति, अनुत्तरे च खो उपधिसङ्खये चित्तं अविमुत्तं होति। सो तम्हि समये [R.383] मरणकाले न हेव खो लभति तथागतं दस्सनाय, न पि तथागतसावकं लभति दस्सनाय; अपि च खो यथासुतं यथापरियत्तं धम्मं चेतसा अनुवितक्केति अनुविचारेति मनसानुपेक्खति। तस्स यथासुतं यथापरियत्तं धम्मं चेतसा अनुवितक्कयतो अनुविचारयतो मनसानुपेक्खतो अनुत्तरे उपधिसङ्खये चित्तं विमुच्चति। अयं, आनन्द, **छट्ठो आनिसंसो** कालेन अत्थुपपरिक्खाय। इमे खो, आनन्द, छ आनिसंसा कालेन धम्मस्सवने कालेन अत्थुपपरिक्खाया'' ति॥ ●

**३. छळभिजातिसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा राजगहे विहरति गिज्झकूटे पब्बते। अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—''पूरणेन, भन्ते, कस्सपेन छळभिजातियो पञ्ञत्ता—तण्हाभिजाति पञ्ञत्ता, नीलाभिजाति [B.337] पञ्ञत्ता, लोहिताभिजातिं पञ्ञत्ता, हलिद्दाभिजाति पञ्ञत्ता, सुक्काभिजाति पञ्ञत्ता, परमसुक्काभिजाति पञ्ञत्ता।

२. ''तत्रिदं, भन्ते, पूरणेन कस्सपेन तण्हाभिजाति पञ्ञत्ता, ओरब्भिका सूकरिका साकुणिका मागविका लुद्दा मच्छघातका चोरा चोरघातका बन्धनागारिका ये वा पनञ्ञे पि केचि कुरूरकम्मन्ता।

३. ''तत्रिदं, भन्ते, पूरणेन कस्सपेन नीलाभिजाति पञ्ञत्ता, भिक्खू कण्टकवुत्तिका ये वा पनञ्ञे पि केचि कम्मवादा किरियवादा।

---

९. ''पुनः, आनन्द! किसी साधक भिक्षु का चित्त ...पूर्ववत्... न तथागत का या तथागत के शिष्य का दर्शन न पा सके; अपितु वह अपने यथाश्रुत एवं यथाअधीत धर्म का ही चिन्तन-मनन करे तो इसके कारण उसका चित्त पुनर्जन्म के मोह से छुटकारा पा जाय—आनन्द यह कहलाता है 'समय पर धर्मश्रवण' का **षष्ठ लाभ**। (६)

''इस प्रकार, आनन्द! 'समय पर धर्मश्रवण' तथा धर्मचिन्तन के छह लाभ होते हैं॥'' ●

**३. षडभिजातिसूत्र : : छह अभिजातियाँ**

१. एक समय भगवान् बुद्ध राजगृह के गृध्रकूट पर्वत पर साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय आयुष्मान् आनन्द भगवान् के सम्मुख ...पूर्ववत्... यह बोले—''भन्ते! पूरण काश्यप (अन्य तीर्थिक शास्ता) ने ये छह अभिजातियाँ (पुनर्जन्म) बतायी हैं—१. कृष्णाभिजाति, २. नीलाभिजाति, ३. लोहिता(रक्ता)भिजाति, ४. हरिद्रा(पीता)भिजाति, ५. शुक्ला(श्वेता) भिजाति, एवं ६. अतिशय शुक्लाभिजाति बतायी हैं।

२. ''वहाँ, भन्ते! उस पूरण काश्यप ने उस **तृष्णाभिजाति** का इस प्रकार वर्णन किया है कि लोक में जितने भी भेड़ों के व्यापारी या भेड़ों की हत्या करने वाले, शूकरों के, पक्षियों के, मृगों के व्यापारी या हत्यारे, शिकारी, मछुआरे, चोर, डाकू, बन्धन एवं मारपीट के सहारे से लूटपाट करने वाले या ऐसे ही अन्य क्रूर'कर्मा पुरुष तृष्णा के कारण इन ही योनियों में जन्म लेते हैं। (१)

४. "तत्रिदं, भन्ते, पूरणेन कस्सपेन लोहिताभिजाति पञ्ञत्ता, निगण्ठा [R.384] एकसाटका।

[N.94] ५. "तत्रिदं, भन्ते, पूरणेन कस्सपेन हलिद्दाभिजाति पञ्ञत्ता, गिही ओदातवसना अचेलकसावका।

६. "तत्रिदं, भन्ते, पूरणेन कस्सपेन सुक्काभिजाति पञ्ञत्ता, आजीवका आजीवकिनियो।

७. "तत्रिदं, भन्ते, पूरणेन कस्सपेन परमसुक्काभिजाति पञ्ञत्ता, नन्दो वच्छो किसो सङ्किच्चो मक्खलि गोसालो। पूरणेन, भन्ते, कस्सपेन इमा छळभिजातियो पञ्ञत्ता" ति।

८. "किं पनानन्द, पूरणस्स कस्सपस्स सब्बो लोको एतदब्भनुजानाति इमा छळभिजातियो पञ्ञापेतुं" ति? "नो हेतं, भन्ते"।

सेय्यथापि, आनन्द, पुरिसो दलिद्दो, अस्सको अनाळ्हिको, तस्स अकामकस्स बिलं ओलग्गेय्युं—'इदं ते, अम्भो पुरिस, मंसं च आदितब्बं, मूलं च अनुप्पदातब्बं' ति। एवमेव खो, आनन्द, पूरणेन कस्सपेन अप्पटिञ्ञाय एतेसं समणब्राह्मणानं इमा छळभिजातियो पञ्ञत्ता, यथा तं बालेन अब्यत्तेन अखेत्तञ्ञुना अकुसलेन।

---

३. "पुनः, भन्ते! उस पूरण काश्यप ने **नीलाभिजाति** में उनकी गणना की जो कण्टकजाति (दुष्टहृदय) के भिक्षु होते हैं जो विविध कर्मवादों में या क्रियावादों में उलझे रहते हैं। (२)

४. "भन्ते! इसी प्रकार उसने एकवस्त्रधारी निर्ग्रन्थों (जैनों) को **लोहिताभिजाति** कहा है। (३)

५. "भन्ते! उसी पूरण काश्यप ने **हरिद्राभिजाति** उन गृहस्थों को बताया है जो श्वेतवस्त्रधारी दिगम्बरों (निर्वस्त्रों) के उपासक हैं। (४)

६. "भन्ते! उसने आजीवक (निर्वस्त्र=नग्न) साधुओं एवं साध्वियों को **शुक्राभिजाति** बताया है। (५)

७. "तथा, भन्ते! उस पूरण काश्यप ने नन्द, वत्स, कृश, सांकृत्य, एवं मस्करि गोशाल को अतिशय **शुक्राभिजाति** बताया है। इस प्रकार, भन्ते! उस पूरण काश्यप ने ये छह अभिजातियाँ बतायी हैं।" (६)

८. "क्या, आनन्द! उस पूरण काश्यप की इस बात का सभी लोग अनुमोदन करते हैं?"

"नहीं, भन्ते!"

"जैसे कोई धन-सम्पत्तिविहीन कोई दरिद्र पुरुष हो, उसको कोई पुरुष मांस का टुकड़ा दे और कहे—'इसका भीतरी भाग खा लो, शेष (मूल) दूसरों को बाँट देना'। वैसे ही, आनन्द! उस मूर्ख, मन्दमति, तत्त्व के तल तक न पहुँचे पूरण काश्यप ने भी यह कह दिया कि श्रमण ब्राह्मणों की ये छह योनियाँ होती हैं। उसकी बात पर क्या ध्यान देना!

९. ''अहं खो पनानन्द, छळभिजातियो पञ्ञापेमि। तं सुणाहि, साधुकं मनसि करोहि; भासिस्सामी'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो [B.338] पच्चस्सोसि। भगवा एतदवोच—''कतमा चानन्द, छळभिजातियो? इधानन्द, एकच्चो कण्हाभिजातियो समानो कण्हं धम्मं अभिजायति। इध पनानन्द, एकच्चो कण्हाभिजातियो समानो सुक्कं धम्मं अभिजायति। इध पनानन्द, एकच्चो कण्हाभिजातियो समानो अकण्हं असुक्कं निब्बानं अभिजायति। इध पनानन्द, एकच्चो सुक्काभिजातियो समानो [R.385] कण्हं धम्मं अभिजायति। इध पनानन्द, एकच्चो सुक्काभिजातियो समानो सुक्कं धम्मं अभिजायति। इध पनानन्द, एकच्चो सुक्काभिजातियो समानो अकण्हं असुक्कं निब्बानं अभिजायति।

१०. ''कथं चानन्द, कण्हाभिजातियो समानो कण्हं धम्मं अभिजायति? इधानन्द, एकच्चो नीचे कुले पच्चाजातो होति—चण्डालकुले वा नेसादकुले वा वेनकुले वा रथकारकुले वा पुक्कुसकुले वा, दलिद्दे अप्पन्नपानभोजने कसिरवुत्तिके, यत्थ कसिरेन घासच्छादो लब्भति। सो च होति दुब्बण्णो दुद्दसिको ओकोटिमको बव्हाबाधो [N.95] काणो वा कुणी वा खञ्जो वा पक्खहतो वा, न लाभी अन्नस्स पानस्स वत्थस्स यानस्स मालागन्धविलेपनस्स सेय्यावसथपदीपेय्यस्स। सो कायेन दुच्चरितं चरति, वाचाय दुच्चरितं

---

९. ''परन्तु, आनन्द! मैं ये छह अभिजातियाँ (योनियाँ) मानता हूँ। उनको ध्यानपूर्वक सुनकर अपने मन में बैठा लो। मैं बताता हूँ।''

''अच्छा, भन्ते!'' कहकर आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य की।

भगवान् ने यह बताया—''आनन्द! ये छह अभिजातियाँ कौन-सी होती हैं? (१) यहाँ, आनन्द! कोई कृष्णाभिजातिक होकर कृष्णधर्म में ही पैदा होता है। (२) फिर, आनन्द! कोई कृष्णाभिजातिक होता हुआ भी शुक्ल धर्म में पैदा होता है। (३) कोई कृष्णाभिजातिक होता हुआ भी अकृष्ण, अशुक्ल निर्वाण को जान लेता है। (४) तथा, आनन्द! कोई शुक्लाभिजातिक होता हुआ भी कृष्णधर्म में ही पैदा होता है। (५) तथा, आनन्द! कोई शुक्लाभिजातिक होता हुआ शुक्ल धर्म में पैदा होता है। (६) तथा, आनन्द! कोई शुक्लाभिजातिक होता हुआ अकृष्ण अशुक्ल निर्वाण को जान लेता है।

१०. ''कैसे, आनन्द! कोई कृष्णाभिजातिक होता हुआ कृष्ण धर्म में ही पैदा होता है? यहाँ, आनन्द! कोई पुरुष नीच कुल में ही पैदा होता है, जैसे—चण्डाल कुल में, निषाद या वेनकुल में, रथकार या पुक्कुस कुल में, जो कि दरिद्र होते हैं, उनकी साधारण भोजनव्यवस्था भी अल्प ही हो पाती है, किसी प्रकार बहुत कठिनता से अपना जीवन-यापन कर पाते हैं, किसी तरह उनको कुछ दैनिक भोजन मिल जाय यही उनके लिये बहुत है! ऐसा पुरुष दुर्वर्ण (कुरूप), देखने में घृणोत्पादक, शरीर से वामन (लम्बाई एवं ऊँचाई से हीन), प्राय: रोगी रहने वाला, आँख से काणा, एक हाथ से लुञ्ज, लंगड़ा, जिसके शरीर का एक भाग शून्य हो, वह अन्न पान वस्त्र यान माला, गन्ध विलेपन द्रव्यों को न पाने वाला, शयन,रहने के लिये प्रकाशयुक्त गृह से विहीन ही होता है। वह

चरति, मनसा दुच्चरितं चरति। सो कायेन दुच्चरितं चरित्वा, वाचाय दुच्चरितं चरित्वा, मनसा दुच्चरितं चरित्वा कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति। एवं खो, आनन्द, कण्हाभिजातियो समानो कण्हं धम्मं अभिजायति।

११. "कथं चानन्द, कण्हाभिजातियो समानो सुक्कं धम्मं अभिजायति? इधानन्द, एकच्चो नीचे कुले पच्चाजातो होति—चण्डालकुले वा ...पे०... सेय्यावसथपदीपेय्यस्स। सो कायेन सुचरितं चरति, वाचाय सुचरितं चरति, मनसा सुचरितं चरति। सो कायेन सुचरितं चरित्वा, वाचाय सुचरितं चरित्वा, मनसा सुचरितं चरित्वा कायस्स भेदा परं मरणा सग्गं लोकं उपपज्जति। एवं खो, आनन्द, कण्हाभिजातियो समानो सुक्कं धम्मं अभिजायति।

१२. "कथं, चानन्द, कण्हाभिजातियो समानो अकण्हं असुक्कं निब्बानं अभिजायति? इधानन्द, एकच्चो नीचे कुले पच्चाजातो होति—चण्डालकुले वा ...पे०... । [B.339,R.386] सो च होति दुब्बण्णो दुद्दसिको ओकोटिमको। सो केसमस्सुं ओहारेत्वा कासायानि वत्थानि अच्छादेत्वा अगारस्मा अनगारियं पब्बजति। सो एवं पब्बजितो समानो पञ्च नीवरणे पहाय चेतसो उपक्किलेसे पञ्ञाय दुब्बलीकरणे, चतूसु सतिपट्ठानेसु सुप्पतिट्ठितचित्तो, सत्त बोज्झङ्गे यथाभूतं भावेत्वा अकण्हं असुक्कं निब्बानं अभिजायति। एवं खो, आनन्द, कण्हाभिजातियो समानो अकण्हं असुक्कं निब्बानं अभिजायति।

१३. "कथं, चानन्द, सुक्काभिजातियो समानो कण्हं धम्मं अभिजायति?

---

शरीर से, वाणी से एवं मन से कुकर्म करता रहता है; इस कारण, इस देहपात के बाद मरणानन्तर अपायमय, दुर्गतियुक्त नरक में उत्पन्न होता है। इस प्रकार, आनन्द! कृष्णाभिजातिक होता हुआ कोई पुरुष कृष्णधर्म (योनि) को प्राप्त करता है। (१)

११. "और कैसे, आनन्द! कोई पुरुष कृष्णाभिजातिक होता हुआ भी शुक्लधर्म (योनि) में उत्पन्न होता है? यहाँ, आनन्द! कोई नीच कुल में उत्पन्न होता है; जैसे—चाण्डाल कुल में ...पूर्ववत्... प्रकाशयुक्त गृह से विहीन ही होता है। परन्तु वह शरीर से, वाणी से एवं मन से सत्कर्म करता है; इस कारण, इस देहपात के बाद, मरणानन्तर, सुगतिमय स्वर्गलोक में उत्पन्न होता है। इस प्रकार, आनन्द! कोई पुरुष कृष्णाभिजातिक होता हुआ भी शुक्लधर्म (योनि) को पा जाता है। (२)

१२. "और कैसे, आनन्द! कोई पुरुष कृष्णाभिजातिक होता हुआ अकृष्ण एवं अशुक्ल योनि वाले निर्वाण तक पहुँच जाता है? यहाँ, आनन्द! कोई पुरुष नीच कुल में उत्पन्न होता है, जैसे— चाण्डाल कुल में ...पूर्ववत्... । वह यद्यपि दीखने में दुर्वर्ण, घृणोत्पादक, एवं शरीर से वामन होता है; (पन्तु) वह दाढ़ी-मूँछ मुंड़ाकर, काषाय वस्त्र पहन कर, घर से बेघर होकर प्रव्रजित हो जाता है। इस प्रकार प्रव्रजित हुआ वह (चित्त के) पाँच नीवरणों को दूर हटाकर, चित्त के उपक्लेशों को प्रज्ञा से दुर्बल कर, चार स्मृतिप्रस्थानों में स्वचित्त को सुप्रतिष्ठित कर, सात बोध्यङ्गों की यथाविधि भावना कर अकृष्ण अशुक्ल निर्वाण तक पहुँच जाता है। इस प्रकार, आनन्द! कृष्णाभिजातिक होता हुआ भी कोई पुरुष अकृष्ण अशुक्ल निर्वाण तक पहुँच जाता है। (३)

इधानन्द, एकच्चो उच्चे कुले पच्चाजातो होति—खत्तियमहासालकुले वा ब्राह्मण-महासालकुले वा गहपतिमहासालकुले वा, अड्ढे महद्धने महाभोगे पहूतजातरूपरजते पहुतवित्तूपकरणे पहूतधनञ्ञे। सो च होति अभिरूपो दस्सनीयो पासादिको परमाय [N.96] वण्णपोक्खरताय समन्नागतो, लाभी अन्नस्स पानस्स वत्थस्स यानस्स मालागन्धविलेपनस्स सेय्यावसथपदीपेय्यस्स। सो कायेन दुच्चरितं चरति, वाचाय दुच्चरितं चरति, मनसा दुच्चरितं चरति। सो कायेन दुच्चरितं चरित्वा, वाचाय दुच्चरितं चरित्वा, मनसा दुच्चरितं चरित्वा कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति। एवं खो, आनन्द, सुक्काभिजातियो समानो कण्हं धम्मं अभिजायति।

१४. ''कथं चानन्द, सुक्काभिजातियो समानो सुक्कं धम्मं अभिजायति? इधानन्द, एकच्चो उच्चे कुले पच्चाजातो होति—खत्तियमहासालकुले वा ...पे०... सेय्याव-सथपदीपेय्यस्स। सो कायेन सुचरितं चरति, वाचाय सुचरितं चरति, मनसा सुचरितं चरति। सो कायेन सुचरितं चरित्वा, वाचाय सुचरितं चरित्वा, मनसा सुचरितं चरित्वा कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जति। एवं खो, आनन्द, सुक्काभिजातियो समानो सुक्कं धम्मं अभिजायति।

१५. ''कथं, चानन्द, सुक्काभिजातियो समानो अकण्हं असुक्कं निब्बानं [R.387] अभिजायति? इधानन्द, एकच्चो उच्चे कुले पच्चाजातो होति—खत्तिय- [B.340] महासालकुले वा ब्राह्मणमहासालकुले वा गहपतिमहासालकुले वा, अड्ढे महद्धने महाभोगे

---

१३. ''और कैसे, आनन्द! कोई पुरुष शुक्लाभिजातिक होता हुआ भी कृष्णधर्म (योनि) में जाकर उत्पन्न होता है? यहाँ, आनन्द! कोई पुरुष उच्च कुल में उत्पन्न रोता है; जैसे—आढ्य, धनधान्यसम्पन्न, तथा अतिशय सोना चाँदी आदि सम्पत्ति वाले क्षत्रियमहासार कुल में, ब्राह्मणमहासार कुल में, गृहपतिमहासार कुल में उत्पन्न होता है। वह देखने में सुन्दर, नयनाभिराम, चित्ताह्लादक शरीर-सौन्दर्य से युक्त हो; अन्न, पान, वस्त्र, यान, माला, गन्धविलेपन एवं शय्या, तथा प्रकाशयुक्त घर आदि जीवन की सुखद सामग्री का अनायास ही लाभी हो। परन्तु वह काया, वाणी एवं मन से कुकृत्य ही करता रहता हो, इस कारण, इस देहपात के बाद, मरणानन्तर अपायभूत, दुर्गतिमय कृष्णधर्म (नरकयोनि) में जा गिरता है। (४)

१४. ''और कैसे, आनन्द! कोई पुरुष शुक्लाभिजातिक होता हुआ शुक्ल धर्म में उत्पन्न होता है? यहाँ, आनन्द! कोई पुरुष उच्च कुल में उत्पन्न होता है; जैसे—क्षत्रियमहासार कुल में... प्रकाशयुक्त घर आदि जीवनोपयोगी सुखद सामग्री का लाभी हो; परन्तु वह अपनी काया, वाणी या मन से सत्कृत्य ही करता रहता हो। इस कारण वह, इस देहपात के बाद, मरणानन्तर, सुगतिमय स्वर्गलोक में जाकर उत्पन्न होता है। इस प्रकार, आनन्द कोई शुक्लाभिजातिक होता हुआ शुक्लधर्म (स्वर्गलोक) में उत्पन्न होता है। (५)

१५. और कैसे, आनन्द! कोई शुक्लाभिजातिक होता हुआ अकृष्ण अशुक्ल धर्म निर्वाण तक पहुँच जाता है? यहाँ, आनन्द! कोई पुरुष उच्चकुल में ...पूर्ववत्... प्रकाशयुक्त घर आदि

पहूतजातरूपरजते पहूतवित्तूपकरणे पहूतधनधञ्ञे। सो च होति अभिरूपो दस्सनीयो पासादिको परमाय वण्णपोक्खरताय समन्नागतो, लाभी अन्नस्स पानस्स वत्थस्स यानस्स मालागन्धविलेपनस्स सेय्यावसथपदीपेय्यस्स। सो केसमस्सुं ओहारेत्वा कासायानि वत्थानि अच्छादेत्वा अगारस्मा अनगारियं पब्बजति। सो एवं पब्बजितो समानो पञ्च नीवरणे पहाय चेतसो उपक्किलेसे पञ्ञाय दुब्बलीकरणे, चतूसु सतिपट्ठानेसु सुप्पतिट्ठितचित्तो, सत्त बोज्झङ्गे यथाभूतं भावेत्वा अकण्हं असुक्कं निब्बानं अभिजायति। एवं खो, आनन्द, सुक्काभिजातियो समानो अकण्हं असुक्कं निब्बानं अभिजायति। इमा खो, आनन्द, छळभिजातियो'' ति॥

**४. आसवसुत्तं :** १. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति पाहुनेय्यो दक्खिणेय्यो अञ्जलिकरणीयो अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमेहि [N.97] छहि? इध, भिक्खवे, भिक्खुनो ये आसवा संवरा पहातब्बा ते संवरेन पहीना होन्ति, ये आसवा पटिसेवना पहातब्बा ते पटिसेवनाय पहीना होन्ति, ये आसवा अधिवासना पहातब्बा ते अधिवासनाय पहीना होन्ति, ये आसवा परिवज्जना पहातब्बा ते परिवज्जनाय पहीना होन्ति, ये आसवा विनोदना पहातब्बा ते विनोदनाय पहीना होन्ति, ये आसवा भावना पहातब्बा ते भावनाय पहीना होन्ति।

२. ''कतमे च, भिक्खवे, आसवा संवरा पहातब्बा ये संवरेन पहीना होन्ति? इध, भिक्खवे, भिक्खु पटिसङ्खा योनिसो चक्खुन्द्रियसंवरसंवुतो विहरति। यं हिस्स, भिक्खवे,

---

जीवनोपयोगी सामग्री का प्रापक होता है। वह दाढ़ी मूँछ मुंड़ाकर, काषाय वस्त्र पहन कर, घर से निकल कर प्रव्रजित हो जाता है। इस प्रकार प्रव्रजित हुआ वह पुरुष पाँच नीवरणों का त्याग कर, चित्त के उपक्लेशों को प्रज्ञा से दुर्बल कर, चार स्मृतिप्रस्थानों में स्वचित्त को सुप्रतिष्ठित कर, सात बोध्यङ्गों की यथार्थतः भावना (अभ्यास) कर, अकृष्ण अशुक्ल निर्वाण धर्म तक पहुँच जाता है। इस प्रकार आनन्द! वह शुक्लाभिजातिक होता हुआ अकृष्ण अशुक्ल निर्वाण तक पहुँच जाता है। इस प्रकार, आनन्द! ये छह अभिजातियाँ मेरे द्वारा अनुमोदित हैं॥'' (६)

**४. आश्रवसूत्र : : छह धर्मों से युक्त भिक्षु प्रणम्य**

१. ''भिक्षुओ! छह धर्मों से युक्त भिक्षु ही आह्वनीय (बुलाने योग्य), आतिथ्य के योग्य, दान के योग्य, तथा प्रणाम करने योग्य होता है। ऐसा भिक्षु लोक के लिये अनुपम पुण्यक्षेत्र है। किन छह धर्मों से? (१) यहाँ, भिक्षुओ! जिस भिक्षु के जो आश्रव संवर से प्रहातव्य हैं वे संवर से प्रहीण होते हैं; (२) जो आश्रव प्रतिसेवन (अभ्यास) से प्रहाण करने योग्य हैं वे प्रतिसेवन से प्रहीण होते हैं; (३) जो आश्रव अधिवासन (सहनशीलता=स्वीकृति) से प्रहातव्य हैं वे अधिवासना से प्रहीण होते हैं; (४) जो आश्रव परिवर्जन (त्याग) से प्रहातव्य हैं वे परिवर्जन से प्रहीण होते हैं; (५) जो आश्रव विनोदन (दूर करना) से प्रहातव्य हैं वे विनोदन से प्रहीण होते हैं; तथा (६) जो आश्रव भावना (अभ्यास) से प्रहातव्य हैं वे भावना से प्रहीण होते हैं।

**१. संवर से प्रहातव्य आश्रव :** २. ''भिक्षुओ! कौन से आश्रव संवर (संयम) से प्रहातव्य

चक्खुन्द्रियसंवरं असंवुतस्स विहरतो उप्पज्जेय्युं आसवा विघातपरिळाहा, [R.388] चक्खुन्द्रियसंवरं संवुतस्स विहरतो एवंस ते आसवा विघातपरिळाहा न होन्ति। पटिसङ्खा योनिसो सोतिन्द्रिय ...पे०... घानिन्द्रिय... जिव्हिन्द्रिय... कायिन्द्रिय... मनिन्द्रियसंवरसंवुतो विहरति। यं हिस्स, भिक्खवे, मनिन्द्रियसंवरं असंवुतस्स विहरतो उप्पज्जेय्युं [B.341] आसवा विघातपरिळाहा, मनिन्द्रियसंवरं संवुतस्स विहरतो एवंस ते आसवा विघातपरिळाहा न होन्ति। इमे वुच्चन्ति, भिक्खवे, आसवा संवरा पहातब्बा ये संवरेन पहीना होन्ति।

३. ''कतमे च, भिक्खवे, आसवा पटिसेवना पहातब्बा ये पटिसेवनाय पहीना होन्ति? इध, भिक्खवे, भिक्खु पटिसङ्खा योनिसो चीवरं पटिसेवति—'यावदेव सीतस्स पटिघाताय, उण्हस्स पटिघाताय, डंसमकसवातातपसिरिंसपसम्फस्सानं पटिघाताय, यावदेव हिरिकोपीनपटिच्छादनत्थं'। पटिसङ्खा योनिसो पिण्डपातं पटिसेवति—'नेव दवाय न मदाय न मण्डनाय न विभूसनाय, यावदेव इमस्स कायस्स ठितिया यापनाय, विहिंसूपरतिया ब्रह्मचरियानुग्गहाय, इति पुराणं च वेदनं पटिहङ्खामि, नवं च वेदनं न उप्पादेस्सामि, यात्रा च मे भविस्सति अनवज्जता च फासुविहारो च'। पटिसङ्खा योनिसो सेनासनं पटिसेवति—'यावदेव सीतस्स पटिघाताय, उण्हस्स पटिघाताय, डंसमकसवातातपसिरिंसपसम्फस्सानं पटिघाताय, यावदेव उतुपरिस्सयविनोदनपटिसल्लानारामत्थं'। पटिसङ्खा योनिसो गिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारं पटिसेवति—'यावदेव उप्पन्नानं वेय्याबाधिकानं वेदनानं

---

हैं, संवर से प्रहीण कहलाते हैं? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु क्रमपूर्वक प्रतिसङ्ख्यान कर चक्षुरिन्द्रिय के विषयों में संयमपूर्वक व्यवहार करता है, उस समय उसको इन विषयों में संयम न करने से जो पीड़ा एवं दाहकारक आश्रव उत्पन्न होते हैं; संयम करने पर वे पीड़ा एवं दाहकारक आश्रव उत्पन्न नहीं हो पाते। (१)

क्रमपूर्वक प्रतिसङ्ख्यान कर सूक्ष्मतया श्रोत्रेन्द्रिय के विषयों में ...पूर्ववत्...। (२)

क्रमपूर्वक प्रतिसङ्ख्यान कर सूक्ष्मतया घ्राणेन्द्रिय के विषयों में ...पूर्ववत्...। (३)

क्रमपूर्वक प्रतिसङ्ख्यान कर सूक्ष्मतया जिह्वेन्द्रिय के विषयों में ...पूर्ववत्...। (४)

क्रमपूर्वक प्रतिसङ्ख्यान कर सूक्ष्मतया कायेन्द्रिय के विषयों में ...पूर्ववत्...। (५)

क्रमपूर्वक प्रतिसङ्ख्यान कर सूक्ष्मतया मन इन्द्रिय के विषयों में ...पूर्ववत्...। (६)

''भिक्षुओ! ये कहलाते हैं—संवर से प्रहातव्य आश्रव जो संवर से प्रहीण होते हैं। (१)

**२. प्रतिसेवन से प्रहातव्य आश्रव :** ३. ''भिक्षुओ! प्रतिसेवन से प्रहातव्य कौन से आश्रव प्रतिसेवन से प्रहीण होते हैं? इस प्रतिसेवन (अभ्यासमार्ग) में भिक्षु क्रमपूर्वक सूक्ष्मतया अपने शरीर पर धारण करने योग्य **चीवर के विषय में** यह सोचता है—'मेरा उतने ही चीवर से प्रयोजन सिद्ध हो जायगा जितने से शरीर को ठण्ढ न लगे, गर्मी से रक्षा हो सके, मच्छर, डांस, हवा, धूप, साँप-बिच्छू आदि से रक्षा हो सके, तथा जितने चीवर से शरीर को लज्जा ढक सके'। (१)

''जो भिक्षु क्रमपूर्वक सूक्ष्मतया अपने **भोजन के विषय में** यह सोचता है—'मैं उतना ही भोजन करूँ जो लौकिक मौज मस्ती के लिये न हो, न शरीर के मण्डन-विभूषण के लिये हो; वह

[N.98,R.389] पटिघाताय, अब्यापज्झपरमताया' ति। यं हिस्स, भिक्खवे, अप्पटिसेवतो उप्पज्जेय्युं आसवा विघातपरिळाहा, पटिसेवतो एवंस ते आसवा विघातपरिळाहा न होन्ति। इमे वुच्चन्ति, भिक्खवे, आसवा पटिसेवना पहातब्बा ये पटिसेवनाय पहीना होन्ति।

४. "कतमे च, भिक्खवे, आसवा अधिवासना पहातब्बा ये अधिवासनाय पहीना होन्ति? इध, भिक्खवे, भिक्खु पटिसङ्खा योनिसो खमो होति सीतस्स उण्हस्स, जिघच्छाय पिपासाय। डंसमकसवातातपसिरिंसपसम्फस्सानं, दुरुत्तानं दुरागतानं वचनपथानं, उप्पन्नानं सारीरिकानं वेदनानं दुक्खानं तिब्बानं खरानं कटुकानं असातानं अमनापानं पाणहरानं [B.342] अधिवासकजातिको होति। यं हिस्स, भिक्खवे, अनधिवासतो उप्पज्जेय्युं आसवा विघातपरिळाहा, अधिवासतो एवंस ते आसवा विघातपरिळाहा न होन्ति। इमे वुच्चन्ति, भिक्खवे, आसवा अधिवासना पहातब्बा ये अधिवासनाय पहीना होन्ति।

५. "कतमे च, भिक्खवे, आसवा परिवज्जना पहातब्बा ये परिवज्जनाय पहीना

---

इतना ही हो जितने से शरीर टिका रह सके, भूख की वेदना (तड़फड़ाहट) मिट सके तथा धर्मसाधना में सहयोग मिलता रहे। इस तरह का भोजन कर मैं कर्मविपाक से प्राप्त पुरानी वेदनाओं को स्वीकार करूँगा और नयी वेदनाओं को उत्पन्न न होने दूँगा; इस प्रकार मेरी शरीरयात्रा भी निर्दोष रहेगी और जीवनक्रम भी निर्द्वन्द्व चलता रहेगा। (२)

"जो भिक्षु क्रमपूर्वक सूक्ष्मतया अपने **शयनासन के विषय में** यह सोचता रहता है—'मैं अपना उतना ही सोना-बिछौना (शयनासन) रखूँगा जितने से शीत एवं धूप से शरीररक्षा हो सके, डाँस मच्छर धूप शीत, वायु आतप साँप बिच्छू आदि से शरीर की रक्षा हो सके, जो ऋतुओं की पीड़ाओं से शरीर को सुरक्षित रख सकें तथा जो एकान्त चिन्तनाभ्यास में उपयोगी हो। (३)

"जो भिक्षु **रोग के लिये** उपयोगी **पथ्य या औषध** के रूप में प्रयुक्त वस्तुओं का उपयोग समझ-बूझ कर करता है, जितने से कि उत्पन्न रोग नष्ट हो सके और सर्वथा नीरोग रहा जा सके। (४)

"भिक्षुओ! जिनके न सेवन करने से दाह एवं पीड़ादायक आश्रव उत्पन्न होते हों, और सेवन करने से दाह एवं पीड़ा न होते हों, ऐसे आश्रव प्रतिसेवन से प्रहातव्य होते हैं तथा जो प्रतिसेवन से प्रहीण हो जाते हैं। (२)

**३. अधिवासन से प्रहातव्य आश्रव :** ४. और, भिक्षुओ कौन से आश्रव अधिवासना (स्वीकृति) से प्रहातव्य हैं जो अधिवासना से प्रहीण हो जाते हैं? यहाँ कोई भिक्षु क्रमपूर्वक गर्मी, भूख, प्यास, मच्छर, मक्खी, हवा, धूप, साँप, बिच्छू के दंश को सहन करने में समर्थ होता है; वाणी से निकले दुर्वचन तथा शरीर में उत्पन्न ऐसी दुःखमय तीव्र, तीक्ष्ण, कटु, अवाञ्छित, अरुचिकर, प्राणहर पीड़ाओं के स्वागत करने योग्य स्वभाव वाला होता है। भिक्षुओ! यहाँ जिन धर्मों की अधिवासना न करने से दाह एवं पीड़ाकारक आश्रव उत्पन्न होते हैं और अधिवासना से वे उत्पन्न नहीं होते—ऐसे आश्रव अधिवासन से प्रहातव्य कहलाते हैं, और वे अधिवासन से प्रहीण हो जाते हैं। (३)

होन्ति ? इध, भिक्खवे, भिक्खु पटिसङ्खा योनिसो चण्डं हत्थिं परिवज्जेति, चण्डं अस्सं परिवज्जेति, चण्डं गोणं परिवज्जेति, चण्डं कुक्कुरं परिवज्जेति, अहिं खाणुं कण्टकट्ठानं सोब्भं पपातं चन्दनिकं ओळिगल्लं यथारूपे अनासने निसिन्नं यथारूपे अगोचरे चरन्तं यथारूपे पापके मित्ते भजन्तं विञ्ञू सब्रह्मचारी पापकेसु ठानेसु ओकप्पेय्युं, सो तं च अनासनं तं च अगोचरं ते च पापके मित्ते पटिसङ्खा योनिसो परिवज्जेति। यं हिस्स, भिक्खवे, अपरिवज्जयतो उप्पज्जेय्युं आसवा विघातपरिळाहा, परिवज्जयतो एवंस ते आसवा विघातपरिळाहा न होन्ति। इमे वुच्चन्ति, भिक्खवे, आसवा परिवज्जना पहातब्बा ये [R.390] परिवज्जनाय पहीना होन्ति।

६. ''कतमे च, भिक्खवे, आसवा विनोदना पहातब्बा ये विनोदनाय पहीना होन्ति ? इध, भिक्खवे, भिक्खु पटिसङ्खा योनिसो उप्पन्नं कामवितक्कं नाधिवासेति पजहति विनोदेति ब्यन्तीकरोति अनभावं गमेति, पटिसङ्खा योनिसो उप्पन्नं ब्यापादवितक्कं ...पे०... उप्पन्नं विहिंसावितक्कं ... उप्पन्नुप्पन्ने पापके अकुसले धम्मे नाधिवासेति पजहति विनोदेति ब्यन्तीकरोति अनभावं गमेति। यं हिस्स, भिक्खवे, अविनोदयतो उप्पज्जेय्युं आसवा [N.99] विघातपरिळाहा, विनोदयतो एवंस ते आसवा विघातपरिळाहा न होन्ति। इमे वुच्चन्ति, भिक्खवे, आसवा विनोदना पहातब्बा ये विनोदनाय पहीना होन्ति।

७. ''कतमे च, भिक्खवे, आसवा भावना पहातब्बा ये भावनाय पहीना होन्ति ?

---

**४. परिवर्जन से प्रहातव्य आश्रव :** ५. और, भिक्षुओ! कौन से आश्रव परिवर्जन (त्याग) से प्रहातव्य हैं जो परिवर्जन से प्रहीण हो जाते हैं ? इस साधना में जैसे कोई भिक्षु क्रमपूर्वक मदोन्मत्त क्रोधी हाथी को दूर से ही आता हुआ देखकर उससे बचने का उपक्रम करता है, विगड़ैल घोड़े से बचने का उपक्रम करता है, मरकहे साँड़ से.... कटखने कुत्ते से... विषैले सर्प से... गहरी खाईं (गड्ढे) से... कँटीली झाड़ियों से... भयङ्कर जलप्रपात से... गड्ढों से... गढही से बचने का पहले से ही उपक्रम करता है; उसी प्रकार 'ऐसे दुर्व्यसनियों के बीच में, अनुचित स्थान में, अनुचित बातें करते हुए मुझ को मेरे साथी न देख लें, या कुछ कह न बैठें'—यह सोचकर पहले से ही उन दुर्व्यसनियों से दूर रहने का, बचने का उपक्रम करता है। भिक्षुओ! जिनसे न बचने से पीड़ादायक, दाहकारक आश्रव उत्पन्न होते हों और जिनसे बचने से उक्त आश्रव उत्पन्न न होते हों, भिक्षुओ! यह परिवर्जन द्वारा प्रहातव्य आश्रव कहलाते हैं जो परिवर्जन से प्रहीण होते हैं। (४)

**५. विनोदना ( हटाना ) से प्रहातव्य आश्रव :** ६. ''और, भिक्षुओ! वे आश्रव कौन से हैं जो विनोदना-प्रहातव्य हैं तथा विनोदना से प्रहीण होते हैं ? भिक्षुओ! यहाँ कोई भिक्षु क्रमपूर्वक उत्पन्न कामवितर्क (कामवासनोत्पादक सङ्कल्प) का स्वागत नहीं करता, उसे छोड़ देता है, उससे मन हटा लेता है, उसे पृथक् कर देता है, मिटा देता है; उत्पन्न हुए द्वेषवितर्क (परद्रोह के विचार) का ...पूर्ववत्... विहिंसावितर्क (प्रतिहिंसा का ध्यान) का...; पुनः पुनः उत्पन्न पापमय अकुशल धर्मों का स्वागत नहीं करता, उन्हें छोड़ देता है, उनसे मन हटा लेता है, उनको पृथक् कर देता है, मिटा देता है। ...पूर्ववत्... विनोदना से प्रहीण होते हैं। (५)

इध, भिक्खवे, भिक्खु पटिसङ्खा योनिसो सतिसम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विरागनिस्सतं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं, पटिसङ्खा योनिसो धम्मविचयसम्बोज्झङ्गं भावेति... विरियसम्बोज्झङ्गं भावेति... पीतिसम्बोज्झङ्गं भावेति... पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गं भावेति... समाधिसम्बोज्झङ्गं भावेति... उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेति विवेकनिस्सितं विराग-निस्सितं निरोधनिस्सितं वोस्सग्गपरिणामिं। यं हिस्स, भिक्खवे, अभावयतो उप्पज्जेय्युं [B.343] आसवा विघातपरिळाहा, भावयतो एवंस ते आसवा विघातपरिळाहा न होन्ति। इमे वुच्चन्ति, भिक्खवे, आसवा भावना पहातब्बा ये भावनाय पहीना होन्ति।

"इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति पाहुनेय्यो दक्खिणेय्यो अञ्जलिकरणीयो अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा" ति॥ ●

[R.391] **५. दारुकम्मिकसुत्तं :** १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा नातिके विहरति गिञ्जकावसथे। अथ खो दारुकम्मिको गहपति येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो दारुकम्मिकं गहपतिं भगवा एतदवोच—"अपि नु ते, गहपति, कुले दानं दीयती" ति?

"दीयति मे, भन्ते, कुले दानं। तं च खो ये ते भिक्खू आरञ्ञिका पिण्डपातिका पंसुकूलिका अरहन्तो वा अरहत्तमग्गं वा समापन्ना, तथारूपेसु मे, भन्ते, भिक्खूसु दानं दीयती" ति।

---

**६. भावना ( चिन्तन ) द्वारा प्रहातव्य आश्रव :** ७. "और, भिक्षुओ! कौन से आश्रव भावना से प्रहातव्य तथा भावना से प्रहीण होते हैं? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु क्रमपूर्वक जान-समझ कर विवेकयुक्त, वैराग्ययुक्त, निरोधयुक्त, व्यवसर्ग (त्याग) परिणाम वाले स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की भावना करता है, क्रमपूर्वक धर्मविचयसम्बोध्यङ्ग की... वीर्यसम्बोध्यङ्ग की... प्रीतिसम्बोध्यङ्ग की... प्रश्रब्धि (शान्ति) सम्बोध्यङ्ग की... समाधिसम्बोध्यङ्ग की... उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की विवेक-वैराग्यनिरोधयुक्त एवं प्रश्रब्धिपरिणामयुक्त भावना करता है। ...पूर्ववत्... भावना से प्रहीण होते हैं। (६)

"भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु ही भेंट देने योग्य, आतिथ्य के योग्य, दान के योग्य, प्रणाम के योग्य होता है। तथा ऐसा भिक्षु इस लोक के लिये एक अद्वितीय पुण्यभूमि है॥" ●

**५. दारुकर्मिकसूत्र : : सर्वविध भिक्षुओं को दान पुण्यप्रद**

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) नादिका (वज्जिदेश) के गिञ्जकावसथ में साधनाहेतु विराजमान थे। तब दारुकर्मिक गृहपति भगवान् के सम्मुख आया तथा उनको प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे दारुकर्मिक गृहपति से भगवान् ने पूछा—"गृहपति! क्या तुम्हारे कुल में याचकों को दान दिया जाता है?"

"हाँ, भन्ते! मेरे कुल में दान दिया जाता है। अपितु वह उनको ही दिया जाता है जो या तो अरण्य-साधक हों, या जो भिक्षाव्रती हों, पांसुकूलिक हों, या फिर अर्हत् हो चुके हों या अर्हत् मार्ग पर आरूढ हों।"

२. ''दुज्जानं खो एतं, गहपति, तथा गिहिना कामभोगिना पुत्तसम्बाध- [N.100] सयनं अज्झावसन्तेन, कासिकचन्दनं पच्चनुभोन्तेन, मालागन्धविलेपनं धारयन्तेन, जात-रूपरजतं सादियन्तेन—इमे वा अरहन्तो इमे वा अरहत्तमग्गं समापन्ना ति।

३. ''आरञ्ञिको चे पि, गहपति, भिक्खु होति उद्धतो उन्नळो चपलो मुखरो विकिण्णवाचो मुट्ठस्सति असम्पजानो असमाहितो विब्भन्तचित्तो पाकतिन्द्रियो। एवं सो तेनङ्गेन गारय्हो। आरञ्ञिको चे पि, गहपति, भिक्खु होति अनुद्धतो अनुन्नळो अचपलो अमुखरो अविकिण्णवाचो उपट्ठितस्सति सम्पजानो समाहितो एकग्गचित्तो संवुतिन्द्रियो। एवं सो तेनङ्गेन पासंसो।

४. ''गामन्तविहारी चे पि, गहपति, भिक्खु होति उद्धतो ...पे०... एवं सो तेनङ्गेन गारय्हो। गामन्तविहारी चे पि, गहपति, भिक्खु होति अनुद्धतो ...पे०... एवं सो तेनङ्गेन पासंसो।

५. ''पिण्डपातिको चे पि, गहपति, भिक्खु होति उद्धतो ...पे०... एवं सो [B.344] तेनङ्गेन गारय्हो। पिण्डपातिको चे पि, गहपति, भिक्खु होति अनुद्धतो ...पे०... एवं [R.392] सो तेनङ्गेन पासंसो।

६. ''नेमन्तनिको चे पि, गहपति, भिक्खु होति उद्धतो ...पे०... एवं सो तेनङ्गेन गारय्हो। नेमन्तनिको चे पि, गहपति, भिक्खु होति अनुद्धतो ...पे०... सो तेनङ्गेन पासंसो।

७. ''पंसुकूलिको चे पि, गहपति, भिक्खु होति उद्धतो ...पे०... एवं सो तेनङ्गेन

---

२. ''गृहपति! ऐसे गृहस्थों द्वारा, जो लौकिक कामभोगों के उपभोग में ही दिन-रात लगे रहते हों, अपना बाल-बच्चों एवं परिवार के मायामोह में ही फँसे हों, शरीर पर काशी के चन्दन के लेप तथा माला गन्धविलेपन में ही व्यस्त रहते हों, यह जानना बहुत कठिन है कि कौन भिक्षु अर्हत्-मार्गारूढ़ है।

३. ''गृहपति! अरण्य में साधना करने वाला भिक्षु भी यदि उद्धत (उद्दण्ड), उन्नड़ (अभिमानी), चञ्चल चेष्टाओं वाला, बकवादी, बहकी बातें बोलने वाला, स्मृतिभ्रष्ट, नासमझ, असंयमी, भ्रान्तचित्त एवं ज्ञानशून्य हो तो वह इन कारणों से निन्दनीय ही है। हाँ, यदि वह आरण्यक विनीत, निरभिमान, संयत चेष्टाओं वाला, वाक्संयमी, बुद्धिपूर्वक बात करनेवाला, स्मृतिमान्, समझदार, संयमी, स्थिरचित्त एवं स्थितप्रज्ञ हो तो वह आरण्यक भिक्षु समाज में प्रशंसा प्राप्त करता है।

४. ''गृहपति! ग्राम की सीमा के बाहर रहकर साधना करने वाला भिक्षु भी यदि उद्धत ...पूर्ववत्... है तो वह निन्दनीय ही है। हाँ, यदि वह विनीत ...पूर्ववत्... समाज में प्रशंसनीय है।

५. ''गृहपति! भिक्षाव्रती (पिण्डपातिक) भिक्षु भी ...पूर्ववत्... निन्दनीय ...पूर्ववत्... प्रशंसनीय है।

६. ''गृहपति! निमन्त्रण से भोजन करने वाला भिक्षु भी ...पूर्ववत्... निन्दनीय ...पूर्ववत्... प्रशंसनीय है।

गारय्हो। पंसुकूलिको चे पि, गहपति, भिक्खु होति अनुद्धतो ...पे०... एवं सो तेनङ्गेन पासंसो।

८. "गहपतिचीवरधरो चे पि, गहपति, भिक्खु होति उद्धतो उन्नळो चपलो मुखरो विकिण्णवाचो मुट्ठस्सति असम्पजानो असमाहितो विब्भन्तचित्तो पाकतिन्द्रियो। एवं सो तेनङ्गेन गारय्हो। गहपतिचीवरधरो चे पि, गहपति, भिक्खु होति अनुद्धतो अनुन्नळो अचपलो अमुखरो अविकिण्णवाचो उपट्ठितस्सति सम्पजानो समाहितो एकग्गचित्तो संवुतिन्द्रियो। एवं सो तेनङ्गेन पासंसो।

[N.101] "इङ्घ त्वं, गहपति, सङ्घे दानं देहि। सङ्घे ते दानं ददतो चित्तं पसीदिस्सति। सो त्वं पसन्नचित्तो कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जिस्ससी" ति।

"एसाहं, भन्ते, अज्जतग्गे सङ्घे दानं दस्सामी" ति।

**६. हत्थिसारिपुत्तसुत्तं** : १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा बाराणसियं विहरति इसिपतने मिगदाये। तेन खो पन समयेन सम्बहुला थेरा भिक्खू पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्ता मण्डलमाळे सन्निसिन्ना सन्निपतिता अभिधम्मकथं कथेन्ति। तत्र सुदं आयस्मा चित्तो हत्थिसारिपुत्तो थेरानं भिक्खूनं अभिधम्मकथं कथेन्तानं अन्तरन्तरा कथं ओपातेति। अथ खो आयस्मा महाकोट्ठिको आयस्मन्तं चित्तं हत्थिसारिपुत्तं एतदवोच—
[B.345] "मायस्मा चित्तो हत्थिसारिपुत्तो थेरानं भिक्खूनं अभिधम्मकथं कथेन्तानं अन्तरन्तरा
[R.393] कथं ओपातेसि, याव कथापरियोसानं आयस्मा चित्तो आगमेतू" ति। एवं वुत्ते आयस्मतो चित्तस्स हत्थिसारिपुत्तस्स सहायका भिक्खू आयस्मन्तं महाकोट्ठिकं

---

७. "गृहपति! पांसुकूलिक भिक्षु भी ...पूर्ववत्... निन्दनीय ...पूर्ववत्... प्रशंसनीय ही है।

८. "गृहपति! गृहस्थों द्वारा प्रदत्त या त्यक्त चीवरों को धारण करने वाला भिक्षु भी ... निन्दनीय ... प्रशंसनीय है।

"अतः सुनो, गृहपति! तुम समग्र सङ्घ को दान करो; क्योंकि सङ्घ को दान करने से तुम्हारा चित्त बुद्ध एवं धर्म के प्रति भी श्रद्धालु बनेगा। इस श्रद्धा के प्रसाद से तुम अपने इस देहपात के बाद, मरणानन्तर, सुगतिमय स्वर्ग लोक में ही उत्पन्न होगे।"

"अच्छा, भन्ते! आज से मैं सङ्घ के सभी प्रकार के भिक्षुओं को दान करूँगा॥"

**६. हस्तिसारिपुत्रसूत्र** : :

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) वाराणसी के ऋषिपतन मृगदाव में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय बहुत से स्थविर भिक्षु भोजनकर्म के बाद वृत्ताकार मण्डप में एकत्र बैठे परस्पर अभिधर्मविषयक आध्यात्मिक संवाद कर रहे थे। वहाँ आयुष्मान् चित्त-हस्तिसारिपुत्र उस अभिधर्मसंवाद में उन स्थविर भिक्षुओं को विघ्न डालने लगा। तब आयुष्मान् महाकोष्ठिक ने उस आयुष्मान् चित्तहस्तिसारिपुत्र से कहा—"आयुष्मान्! इस स्थविर भिक्षुओं के अभिधर्मसंवाद में तुम बीच बीच में क्यों विघ्न डाल रहे हो! संवाद के पूर्ण होने तक प्रतीक्षा करो। तुमको भी बोलने का अवसर मिलेगा।" ऐसा कहे जाने पर चित्तहस्तिसारिपुत्र के साथी भिक्षुओं ने

एतदवोचुं—''मायस्मा महाकोट्ठिको आयस्मन्तं चित्तं हत्थिसारिपुत्तं अपसादेसि, पण्डितो आयस्मा चित्तो हत्थिसारिपुत्तो। पहोति चायस्मा चित्तो हत्थिसारिपुत्तो थेरानं भिक्खूनं अभिधम्मकथं कथेतुं'' ति।

२. ''दुज्जानं खो एतं, आवुसो, परस्स चेतोपरियायं अजानन्तेहि। इधावुसो, एकच्चो पुग्गलो तावदेव सोरतसोरतो होति, निवातनिवातो होति, उपसन्तुपसन्तो होति, याव सत्थारं उपनिस्साय विहरति अञ्ञतरं वा गरुट्ठानियं सब्रह्मचारिं। यतो च खो सो वपकस्सतेव सत्थारा, वपकस्सति गरुट्ठानियेहि सब्रह्मचारीहि, सो संसट्ठो विहरति भिक्खूहि भिक्खुनीहि उपासकेहि उपासिकाहि रञ्ञा राजमहामत्तेहि तित्थियेहि तित्थियसावकेहि। तस्स संसट्ठस्स विस्सट्ठस्स पाकतस्स भस्समनुयुत्तस्स विहरतो रागो चित्तं अनुद्धंसेति। सो रागानुद्धंसितेन चित्तेन सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तति।

३. ''सेय्यथापि, आवुसो, गोणो किट्ठादो दामेन वा बद्धो वजे वा ओरुद्धो। यो नु खो, आवुसो, एवं वदेय्य—'न दानायं गोणो किट्ठादो पुनदेव किट्ठं ओतरिस्सती' [N.102] ति, सम्मा नु खो सो, आवुसो, वदमानो वदेय्या'' ति?

''नो हिदं, आवुसो''।

''ठानं हेतं, आवुसो, विज्जति, यं सो गोणो किट्ठादो दामं वा छेत्वा वजं वा भिन्दित्वा, अथं पुनदेव किट्ठं ओतरेय्या ति। एवमेव खो, आवुसो, इधेकच्चो पुग्गलो

---

आयुष्मान् महाकोष्ठिक से यों कहा—''आयुष्मन् महाकोष्ठिक! आप चित्तहस्तिसारिपुत्र को बोलने से न रोकें; क्योंकि आयुष्मान् चित्त भी पण्डित हैं। ये इन स्थविर भिक्षुओं के अभिधर्म-संवाद के मध्य बोलने की स्थिति रखते हैं।''

२. ''आयुष्मानो! जो दूसरों के चित्त की स्थिति को नहीं जानते उनके लिये यह जानना दुष्कर है कि कौन विद्वान् है, कौन नहीं। आयुष्मानो! यहाँ कोई पुद्गल तभी तक विनम्र एवं शान्त रहता है जब तक वह शास्ता के सम्मुख या शास्ता के समान किसी अन्य गौरवास्पद भिक्षु के सम्मुख रहे। शास्ता या शारता के समान गौरवास्पद भिक्षु से दूर होते ही वह जैसे तैसे भिक्षु, भिक्षुणी, उपासक, उपासिका, राजा या राज-महामात्य, या अन्य सम्प्रदाय के साधु और उनके शिष्यों के साथ स्वच्छन्द होकर घूमने लगता है। उसके इस प्रकार स्वच्छन्द होकर घूमने से उसका चित्त उनके प्रति आसक्तियुक्त हो जाता है। वह ऐसे आसक्तियुक्त चित्त वाला होकर एक दिन धर्मानुशासन छोड़कर पुनः गृहस्थ धर्म में जा मिलता है।

३. ''आयुष्मानो! जैसे कोई दूसरे का खेत चर जाने वाला बैल दृढ़ रस्सी से बाँध दिया जाय या व्रज (गोशाला) में अवरुद्ध कर दिया जाय। आयुष्मानो! तब उसके विषय में कोई यह कहे—'अब यह दूसरे का खेत चरने वाला बैल पुनः खेत चरने नहीं जायगा'। आयुष्मानो! उस बैल के विषय में ऐसा कहने वाला क्या उचित ही बोल रहा है?'' ''नहीं, आयुष्मन्!''

''क्योंकि, आयुष्मानो! यह सम्भव है कि वह बैल रस्सी तुड़ाकर या उस व्रज के अवरोध को तोड़कर पुनः खेतों में जाकर चरने लगे। इसी तरह, आयुष्मानो! कोई भिक्षु शास्ता के सम्मुख

[R.394] तावदेव सोरतसोरतो होति, निवातनिवातो होति, उपसन्तुपसन्तो होति याव सत्थारं उपनिस्साय विहरति अञ्ञतरं वा गरुट्ठानियं सब्रह्मचारिं। यतो च खो सो वपकस्सतेव सत्थारा, वपकस्सति गरुट्ठानियेहि सब्रह्मचारीहि, सो संसट्ठो विहरति भिक्खूहि भिक्खुनीहि उपासकेहि उपासिकाहि रञ्ञा राजमहामत्तेहि तित्थियेहि तित्थियसावकेहि। तस्स संसट्ठस्स [B.346] विस्सट्ठस्स पाकतस्स भस्समनुयुत्तस्स विहरतो रागो चित्तं अनुद्धंसेति। सो रागानुद्धंसितेन चित्तेन सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तति।

४. "इध पनावुसो, एकच्चो पुग्गलो विविच्चेव कामेहि ...पे०... पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सो 'लाभिम्हि पठमस्स झानस्सा' ति संसट्ठो विहरति भिक्खूहि ...पे०... सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तति। सेय्यथापि, आवुसो, चातुम्महापथे थुल्लफुसितको देवो वस्सन्तो रजं अन्तरधापेय्य, चिक्खल्लं पातुकरेय्य। यो नु खो, आवुसो, एवं वदेय्य—'न दानि अमुस्मिं चातुम्महापथे पुनदेव रजो पातुभविस्सती' ति, सम्मा नु खो सो, आवुसो, वदमानो वदेय्या" ति? "नो हिदं, आवुसो"।

"ठानं हेतं, आवुसो, विज्जति, यं अमुस्मिं चातुम्महापथे मनुस्सा वा अतिक्कमेय्युं, गोपसू वा अतिक्कमेय्युं, वातातपो वा स्नेहगतं परियादियेय्य, अथ पुनदेव रजो पातुभवेय्या ति। एवमेव खो, आवुसो, इधेकच्चो पुग्गलो विविच्चेव कामेहि ...पे०... पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सो 'लाभिम्हि पठमस्स झानस्सा' ति संसट्ठो विहरति भिक्खूहि ...पे०... सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तति।

[R.395] ५. "इध पनावुसो, एकच्चो पुग्गलो वितक्कविचारानं वूपसमा ...पे०... दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सो 'लाभिम्हि दुतियस्स झानस्सा' ति संसट्ठो विहरति भिक्खूहि

---

या शास्ता के समान किसी गौरवास्पद भिक्षु के सम्मुख भले शान्त एवं विनम्र व्यवहार करे; परन्तु उनके दूर हटते ही वह भिक्षु, भिक्षुणी ...पूर्ववत्... पुनः गृहस्थ धर्म में जा मिलता है।

४. "आयुष्मानो! यहाँ कोई पुद्गल कामभोगों से दूर रहकर ...प्रथम ध्यान प्राप्त कर साधना करने लगता है। तब वह 'मैं साधना में प्रथम ध्यान तक पहुँच गया'—इस गर्व से उन्मत्त होकर चाहे जैसे भिक्षु भिक्षुणियों के साथ ...पूर्ववत्... गृहस्थ धर्म में जा मिलता है। जैसे, आयुष्मानो! किसी बड़े चतुष्पथ (चौराहा) पर घनघोर वर्षा बरसे, उससे वहाँ की सब धूल धुल जाय, तथा कीचड़ साफ हो जाय। तब कोई पुरुष यह कहे—'अब इस चतुष्पथ पर कभी धूल नहीं जमेगी, कीचड़ नहीं इकट्ठा होगा', आयुष्मानो! क्या उसका यह कथन उचित है?"

"नहीं, आयुष्मन्!"

"क्योंकि, आयुष्मानो! यह सम्भव है कि इस चतुष्पथ पर पुनः लोगों का चलना-फिरना आरम्भ हो; गौ, भेड़, बकरी आदि पशु भी इस पर आवें, जावें, धूलभरी आँधी आवे, गर्मी से इसकी आर्द्रता समाप्त हो जाय तो इस कारण धूल पुनः यहाँ आ ही जायगी। इसी प्रकार, आयुष्मानो! कोई पुद्गल कामभोगों से दूर रहकर ...पूर्ववत्... पुनः गृहस्थ धर्म में जा मिलता है।

५. "पुनः, आयुष्मानो! कोई पुद्गल वितर्क एवं विचारों के शमन होने से ... द्वितीय ध्यान को

...पे०... सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तति। सेय्यथापि, आवुसो, गामस्स वा [N.103] निगमस्स वा अविदूरे महन्तं तळाकं, तत्थ थुल्लफुसितको देवो वुट्ठो सिप्पिसम्बुकं पि सक्खरकठलं पि अन्तरधापेय्य। यो नु खो, आवुसो, एवं वदेय्य—'न दानि अमुस्मिं तळाके पुनदेव सिप्पिसम्बुका वा सक्खरकठला वा पातुभविस्सन्ती' ति, सम्मा नु खो सो, आवुसो, वदमानो वदेय्या'' ति? ''नो हिदं, आवुसो''।

''ठानं हेतं, आवुसो, विज्जति, यं अमुस्मिं तळाके मनुस्सा वा पिवेय्युं, गोपसू वा पिवेय्युं, वातातपो वा स्नेहगतं परियादियेय्य, अथ पुनदेव सिप्पिसम्बुका पि सक्खरकठला पि पातुभवेय्युं ति। एवमेव खो, आवुसो, इधेकच्चो पुग्गलो वितक्कविचारानं वूपसमा ...पे०... दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सो 'लाभिम्हि दुतियस्स झानस्सा' ति संसट्ठो विहरति भिक्खूहि ...पे०... सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तति।

६. ''इध पनावुसो, एकच्चो पुग्गलो पीतिया च विरागा ...पे०... ततियं [B.347] झानं उपसम्पज्ज विहरति। सो 'लाभिम्हि ततियस्स झानस्सा' ति संसट्ठो विहरति भिक्खूहि ...पे०... सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तति। सेय्यथापि, आवुसो, पुरिसं पणीतभोजनं भुत्ताविं आभिदोसिकं भोजनं नच्छादेय्य। यो नु खो, आवुसो, एवं वदेय्य— 'न [R.396] दानि अमुं पुरिसं पुनदेव भोजनं छादेस्सती' ति, सम्मा नु खो सो, आवुसो, वदमानो वदेय्या'' ति? ''नो हिदं, आवुसो''।

''ठानं हेतं, आवुसो, विज्जति, अमुं पुरिसं पणीतभोजनं भुत्ताविं यावस्स सा ओजा

---

प्राप्त कर साधना करने लगता है। तब वह ...पूर्ववत्... गृहस्थ धर्म में जा मिलता है। जैसे, आयुष्मानो! किसी ग्राम या निगम के समीप कोई तडाग (तालाब) हो, वहाँ कभी घनघोर वर्षा हो। जिस कारण उस तडाग में पड़ी हुई सीपियाँ तथा कंकरियाँ विनष्ट हो जायँ। तब ऐसा देखकर कोई यह कहे 'इस तडाग में अब कभी कोई सीपी या कंकर नहीं पैदा होंगे।' तो क्या, आयुष्मानो! ऐसा कहने वाला उचित कह रहा है?'' ''नहीं, आयुष्मन्!''

''क्योंकि, आयुष्मानो! यह सम्भव है कि मनुष्य या गौ, भेड़, बकरी आदि पशु पुन: इस तडाग पर जल पीने आवें, या धूल भरी आँधी आवे या गर्मी से पिघलकर कोई आर्द्रता आकर इसमें आ मिले, इस कारण वहाँ सीपी या कंकर आदि पुन: उत्पन्न हो ही जायेंगे। इसी तरह, आयुष्मानो! कोई पुद्गल वितर्क विचारों के शमन से...पूर्ववत्... पुन: गृहस्थ में जा मिलता है।

६. ''पुन:, आयुष्मानो! यहाँ कोई पुद्गल प्रीति से वैराग्य के कारण ...पूर्ववत्... तृतीय ध्यान को प्राप्त कर साधना करने लगता है। वह 'अब मैं तृतीय ध्यान तक पहुँच गया'—इस गर्व से गर्वित होकर ...पूर्ववत्... धर्मानुशासन त्याग कर पुन: गृहस्थ में जा मिलता है। जैसे आयुष्मानो! किसी भरपेट अच्छा भोजन खाये पुरुष को जब किसी भी प्रकार का अन्य भोजन अच्छा नहीं लगता, तब उसको देखकर कोई यह कहे—'अब यह कभी पुन: भोजन नहीं करेगा' तो क्या वह उसके विषय में उचित कह रहा है?'' ''नहीं, आयुष्मन्!''

''क्योंकि, आयुष्मानो! यह सम्भव है कि उस भरपेट अच्छा भोजन किये मनुष्य के शरीर में

काये ठस्सति ताव न अञ्ञं भोजनं छादेस्सति। यतो च ख्वस्स सा ओजा अन्तरधायिस्सति, अथ पुनदेव तं भोजनं छादेय्या ति। एवमेव खो, आवुसो, इधेकच्चो पुग्गलो पीतिया च विरागा ...पे०... ततियं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सो 'लाभिम्हि ततियस्स झानस्सा' ति संसट्ठो विहरति भिक्खूहि ...पे०... सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तति।

[N.104] ७. "इध, पनावुसो, एकच्चो पुग्गलो सुखस्स च पहाना दुक्खस्स च पहाना ...पे०... चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सो 'लाभिम्हि चतुत्थस्स झानस्सा' ति संसट्ठो विहरति भिक्खूहि ...पे०... सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तति। सेय्यथापि, आवुसो, पब्बतसङ्खेपे उदकरहदो निवातो विगतऊमिको। यो नु खो, आवुसो, एवं वदेय्य—'न दानि अमुस्मिं उदकरहदे पुनदेव ऊमि पातुभविस्सती' ति, सम्मा नु खो सो, आवुसो, वदमानो वदेय्या" ति? "नो हिदं, आवुसो"।

[R.397] "ठानं हेतं, आवुसो, विज्जति, या पुरत्थिमाय दिसाय आगच्छेय्य भुसा वातवुट्ठि। सा तस्मिं उदकरहदे ऊमिं जनेय्य। या पच्छिमाय दिसाय आगच्छेय्य ...पे०... या उत्तराय दिसाय आगच्छेय्य... या दक्खिणाय दिसाय आगच्छेय्य भुसा वातवुट्ठि। सा तस्मिं उदकरहदे ऊमिं जनेय्या ति। एवमेव खो, आवुसो, इधेकच्चो पुग्गलो सुखस्स च पहाना दुक्खस्स च पहाना ...पे०... चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति। सो 'लाभिम्हि चतुत्थस्स झानस्सा' ति संसट्ठो विहरति भिक्खूहि ...पे०... सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तति।

८. "इध, पनावुसो, एकच्चो पुग्गलो सब्बनिमित्तानं अमनसिकारा अनिमित्तं चेतोसमाधिं उपसम्पज्ज विहरति। सो 'लाभिम्हि अनिमित्तस्स चेतोसमाधिस्सा' ति संसट्ठो

---

जब तक उस अच्छे भोजन की ऊर्जा टिकेगी तभी तक वह अन्य भोजन की इच्छा नहीं करेगा। ज्योंही उसके भोजन की वह ऊर्जा समाप्त हो जायगी, त्योंही वह दूसरे भोजन की इच्छा करने लगेगा। इसी तरह, आयुष्मानो! कोई पुद्गल प्रीति से वैराग्य होने के कारण ...पूर्ववत्... पुनः गृहस्थ धर्म में जा मिलता है।

७. "पुनः, आयुष्मानो! यहाँ कोई पुद्गल सुख दुःख के प्रहाण से ...पूर्ववत्... चतुर्थ ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है। वह इस पर गर्व करता हुआ कि मैं चतुर्थ ध्यान की साधना तक पहुँच चुका हूँ—इस गर्व से गर्वित हुआ ...पूर्ववत्... पुनः गृहस्थ में जा मिलता है। जैसे आयुष्मानो! किसी पर्वत-संक्षेप में कोई जल से भरा सरोवर स्थिर तरंगरहित हो। उसे देखकर कोई यह कहने लगे कि अब इस सरोवर में कभी तरंगें नहीं उठेंगी, क्या, आयुष्मानो! उसका यह कहना उचित है?" "नहीं, आयुष्मन्!"

"क्योंकि आयुष्मानो! यह सम्भव है कि कभी पूर्व दिशा से भयङ्कर घनघोर वर्षा हो। उस वर्षा से इस सरोवर में तरंगें उठने लगें। या पश्चिम दिशा से... उत्तर दिशा से... दक्षिण दिशा से... तरंगें उठने लगें। इसी प्रकार आयुष्मानो! जो पुद्गल सुख एवं दुःख के प्रहाण से ...पूर्ववत्... गृहस्थ धर्म में जा मिलता है।

८. "और, आयुष्मानो! यहाँ कोई पुद्गल सर्वविध निमित्तों में चित्त न लगाने के कारण

विहरति भिक्खूहि भिक्खुनीहि उपासकेहि उपासिकाहि रञ्ञा राजमहामत्तेहि तित्थियेहि तित्थियसावकेहि। तस्स संसट्ठस्स विस्सट्ठस्स पाकतस्स भस्समनुयुत्तस्स विहरतो [B.348] रागो चित्तं अनुद्धंसेति। सो रागानुद्धंसितेन चित्तेन सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तति। सेय्यथापि, आवुसो, राजा वा राजमहामत्तो वा चतुरङ्गिनिया सेनाय अद्धानमग्गप्पटिपन्नो अञ्ञतरस्मिं वनसण्डे एकरत्तिं वासं उपगच्छेय्य। तत्र हत्थिसद्देन अस्ससद्देन रथसद्देन पत्तिसद्देन भेरिपणवसङ्खतिणवनिन्नादसद्देन चीरिकसद्दो अन्तरधायेय्य। यो नु खो, आवुसो, एवं वदेय्य—'न दानि अमुस्मिं वनसण्डे पुनदेव चीरिकसद्दो पातुभविस्सती' ति, [R.398] सम्मा नु खो सो, आवुसो, वदमानो वदेय्या" ति?

"नो हिदं, आवुसो"। [N.105]

"ठानं हेतं, आवुसो, विज्जति, यं सो राजा वा राजमहामत्तो वा तम्हा वनसण्डा पक्कमेय्य, अथ पुनदेव चीरिकसद्दो पातुभवेय्या ति। एवमेव खो, आवुसो, इधेकच्चो पुग्गलो सब्बनिमित्तानं मनसिकारा अनिमित्तं चेतोसमाधिं उपसम्पज्ज विहरति। सो 'लाभिम्हि अनिमित्तस्स चेतोसमाधिस्सा' ति संसट्ठो विहरति भिक्खूहि भिक्खुनीहि उपासकेहि उपासिकाहि रञ्ञा राजमहामत्तेहि तित्थियेहि तित्थियसावकेहि। तस्स संसट्ठस्स विस्सट्ठस्स पाकतस्स भस्समनुयुत्तस्स विहरतो रागो चित्तं अनुद्धंसेति। सो रागानुद्धंसितेन चित्तेन सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तती" ति।

९. अथ खो आयस्मा चित्तो हत्थिसारिपुत्तो अपरेन समयेन सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तति। अथ खो चित्तस्स हत्थिसारिपुत्तस्स सहायका भिक्खू येनायस्मा

---

अनिमित्त चेत:समाधि को प्राप्त कर साधना करता है। वह इस उपलब्धि से गर्वित होकर जिस किसी भिक्षु ...पूर्ववत्... अन्त में गृहस्थ धर्म में जा मिलता है। जैसे किसी राजा, राजा के महामात्य की चतुरङ्गिणी सेना किसी वनप्रदेश में एक रात्रि के लिये ठहर जाय। उस समय वहाँ हाथियों की चिंघाड़ से, घोड़ों की हिनहिनाहट से, या शङ्ख, नगाड़े, ढोल आदि केप्रखर शब्द के सामने वनवासी चिड़ियों का शब्द मन्द पड़ गया हो। ऐसी स्थिति में कोई यह कहने लगे—'अब इस वनप्रदेश में चिड़ियों का शब्द कभी नहीं सुनायी देगा', तो, क्या आयुष्मानो! उसका यह कथन उचित होगा?"

"नहीं, आयुष्मन्!"

"क्योंकि, आयुष्मानो! यह सम्भव है कि वह राजा या उसका कोई महामात्य उस चतुरङ्गिणी सेना के साथ उस वनप्रदेश को छोड़ दें, तब उन वनपक्षियों का शब्द पुन: सुनायी पड़ने लगे; इसी प्रकार, आयुष्मानो! यहाँ कोई पुद्गल सर्वविध निमित्तों में चित्त न लगा हुआ होने के कारण अनिमित्त चेत:समाधि की भावना करता है। वह इस चेत:समाधि की प्राप्ति का अभिमान करता हुआ ...पूर्ववत्... संसार के प्रति आसक्तिमय चित्त के कारण धर्मानुशासन त्यागकर पुन: गृहस्थ धर्म में चला जाता है।"

९. तब आयुष्मान् चित्तहस्तिसारिपुत्र, कुछ समय बीतने के बाद, धर्मानुशासन का त्याग कर पुन: गृहस्थ धर्म में लौट गया। तब चित्त हस्तिसारिपुत्र के वे साथी भिक्षु आयुष्मान् कोष्ठित के पास

महाकोट्ठिको तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं महाकोट्ठिकं एतदवोचुं—''किं नु खो आयस्मता महाकोट्ठिकेन चित्तो हत्थिसारिपुत्तो चेतसा चेतो परिच्च विदितो—'इमासं च इमासं च विहारसमापत्तीनं चित्तो हत्थिसारिपुत्तो लाभी, अथ च पन सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तिस्सती' ति; उदाहु देवता एतमत्थं आरोचेसुं—'चित्तो, भन्ते, हत्थिसारिपुत्तो इमासं च इमासं च विहारसमापत्तीनं लाभी, अथ च पन सिक्खं पच्चक्खाय हीनाया-वत्तिस्सती''' ति?

''चेतसा चेतो परिच्च विदितो मे, आवुसो—'चित्तो हत्थिसारिपुत्तो इमासं च इमासं च विहारसमापत्तीनं लाभी, अथ च पन सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तिस्सती' ति। देवता [B.349] पि मे एतमत्थं आरोचेसुं—'चित्तो, भन्ते, हत्थिसारिपुत्तो इमासं च इमासं च विहारसमापत्तीनं लाभी, अथ च पन सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तिस्सती''' ति।

१०. अथ खो चित्तस्स हत्थिसारिपुत्तस्स सहायका भिक्खू येन भगवा [R.399] तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो ते भिक्खू भगवन्तं एतदवोचुं—''चित्तो, भन्ते, हत्थिसारिपुत्तो इमासं च इमासं च विहारसमापत्तीनं लाभी, अथ च पन सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तती'' ति।

[N.106] ''न, भिक्खवे; चित्तो चिरं सरिस्सति नेक्खम्मस्सा'' ति।

११. अथ खो चित्तो हत्थिसारिपुत्तो नचिरस्सेव केसमस्सुं ओहारेत्वा कासायानि वत्थानि अच्छादेत्वा अगारस्मा अनगारियं पब्बजि। अथ खो आयस्मा चित्तो हत्थिसारिपुत्तो एको वूपकट्ठो अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरन्तो नचिरस्सेव—यस्सत्थाय कुलपुत्ता

---

आये। आकर आयुष्मान् महाकोष्ठित से यों पूछने लगे—''आयुष्मन्! क्या आपने स्वचित्त से आयुष्मान् चित्त को जानकर यह समझ लिया था कि वह उन उन साधनाओं को पाकर भी अन्त में धर्मानुशासन का त्याग कर पुनः गृहस्थ धर्म में लौट जायगा;या किसी समर्थ देवता ने आकर आपको यह चित्त हस्तिसारिपुत्र की गृहस्थधर्म में पुनः लौटने बात बता दी थी?''

''आयुष्मानो! मैंने स्वचित्त से उसके मन को जान लिया था कि वह इन इन साधनाओं को प्राप्त कर चुका है, परन्तु यह कुछ समय बाद धर्मानुशासन त्याग कर पुनः गृहस्थ धर्म में लौट जायगा। तथा यही बात किसी देवता ने भी मुझको बतायी थी।''

१०. तब वे चित्त हस्तिसारिपुत्र के सहायक (साथी) भिक्षु भगवान् के सम्मुख गये। उनको प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे उन भिक्षुओं ने भगवान् से यों निवेदन किया—''भन्ते! चित्त हस्तिसारिपुत्र इन इन साधनाओं में पारगामी हो चुका है, परन्तु अब वह धर्मानुशासन त्याग कर पुनः गृहस्थ धर्म में लौट गया है।''

''नहीं, भिक्षुओ!; चित्त हस्तिसारिपुत्र बहुत शीघ्र ही नैष्क्राम्य समापत्ति में लौट आयगा।''

११. तब चित्त हस्तिसारिपुत्र कुछ कालवाद ही दाढ़ी मूँछ मुँड़ाकर, काषाय वस्त्र पहन कर, घर से बेघर होकर, प्रव्रजित हो गया। तब आयुष्मान् चित्त हस्तिसारिपुत्र सावधानी तथा उद्योग-पूर्वक, इन्द्रियसंयम के साथ एकान्त साधना करता हुआ शीघ्र ही—जिसके लिये कुलपुत्र सम्यक्

सम्मदेव अगारस्मा अनगारियं पब्बजन्ति, तदनुत्तरं—ब्रह्मचरियपरियोसानं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहासि। "खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया" ति अब्भञ्ञासि। अञ्ञतरो च पनायस्मा चित्तो हत्थिसारिपुत्तो अरहतं अहोसी ति। ●

**७. मज्झेसुत्तं :** १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा वाराणसियं विहरति इसिपतने मिगदाये। तेन खो पन समयेन सम्बहुलानं थेरानं भिक्खूनं पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तानं मण्डलमाळे सन्निसिन्नानं सन्निपतितानं अयमन्तराकथा उदपादि—"वुत्तमिदं, आवुसो, भगवता **पारायने मेत्तेय्यपञ्हे** (सु० नि०, ति० मे० मा० पु०, ४२५ पि०)—

'यो उभोन्ते विदित्वान, मज्झे मन्ता न लिप्पति।
तं ब्रूमि महापुरिसो ति, सोध सिब्बिनिमच्चगा' ति॥

२. "कतमो नु खो, आवुसो, एको अन्तो, कतमो दुतियो अन्तो, किं मज्झे, का सिब्बिनी" ति? एवं वुत्ते अञ्ञतरो भिक्खु थेरे भिक्खू एतदवोच—"फस्सो खो, [B.350] आवुसो, एको अन्तो, फस्ससमुदयो दुतियो अन्तो, फस्सनिरोधो मज्झे, तण्हा [R.400] सिब्बिनी; तण्हा हि नं सिब्बति तस्स तस्सेव भवस्स अभिनिब्बत्तिया। एत्तावता खो, आवुसो, भिक्खु अभिञ्ञेय्यं अभिजानाति, परिञ्ञेय्यं परिजानाति, अभिञ्ञेय्यं अभिजानन्तो परिञ्ञेय्यं परिजानन्तो दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होती" ति।

---

प्रकार से घर से निकल कर प्रव्रज्या ग्रहण किया करते हैं—उस अद्वितीय धर्मसाधना की सीमा तक इसी जन्म में स्वयं जानकर, साक्षात् कर साधना करता रहा। तथा अन्त में वह जान गया—'मेरी जन्मपरम्परा क्षीण हो चुकी है, मैं कृतकृत्य हो चुका हूँ, अब आगे मेरा कोई करणीय कृत्य शेष नहीं है।' इस प्रकार उस आयुष्मान् चित्त हस्तिसारिपुत्र की प्रमुख अर्हतों में गणना होने लगी॥" ●

**७. मध्येसूत्र :: गाथागत आदि, अन्त, मध्य का अर्थ**

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) वाराणसी के ऋषिपतन मृगदाव में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय भोजन कर्म के बाद, वृत्ताकार मण्डप में बैठे बहुत से स्थविर भिक्षुओं में, भगवान् के उपदेश पर यह संवाद चल रहा था—"भगवान् ने (सुत्तनिपात के) **पारायणवर्ग के तिष्य मैत्रेय माणव प्रश्न** में यह उपदेश किया है—

'जो साधक आदि और अन्त—इन दोनों परिधियों को छोड़कर मध्य की परिधि में भी लिप्त (आसक्त) नहीं होता, वह इस (संसार से) सम्बन्ध जोड़ने वाली तृष्णा को अतिक्रान्त कर जाता है, उसको मैं 'महापुरुष' कहता हूँ।' (सु० नि०, ति० मे० पु०, पृ० ४२५, ना० सं०)

२. "आयुष्मानो! इस उपदिष्ट वचन में आरम्भ का अन्त (परिधि) किसे समझें, अन्तिम अन्त किसको समझें, 'मध्य' तथा 'सिब्बिनी' शब्दों से यहाँ भगवान् का क्या अभिप्राय है?" ऐसा पूछे जाने पर वहाँ उपस्थित भिक्षुओं में से किसी भिक्षु ने कहा—"इस प्रकरण में 'स्पर्श' ही आदि की परिधि (अन्त) है, 'स्पर्शसमुदय' अन्तिम परिधि है, मध्य की परिधि है—स्पर्शनिरोध, तथा 'सिब्बिनी' से भगवान् का अभिप्राय है 'तृष्णा'; क्योंकि तृष्णा ही उसका उस उस भव की उत्पत्ति

३. एवं वुत्ते अञ्ञतरो भिक्खु थेरे भिक्खू एतदवोच—"अतीतं खो, आवुसो, एको अन्तो, अनागतं दुतियो अन्तो, पच्चुप्पन्नं मज्झे, तण्हा सिब्बिनी; तण्हा हि नं सिब्बति [N.107] तस्स तस्सेव भवस्स अभिनिब्बत्तिया। एत्तावता खो, आवुसो, भिक्खु अभिञ्ञेय्यं अभिजानाति, परिञ्ञेय्यं परिजानाति, अभिञ्ञेय्यं अभिजानन्तो परिञ्ञेय्यं परिजानन्तो दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होती" ति।

४. एवं वुत्ते अञ्ञतरो भिक्खु थेरे भिक्खू एतदवोच—"सुखा, आवुसो, वेदना एको अन्तो, दुक्खा वेदना दुतियो अन्तो, अदुक्खमसुखा वेदना मज्झे, तण्हा सिब्बिनी; तण्हा हि नं सिब्बति तस्स तस्सेव भवस्स अभिनिब्बत्तिया। एत्तावता खो, आवुसो, भिक्खु अभिञ्ञेय्यं अभिजानाति, परिञ्ञेय्यं परिजानाति, अभिञ्ञेय्यं अभिजानन्तो परिञ्ञेय्यं परिजानन्तो दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होती" ति।

५. एवं वुत्ते अञ्ञतरो भिक्खु थेरे भिक्खू एतदवोच—"नामं खो, आवुसो, एको अन्तो, रूपं दुतियो अन्तो, विञ्ञाणं मज्झे, तण्हा सिब्बिनी; तण्हा हि नं सिब्बति तस्स तस्सेव भवस्स अभिनिब्बत्तिया। एत्तावता खो, आवुसो, भिक्खु अभिञ्ञेय्यं अभिजानाति, परिञ्ञेय्यं परिजानाति, अभिञ्ञेय्यं अभिजानन्तो परिञ्ञेय्यं परिजानन्तो दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होती" ति।

६. एवं वुत्ते अञ्ञतरो भिक्खु थेरे भिक्खू एतदवोच—"छ खो, आवुसो, अज्झत्तिकानि आयतनानि एको अन्तो, छ बाहिरानि आयतनानि दुतियो अन्तो, विञ्ञाणं मज्झे, तण्हा सिब्बिनी; तण्हा हि नं सिब्बति तस्स तस्सेव भवस्स अभिनिब्बत्तिया। एत्तावता

---

के लिये सम्बन्ध बनाती है। आयुष्मानो! इतने से वह भिक्षु जानने योग्य को जान लेता है, समझने योग्य को समझ लेता है। यों वह अभिज्ञेय को जानता हुआ, समझने योग्य को समझता हुआ इसी जन्म में अपने सांसारिक दुःखों का अन्त कर लेता है।"

३. उस भिक्षु के ऐसा कहे जाने पर अन्य भिक्षु (उससे अपना मतभेद दिखाते हुए) यह बोला—"आयुष्मानो! मेरे मत में यहाँ—अतीत काल से आदिम अन्त तथा भविष्य काल से अन्तिम अन्त का और वर्तमान काल से 'मध्य' का तात्पर्य है और तृष्णा 'सिब्बिनी' है; क्योंकि यही इस पुद्गल को उस उस भव में जन्म लेने के लिये प्रेरित करती है। आयुष्मानो! इतने से ...पूर्ववत्... दुःखों का अन्त कर लेता है।"

४. ...पूर्ववत्... अन्य भिक्षु ने यह कहा—"आयुष्मानो! 'सुखा वेदना' आदि का अन्तभाग 'दुःखा वेदना' द्वितीय अन्तभाग एवं 'अदुःख असुख वेदना' मध्य का भाग कहलाता है तथा तृष्णा ...पूर्ववत्... दुःख का अन्त कर लेता है।"

५. ...पूर्ववत्... 'नाम' आदि के अन्त को, 'रूप' द्वितीय अन्त को तथा 'विज्ञान' उसके मध्य को कहते हैं एवं तृष्णा उन दोनों अन्तों की सम्बन्धस्थापिका है ...पूर्ववत्... दुःख का अन्त कर लेता है।

६. ...पूर्ववत्... छह आध्यात्मिक आयतन प्रथम अन्त है, छह बाह्य आयतन अन्तिम अन्त

खो, आवुसो, भिक्खु अभिञ्ञेय्यं अभिजानाति, परिञ्ञेय्यं परिजानाति, [B.351] अभिञ्ञेय्यं अभिजानन्तो परिञ्ञेय्यं परिजानन्तो दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होती'' ति।

७. एवं वुत्ते अञ्ञतरो भिक्खु थेरे भिक्खू एतदवोच—''सक्कायो खो, आवुसो, एको अन्तो, सक्कायसमुदयो दुतियो अन्तो, सक्कायनिरोधो मज्झे, तण्हा सिब्बिनी; तण्हा हि नं सिब्बति तस्स तस्सेव भवस्स अभिनिब्बत्तिया। एत्तावता खो, आवुसो, भिक्खु [R.401] अभिञ्ञेय्यं अभिजानाति, परिञ्ञेय्यं परिजानाति, अभिञ्ञेय्यं अभिजानन्तो परिञ्ञेय्यं परिजानन्तो दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होती'' ति।

८. एवं वुत्ते अञ्ञतरो भिक्खु थेरे भिक्खू एतदवोच—''ब्याकतं खो, आवुसो, अम्हेहि सब्बेहेव यथासकं पटिभानं। आयामावुसो, येन भगवा तेनुपसङ्कमिस्साम; [N.108] उपसङ्कमित्वा भगवतो एतमत्थं आरोचेस्साम। यथा नो भगवा ब्याकरिस्सति तथा नं धारेस्सामा'' ति। ''एवमावुसो'' ति खो थेरा भिक्खू तस्स भिक्खुनो पच्चस्सोसुं।

९. अथ खो थेरा भिक्खू येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो थेरा भिक्खू यावतको अहोसि सब्बेहेव सद्धिं कथासल्लापो, तं सब्बं भगवतो आरोचेसुं। ''कस्स नु खो, भन्ते, सुभासितं'' ति ?

''सब्बेसं वो, भिक्खवे, सुभासितं परियायेन, अपि च यं मया सन्धाय भासितं **पारायने मेत्तेय्यपञ्हे**—

'यो उभोन्ते विदित्वान, मज्झे मन्ता न लिप्पति।
तं ब्रूमि महापुरिसो ति, सोध सिब्बिनिमच्चगा' ति॥

---

है, 'विज्ञान' उसका मध्य है, तथा तृष्णा उनके मध्य सम्बन्धस्थापिका है ...पूर्ववत्... दुःख का अन्त कर लेता है।

७. ... 'सत्काय' प्रथम अन्त है, सत्कायसमुदय अन्तिम अन्त है, सत्कायनिरोध उसका मध्य है, तथा तृष्णा ...पूर्ववत्... दुःख का अन्त कर लेता है।

८. यह संवाद हो ही रहा था कि वहाँ उपस्थित भिक्षुओं में से एक भिक्षु ने कहा— ''आयुष्मानो ! हम सबने अपनी अपनी मति के अनुसार उक्त गाथा का व्याख्यान कर दिया। अब, आओ, भगवान् के सम्मुख चलें और उनसे इस गाथा का स्पष्ट विवरण सुनें। उसको सुनकर हम उन का आदेश अपने मन में बैठा लेंगे।'' सभी भिक्षुओं ने यह स्वीकार कर लिया।

९. तब वे सभी स्थविर भिक्षु भगवान् के सम्मुख गये। जाकर, उनको प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे हुए उन भिक्षुओं ने अपना अपना मन्तव्य भगवान् को सुनाया और पूछा कि इनमें से किसका उत्तर यथार्थ है ?

''भिक्षुओ! यों तो तुममें से सभी का उत्तर शास्त्रानुकूल है, परन्तु (सुत्तनिपात के) **पारायणवर्ग** के **मैत्रेयमाणवप्रश्न** में मैंने जो गाथा कही है—

"तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी" ति। "एवं, भन्ते" ति खो थेरा भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

[R.402] १०. "फस्सो खो, भिक्खवे, एको अन्तो, फस्ससमुदयो दुतियो अन्तो, फस्सनिरोधो, मज्झे, तण्हा सिब्बिनी; तण्हा हि नं सिब्बति तस्स तस्सेव भवस्स अभिनिब्बत्तिया। एत्तावता खो, भिक्खवे, भिक्खु अभिञ्ञेय्यं अभिजानाति, परिञ्ञेय्यं [B.352] परिजानाति, अभिञ्ञेय्यं अभिजानन्तो परिञ्ञेय्यं परिजानन्तो दिट्ठेव धम्मे दुक्खस्सन्तकरो होती" ति॥ ●

**८. पुरिसिन्द्रियञाणसुत्तं** : १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा कोसलेसु चारिकं चरमानो महता भिक्खुसङ्घेन सद्धिं येन दण्डकप्पकं नाम कोसलानं निगमो तदवसरि। अथ खो भगवा मग्गा ओक्कम्म अञ्ञतरस्मिं रुक्खमूले पञ्ञत्ते आसने निसीदि। ते च भिक्खू दण्डकप्पकं पविसिंसु आवसथं परियेसितुं।

२. अथ खो आयस्मा आनन्दो सम्बहुलेहि भिक्खूहि सद्धिं येन अचिरवती नदी [N.109] तेनुपसङ्कमि गत्तानि परिसिञ्चितुं। अचिरवतिया नदिया गत्तानि परिसिञ्चित्वा पच्चुत्तरित्वा एकचीवरो अट्ठासि गत्तानि पुब्बापयमानो। अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु येनायस्मा आनन्दो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं आनन्दं एतदवोच—"किं नु खो, आवुसो आनन्द, सब्बं चेतसो समन्नाहरित्वा नु खो देवदत्तो भगवता ब्याकतो—'आपायिको देवदत्तो नेरयिको कप्पट्ठो अतेकिच्छो' ति, उदाहु केनचिदेव परियायेना" ति?

---

'जो दोनों अन्तों को जानकर ...पूर्ववत्... वह इस संसार से सम्बन्ध जोड़ने वाली तृष्णा को अतिक्रान्त कर जाता है।' उस के विषय में मेरा मन्तव्य है—

१० "भिक्षुओ! 'स्पर्श' ही आदि की परिधि है, तथा 'स्पर्शसमुदय' अन्त की परिधि है, 'स्पर्शनिरोध' इसका मध्य है; तृष्णा इनकी सम्बन्धव्यवस्थापिका है। तृष्णा ही उसका उस उस भव में उत्पत्ति के लिये सम्बन्ध बनाती है। आयुष्मानो! इतने से वह भिक्षु जानने योग्य को जान लेता है, तथा समझने योग्य को समझ लेता है। इस प्रकार वह जानने योग्य को जानकर, समझने योग्य को समझकर इसी जन्म में अपने दुःखों का अन्त कर लेता है॥" ●

**८. पुरुषेन्द्रियज्ञानसूत्र : : षड्विध पुद्गल**

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) कोसल प्रदेश में चारिका करते हुए कोसल देश की दण्डकल्पक नामक किसी वस्ती में पधारे। उनके साथ विशाल भिक्षुसङ्घ भी था। भगवान् ग्राम के बाहर, मार्ग से एक ओर, एक वृक्ष के नीचे विराजे। उधर कुछ भिक्षु दण्डकल्पक में भिक्षुओं को ठहरने के लिये कोई स्थान खोजने निकले।

इसी बीच, आयुष्मान् आनन्द बहुत से भिक्षुओं के साथ अचिरवती नदी में स्नान करने हेतु गये। अचिरवती नदी में स्नान करने के बाद, एक चीवर धारण कर शरीर सुखाने के लिये खड़े हो गये। उस समय किसी भिक्षु ने आनन्द से पूछा—"क्या, आयुष्मन् आनन्द! भगवान् ने देवदत्त के विषय में स्वचित्त से सब कुछ जानकर उसके लिये यह घोषणा की थी—'यह देवदत्त कल्पपर्यन्त

''एवं खो पनेतं, आवुसो, भगवता ब्याकतं'' ति।

३. अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—''इधाहं, भन्ते, सम्बहुलेहि भिक्खूहि सद्धिं येन अचिरवती नदी तेनुपसङ्कमिं गत्तानि परिसिञ्चितुं। अचिरवतिया नदिया गत्तानि परिसिञ्चित्वा पच्चुत्तरित्वा एकचीवरो अट्ठासिं गत्तानि पुब्बापयमानो। अथ खो, भन्ते, अञ्ञतरो भिक्खु येनाहं [R.403] तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा मं एतदवोच—'किं नु खो, आवुसो आनन्द, सब्बं चेतसो समन्नाहरित्वा नु खो देवदत्तो भगवता ब्याकतो—आपायिको देवदत्तो नेरयिको कप्पट्ठो अतेकिच्छो ति, उदाहु केनचिदेव परियायेना' ति? एवं वुत्ते अहं, भन्ते, तं भिक्खुं एतदवोचं—'एवं खो पनेतं, आवुसो, भगवता ब्याकतं''' ति।

४. ''सो वा खो, आनन्द, भिक्खु नवो भविस्सति अचिरपब्बजितो, थेरो [B.353] वा पन बालो अब्यत्तो। कथं हि नाम यं मया एकंसेन ब्याकतं तत्थ द्वेज्झं आपज्जिस्सति! नाहं, आनन्द, अञ्ञं एकपुग्गलं पि समनुपस्सामि, यो एवं मया सब्बं चेतसो समन्नाहरित्वा ब्याकतो, यथयिदं देवदत्तो। यावकीवं चाहं, आनन्द देवदत्तस्स वालग्गकोटिनित्तुदनमत्तं पि सुक्कधम्मं अद्दसं; नेव तावाहं देवदत्तं ब्याकासिं—'आपायिको देवदत्तो नेरयिको कप्पट्ठो अतेकिच्छो' ति। यतो च खो अहं, आनन्द, देवदत्तस्स वालग्गकोटिनित्तुदनमत्तं पि सुक्कधम्मं न अद्दसं; अथाहं देवदत्तं ब्याकासिं—'आपायिको देवदत्तो नेरयिको कप्पट्ठो अतेकिच्छो' ति।

[N.110] ५. ''सेय्यथापि, आनन्द, गूथकूपो साधिकपोरिसो पूरो गूथस्स समतित्तिको। तत्र

---

अपायभूत नरक में वास करेगा, उसकी कोई चिकित्सा सम्भव नहीं है?' अथवा, उसका कोई एक चरित्र देखकर ही यह सब कुछ कह दिया था?''

''भगवान् ने तो कुछ ऐसा ही व्याख्यान किया है।''

३. तब आयुष्मान् आनन्द भगवान् के सम्मुख जाकर उनको प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् से जिज्ञासा प्रकट की—''भन्ते! अभी मैं बहुत से भिक्षुओं के साथ अचिरवती नदी में ...पूर्ववत्... कुछ ऐसा ही व्याख्यान किया है।''

४. ''आनन्द! वह प्रश्नकर्ता भिक्षु नया होगा, उसने कुछ समय पूर्व ही प्रव्रज्या ली होगी, या फिर वह (पुराना हो तो) मूर्ख एवं नासमझ होगा। उसको मेरे द्वारा स्पष्ट कही हुई बात में भी सन्देह कैसे हो गया! आनन्द! मैं ऐसे किसी अन्य पुद्गल को नहीं जानता, जिसके विषय में मैंने देवदत्त के विषय से अधिक सोचकर कोई निर्णय दिया हो। आनन्द! यदि मैं देवदत्त में बाल के अग्रभाग जितना सूक्ष्म सद्गुण देखता तो मैं देवदत्त के विषय में यह न कहता कि यह कल्पसमयपर्यन्त अपाय (दुर्गति) भूत निरय (नरक) में वास करेगा। परन्तु आनन्द! जब मैंने उसमें बाल के अग्रभाग के समान भी सूक्ष्म सद्गुण नहीं देखा तब मैंने उसके विषय में उपर्युक्त व्याख्यान किया।''

५. ''आनन्द! जैसे पुरुष की ऊँचाई के प्रमाण का कोई गड्ढा पुरुषमल (टट्टी) से किनारे तक

पुरिसो ससीसको निमुग्गो अस्स। तस्स कोचिदेव पुरिसो उप्पज्जेय्य अत्थकामो हितकामो [B.404] योगक्खेमकामो तम्हा गूथकूपा उद्धरितुकामो। सो तं गूथकूपं समन्तानुपरिगच्छन्तो नेव पस्सेय्य तस्स पुरिसस्स वालग्गकोटिनित्तुदनमत्तं पि गूथेन अमक्खितं, यत्थ तं गहेत्वा उद्धरेय्य। एवमेव खो अहं, आनन्द, यतो देवदत्तस्स वालग्गकोटिनित्तुदनमत्तं पि सुक्कधम्मं न अद्दसं; अथाहं देवदत्तं ब्याकासिं—'आपायिको देवदत्तो नेरयिको कप्पट्ठो अतेकिच्छो' ति। सचे तुम्हे, आनन्द, सुणेय्याथ तथागतस्स पुरिसिन्द्रियञाणानि, विभजिस्सामी'' ति ?

६. ''एतस्स, भगवा, कालो; एतस्स, सुगत, कालो यं भगवा पुरिसिन्द्रियञाणानि विभजेय्य। भगवतो सुत्वा भिक्खू धारेस्सन्ती'' ति।

''तेनहानन्द, सुणाहि, साधुकं मनसि करोहि; भासिस्सामी'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पच्चस्सोसि। भगवा एतदवोच—

७. ''इधाहं, आनन्द, एकच्चं पुग्गलं एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—'इमस्स खो पुग्गलस्स विज्जमाना कुसला पि धम्मा अकुसला पि धम्मा' ति। तमेनं अपरेन समयेन एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—'इमस्स खो पुग्गलस्स कुसला धम्मा अन्तरहिता, [B.354] अकुसला धम्मा सम्मुखीभूता। अत्थि च ख्वस्स कुसलमूलं असमुच्छिन्नं, तम्हा तस्स कुसला कुसलं पातुभविस्सति। एवमयं पुग्गलो आयतिं अपरिहानधम्मो भविस्सती'

---

भरा हो। वहाँ कोई पुरुष आकर उसमें अकस्मात् गिर जाय, और शिर तक डूबने लगे। वहाँ कोई उसका हितकारी योगक्षेमकारी पुरुष आवे और उसको उस गड्ढे से निकालना चाहे। परन्तु वह उसके शरीर का बाल के अग्रभाग जितना अंश भी मल से अलिप्त न देखे कि उसको पकड़कर उसे गड्ढे से बाहर निकाल सके। इसी प्रकार, आनन्द! मैंने इस देवदत्त में बाल के अग्रभाग जितने अंशवाला सद्गुण भी नहीं देखा, अत: मैंने देवदत्त के विषय में वैसा व्याख्यान किया था। आनन्द! यदि तुम सुनना चाहो तो मैं अपने पुरुषगत इन्द्रियज्ञान के विषय में तुमको बता सकता हूँ ?''

''भगवन्! आपके इस उपदेश का यह उचित अवसर है कि आप हम लोगों को इन्द्रियज्ञान के विषय में विस्तार से बतावें। आपसे सुनकर ये भिक्षु जन भी अपने मन-मस्तिष्क में बैठा लेंगे।''

''तो, आनन्द! सुनो, ठीक से मन में बैठा लो। मैं बताता हूँ।''

''अच्छा, भन्ते!'' कहकर भिक्षुओं ने भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य की।

भगवान् यों बोले—

७. ''आनन्द! मैं यहाँ किसी पुद्गल के विषय में स्वचित्त से उसके चित्त को संयुक्त कर यह जान लेता हूँ—'इस पुद्गल में कुशल धर्म भी हैं, तथा अकुशल धर्म भी हैं।' तब दूसरे समय में उसके विषय में यह भी जान लेता हूँ—'इसके कुशल धर्म अब लुप्त हो गये हैं, अकुशल धर्म ही इस समय उसमें विपुल अंश में रह गये हैं। परन्तु इसमें कुशलमूल अभी नष्ट नहीं हुआ है, अत: हो सकता है इसमें इस कुशलमूल से पुन: कुशल धर्म उत्पन्न होने लगें। इस प्रकार इस पुरुष के भविष्य में कुशल धर्म नष्ट नहीं होंगे। जैसे, आनन्द! किसी धान के बीज अखण्ड हों, उनमें कीड़ों ने छिद्र न कर दिये हों, वे सड़े गले न हों, धूप या गर्मी से उनमें कोई विकृति न आयी हो, और ये

ति। सेय्यथापि, आनन्द, बीजानि अखण्डानि अपूतीनि अवातातपहतानि सारदानि सुखसयितानि सुखेत्ते सुपरिकम्मकताय भूमिया निक्खित्तानि। जानेय्यासि त्वं, आनन्द, इमानि बीजानि वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सन्ती'' ति?

''एवं, भन्ते''।

''एवमेव खो अहं, आनन्द, इधेकच्चं पुग्गलं एवं चेतसा चेतो परिच्च [R.405] पजानामि—'इमस्स खो पुग्गलस्स विज्जमाना कुसला पि धम्मा अकुसला पि धम्मा' ति। तमेनं अपरेन समयेन एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—'इमस्स खो पुग्गलस्स कुसला [N.111] धम्मा अन्तरहिता, अकुसला धम्मा सम्मुखीभूता। अत्थि च ख्वस्स कुसलमूलं असमुच्छिन्नं, तम्हा तस्स कुसला कुसलं पातुभविस्सति। एवमयं पुग्गलो आयतिं अपरिहानधम्मो भविस्सती' ति। एवं पि खो, आनन्द, तथागतस्स पुरिसपुग्गलो चेतसा चेतो परिच्च विदितो होति। एवं पि खो, आनन्द, तथागतस्स पुरिसिन्द्रियञाणं चेतसा चेतो परिच्च विदितं होति। एवं पि खो आनन्द, तथागतस्स आयतिं धम्मसमुप्पादो चेतसा चेतो परिच्च विदितो होति।

८. ''इध पनाहं, आनन्द, एकच्चं पुग्गलं एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—'इमस्स खो पुग्गलस्स विज्जमाना कुसला पि धम्मा अकुसला पि धम्मा' ति। तमेनं अपरेन समयेन एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—'इमस्स खो पुग्गलस्स अकुसला धम्मा अन्तरहिता, कुसला धम्मा सम्मुखीभूता। अत्थि च ख्वस्स अकुसलमूलं असमुच्छिन्नं, तम्हा तस्स अकुसला अकुसलं पातुभविस्सति। एवमयं पुग्गलो आयतिं परिहानधम्मो भविस्सती' ति। सेय्यथापि, आनन्द, बीजानि अखण्डानि अपूतीनि अवातातपहतानि सारदानि सुखसयितानि पुथुसिलाय निक्खित्तानि। जानेय्यासि त्वं, आनन्द, नयिमानि बीजानि वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सन्ती'' ति? ''एवं, भन्ते''।

---

सुव्यवस्थित एवं शुद्ध रूप से अच्छे खेत में बोये जायँ तो क्या समझते हो, आनन्द! ऐसे ये बीज एक न एक दिन वृद्धि, उत्पत्ति एवं विपुलता को नहीं प्राप्त करेंगे?''

''हाँ, भन्ते! अवश्य प्राप्त करेंगे।''

''इसी तरह, आनन्द! मैं यहाँ किसी पुद्गल के विषय में... यह जान लेता हूँ—'इस पुद्गल में भी कुशल एवं अकुशल धर्म—दोनों ही हैं। तब किसी अन्य समय में मैं उसके विषय में यह भी जान लेता हूँ ...पूर्ववत्... पुनः कुशल धर्म उत्पन्न होने लगेंगे।' इस प्रकार, आनन्द! मैं स्वचित्त से दूसरे के चित्त का सङ्कल्प जान लेता हूँ। यों, आनन्द! मैं किसी को भविष्य में धर्मोत्पाद होगा कि नहीं—इसको जान लेता हूँ। (१)

८. ''इसी प्रकार, आनन्द! किसी पुद्गल के विषय में ... यह जान लेता हूँ ...पूर्ववत्...। तब दूसरे समय में उसके विषय में... यह भी जान लेता हूँ—इस पुद्गल के अकुशल धर्म अभी तो लुप्त हो गये हैं, कुशल धर्म ही बढ़ रहे हैं, परन्तु इसमें अकुशलमूल उच्छिन्न नहीं हुआ है, अतः उस अकुशलमूल से भविष्य में ये अकुशल धर्म पुनः उत्पन्न हो सकते हैं। जैसे किसी धान के बीज

"एवमेव खो अहं, आनन्द, इधेकच्चं पुग्गलं एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि— 'इमस्स खो पुग्गलस्स विज्जमाना कुसला पि धम्मा अकुसला पि धम्मा' ति। तमेनं अपरेन समयेन एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—'इमस्स खो पुग्गलस्स अकुसला धम्मा अन्तरहिता, कुसला धम्मा सम्मुखीभूता। अत्थि च ख्वस्स अकुसलमूलं असमुच्छिन्नं, तम्हा [B.355,R.406] तस्स अकुसला अकुसलं पातुभविस्सति। एवमयं पुग्गलो आयतिं परिहानधम्मो भविस्सती' ति। एवं पि खो, आनन्द, तथागतस्स पुरिसपुग्गलो चेतसा चेतो परिच्च विदितो होति। एवं पि खो, आनन्द, तथागतस्स पुरिसिन्द्रियञाणं चेतसा चेतो परिच्च विदितं होति। एवं पि खो आनन्द, तथागतस्स आयतिं धम्मसमुप्पादो चेतसा चेतो परिच्च विदितो होति।

[N.112] ९. "इध पनाहं, आनन्द, एकच्चं पुग्गलं एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि— 'इमस्स खो पुग्गलस्स विज्जमाना कुसला पि धम्मा अकुसला पि धम्मा' ति। तमेनं अपरेन समयेन एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—'नत्थि इमस्स पुग्गलस्स वालग्ग-कोटिनित्तुदनमत्तो पि सुक्को धम्मो, समन्नागतोयं पुग्गलो एकन्तकाळकेहि अकुसलेहि धम्मेहि, कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जिस्सती' ति। सेय्यथापि, आनन्द, बीजानि खण्डानि पूतीनि वातातपहतानि सुखेत्ते सुपरिकम्मकताय भूमिया निक्खित्तानि। जानेय्यासि त्वं, आनन्द, नयिमानि बीजानि वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सन्ती" ति? "एवं, भन्ते"।

"एवमेव खो अहं, आनन्द, इधेकच्चं पुग्गलं एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि— 'इमस्स खो पुग्गलस्स विज्जमाना कुसला पि धम्मा अकुसला पि धम्मा' ति। तमेनं अपरेन समयेन एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—'नत्थि इमस्स पुग्गलस्स वालग्ग-कोटिनित्तुदनमत्तो पि सुक्को धम्मो, समन्नागतोयं पुग्गलो एकन्तकाळकेहि अकुसलेहि

---

अखण्ड ...पूर्ववत्... परन्तु उनको किसी शिला पर डाल दिया जाय तो क्या वे वृद्धि ...पूर्ववत्... प्राप्त कर सकेंगे?" "नहीं, भन्ते!"

"इसी तरह, आनन्द! ...पुन: अकुशल धर्म उत्पन्न होने लगेंगे। ...पूर्ववत्... धर्मोत्पाद होगा कि नहीं—इसे जान लेता हूँ। (२)

९. "पुन:, आनन्द! मैं किसी पुद्गल के चित्त का ज्ञान स्वचित्त से इस प्रकार कर लेता हूँ— 'इस पुद्गल में कुशल एवं अकुशल—दोनों ही धर्म विद्यमान हैं। आने वाले समय में यह भी जान लेता हूँ—'इस पुद्गल में बाल के अग्रभाग जितना भी कुशल धर्म अवशिष्ट नहीं है; यह पुद्गल ऐकान्तिक पापमय अकुशल धर्मों से घिरा हुआ है। अत: यह निश्चय ही, अपने इस देहपात के बाद मरणानन्तर, अपायभूत, दुर्गतिमय नरक में ही जा गिरेगा। जैसे, आनन्द! धान के कुछ बीज खण्डित हो चुके हों, छिद्रित हो चुके हों, या सड़ गल गये हों, हवा या धूप से विकृत हो गये हों, फिर भी यदि वे किसी अच्छे खेत में डाल दिये गये हों, तो आनन्द! क्या वे बीज वहाँ बढ़ सकेंगे, उन्नत हो सकेंगे?" "नहीं, भन्ते!"

धम्मेहि, कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जिस्सती' ति। एवं पि खो, आनन्द, तथागतस्स पुरिसपुग्गलो चेतसा चेतो परिच्च विदितो होति। एवं पि खो, आनन्द, तथागतस्स पुरिसिन्द्रियञाणं चेतसा चेतो परिच्च विदितं होति। एवं पि खो, आनन्द, तथागतस्स आयतिं धम्मसमुप्पादो चेतसा चेतो परिच्च विदितो होती'' ति।

१०. एवं वुत्ते आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—''सक्का नु खो, [R.407] भन्ते, इमेसं तिण्णं पुग्गलानं अपरे पि तयो पुग्गला सप्पटिभागा पञ्ञापेतुं'' ति?

''सक्का, आनन्दा,'' ति भगवा अवोच—''इधाहं, आनन्द, एकच्चं पुग्गलं एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—'इमस्स खो पुग्गलस्स विज्जमाना कुसला पि धम्मा अकुसला पि धम्मा' ति। तमेनं अपरेन समयेन एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—'इमस्स खो पुग्गलस्स कुसला धम्मा अन्तरहिता, अकुसला धम्मा सम्मुखीभूता। अत्थि च ख्वस्स कुसलमूलं असमुच्छिन्नं, तं पि सब्बेन सब्बं समुग्घातं गच्छति। एवमयं [N.113,B.356] पुग्गलो आयतिं परिहानधम्मो भविस्सती' ति। सेय्यथापि, आनन्द, अङ्गारानि आदित्तानि सम्पपज्जलितानि सजोतिभूतानि पुथुसिलाय निक्खित्तानि। जानेय्यासि त्वं, आनन्द, नयिमानि अङ्गारानि वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सन्ती'' ति?

''एवं, भन्ते''।

''सेय्यथापि वा पन, आनन्द, सायन्हसमयं सुरिये ओगच्छन्ते। जानेय्यासि त्वं, आनन्द, आलोको अन्तरधायिस्सति अन्धकारो पातुभविस्सती'' ति?

''एवं, भन्ते''।

''सेय्यथापि वा, पनानन्द, अभिदो अड्ढरत्तं भत्तकालसमये। जानेय्यासि त्वं, आनन्द, आलोको अन्तरहितो अन्धकारो पातुभूतो'' ति? ''एवं, भन्ते''।

---

''इसी तरह, आनन्द! ...पूर्ववत्... नरक में जा गिरेगा ...पूर्ववत्... धर्मोत्पाद होगा कि नहीं—इसे जान लेता हूँ।'' (३)

१०. भगवान् द्वारा ऐसा बताये जाने पर आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् से यह जिज्ञासा की... इस प्रकार जान लेता हूँ—इस पुद्गल में ...पूर्ववत्...। दूसरे समय में ... मैं यह भी जान लेता हूँ कि इस पुद्गल के कुशल धर्म लुप्त हो गये हैं, परन्तु अभी इसका कुशलमूल उच्छिन्न नहीं हुआ है, वह भी शनैः शनैः सर्वांशतः नष्ट हो जायगा। इस प्रकार यह पुद्गल भविष्य में धर्मसाधनाविहीन हो जायगा। जैसे, आनन्द! प्रज्वलित अङ्गारराशि को किसी पत्थर की शिला पर रख दिया जाय तो उसमें वृद्धि एवं विपुलता ही आयगी ना?'' ''हाँ, भन्ते!''

''आनन्द! जब सायङ्काल में सूर्य अस्ताचल की ओर जाने लगता है तब तुम जान लेते हो न कि अब प्रकाश कम होता जायगा तथा अन्धकार बढ़ता जायगा?'' ''हाँ, भन्ते!''

और, आनन्द! जब सब तरफ से रात्रि के मध्य भाग के समय, जो कि गृहस्थों का रात्रि-भोजनकाल होता है तब तुम जान लेते हो कि अब घोर अन्धकार छा गया है, प्रकाश पूर्णतः समाप्त हो चुका है?'' ''हाँ, भन्ते!''

''एवमेव खो अहं, आनन्द, इधेकच्चं पुग्गलं एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—'इमस्स खो पुग्गलस्स विज्जमाना कुसला पि धम्मा अकुसला पि धम्मा' ति। तमेनं अपरेन समयेन एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—'इमस्स खो पुग्गलस्स कुसला धम्मा अन्तरहिता, अकुसला धम्मा सम्मुखीभूता। अत्थि च ख्वस्स कुसलमूलं असमुच्छिन्नं, तं पि सब्बेन सब्बं समुग्घातं गच्छति। एवमयं पुग्गलो आयतिं परिहानधम्मो भविस्सती' ति। एवं पि खो, आनन्द, तथागतस्स पुरिसपुग्गलो चेतसा चेतो परिच्च विदितो होति। एवं पि खो, [R.408] आनन्द, तथागतस्स पुरिसिन्द्रियञाणं चेतसा चेतो परिच्च विदितं होति। एवं पि खो, आनन्द, तथागतस्स आयतिं धम्मसमुप्पादो चेतसा चेतो परिच्च विदितो होति।

११. ''इध पनाहं, आनन्द एकच्चं एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—'इमस्स खो पुग्गलस्स विज्जमाना कुसला पि धम्मा अकुसला पि धम्मा' ति। तमेनं अपरेन समयेन एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—'इमस्स खो पुग्गलस्स अकुसला धम्मा अन्तरहिता, कुसला धम्मा सम्मुखीभूता। अत्थि च ख्वस्स अकुसलमूलं असमुच्छिन्नं, तं पि सब्बेन सब्बं [N.114] समुग्घातं गच्छति। एवमयं पुग्गलो आयतिं अपरिहानधम्मो भविस्सती' ति। सेय्यथापि, आनन्द, अङ्गारानि आदित्तानि सम्पज्जलितानि सजोतिभूतानि सुक्खे तिणपुञ्जे वा कट्ठपुञ्जे वा निक्खित्तानि। जानेय्यासि त्वं, आनन्द, इमानि अङ्गारानि वुड्ढिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सन्ती'' ति? ''एवं, भन्ते''।

[B.357] ''सेय्यथापि वा पनानन्द, रत्तिया पच्चूससमयं सुरिये उग्गच्छन्ते। जानेय्यासि त्वं, आनन्द, अन्धकारो अन्तरधायिस्सति, आलोको पातुभविस्सती'' ति?

''एवं, भन्ते''।

''सेय्यथापि वा पनानन्द, अभिदो मज्झन्हिके भत्तकालसमये। जानेय्यासि त्वं, आनन्द, अन्धकारो अन्तरहितो आलोको पातुभूतो'' ति? ''एवं, भन्ते''।

''एवमेव खो अहं, आनन्द, इधेकच्चं पुग्गलं एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—'इमस्स खो पुग्गलस्स विज्जमाना कुसला पि धम्मा अकुसला पि धम्मा' ति। तमेनं अपरेन

---

''इसी प्रकार, आनन्द! मैं किसी पुद्गल के विषय में ...पूर्ववत्... इस प्रकार भी आनन्द! तथागत ... उसका धर्मोत्पाद जान लेते हैं। (४)

११. पुनः, आनन्द! मैं किसी पुद्गल के विषय में ... जान लेता हूँ ...पूर्ववत्... । जैसे, आनन्द! प्रज्वलित अङ्गारराशि किसी तृणसमूह या काष्ठसमूह पर रख दी जाय, तो क्या, आनन्द! वह अङ्गारराशि अधिक प्रज्वलित नहीं होगी?''

''अवश्य प्रज्वलित होगी, भन्ते!''

''जैसे, आनन्द! रात्रि के अन्तिम भाग में ब्राह्म मुहूर्त के समय जब सूर्य का उदय होने वाला हो, तब तुम जान लेते हो न कि अब कुछ ही समय में अन्धकार नष्ट होने वाला है, तथा प्रकाश होने वाला है?'' ''हाँ, भन्ते!''

समयेन एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—'इमस्स खो पुग्गलस्स अकुसला धम्मा अन्तरहिता, कुसला धम्मा सम्मुखीभूता। अत्थि च ख्वस्स अकुसलमूलं असमुच्छिन्नं, तं पि सब्बेन सब्बं समुग्घातं गच्छति। एवमयं पुग्गलो आयतिं अपरिहानधम्मो भविस्सती' ति। एवं पि खो, आनन्द, तथागतस्स पुरिसपुग्गलो चेतसा चेतो परिच्च विदितो होति। एवं पि खो, आनन्द, तथागतस्स पुरिसिन्द्रियञाणं चेतसा चेतो परिच्च विदितं होति। एवं [R.409] पि खो, आनन्द, तथागतस्स आयतिं धम्मसमुप्पादो चेतसा चेतो परिच्च विदितो होति।

१२. ''इध पनाहं, आनन्द, एकच्चं पुग्गलं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—'इमस्स खो पुग्गलस्स विज्जमाना कुसला पि धम्मा अकुसला पि धम्मा' ति। तमेनं अपरेन समयेन एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—'नत्थि इमस्स पुग्गलस्स वालग्ग-कोटिनित्तुदनमत्तो पि अकुसलो धम्मो, समन्नागतोयं पुग्गलो एकन्तसुक्केहि अनवज्जेहि धम्मेहि, दिट्ठेव धम्मे परिनिब्बायिस्सती' ति। सेय्यथापि, आनन्द, अङ्गारानि [N.115] सीतानि निब्बुतानि सुक्खे तिणपुञ्जे वा कट्ठपुञ्जे वा निक्खित्तानि। जानेय्यासि त्वं, आनन्द, नयिमानि अङ्गारानि वुद्धिं विरूळ्हिं वेपुल्लं आपज्जिस्सन्ती'' ति? ''एवं, भन्ते''।

''एवमेव खो अहं, आनन्द, इधेकच्चं पुग्गलं एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—'इमस्स खो पुग्गलस्स विज्जमाना कुसला पि धम्मा अकुसला पि धम्मा' ति। तमेनं अपरेन समयेन एवं चेतसा चेतो परिच्च पजानामि—'नत्थि इमस्स पुग्गलस्स वालग्ग-कोटिनित्तुदनमत्तो पि अकुसलो धम्मो, समन्नागतोयं पुग्गलो एकन्तसुक्केहि अनवज्जेहि धम्मेहि, दिट्ठेव धम्मे परिनिब्बायिस्सती' ति। एवं पि खो, आनन्द, तथागतस्स पुरिसपुग्गलो चेतसा चेतो परिच्च विदितो होति। एवं पि खो, आनन्द, तथागतस्स पुरिसिन्द्रिय- [B.358] ञाणं चेतसा चेतो परिच्च विदितं होति। एवं पि खो, आनन्द, तथागतस्स आयतिं धम्मसमुप्पादो चेतसा चेतो परिच्च विदितो होति।

''तत्रानन्द, ये ते पुरिमा तयो पुग्गला तेसं तिण्णं पुग्गलानं एको अपरिहानधम्मो,

---

''इसी प्रकार, आनन्द मैं किसी पुद्गल के विषय में... जान लेता हूँ ...पूर्ववत्... इस प्रकार भी, आनन्द! तथागत ... उसका धर्मोत्पाद जान लेते हैं। (५)

१२. ''पुन:, आनन्द! मैं किसी पुद्गल के विषय में ... जान लेता हूँ ...पूर्ववत्...। पुन: मैं ... जान लेता हूँ—'इस पुद्गल के चित्त में बाल के अग्रभाग जितना भी अकुशल धर्म नहीं रह गया है। यह पुद्गल एकान्तत: शुक्ल (कुशल) धर्मो से सम्पृक्त है, यह इसी जन्म में परिनिर्वाण प्राप्त कर लेगा।' जैसे, आनन्द! बुझे हुए कोमलों को शुष्क तृणराशि पर, या काष्ठसमूह पर डाल दिया जाय। जानते हो ना, आनन्द! ये बुझे कोयले वहाँ किसी भी प्रकार की वृद्धि, या विपुलता नहीं प्राप्त कर सकते?'' ''हाँ, भन्ते!''

''इसी प्रकार, आनन्द! मैं किसी पुद्गल के विषय में... जान लेता हूँ— ...पूर्ववत्... इस प्रकार भी आनन्द! तथागत किसी पुद्गल के विषय में ... उसका धर्मोत्पाद जान लेते हैं। (६)

एको परिहानधम्मो, एको आपायिको नेरयिको। तत्रानन्द, येमे पच्छिमा तयो पुग्गला इमेसं तिण्णं पुग्गलानं एको परिहानधम्मो, एको अपरिहानधम्मो, एको परिनिब्बानधम्मो'' ति॥

[R.410] **९. निब्बेधिकसुत्तं** : १. ''निब्बेधिकपरियायं वो, भिक्खवे, धम्मपरियायं देसेस्सामि। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

२. ''कतमो च सो, भिक्खवे, निब्बेधिकपरियायो धम्मपरियायो? कामा, भिक्खवे, वेदितब्बा, कामानं निदानसम्भवो वेदितब्बो, कामानं वेमत्तता वेदितब्बा, कामानं विपाको वेदितब्बो, कामनिरोधो वेदितब्बो, कामनिरोधगामिनी पटिपदा वेदितब्बा।

३. ''वेदना, भिक्खवे, वेदितब्बा, वेदनानं निदानसम्भवो वेदितब्बो, वेदनानं वेमत्तता वेदितब्बा, वेदनानं विपाको वेदितब्बो, वेदनानिरोधो वेदितब्बो, वेदना-निरोधगामिनी पटिपदा वेदितब्बा।

[N.116] ४. ''सञ्ञा, भिक्खवे, वेदितब्बा, सञ्ञानं निदानसम्भवो वेदितब्बो, सञ्ञानं वेमत्तता वेदितब्बा, सञ्ञानं विपाको वेदितब्बो, सञ्ञानिरोधो वेदितब्बो, सञ्ञा-निरोधगामिनी पटिपदा वेदितब्बा।

५. ''आसवा, भिक्खवे, वेदितब्बा, आसवानं निदानसम्भवो वेदितब्बो, आसवानं

---

''वहाँ, आनन्द! मैंने जो पीछे तीन पुद्गल गिनाये थे, उनमें से एक का धर्म प्रहीण नहीं हुआ था, एक का धर्म प्रहीण हो चुका था और एक तो पूर्णतः नरकगामी था ही। और, आनन्द! जो बाद में तीन पुद्गल गिनाये हैं, उनमें से भी एक परिहाणधर्मा है और एक अपरिहाणधर्मा है तथा अन्तिम परिनिर्वाणधर्मा है।'' ●

**९. निर्वेधिकसूत्र : : षड्विध धर्मपर्याय**

१. ''भिक्षुओ! 'निर्वेधिक'—इस पर्याय वाले एक धर्मसूत्र का तुमको उपदेश करूँगा। उसको सुनो, ठीक से मन में बैठा लो। मैं तुम्हें बता रहा हूँ।''

''अच्छा, भन्ते!'' कह कर भिक्षुओं ने भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य की। भगवान् बोले—

२. ''भिक्षुओ! यह धर्मसूत्र कौन सा है? भिक्षुओ! तुम लोगों को कामभोगों (की वास्तविकता) को जानना चाहिये। इन कामभोग के कारणों की उत्पत्ति को जानना चाहिये। इन कामभोगों के द्वैधीभाव को समझना चाहिये। कामभोगों का विपाक (परिणाम) जानना चाहिये। इन कामभोगों के निरोध को जानने चाहिये तथा इन कामभोगों के निरोध का मार्ग (उपाय) जानना चाहिये। (१)

३. ''वेदना को जानना चाहिये, वेदना के कारणों की उत्पत्ति को, वेदना के द्वैधीभाव को, वेदना के विपाक को, वेदना के निरोध तथा उस निरोध का उपाय (मार्ग) जानना चाहिये। (२)

४. ''संज्ञा को, संज्ञा के निदानों की उत्पत्ति को, संज्ञा के द्वैधीभाव को, संज्ञा के विपाक को, संज्ञा के निरोध तथा उस निरोध का उपाय जाना चाहिये। (३)

वेमत्तता वेदितब्बा, आसवानं विपाको वेदितब्बो, आसवनिरोधो वेदितब्बो, आसव-निरोधगामिनी पटिपदा वेदितब्बा।

६. ''कम्मं, भिक्खवे, वेदितब्बं, कम्मानं निदानसम्भवो वेदितब्बो, [B.359] कम्मानं वेमत्तता, कम्मानं विपाको वेदितब्बो, कम्मनिरोधो वेदितब्बो, कम्मनिरोधगामिनी पटिपदा वेदितब्बा।

७. ''दुक्खं, भिक्खवे, वेदितब्बं, दुक्खस्स निदानसम्भवो वेदितब्बो, दुक्खस्स वेमत्तता वेदितब्बा, दुक्खस्स विपाको वेदितब्बो, दुक्खनिरोधो वेदितब्बो, दुक्ख-निरोधगामिनी पटिपदा वेदितब्बा।

८. '''कामा, भिक्खवे, वेदितब्बा, कामानं निदानसम्भवो वेदितब्बो, कामानं वेमत्तता वेदितब्बा, कामानं विपाको वेदितब्बो, कामनिरोधो वेदितब्बो, [R.411] कामनिरोधगामिनी पटिपदा वेदितब्बा' ति, इति खो पनेतं वुत्तं, किं चेतं पटिच्च वुत्तं? पञ्चिमे, भिक्खवे, कामगुणा—चक्खुविञ्ञेय्या रूपा इट्ठा कन्ता मनापा पियरूपा कामूपसंहिता रजनीया, सोतविञ्ञेय्या सद्दा... घानविञ्ञेय्या गन्धा... जिव्हाविञ्ञेय्या रसा ... कायविञ्ञेय्या फोट्ठब्बा इट्ठा कन्ता मनापा पियरूपा कामूपसंहिता रजनीया। अपि च खो, भिक्खवे, नेते कामा कामगुणा नामेते अरियस्स विनये वुच्चन्ति—

'सङ्कप्परागो पुरिसस्स कामो, नेते कामा यानि चित्रानि लोके।
सङ्कप्परागो पुरिसस्स कामो, तिट्ठन्ति चित्रानि तथेव लोके।
अथेत्थ धीरा विनयन्ति छन्दं'' ति॥

---

५. ''आश्रवों (चित्तविकार) को, आश्रवों के निदानों की उत्पत्ति, आश्रवों का द्वैधीभाव, आश्रवों का विपाक, आश्रवों का निरोध तथा उस निरोध का उपाय जानना चाहिये। (४)

६. कर्मों को, कर्मों के निदान की उत्पत्ति को, कर्मों के द्वैधीभाव को, कर्मों के विपाक को, कर्मों के निरोध को, कर्मों के निरोध के उपाय को जानना चाहिये। (५)

७. 'दुःख को, दुःख के निदान की उत्पत्ति को, दुःख के द्वैधीभाव को, दुःख के विपाक को, दुःख के निरोध तथा उस (निरोध) के उपाय को भी जानना चाहिये। (६)

८. ''भिक्षुओ! 'कामभोगों को ...पूर्ववत्... कामभोगों के निरोध के उपाय को जानना चाहिये'—यह जो मैंने कहा, वह किस कारण से कहा? भिक्षुओ! ये कामभोग पाँच प्रकार के होते हैं—(१) इष्ट, कान्त, मनाप, प्रिय, कामों से एकत्रित रागोत्पादक चक्षुर्विज्ञेय रूप, (२) ...श्रोत्रविज्ञेय शब्द, (३) ...घ्राणविज्ञेय गन्ध,... (४) ...जिह्वाविज्ञेय रस, (५) ...कायविज्ञेय स्प्रष्टव्य। परन्तु ये कामभोग लौकिक होते हैं। आर्यविनय (बुद्धानुशासन) में तो—

''पुरुषों की सङ्कल्पों के प्रति आसक्ति ही 'काम' कहलाती है, लोकप्रसिद्ध (उपर्युक्त) चित्र विचित्र कामभोग नहीं। ये लौकिक कामभोग इसी सङ्कल्प के अधीन हैं। धीर साधक इस सङ्कल्पराग पर धर्मसाधना द्वारा नियन्त्रण कर पाते हैं॥ (क)

९. "कतमो च, भिक्खवे, कामानं निदानसम्भवो? फस्सो, भिक्खवे, कामानं निदानसम्भवो।

[N.117] "कतमा च, भिक्खवे, कामानं वेमत्तता? अञ्ञो, भिक्खवे, कामो रूपेसु, अञ्ञो कामो सद्देसु, अञ्ञो कामो गन्धेसु, अञ्ञो कामो रसेसु, अञ्ञो कामो फोट्ठब्बेसु। अयं वुच्चति, भिक्खवे, कामानं वेमत्तता।

[B.360] "कतमो च, भिक्खवे, कामानं विपाको? यं खो भिक्खवे, कामयमानो तज्जं अत्तभावं अभिनिब्बत्तेति पुञ्ञभागियं वा अपुञ्ञभागियं वा, अयं वुच्चति, भिक्खवे, कामानं विपाको।

"कतमो च, भिक्खवे, कामनिरोधो? फस्सनिरोधो, भिक्खवे, कामनिरोधो। अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो कामनिरोधगामिनी पटिपदा, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि, [R.412] सम्मासङ्कप्पो, सम्मावाचा, सम्माकम्मन्तो, सम्माआजीवो, सम्मावायामो, सम्मासति, सम्मासमाधि।

"यतो खो, भिक्खवे, अरियसावको एवं कामे पजानाति, एवं कामानं निदानसम्भवं पजानाति, एवं कामानं वेमत्ततं पजानाति, एवं कामानं विपाकं पजानाति, एवं कामनिरोधं पजानाति, एवं कामनिरोधगामिनिं पटिपदं पजानाति, सो इमं निब्बेधिकं ब्रह्मचरियं पजानाति कामनिरोधं। 'कामा, भिक्खवे, वेदितब्बा ...पे०... कामनिरोधगामिनी पटिपदा वेदितब्बा' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

१०. "वेदना, भिक्खवे, वेदितब्बा ...पे०... वेदनानिरोधगामिनी पटिपदा वेदितब्बा

---

"भिक्षुओ! कामनिदान की उत्पत्ति कैसे सम्भव है? भिक्षुओ! स्पर्श से ही कामों की उत्पत्ति सम्भव है। (ख)

"भिक्षुओ! इन कामों का द्वैधीभाव (वैमत्य=पृथक्त्व) क्या है? भिक्षुओ! रूपों में काम अन्य प्रकार का है, शब्दों में ...गन्धों में ...रसों में ...स्प्रष्टव्यों में काम अन्य प्रकार का है। (ग)

"भिक्षुओ! कामों का विपाक (=परिणाम, फल) क्या है? भिक्षुओ! उन उन कामों की इच्छा करने पर उस उस से जो आत्मीयता उत्पन्न होती है, वह फिर पुण्यप्रद हो या अपुण्यप्रद—यह कहलाती है कामों का विपाक। (घ)

"भिक्षुओ! यह कामनिरोध क्या है? भिक्षुओ! इसी प्रकरण में पहले जो हम 'स्पर्श' कह आये हैं, उसका निरोध ही कामनिरोध है। (ङ)

"और यह जो आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग बताया है, जैसे—सम्यग्दृष्टि, सम्यक्सङ्कल्प, सम्यग्वाक्, सम्यक्कर्मान्त, सम्यगाजीव, सम्यग्व्यायाम, सम्यक्स्मृति एवं सम्यक्समाधि; यही इस कामनिरोध का उपाय है। (च)

"भिक्षुओ! क्योंकि जब साधक भिक्षु इस प्रकार इन कामों को, कामनिदान को, कामों के द्वैधीभाव को, कामों के विपाक को, कामनिरोध तथा इस कामनिरोध के उपाय को भलीभाँति जान लेता है, तो वह इस निर्वेधिक धर्मसाधनारूप कामनिरोध को जान लेता है। अतः भिक्षुओ! मैंने जो

ति, इति खो पनेतं वुत्तं, किं चेतं पटिच्च वुत्तं? तिस्सो इमा, भिक्खवे, वेदना—सुखा वेदना, दुक्खा वेदना, अदुक्खमसुखा वेदना।

"कतमो च, भिक्खवे, वेदनानं निदानसम्भवो? फस्सो, भिक्खवे, वेदनानं निदानसम्भवो।

"कतमो च, भिक्खवे, वेदनानं वेमत्तता? अत्थि, भिक्खवे, सामिसा सुखा वेदना, अत्थि निरामिसा सुखा वेदना, अत्थि सामिसा दुक्खा वेदना, अत्थि निरामिसा दुक्खा वेदना, अत्थि सामिसा अदुक्खमसुखा वेदना, अत्थि निरामिसा अदुक्खमसुखा वेदना। अयं वुच्चति, भिक्खवे, वेदनानं वेमत्तता।

"कतमो च, भिक्खवे, वेदनानं विपाको? यं खो, भिक्खवे, वेदियमानो [N.118] तज्जं तज्जं अत्तभावं अभिनिब्बत्तेति पुञ्ञभागियं वा अयं वुच्चति, भिक्खवे, वेदनानं विपाको।

"कतमो च, भिक्खवे, वेदनानिरोधो? फस्सनिरोधो, भिक्खवे, वेदना- [B.361] निरोधो। अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो वेदनानिरोधगामिनी पटिपदा, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्मासमाधि।

"यतो खो, भिक्खवे, अरियसावको एवं वेदनं पजानाति, एवं वेदनानं [R.413] निदानसम्भवं पजानाति, एवं वेदनानं वेमत्ततं पजानाति, एवं वेदनानं विपाकं पजानाति, एवं

---

पूर्व में कहा था—'कामों को ...पूर्ववत्... कामनिरोध के उपाय को जानना चाहिये'—यह जो कहा था, वह इसी उद्देश्य से कहा था। (१)

१०. "भिक्षुओ! 'वेदना को, ...पूर्ववत्... वेदनानिरोध के उपाय को जानना चाहिये'—यह जो कहा था, किस उद्देश्य से कहा था?

"भिक्षुओ! वेदना त्रिविध होती है, जैसे—१. सुखा वेदना, २. दुःखा वेदना, एवं ३. अदुःखा असुखा वेदना। (क)

"इन वेदनाओं का निदान (उत्पत्तिकारण) क्या है? स्पर्श इनका उत्पत्तिकारण है। (ख)

"इन वेदनाओं का द्वैधीभाव (पृथक्त्व) क्या है? भिक्षुओ! इनमें सुखावेदना सामिषा (भौतिक) होती है, दुःखावेदना निरामिषा (अभौतिक) होती है तथा अदुःख-असुखा वेदना सामिषा एवं निरामिषा—उभयविध होती है। भिक्षुओ! यह वेदनाओं का द्वैधीभाव हैं। (ग)

"भिक्षुओ! वेदनाओं का विपाक क्या है? जिसकी वेदना, किये जाने पर, तज्जन्य को जन्म देती है, भले ही फिर वह पुण्यभागीय हो या अपुण्यभागीय—यही, भिक्षुओ! वेदनाओं का विपाक है। (घ)

"भिक्षुओ! वेदनाओं का निरोध क्या है? उक्त स्पर्श का निरोध ही वेदनानिरोध है। (ङ)

तथा वेदनानिरोध की तरफ ले जाने वाला आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग ही वेदनानिरोध का उपाय है; जैसे—सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यक्समाधि। (च)

"क्योंकि, भिक्षुओ! जो आर्यश्रावक इस प्रकार वेदना को जानता है ...पूर्ववत्... वेदनानिरोध

वेदनानिरोधं पजानाति, एवं वेदनानिरोधगामिनिं पटिपदं पजानाति। सो इमं निब्बेधिकं ब्रह्मचरियं पजानाति वेदनानिरोधं। 'वेदना, भिक्खवे, वेदितब्बा ...पे०... वेदना-निरोधगामिनी पटिपदा वेदितब्बा' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

११. '''सञ्ञा, भिक्खवे, वेदितब्बा ...पे०... सञ्ञानिरोधगामिनी पटिपदा वेदितब्बा' ति, इति खो पनेतं, वुत्तं किं चेतं पटिच्च वुत्तं? छयिमा, भिक्खवे, सञ्ञा—रूपसञ्ञा, सद्दसञ्ञा, गन्धसञ्ञा, रससञ्ञा, फोट्ठब्बसञ्ञा, धम्मसञ्ञा।

''कतमो च, भिक्खवे, सञ्ञानं निदानसम्भवो? फस्सो, भिक्खवे, सञ्ञानं निदानसम्भवो।

''कतमा च, भिक्खवे, सञ्ञानं वेमत्तता? अञ्ञा, भिक्खवे, सञ्ञा रूपेसु, अञ्ञा सञ्ञा सद्देसु, अञ्ञा, सञ्ञा गन्धेसु, अञ्ञा सञ्ञा रसेसु, अञ्ञा सञ्ञा फोट्ठब्बेसु, अञ्ञा सञ्ञा धम्मेसु। अयं वुच्चति, भिक्खवे, सञ्ञानं वेमत्तता।

''कतमो च, भिक्खवे, सञ्ञानं विपाको? वोहारवेपक्कं, भिक्खवे, सञ्ञं वदामि। यथा यथा नं सञ्जानाति तथा तथा वोहरति—'एवंसञ्ञी अहोसिं' ति। अयं वुच्चति, भिक्खवे, सञ्ञानं विपाको।

''कतमो च, भिक्खवे, सञ्ञानिरोधो? फस्सनिरोधो, भिक्खवे, सञ्ञानिरोधो। अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो सञ्ञानिरोधगामिनी पटिपदा, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्मासमाधि।

[B.362] ''यतो खो, भिक्खवे, अरियसावको एवं सञ्ञं पजानाति, एवं सञ्ञानं निदान-

---

के उपाय को जानता है, वही इस निर्वेधिक धर्मपर्याय वेदनानिरोध को जान पाता है। 'वेदना को, भिक्षुओ! जानना चाहिये ...पूर्ववत्... वेदनानिरोध को जानना चाहिये'—यह जो पहले मैंने कहा था, इसी उद्देश्य से कहा था। (२)

११. ''भिक्षुओ! 'संज्ञा को जानना चाहिये...पूर्ववत्... संज्ञानिरोध के उपाय को जानना चाहिये'—यह जो मैंने कहा था, वह किस अभिप्राय से कहा था?

''भिक्षुओ! ये संज्ञाएँ छह कहलाती हैं। जैसे—रूपसंज्ञा, शब्दसंज्ञा, गन्धसंज्ञा, रससंज्ञा, स्प्रष्टव्यसंज्ञा, एवं धर्मसंज्ञा। (क)

''भिक्षुओ! संज्ञाओं के निदान की उत्पत्ति क्या है? स्पर्श ही संज्ञाओं का निदान है। (ख)

''भिक्षुओ! संज्ञाओं का द्वैधीभाव क्या है? भिक्षुओ! रूपों में संज्ञा भिन्न (दूसरी) होती है, शब्दों में... गन्धों में... रसों में... स्प्रष्टव्य विषयों में... मनोधर्मों में संज्ञा भिन्न होती है। (ग)

''भिक्षुओ! संज्ञाओं का विपाक क्या होता है? व्यवहार के अनुसार संज्ञा का विपाक कहा जाता है। जैसा जैसा पुद्गल उसको जानता है वैसा वैसा ही वह व्यवहार करता है—'मैं इस संज्ञावाला हुआ था'। भिक्षुओ! वहीं संज्ञाओं का विपाक कहलाता है। (घ)

''भिक्षुओ! संज्ञानिरोध क्या होता है? स्पर्श का निरोध ही संज्ञा का निरोध है। (ङ)

''तथा यह सम्यग्दृष्टि आदि आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग संज्ञानिरोध का उपाय है। (च)

सम्भवं पजानाति, एवं सञ्ञानं वेमत्ततं पजानाति, एवं सञ्ञानं विपाकं पजानाति, [R.414] एवं सञ्ञानिरोधं पजानाति, एवं सञ्ञानिरोधगामिनिं पटिपदं पजानाति, सो इमं [N.119] निब्बेधिकं ब्रह्मचरियं पजानाति सञ्ञानिरोधं। 'सञ्ञा, भिक्खवे, वेदितब्बा ...पे०... सञ्ञानिरोधगामिनी पटिपदा वेदितब्बा' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्चं वुत्तं।

१२. "'आसवा, भिक्खवे, वेदितब्बा ...पे०... आसवनिरोधगामिनी पटिपदा वेदितब्बा' ति इति खो पनेतं वुत्तं, किं चेतं पटिच्च वुत्तं? तयोमे, भिक्खवे, आसवा—कामासवो, भवासवो, अविज्जासवो।

"कतमो च, भिक्खवे, आसवानं निदानसम्भवो? अविज्जा, भिक्खवे, आसवानं निदानसम्भवो।

"कतमा च, भिक्खवे, आसवानं वेमत्तता? अत्थि, भिक्खवे, आसवा निरयगमनीया, अत्थि आसवा तिरच्छानयोनिगमनीया, अत्थि आसवा पेत्तिविसयगमनीया, अत्थि आसवा मनुस्सलोकगमनीया, अत्थि आसवा देवलोकगमनीया। अयं वुच्चति, भिक्खवे, आसवानं वेमत्तता।

"कतमो च, भिक्खवे, आसवानं विपाको? यं खो, भिक्खवे, अविज्जागतो तज्जं तज्जं अत्तभावं अभिनिब्बत्तेति पुञ्ञभागियं वा अपुञ्ञभागियं वा, अयं वुच्चति, भिक्खवे, आसवानं विपाको।

"कतमो च, भिक्खवे, आसवनिरोधो? अविज्जानिरोधो, भिक्खवे, आसव-

---

"क्योंकि, भिक्षुओ! जो आर्यश्रावक इस प्रकार संज्ञाओं को, संज्ञाओं के निदान को, संज्ञाओं के द्वैधीभाव को, संज्ञाओं के विपाक को, संज्ञाओं के निरोध तथा उसका उपाय जानता है, वही इस निर्वेधिक धर्मपर्याय संज्ञानिरोध को जानता है। भिक्षुओ! 'संज्ञा को... संज्ञानिरोध को जानना चाहिये'—यह जो मैंने कहा था, इसी उद्देश्य से कहा था। (३)

१२. "भिक्षुओ! 'आश्रवों को जानना चाहिये, ...पूर्ववत्... आश्रवनिरोध का उपाय जानना चाहिये'—यह जो मैंने कहा था, यह किस आशय से कहा था?

"भिक्षुओ! आश्रव तीन होते हैं—१. कामाश्रव, २. भवाश्रव एवं ३. अविद्याश्रव।

"भिक्षुओ! आश्रवों की निदानोत्पत्ति क्या है? भिक्षुओ! अविद्या ही आश्रवों के कारणों की उत्पादिका है।

"भिक्षुओ! आश्रवों का द्वैविध्य क्या है? भिक्षुओ! कुछ आश्रव नरक की ओर ले जाने वाले होते हैं, कुछ आश्रव पशु-पक्षियों की योनि में पात कराने वाले होते हैं, कुछ आश्रव भूत-प्रेतों की योनि में ले जाकर गिरा देते हैं, कुछ आश्रव मनुष्यलोक में पैदा होने में सहायक होते हैं और कुछ आश्रव देवलोक तक पहुँचाने की क्षमता रखते हैं। भिक्षुओ! यह है आश्रवों का द्वैविध्य।

"और, भिक्षुओ! आश्रवों का विपाक क्या है? यह जो भिक्षुओ! अविद्या के कारण उस उस जगह होने वाला आत्मभाव है, भले ही वह पुण्यभागीय हो या अपुण्यभागीय, यही कहलाता है आश्रवों का विपाक (परिणाम)।

निरोधो। अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो आसवनिरोधगामिनी पटिपदा, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्मासमाधि।

"यतो खो, भिक्खवे, अरियसावको एवं आसवे पजानाति, एवं आसवानं निदानसम्भवं पजानाति, एवं आसवानं वेमत्ततं पजानाति, एवं आसवानं विपाकं पजानाति, एवं आसवानं निरोधं पजानाति, एवं आसवानं निरोधगामिनिं पटिपदं पजानाति, सो इमं निब्बेधिकं ब्रह्मचरियं पजानाति आसवनिरोधं। 'आसवा, भिक्खवे, वेदितब्बा ...पे०... [R.415] आसवनिरोधगामिनी पटिपदा वेदितब्बा' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च [B.363] वुत्तं।

१३. "'कम्मं, भिक्खवे, वेदितब्बं ...पे०... कम्मनिरोधगामिनी पटिपदा [N.120] वेदितब्बा' ति, इति खो पनेतं वुत्तं, किं चेतं पटिच्च वुत्तं? चेतनाहं, भिक्खवे, कम्मं वदामि। चेतयित्वा कम्मं करोति—कायेन वाचाय मनसा।

"कतमो च, भिक्खवे, कम्मानं निदानसम्भवो? फस्सो, भिक्खवे, कम्मानं निदानसम्भवो।

"कतमा च, भिक्खवे, कम्मानं वेमत्तता? अत्थि, भिक्खवे, कम्मं निरयवेदनीयं, अत्थि कम्मं तिरच्छानयोनिवेदनीयं, अत्थि कम्मं पेत्तिविसयवेदनीयं, अत्थि कम्मं मनुस्सलोकवेदनीयं, अत्थि कम्मं देवलोकवेदनीयं। अयं वुच्चति, भिक्खवे, कम्मानं वेमत्तता।

---

"भिक्षुओ! यह आश्रवनिरोध क्या है? भिक्षुओ! उक्त अविद्या का निरोध ही आश्रव-निरोध है।

"तथा इस आश्रवनिरोध का उपाय है—आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग, जैसे—सम्यग्दृष्टि... सम्यक्समाधि।

"भिक्षुओ! क्योंकि जो कोई आर्यश्रावक इस प्रकार आश्रवों को, आश्रवसमुदय को, आश्रवों के पृथग्भाव को, आश्रवों के विपाक को तथा आश्रवनिरोध एवं उस निरोध के उपाय को जानता है वही इस निर्वेधिक धर्मपर्याय आश्रवनिरोध को जान पाता है। भिक्षुओ! 'आश्रवों को ...पूर्ववत्... आश्रवनिरोध के उपाय जो जानना चाहिये'—यह जो कहा था, वह इसी आशय से कहा था। (४)

१३. "भिक्षुओ! 'कर्म को जानना चाहिये, ...पूर्ववत्... कर्मनिरोध के उपाय को जानना चाहिये'—यह किस आशय से कहा गया है? भिक्षुओ! मेरी दृष्टि में चेतना ही कर्म है। भिक्षुओ! जो काय वाक् एवं मन से विचार कर किया जाता है वही 'कर्म' कहलाता है।

"भिक्षुओ! इन कर्मों की कारणोत्पत्ति क्या है? भिक्षुओ! स्पर्श ही कर्मों के कारणों की उत्पत्ति है।

"भिक्षुओ! कर्मों की विविधता क्या है? भिक्षुओ! कुछ कर्म निरयपात से जाने जाते हैं, कुछ पशुपक्षियोनियों में पात से, कुछ प्रेतयोनि से, कुछ मनुष्ययोनि से तथा कुछ देवयोनि में जाने से जाने जाते हैं। भिक्षुओ! यह है कर्मों की विविधता।

"कतमो च, भिक्खवे, कम्मानं विपाको? दिविधाहं, भिक्खवे, कम्मानं विपाकं वदामि—दिट्ठेव धम्मे उपपज्जे वा अपरे वा परियाये। अयं वुच्चति, भिक्खवे, कम्मानं विपाको।

"कतमो च, भिक्खवे, कम्मनिरोधो? फस्सनिरोधो, भिक्खवे, कम्मनिरोधो। अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो कम्मनिरोधगामिनी पटिपदा, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्मासमाधि।

"यतो खो, भिक्खवे, अरियसावको एवं कम्मं पजानाति, एवं कम्मानं निदान-सम्भवं पजानाति, एवं कम्मानं वेमत्ततं पजानाति, एवं कम्मानं विपाकं पजानाति, एवं कम्मनिरोधं पजानाति, एवं कम्मनिरोधगामिनिं पटिपदं पजानाति, सो इमं निब्बेधिकं ब्रह्मचरियं पजानाति कम्मनिरोधं। 'कम्मं, भिक्खवे, वेदितब्बं ...पे०... कम्म- [R.416] निरोधगामिनी पटिपदा वेदितब्बा' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

१४. "'दुक्खं, भिक्खवे, वेदितब्बं, दुक्खस्स निदानसम्भवो वेदितब्बो, दुक्खस्स वेमत्तता वेदितब्बा, दुक्खस्स विपाको वेदितब्बो, दुक्खनिरोधो वेदितब्बो, दुक्खनिरोध-गामिनि पटिपदा वेदितब्बा' ति, इति खो पनेतं वुत्तं, किं चेतं पटिच्च वुत्तं? जाति पि [B.364] दुक्खा, जरा पि दुक्खा, ब्याधि पि दुक्खो, मरणं पि दुक्खं, सोकपरिदेवदुक्खदोमनस्सु-पायासा पि दुक्खा, यं पिच्छं न लभति तं पि दुक्खं, सङ्खित्तेन पञ्चुपादानक्खन्धा दुक्खा।

---

"भिक्षुओ! कर्मों का विपाक (फल) क्या है? कर्मों का फल द्विविध होता है—१. या तो इसी जन्म में, २. या फिर दूसरे जन्म में। भिक्षुओ! यह कर्मों का विपाक कहलाता है।

"भिक्षुओ! कर्मनिरोध क्या कहलाता है? उक्त स्पर्श का निरोध ही 'कर्मनिरोध' कहलाता है।

"भिक्षुओ! इस कर्मनिरोध का उपाय है आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग; जैसे—सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यक्समाधि।

"भिक्षुओ! जो आर्यश्रावक इस प्रकार कर्मों को, कर्मों के निदान को, कर्मों के पृथग्भाव को, कर्मों के विपाक को, कर्मनिरोध को, कर्मनिरोध के उपाय को जानता है, वही इस निर्वेधिक कर्मनिरोध-धर्मसाधना को जानता है। भिक्षुओ! 'कर्म को जानना चाहिये... कर्मनिरोध के उपाय को जानना चाहिये'—यह जो कहा था, इसी उद्देश्य से कहा था। (५)

१४. "भिक्षुओ! 'दु:ख को... दु:ख समुदय को, दु:ख के पृथग्भाव को, दु:ख के विपाक को, दु:ख के निरोध तथा उसके उपाय को जानना चाहिये'—यह जो कहा था, यह किस आशय से कहा था?

"भिक्षुओ! यह जाति (जन्मपरम्परा) दु:ख है, जरा (बुढ़ापा) भी दु:ख है, रोग भी दु:ख है, मरण भी दु:ख है, शोक, परिदेव, दु:ख-दौर्मनस्य आदि भी दु:ख है, जिसकी इच्छा करने पर भी नहीं मिलता वह भी दु:ख है। संक्षेप में ये पाँचों उपादान (रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार एवं विज्ञान) स्कन्ध दु:ख हैं।

"कतमो च, भिक्खवे, दुक्खस्स निदानसम्भवो? तण्हा, भिक्खवे, दुक्खस्स निदानसम्भवो।

[N.121] "कतमा च, भिक्खवे, दुक्खस्स वेमत्तता? अत्थि, भिक्खवे, दुक्खं अधिमत्तं अत्थि परित्तं, अत्थि दन्धविरागि, अत्थि खिप्पविरागि। अयं वुच्चति, भिक्खवे, दुक्खस्स वेमत्तता।

"कतमो च, भिक्खवे, दुक्खस्स विपाको? इध, भिक्खवे, एकच्चो येन दुक्खेन अभिभूतो परियादिन्नचित्तो सोचति किलमति परिदेवति, उरत्ताळिं कन्दति, सम्मोहं आपज्जति, येन वा पन दुक्खेन अभिभूतो परियादिन्नचित्तो बहिद्धा परियेट्ठिं आपज्जति— 'को एकपदं द्विपदं जानाति इमस्स दुक्खस्स निरोधाया' ति! सम्मोहवेपक्कं वाहं, भिक्खवे, दुक्खं वदामि परियेट्ठिवेपक्कं वा। अयं वुच्चति, भिक्खवे, दुक्खस्स विपाको।

"कतमो च, भिक्खवे, दुक्खनिरोधो? तण्हानिरोधो, भिक्खवे, दुक्खनिरोधो, अयमेव अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो दुक्खस्स निरोधगामिनी पटिपदा, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्मासमाधि।

[R.417] "यतो खो, भिक्खवे, अरियसावको एवं दुक्खं पजानाति, एवं दुक्खस्स निदान-सम्भवं पजानाति, एवं दुक्खस्स वेमत्ततं पजानाति, एवं दुक्खस्स विपाकं पजानाति, एवं दुक्खनिरोधं पजानाति, एवं दुक्खनिरोधगामिनिं पटिपदं पजानाति, सो इमं निब्बेधिकं ब्रह्मचरियं पजानाति दुक्खनिरोधं। 'दुक्खं, भिक्खवे, वेदितब्बं, दुक्खस्स निदानसम्भवो,

---

"भिक्षुओ! दु:ख का निदान क्या है? भिक्षुओ! तृष्णा ही दु:खों का निदान है।

"भिक्षुओ! दु:ख की विविधता क्या है? भिक्षुओ! कौन दु:ख अधिक है, कौन दु:ख कम है, कौन दु:ख शनैः शनैः वैराग्योत्पादक है, कौन दु:ख तत्काल वैराग्योत्पादक है—यही, भिक्षुओ! दु:खों की विविधता है।

"और, भिक्षुओ! दु:खों का विपाक क्या है? (१) यहाँ, भिक्षुओ! कोई पुरुष दु:ख से अभिभूत होकर, उससे घबराकर चिन्ता करता है, विलाप करता है, छाती पीटकर रोता है, अन्त में मूर्च्छित हो जाता है; अथवा (२) जिस दु:ख से अभिभूत होकर, घबराकर बाहर निकलकर धर्म की खोज करने लगता है कि कौन मुझे उस धर्म का एक पद (गाथा का एक चरण) या दो पद (गाथा के दो चरण) सुनाने में समर्थ है कि जिसके प्रभाव से मेरे ये दु:ख विनष्ट हो जायँ। इस प्रकार सम्मोह परिणाम वाला या परीष्टि (खोज) परिणाम वाला—यों द्विविध दु:खफल कहलाता है।

"अथ च, भिक्षुओ! दु:खनिरोध क्या कहलाता है? भिक्षुओ! उस तृष्णा का निरोध ही दु:खनिरोध है।

"तथा भिक्षुओ! आर्यअष्टाङ्गमार्ग ही उस दु:खनिरोध का उपाय है; जैसे—सम्यग्दृष्टि... सम्यक्समाधि।

"भिक्षुओ! जो आर्यश्रावक इस प्रकार दु:ख को..., दु:ख के निदान को..., दु:ख के द्वैधीभाव को..., दु:ख के विपाक को..., दु:ख के निरोध तथ उसके उपाय को जानता है वही इस

वेदितब्बो, दुक्खस्स वेमत्तता वेदितब्बा, दुक्खस्स विपाको वेदितब्बो, दुक्खनिरोधो वेदितब्बो, दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा वेदितब्बा' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

''अयं खो सो, भिक्खवे, निब्बेधिकपरियायो धम्मपरियायो'' ति॥ ●

**१०. सीहनादसुत्तं** : १. ''छयिमानि, भिक्खवे, तथागतस्स [B.365] तथागतबलानि, येहि बलेहि समन्नागतो तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति। कतमानि छ? इध, भिक्खवे, तथागतो ठानं च [N.122] ठानतो अट्ठानं च अट्ठानतो यथाभूतं पजानाति। यं पि, भिक्खवे, तथागतो ठानं च ठानतो अट्ठानं च अट्ठानतो यथाभूतं पजानाति, इदं पि, भिक्खवे, तथागतस्स तथागतबलं होति, यं बलं आगम्म तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

२. ''पुन च परं, भिक्खवे, तथागतो अतीतानागतपच्चुप्पन्नानं कम्मसमादानानं ठानसो हेतुसो विपाकं यथाभूतं पजानाति। यं पि, भिक्खवे, तथागतो अतीतानागत-पच्चुप्पन्नानं कम्मसमादानानं ठानसो हेतुसो विपाकं यथाभूतं पजानाति, इदं पि, भिक्खवे, तथागतस्स तथागतबलं होति, यं बलं आगम्म तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

३. ''पुन च परं, भिक्खवे, तथागतो झानविमोक्खसमाधिसमापत्तीनं [R.418] सङ्किलेसं वोदानं वुट्ठानं यथाभूतं पजानाति। यं पि, भिक्खवे, तथागतो ...पे०... इदं पि,

---

निर्वेधिक दु:खनिरोध धर्मपर्याय को जान पाता है। भिक्षुओ! 'दु:ख को जानना चाहिये ...पूर्ववत्... दु:खनिरोध के उपाय को जानना चाहिये'—यह जो मैंने कहा था इसी आशय से कहा था। (६)

''भिक्षुओ! यही निर्वेधिक नाम वाला धर्मपर्याय है॥'' ●

**१०. सिंहनादसूत्र : : षड्विध तथागत बल**

१. ''भिक्षुओ! तथागत के ये छह बल हैं, जिनके आश्रय से तथागत समाज में अपना सर्वोच्च स्थान घोषित करते हैं, परिषदों में सिंहनाद करते हैं, तथा धर्मचक्रप्रवर्तन करते रहते हैं। कौन से छह? यहाँ भिक्षुओ! तथागत उचित के कारण उचित को तथा अनुचित के कारण अनुचित को यथार्थत: जानते हैं। भिक्षुओ! इस प्रकार जानना भी तथागत का तथागतबल कहलाता है, जिसके आश्रय से तथागत समाज में अपना सर्वोच्च स्थान घोषित करते हैं, तथा परिषदों में सिंहनाद करते हैं तथा धर्मचक्र प्रवर्तन करते हैं। (१)

२. ''पुन:, भिक्षुओ! तथागत औचित्य एवं कारणों के सहारे भूत-भविष्यत्-वर्तमान में किये हुए कर्मों का विपाक यथार्थत: जानते हैं। भिक्षुओ! तथागत द्वारा कर्मविपाक को इस तरह जानना भी उनका तथागतबल है, इसी बल के आधार पर तथागत ...पूर्ववत्... ब्रह्मचक्रप्रवर्तन करते रहते हैं। (२)

३. ''पुन:, भिक्षुओ! तथागत ध्यान, विमोक्ष, एवं समाधि की प्राप्ति के संक्लेश (मल), व्यवदान (शुद्धि) एवं व्युत्थान को यथार्थत: जानते हैं। भिक्षुओ! इनके विषय में तथागत का यह

भिक्खवे, तथागतस्स तथागतबलं होति, यं बलं आगम्म तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

४. ''पुन च परं, भिक्खवे, तथागतो अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, सेय्यथीदं—एकं पि जातिं द्वे पि जातियो ...पे०... इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति। यं पि, भिक्खवे, तथागतो अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, सेय्यथीदं—एकं पि जातिं द्वे पि जातियो ...पे०... इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति। इदं पि, भिक्खवे, तथागतस्स तथागतबलं होति, यं बलं आगम्म तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

५. ''पुन च परं, भिक्खवे, तथागतो दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुकेन [B.366]...पे०... यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति। यं पि, भिक्खवे, तथागतो दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन ...पे०... यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति, इदं पि, भिक्खवे, तथागतस्स तथागतबलं होति, यं बलं आगम्म तथागतो आसभं ठानं पजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

[N.123] ६. ''पुन च परं, भिक्खवे, तथागतो आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। यं पि, भिक्खवे, तथागतो आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति, इदं पि, भिक्खवे, तथागतस्स तथागतबलं होति, यं बलं आगम्म [R.419] तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति। इमानि खो, भिक्खवे, छ तथागतस्स तथागतबलानि, येहि बलेहि समन्नागतो तथागतो आसभं ठानं पटिजानाति, परिसासु सीहनादं नदति, ब्रह्मचक्कं पवत्तेति।

७. ''तत्र चे, भिक्खवे, परे तथागतं ठानं च ठानतो अट्ठानं च अट्ठानतो यथाभूतं

---

यथार्थ ज्ञान भी तथागतबल है जिसका सहारा लेकर तथागत ...पूर्ववत्... ब्रह्मचक्रप्रवर्तन करते रहते हैं। (३)

४. ''पुन:, भिक्षुओ! तथागत अनेक बार भोगे हुए अपने पूर्वजन्मों का अनुस्मरण करते हैं जैसे—एक जन्म, दो जन्म ...पूर्ववत्... आकार एवं उद्देश सहित उनका अनुस्मरण करते हैं। भिक्षुओ! तथागत का ऐसा अनुस्मरण भी उनका तथागतबल कहलाता है। जिसके सहारे से वे ...पूर्ववत्... धर्मचक्रप्रवर्तन करते हैं। (४)

५. ''पुन:, भिक्षुओ! तथागत मानवदुर्लभ अपने दिव्यचक्षु से कर्मों के अनुसार जन्म लेने वाले प्राणियों को यथार्थत: जानते हैं। भिक्षुओ! तथागत का उन प्राणियों के विषय में यथार्थत: जानना भी उनका यह तथागतबल है जिसके सहारे से वे ...पूर्ववत्... धर्मचक्रप्रवर्तन करते हैं। (५)

६. ''पुन:, भिक्षुओ! तथागत आश्रवों के क्षय से ...पूर्ववत्... साक्षात् कर, प्राप्त कर साधना करते हैं। इस प्रकार, भिक्षुओ! आश्रवों के क्षय से ...पूर्ववत्... साधना करना भी उनका तथागतबल कहलाता है। इस तथागतबल के सहारे से वे ...पूर्ववत्... ब्रह्मचक्रप्रवर्तन करते हैं। (६)

७. ''वहाँ, भिक्षुओ! दूसरे लोग, उचित के कारण उचित को एवं अनुचित के कारण

ञाणेन उपसङ्कमित्वा पञ्हं पुच्छन्ति। यथा यथा, भिक्खवे, तथागतस्स ठानं च ठानतो अट्ठानं च अट्ठानतो यथाभूतं ञाणं विदितं तथा तथा तेसं तथागतो ठानं च ठानतो अट्ठानं च अट्ठानतो यथाभूतं ञाणेन पञ्हं पुट्ठो ब्याकरोति।

८. ''तत्र चे, भिक्खवे, परे तथागतं अतीतानागतपच्चुप्पन्नानं कम्मसमादानानं ठानसो हेतुसो विपाकं यथाभूतं ञाणेन उपसङ्कमित्वा पञ्हं पुच्छन्ति। यथा यथा, भिक्खवे, तथागतस्स अतीतानागतपच्चुप्पन्नानं कम्मसमादानानं ठानसो हेतुसो विपाकं यथाभूतं ञाणं विदितं तथा तथा तेसं तथागतो अतीतानागतपच्चुप्पन्नानं कम्मसमादानानं ठानसो हेतुसो विपाकं यथाभूतं ञाणेन पञ्हं पुट्ठो ब्याकरोति।

९. ''तत्र चे, भिक्खवे, परे तथागतं झानविमोक्खसमाधिसमापत्तीनं सङ्किलेसं वोदानं वुट्ठानं यथाभूतं ञाणेन उपसङ्कमित्वा पञ्हं पुच्छन्ति। यथा यथा, भिक्खवे, तथागतस्स झानविमोक्खसमाधिसमापत्तीनं सङ्किलेसं वोदानं वुट्ठानं यथाभूतं ञाणं विदितं तथा तथा तेसं तथागतो झानविमोक्खसमाधिसमापत्तीनं सङ्किलेसं वोदानं वुट्ठानं यथाभूतं ञाणेन पञ्हं पुट्ठो ब्याकरोति।

१०. ''तत्र चे, भिक्खवे, परे तथागतं पुब्बेनिवासानुस्सतिं यथाभूतं ञाणेन [B.367] उपसङ्कमित्वा पञ्हं पुच्छन्ति। यथा यथा, भिक्खवे, तथागतस्स पुब्बेनिवासानुस्सतिं यथाभूतं ञाणं विदितं तथा तथा तेसं तथागतो पुब्बेनिवासानुस्सतिं यथाभूतं ञाणेन पञ्हं पुट्ठो [R.420] ब्याकरोति।

११. ''तत्र चे, भिक्खवे, परे तथागतं सत्तानं चुतूपपातं यथाभूतं ञाणेन [N.124] उपसङ्कमित्वा पञ्हं पुच्छन्ति। यथा यथा, भिक्खवे, तथागतस्स सत्तानं चुतूपपातं यथाभूतं ञाणं विदितं तथा तथा तेसं तथागतो सत्तानं चुतूपपातं यथाभूतं ञाणेन पञ्हं पुट्ठो ब्याकरोति।

---

अनुचित को यथार्थत: जानकर, तथागत से कोई प्रश्न करते हैं। वहाँ तथागत उचित के कारण उचित तथा अनुचित के कारण अनुचित को यथार्थत: जाने हुए अपने ज्ञान (तथागतबल) के सहारे से उन प्रश्नों का उत्तर देते हैं। (१)

८. ''वहाँ, भिक्षुओ! दूसरे लोग, भूत, भविष्य एवं वर्तमान औचित्य एवं कारणों के सहारे से किये हुए भूत, भविष्य, वर्तमान कर्मों का विपाक जानकर तथागत के पास आकर कोई प्रश्न करते हैं तो तथागत भी अपने उक्त तथागतबल के सहारे से उनके प्रश्नों का उत्तर देते हैं। (२)

९. ''वहाँ, भिक्षुओ! कुछ दूसरे लोग ध्यान, विमोक्ष, समाधि की प्राप्ति के विषय में अपने ज्ञान के आधार पर तथागत से प्रश्न करते हैं। तब तथागत अपने एतद्विषयक तथागतबल से उनका समुचित उत्तर देते हैं। (३)

१०. ''वहाँ, भिक्षुओ! कुछ दूसरे लोग पूर्व जन्म के विषय में अपने ज्ञान के आधार पर तथागत से प्रश्न करते हैं और तथागत अपने एतद्विषयक तथागतबल के सहारे से उक्त प्रश्नों का क्रमश: समुचित उत्तर देते हैं। (४)

१२. ''तत्र चे, भिक्खवे, परे तथागतं आसवानं खया ...पे०... यथाभूतं ञाणेन उपसङ्कमित्वा पञ्हं पुच्छन्ति। यथा यथा, भिक्खवे, तथागतस्स आसवानं खया ...पे०... यथाभूतं ञाणं विदितं तथा तथा तेसं तथागतो आसवानं खया ...पे०... यथाभूतं ञाणेन पञ्हं पुट्ठो ब्याकरोति।

१३. ''तत्र, भिक्खवे, यम्पिदं ठानं च ठानतो अट्ठानं च अट्ठानतो यथाभूतं ञाणं तं पि समाहितस्स वदामि नो असमाहितस्स। यम्पिदं अतीतानागतपच्चुप्पन्नानं कम्मसमादानानं ठानसो हेतुसो विपाकं यथाभूतं ञाणं तं पि समाहितस्स वदामि नो असमाहितस्स। यम्पिदं झानविमोक्खसमाधिसमापत्तीनं सङ्किलेसं वोदानं वुट्ठानं यथाभूतं ञाणं तं पि समाहितस्स वदामि नो असमाहितस्स। यम्पिदं पुब्बेनिवासानुस्सतिं यथाभूतं ञाणं तं पि समाहितस्स वदामि नो असमाहितस्स। यम्पिदं सत्तानं चुतूपपातं यथाभूतं ञाणं तं पि समाहितस्स वदामि नो असमाहितस्स। यम्पिदं आसवानं खया ...पे०... यथाभूतं ञाणं तं पि समाहितस्स वदामि नो असमाहितस्स। इति खो, भिक्खवे, समाधि मग्गो असमाधि कुम्मग्गो'' ति॥ ●

**महावग्गो छट्ठो॥**

**तस्सुद्दानं**

[B.368,R.421] सोणो फग्गुनो भिजाति, आसवा दारुहत्थि च।
मज्झे ञाणं निब्बेधिकं, सीहनादो ति ते दसा ति॥ ●

## ७. देवतावग्गो

[N.125] **१. अनागामिफलसुत्तं** : १. ''छ, भिक्खवे, धम्मे अप्पहाय अभब्बो

---

११. ''पुनः, भिक्षुओ! कुछ दूसरे लोग प्राणियों के जन्म एवं मरण के विषय में अपने ज्ञान के अनुसार तथागत से प्रश्न पूछते हैं। भिक्षुओ! तथागत को उन प्राणियों के विषय में तथागतबल से जैसा जैसा ज्ञान होता है वैसा वैसा उत्तर वे उनको देते हैं। (५)

१२. ''पुनः, भिक्षुओ! कुछ दूसरे लोग आश्रवों के क्षय से यथाभूत ज्ञान के सहारे तथागत से प्रश्न पूछते हैं। तब भिक्षुओ! तथागत भी आश्रवों के क्षय से यथाभूत ज्ञान के सहारे प्राप्त तथागतबल से उन लोगों को उत्तर देते हैं। (६)

१३. ''भिक्षुओ! मुझे जो उचित के कारण उचित का ज्ञान तथा अनुचित के कारण अनुचित का ज्ञान हुआ है उसे मैं समाहित (एकाग्रचित्त) जिज्ञासु को ही बताता हूँ असमाहितचित्त को नहीं। तथा औचित्य एवं कारणों के सहारे भूत, भविष्यत्, वर्तमान में किये हुए कर्मों का विपाक ज्ञान भी मैं ...पूर्ववत्...। तथा ध्यान, विमोक्ष एवं समाधि की प्राप्ति के संक्लेश, व्यवदान और व्युत्थान का ज्ञान भी मैं ...पूर्ववत्...। अपने पूर्वजन्मों की अनुस्मृति भी मैं ...पूर्ववत्...। दूसरे प्राणियों के जन्ममरणविषयक ज्ञान भी मैं ...पूर्ववत्...। तथा आश्रवों के क्षय से प्राप्त ज्ञान भी मैं एकाग्रचित्त

अनागामिफलं सच्छिकातुं। कतमे छ? अस्सद्धियं, अहिरिकं, अनोत्तप्पं, कोसज्जं, मुट्ठस्सच्चं, दुप्पञ्ञतं—इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मे अप्पहाय अभब्बो अनागामिफलं सच्छिकातुं।

२. "छ, भिक्खवे, धम्मे पहाय भब्बो अनागामिफलं सच्छिकातुं। कतमे छ? अस्सद्धियं, अहिरिकं, अनोत्तप्पं, कोसज्जं, मुट्ठस्सच्चं, दुप्पञ्ञतं—इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मे पहाय भब्बो अनागामिफलं सच्छिकातुं" ति। ●

**२. अरहत्तसुत्तं :** १. "छ भिक्खवे, धम्मे अप्पहाय अभब्बो अरहत्तं सच्छिकातुं। कतमे छ? थीनं, मिद्धं, उद्धच्चं, कुक्कुच्चं, अस्सद्धियं, पमादं—इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मे अप्पहाय अभब्बो अरहत्तं सच्छिकातुं।

२. "छ भिक्खवे, धम्मे पहाय भब्बो अरहत्तं सच्छिकातुं। कतमे छ? थीनं, मिद्धं, उद्धच्चं, कुक्कुच्चं, अस्सद्धियं, पमादं—इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मे पहाय भब्बो [R.422] अरहत्तं सच्छिकातुं" ति। ●

---

साधक को ही देता हूँ, चञ्चल (असमाहित) चित्त को नहीं। संक्षेप में, भिक्षुओ! समाधि (एकाग्रचित्तता) ही निर्वाणप्राप्ति का उपाय है; असमाधि (चञ्चलचित्तता) तो कुमार्ग है॥" ●

**महावर्ग षष्ठ सम्पन्न॥**

### इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची

१. सोणसूत्र, २. फग्गुनसूत्र, ३. षडभिजातिसूत्र, ४. आश्रवसूत्र, ५. दारुकर्मिकसूत्र, ६. हस्तिसारिपुत्रसूत्र, ७. मध्येसूत्र, ८. पुरुषेन्द्रियज्ञानसूत्र, ९. निर्वेधिकसूत्र एवं १०. सिंहनादसूत्र॥●

## ७. देवतावर्ग

**१. अनागामिकफलसूत्र : : अवश्यत्याज्य छह धर्म**

१. "भिक्षुओ! इन छह धर्मों को त्यागे विना कोई साधक अनागामिफल नहीं प्राप्त कर सकता। कौन से छह? १. अश्रद्धा, २. आह्रीक्य (निर्लज्जता), ३. अनवत्राप्य (पाप से न डरना), ४. कौसीद्य (आलस्य), ५. मृष्टस्मृतिता (विस्मृति), एवं ६. दुष्प्रज्ञता। भिक्षुओ! इन छह धर्मों को विना छोड़े अनागामिफल का साक्षात्कार असम्भव है।"

२. "भिक्षुओ! परन्तु इन छह धर्मों को त्यागने पर अनागामिफल का साक्षात्कार सम्भव है। कौन से छह? अश्रद्धा ...पूर्ववत्... दुष्प्रज्ञता।... भिक्षुओ! इन छह धर्मों के त्याग से अनागामिफल प्राप्त करना सम्भव है॥" ●

**२. अर्हत्त्वसूत्र : : अवश्यत्याज्य अन्य छह धर्म**

१. "भिक्षुओ! इन छह धर्मों को छोड़े विना अर्हत्त्व का साक्षात्कार नहीं हो सकता। कौन से छह धर्म? १. स्त्यान (जड़ता), २. मृद्ध (आलस्य), ३. औद्धत्य (अशिष्टता), ४. कौकृत्य (दुष्कर्म), ५. अश्रद्धा (श्रद्धारहितता) एवं ६. प्रमाद (असावधानी)। भिक्षुओ! इन छह धर्मों का त्याग किये विना अर्हत्त्वफल का साक्षात्कार नहीं हो सकता।"

**३. मित्तसुत्तं** : १. '''सो वत, भिक्खवे, भिक्खु पापमित्तो पापसहायो पापसम्पवङ्को, पापमित्ते सेवमानो भजमानो पयिरुपासमानो, तेसं च दिट्ठानुगतिं आपज्जमानो आभिसमाचारिकं धम्मं परिपूरेस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति। 'आभिसमाचारिकं धम्मं [B.369] अपरिपूरेत्वा सेखं धम्मं परिपूरेस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति। 'सेखं धम्मं अपरिपूरेत्वा सीलानि परिपूरेस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति। 'सीलानि अपरिपूरेत्वा कामरागं वा रूपरागं वा अरूपरागं वा पजहिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति।

[N.126] २. '''सो वत, भिक्खवे, भिक्खु कल्याणमित्तो कल्याणसहायो कल्याण-सम्पवङ्को, कल्याणमित्ते सेवमानो भजमानो पयिरुपासमानो, तेसं च दिट्ठानुगतिं आपज्जमानो आभिसमाचारिकं धम्मं परिपूरेस्सती' ति ठानमेतं विज्जति। 'आभिसमाचारिकं धम्मं परिपूरेत्वा सेखं धम्मं परिपूरेस्सती' ति ठानमेतं विज्जति। 'सेखं धम्मं परिपूरेत्वा सीलानि परिपूरेस्सती' ति ठानमेतं विज्जति। 'सीलानि परिपूरेत्वा कामरागं वा रूपरागं वा अरूपरागं वा पजहिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति'' ति॥ ●

**४. सङ्गणिकारामसुत्तं** : १. '''सो वत, भिक्खवे, भिक्खु सङ्गणिकारामो सङ्गणिकरतो सङ्गणिकारामतं अनुयुत्तो, गणारामो गणरतो गणारामतं अनुयुत्तो एको पविवेके

---

२. ''परन्तु, भिक्षुओ! इन छह धर्मों का छोड़ देने से अर्हत्त्वफल प्राप्त किया जा सकता है। कौन से छह धर्म? स्त्यान ...पूर्ववत्... साक्षात्कार सम्भव है॥'' ●

**३. मित्रसूत्र** : :

१. ''भिक्षुओ! ऐसा भिक्षु जिस के पापी मित्र हों, साथी हो, उनहीं में मिला जुड़ा रहता हो, वह उन पापियों के साथ रहता हुआ, उनसे सम्पृक्त होकर उनहीं के बताये रास्ते पर चलता हो; वह 'धर्म-साधना के साधारण कर्तव्यों को भी पूर्ण कर सके'—यह सम्भव नहीं है। इन धर्मसाधना के साधारण कर्तव्यों को पूर्ण किये विना 'शैक्ष्य धर्मों को पूर्ण कर पायगा'—यह भी सम्भव नहीं है। 'शील का पालन किये विना काम, रूप एवं अरूप के प्रति आसक्ति को वह त्याग सकेगा'—यह भी सम्भव नहीं है।''

२. ''इसके विपरीत, भिक्षुओ! जो भिक्षु अपने कल्याणमित्रों के साथ, कल्याणकर्मा साथियों के साथ कल्याणमय कार्यों में व्यस्त रहता है ऐसा वह उन लोगों के साथ रहकर वैसे कल्याणमय कार्य करता हुआ, उनके कहने में चलता हुआ धर्मसाधना के साधारण कर्मों को भी पूर्ण कर लेगा—यह सम्भव है। तब वह इन साधारण धार्मिक कर्तव्यों को पूर्ण करता हुआ शैक्ष्य धर्मों का पालन कर पायगा—यह भी सम्भव है। तथा वह इन शैक्ष्य धर्मों का पालन करता हुआ शील का भी पालन कर सकेगा—यह भी सम्भव है। और शील पालन करता हुआ वह काम, रूप एवं अरूप धर्मों के प्रति आसक्त नहीं रहेगा—यह भी सम्भव है॥'' ●

**४. सङ्गणिकारामसूत्र** : :

१. ''भिक्षुओ! जिस भिक्षु को मनुष्यों के समाज (भीड़) में रहना ही रुचिकर लगता हो, उसी में रहने में सुख मानता हो, उसी में सम्पृक्त रहे, वह 'एकान्तसाधना पूर्ण कर सकेगा'—यह

अभिरमिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति। 'एको पविवेके अनभिरमन्तो चित्तस्स निमित्तं गहेस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति। 'चित्तस्स निमित्तं अगण्हन्तो सम्मादिट्ठिं [R.423] परिपूरेस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति। 'सम्मादिट्ठिं अपरिपूरेत्वा सम्मासमाधिं परिपूरेस्सतो' ति नेतं ठानं विज्जति। 'सम्मासमाधिं अपरिपूरेत्वा संयोजनानि पजहिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति। 'संयोजनानि अप्पहाय निब्बानं सच्छिकरिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति।

२. '''सो वत, भिक्खवे, भिक्खु न सङ्गणिकारामो न सङ्गणिकरतो न सङ्गणिकारामतं अनुयुत्तो, न गणारामो न गणरतो न गणारामतं अनुयुत्तो एको पविवेके अभिरमिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति। 'एको पविवेके अभिरमन्तो चित्तस्स निमित्तं गहेस्सती' ति ठानमेतं विज्जति। 'चित्तस्स निमित्तं गण्हन्तो सम्मादिट्ठिं परिपूरेस्सती' ति ठानमेतं विज्जति। 'सम्मादिट्ठिं परिपूरेत्वा सम्मासमाधिं परिपूरेस्सती' ति ठानमेतं विज्जति। 'सम्मासमाधिं परिपूरेत्वा संयोजनानि पजहिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति। 'संयोजनानि पहाय निब्बानं सच्छिकरिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति'' ति॥ ●

**५. देवतासुत्तं :** १. अथ खो अञ्ञतरा देवता अभिक्कन्ताय [N.127,B.370] रत्तिया अभिक्कन्तवण्णा केवलकप्पं जेतवनं ओभासेत्वा येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठिता खो सा देवता भगवन्तं एतदवोच—''छयिमे, भन्ते, धम्मा भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ति। कतमे छ?

---

सम्भव नहीं है। चित्त के निमित्त को न ग्रहण करता हुआ सम्यग्दृष्टिसम्पन्न हो सकेगा—यह सम्भव नहीं है। सम्यग्दृष्टिसम्पन्नता के विना सम्यक्समाधि तक की साधना को पूर्ण कर सकेगा— यह सम्भव नहीं है। सम्यक्समाधि को पूर्ण किये विना वह अपने भवसंयोजनों को त्याग सकेगा—यह सम्भव नहीं है। तथा भवसंयोजनों के त्याग के विना वह निर्वाण का साक्षात्कार कर सकेगा—यह भी सम्भव नहीं है।''

२. ''परन्तु, भिक्षुओ! जो भिक्षु मानवसमाज से दूर रहना ही अच्छा समझता है, वह उस समाज की भीड़ में प्रविष्ट नहीं होना चाहता, ऐसा भिक्षु एकान्तसाधना पूर्ण कर सकता है—यह सम्भव है। वह एकान्तसाधना कर चित्त के लक्ष्य को पकड़ सकेगा—यह भी सम्भव है। वह चित्त के लक्ष्य को ग्रहण कर सम्यग्दृष्टि बन सकेगा—यह भी सम्भव है। 'सम्यग्दृष्टि बनकर सम्यक्समाधि की साधना कर सकेगा'—यह भी सम्भव है। तथा 'वह सम्यक्समाधि के सहारे से एक दिन अपने भवसंयोजनों को क्षीण कर सकेगा'—यह भी सम्भव है। और अपने भवसंयोजनों को क्षीण कर निर्वाण का भी साक्षात्कार कर सकेगा—यह भी सम्भव है॥'' ●

**५. देवतासूत्र** : :

१. तब कोई तेजस्वी देवता उस चाँदनी रात्रि में प्राय: प्रकाशित जेतवन को विशेष रूप से प्रकाशित करता हुआ भगवान् के सम्मुख आया। आकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर खड़ा हो गया। और भगवान् से यों निवेदन करने लगा—''भन्ते! ये छह धर्म भिक्षु को नहीं त्यागने चाहिये। कौन से छह धर्म? (१) शास्ता का सम्मान, (२) धर्म का सम्मान, (३) सङ्घ का सम्मान, (४)

सत्थुगारवता, धम्मगारवता, सङ्घगारवता, सिक्खागारवता, सोवचस्सता, कल्याण-मित्तता—इमे खो, भन्ते, छ धम्मा भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ती'' ति। इदमवोच सा देवता। समनुञ्ञो सत्था अहोसि। अथ खो सा देवता ''समनुञ्ञो मे सत्था'' ति भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा तत्थेवन्तरधायि।

[R.424] २. अथ खो भगवा तस्सा रत्तिया अच्चयेन भिक्खू आमन्तेसि—''इमं, भिक्खवे, रत्तिं अञ्ञतरा देवता अभिक्कन्ताय रत्तिया अभिक्कन्तवण्णा केवलकप्पं जेतवनं ओभासेत्वा येनाहं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा मं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठिता खो, भिक्खवे, सा देवता मं एतदवोच—'छयिमे, भन्ते, धम्मा भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ति। कतमे छ? सत्थुगारवता, धम्मगारवता, सङ्घगारवता, सिक्खागारवता, सोवचस्सता, कल्याणमित्तता—इमे खो, भन्ते, छ धम्मा भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ती' ति। इदमवोच, भिक्खवे, सा देवता। इदं वत्वा मं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा तत्थेवन्तरधायी'' ति।

३. एवं वुत्ते आयस्मा सारिपुत्तो भगवन्तं अभिवादेत्वा एतदवोच—''इमस्स खो अहं, भन्ते, भगवता सङ्खित्तेन भासितस्स एवं वित्थारेन अत्थं आजानामि। इध, भन्ते, भिक्खु अत्तना च सत्थुगारवो होति सत्थुगारवताय च वण्णवादी। ये चञ्ञे भिक्खू न सत्थुगारवा ते च सत्थुगारवताय समादपेति। ये चञ्ञे भिक्खू सत्थुगारवा तेसं च वण्णं भणति भूतं तच्छं कालेन। अत्तना च धम्मगारवो होति... सङ्घगारवो होति... सिक्खागारवो होति... सुवचो होति... कल्याणमित्तो होति कल्याणमित्तताय च वण्णवादी। ये चञ्ञे भिक्खू न

---

शिक्षा का सम्मान, (५) आज्ञाकारिता एवं (६) कल्याणमैत्री। भन्ते! भिक्षु को ये छह धर्म नहीं त्यागने चाहिये।'' देवता ने यह कहा। भगवान् ने भी इसका अनुमोदन किया। तब उस देवता ने, 'भगवान् ने भी मेरी बात का अनुमोदन कर दिया'—यह जानकर प्रसन्न होते हुए उठकर, भगवान् को प्रणाम प्रदक्षिणा कर वहीं अन्तर्हित हो गया।

२. तब भगवान् ने, उस रात्रि के व्यतीत होने पर, भिक्षुओं को बताया—''भिक्षुओ! इस रात्रि में कोई तेजस्वी देवता... उपरिवत्... वहीं अन्तर्हित हो गया।

३. ऐसा कहे जाने पर आयुष्मान् सारिपुत्र ने भगवान् को प्रणाम कर यह निवेदन किया—''भन्ते! मैं आपके इस संक्षेप में कथित उपदेश का यह विस्तार जानता हूँ—(क) यहाँ, भन्ते! कोई भिक्षु स्वयं शास्ता का सम्मान (गौरव) करता है, तथा साथ ही दूसरों से शास्ता के सम्मान की प्रशंसा करता है, एवं ऐसे लोगों को, जो शास्ता के प्रति उपेक्षा करते हैं, उनको शास्ता के सम्मान के लिये प्रेरित करता है; और जो भिक्षु शास्ता का सम्मान करते हैं उनकी, साधारण जन के सम्मुख, समय समय पर प्रशंसा करता रहता है। (ख) यहाँ, भन्ते! कोई भिक्षु स्वयं धर्म का सम्मान करता है ...पूर्ववत्...। (ग) यहाँ, भन्ते! कोई भिक्षु स्वयं सङ्घ का सम्मान करता है ...पूर्ववत्...। (घ) यहाँ, भन्ते! कोई भिक्षु बुद्धोपदिष्ट शिक्षा का स्वयं सम्मान करता है ...पूर्ववत्...। (ङ) यहाँ, भन्ते! कोई भिक्षु स्वयं मधुरभाषी होता है ...पूर्ववत्...। (च) यहाँ, भन्ते! कोई भिक्षु स्वयं कल्याणमित्र

कल्याणमित्ता ते च कल्याणमित्तताय समादपेति। ये चञ्ञे भिक्खू [N.128,B.371] कल्याणमित्ता तेसं च वण्णं भणति भूतं तच्छं कालेन। इमस्स खो अहं, भन्ते, भगवता सङ्खित्तेन भासितस्स एवं वित्थारेन अत्थं आजानामी'' ति।

४. ''साधु साधु, सारिपुत्त! साधु खो त्वं, सारिपुत्त, इमस्स मया सङ्खित्तेन भासितस्स एवं वित्थारेन अत्थं आजानासि। इध, सारिपुत्त, भिक्खु अत्तना च सत्थुगारवो होति सत्थुगारवताय च वण्णवादी। ये चञ्ञे भिक्खू न सत्थुगारवा ते च सत्थुगार- [R.425] वताय समादपेति। ये चञ्ञे भिक्खू सत्थुगारवा तेसं च वण्णं भणति भूतं तच्छं कालेन। अत्तना च धम्मगारवो होति... सङ्घगारवो होति... सिक्खागारवो होति... सुवचो होति... कल्याणमित्तो होति कल्याणमित्तताय च वण्णवादी। ये चञ्ञे भिक्खू न कल्याणमित्ता ते च कल्याणमित्तताय समादपेति। ये चञ्ञे भिक्खू कल्याणमित्ता तेसं च वण्णं भणति भूतं तच्छं कालेन। इमस्स खो, सारिपुत्त, मया सङ्खित्तेन भासितस्स एवं वित्थारेन अत्थो दट्ठब्बो'' ति॥ ●

**६. समाधिसुत्तं :** १. '''सो वत, भिक्खवे, भिक्खु न सन्तेन समाधिना न पणीतेन न पटिप्पस्सद्धिलद्धेन न एकोदिभावाधिगतेन अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभविस्सति— एको पि हुत्वा बहुधा भविस्सति, बहुधा पि हुत्वा एको भविस्सति ...पे०... याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति। 'दिब्बाय सोतधातुया विसुद्धाय अतिक्कन्तमानुसिकाय उभो सद्दे सुणिस्सति—दिब्बे च मानुसे च ये दूरे सन्तिके चा' ति नेतं ठानं विज्जति। 'परसत्तानं परपुग्गलानं चेतसा चेतो परिच्च पजानिस्सति—सरागं वा चित्तं

---

होता है, दूसरों से कल्याणमित्रता की प्रशंसा करता है, तथा जो भिक्षु कल्याणमित्र नहीं होते उनको कल्याणमित्रता के लिये प्रेरित करता है, और जो अन्य भिक्षु कल्याणमित्र होते हैं उनकी समय समय पर दूसरों से प्रशंसा करता रहता है। इस प्रकार, भन्ते! मैं आपके इस संक्षिप्त उपदेश का यह विस्तृत अर्थ जानता हूँ।''

४. साधु, साधु सारिपुत्र! तुमने मेरे इस संक्षिप्त उपदेश का विस्तृत अर्थ बहुत अच्छे प्रकार से किया है। यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु स्वयं भी शास्ता का सम्मान करता है ...पूर्ववत्... कल्याणमित्रों की प्रशंसा दूसरों के सामने भी समय समय पर करता रहता है। सारिपुत्र! मेरे द्वारा कथित संक्षिप्त उपदेश का यही विस्तृत अर्थ हो सकता है॥'' ●

**६. समाधिसूत्र : : षड्विध असम्भाव्य एवं सम्भाव्य कर्म**

१. ''भिक्षुओ! जो भिक्षु न शान्त समाधि से, न प्रणीत समाधि से, न शान्ति से प्राप्त, न एकाग्रता से प्राप्त अनेकविहित ऋद्धिविध (अलौकिक शक्ति) का अनुभव कर पाता है, जैसे—एक होकर भी अनेक हो जाना, या अनेक होकर एक हो जाना ...पूर्ववत्... तो वह अपनी काया से ब्रह्मलोक तक अपने वश में कर लेगा—यह सम्भव नहीं है। मानवदुर्लभ दिव्य एवं विशुद्ध श्रोत्रेन्द्रिय से दोनों प्रकार के शब्द-दिव्य और मानवजनित, दूर या पास के शब्द सुनना सम्भव नहीं है। दूसरे प्राणियों का, दूसरे पुद्गलों का चित्त स्वचित्त से जानकर यह जानना चाहे कि यह सराग

सरागं चित्तं ति पजानिस्सति ...पे०... विमुत्तं वा चित्तं विमुत्तं चित्तं ति पजानिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति। 'अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरिस्सति, सेय्यथीदं—एकं पि जातिं द्वे पि [R.426] जातियो ...पे०... इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति। दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन सत्ते पस्सिस्सति [N.129] ...पे०... यथाकम्मूपगे सत्ते पजानिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति। आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति।

२. '''सो वत, भिक्खवे, भिक्खु सन्तेन समाधिना पणीतेन पटिप्पस्सद्धिलद्धेन [B.372] एकोदिभावाधिगतेन अनेकविहितं इद्धिविधं पच्चनुभविस्सति ...पे०... याव ब्रह्मलोका पि कायेन वसं वत्तेस्सती' ति ठानमेतं विज्जति। 'दिब्बाय सोतधातुया विसुद्धाय अतिक्कन्तमानुसिकाय उभो सद्दे सुणिस्सति—दिब्बे च मानुसे च ये दूरे सन्तिके चा' ति ठानमेतं विज्जति। 'परसत्तानं परपुग्गलानं चेतसा चेतो परिच्च पजानिस्सति—सरागं वा चित्तं सरागं चित्तं ति पजानिस्सति ...पे०... विमुत्तं वा चित्तं विमुत्तं चित्तं ति पजानानिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति। 'अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरिस्सति, सेय्यथीदं—एकं पि जातिं द्वे पि जातियो ...पे०... इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति। 'दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन सत्ते पस्सिस्सति चवमाने उपपज्जमाने हीने पणीते सुवण्णे दुब्बण्णे, सुगते दुग्गते यथाकम्मूपगे सत्ते पजानिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति। 'आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति'' ति॥ ●

**७. सक्खिभब्बसुत्तं** : १. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अभब्बो तत्र तत्रेव सक्खिभब्बतं पापुणितुं सति सतिआयतने। कतमेहि छहि ? इध, भिक्खवे, भिक्खु [R.427] 'इमे हानभागिया धम्मा' ति यथाभूतं नप्पजानाति, 'इमे ठितिभागिया धम्मा' ति

---

चित्त है ...पूर्ववत्... विमुत्तचित्त को 'यह विमुक्त चित्त है', तो यह सम्भव नहीं है। अनेक पूर्वजन्मों का अनुस्मरण कर लेगा, जैसे एक जन्म, दो जन्म, तो यह भी सम्भव नहीं है। मानवदुर्लभ दिव्य एवं विशुद्ध चक्षु से प्राणियों को देख सकेगा, तो यह सम्भव नहीं है। आश्रवों के क्षय से... पूर्ववत्... साक्षात्कार कर, प्राप्त कर साधना कर सकेगा—यह भी सम्भव नहीं है।

२. हाँ, जो साधक भिक्षु शान्त समाधि से, सुव्यवस्थित (प्रणीत) समाधि से, शान्ति से तथा एकाग्रता से प्राप्त अनेकविहित अलौकिक शक्तियों को अनुभव कर लेता है वही अपनी काया से ब्रह्मलोक तक अपने वश में कर सकता है—यह सम्भव है। पूर्ववत्... साक्षात् कर, प्राप्त कर साधना कर सकेगा—यह सम्भव है॥'' ●

**७. साक्षिभव्यसूत्र : : षड्विध साक्षिभव्यताप्राप्ति**

१. ''भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त होने पर भिक्षु, स्मृत्यायतन के होने पर भी वहाँ वहाँ साक्षिभव्यता नहीं प्राप्त कर सकता। कौन से छह धर्म ? यहाँ, भिक्षुओ ! जो भिक्षु 'ये हानभागीय धर्म

यथाभूतं नप्पजानाति, 'इमे विसेसभागिया धम्मा' ति यथाभूतं नप्पजानाति, 'इमे निब्बेध-भागिया धम्मा' ति यथाभूतं नप्पजानाति, असक्कच्चकारी च होति, असप्पायकारी च। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अभब्बो तत्र तत्रेव सक्खिभब्बतं पापुणितुं सति सतिआयतने।

२. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु भब्बो तत्र तत्रेव सक्खिभब्बतं पापुणितुं सति सतिआयतने। कतमेहि छहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु 'इमे हानभागिया धम्मा' ति यथाभूतं पजानाति, 'इमे ठितिभागिया धम्मा' ति यथाभूतं पजानाति, 'इमे [N.130] विसेसभागिया धम्मा' ति यथाभूतं पजानाति, 'इमे निब्बेधभागिया धम्मा' ति यथा- [B.373] भूतं पजानाति, सक्कच्चकारी च होति, सप्पायकारी च। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु भब्बो तत्र तत्रेव सक्खिभब्बतं पापुणितुं सति सतिआयतने'' ति॥ ●

**८. बलसुत्तं** : १. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अभब्बो समाधिस्मिं बलतं पापुणितुं। कतमेहि छहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु न समाधिस्स समापत्तिकुसलो होति, न समाधिस्स ठितिकुसलो होति, न समाधिस्स वुट्ठानकुसलो होति, असक्कच्चकारी च होति, असातच्चकारी च, असप्पायकारी च। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अभब्बो समाधिस्मिं बलतं पापुणितुं।

२. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु भब्बो समाधिस्मिं बलतं [R.428] पापुणितुं। कतमेहि छहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु समाधिस्स समापत्तिकुसलो होति,

---

हैं', 'ये स्थितिभागीय धर्म हैं', 'ये विशेषभागीय धर्म हैं', 'ये निर्वेधभागीय धर्म हैं'—इस विषय में यथार्थतः नहीं जानता; और जो असत्कारपूर्वक (उपेक्षाभाव से) साधना करता है; या जो लाभप्रद साधना नहीं करता—भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु वहाँ वहाँ साक्षिभव्यता (साक्षात्कार) प्राप्त नहीं कर सकता, भले ही उसे स्मृत्यायतन हो।

२. (परन्तु) ''भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त कोई भिक्षु वहाँ वहाँ साक्षिभव्यता प्राप्त कर लेता है... स्मृत्यायतन होने पर। कौन से छह धर्म? यहाँ, भिक्षुओ! भिक्षु 'ये धर्म हानभागीय हैं', 'ये धर्म स्थितिभागीय हैं', 'ये धर्म विशेषभागीय हैं', 'ये धर्म निर्वेधभागीय हैं'—ऐसा यथार्थतः जानता है, सत्कारपूर्वक साधना करता है, तथा लाभप्रद साधना करता है। इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु वहाँ वहाँ साक्षिभव्यता पाने में समर्थ हो सकता है स्मृत्यायतन होने पर॥'' ●

**८. बलसूत्र : : समाधि को निर्बल, सबल कर्ता छह धर्म**

१. ''भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त कोई भिक्षु समाधि में बल प्राप्त करने में असमर्थ होता है। कौन से छह धर्म? यहाँ, भिक्षुओ! जो भिक्षु समाधि लगाने में कुशल नहीं होता, समाधि को स्थिर रखने में कुशल नहीं होता, समाधि के व्युत्थान में कुशल नहीं होता, साधना सत्कारपूर्वक नहीं करता, उसमें निरन्तरता नहीं लाता, तथा समाधि को लाभप्रद नहीं समझता। इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु समाधि में बल प्राप्त नहीं कर पाता। (क)

२. ''भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु ही समाधि में बल प्राप्त कर पाता है। कौन से छह

समाधिस्स ठितिकुसलो होति, समाधिस्स वुट्ठानकुसलो होति, सक्कच्चकारी च होति, सातच्चकारी च, सप्पायकारी च। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु भब्बो समाधिस्मि बलतं पापुणितुं'' ति॥ ●

**९. पठमतज्झानसुत्तं** : १. ''छ, भिक्खवे, धम्मे अप्पहाय अभब्बो पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरितुं। कतमे छ? कामच्छन्दं, ब्यापादं, थीनमिद्धं, उद्धच्चकुक्कुच्चं, विचिकिच्छं, कामेसु खो पनस्स आदीनवो न यथाभूतं सम्मप्पञ्ञाय सुदिट्ठो होति। इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मे अप्पहाय अभब्बो पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरितुं।

२. ''छ, भिक्खवे, धम्मे पहाय भब्बो पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरितुं। कतमे छ? कामच्छन्दं, ब्यापादं, थीनमिद्धं, उद्धच्चकुक्कुच्चं, विचिकिच्छं, कामेसु खो पनस्स आदीनवो न यथाभूतं सम्मप्पञ्ञाय सुदिट्ठो होति। इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मे पहाय [N.131] भब्बो पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरितुं'' ति॥ ●

[B.374] **१०. दुतियतज्झानसुत्तं** : १. ''छ, भिक्खवे, धम्मे अप्पहाय अभब्बो पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरितुं। कतमे छ? कामवितक्कं, ब्यापादवितक्कं, विहिंसावितक्कं, कामसञ्ञं, ब्यापादसञ्ञं, विहिंसासञ्ञं—इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मे अप्पहाय अभब्बो पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरितुं।

---

धर्म? जो समाधि लगाने में, उसकी स्थिरता में, उसके व्युत्थान में कुशल होता है, समाधि सत्कारपूर्वक निरन्तरतापूर्वक तथा लाभप्रद समझते हुए लगाता है—ऐसा भिक्षु ...पूर्ववत्... बल प्राप्त करने में समर्थ होता है॥'' (ख) ●

**९. प्रथम तद्ध्यानसूत्र : : छह धर्मों के त्याग से प्रथम ध्यान की प्राप्ति**

१. ''भिक्षुओ! छह धर्मों को छोड़े विना कोई साधक भिक्षु प्रथम ध्यान प्राप्त कर साधना नहीं कर पाता। कौन से छह धर्म? १. कामच्छन्द, २. व्यापाद, ३. स्त्यानमृद्ध, ४. औद्धत्यकौकृत्य, ५. विचिकित्सा तथा कामभोगों के दोषों को प्रज्ञापूर्वक न देखना। भिक्षुओ! इन छह धर्मों को छोड़े विना प्रथम ध्यान साधना की प्राप्ति नहीं हो सकती।

२. ''परन्तु, भिक्षुओ! जो भिक्षु इन छह धर्मों को छोड़ देता है वह प्रथम ध्यान प्राप्त कर साधना कर सकता है। कौन से छह धर्म? (१) कामच्छन्द, (२) व्यापाद, (३) स्त्यानमृद्ध, (४) औद्धत्यकौकृत्य, (५) विचिकित्सा एवं (६) कामभोगों के दोषों को प्रज्ञापूर्वक देखना। भिक्षुओ! इन छह धर्मों को छोड़ने वाला भिक्षु ही प्रथम ध्यान की प्राप्ति सरलतापूर्वक कर सकता है॥'' ●

**१०. द्वितीय तद्ध्यानसूत्र : : छह धर्मों के त्याग से प्रथम ध्यान की प्राप्ति**

१. ''भिक्षुओ! इन छह धर्मों के त्याग के विना प्रथम ध्यान की साधना सम्भव नहीं है। कौन से छह धर्म? (१) कामवितर्क, (२) व्यापादवितर्क, (३) विहिंसावितर्क, (४) कामसंज्ञा, (५) व्यापादसंज्ञा एवं (६) विहिंसासंज्ञा। इन छह धर्मों के त्याग के विना प्रथम ध्यान की प्राप्ति नहीं हो सकती।

२. ''छ, भिक्खवे, धम्मे पहाय भब्बो पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरितुं। कतमे छ? कामवितक्कं, ब्यापादवितक्कं, विहिंसावितक्कं, कामसञ्ञं, ब्यापादसञ्ञं, विहिंसासञ्ञं—इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मे पहाय भब्बो पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरितुं'' [R.429] ति॥ ●

**देवतावग्गो सत्तमो॥**

**तस्सुद्दानं**

अनागामि अरहं मित्ता, सङ्गणिकारामदेवता।
समाधि सक्खिभब्बं बलं, तज्झाना अपरे दुवे ति॥ ●

## ८. अरहत्तवग्गो

**१. दुक्खसुत्तं :** १. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु दिट्ठेव धम्मे दुक्खं विहरति सविघातं सउपायासं सपरिळाहं, कायस्स भेदा परं मरणा दुग्गति पाटिकङ्खा। कतमेहि छहि? कामवितक्केन, ब्यापादवितक्केन, विहिंसावितक्केन, कामसञ्ञाय, ब्यापादसञ्ञाय, विहिंसासञ्ञाय—इमेहि, खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु दिट्ठेव धम्मे दुक्खं विहरति सविघातं सउपायासं सपरिळाहं, कायस्स भेदा परं मरणा दुग्गति पाटिकङ्खा।

---

२. ''भिक्षुओ! इन छह धर्मों को त्याग कर भिक्षु प्रथम ध्यान की प्राप्ति कर साधना कर सकता है। कौन से छह? ...पूर्ववत्... भिक्षुओ! इन छह धर्मों को त्याग कर साधक भिक्षु प्रथम ध्यान की प्राप्ति सहजता से कर सकता है॥'' ●

**देवतावर्ग सप्तम सम्पन्न॥**

**इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची**

१. अनागामिफलसूत्र, २. अर्हत्त्वसूत्र, ३. मित्रसूत्र, ४. सङ्गणिकारामसूत्र, ५. देवतासूत्र, ६. समाधिसूत्र, ७. साक्षिभव्यसूत्र, ८. बलसूत्र, ९. प्रथमतद्ध्यानसूत्र एवं १०. द्वितीय तद्ध्यानसूत्र॥

## ८. अर्हत्त्ववर्ग

**१. दुःखसूत्र : : छह धर्मों से युक्त भिक्षु की दुर्गति, सुगति**

१. ''भिक्षुओ! छह धर्मों से युक्त भिक्षु, इसी जन्म में विघात पश्चात्ताप एवं परिदाह के साथ दुःख भोगता है; देहपात के बाद, मरणानन्तर तो उसकी दुर्गति निश्चित ही है। किन छह धर्मों से? कामवितर्क से, व्यापादवितर्क से एवं विहिंसावितर्क से, कामसंज्ञा, व्यापादसंज्ञा एवं विहिंसासंज्ञा से—इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु विघात पश्चात्ताप एवं परिदाह के साथ इसी जन्म में दुःख भोगता है; देहपात के बाद तो उसकी दुर्गति निश्चित है ही।

[N.132,B.375] २. "छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु दिट्ठेव धम्मे सुखं विहरति अविघातं अनुपायासं अपरिळाहं, कायस्स भेदा परं मरणा सुगति पाटिकङ्खा। कतमेहि छहि? नेक्खम्मवितक्केन, अब्यापादवितक्केन, अविहिंसावितक्केन, नेक्खम्मसञ्ञाय, अब्यापादसञ्ञाय, अविहिंसासञ्ञाय—इमेहि, खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु दिट्ठेव धम्मे सुखं विहरति अविघातं अनुपायासं अपरिळाहं, कायस्स भेदा परं मरणा सुगति पाटिकङ्खा" ति॥

●

[R.430] **२. अरहत्तसुत्तं** : १. "छ, भिक्खवे, धम्मे अप्पहाय अभब्बो अरहत्तं सच्छिकातुं। कतमे छ? मानं, ओमानं, अतिमानं, अधिमानं, थम्भं, अतिनिपातं—इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मे अप्पहाय अभब्बो अरहत्तं सच्छिकातुं।

२. "छ, भिक्खवे, धम्मे पहाय भब्बो अरहत्तं सच्छिकातुं। कतमे छ? मानं, ओमानं, अतिमानं, अधिमानं, थम्भं, अतिनिपातं—इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मे पहाय भब्बो अरहत्तं सच्छिकातुं" ति॥

●

**३. उत्तरिमनुस्सधम्मसुत्तं** : १. "छ, भिक्खवे, धम्मे अप्पहाय अभब्बो उत्तरिमनुस्सधम्मं अलमरियञाणदस्सनविसेसं सच्छिकातुं। कतमे छ? मुट्ठस्सच्चं, असम्पजञ्ञं, इन्द्रियेसु अगुत्तद्वारतं, भोजने अमत्तञ्ञुतं, कुहनं, लपनं—इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मे अप्पहाय अभब्बो उत्तरिमनुस्सधम्मं अलमरियञाणदस्सनविसेसं सच्छिकातुं।

---

२. "भिक्षुओ! छह धर्मों से युक्त साधक भिक्षु इसी जन्म में विघात पश्चात्ताप एवं परिदाहरहित सुख भोगता है, तथा देहपात के बाद उसकी सुगति भी निश्चित है ही। किन छह धर्मों से? नैष्काम्यवितर्क, अव्यापादवितर्क, अविहिंसावितर्क, नैष्काम्य संज्ञा, अव्यापादसंज्ञा, एवं अविहिंसासंज्ञा—इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु इसी जन्म में ...पूर्ववत्... देहपात के बाद, मरणानन्तर तो उसकी सुगति निश्चित है॥"

●

**२. अर्हत्त्वसूत्र : : अर्हत्त्व प्राप्ति में छह धर्म आवश्यक**

१. "भिक्षुओ! छह धर्मों के त्याग विना अर्हत्त्व का साक्षात्कार असम्भव है। कौन से छह धर्म? मान, अवमान, अतिमान, अधिमान, स्तम्भ एवं अतिनिपात—इन छह धर्मों के त्याग के विना अर्हत्त्व का साक्षात्कार असम्भव है।

२. "तथा, भिक्षुओ! छह धर्मों का त्याग करने के बाद ही अर्हत्त्व का साक्षात्कार सम्भव है। कौन से छह धर्म? मान ...पूर्ववत्... अतिनिपात—भिक्षुओ! इन छह धर्मों के त्याग से ही अर्हत्त्व का साक्षात्कार सम्भव है॥"

●

**३. उत्तरमनुष्यधर्मसूत्र : : परा मानुषिक स्थिति-प्राप्ति की सम्भावना**

१. "भिक्षुओ! छह धर्मों का त्याग किये विना पर्याप्त ज्ञानदर्शनविशेष (परामानसिक स्थिति) की प्राप्ति असम्भव है। किन छह धर्मों का त्याग? विस्मृति, असम्प्रजन्य, इन्द्रियों पर असंयम, भोजनमात्रा का अज्ञान, कुहन एवं लपन—भिक्षुओ! इन छह धर्मों के त्याग के विना ...पूर्ववत्... असम्भव है।

२. ''छ, भिक्खवे, धम्मे पहाय भब्बो उत्तरिमनुस्सधम्मं अलमरियञाणदस्सन-विसेसं सच्छिकातुं। कतमे छ? मुट्ठस्सच्चं, असम्पजञ्ञं, इन्द्रियेसु अगुत्तद्वारतं, भोजने अमत्तञ्ञुतं, कुहनं, लपनं—इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मे पहाय भब्बो उत्तरिमनुस्सधम्मं अलमरियञाणदस्सनविसेसं सच्छिकातुं'' ति॥ ●

**४. सुखसोमनस्ससुत्तं :** १. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु दिट्ठेव धम्मे सुखसोमनस्सबहुलो विहरति, योनि चस्स आरद्धा होति आसवानं [N.133,R.431] खयाय। कतमेहि छहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु धम्मारामो होति, भावनारामो होति, पहानारामो होति, पविवेकारामो होति, अब्यापज्झारामो होति, निप्पञ्चारामो होति। [B.376] इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु दिट्ठेव धम्मे सुखसोमनस्सबहुलो विहरति, योनि चस्स आरद्धा होति आसवानं खयाया'' ति॥ ●

**५. अधिगमसुत्तं :** १. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अभब्बो अनधिगतं वा कुसलं धम्मं अधिगन्तुं, अधिगतं वा कुसलं धम्मं फातिं कातुं। कतमेहि छहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु न आयकुसलो च होति, न अपायकुसलो च होति, न उपायकुसलो च होति, अनधिगतानं कुसलानं धम्मानं अधिगमाय न छन्दं जनेति, अधिगते कुसले धम्मे न

---

२. ''भिक्षुओ! छह धर्मों के त्याग से पर्याप्त ज्ञानदर्शनविशेष (परा मानसिक स्थिति) की प्राप्ति सम्भव है। कौन से छह धर्म? विंस्मृति ...पूर्ववत्... सम्भव है॥'' ●

**४. सुखसौमनस्यसूत्र : : छह धर्मों से युक्त भिक्षु सुखसाधक होता है**

१. भिक्षुओ! छह धर्मों से युक्त भिक्षु इसी जन्म में सुख सौमनस्यपूर्वक साधना में समर्थ होता है तथा आश्रवों के क्षयहेतु इसका मार्ग सरल हो जाता है। किन छह धर्मों से युक्त? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु १. धर्म में, २. साधना में, ३. दोषों के प्रहाण में, ४. एकान्तवास में, ५. निर्वैरता में तथा ६. निष्प्रपञ्च में रत रहता है। इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु इसी जन्म में ...पूर्ववत्... सरल हो जाता है॥'' ●

**५. अधिगमसूत्र : : षड्धर्मयुक्त भिक्षु अप्राप्त की प्राप्ति में कुशल**

१. ''छह धर्मों से समन्वित भिक्षु अनधिगत कुशल धर्मों की प्राप्ति में तथा प्राप्त कुशल धर्मों की रक्षा में भी समर्थ नहीं हो सकता। किन छह धर्मों से? यहाँ, भिक्षुओ! जो भिक्षु न आय में कुशल होता है, न अपाय में कुशल, न उपायकुशल ही होता है, न अप्राप्त कुशल धर्मों की इच्छा... रक्षा करता है, न सतत साधना में ही प्रयत्नरत रहता है। भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु ...पूर्ववत्... अधिगत कुशल धर्मों को बचाये रखने में समर्थ नहीं हो सकता।

२. ''तथा छह धर्मों से युक्त भिक्षु अनधिगत कुशल धर्मों की प्राप्ति में भी समर्थ होता है एवं अधिगत कुशल धर्मों की रक्षा करने में, उनका विस्तार करने में समर्थ होता है। किन छह धर्मों से? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु आयकुशल भी होता है, अपायकुशल भी और उपायकुशल भी होता है, अप्राप्त कुशल धर्मों को पाने की इच्छा करता है, अधिगत कुशल धर्मों की रक्षा करता है, धर्म की सतत साधना में रत रहता है। इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु ही अनधिगत कुशल धर्मों की प्राप्ति में भी

आरक्खति, सातच्चकिरियाय न सम्पादेति। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अभब्बो अनधिगतं वा कुसलं धम्मं अधिगन्तुं, अधिगतं वा कुसलं धम्मं फातिं कातुं।

२. "छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु भब्बो अनधिगतं वा कुसलं धम्मं अधिगन्तुं, अधिगतं वा कुसलं धम्मं फातिं कातुं। कतमेहि छहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु [R.432] आयकुसलो च होति, अपायकुसलो च होति, उपायकुसलो च होति, अनधिगतानं कुसलानं धम्मानं अधिगमाय छन्दं जनेति, अधिगते कुसले धम्मे आरक्खति, सातच्च-किरियाय सम्पादेति। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु भब्बो अनधिगतं वा कुसलं धम्मं अधिगन्तुं, अधिगतं वा कुसलं धम्मं फातिं कातुं" ति॥ ●

[N.134] **६. महन्तत्तसुत्तं** : १. "छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु नचिरस्सेव महन्तत्तं वेपुल्लत्तं पापुणाति धम्मेसु। कतमेहि छहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु आलोकबहुलो च होति योगबहुलो च वेदबहुलो च असन्तुट्ठिबहुलो च अनिक्खित्तधुरो च कुसलेसु धम्मेसु उत्तरि च पतारेति। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु नचिरस्सेव महन्तत्तं वेपुल्लत्तं पापुणाति धम्मेसू" ति॥ ●

[B.377] **७. पठमनिरयसुत्तं** : १. "छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं निरये। कतमेहि छहि? पाणातिपाती होति, अदिन्नादायी होति, कामेसुमिच्छाचारी होति, मुसावादी होति, पापिच्छो च, मिच्छादिट्ठि च। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं निरये।

२. "छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं सग्गे। कतमेहि छहि? पाणातिपाता पटिविरतो होति, अदिन्नादाना पटिविरतो होति, कामेसुमिच्छाचारा

---

समर्थ होता है तथा प्राप्त कुशल धर्मों की रक्षा करने में और उनका विस्तार करने में भी समर्थ होता है॥" ●

**६. महत्तासूत्र : : छह धर्मों से महत्ता एवं विपुलता की प्राप्ति**

१. "भिक्षुओ! छह धर्मों से युक्त भिक्षु शीघ्र ही (कुछ ही समय में) धर्मों में महत्ता एवं विपुलता पा लेता है। किन छह धर्मों से? यहाँ, भिक्षुओ! जो भिक्षु प्रकाश, योग, ज्ञान और अधिक करने की इच्छा के कारण असन्तुष्टि, साधना में जूआ न टेकने वाला (निराश न होनेवाला) तथा उन धर्मों का आगे भी विस्तार करने वाला होता है, ऐसा भिक्षु शीघ्र ही धर्मों में विपुलता एवं अधिकता प्राप्त करने में समर्थ हो सकता है॥" ●

**७. प्रथम निरयसूत्र : :**

१. "भिक्षुओ! यदि कोई भिक्षु इन छह धर्मों से युक्त है तो समझ लो कि वह नरक में ही घिरा हुआ है। किन छह धर्मों से? यदि कोई १. प्राणातिपाती (हिंसक) है, २. न दिये हुए को लेने वाला (चौर) है, ३. कामभोगों में मिथ्याचारी (व्यभिचारी) है, ४. असत्यभाषी है, ५. पापमय सङ्कल्प रखता है या ६. मिथ्यादृष्टि है। इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु मानो नरक में ही गिरा हुआ है।

२. और, भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु को स्वर्ग में बैठा हुआ समझो। कौन छह

पटिविरतो होति, मुसावादा पटिविरतो होति, अप्पिच्छो च, सम्मादिट्ठि च। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं सग्गे'' ति॥ ●

**८. दुतियनिरयसुत्तं :** १. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं [R.433] निक्खित्तो एवं निरये। कतमेहि छहि? पाणातिपाती होति, अदिन्नादायी होति, कामेसुमिच्छाचारी होति, मुसावादी होति, लुद्धो च, पगब्भो च। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं निरये।

२. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं सग्गे। कतमेहि छहि? पाणातिपाता पटिविरतो होति, अदिन्नादाना पटिविरतो होति, कामेसु- [N.135] मिच्छाचारा पटिविरतो होति, मुसावादा पटिविरतो होति, अलुद्धो च, अप्पगब्भो च। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो यथाभतं निक्खित्तो एवं सग्गे'' ति॥ ●

**९. अग्गधम्मसुत्तं :** १. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अभब्बो अग्गं धम्मं अरहत्तं सच्छिकातुं। कतमेहि छहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु अस्सद्धो होति, अहिरिको होति, अनोत्तप्पी होति, कुसीतो होति, दुप्पञ्ञो होति, काये च जीविते च सापेक्खो होति। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अभब्बो [B.378] अग्गं धम्मं अरहत्तं सच्छिकातुं।

२. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु भब्बो अग्गं धम्मं अरहत्तं

---

धर्म? (१) जो हिंसा से, (२) चौरी से, (३) व्यभिचार से दूर रहता है, (४) जो सत्यवादी है, (५) जो अल्पेच्छ (सन्तुष्ट) है, तथा (६) सम्यग्दृष्टि है। इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु मानों स्वर्ग में ही बैठा हुआ है॥'' ●

**८. द्वितीय निरयसूत्र : : नरक एवं स्वर्ग ले जाने वाले छह धर्म**

१. छह धर्मों से युक्त भिक्षु को, भिक्षुओ! नरक में गिरा हुआ ही समझना चाहिये। कौन से छह धर्म? (१) प्राणातिपाती होना, (२) चौर होना, (३) व्यभिचारी होना, ४. असत्यभाषी होना, (५) निर्दयी होना तथा (६) दु:साहसी (डाकू) होना—भिक्षुओ! इन छह धर्मों युक्त भिक्षु नरक में गिरे हुए प्राणी के समान है।

२. तथा, भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु को स्वर्ग में बैठा हुआ समझना चाहिये। कौन से छह धर्म? (१) प्राणातिपाती, (२) चौर, (३) व्यभिचारी, (४) असत्यभाषी, (५) निर्दयी तथा (६) दु:साहसी न होना—भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु स्वर्ग में बैठे प्राणी के तुल्य है॥'' ●

**९. अग्रधर्मसूत्र : : षड्धर्म युक्तभिक्षु अर्हत्त्व के योग्य**

१. ''भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु अग्रधर्म अर्हत्त्व को प्राप्त करने में समर्थ नहीं है। किन छह धर्मों से? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु १. रत्नत्रय के प्रति अश्रद्धालु होता है, २. निर्लज्ज होता है, ३. पापभीरु नहीं होता, ४. आलसी होता है, ५. दुर्बुद्धि होता है तथा ६. अपने शरीर एवं जीवन में आसक्ति रखता है। इन धर्मों से युक्त ...पूर्ववत्... समर्थ नहीं है।

[R.434] सच्छिकातुं। कतमेहि छहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु सद्धो होति, हिरिमा होति, ओत्तप्पी होति, आरद्धविरियो होति, पञ्ञवा होति, काये च जीविते च अनपेक्खो होति। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु भब्बो अग्गं धम्मं अरहत्तं सच्छिकातुं'' ति॥ ●

**१०. रत्तिदिवससुत्तं** :१. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतस्स भिक्खुनो या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति हानियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु, नो वुड्ढि। कतमेहि छहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु महिच्छो होति विघातवा असन्तुट्ठो इतरीतरचीवरपिण्डपात-सेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारेन, अस्सद्धो होति, दुस्सीलो होति, कुसीतो होति, मुट्ठस्सति होति, दुप्पञ्ञो होति। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतस्स भिक्खुनो या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति हानियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु, नो वुड्ढि।

२. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतस्स भिक्खुनो या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति वुड्ढियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु, नो परिहानि। कतमेहि छहि? इध, [N.136] भिक्खवे, भिक्खु न महिच्छो होति अविघातवा सन्तुट्ठो इतरीतरचीवरपिण्ड-पातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारेन, सद्धो होति, सीलवा होति, आरद्धविरियो होति, सतिमा होति, पञ्ञवा होति। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतस्स भिक्खुनो या रत्ति वा दिवसो वा आगच्छति वुड्ढियेव पाटिकङ्खा कुसलेसु धम्मेसु नो परिहानी'' ति॥

**अरहत्तवग्गो अट्ठमो॥** ●

---

२. ''परन्तु, भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु अग्रधर्म अर्हत्त्व का साक्षात्कार करने में समर्थ हो सकता है। किन छह धर्मों से? जो भिक्षु (रत्नत्रय के प्रति) श्रद्धालु होता है, लज्जालु एवं पापभीरु होता है, साधना में श्रम करता है, प्रज्ञावान् है, तथा अपने काय एवं जीवन में किसी प्रकार की आसक्ति नहीं रखता। ऐसा भिक्षु अग्रधर्म अर्हत्त्व का साक्षात्कार करने में अवश्य समर्थ हो सकता है॥ ●

**१०. रात्रिन्दिवसूत्र : : छह धर्मों से युक्त के कुशल धर्मों में वृद्धि**

''भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु के जो रात एवं दिन सामने आयँगे उनमें उसके कुशल धर्मों की हानि ही सम्भव है, न कि वृद्धि। किन छह धर्मों से? यहाँ, भिक्षुओ! जो भिक्षु (१) व्यर्थ महत्ताकांक्षाएँ रखता हुआ दूसरों के प्रति द्वेषभाव रखता है, दूसरों को मिलते हुए चीवर पिण्डपात आदि से असन्तुष्ट होता है, (२) अश्रद्धालु, (३) दुराचारी, (४) आलसी, (५) विस्मृतियुक्त (भुलक्कड़), (६) तथा दुष्प्रज्ञ होता है। इन छह धर्मों से ...पूर्ववत्...।

२. (''परन्तु) भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु का जो आनेवाली रात्रि या दिन हैं उनमें उसके कुशल धर्मों की वृद्धि ही होती है, हानि नहीं। कौन से छह धर्म? यहाँ, भिक्षुओ! जो भिक्षु (१) अपनी व्यर्थ महत्त्वाकांक्षाएँ न रखता हुआ न किसी से द्वेष करता है तथा दूसरों को अधिक चीवर पिण्डपात आदि मिलने से भी स्वयं सन्तुष्ट रहता है, (२) रत्नत्रय के प्रति श्रद्धालु होता है, (३) सदाचारसम्पन्न है, (४) उद्योगसम्पन्न रहता है, (५) स्मृतिमान् होता है, तथा (६) प्रज्ञावान्

### तस्सुद्दानं

दुक्खं अरहत्तं उत्तरि च, सुखं अधिगमेन च। [B.379,R.435]
महन्तत्तं द्वयं निरये, अग्गधम्मं च रत्तियो ति॥ ●

## ९. सीतिवग्गो

**१. सीतिभावसुत्तं :** १. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अभब्बो अनुत्तरं सीतिभावं सच्छिकातुं। कतमेहि छहि ? इध, भिक्खवे, भिक्खु यस्मिं समये चित्तं निग्गहेतब्बं तस्मिं समये चित्तं न निग्गण्हाति, यस्मिं समये चित्तं पग्गहेतब्बं तस्मिं समये चित्तं न पग्गण्हाति, यस्मिं समये चित्तं सम्पहंसितब्बं तस्मिं समये चित्तं न सम्पहंसेति, यस्मिं समये चित्तं अज्झुपेक्खितब्बं तस्मिं समये चित्तं न अज्झुपेक्खति, हीनाधिमुत्तिको च होति, सक्कायाभिरतो च। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अभब्बो अनुत्तरं सीतिभावं सच्छिकातुं।

२. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु भब्बो अनुत्तरं सीतिभावं सच्छिकातुं। कतमेहि छहि ? इध, भिक्खवे, भिक्खु यस्मिं समये चित्तं निग्गहेतब्बं तस्मिं

---

होता है। भिक्षुओ ! इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु की आनेवाले रात्रि एवं दिन में उसके कुशल धर्मों में वृद्धि की ही सम्भावना है, हानि की नहीं॥'' **अर्हत्त्ववर्ग अष्टम सम्पन्न॥** ●

### इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची

१. दुःखसूत्र, २. अर्हत्त्वसूत्र, ३. उत्तरमनुष्यधर्मसूत्र, ४. सुखसौमनस्यसूत्र, ५. अधिगमसूत्र, ६. महत्तासूत्र, ७. प्रथमनिरयसूत्र, ८. द्वितीय निरयसूत्र, ९. अग्रधर्मसूत्र, एवं १०. रात्रिन्दिवसूत्र॥

## ९. शीतिवर्ग

**१. शीतिभावसूत्र : : षड्धर्मसम्पन्न ही शमथप्राप्ति में समर्थ**

१. ''भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु उस अद्वितीय शान्ति (शमथ) का साक्षात्कार करने में समर्थ नहीं है। किन छह धर्मों से युक्त ? (१) यहाँ, भिक्षुओ! जो भिक्षु जिस समय चित्त को निगृहीत करना चाहिये उस समय निगृहीत नहीं कर पाता; (२) जिस समय चित्त को प्रगृहीत करना चाहिये उस समय उसको प्रगृहीत नहीं कर पाता; (३) जिस समय चित्त को सम्प्रहृष्ट करना चाहिये उस समय चित्त को सम्प्रहृष्ट नहीं कर पाता; (४) जिस समय चित्त को उपेक्षित करना चाहिये तब चित्त को उपेक्षित नहीं कर पाता; (५) मन्द उत्साह वाला होता है; तथा (६) सत्कायदृष्टि में आसक्त रहता है। भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु उस अद्वितीय शान्ति (शमथ) का साक्षात्कार नहीं कर पाता।

२. (''परन्तु) भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु उस अद्वितीय शान्ति (शमथ) का साक्षात्कार करने में समर्थ हो सकता है। कौन से छह धर्मों से ? यहाँ, भिक्षुओ! जो भिक्षु जिस समय

समये चित्तं निग्गण्हाति, यस्मिं समये चित्तं पग्गहेतब्बं तस्मिं समये चित्तं पग्गण्हाति, यस्मिं समये चित्तं सम्पहंसितब्बं तस्मिं समये चित्तं सम्पहंसेति, यस्मिं समये चित्तं अज्झुपेक्खितब्बं तस्मिं समये चित्तं अज्झुपेक्खति, पणीताधिमुत्तिको च होति, निब्बानाभिरतो च। [N.137] इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु भब्बो अनुत्तरं सीतिभावं सच्छिकातुं'' ति॥ ●

**२. आवरणसुत्तं :** १. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो सुणन्तो पि सद्धम्मं अभब्बो नियामं ओक्कमितुं कुसलेसु धम्मेसु सम्मत्तं। कतमेहि छहि? कम्मावरणताय [B.380] समन्नागतो होति, किलेसावरणताय समन्नागतो होति, विपाकावरणताय समन्नागतो [R.436] होति, अस्सद्धो च होति, अच्छन्दिको च, दुप्पञ्ञो च। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो सुणन्तो पि सद्धम्मं अभब्बो नियामं ओक्कमितुं कुसलेसु धम्मेसु सम्मत्तं।

२. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो सुणन्तो सद्धम्मं भब्बो नियामं ओक्कमितुं कुसलेसु धम्मेसु सम्मत्तं। कतमेहि छहि? न कम्मावरणताय समन्नागतो होति, न किलेसावरणताय समन्नागतो होति, न विपाकावरणताय समन्नागतो होति, सद्धो च होति, छन्दिको च, पञ्ञवा च। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो सुणन्तो पि सद्धम्मं भब्बो नियामं ओक्कमितुं कुसलेसु धम्मेसु सम्मत्तं'' ति॥ ●

**३. वोरोपितसुत्तं :** १. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो सुणन्तो पि सद्धम्मं अभब्बो नियामं ओक्कमितुं कुसलेसु धम्मेसु सम्मत्तं। कतमेहि छहि? माता जीविता वोरोपिता होति, पिता जीविता वोरोपितो होति, अरहं जीविता वोरोपितो होति, तथागतस्स

---

चित्त को ...पूर्ववत्... *[ऊपर के पैराग्राफ को अनुलोमक्रम ('न' हटाकर) से पढ़ें।]* साक्षात्कार करने में समर्थ हो सकता है। ●

**२. आवरणसूत्र : : छह धर्मों से कुशल धर्मों में सम्यक्त्व**

१. भिक्षुओ! छह धर्मों से युक्त भिक्षु सद्धर्म का श्रवण करके भी नियमपूर्वक कुशल धर्मों में सम्यक्त्व प्राप्त नहीं कर सकता। किन छह धर्मों से? (१) जो कर्मावरणता से, (२) जो क्लेशावरणता से, (३) जो विपाकावरणता से युक्त होता है; (४) रत्नत्रय के प्रति अश्रद्धालु, (५) अननुरागी एवं (६) दुष्प्रज्ञ होता है। इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु ...पूर्ववत्... सम्यक्त्व प्राप्त नहीं कर सकता।

२. भिक्षुओ! छह धर्मों से युक्त भिक्षु सद्धर्म का श्रवण करके भी नियमपूर्वक कुशल धर्मों में सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है। कौन छह धर्म? (१) कर्मावरणता से... पूर्ववत्... (२) अनुरागी एवं प्रज्ञावान् होता है। ऐसा भिक्षु ... पूर्ववत्... सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है। ●

**३. व्यवरोपितसूत्र : : छह धर्मों से कुशल धर्मों में सम्यक्त्व**

१. ''भिक्षुओ! छह धर्मों से युक्त भिक्षु सद्धर्म का श्रवण करके भी विधिपूर्वक कुशल धर्मों में सम्यक्त्व नहीं प्राप्त कर सकता। कौन से छह धर्मों से? (१) जो अपनी माता के, (२) पिता के,

दुट्ठेन चित्तेन लोहितं उप्पादितं होति, सङ्घो भिन्नो होति, दुप्पञ्ञो होति जळो एळमूगो। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो सुणन्तो पि सद्धम्मं अभब्बो नियामं ओक्कमितुं कुसलेसु धम्मेसु सम्मत्तं।

२. "छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो सुणन्तो सद्धम्मं भब्बो नियामं ओक्कमितुं कुसलेसु धम्मेसु सम्मत्तं। कतमेहि छहि? न माता जीविता वोरोपिता होति, न पिता [R.437] जीविता वोरोपितो होति, न अरहं जीविता वोरोपितो होति, न तथागतस्स दुट्ठेन चित्तेन लोहितं उप्पादितं होति, न सङ्घो भिन्नो होति, पञ्ञवा होति अजळो [N.138,B.381] अनेळमूगो। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो सुणन्तो सद्धम्मं भब्बो नियामं ओक्कमितुं कुसलेसु धम्मेसु सम्मत्तं" ति॥ ●

**४. सुस्सूसतिसुत्तं :** १. "छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो सुणन्तो पि सद्धम्मं अभब्बो नियामं ओक्कमितुं कुसलेसु धम्मेसु सम्मत्तं। कतमेहि छहि? तथागतप्पवेदिते धम्मविनये देसियमाने न सुस्सूसति, न सोतं ओदहति, न अञ्ञा चित्तं उपट्ठापेति, अनत्थं गण्हाति, अत्थं रिञ्चति, अननुलोमिकाय खन्तिया समन्नागतो होति। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो सुणन्तो पि सद्धम्मं अभब्बो नियामं ओक्कमितुं कुसलेसु धम्मेसु सम्मत्तं।

२. "छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो सुणन्तो सद्धम्मं भब्बो नियामं ओक्कमितुं कुसलेसु धम्मेसु सम्मत्तं। कतमेहि छहि? तथागतप्पवेदिते धम्मविनये देसियमाने सुस्सूसति, सोतं ओदहति, अञ्ञा चित्तं उपट्ठापेति, अत्थं गण्हाति, अनत्थं रिञ्चति,

---

(३) किसी अर्हत् के प्राण हर लेता है, (४) तथागत के किसी अङ्ग पर चोट लगाकर रक्त निकाल देता है; (५) सङ्घ में मतभेद उत्पन्न करता है तथा (६) जो दुष्प्रज्ञ होता है। भिक्षुओ! ऐसा भिक्षु... पूर्ववत्,,, सम्यक्त्व प्राप्त नहीं कर सकता।

२. ("परन्तु) भिक्षुओ! जो भिक्षु ... पूर्ववत्... किन छहधर्मों से? जो अपनी माता के, पिता के, अर्हत् के प्राण नहीं हरता, तथागत के शरीर से रक्त नहीं प्रवाहित करता, सङ्घ में मतभेद पैदा नहीं करता, तथा स्वयं प्रज्ञावान् होता है। इन छह धर्मों से ...पूर्ववत्... सम्यक्त्व प्राप्त कर लेता है॥" ●

**४. शुश्रूषतिसूत्र : : छह धर्मों से कुशल धर्मों में सम्यक्त्व**

१. "भिक्षुओ! छह धर्मों से युक्त भिक्षु सद्धर्मश्रवण करके भी ...पूर्ववत्... सम्यक्त्व प्राप्त नहीं कर सकता। किन छह धर्मों से? तथागतोपदिष्ट धर्म का उपदेश सुनते समय न शुश्रूषा (सुनने की इच्छा) करता है, न उसकी ओर ध्यान देता है, न उसको समझकर चित्त में बैठाता है, न उसका आशय समझता है, वास्तविक अभिप्राय को छोड़ देता है, उसे सुनते हुए उसके प्रति प्रतिलोम भाव ही रखता है। इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु सद्धर्म का श्रवण करके भी उनका विधिपूर्वक सम्यक्त्व प्राप्त नहीं कर सकता।

२. ("परन्तु) भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त कोई सद्धर्म श्रवण कर ...पूर्ववत्... सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है। कौन छह धर्म? तथागतोपदिष्ट धर्म का श्रवण करते समय उसको सुनने की

अनुलोमिकाय खन्तिया समन्नागतो होति। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो सुणन्तो सद्धम्मं भब्बो नियामं ओक्कमितुं कुसलेसु धम्मेसु सम्मत्तं'' ति॥ ●

[R.438] **५. अप्पहायसुत्तं :** १. ''छ, भिक्खवे, धम्मे अप्पहाय अभब्बो दिट्ठिसम्पदं सच्छिकातुं। कतमे छ? सक्कायदिट्ठिं, विचिकिच्छं, सीलब्बतपरामासं, अपायगमनीयं रागं, अपायगमनीयं दोसं, अपायगमनीयं मोहं—इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मे अप्पहाय अभब्बो दिट्ठिसम्पदं सच्छिकातुं।

२. ''छ, भिक्खवे, धम्मे पहाय भब्बो दिट्ठिसम्पदं सच्छिकातुं। कतमे छ? सक्काय-दिट्ठिं, विचिकिच्छं, सीलब्बतपरामासं, अपायगमनीयं रागं, अपायगमनीयं दोसं, अपाय-गमनीयं मोहं—इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मे पहाय भब्बो दिट्ठिसम्पदं सच्छिकातुं'' ति॥ ●

[N.139,B.382] **६. पहीनसुत्तं :** १. ''छयिमे, भिक्खवे, धम्मा दिट्ठिसम्पन्नस्स पुग्गलस्स पहीना। कतमे छ? सक्कायदिट्ठि, विचिकिच्छा, सीलब्बतपरामासो, अपायगमनीयो रागो, अपायगमनीयो दोसो, अपायगमनीयो मोहो—इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मा दिट्ठिसम्पन्नस्स पुग्गलस्स पहीना'' ति॥ ●

**७. अभब्बसुत्तं :** १. ''छ, भिक्खवे, धम्मे अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो उप्पादेतुं। कतमे छ? सक्कायदिट्ठिं, विचिकिच्छं, सीलब्बतपरामासं, अपायगमनीयं रागं, अपायगमनीयं दोसं, अपायगमनीयं मोहं—इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मे अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो उप्पादेतुं'' ति॥ ●

---

इच्छा करता है, उस पर ध्यान देता है, प्रज्ञापूर्वक उसको चित्त में बैठा लेता है, उसका अर्थ ग्रहण करता है, अनर्थ को छोड़ देता है, अनुलोम विविक्षा से युक्त रहता है। इन छह धर्मों से युक्त... पूर्ववत्... कुशल धर्मों में सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है॥'' ●

**५. अप्रहायसूत्र : :**

१. ''भिक्षुओ! छह धर्मों को विना छोड़े कोई भिक्षु दृष्टिसम्पत् का साक्षात्कार नहीं कर सकता। कौन से छह धर्म? सत्कायदृष्टि, विचिकित्सा, शीलव्रतपरामर्श, दुर्गतिगामी राग, द्वेष एवं मोह। इन छह धर्मों से युक्त... पूर्ववत्... साक्षात् नहीं कर सकता।

२. ''हाँ, भिक्षुओ! इन छह धर्मों का त्याग कर वह भिक्षु दृष्टिसम्पत् का साक्षात्कार कर सकता है। कौन से छह धर्म? सत्कायदृष्टि ...पूर्ववत्... दुर्गतिगामी राग, द्वेष एवं मोह। इन छह धर्मों का त्याग कर... साक्षात्कार कर सकता है॥'' ●

**६. प्रहीणसूत्र : : छह धर्मों का प्रहाण**

१. ''भिक्षुओ! सम्यग्दृष्टिसम्पन्न पुद्गल के ये छह धर्म प्रहीण हो चुके होते हैं। कौन से छह धर्म? सत्कायदृष्टि ...पूर्ववत्... दुर्गतिगामी राग, द्वेष एवं मोह। ...पूर्ववत्...। ●

**७. अभव्यसूत्र : : छह धर्मों की उत्पत्ति असम्भव**

१. ''भिक्षुओ! दृष्टिसम्पन्न पुद्गल इन छह धर्मों को अपने चित्त में नहीं उत्पन्न होने देता। कौन से छह? सत्कायदृष्टि...पूर्ववत्...। ये छह धर्म ...पूर्ववत्... उत्पन्न नहीं होने देता। ●

**८. पठमअभब्बट्ठानसुत्तं :** १. ''छयिमानि, भिक्खवे, अभब्बट्ठानानि। कतमानि छ? अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो सत्थरि अगारवो विहरितुं अप्पतिस्सो, अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो धम्मे [R.439] अगारवो विहरितुं अप्पतिस्सो, अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो सङ्घे अगारवो विहरितुं अप्पतिस्सो, अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो सिक्खाय अगारवो विहरितुं अप्पतिस्सो, अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो अनागमनीयं वत्थुं पच्चागन्तुं, अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो अट्ठमं भवं निब्बत्तेतुं। इमानि खो, भिक्खवे, छ अभब्बट्ठानानी'' ति॥ ●

**९. दुतियअभब्बट्ठानसुत्तं :** १. ''छयिमानि, भिक्खवे, अभब्बट्ठानानि। कतमानि छ? अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो कञ्चि सङ्खारं निच्चतो उपगन्तुं, अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो कञ्चि सङ्खारं सुखतो उपगन्तुं, अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो कञ्चि धम्मं अत्ततो उपगन्तुं, अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो अनन्तरियं कम्मं कातुं, अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो कोतूहल मङ्गलेन सुद्धिं पच्चागन्तुं, अभब्बो दिट्ठिसंम्पन्नो पुग्गलो इतो [N.140,B.383] बहिद्धा दक्खिणेय्यं गवेसितुं। इमानि खो, भिक्खवे, छ अभब्बट्ठानानी'' ति॥ ●

**१०. ततियअभब्बट्ठानसुत्तं :** १. ''छयिमानि, भिक्खवे, अभब्बट्ठानानि। कतमानि छ? अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो मातरं जीविता वोरोपेतुं, अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो पितरं जीविता वोरोपेतुं, अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो अरहन्तं जीविता वोरोपेतुं, अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो तथागतस्स दुट्ठेन चित्तेन लोहितं उप्पादेतुं, अभब्बो

---

**८. प्रथम अभव्यस्थानसूत्र : : अनुचित छह स्थान**

१. ''भिक्षुओ! दृष्टिसम्पन्न पुद्गल के लिये ये छह अभव्य (अनुचित) स्थान हैं। कौन से छह? दृष्टिसम्पन्न पुद्गल शास्ता के प्रति अश्रद्धालु एवं विद्रोही नहीं हो सकता; दृष्टिसम्पन्न पुद्गल धर्म के प्रति...; सङ्घ के प्रति...; धर्मशिक्षा के प्रति...; अनागमनीय वस्तु के पुनः लौटने की इच्छा नहीं करता, तथा दृष्टिसम्पन्न पुद्गल आठवाँ जन्म प्राप्त करने की इच्छा नहीं करता। भिक्षुओ! दृष्टिसम्पन्न पुद्गल के लिये ये छह धर्म अभव्य स्थान हैं॥'' ●

**९. द्वितीय अभव्यस्थानसूत्र : : असम्भव छह स्थान**

१. ''भिक्षुओ! दृष्टिसम्पन्न पुद्गल के लिये ये छह अभव्य (असम्भव) स्थान हैं। कौन से छह? दृष्टिसम्पन्न पुद्गल किसी संस्कार को नित्य नहीं मान सकता; ...सुखमय नहीं मान सकता, ...किसी सांसारिक धर्म को आत्मा (अपना) नहीं मानता। दृष्टिसम्पन्न पुद्गल आनन्तर्य कर्म नहीं किया करता। दृष्टिसम्पन्न पुद्गल कौतूहलमङ्गल (विशेष देवोत्सव) से शुद्धि नहीं चाहता। दृष्टिसम्पन्न पुद्गल सङ्घबाह्य दान-दक्षिणा में आसक्ति नहीं रखता। भिक्षुओ! ये छह अभव्य स्थान हैं॥'' ●

**१०. तृतीय अभव्यस्थानसूत्र : : छह अभव्य स्थान (कर्म)**

१. ''भिक्षुओ! दृष्टिसम्पन्न पुद्गल के लिये ये छह अभव्य स्थान (कर्म) हैं। कौन से छह? दृष्टिसम्पन्न पुद्गल के लिये १. मातृहत्या, २. पितृहत्या, ३. अर्हद्धत्या, ४. तथागत का लोहितोत्पाद,

दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो सङ्घं भिन्दितुं, अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो अञ्ञं सत्थारं उद्दिसितुं। इमानि खो, भिक्खवे, छ अभब्बट्ठानानी'' ति॥ ●

[R.440] ११. **चतुत्थअभब्बट्ठानसुत्तं** : १. ''छयिमानि, भिक्खवे, अभब्बट्ठानानि। कतमानि छ? अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो सयङ्कतं सुखदुक्खं पच्चागन्तुं, अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो परङ्कतं सुखदुक्खं पच्चागन्तुं, अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो सयङ्कतं च परङ्कतं च सुखदुक्खं पच्चागन्तुं, अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो असयङ्कारं अधिच्चसमुप्पन्नं सुखदुक्खं पच्चागन्तुं, अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो अपरङ्कारं अधिच्चसमुप्पन्नं सुखदुक्खं पच्चागन्तुं, अभब्बो दिट्ठिसम्पन्नो पुग्गलो असयङ्कारं च अपरङ्कारं च अधिच्चसमुप्पन्नं सुखदुक्खं पच्चागन्तुं। तं किस्स हेतु? तथा हिस्स, भिक्खवे, दिट्ठिसम्पन्नस्स पुग्गलस्स हेतु च सुदिट्ठो हेतुसमुप्पन्ना च धम्मा। इमानि खो, भिक्खवे, छ अभब्बट्ठानानि'' ति॥ **सीतिवग्गो नवमो**॥ ●

**तस्सुद्दानं**

सीतिभावं आवरणं, वोरोपिता सुसूसति।
अप्पहाय पहीनाभब्बो, तट्ठाना चतुरो पि चा ति॥ ●

## १०. आनिसंसवग्गो

[N.141,B.384,R.441] **१. पातुभावसुत्तं** : १. ''छन्नं, भिक्खवे, पातुभावो दुल्लभो लोकस्मिं। कतमेसं छन्नं? तथागतस्स अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स पातुभवो दुल्लभो लोकस्मिं,

---

५. सङ्घ में मतभेद तथा बुद्ध के अतिरिक्त किसी अन्य को गुरु मानना—ये छह असम्भव कर्म है। इस प्रकार भिक्षुओ! दृष्टिसम्पन्न पुद्गल के लिये छह असम्भव स्थान हैं॥'' ●

**११. चतुर्थ अभव्यस्थानसूत्र : : अन्य छह अभव्य स्थान**

''भिक्षुओ! ये छह अभव्य स्थान हैं। कौन छह? दृष्टिसम्पन्न पुद्गल स्वयं कृत सुख दुःख को लौटाना नहीं चाहता;...परकृत सुख दुःख को लौटाना नहीं चाहता; स्वयंकृत एवं परकृत सुख दुःख को... स्वयं न किये हुए अकारण उत्पन्न सुख दुःख को... दूसरे के द्वारा न किये हुए अकारण उत्पन्न सुख दुःख को... स्वयं तथा पर द्वारा न किये हुए अकारण उत्पन्न सुख दुःख को लौटाना नहीं चाहता। वह किसलिये? क्योंकि दृष्टिसम्पन्न पुद्गल हेतु तथा हेतुसमुत्पन्न धर्मों को जानता है। भिक्षुओ! ये छह असम्भवस्थान है॥'' **शीतिवर्ग नवम सम्पन्न**॥ ●

**इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची**

१. शीतिभावसूत्र, २. आवरणसूत्र, ३. व्यवरोपितसूत्र, ४. शुश्रूषतिसूत्र, ५. अप्रहायसूत्र, ६. प्रहीणसूत्र, ७. अभव्यसूत्र, ८. प्रथम अभव्यस्थानसूत्र, ९. द्वितीय अभव्यस्थानसूत्र, १०. तृतीय अभव्यस्थानसूत्र, ११. चतुर्थ अभव्यस्थानसूत्र॥ ●

तथागतप्पवेदितस्स धम्मविनयस्स देसेता पुग्गलो दुल्लभो लोकस्मिं, अरियायतने पच्चाजाति दुल्लभा लोकस्मिं, इन्द्रियानं अवेकल्लता दुल्लभा लोकस्मिं, अजळता अनेळमूगता दुल्लभा लोकस्मिं, कुसले धम्मे छन्दो लोकस्मिं। इमेसं खो, भिक्खवे, छन्नं पातुभावो दुल्लभो लोकस्मिं'' ति॥ ●

२. आनिसंससुत्तं : १. ''छयिमे, भिक्खवे, आनिसंसा सोतापत्तिफलसच्छि-किरियाय। कतमे छ? सद्धम्मनियतो होति, अपरिहानधम्मो होति, परियन्तकतस्स दुक्खं होति, असाधारणेन ञाणेन समन्नागतो होति, हेतु चस्स सुदिट्ठो, हेतुसमुप्पन्ना च धम्मा। इमे खो, भिक्खवे, छ आनिसंसा सोतापत्तिफलसच्छिकिरियाया'' ति॥ ●

३. अनिच्चसुत्तं : १. '''सो वत, भिक्खवे, भिक्खु कञ्चि सङ्खारं निच्चतो समनुपस्सन्तो अनुलोमिकाय खन्तिया समन्नागतो भविस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति। 'अनुलोमिकाय खन्तिया असमन्नागतो सम्मत्तनियामं ओक्कमिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति। 'सम्मत्तनियामं अनोक्कममानो सोतापत्तिफलं वा सकदागामिफलं वा अनागामिफलं वा अरहत्तं वा सच्छिकरिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति।

२. '''सो वत, भिक्खवे, भिक्खु सब्बसङ्खारे अनिच्चतो समनुपस्सन्तो [R.442] अनुलोमिकाय खन्तिया समन्नागतो भविस्सती' ति ठानमेतं विज्जति। 'अनुलोमिकाय

---

## १०. आनृशंस्य वर्ग

**१. प्रादुर्भावसूत्र : : छह का प्रादुर्भाव दुर्लभ**

१. ''भिक्षुओ! लोक में इन छह का प्रादुर्भाव दुर्लभ है। किन छह का? १. तथागत अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध का प्रादुर्भाव, २. तथागतोपदिष्ट धर्मविनय के उपदेष्टा पुद्गल का प्रादुर्भाव, ३. आर्यभूमि में जन्म होना, ४. इन्द्रियों का चञ्चल न होना दुर्लभ, ५. जड़ या मूकवादी (का न होना), ६. कुशल धर्मों में प्रवृत्ति होना दुर्लभ होता है। भिक्षुओ! लोक में इन छह का प्रादुर्भाव दुर्लभ होता है॥'' ●

**२. आनृशंस्यसूत्र : : स्रोत आपत्ति के छह शुभ फल**

१. ''भिक्षुओ! स्रोत आपत्तिफल के साक्षात्कार के छह शुभ फल होते हैं। कौन से छह? सद्धर्मसाधना में ही लगा रहता है; वह धर्म से च्युत नहीं होता; उसका दुःख सीमित होता है, वह असाधारण ज्ञान से युक्त होता है; वह हेतु एवं हेतुसमुत्पन्न धर्मों को समीचीनतया जानता है। भिक्षुओ! स्रोतआपत्तिफल-साक्षात्कार के ये छह शुभ फल होते हैं॥'' ●

**३. अनित्यसूत्र : : छह अनित्य धर्म**

१. ''भिक्षुओ! जो भिक्षु संस्कारों को नित्य मानता है वह अनुलोम क्षान्ति से युक्त हो पायगा—यह सम्भव नहीं है। अनुलोम क्षान्ति से रहित साधक सम्यक्त्वनियमों में प्रवेश कर सकेगा—यह भी सम्भव नहीं है। सम्यक्त्वनियमों में प्रविष्ट न हुआ साधक स्रोतआपत्तिफल, सकृदागामिफल, अनागामिफल या अर्हत्त्वफल का साक्षात्कार कर सकेगा—यह सम्भव नहीं है।

२. ''भिक्षुओ! जो भिक्षु संस्कारों को अनित्य मानता है वह अनुलोम क्षान्ति से युक्त हो

खन्तिया असमन्नागतो सम्मत्तनियामं ओक्कमिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति। 'सम्मत्तनियामं अनोक्कममानो सोतापत्तिफलं वा सकदागामिफलं वा अनागामिफलं वा अरहत्तं वा [N.142,B.385] सच्छिकरिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति'' ति॥ ●

**४. दुक्खसुत्तं :** १. ''सो वत, भिक्खवे, भिक्खु कञ्चि सङ्खारं सुखतो समनुपस्सन्तो ...पे०... सब्बसङ्खारे दुक्खतो समनुपस्सन्तो ...पे०... ठानमेतं विज्जतीति''॥ ●

**५. अनत्तसुत्तं :** १. ''सो वत, भिक्खवे, भिक्खु कञ्चि धम्मं अत्ततो समनुपस्सन्तो ...पे०... सब्बधम्मे अनत्ततो समनुपस्सन्तो ...पे०... ठानमेतं विज्जतीति''॥ ●

**६. निब्बानसुत्तं :** १. '''सो वत, भिक्खवे, भिक्खु निब्बानं दुक्खतो समनुपस्सन्तो अनुलोमिकाय खन्तिया समन्नागतो भविस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति। 'अनुलोमिकाय खन्तिया असमन्नागतो सम्मत्तनियामं ओक्कमिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति। 'सम्मत्तनियामं अनोक्कममानो सोतापत्तिफलं वा सकदागामिफलं वा अनागामिफलं वा अरहत्तं वा सच्छिकरिस्सती' ति नेतं ठानं विज्जति।

२. '''सो वत, भिक्खवे, भिक्खु निब्बानं सुखतो समनुपस्सन्तो अनुलोमिकाय [R.443] खन्तिया समन्नागतो भविस्सती' ति ठानमेतं विज्जति। 'अनुलोमिकाय खन्तिया समन्नागतो सम्मत्तनियामं ओक्कमिस्सती' ति ठानमेतं विज्जति। 'सम्मत्तनियामं अनोक्कममानो सोतापत्तिफलं वा सकदागामिफलं वा अनागामिफलं वा अरहत्तं वा सच्छिकरिस्सती' ति ठानमेतं विज्जती'' ति॥ ●

---

पायगा—यह सम्भव है। अनुलोम क्षान्ति से युक्त साधक सम्यक्त्वनियमों में प्रवेश कर सकेगा—यह सम्भव है। सम्यक्त्वनियमों में प्रवेश करता हुआ साधक स्रोतआपत्तिफल, सकृदागामिफल, अनागामिफल एवं अर्हत्त्वफल का साक्षात्कार कर सकेगा—यह सम्भव है॥'' ●

**४. दुःखसूत्र : : संस्कारों की अनित्यता**

१. ''भिक्षुओ! जो भिक्षु संस्कारों को सुखमय मानता है... पूर्ववत्... यह सम्भव है॥'' *[ऊपर आये अनित्यसूत्र के समान विस्तार कर लें।]* ●

**५. अनात्मसूत्र : : धर्मों की अनात्मता**

१. ''भिक्षुओ! जो भिक्षु धर्मों को अपने से उत्पन्न हुआ मानता है... पूर्ववत्... यह सम्भव है॥'' *[ऊपर वर्णित अनित्यसूत्र के समान विस्तार कर लें।]* ●

**६. निर्वाणसूत्र : : छह धर्मों से युक्त भिक्षु निर्वाणप्राप्ति में समर्थ**

१. ''भिक्षुओ! 'वह भिक्षु जो निर्वाण को दुःख से उत्पन्न समझता है वह आनुलोमिक क्षान्ति से युक्त हो सकेगा'—यह सम्भव नहीं है। 'आनुलोमिक क्षान्ति से रहित साधक भिक्षु सम्यक्त्वनियमों में प्रवेश कर सकेगा'—यह सम्भव नहीं है। 'सम्यक्त्वनियमों में न प्रविष्ट हुआ साधक स्रोतआपत्तिफल, सकृदागामिफल, अनागामिफल एवं अर्हत्त्वफल (निर्वाण) प्राप्त कर सकेगा'—यह सम्भव नहीं है।

२. ''भिक्षुओ! 'वह भिक्षु जो निर्वाण को सुख से उत्पन्न समझता है वह आनुलोमिक क्षान्ति

**७. अनवत्थितसुत्तं** : १. ''छ, भिक्खवे, आनिसंसे सम्पस्समानेन अलमेव भिक्खुना सब्बसङ्खारेसु अनोधिं करित्वा अनिच्चसञ्ञं उपट्ठापेतुं। कतमे छ? 'सब्बसङ्खारा च मे अनवत्थिता खायिस्सन्ति, सब्बलोके च मे मनोनाभिरमिस्सति, सब्बलोका च मे मनो वुट्ठहिस्सति, निब्बानपोणं च मे मानसं भविस्सति, संयोजना च मे पहानं [N.143,B.386] गच्छिस्सन्ति, परमेन च सामञ्ञेन समन्नागतो भविस्सामी' ति। इमे खो, भिक्खवे, छ आनिसंसे सम्पस्समानेन अलमेव भिक्खुना सब्बसङ्खारेसु अनोधिं करित्वा अनिच्चसञ्ञं उपट्ठापेतुं'' ति॥ ●

**८. उक्खित्तासिकसुत्तं** : १. ''छ, भिक्खवे, आनिसंसे सम्पस्समानेन अलमेव भिक्खुना सब्बसङ्खारेसु अनोधिं करित्वा दुक्खसञ्ञं उपट्ठापेतुं। कतमे छ? 'सब्बसङ्खारेसु च मे निब्बिदसञ्ञा पच्चुपट्ठिता भविस्सति, सेय्यथापि उक्खित्तासिके वधके। सब्बलोका च मे मनो वुट्ठहिस्सति, निब्बाने च सन्तदस्सावी भविस्सामि, अनुसया च मे समुग्घातं गच्छिस्सन्ति, किच्चकारी च भविस्सामि, सत्था च मे परिचिण्णो भविस्सति मेत्तावताया' ति। इमे खो, भिक्खवे, छ आनिसंसे सम्पस्समानेन अलमेव भिक्खुना सब्ब- [R.444] सङ्खारेसु अनोधिं करित्वा दुक्खसञ्ञं उपट्ठापेतुं'' ति॥ ●

---

से युक्त हो सकेगा'—यह सम्भव है।'आनुलोमिक क्षान्ति से युक्त साधक सम्यक्त्वनियमों में प्रवेश कर सकेगा'—यह सम्भव है।'सम्यक्त्वनियमों में प्रविष्ट साधक स्रोत आपत्तिफल... अर्हत्त्वफल का साक्षात्कार कर सकेगा'—यह सम्भव है॥'' ●

**७. अनवस्थितसूत्र : : संस्कारों में अनित्यत्वभावना**

''भिक्षुओ! छह शुभ फलों को देखते हुए साधक भिक्षु को सभी संस्कारों में सीमारहित अनित्य संज्ञा की भावना करनी चाहिये। कौन से छह? 'मेरे सभी संस्कार अनवस्थित रहते हुए क्षीण हो जायँगे, तथा समस्त लोक में मेरा मन आसक्त नहीं होगा, अपितु समस्त लोक से मेरा मन उपेक्षाभाव ही रखेगा, तथा मेरा यह मन निर्वाण की ओर झुका रहेगा, मेरे सभी संयोजन प्रहीण ले जायँगे। तथा मैं उत्तम श्रामण्य से युक्त हो जाऊँगा'— भिक्षुओ! इन छह शुभ फल देखते हुए साधक भिक्षु को समस्त संस्कारों में निःसीम अनित्यसंज्ञा की सतत भावना करनी चाहिये॥'' ●

**८. उत्क्षिप्तासिकसूत्र : : संस्कारों के प्रति दुःखभावना**

१. ''भिक्षुओ! (दुःखसंज्ञा के) ये छह शुभ फल देखते हुए साधक भिक्षु को सभी संस्कारों के प्रति असीम दुःखसंज्ञा की भावना करनी चाहिये। कौन से छह शुभ फल? 'सभी संस्कारों के प्रति मेरे मन में निर्विदा (अरुचि=विरक्ति) की भावना रहेगी, जैसे किसी तलवार उठाये हुए वधक के प्रति हुआ करती है, समस्त लोक से भी मेरा मन उचटा हुआ रहेगा, तथा मैं निर्वाण में ही शान्तिदर्शन करूँगा, मेरे सभी अनुशय (चित्तप्रवृत्तियाँ) विनष्ट हो जायँगे, मैं शुभ कृत्यकारी ही रहूँगा, शास्ता का मैं अवश्य मैत्रीभाव से साक्षात्कार कर पाऊँगा।' भिक्षुओ! ये (दुःखसंज्ञा के) छह शुभ फल देखते हुए भिक्षु को सभी संस्कारों में निःसीम दुःखसंज्ञा की सतत भावना करनी चाहिये॥'' ●

**९. अतम्मयसुत्तं** : १. "छ, भिक्खवे, आनिसंसे सम्पस्समानेन अलमेव भिक्खुना सब्बधम्मेसु अनोधिं करित्वा अनत्तसञ्ञं उपट्ठापेतुं। कतमे छ? सब्बलोके च अतम्मयो भविस्सामि, अहङ्कारा च मे उपरुज्झिस्सन्ति, ममङ्कारा च मे उपरुज्झिस्सन्ति, असाधारणेन च ञाणेन समन्नागतो भविस्सामि, हेतु च मे सुदिट्ठो भविस्सति, हेतुसमुप्पन्ना च धम्मा। इमे खो, भिक्खवे, छ आनिसंसे सम्पस्समानेन अलमेव भिक्खुना सब्बधम्मेसु अनोधिं करित्वा अनत्तसञ्ञं उपट्ठापेतुं" ति॥ ●

**१०. भवसुत्तं** : १. "तयोमे, भिक्खवे, भवा पहातब्बा, तीसु सिक्खासु सिक्खितब्बं। कतमे तयो भवा पहातब्बा? कामभवो, रूपभवो, अरूपभवो—इमे तयो भवा पहातब्बा। कतमासु तीसु सिक्खासु सिक्खितब्बं? अधिसीलसिक्खाय, अधि- [B.387]
चित्तसिक्खाय, अधिपञ्ञासिक्खाय—इमासु तीसु सिक्खासु सिक्खितब्बं। यतो [N.144]
खो, भिक्खवे, भिक्खुनो इमे तयो भवा पहीना होन्ति, इमासु च तीसु सिक्खासु सिक्खितसिक्खो होति—अयं वुच्चति, भिक्खवे, भिक्खु अच्छेच्छि तण्हं, विवत्तयि संयोजनं, सम्मा मानाभिसमया अन्तमकासि दुक्खस्सा" ति॥ ●

**११. तण्हासुत्तं** : १. "तिस्सो इमा, भिक्खवे, तण्हा पहातब्बा तयो च [R.445]
माना। कतमा तिस्सो तण्हा पहातब्बा? कामतण्हा, भवतण्हा, विभवतण्हा—इमा तिस्सो

---

**९. अतन्मयसूत्र** : :

१. "भिक्षुओ! (अनात्मसंज्ञा के) ये छह शुभ फल देखते हुए साधक भिक्षु को सभी धर्मों में सीमारहित अनात्मसंज्ञा की भावना करनी चाहिये। कौन से छह शुभफल? 'मैं सर्व लोक में अतन्मय (निरासक्त) रहूँगा, मेरे सभी अहङ्कार तथा ममत्व के भाव निरुद्ध हो जायँगे। मैं शास्ता का मैत्रीभाव से साक्षात्कार कर सकूँगा, असाधारण ज्ञान से सम्पृक्त हो सकूँगा, तथा हेतु एवं हेतुधर्मों की वास्तविकता जान सकूँगा।' भिक्षुओ! ये छह फल देखते हुए साधक को सभी धर्मों में सीमारहित अनात्मसंज्ञा की भावना करनी चाहिये॥" ●

**१०. भवसूत्र** : :

१. "भिक्षुओ! इन तीन भवों का प्रहाण करना चाहिये तथा तीन शिक्षाओं के विषय में सीखना चाहिये। कौन से तीन भव? कामभव, रूपभव एवं अरूपभव। तथा कौन सी तीन शिक्षाओं के विषय में सीखना चाहिये? शील के विषय में, चित्त (-निरोध=समाधि) के विषय में तथा प्रज्ञा के विषय में सीखना चाहिये। भिक्षुओ! जिस भिक्षु के ये तीन भव प्रहीण हुए रहते हैं, या जो भिक्षु इन तीन शिक्षाओं में शिक्षा लिये रहता है, भिक्षुओ! उस भिक्षु के लिये समझ लो कि वह अपनी तृष्णा के बन्धन काट चुका है, अपने संयोजनों को नष्ट कर चुका है, अपने अहन्त्व ममत्व को स्पष्टत: जानकर दु:ख का अन्त कर चुका है॥" ●

**११. तृष्णासूत्र** : :

१. "भिक्षुओ! इन त्रिविध तृष्णाओं का परित्याग करना चाहिये तथा तीन मानों का भी। कौन सी तीन तृष्णाएँ? कामतृष्णा, भवतृष्णा, तथा विभवतृष्णा—भिक्षुओ! इन तीन तृष्णाओं का

तण्हा पहातब्बा। कतमे तयो माना पहातब्बा? मानो, ओमानो, अतिमानो—इमो तयो माना पहातब्बा। यतो खो, भिक्खवे, भिक्खुनो इमा तिस्सो तण्हा पहीना होन्ति, इमे च तयो माना। अयं वुच्चति, भिक्खवे, भिक्खु अच्छेच्छि तण्हं, विवत्तयि संयोजनं, सम्मा मानाभिसमया अन्तमकासि दुक्खस्सा'' ति॥ **आनिसंसवग्गो दसमो॥** ●

**तस्सुद्दानं**

पातुभावो आनिसंसो, अनिच्चदुक्खअनत्ततो।
निब्बानं अनवत्थि, उक्खित्तासि अतम्मयो ति॥
भवा तण्हायेकादसा ति॥

**दुतियो पण्णासको समत्तो॥** ●

## ११. तिकवग्गो

**१. रागसुत्तं :** १. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मा। कतमे तयो? रागो, दोसो, [B.388] मोहो—इमे खो, भिक्खे, तयो धम्मा। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णं धम्मानं पहानाय तयो धम्मा भावेतब्बा। कतमे तयो? रागस्स पहानाय असुभा भावेतब्बा, दोसस्स [R.446] पहानाय मेत्ता भावेतब्बा, मोहस्स पहानाय पञ्ञा भावेतब्बा। इमेसं खो, भिक्खवे, [N.145] तिण्णं धम्मानं पहानाय इमे तयो धम्मा भावेतब्बा'' ति॥ ●

---

परित्याग करना चाहिये। तथा भिक्षुओ! किन तीन मानों का प्रहाण करना चाहिये? मान, अवमान एवं अतिमान। इन तीन मानो का प्रहाण करना चाहिये। भिक्षुओ! जिस भिक्षु की ये तीन तृष्णाएँ तथा ये तीनों मान प्रहीण हुए रहते हैं, उस भिक्षु के लिये समझो कि वह अपनी तृष्णा को समूल नष्ट कर चुका है, संयोजनों को क्षीण कर चुका है, तथा अपने अहन्त्व, ममत्व को स्पष्टत: जानकर दु:खों का अन्त कर चुका है॥'' **आनृशंस्यवर्ग दशम सम्पन्न॥** ●

**इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची**

१. प्रादुर्भावसूत्र, २. आनृशंस्यसूत्र, ३. अनित्यसूत्र, ४. दु:खसूत्र, ५. अनात्मसूत्र, ६. निर्वाणसूत्र, ७. अनवस्थितसूत्र, ८. उत्क्षिप्तासिकसूत्र, ९. अतन्मयसूत्र, १०. भवसूत्र, एवं ११. तृष्णासूत्र॥ **द्वितीय पञ्चाशत्क सम्पन्न॥**

## ११. त्रिकवर्ग

**१. रागसूत्र : : छह धर्म**

१. ''भिक्षुओ! ये तीन धर्म होते हैं। कौन से तीन? राग, द्वेष एवं मोह—भिक्षुओ! ये तीन धर्म हैं। भिक्षुओ! इन तीन धर्मों के प्रहाण के लिये इन तीन धर्मों की भावना करनी चाहिये। कौन से तीन? राग के प्रहाण के लिये अशुभ की भावना करनी चाहिये, द्वेष के प्रहाण के लिये मैत्री की भावना करनी चाहिये, तथा मोह के प्रहाण के लिये प्रज्ञा की भावना करनी चाहिये। इस प्रकार, भिक्षुओ! उक्त तीन धर्मों के प्रहाण के लिये इन तीन धर्मों की भावना करनी चाहिये॥'' ●

**२. दुच्चरितसुत्तं** : १. "तयोमे, भिक्खवे, धम्मा। कतमे तयो? कायदुच्चरितं, वचीदुच्चरितं, मनोदुच्चरितं—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मा। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णं धम्मानं पहानाय तयो धम्मा भावेतब्बा। कतमे तयो? कायदुच्चरितस्स पहानाय कायसुचरितं भावेतब्बं, वचीदुच्चरितस्स पहानाय वचीसुचरितं भावेतब्बं, मनोदुच्चरितस्स पहानाय मनोसुचरितं भावेतब्बं। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णं धम्मानं पहानाय इमे तयो धम्मा भावेतब्बा" ति॥ ●

**३. वितक्कसुत्तं** : १. "तयोमे, भिक्खवे, धम्मा। कतमे तयो? कामवितक्को, ब्यापादवितक्को, विहिंसावितक्को—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मा। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णं धम्मानं पहानाय तयो धम्मा भावेतब्बा। कतमे तयो? कामवितक्कस्स पहानाय नेक्खम्मवितक्को भावेतब्बो, ब्यापादवितक्कस्स पहानाय अब्यापादवितक्को भावेतब्बो, विहिंसावितक्कस्स पहानाय अविहिंसावितक्को भावेतब्बो। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णं धम्मानं पहानाय इमे तयो धम्मा भावेतब्बा" ति॥ ●

[B.389] **४. सञ्ञासुत्तं** : १. "तयोमे, भिक्खवे, धम्मा। कतमे तयो? कामसञ्ञा,
[R.447] ब्यापादसञ्ञा, विहिंसासञ्ञा—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मा। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णं धम्मानं पहानाय तयो धम्मा भावेतब्बा। कतमे तयो? कामसञ्ञाय पहानाय नेक्खम्मसञ्ञा भावेतब्बा, ब्यापादसञ्ञाय पहानाय अब्यापादसञ्ञा भावेतब्बा, विहिंसासञ्ञाय पहानाय अविहिंसासञ्ञा भावेतब्बा। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णं धम्मानं पहानाय इमे तयो धम्मा भावेतब्बा" ति॥ ●

[N.146] **५. धातुसुत्तं** : १. "तयोमे, भिक्खवे, धम्मा। कतमे तयो? कामधातु,

---

**२. दुश्चरितसूत्र** : : **छह धर्म**

१. "भिक्षुओ! ये तीन धर्म होते हैं। कौन से तीन? कायदुश्चरित, वाग्दुश्चरित, एवं मनोदुश्चरित।... भिक्षुओ! इन तीन धर्मों के प्रहाण के लिये इन तीन धर्मों की भावना करनी चाहिये।... कायदुश्चरित के प्रहाण के लिये कायसुचरित की, वाग्दुश्चरित के प्रहाण के लिये वाक्सुचरित की एवं मनोदुश्चरित के प्रहाण के लिये मनःसुचरित की भावना करनी चाहिये। ...पूर्ववत्... ॥" ●

**३. वितर्कसूत्र** : : **छह धर्म**

"भिक्षुओ! ये तीन धर्म होते हैं।... कामवितर्क, व्यापादवितर्क एवं विहिंसावितर्क।... तीन धर्मों की भावना करनी चाहिये।... कामवितर्क के प्रहाणहेतु निष्कामवितर्क..., व्यापादवितर्क के प्रहाणहेतु अव्यापादवितर्क..., विहिंसावितर्क के प्रहाणहेतु अविहिंसावितर्क की भावना करनी चाहिये।... पूर्ववत्... ॥" ●

**४. संज्ञासूत्र** : : **छह धर्म**

...कामसंज्ञा, व्यापादसंज्ञा, विहिंसासंज्ञा ...पूर्ववत्... निष्कामसंज्ञा, अव्यापादसंज्ञा, अविहिंसासंज्ञा ...पूर्ववत्... इन तीन धर्मों की भावना करनी चाहिये॥" ●

ब्यापादधातु, विहिंसाधातु—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मा। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णं धम्मानं पहानाय तयो धम्मा भावेतब्बा। कतमे तयो? कामधातुया पहानाय नेक्खम्मधातु भावेतब्बा, ब्यापादधातुया पहानाय अब्यापादधातु भावेतब्बा, विहिंसाधातुया पहानाय अविहिंसाधातु भावेतब्बा। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णं धम्मानं पहानाय इमे तयो धम्मा भावेतब्बा'' ति॥ ●

६. **अस्सादसुत्तं** : १. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मा। कतमे तयो? अस्साददिट्ठि, अत्तानुदिट्ठि, मिच्छादिट्ठि—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मा। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णं धम्मानं पहानाय तयो धम्मा भावेतब्बा। कतमे तयो? अस्साददिट्ठिया पहानाय अनिच्च-सञ्ञा भावेतब्बा, अत्तानुदिट्ठिया पहानाय अनत्तसञ्ञा भावेतब्बा, मिच्छादिट्ठिया पहानाय सम्मादिट्ठि भावेतब्बा। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णं धम्मानं पहानाय इमे तयो धम्मा भावेतब्बा'' ति॥ ●

७. **अरतिसुत्तं** : १. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मा। कतमे तयो? अरति, [R.448] विहिंसा, अधम्मचरिया—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मा। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णं धम्मानं पहानाय तयो धम्मा भावेतब्बा। कतमे तयो? अरतिया पहानाय मुदिता [B.390] भावेतब्बा, विहेसाय पहानाय अविहिंसा भावेतब्बा, अधम्मचरियाय पहानाय धम्मचरिया भावेतब्बा। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णं धम्मानं पहानाय इमे तयो धम्मा भावेतब्बा'' ति॥ ●

८. **सन्तुट्ठितासुत्तं** : १. ''तयोमे, भिक्खवे, धम्मा। कतमे तयो? असन्तुट्ठिता, असम्पजञ्ञं, महिच्छता—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मा। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णं धम्मानं पहानाय तयो धम्मा भावेतब्बा। कतमे तयो? असन्तुट्ठिताय पहानाय [N.147] सन्तुट्ठिता भावेतब्बा, असम्पजञ्ञस्स पहानाय सम्पजञ्ञं भावेतब्बं, महिच्छताय पहानाय अप्पिच्छता भावेतब्बा। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णं धम्मानं पहानाय इमे तयो धम्मा भावेतब्बा'' ति॥ ●

---

५. **धातुसूत्र** : : **छह धर्म**

''...कामधातु, व्यापादधातु, विहिंसाधातु ...पूर्ववत्... निष्कामधातु, अव्यापादधातु, अविहिंसाधातु ...पूर्ववत्।'' ●

६. **आस्वादसूत्र** : : **छह धर्म**

१. ...आस्वाददृष्टि, आत्मानुदृष्टि, मिथ्यादृष्टि... अनित्यसंज्ञा, अनात्मसंज्ञा, सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... ॥'' ●

७. **अरतिसूत्र** : : **छह धर्म**

''...अरति, विहिंसा, अधर्मचर्या ...पूर्ववत्... मुदिता, अविहिंसा, धर्मचर्या ...पूर्ववत्... ॥'' ●

८. **सन्तुष्टितासूत्र** : : **छह धर्म**

''...असन्तुष्टि, असम्प्रजन्य, महेच्छता ...पूर्ववत्... सन्तुष्टि, सम्प्रजन्य, अल्पेच्छता ...पूर्ववत्... ॥'' ●

**९. दोवचस्सतासुत्तं :** १. "तयोमे, भिक्खवे, धम्मा। कतमे तयो? दोवचस्सता, पापमित्तता, चेतसो विक्खेपो—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मा। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णं धम्मानं पहानाय तयो धम्मा भावेतब्बा। कतमे तयो? दोवचस्सताय पहानाय सोवचस्सता [R.449] भावेतब्बा, पापमित्तताय पहानाय कल्याणमित्तता भावेतब्बा, चेतसो विक्खेपस्स पहानाय आनापानस्सति भावेतब्बा। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णं धम्मानं पहानाय इमे तयो धम्मा भावेतब्बा" ति॥ ●

**१०. उद्धच्चसुत्तं :** १. "तयोमे, भिक्खवे, धम्मा। कतमे तयो? उद्धच्चं, असंवरो, पमादो—इमे खो, भिक्खवे, तयो धम्मा। इमेसं खो, भिक्खवे, तिण्णं धम्मानं पहानाय तयो धम्मा भावेतब्बा। कतमे तयो? उद्धच्चस्स पहानाय समथो भावेतब्बो, असंवरस्स पहानाय संवरो भावेतब्बो, पमादस्स पहानाय अप्पमादो भावेतब्बो। इमेसं खो, [B.391] भिक्खवे, तिण्णं धम्मानं पहानाय इमे तयो धम्मा भावेतब्बा" ति॥ ●

**तिकवग्गो एकादसमो॥**

**तस्सुद्दानं**

रागदुच्चरितवितक्क, सञ्ञा धातू ति वुच्चति।
अस्सादअरतितुट्ठि, दुवे च उद्धच्चेन वग्गो ति॥ ●

## १२. सामञ्ञवग्गो

[N.148] **१. कायानुपस्सीसुत्तं :** १. "छ, भिक्खवे, धम्मे अप्पहाय अभब्बो काये कायानुपस्सी विहरितुं। कतमे छ? कम्मारामतं, भस्सारामतं, निद्दारामतं, सङ्गणिकारामतं,

---

**९. दौर्वचस्यसूत्र : : छह धर्म**

"...दौर्वचस्य, पापमित्रता, चित्त का विक्षेप ...पूर्ववत्... सौवचस्य, कल्याणमित्रता, आनापानस्मृति ...पूर्ववत्... ॥" ●

**१०. औद्धत्यसूत्र : :**

"...औद्धत्य, असंवर, प्रमाद ...पूर्ववत्... शमथ, संवर, अप्रमाद ...पूर्ववत्.. ॥" ●

**त्रिकवर्ग एकादश सम्पन्न॥**

**इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची**

१. रागसूत्र, २. दुश्चरितसूत्र, ३. वितर्कसूत्र, ४. संज्ञासूत्र, ५. धातुसूत्र, ६. आस्वादसूत्र, ७. अरतिसूत्र,, ८. सन्तुष्टिसूत्र, ९. दौर्वचस्यसूत्र, १०. औद्धत्यसूत्र॥

## १२. श्रामण्यवर्ग

**१. कायानुपश्यिसूत्र : : छह धर्मों के त्याग से कायानुपश्यना**

१. "भिक्षुओ! इन छह धर्मों को छोड़े विना कोई साधक काय में कायानुपश्यना की साधना

इन्द्रियेसु अगुत्तद्वारातं, भोजने अमत्तञ्ञुतं—इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मे अप्पहाय अभब्बो काये कायानुपस्सी विहरितु।

२. "छ, भिक्खवे, धम्मे पहाय भब्बो काये कायानुपस्सी विहरितुं। कतमे [R.450] छ? कम्मारामतं, भस्सारामतं, निद्दारामतं, सङ्गणिकारामतं, इन्द्रियेसु अगुत्तद्वारातं, भोजने अमत्तञ्ञुतं—इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मे पहाय भब्बो काये कायानुपस्सी विहरितु" ति॥ ●

**२. धम्मानुपस्सीसुत्तं :** १. "छ, भिक्खवे, धम्मे अप्पहाय अभब्बो अज्झत्तं काये ...पे०... बहिद्धा काये ...पे०... अज्झत्तबहिद्धा काये ...पे०... अज्झत्तं वेदनासु ...पे०... बहिद्धा वेदनासु ...पे०... अज्झत्तं चित्ते ...पे०... बहिद्धा चित्ते ...पे०... अज्झत्तबहिद्धा चित्ते ...पे०... अज्झत्तं धम्मेसु ...पे०... बहिद्धा धम्मेसु ...पे०... अज्झत्तबहिद्धा धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरितुं। कतमे छ? कम्मारामतं, भस्सारामतं, निद्दारामतं, सङ्गणिकारामतं, इन्द्रियेसु अगुत्तद्वारतं, भोजने अमत्तञ्ञुतं—इमे खो, भिक्खवे, छ धम्मे पहाय [B.392] भब्बो अज्झत्तबहिद्धा धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरितुं" ति॥ ●

**३. तपुस्ससुत्तं :** १. "छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो तपुस्सो गहपति तथागते निट्ठङ्गतो अमतद्दसो अमतं सच्छिकत्वा इरियति। कतमेहि छहि? बुद्धे अवेच्चप्पसादेन, धम्मे अवेच्चप्पसादेन, सङ्घे अवेच्चप्पसादेन, अरियेन सीलेन, अरियेन ञाणेन, [R.451] अरियाय विमुत्तिया—इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो तपुस्सो गहपति तथागते निट्ठङ्गतो अमतद्दसो अमतं सच्छिकत्वा इरियती" ति॥ ●

---

नहीं कर सकता। कौन से छह धर्म? कर्मारामता, भस्सारामता, निद्रारामता, सङ्गणिकारामता, इन्द्रियों में असंयम, तथा भोजन की मात्रा का न जानना। भिक्षुओ! इन छह धर्मों को छोड़े विना काया में कायानुपश्यना की साधना नहीं हो पाती।

२. "हाँ, भिक्षुओ! इन छह धर्मों की छोड़ने से काया में कायानुपश्यना साधना सुकर हो जाती है। कौन से छह धर्म? कर्मारामता... पूर्ववत्... भोजन की मात्रा का जानना। भिक्षुओ! इन छह धर्मों के छोड़ देने से काया में कायानुपश्यना साधना सुकर हो जाती है॥" ●

**२. धर्मानुपश्यिसूत्र : : छह धर्मों के त्याग से धर्मानुपश्यना**

१. भिक्षुओ! इन छह धर्मों को छोड़े विना कोई साधक आध्यात्मिक काय में... बाह्य काय में... आध्यात्मिक बाह्य काय में... आध्यात्मिक वेदनाओं में... बाह्य वेदनाओं में... आध्यात्मिक बाह्य वेदनाओं में... आध्यात्मिक चित्त में... बाह्य धर्मों में... आध्यात्मिक बाह्य धर्मों में... धर्मानुपश्यना की साधना कर सकता है। कौन से छह? कर्मारामता, भस्सारामता, निद्रारामता, सङ्गणिकारामता, इन्द्रियों में संयम तथा भोजन में मात्रा का जानना—भिक्षुओ! इन छह धर्मों को त्यागने पर ही साधक आध्यात्मिक एवं बाह्य धर्मों में धर्मानुपश्यना की साधना करने में समर्थ होता है॥" ●

**३. तपुस्ससूत्र : : छह धर्मों से तथागत में श्रद्धा**

१. "भिक्षुओ! छह धर्मों से युक्त **तपुस्स** गृहपति तथागत में निष्ठा प्राप्त, अमृत (निर्वाण) मार्गारूढ होकर अपनी शारीरिक वाचसिक एवं मानसिक चेष्टाएँ करता है। किन छह धर्मों से? बुद्ध

[N.149] **४-२३. भल्लिकादिसुत्तानि :** १-२०. "छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भल्लिको गहपति ...पे०... सुदत्तो गहपति अनाथपिण्डिको... चित्तो गहपति मच्छिकासण्डिको... हत्थको आळवको... महानामो सक्को... उग्गो गहपति वेसालिको... उग्गतो गहपति... सूरो अम्बट्ठो... जीवको कोमारभच्चो... नकुलपिता गहपति... तवकण्णिको गहपति...पूरणो गहपति...इसिदत्तो गहपति...सन्धानो गहपति...विचयो गहपति ...विजयमाहिको गहपति... मेण्डको गहपति... वासेट्ठो उपासको... अरिट्ठो उपासको... सारग्गो उपासको तथागते निट्ठङ्गतो अमतद्दसो अमतं सच्छिकत्वा इरियति। कतमेहि छहि? बुद्धे अवेच्चप्पसादेन, धम्मे अवेच्चप्पसादेन, सङ्घे अवेच्चप्पसादेन, अरियेन सीलेन, अरियेन ञाणेन, अरियाय विमुत्तिया—इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो सारग्गो उपासको तथागते निट्ठङ्गतो अमतद्दसो अमतं सच्छिकत्वा इरियती" ति॥ ●

**सामञ्ञवग्गो द्वादसमो॥**

## १३. रागपेय्यालं

[B.393] **१.** "रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय छ धम्मा भावेतब्बा। कतमे छ? दस्सनानु-
[R.452] त्तरियं, सवनानुत्तरियं, लाभानुत्तरियं, सिक्खानुत्तरियं, पारिचरियानुत्तरियं, अनुस्सतानुत्तरियं—रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय इमे छ धम्मा भावेतब्बा" ति॥ ●

---

में अत्यधिक श्रद्धा से, धर्म में... सङ्घ में अत्यधिक श्रद्धा से, आर्य शील से, आर्य ज्ञान से एवं आर्य विमुक्ति से—भिक्षुओ! इन छह धर्मों से युक्त तपुस्स गृहपति तथागत में निष्ठा रखता हुआ अमृत मार्गारूढ हो कर अपनी त्रिविध चेष्टाएँ (लौकिक जीवन) करता है॥" ●

**४-२३. भल्लिकसूत्र** : :

१-२०. "भिक्षुओ! छह धर्मों से युक्त **भल्लिक** गृहपति ...पूर्ववत्... **सुदत्त** अनाथपिण्डिक गृहपति... मत्स्यिकाषण्डवासी **चित्त** गृहपति, आळवक **हस्तक... महानाम शाक्य**... वैशाली का **उग्र** गृहपति... **उद्गत** गृहपति... **शूर** अम्बष्ठ... **जीवक** कौमारभृत्य... **नकुलपिता** गृहपति... **तवकर्णिक** गृहपति... **पूरण** गृहपति... **ऋषिदत्त** गृहपति... **सन्धान** गृहपति... **वासिष्ठ** गृहपति... **विजयमाहिक** (वज्जियमाहित) गृहपति... **मेण्डक** गृहपति... **वासिष्ठ** उपासक... **अरिष्ट** उपासक... **साराग्र** उपासक तथागत में... धर्म में... सङ्घ में अत्यन्त निष्ठा रखते हुए अमृत (निर्वाण) का साक्षात्कार करने वाला होकर ही अपना लौकिक जीवनयापन करता है। किन छह धर्मों से? बुद्ध में... धर्म में... सङ्घ में अतिशय श्रद्धा से, आर्य शील से, आर्य ज्ञान से, आर्य विमुक्ति से—इन छह धर्मों से युक्त साराग्र उपासक तथागत में निष्ठा रखता हुआ अमृत का मार्गारूढ हो कर अपना ऐहिक जीवनयापन करता है॥"

**श्रामण्यवर्ग द्वादश सम्पन्न॥** ●

## १३. रागपेय्याल

१. "भिक्षुओ! राग की अभिज्ञा (विशिष्ट ज्ञान) के माध्यम से इन छह धर्मों की साधना

२. "रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय छ धम्मा भावेतब्बा। कतमे छ? बुद्धानुस्सति, धम्मानुस्सति, सङ्घानुस्सति, सीलानुस्सति, चागानुस्सति, देवतानुस्सति—रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय इमे छ धम्मा भावेतब्बा" ति॥ ●

३. "रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय छ धम्मा भावेतब्बा। कतमे छ? अनिच्च-सञ्ञा, अनिच्चे दुक्खसञ्ञा, दुक्खे अनत्तसञ्ञा, पहानसञ्ञा, विरागसञ्ञा, निरोध-सञ्ञा—रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय इमे छ धम्मा भावेतब्बा" ति॥ ●

[N.150] ४-३०. "रागस्स, भिक्खवे, परिञ्ञाय ...पे०... परिक्खयाय...पहानाय... खयाय...वयाय...विरागाय...निरोधाय...चागाय...पटिनिस्सग्गाय छ धम्मा भावेतब्बा"॥ ●

३१-५१०. "दोसस्स ...पे०... मोहस्स... कोधस्स... उपनाहस्स... मक्खस्स... पळासस्स... इस्साय... मच्छरियस्स... मायाय... साठेय्यस्स... थम्भस्स... सारम्भस्स... मानस्स अतिमानस्स... मदस्स... पमादस्स अभिञ्ञाय ...पे०... परिञ्ञाय... परिक्खयाय ... पहनाय... खयाय वयाय... विरागाय... निरोधाय... चागाय पटिनिस्सग्गाय ...पे०... इमे छ धम्मा भावेतब्बा" ति॥ ●

इदमवोच भगवा। अत्तमना ते भिक्खू भगवतो भासितं अभिनन्दुं ति॥ ●

**रागपेय्यालं निट्ठितं॥**

● **छक्कनिपातो निट्ठितो॥**

---

करनी चाहिये। कौन से छह धर्म? दर्शनानुत्तर्य, श्रवणानुत्तर्य, लाभानुत्तर्य, शिक्षानुत्तर्य, परिचर्या-नुत्तर्य, अनुस्मृतानुत्तर्य—भिक्षुओ! राग की अभिज्ञा से इन छह धर्मों की भावना करनी चाहिये॥"

२. "भिक्षुओ! राग की अभिज्ञा से इन छह धर्मों की साधना करनी चाहिये। कौन से छह धर्म? बुद्धानुस्मृति, धर्मानुस्मृति, सङ्घानुस्मृति, शीलानुस्मृति, त्यागानुस्मृति, एवं देवतानुस्मृति—भिक्षुओ! राग की अभिज्ञा द्वारा इन छह धर्मों की साधना करनी चाहिये॥"

३. भिक्षुओ! राग की अभिज्ञा से छह धर्मों की साधना करनी चाहिये। कौन से छह धर्म? अनित्यसंज्ञा, अनित्य में दुःखसंज्ञा, दुःख में अनात्मसंज्ञा, प्रहाणसंज्ञा, विरागसंज्ञा एवं निरोधसंज्ञा—भिक्षुओ! राग के प्रति अभिज्ञा से इन छह धर्मों की भावना करनी चाहिये॥"

४-३०. "भिक्षुओ! राग की परिज्ञा... पूर्ववत्... परिक्षय... प्रहाण... क्षय... व्यय... विराग... निरोध... त्याग... प्रतिनिसर्ग से इन छह धर्मों की भावना करनी चाहिये।"

३१-५१०. "द्वेष के ...पूर्ववत्... मोह के... क्रोध के... उपनाह के... म्रक्ष के... प्रदास के... ईर्ष्या के... मात्सर्य के... माया के... शाठ्य के... स्तम्भ के... सारम्भ के... मान के... अतिमान के... मद के... प्रमाद के अभिज्ञान से... पूर्ववत्... परिज्ञा से... परिक्षय से... प्रहाण से... क्षय से... व्यय से..., विराग से... निरोध से... त्याग से... प्रतिनिसर्ग से ...पूर्ववत्... इन छह धर्मों की भावना करनी चाहिये॥" भगवान् ने यह उपदेश किया। सन्तुष्ट भिक्षुओं ने भगवान् के भाषण का अभिनन्दन किया॥

**रागपेय्याल सम्पन्न॥** ●

● **षट्क निपात सम्पन्न॥**

# ७. सत्तकनिपातो

## १. धनवग्गो

### पठमो पण्णासको

[N. 151, B. 395, R. Vol. IV; 1] **१. पठमपियसुत्तं :** १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि— "भिक्खवो" ति। "भदन्ते" ति ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

२. "सत्तहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु सब्रह्मचारीनं अप्पियो च होति अमनापो च अगरु च अभावनीयो च। कतमेहि सत्तहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु लाभकामो च होति, सक्कारकामो च होति, अनवञ्ञत्तिकामो च होति, अहिरिको च होति, अनोत्तप्पी च, पापिच्छो च, मिच्छादिट्ठि च। इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु सब्रह्मचारीनं अप्पियो च होति अमनापो च अगरु च अभावनीयो च।

३. "सत्तहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु सब्रह्मचारीनं पियो च होति [R.2] मनापो च गरु च भावनीयो च। कतमेहि सत्तहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु न लाभकामो च होति, न सक्कारकामो च होति, न अनवञ्ञत्तिकामो च होति, हिरीमा च होति, ओत्तप्पी

---

# सप्तक निपात

## १. धनवर्ग

### प्रथम पञ्चाशत्क

**१. प्रथम प्रियसूत्र : : सात धर्मों से ही साथियों का अप्रिय, प्रिय**

१. ऐसा मैंने सुना है। एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक गृहपति द्वारा निर्मापित जेतवन में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को (देशनाहेतु) अपने सम्मुख बुलाया। 'भन्ते' कहते हुए भिक्षुओं ने भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य की। भगवान् ने यह देशना की—

२. "भिक्षुओ! सात धर्मों से युक्त भिक्षु अपने साथियों का प्रिय, मनोनुकूल, सम्मानास्पद एवं श्रद्धेय नहीं हो पाता। कौन से सात धर्म? भिक्षुओ! जो भिक्षु केवल अपने लिये लाभ कमाना चाहता है, सत्कार पाना चाहता है, अपनी अवज्ञा नहीं देखना चाहता, निर्लज्ज होता है, पापभीरु नहीं होता, पापेच्छु होता है, तथा मिथ्यादृष्टि होता है। इन सात धर्मों से युक्त भिक्षु अपने साथियों का ...पूर्ववत्... श्रद्धेय नहीं हो पाता।

३. (परन्तु) "भिक्षुओ! इन सात धर्मों से युक्त भिक्षु अपने साथियों का प्रिय, मनोनुकूल सम्मानास्पद एवं श्रद्धेय हो जाता है। कौन से सात धर्म? भिक्षुओ! जो केवल अपना ही सम्मान,

च, अप्पिच्छो च, सम्मादिट्ठि च। इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि धम्मेहि समन्नागतो [B.396] भिक्खु सब्रह्मचारीनं पियो च होति मनापो च गरु च भावनीयो चा'' ति॥ ●

**२. दुतियपियसुत्तं** : १. ''सत्तहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु सब्रह्मचारीनं अप्पियो च होति अमनापो च अगरु च अभावनीयो च। कतमेहि सत्तहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु लाभकामो च होति, सक्कारकामो च होति, अनवञ्ञत्तिकामो च होति, अहिरिको च होति, अनोत्तप्पी च, इस्सुकी च, मच्छरी च। इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु सब्रह्मचारीनं अप्पियो च होति अमनापो च [N.152] अगरु च अभावनीयो च।

२. ''सत्तहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु सब्रह्मचारीनं पियो च होति मनापो च गरु च भावनीयो च। कतमेहि सत्तहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु न लाभकामो च होति, न सक्कारकामो च होति, न अनवञ्ञत्तिकामो च होति, हिरीमा च होति, ओत्तप्पी च, अनिस्सुकी च, अमच्छरी च। इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु सब्रह्मचारीनं पियो च होति मनापो च गरु च भावनीयो चा'' ति॥ ●

**३. सङ्खित्तबलसुत्तं** : १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे ...पे०... सत्तिमानि, भिक्खवे, बलानि। कतमानि सत्त? [R.3] सद्धाबलं, विरियबलं, हिरीबलं, ओत्तप्पबलं, सतिबलं, समाधिबलं, पञ्ञाबलं—इमानि खो, भिक्खवे, सत्त बलानी ति।

''सद्धाबलं वीरियं च, हिरी ओत्तप्पियं बलं।

---

लाभ नहीं चाहता, किसी की भी अवज्ञा नहीं चाहता, लज्जालु तथा पापभीरु होता है, अल्पेच्छु सम्यग्दृष्टि भी होता है। इन सात धर्मों से युक्त भिक्षु अपने साथियों का श्रद्धेय हो जाता है॥'' ●

**२. द्वितीय प्रियसूत्र : : सात धर्मों से युक्त ही साथियों का अप्रिय, प्रिय**

१. ''भिक्षुओ! सात धर्मों से युक्त भिक्षु अपने साथियों का प्रिय, मनोनुकूल, गौरवास्पद, एवं पूजनीय नहीं हो पाता। कौन से सात धर्मों से? जो स्वयं के लिये लाभकामी, सत्कारेच्छु, अवज्ञा न चाहनेवाला, निर्लज्ज, पापों से न डरनेवाला, ईर्ष्यालु एवं मात्सर्य सम्पन्न होता है। इन सात धर्मों से ...पूर्ववत्... पूजनीय नहीं होता।

२. ''भिक्षुओ! सात धर्मों से युक्त भिक्षु... पूजनीय हो जाता है। किन सात धर्मों से? यहाँ, भिक्षुओ! जो भिक्षु अपने लिये लाभ या सत्कार का इच्छुक नहीं होता, न अवज्ञा ही चाहता है, लज्जालु एवं पापभीरु है, ईर्ष्यारहित एवं मात्सर्यरहित है—भिक्षुओ! इन सात धर्मों से युक्त... पूजनीय हो जाता है॥'' ●

**३. संक्षिप्त बलसूत्र : : सात बल**

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! ये सात बल होते हैं। कौन से सात? श्रद्धाबल, वीर्यबल, ह्रीबल, अवत्राप्यबल, स्मृतिबल, समाधिबल एवं प्रज्ञाबल— भिक्षुओ! ये सात बल होते हैं।

सतिबलं समाधि च, पञ्ञा वे सत्तमं बलं॥
"एतेहि बलवा भिक्खु, सुखं जीवति पण्डितो।
[B.397] योनिसो विचिने धम्मं, पञ्ञायत्थं विपस्सति।
पज्जोतस्सेव निब्बानं, विमोक्खो होति चेतसो" ति॥

**४. वित्थतबलसुत्तं** : १. "सत्तिमानि, भिक्खवे, बलानि। कतमानि सत्त? सद्धाबलं, विरियबलं, हिरीबलं, ओत्तप्पबलं, सतिबलं, समाधिबलं, पञ्ञाबलं।

२. "कतमं च, भिक्खवे, सद्धाबलं? इध, भिक्खवे, अरियसावको सद्धो होति, सद्दहति तथागतस्स बोधिं—'इति पि सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो ...पे०... सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। इदं वुच्चति, भिक्खवे, सद्धाबलं।

३. "कतमं च, भिक्खवे, विरियबलं? इध, भिक्खवे, अरियसावको आरद्ध-
[N.153] विरियो विहरति अकुसलानं धम्मानं पहानाय कुसलानं धम्मानं उपसम्पदाय, थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु। इदं वुच्चति, भिक्खवे, विरियबलं।

४. "कतमं च, भिक्खवे, हिरीबलं? इध, भिक्खवे, अरियसावको हिरीमा होति,
[R.4] हिरीयति कायदुच्चरितेन वचीदुच्चरितेन मनोदुच्चरितेन, हिरीयति पापकानं अकुसलानं धम्मानं समापत्तिया। इदं वुच्चति, भिक्खवे, हिरीबलं।

५. "कतमं च, भिक्खवे, ओत्तप्पबलं? इध, भिक्खवे, अरियसावको ओत्तप्पी होति, ओत्तप्पति कायदुच्चरितेन वचीदुच्चरितेन मनोदुच्चरितेन, ओत्तप्पति पापकानं अकुसलानं धम्मानं समापत्तिया। इदं वुच्चति, भिक्खवे, ओत्तप्पबलं।

---

"श्रद्धाबल, वीर्यबल, ह्री, अवत्राप्य, स्मृतिबल, समाधि एवं सप्तम प्रज्ञाबल॥

"इन बलों से सम्पन्न बुद्धिमान् भिक्षु अपनी जीवनयात्रा सुखपूर्वक चलाता है। वह धर्म का सूक्ष्म विवेचन करता हुआ प्रज्ञा से उसकी अर्थसमीक्षा करता है। तब उसके चित्त की विमुक्ति उसी प्रकार हो जाती है जैसे बाती और तैल के विना दीपक बुझ जाया करता है॥"

**४. विस्तृत बलसूत्र : : सात बलों का विस्तृत विवरण**

१. "भिक्षुओ! ये सात बल होते हैं। कौन से सात? श्रद्धाबल ...पूर्ववत्... प्रज्ञाबल।

२. "भिक्षुओ! **श्रद्धाबल** कौन सा होता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु तथागत के प्रति श्रद्धालु होता है, तथागतज्ञान के प्रति इस प्रकार श्रद्धालु होता है—'वे भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध ...पूर्ववत्... देव मनुष्यों के शास्ता बुद्ध भगवान्'। भिक्षुओ! यह कहलाता है—श्रद्धाबल। (१)

३. "भिक्षुओ! **वीर्यबल** किसे कहते हैं? भिक्षुओ! यहाँ कोई आर्यश्रावक अकुशल धर्मों के प्रहाण के लिये तथा कुशल धर्मों के उत्पाद के लिये उद्योग करता है, पराक्रम करता है, उनकी प्राप्तिहेतु आशा नहीं छोड़ता—यह कहलाता है—वीर्यबल। (२)

४. "भिक्षुओ! **ह्रीबल** क्या होता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक लज्जालु होता है, काय, वाक् एवं मन सम्बन्धी दुश्चरितों के आचरण में लज्जा करता है, पापमय अकुशल धर्मों के करने में भी लज्जा करता है—यह कहलाता है—लज्जाबल। (३)

५. "और, भिक्षुओ! **अवत्राप्य** (पापभीरुता) **बल** कौन कहलाता है? जो आर्यश्रावक

६. "कतमं च, भिक्खवे, सतिबलं? इध, भिक्खवे, अरियसावको सतिमा होति परमेन सतिनेपक्केन समन्नागतो चिरकतं पि चिरभासितं पि सरिता अनुस्सरिता। इदं, वुच्चति, भिक्खवे, सतिबलं।

७. "कतमं च, भिक्खवे, समाधिबलं? इध, भिक्खवे, अरियसावको विविच्चेव कामेहि ...पे०... चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति। इदं वुच्चति, भिक्खवे, समाधिबलं।

८. "कतमं च, भिक्खवे, पञ्ञाबलं? इध, भिक्खवे, अरियसावको [B.398] पञ्ञवा होति उदयत्थगामिनिया पञ्ञाय समन्नागतो अरियाय निब्बेधिकाय सम्मा दुक्ख-क्खयगामिनिया। इदं वुच्चति, भिक्खवे, पञ्ञाबलं। इमानि खो, भिक्खवे, सत्त बलानी ति।

"सद्धाबलं वीरियं च, हिरी ओत्तप्पियं बलं।
सतिबलं समाधि च, पञ्ञा वे सत्तमं बलं॥
"एतेहि बलवा भिक्खु, सुखं जीवति पण्डितो।
योनिसो विचिने धम्मं, पञ्ञायत्थं विपस्सति।
पज्जोतस्सेव निब्बानं, विमोक्खो होति चेतसो" ति॥

**५. सङ्खित्तधनसुत्तं :** १. "सत्तिमानि, भिक्खवे, धनानि। कतमानि सत्त? सद्धाधनं,

---

काय, वाक् एवं मनसम्बन्धी दुश्चरितों के करने में पाप एवं भय मानता है, इसी प्रकार अकुशल धर्मों के निष्पादन में पाप एवं भय मानता है—यह कहलाता है—अवत्राप्यबल। (४)

६. "और, भिक्षुओ! **स्मृतिबल** कौन कहलाता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक स्मृतिमान् होता है तथा उत्तम स्मृतिचातुर्य से इतना सम्पन्न होता है कि वह बहुत समय पहले हुई घटना को भी पूर्णत: स्मरण कर लेता है, अनुस्मरण कर लेता है—इसे कहते हैं, भिक्षुओ! स्मृतिबल। (५)

७. "और, भिक्षुओ! **सगाधिबल** क्या कहलाता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक कामभोगों से दूर रहकर ...पूर्ववत्... चतुर्थ ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है—इसे कहते हैं, भिक्षुओ! समाधिबल। (६)

८. और, भिक्षुओ! **प्रज्ञाबल** किसे कहते हैं? यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक प्रज्ञावान् होता है, तथा धर्मों की उत्पत्ति एवं विनाश को जानने वाली ऐसी प्रज्ञा से युक्त रहता है जो उत्तम, निर्वेधिक एवं दु:खक्षय तक ले जानी वाली होती है। भिक्षुओ! यह कहलाता है—प्रज्ञाबल। (७)

"इस प्रकार भिक्षुओ! ये सात बल होते हैं॥

"श्रद्धाबल, वीर्यबल, ह्रीबल, अवत्राप्य बल, स्मृतिबल, समाधिबल, एवं सप्तम प्रज्ञाबल॥

"इन सात बलों से सम्पन्न बुद्धिमान् भिक्षु अपनी जीवनयात्रा सुखपूर्वक बिताता है। वह धर्म का सूक्ष्म विवेचन करता हुआ प्रज्ञा से उसकी अर्थसमीक्षा करता है। तब उसके चित्त की विमुक्ति उसी प्रकार हो जाती है जैसे बाती और तैल के विना कोई दीपक बुझ जाया करता है॥"

**५. संक्षिप्त धनसूत्र : : सात धन**

१. "भिक्षुओ! साधक भिक्षु के ये सात धन होते हैं। कौन से सात? १. श्रद्धाधन,

[N.154, R.5] सीलधनं, हिरीधनं, ओत्तप्पधनं, सुतधनं चागधनं, पञ्ञाधनं—इमानि खो, भिक्खवे, सत्त धनानी ति।

"सद्धाधनं सीलधनं, हिरी ओत्तप्पियं धनं।
सुतधनं च चागो च, पञ्ञा वे सत्तमं धनं॥
"यस्स एते धना अत्थि, इत्थिया पुरिसस्स वा।
अदलिद्दो ति तं आहु, अमोघं तस्स जीवितं॥
"तस्मा सद्धं च सीलं च, पसादं धम्मदस्सनं।
अनुयुञ्जेथ मेधावी, सरं बुद्धान सासनं" ति॥

**६. वित्थतधनसुत्तं :** १. "सत्तिमानि, भिक्खवे, धनानि। कतमानि सत्त? सद्धाधनं, सीलधनं, हिरीधनं, ओत्तप्पधनं, सुतधनं, चागधनं, पञ्ञाधनं।

२. "कतमं च, भिक्खवे, सद्धाधनं? इध, भिक्खवे, अरियसावको सद्धो होति, सद्दहति तथागतस्स बोधिं—'इति पि सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो ...पे०... बुद्धो भगवा' ति। इदं वुच्चति, भिक्खवे, सद्धाधनं।

[B.399] ३. "कतमं च, भिक्खवे, सीलधनं? इध, भिक्खवे, अरियसावको पाणातिपाता पटिविरतो होति ...पे०... सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना पटिविरतो होति। इदं वुच्चति, भिक्खवे, सीलधनं।

४. "कतमं च, भिक्खवे, हिरीधनं? इध, भिक्खवे, अरियसावको हिरीमा होति, हिरीयति कायदुच्चरितेन वचीदुच्चरितेन मनोदुच्चरितेन, हिरीयति पापकानं अकुसलानं धम्मानं समापत्तिया। इदं वुच्चति, भिक्खवे, हिरीधनं।

---

२. शीलधन, ३. ह्रीधन, ४. अवत्राप्यधन, ५. श्रुतधन, ६. त्यागधन एवं ७. प्रज्ञाधन। भिक्षुओ! ये सात धन कहलाते हैं।

"श्रद्धाधन, शीलधन, ह्रीधन, अवत्राप्यधन, श्रुतधन, त्यागधन, एवं सप्तम प्रज्ञाधन॥

"जिस किसी (साधक) स्त्री या पुरुष के ये सात धन होते हैं, वह 'दरिद्र' नहीं कहलाता, और उसका जीवन व्यर्थ नहीं, सफल ही कहलाता है॥

"अत: मेधावी साधक को धर्मदर्शन में श्रद्धोत्पादक श्रद्धाधन एवं शीलधन का, बुद्धों के अनुशासन का स्मरण करते हुए, साधना (अनुयोग) करनी चाहिये॥"

**६. विस्तृत धनसूत्र : : सात धनों का विस्तृत विवरण**

१. "भिक्षुओ! ये सात धन होते हैं। कौन से सात? श्रद्धाधन ...पूर्ववत्... प्रज्ञाधन।

२. "भिक्षुओ! इनमें **श्रद्धाधन** क्या है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक ...पूर्ववत्... । यह 'श्रद्धाधन' कहलाता है।

३. "और, भिक्षुओ! **शीलधन** क्या कहलाता है? कोई आर्यश्रावक प्राणातिपात (हिंसा) से दूर रहता है... सुरा, मैरेय, मद्य, प्रमादस्थान से दूर रहता है। भिक्षुओ! यह 'शीलधन' कहलाता है।

५. ''कतमं च, भिक्खवे, ओत्तप्पधनं? इध, भिक्खवे, अरियसावको ओत्तप्पी होति, ओत्तप्पति कायदुच्चरितेन वचीदुच्चरितेन मनोदुच्चरितेन, ओत्तप्पति पापकानं अकुसलानं धम्मानं समापत्तिया। इदं वुच्चति, भिक्खवे, ओत्तप्पधनं।

६. ''कतमं च, भिक्खवे, सुतधनं? इध, भिक्खवे, अरियसावको बहुस्सुतो [R.6] होति सुतधरो सुतसन्निचयो। ये ते धम्मा आदिकल्याणा मज्झेकल्याणा परियोसानकल्याणा सात्थं सब्यञ्जनं, केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं अभिवदन्ति, तथारूपास्स [N.155] धम्मा बहुस्सुता होन्ति धाता वचसा परिचिता मनसानुपेक्खिता दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा। इदं वुच्चति, भिक्खवे, सुतधनं।

७. ''कतमं च, भिक्खवे, चागधनं? इध, भिक्खवे, अरियसावको विगतमल-मच्छेरेन चेतसा अगारं अज्झावसति मुत्तचागो पयतपाणि वोस्सग्गरतो याचयोगो दानसंविभागरतो। इदं वुच्चति, भिक्खवे, चागधनं।

८. ''कतमं च, भिक्खवे, पञ्ञाधनं? इध, भिक्खवे, अरियसावको पञ्ञवा होति ...पे०... सम्मा दुक्खक्खयगामिनिया। इदं वुच्चति, भिक्खवे, पञ्ञाधनं। इमानि खो, भिक्खवे, सत्त धनानी ति।

''सद्धाधनं सीलधनं, हिरी ओत्तप्पियं धनं।
सुतधनं च चागो च, पञ्ञा वे सत्तमं धनं॥

---

४. ''और, भिक्षुओ! **ह्रीधन** क्या होता है? जो आर्यश्रावक लज्जालु होता है, काय वाक् एवं मन के दुश्चरितों से लज्जा करता है, पापमय अकुशल धर्मों की उत्पत्ति में लज्जा मानता है। भिक्षुओ! यह है—ह्रीधन।

५. ''और, भिक्षुओ! **अवत्राप्यधन** क्या कहलाता है? जो आर्यश्रावक पापभीरु होता है, काय वाक् एवं मन के दुश्चरितों में तथा पापमय अकुशल धर्मों के उत्पाद में पाप एवं भय मानता है—यह कहलाता है अवत्राप्यधन। (४)

६. ''**श्रुतधन,** भिक्षुओ! क्या कहलाता है? यहाँ कोई आर्यश्रावक धर्म का अतिशय श्रवण करता है, सुने हुए को धारण करता है, उसका संग्रह करता है, जो धर्म आदि मध्य और अन्त में सर्वथा कल्याणकारक है, जो अपने पदों एवं अर्थों से पूर्णतः धर्मसाधना का बोधक है, वैसे धर्मो का जिसने अतिशय श्रवण किया हो, वाणी से जिनका प्रवचन करता हो, मन में जिनको धारण कर रखा हो—यह कहलाता है श्रुतधन। (५)

७. ''भिक्षुओ! **त्यागधन** क्या कहलाता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक मल-मात्सर्यरहित चित्त से गृहस्थधर्म का पालन करता है, तथा त्यागवृत्ति से अधिकारी (पात्र) याचक को दान करने में उत्साहसम्पन्न तथा सम्यग्दृष्टि से युक्त हो—यह कहलाता है त्यागधन। (६)

८. ''और, भिक्षुओ! **प्रज्ञाधन** क्या कहलाता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक प्रज्ञावान् होता है, ऐसी प्रज्ञा जो दुःख के उत्पाद-व्यय की बोधिका हो—यह कहलाता है, भिक्षुओ! प्रज्ञाधन। (७)

"यस्स एते धना अत्थि, इत्थिया पुरिसस्स वा।
अदलिद्दो ति तं आहु, अमोघं तस्स जीवितं॥
"तस्मा सद्धं च सीलं च, पसादं धम्मदस्सनं।
अनुयुञ्जेथ मेधावी, सरं बुद्धान सासनं" ति॥

**७. उग्गसुत्तं :** १. अथ खो उग्गो राजमहामत्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; [B.400] उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो उग्गो राजमहामत्तो भगवन्तं एतदवोच—

२. "अच्छरियं, भन्ते, अब्भुतं, भन्ते! याव अड्ढो चायं, भन्ते, मिगारो रोहणेय्यो याव महद्धनो याव महाभोगो" ति।

"कीव अड्ढो पनुग्ग, मिगारो रोहणेय्यो, कीव महद्धनो, कीव महाभोगो" [R.7] ति?

"सतं, भन्ते, सतसहस्सानं हिरञ्ञस्स, को पन वादो रूपियस्सा" ति!

"अत्थि खो एतं, उग्ग, धनं नेतं 'नत्थी' ति वदामी ति। तं च खो एतं, उग्ग, धनं साधारणं अग्गिना उदकेन राजूहि चोरेहि अप्पियेहि दायादेहि। सत्त खो इमानि, उग्ग, [N.156] धनानि असाधारणानि अग्गिना उदकेन... चोरेहि अप्पियेहि दायादेहि। कतमानि सत्त? सद्धाधनं, सीलधनं, हिरीधनं, ओत्तप्पधनं, सुतधनं, चागधनं, पञ्ञाधनं—इमानि खो, उग्ग, सत्त धनानि असाधारणानि अग्गिना उदकेन राजूहि चोरेहि अप्पियेहि दायादेही ति।

"सद्धाधनं सीलधनं, हिरी ओत्तप्पियं धनं।
सुतधनं च चागो च, पञ्ञा वे सत्तमं धनं॥

---

"इस प्रकार, भिक्षुओ! ये सात प्रज्ञाधन होते हैं।

*[इसके बाद तीन गाथाओं का अनुवाद अनुपद के पूर्वसूत्र के समान ही समझ लें।]*

**७. उग्रसूत्र** : :

१. तब कभी उग्र राजमहामात्य भगवान् (बुद्ध) के सम्मुख आया। आकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे उग्र राजमहामात्य ने भगवान् से यह निवेदन किया—

२. "आश्चर्य है, भन्ते! अद्भुत है, भन्ते! कि यह मृगार रोहणेय कितना धन-सम्पन्न कितना ऐश्वर्यवान् एवं कितना वैभवशाली है!"

"परन्तु, उग्र! यह मृगार कितना धनवान्... वैभवशाली है?"

"भन्ते! इसके पास करोड़ों सुवर्ण मुद्राएँ हैं, चाँदी की तो बात ही छोड़ दें।"

"उग्र! मैं तो इस विशालराशि धन को भी 'कुछ नहीं' ही मानता; क्योंकि, उग्र! यह साधारण धन अग्नि, जल, राजा, चौर, शत्रु (विरोधी) या उत्तराधिकारियों द्वारा कभी भी छीना जा सकता है। हाँ, उग्र! ये सात धन असाधारण हैं, जिनको अग्नि, जल, राजा, चौर, शत्रु या उत्तराधिकारी भी कभी नहीं छीन सकते। कौन सात? श्रद्धाधन ...पूर्ववत्... प्रज्ञाधन—ये सात धन, उग्र! असाधारण होते हैं; क्योंकि इनको अग्नि, जल ...पूर्ववत्... कभी नहीं छीन सकते॥

"यस्स एते धना अत्थि, इत्थिया पुरिसस्स वा।
स वे महद्धनो लोके, अजेय्यो देवमानुसे॥
"तस्मा सद्धं च सीलं च, पसादं धम्मदस्सनं।
अनुयुञ्जेथ मेधावी, सरं बुद्धान सासनं" ति॥ ●

**८. संयोजनसुत्तं** : १. "सत्तिमानि, भिक्खवे, संयोजनानि। कतमानि सत्त? अनुनयसंयोजनं, पटिघसंयोजनं, दिट्ठिसंयोजनं, विचिकिच्छासंयोजनं, मानसंयोजनं, भवरागसंयोजनं, अविज्जासंयोजनं—इमानि खो, भिक्खवे, सत्त संयोजनानी" ति॥ ●

**९. पहानसुत्तं** : १. "सत्तन्नं, भिक्खवे, संयोजनानं पहानाय समुच्छेदाय [B.401] ब्रह्मचरियं वुस्सति। कतमेसं सत्तन्नं? अनुनयसंयोजनस्स पहानाय समुच्छेदाय ब्रह्म- [R.8] चरियं वुस्सति, पटिघसंयोजनस्स ...पे०... दिट्ठिसंयोजनस्स... विचिकिच्छासंयोजनस्स... मानसंयोजनस्स... भवरागसंयोजनस्स... अविज्जासंयोजनस्स पहानाय समुच्छेदाय ब्रह्म-चरियं वुस्सति। इमेसं खो, भिक्खवे, सत्तन्नं संयोजनानं पहानाय समुच्छेदाय ब्रह्मचरियं वुस्सति। यतो च खो, भिक्खवे, भिक्खुनो अनुनयसंयोजनं पहीनं होति उच्छिन्नमूलं ताला-वत्थुकतं अनभावङ्कतं आयतिं अनुप्पादधम्मं। पटिघसंयोजनं ...पे०... दिट्ठिसंयोजनं... विचिकिच्छासंयोजनं... मानसंयोजनं... भवरागसंयोजनं... अविज्जासंयोजनं पहीनं होति उच्छिन्नमूलं तालावत्थुकतं अनभावङ्कतं आयतिं अनुप्पादधम्मं। अयं वुच्चति, भिक्खवे, भिक्खु अच्छेच्छि तण्हं, विवत्तयि संयोजनं, सम्मा मानाभिसमया अन्तमकासि [N.157] दुक्खस्सा" ति॥ ●

**१०. मच्छरियसुत्तं** : १. "सत्तिमानि, भिक्खवे, संयोजनानि। कतमानि सत्त?

---

*[इसके बाद की तीन गाथाओं का अनुवाद **पूर्वसूत्रवत्** समझ लें।]* ●

**८. संयोजनसूत्र : : सात संयोजन**

भिक्षुओ! ये सात संयोजन कहलाते हैं। कौन से सात? अनुनयसंयोजन, प्रतिघसंयोजन, दृष्टिसंयोजन, विचिकित्सासंयोजन, मानसंयोजन, भवरागसंयोजन एवं अविद्यासंयोजन—भिक्षुओ! ये सात संयोजन होते हैं। ●

**९. प्रहाणसूत्र : : सात संयोजनों का प्रहाण**

१. "भिक्षुओ! सात संयोजनों के प्रहाण एवं नाश के लिये धर्मसाधना की जाती है। किन सात के? अनुनयसंयोजन के प्रहाण एवं नाश के लिये, प्रतिघसंयोजन के... भवरागसंयोजन के... अविद्यासंयोजन के प्रहाण एवं समुच्छेद के लिये धर्मसाधना की जाती है। जिस भिक्षु का अनुनयसंयोजन... प्रतिघसंयोजन... दृष्टिसंयोजन... विचिकित्सासंयोजन... मानसंयोजन... भव-रागसंयोजन... अविद्यासंयोजन प्रहीण हो जाता है, मूलत: नष्ट हो जाता है, अभावयुक्त हो जाता है; भिक्षुओ! यह भिक्षु कहलाता है कि इसने तृष्णा एवं संयोजन तथा दु:खों का अन्त कर लिया॥" ●

**१०. मात्सर्यसूत्र : : सात संयोजन**

"भिक्षुओ! ये सात संयोजन होते हैं। कौन से सात? अनुनयसंयोजन, प्रतिघसंयोजन,

अनुनयसंयोजनं, पटिघसंयोजनं, दिट्ठिसंयोजनं, विचिकिच्छासंयोजनं, मानसंयोजनं, इस्सासंयोजनं, मच्छरियसंयोजनं—इमानि खो, भिक्खवे, सत्त संयोजनानी'' ति॥ ●

धनवग्गो पठमो॥

तस्सुद्दानं

[R.9] द्वे पियानि बलं धनं, सङ्खित्तं चेव वित्थतं।
उग्गं संयोजनं चेव, पहानं मच्छरियेन चा ति॥ ●

## २. अनुसयवग्गो

**१. पठमअनुसयसुत्तं** : १. ''सत्तिमे, भिक्खवे, अनुसया। कतमे सत्त? कामरागानुसयो, पटिघानुसयो, दिट्ठानुसयो, विचिकिच्छानुसयो, मानानुसयो, भवरागानु-
[B.402] सयो, अविज्जानुसयो—इमे खो, भिक्खवे, सत्त अनुसया'' ति॥ ●

**२. दुतियअनुसयसुत्तं** : १. ''सत्तन्नं, भिक्खवे, अनुसयानं पहानाय समुच्छेदाय ब्रह्मचरियं वुस्सति। कतमेसं सत्तन्नं? कामरागानुसयस्स पहानाय समुच्छेदाय ब्रह्मचरियं वुस्सति, पटिघानुसयस्स ...पे०... दिट्ठानुसयस्स... विचिकिच्छानुसयस्स... मानानुसयस्स...
[N.158] भवरागानुसयस्स... अविज्जानुसयस्स पहानाय समुच्छेदाय ब्रह्मचरियं वुस्सति। इमेसं खो, भिक्खवे, सत्तन्नं अनुसयानं पहानाय समुच्छेदाय ब्रह्मचरियं वुस्सति।

---

दृष्टिसंयोजन, विचिकित्सासंयोजन, मानसंयोजन, ईर्ष्यासंयोजन एवं मात्सर्यसंयोजन—भिक्षुओ! ये सात संयोजन होते हैं॥''

**धनवर्ग प्रथम सम्पन्न॥** ●

**इस वर्ग ( में व्याख्यातसूत्रों ) की सूची**

१. प्रथम प्रियसूत्र, २. द्वितीय प्रियसूत्र, ३. संक्षिप्त बलसूत्र, ४. विस्तृत बलसूत्र, ५. संक्षिप्त धनसूत्र, ६. विस्तृत धनसूत्र, ७. उग्रसूत्र, ८. संयोजनसूत्र, ९. प्रहाणसूत्र, १०. मात्सर्यसूत्र॥ ●

## २. अनुशयवर्ग

**१. प्रथम अनुशयसूत्र : : सप्त अनुशय**

१. ''भिक्षुओ! अनुशय (चित्तप्रवृत्ति) सात होते हैं। कौन सात? कामरागानुशय, प्रतिघानुशय, दृष्ट्यनुशय, विचिकित्सानुशय, मानानुशय, भवरागानुशय एवं अविद्यानुशय—भिक्षुओ! ये सात अनुशय होते हैं॥'' ●

**२. द्वितीय अनुशयसूत्र : : सात अनुशयों का प्रहाण**

१. भिक्षुओ! सात अनुशयों के प्रहाण एवं नाश के लिये धर्मसाधना की जाती है। किन सात अनुशयों के? कामरागानुशय के... प्रतिघानुशय के... दृष्ट्यनुशय के... विचिकित्सानुशय के...

२. "यतो च खो, भिक्खवे, भिक्खुनो कामरागानुसयो पहीनो होति उच्छिन्नमूलो तालावत्थुकतो अनभावङ्कतो आयतिं अनुप्पादधम्मो। पटिघानुसयो ...पे०... दिट्ठानुसयो... विचिकिच्छानुसयो...मानानुसयो...भवरागानुसयो...अविज्जानुसयो पहीनो होति उच्छिन्नमूलो तालावत्थुकतो अनभावङ्कतो आयतिं अनुप्पादधम्मो। अयं वुच्चति, भिक्खवे, भिक्खु अच्छेच्छि तण्हं, विवत्तयि संयोजनं, सम्मा मानाभिसमया अन्तमकासि दुक्खस्सा" ति॥ ●

**३. कुलसुत्तं** : १. "सत्तहि, भिक्खवे, अङ्गेहि समन्नागतं कुलं अनुपगन्त्वा [R.10] वा नालं उपगन्तुं, उपगन्त्वा वा नालं उपनिसीदितुं। कतमेहि सत्तहि ? न मनापेन पच्चुट्ठेन्ति, न मनापेन अभिवादेन्ति, न मनापेन आसनं देन्ति, सन्तमस्स परिगुहन्ति, बहुकं पि थोकं देन्ति, पणीतं पि लूखं देन्ति, असक्कच्चं देन्ति नो सक्कच्चं। इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि अङ्गेहि समन्नागतं कुलं अनुपगन्त्वा वा नालं उपगन्तुं, उपगन्त्वा वा नालं उपनिसीदितुं।

२. "सत्तहि, भिक्खवे, अङ्गेहि समन्नागतं कुलं अनुपगन्त्वा वा अलं उपगन्तुं, उपगन्त्वा वा अलं उपनिसीदितुं। कतमेहि सत्तहि? मनापेन पच्चुट्ठेन्ति, मनापेन अभिवादेन्ति, मनापेन आसनं देन्ति, सन्तमस्स न परिगुहन्ति, बहुकं पि बहुकं देन्ति, पणीतं पि पणीतं देन्ति, सक्कच्चं देन्ति नो असक्कच्चं। इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि अङ्गेहि समन्नागतं कुलं अनुपगन्त्वा वा अलं उपगन्तुं, उपगन्त्वा वा अलं उपनिसीदितुं" ति॥ ●

---

मानानुशय के... भवरागानुशय के... अविद्यानुशय के प्रहाण एवं समुच्छेद के लिये धर्मसाधना की जाती है। भिक्षुओ! इन सात अनुशयों के प्रहाण एवं समुच्छेद के लिये ही धर्मसाधना की जाती है।

२. "क्योंकि, भिक्षुओ! जिस भिक्षु का कामरागानुशय प्रहीण हो जाता है, मूलत: उच्छिन्न हो जाता है, प्रतिघानुशय... दृष्ट्यनुशय... विचिकित्सानुशय... मानानुशय... भवरागानुशय... अविद्यानुशय प्रहीण हो जाता है, समूल उच्छिन्न हो जाता है, भविष्य में वह कभी उत्पन्न होने की स्थिति में नहीं रहता; भिक्षुओ! ऐसे भिक्षु ने मानो अपनी समस्त तृष्णाओं का, संयोजनों का तथा अपने समस्त दु:खों का क्षय कर लिया है॥" ●

**३. कुलसूत्र** : :

१. "भिक्षुओ! इन सात धर्मों से युक्त कुल (गृहस्थ का घर) में जाने से न जाना ही अच्छा है; यदि किसी विवशता से जाना पड़ जाय तो वहाँ बैठना तो सर्वथा ही उचित नहीं। किन सात धर्मों से ? १. जो मनोनुकूल स्वागत-सत्कार नहीं करते, २. मनोनुकूल अभिवादन नहीं करते; ३. मनोनुकूल आसन आदि नहीं देते; ४. किसी वस्तु के होते हुए भी उसको उससे छिपाते हैं; ५. अधिक माँगने पर अल्प ही देते हैं; ६. अच्छा बना होने पर रूखा-सूखा ही देते हैं; ७. जो देते हैं वह भी असत्कारपूर्वक ही देते हैं, सत्कारपूर्वक नहीं। भिक्षुओ! इन सात अङ्गों से युक्त कुलों में जाने से न जाना ही उचित है, यदि किसी विवशता से वहाँ जाना ही पड़े तो वहाँ बैठना कथमपि उचित नहीं॥"

२. (परन्तु) भिक्षुओ! इन सात अङ्गों से युक्त कुल में यदि न गये हो तो वहाँ जाना चाहिये तथा वहाँ कभी जाने पर कुछ समय बैठना चाहिये। कौन से सात अङ्गों से युक्त ? १. जो मनोनुकूल

[B.403] **४. पुग्गलसुत्तं** : १. ''सत्तिमे, भिक्खवे, पुग्गला आहुनेय्यो पाहुनेय्या दक्खिणेय्या अञ्जलिकरणीया अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमे सत्त? उभतो-भागविमुत्तो, पञ्ञाविमुत्तो, कायसक्खि, दिट्ठिप्पत्तो, सद्धाविमुत्तो, धम्मानुसारी, सद्धानुसारी—इमे खो, [N.159,R.11] भिक्खवे, सत्त पुग्गला आहुनेय्या पाहुनेय्या दक्खिणेय्या अञ्जलिकरणीया अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा'' ति॥ ●

**५. उदकूपमासुत्तं** : १. ''सत्तिमे, भिक्खवे, उदकूपमा पुग्गला सन्तो संविज्जमाना लोकस्मिं। कतमे सत्त? इध, भिक्खवे, एकच्चो पुग्गलो सकिं निमुग्गो निमुग्गो व होति; इध पन, भिक्खवे, एकच्चो पुग्गलो उम्मुज्जित्वा निमुज्जति; इध पन, भिक्खवे, एकच्चो पुग्गलो उम्मुज्जित्वा ठितो होति; इध पन, भिक्खवे, एकच्चो पुग्गलो उम्मुज्जित्वा विपस्सति विलोकेति; इध पन, भिक्खवे, एकच्चो पुग्गलो उम्मुज्जित्वा पतरति; इध पन, भिक्खवे, एकच्चो पुग्गलो उम्मुज्जित्वा पतिगाधप्पत्तो होति; इध पन, भिक्खवे, एकच्चो पुग्गलो उम्मुज्जित्वा, तिण्णो होति पारङ्गतो थले तिट्ठति ब्राह्मणो।

२. ''कथं च, भिक्खवे, पुग्गलो सकिं निमुग्गो निमुग्गो व होति? इध पन, भिक्खवे, एकच्चो पुग्गलो समन्नागतो होति एकन्तकाळकेहि अकुसलेहि धम्मेहि। एवं खो, भिक्खवे, पुग्गलो सकिं निमुग्गो निमुग्गो व होति।

---

स्वागत करे, २. ...अभिवादन करे, ३. ...आसन आदि दे, ४. किसी वस्तु के होने पर न छिपावे, ५. अधिक माँगने पर अधिक ही दे, ६. रुचिकर एवं स्वादिष्ट दे, ७. सत्कारपूर्वक दे, असत्कारपूर्वक नहीं। भिक्षुओ! इन सात अङ्गों से युक्त कुल में जाना चाहिये, जाने पर वहाँ बैठना चाहिये॥'' ●

**४. पुद्गलसूत्र : : सप्तविध पुद्गल**

१. ''भिक्षुओ! ये सप्तविध पुद्गल भेंट देने योग्य, आतिथ्य योग्य, दान देने योग्य, प्रणाम करने योग्य होते हैं; क्योंकि ये संसार के लिये अद्वितीय पुण्यस्थल हैं। कौन से सात? १. उभतोभाग (रूपकाय एवं रागकाय) से विमुक्त; २. प्रज्ञाविमुक्त; ३. कायसाक्षी, ४. दृष्टिप्राप्त, ५. श्रद्धाविमुक्त, ६. धर्मानुसारी एवं ७. श्रद्धानुसारी। भिक्षुओ! ये सप्तविध पुद्गल उपहार योग्य ...पूर्ववत्... क्योंकि ये संसार के लिये अद्वितीय पुण्यस्थल है॥'' ●

**५. उदकोपमसूत्र : : सप्तविध उदकोपम पुद्गल**

१. भिक्षुओ! लोक में ये सात पुद्गल उदक के समान व्यवहार करनेवाले होते हैं। कौन से सात? (१) यहाँ, भिक्षुओ! कोई पुद्गल जल में एक बार गोता लगाये तो लगाये ही रह गये के समान होता है; (२) कोई जल में एक बार ऊपर आकर पुनः गोता लगाता है; (३) कोई जल में ऊपर शिर निकाले ही रह जाता है, गोता नहीं लगाता; (४) कोई पुद्गल जल में सिर निकाले हुए इधर उधर देखता, ताकता है; (५) कोई पुद्गल जल से शिर बाहर निकाले हुए ही तैरता है; (६) कोई पुद्गल जल में तैरता हुआ गहरा गोता लगा लेता है, तथा (७) कोई पुद्गल तैर कर, पार वाले किनारे पर जा बैठता है।

२. ''भिक्षुओ! कैसे कोई पुद्गल 'जल में एक बार गोता लगाये तो लगाये ही रह गया' (डूब

३. ''कथं च, भिक्खवे, पुग्गलो उम्मुज्जित्वा निमुज्जति? इध, भिक्खवे, एकच्चो पुग्गलो उम्मुज्जति साधु सद्धा कुसलेसु धम्मेसु, साधु हिरी ...पे०... साधु ओत्तप्पं... साधु विरियं... साधु पञ्ञा कुसलेसु धम्मेसू ति। तस्स सा सद्धा नेव तिट्ठति नो वड्ढति हायतियेव, तस्स सा हिरी ...पे०... तस्स तं ओत्तप्पं... तस्स तं विरियं... तस्स सा पञ्ञा नेव तिट्ठति नो वड्ढति हायतियेव। एवं खो, भिक्खवे, पुग्गलो उम्मुज्जित्वा निमुज्जति।

४. ''कथं च, भिक्खवे, पुग्गलो उम्मुज्जित्वा ठितो होति? इध, भिक्खवे, [B.404] एकच्चो पुग्गलो उम्मुज्जति साधु सद्धा कुसलेसु धम्मेसु, साधु हिरी ...पे०... [R.12] ओत्तप्पं... साधु विरियं... साधु पञ्ञा कुसलेसु धम्मेसू ति। तस्स सा सद्धा नेव हायति नो वड्ढति ठिता होति, तस्स सा हिरी ...पे०... तस्स तं ओत्तप्पं... तस्स तं विरियं... तस्स सा पञ्ञा नेव हायति नो वड्ढति ठिता होति। एवं खो, भिक्खवे, पुग्गलो उम्मुज्जित्वा [N.160] ठितो होति।

५. ''कथं च, भिक्खवे, पुग्गलो उम्मुज्जित्वा विपस्सति विलोकेति? इध, भिक्खवे, एकच्चो पुग्गलो उम्मुज्जति साधु सद्धा कुसलेसु धम्मेसु, साधु हिरी ...पे०... साधु ओत्तप्पं... साधु विरियं... साधु पञ्ञा कुसलेसु धम्मेसू ति। सो तिण्णं संयोजनानं परिक्खया सोतापन्नो होति अविनिपातधम्मो नियतो सम्बोधिपरायणो। एवं खो, भिक्खवे, पुग्गलो उम्मुज्जित्वा विपस्सति विलोकेति।

---

गया) के समान होता है? यहाँ कोई पुद्गल एकान्ततः पापमय अकुशल धर्मों से लिप्त रहता है, यही पुद्गल उस गोताखोर (अवगाहक) के समान है जो एक बार गोता लगाये तो लगाये ही रह जाता है। (१)

३. ''भिक्षुओ! यहाँ कैसे कोई पुद्गल 'एक बार शिर निकाल कर गोता लगा लेने वाले' के समान होता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई पुद्गल पहले तो कुशल धर्मों में भली भाँति श्रद्धा करता है, लज्जा करता है, विरुद्ध चलने में पाप एवं भय मानता है, धर्मों की प्राप्ति हेतु उद्यम करता है, उधर अपनी बुद्धि लगाता है परन्तु कुछ ही समय बाद उसकी वह श्रद्धा, ह्री, पापभीरुता, वीर्य एवं प्रज्ञा यथास्थित नहीं रह पाती, न बढ़ती ही है, अपितु क्रमशः घटती ही जाती है। इसे कहते हैं, भिक्षुओ! 'एक बार शिर निकाल कर पुनः गोता लगा लेना'। (२)

४. ''कोई, भिक्षुओ! पुद्गल शिर निकालकर स्थिर रह जानेवाले गोताखोर के समान कैसे होता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई पुद्गल प्रथमतः जो कुशल धर्मों में श्रद्धा, ह्री, अवत्राप्य, वीर्य एवं प्रज्ञा प्रदर्शित करता है, वही श्रद्धा... प्रज्ञा स्थिर रह जाती है, न घटती है, न बढ़ती है; इसे कहते हैं—'एक बार शिर निकाल कर स्थिर रह जानेवाले गोताखोर' के समान पुद्गल। (३)

५. ''और कैसे, भिक्षुओ! कोई पुद्गल जल से शिर निकालकर इधर उधर देखने ताकने वाले के समान होता है? यहाँ कोई पुद्गल कुशल धर्मों में श्रद्धा, ह्री, अवत्राप्य, वीर्य एवं प्रज्ञा लगाता है। वह ऐसा कर तीनों संयोजनों का परिक्षय कर स्रोतआपन्न अवस्था में पहुँच जाता है, वहाँ वह धर्म से च्युत होने की स्थिति में नहीं रहता, वहाँ से वह निश्चय ही सम्बोधि की ओर बढ़ेगा। अतः,

६. "कथं च, भिक्खवे, पुग्गलो उम्मुज्जित्वा पतरति? इध, भिक्खवे, एकच्चो पुग्गलो उम्मुज्जति साधु सद्धा कुसलेसु धम्मेसु, साधु हिरी ...पे०... साधु ओत्तप्पं... साधु विरियं... साधु पञ्ञा कुसलेसु धम्मेसू ति। सो तिण्णं संयोजनानं परिक्खया रागदोसमोहानं तनुत्ता सकदागामी होति, सकिदेव इमं लोकं आगन्त्वा दुक्खस्सन्तकरो ति। एवं खो, भिक्खवे, पुग्गलो उम्मुज्जित्वा पतरति।

७. "कथं च, भिक्खवे, पुग्गलो उम्मुज्जित्वा पतिगाधप्पत्तो होति? इध, भिक्खवे, एकच्चो पुग्गलो उम्मुज्जति साधु सद्धा कुसलेसु धम्मेसु, साधु हिरी ...पे०... साधु ओत्तप्पं ... साधु विरियं... साधु पञ्ञा कुसलेसु धम्मेसू ति। सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ओपपातिको होति तत्थ परिनिब्बायी अनावत्तिधम्मो तस्मा लोका। एवं खो, भिक्खवे, पुग्गलो उम्मुज्जित्वा पतिगाधप्पत्तो होति।

८. "कथं च, भिक्खवे, पुग्गलो उम्मुज्जित्वा तिण्णो होति पारङ्गतो थले तिट्ठति [R.13] ब्राह्मणो? इध, भिक्खवे, एकच्चो पुग्गलो उम्मुज्जति साधु सद्धा कुसलेसु धम्मेसु, साधु हिरी ...पे०... साधु ओत्तप्पं... साधु विरियं... साधु पञ्ञा कुसलेसु धम्मेसू ति। सो [B.405] आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। एवं खो, भिक्खवे, पुग्गलो उम्मुज्जित्वा तिण्णो होति पारङ्गतो थले तिट्ठति ब्राह्मणो।

---

भिक्षुओ! ऐसा पुद्गल उस गोताखोर (अवगाहक) के समान होता है जो जल से शिर निकाल कर इधर उधर देखता ताकता रहता है॥ (४)

६. "और, भिक्षुओ! कौन सा पुद्गल 'जल से शिर निकाल कर तैरते रहने वाले गोताखोर' के समान कहलाता है? यहाँ भिक्षुओ! कोई पुद्गल पहले कुशल धर्मों में भलीभाँति श्रद्धा ...पूर्ववत्... प्रज्ञा लगाता है। इस प्रकार कर वह पुद्गल तीनों संयोजनों का नाश करने से राग द्वेष एवं मोह के कम हो जाने के कारण सकृदागामी हो जाता है, केवल एक बार इस लोक में आकर (अपनी धर्मसाधना को आगे बढ़ाता हुआ) अपने समस्त दुःखों का अन्त कर लेगा। ऐसा पुद्गल, भिक्षुओ! 'जल से शिर निकाल कर पुनः तैरते रहने वाले गोताखोर' के समान होता है। (५)

७. "और, भिक्षुओ! कौन पुद्गल 'जल से शिर निकाल कर पुनः गहरा गोता लगाने वाले गोताखोर' के समान कहलाता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई पुद्गल पहले कुशल धर्मों में भली भाँति श्रद्धा ...पूर्ववत्... अपनी प्रज्ञा लगाता है। तब वह अवरभागीय संयोजनों के परिक्षय से किसी देवलोक में पहुँच जाता है, और वहीं परिनिर्वृत्त हो जाता है। वह उस (देव) लोक से इस लोक में नहीं लौटता। भिक्षुओ! ऐसा पुद्गल 'जल से शिर निकाल कर पुनः गहरा गोता लगानेवाले गोताखोर' के समान होता है। (६)

८. "और, भिक्षुओ! कैसे कोई पुद्गल 'जल से शिर निकालकर तैरते हुए पार जाकर किनारे पर पहुँचे हुए गोताखोर' के समान होता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई पुद्गल साहस कर कुशल धर्मों में श्रद्धा ...पूर्ववत्... प्रज्ञा बढ़ाता है। वह क्रमशः आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति एवं

"इमे खो, भिक्खवे, सत्त उदकूपमा पुग्गला सन्तो संविज्जमाना लोकस्मिं" ति॥ ●

**६. अनिच्चानुपस्सीसुत्तं :** १. "सत्तिमे, भिक्खवे, पुग्गला आहुनेय्या [N.161] पाहुनेय्या दक्खिणेय्या अञ्जलिकरणीया अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमे सत्त? इध, भिक्खवे, एकच्चो पुग्गलो सब्बसङ्खारेसु अनिच्चानुपस्सी विहरति अनिच्चसञ्ञी अनिच्चपटिसंवेदी सततं समितं अब्बोकिण्णं चेतसा अधिमुच्चमानो पञ्ञाय परियोगाहमानो। सो आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। अयं, भिक्खवे, पठमो पुग्गलो आहुनेय्यो पाहुनेय्यो दक्खिणेय्यो अञ्जलिकरणीयो अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स।

२. "पुन च परं, भिक्खवे, इधेकच्चो पुग्गलो सब्बसङ्खारेसु अनिच्चानुपस्सी विहरति अनिच्चसञ्ञी अनिच्चपटिसंवेदी सततं समितं अब्बोकिण्णं चेतसा अधिमुच्चमानो पञ्ञाय परियोगाहमानो। तस्स अपुब्बं अचरिमं आसवपरियादानं च होति जीवितपरियादानं च। अयं, भिक्खवे, दुतियो पुग्गलो आहुनेय्यो ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स।

३. "पुन च परं, भिक्खवे, इधेकच्चो पुग्गलो सब्बसङ्खारेसु अनिच्चानुपस्सी विहरति अनिच्चसञ्ञी अनिच्चपटिसंवेदी सततं समितं अब्बोकिण्णं चेतसा अधिमुच्चमानो पञ्ञाय परियोगाहमानो। सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया अन्तरापरिनिब्बायी होति ...पे०... उपहच्चपरिनिब्बायी होति ...पे०... असङ्खार- [R.14] परिनिब्बायी होति ...पे०... ससङ्खारपरिनिब्बायी होति ...पे०... उद्धंसोतो होति अकनिट्ठ-

---

प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में स्वयं जानकर प्राप्त कर साधना करता है। ऐसा वह पुद्गल जल से शिर निकाल कर तैरता हुआ पार जाकर ज्ञानी के रूप में तटस्थ होकर बैठ जाता है।

"भिक्षुओ! लोक में ये सात उदकोपम पुद्गल होते हैं॥" ●

**६. अनित्यानुपश्यीसूत्र : : सप्तविध पुद्गल**

१. "भिक्षुओ! ये सात पुद्गल उपहार देने योग्य, आतिथ्ययोग्य, दानयोग्य, प्रणाभूयोग्य है; क्योंकि ये समस्त संसार के लिये अद्वितीय पुण्यस्थल हैं। कौन से सात?

"यहाँ, भिक्षुओ! कोई पुद्गल सभी संस्कारों में अनित्यता देखता हुआ अनित्यसंज्ञी एवं अनित्यप्रतिसंवेदी होकर निरन्तर विघ्नरहित, चित्त के दृढ़ सङ्कल्प के साथ, प्रज्ञा का समस्त उपयोग करता हुआ साधना करता है। वह आश्रवों के क्षय से पूर्ववत्... साक्षात्कार कर, प्राप्त कर साधना करता है। भिक्षुओ! यह भिक्षुओ! प्रथम पुद्गल उपहार योग्य,... पुण्यस्थल है। (१)

२. "पुनः, भिक्षुओ! यहाँ कोई पुद्गल सभी संस्कारों में अनित्यता देखता हुआ ...पूर्ववत्... साधना करता है। इस साधना से उस पुद्गल का अपने आश्रवों पर तथा जीवन पर पूर्ण निग्रह हो जाता है। भिक्षुओ! यह भिक्षु द्वितीय पुद्गल ...पूर्ववत्... पुण्यस्थल है। (२)

३. "पुनः, भिक्षुओ! कोई पुद्गल सभी संस्कारों में ...पूर्ववत्... साधना करता है। वह पाँच

गामी। अयं, भिक्खवे, सत्तमो पुग्गलो आहुनेय्यो पाहुनेय्यो दक्खिणेय्यो अञ्जलिकरणीयो अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। इमे खो, भिक्खवे, सत्त पुग्गला आहुनेय्या पाहुनेय्या दक्खिणेय्या अञ्जलिकरणीया अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा'' ति॥ ●

[B.406] **७. दुक्खानुपस्सीसुत्तं :** १. ''सत्तिमे, भिक्खवे, पुग्गला आहुनेय्यो ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमे सत्त? इध, भिक्खवे, एकच्चो पुग्गलो सब्बसङ्खारेसु दुक्खानुपस्सी विहरति ...पे०... ॥ ●

[N.162] **८. अनत्तानुपस्सीसुत्तं :** १. सब्बेसु धम्मेसु अनत्तानुपस्सी विहरति ...पे०... ॥ ●

**९. निब्बानसुत्तं :** १. ''निब्बाने सुखानुपस्सी विहरति सुखसञ्ञी सुखपटिसंवेदी सततं समितं अब्बोकिण्णं चेतसा अधिमुच्चमानो पञ्ञाय परियोगाहमानो। सो आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। अयं भिक्खवे, पठमो पुग्गलो आहुनेय्यो ...पे०... पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स।

२. ''पुन च परं, भिक्खवे, इधेकच्चो पुग्गलो निब्बाने सुखानुपस्सी विहरति

---

अवरभागीय संयोजनों के परिक्षय से **अन्तरापरिनिर्वायी**[१]... **उपहत्य परिनिर्वायी**[२]... **असंस्कारपरिनिर्वायी**[३]... **ससंस्कारपरिनिर्वायी**[४]... **ऊर्ध्वस्त्रोता** एवं **अकनिष्ठगामी**[५] होता है। यह, भिक्षुओ! सप्तम पुद्गल भी उपहारयोग्य, आतिथ्ययोग्य, दानयोग्य, प्रणामयोग्य होता है; क्योंकि यह संसार के लिये अद्वितीय पुण्यस्थल हैं॥'' (३-७) ●

**७. दुःखानुपश्यीसूत्र : : सप्तविध पुद्गल**

१. भिक्षुओ! ये सात पुद्गल उपहारयोग्य ...पूर्ववत्... संसार के लिये अद्वितीय पुण्यस्थल हैं। कौन से सात? यहाँ, भिक्षुओ! कोई पुद्गल सभी संस्कारों को दुःखमय मानता हुआ साधना करता है ...पूर्ववत्... ॥''

*[पूर्वसूत्रवत् विस्तार कर लें।]* ●

**८. अनात्मानुपश्यीसूत्र : : सप्तविध पुद्गल**

१. ''...सभी धर्मों में अनात्मदर्शन करता हुआ साधना करता है...पूर्ववत्... ॥'' ●

*[पूर्वसूत्रवत् विस्तार कर लें।]*

**९. निर्वाणसूत्र : :**

१. ''कोई साधक एकमात्र निर्वाण में ही सुख मानता है, उसी की सुखसंज्ञा से तथा सुख प्रतिसंवेदन से निरन्तर निर्विघ्न दृढ़ सङ्कल्पित चित्त के साथ, अपनी प्रज्ञा का समस्त उपयोग करता हुआ, साधना करता है। वह आश्रवों के क्षय से...पूर्ववत्... साक्षात्कार कर प्राप्त कर साधना करता है। भिक्षुओ! यह प्रथम पुद्गल उपहार योग्य ...पूर्ववत्... संसार के लिये अद्वितीय पुण्य-स्थल है। (१)

---

१-५. अन्तरापरिनिर्वायी आदि साधक पुद्गलों का पीछे **संयुत्तनिकायपालि** (चतुर्थ भाग, पृ० १८७९-८०) में हम विस्तृत व्याख्यान कर चुके हैं, वहाँ देखें। (बौद्धभारती ग्रन्थमाला-४३)—स०

सुखसञ्ञी सुखपटिसंवेदी सततं समितं अब्बोकिण्णं चेतसा अधिमुच्चमानो पञ्ञाय परियोगाहमानो। तस्स अपुब्बं अचरिमं आसवपरियादानं च होति जीवितपरियादानं च। अयं, भिक्खवे, दुतियो पुग्गलो आहुनेय्यो ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेतं लोकस्स।

३. ''पुन च परं, भिक्खवे, इधेकच्चो पुग्गलो निब्बाने सुखानुपस्सी विहरति सुखसञ्ञी सुखपटिसंवेदी सततं समितं अब्बोकिण्णं चेतसा अधिमुच्चमानो पञ्ञाय परियोगाहमानो। सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया अन्तरापरिनिब्बायी होति ...पे०... उपहच्चपरिनिब्बायी होति ...पे०... असङ्खारपरिनिब्बायी होति ...पे०... [R.15] ससङ्खारपरिनिब्बायी होति ...पे०.. उद्धंसोतो होति अकनिट्ठगामी। अयं, भिक्खवे, सत्तमो पुग्गलो आहुनेय्यो ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। इमे खो, भिक्खवे, सत्त पुग्गला आहुनेय्या ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा'' ति॥ ●

**१०. निद्दसवत्थुसुत्तं** : १. ''सत्तिमानि, भिक्खवे, निद्दसवत्थूनि। [B.407] कतमानि सत्त? इध, भिक्खवे, भिक्खु सिक्खासमादाने तिब्बच्छन्दो होति आयतिं च सिक्खासमादाने अविगतपेमो, धम्मनिसन्तिया तिब्बच्छन्दो होति आयतिं च धम्मनिसन्तिया अविगतपेमो, इच्छाविनये तिब्बच्छन्दो होति आयतिं च इच्छाविनये अविगतपेमो, पटिसल्लाने तिब्बच्छन्दो होति आयतिं च पटिसल्लाने अविगतपेमो, विरियारम्भे तिब्बच्छन्दो होति आयतिं च विरियारम्भे अविगतपेमो, सतिनेपक्के तिब्बच्छन्दो [N.163] होति आयतिं च सतिनेपक्के अविगतपेमो, दिट्ठिपटिवेधे तिब्बच्छन्दो होति आयतिं च दिट्ठिपटिवेधे अविगतपेमो। इमानि खो, भिक्खवे, सत्त निद्दसवत्थूनी'' ति॥ ●

**अनुसयवग्गो दुतियो॥**

---

२. ''पुनः, भिक्षुओ! यहाँ कोई साधक एकमात्र निर्वाण में ही सुखानुपश्यना करता हुआ ...पूर्ववत्... साधना करता है। इस साधना से उस पुद्गल का अपने आश्रवों पर तथा जीवन पर पूर्ण निग्रह हो जाता है। भिक्षुओ! यह द्वितीय पुद्गल ...पूर्ववत्... पुण्यस्थल है। (२)

३. ''पुनः, भिक्षुओ! यहाँ कोई साधक एकमात्र निर्वाण में ही सुखानुपश्यना करता हुआ ...पूर्ववत्... साधना करता है। वह पाँच अवरभागीय संयोजनों के परिक्षय से अन्तरापरिनिर्वायी... उपहत्यपरिनिर्वायी... असंस्कारपरिनिर्वायी... ससंस्कारपरिनिर्वायी... ऊर्ध्वस्रोता एवं अकनिष्ठगामी होता है। भिक्षुओ! ये सात पुद्गल उपहारयोग्य... प्रणामयोग्य होते हैं; क्योंकि ये संसार के लिये अनुपम पुण्यस्थल हैं॥'' (३-७) ●

**१०. निर्दशवस्तुसूत्र : : सात निर्दश वस्तुएँ**

१. ''भिक्षुओ! ये सात निर्दश वस्तुएँ होती हैं। कौन सी सात? (१) यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु भिक्षुनियमों के ग्रहण एवं पालन में अतिशय अनुराग वाला होता है। भविष्य में भी उन नियमों के ग्रहण एवं पालन में अनुरागरहित नहीं होता। (२) धर्मनिशान्ति (धर्मचिन्तन=विपश्यना) में तीव्र अनुरागवाला होता है, भविष्य में भी उसमें अनुरागरहित नहीं होता। (३) ...इच्छाविनय (तृष्णात्याग) में अतिशय अनुरागवाला तथा भविष्य में भी उसमें अनुरागरहित नहीं होता। (४)

**तस्सुद्दानं**

दुवे अनुसया कुलं, पुग्गलं उदकूपमं।
अनिच्चं दुक्खं अनत्ता च, निब्बानं निद्दसवत्थु चा ति॥

## ३. वज्जिसत्तकवग्गो

[R.16] **१. सारन्ददसुत्तं :** १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा वेसालियं विहरति सारन्ददे चेतिये। अथ खो सम्बहुला लिच्छवी येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ने खो ते लिच्छवी भगवा एतदवोच— "सत्त वो, लिच्छवी, अपरिहानिये धम्मे देसेस्सामि। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी" ति। "एवं, भन्ते" ति खो ते लिच्छवी भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

[B.408] २. "कतमे च, लिच्छवी, सत्त अपरिहानिया धम्मा? यावकीवञ्च, लिच्छवी,

---

...प्रतिसल्लयन (एकान्तवास) में तीव्र अनुराग... । (५) ...वीर्यारम्भ (उद्योग) में तीव्र अनुराग... । (६) ...स्मृति के निष्पाक्य (परिपाक=बुद्धिमत्ता) में... । (७) ...दृष्टि के प्रतिवेध (सन्मार्ग-दर्शन) में तीव्र अनुराग वाला होता है, भविष्य में भी उसके प्रति अनुरागरहित नहीं होता। भिक्षुओ! ये सात निर्दश वस्तुएँ होती हैं। **अनुशयवर्ग द्वितीय सम्पन्न॥**

**इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची**

१. प्रथम अनुशयसूत्र, २. द्वितीय अनुशयसूत्र, ३. कुलसूत्र, ४. पुद्गलसूत्र, ५. उदकोपमसूत्र, ६. अनित्यानुपश्यी सूत्र, ७. दुःखानुपश्यीसूत्र, ८. अनात्मानुपश्यीसूत्र, ९. निर्वाणसूत्र एवं १०. निर्दशवस्तुसूत्र॥

## ३. बज्जिसत्तकवर्ग

**१. सारन्ददसूत्र : : ब्रज्जियों के सात अपरिहाणीय धर्म**

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) वैशाली स्थित सारन्दद चैत्य में साधनाहेतु विराजमान थे। तब बहुत से लिच्छवि भगवान् के पास आये। आकर, भगवान् को प्रणाम कर, एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे उन लिच्छवियों से भगवान् ने यह कहा—"लिच्छवियो! मैं तुमको सात अपरिहाणीय धर्म बताऊँगा। उनको ध्यानपूर्वक सुनकर मन में बैठा लो, बताता हूँ।" "अच्छा, भन्ते!" कहकर लिच्छवियों ने भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य की। भगवान् ने यह देशना की—

२. "लिच्छवियो! वे सात अपरिहाणीय (न त्यागने योग्य) धर्म कौन से हैं? लिच्छवियो!

वज्जी अभिण्हं सन्निपाता भविस्सन्ति सन्निपातबहुला; वुद्धिमेव, लिच्छवी, वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

३. "यावकीवञ्च, लिच्छवी, वज्जी समग्गा सन्निपतिस्सन्ति, समग्गा वुट्ठहिस्सन्ति, समग्गा वज्जिकरणीयानि करिस्सन्ति; वुद्धियेव, लिच्छवी, वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

४. "यावकीवञ्च, लिच्छवी, वज्जी अपञ्ञत्तं न पञ्ञापेस्सन्ति, पञ्ञत्तं न समुच्छिन्दिस्सन्ति, यथापञ्ञत्ते पोराणे वज्जिधम्मे समादाय वत्तिस्सन्ति वुद्धियेव [N.164] लिच्छवी, वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

५. "यावकीवञ्च, लिच्छवी, वज्जी ये ते वज्जीनं वज्जिमहल्लका ते सक्करिस्सन्ति गरुं करिस्सन्ति मानेस्सन्ति पूजेस्सन्ति, तेसं च सोतब्बं मञ्ञिस्सन्ति; वुद्धियेव, लिच्छवी, वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

६. "यावकीवञ्च, लिच्छवी, वज्जी या ता कुलित्थियो कुलकुमारियो ता न ओकस्स पसय्ह वासेस्सन्ति; वुद्धियेव, लिच्छवी, वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

७. "यावकीवञ्च, लिच्छवी, वज्जी यानि तानि वज्जीनं वज्जिचेतियानि अब्भन्तरानि चेव बाहिरानि च तानि सक्करिस्सन्ति गरुं करिस्सन्ति मानेस्सन्ति, तेसं च [R.17] दिन्नपुब्बं कतपुब्बं धम्मिकं बलिं नो परिहापेस्सन्ति; वुद्धियेव, लिच्छवी, वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

---

जब तक ये वज्जी लोग निरन्तर एकत्र समूह में बैठेंगे, समूहबद्ध रहेंगे, तब तक, लिच्छवियो! इन वज्जी लोगों की उन्नति ही होगी, हानि नहीं। (१)

३. "और, लिच्छवियो! ये वज्जी लोग जब तक एकताबद्ध बैठेंगे... उठेंगे, अपने सामूहिक कार्यों को मिलकर करेंगे, लिच्छवियो! तब तक इन वज्जी लोगों की उन्नति ही होगी, हानि नहीं।

४. "लिच्छवियो! जब तक ये वज्जी लोग न बताये हुए नियम को न बनायेंगे, तथा बताये हुए नियम का उल्लङ्घन नहीं करेंगे तथा पहले बताये गये अपने पारम्परिक धर्मों का पालन मिलकर करते रहेंगे; तब तक, लिच्छवियो! इन वज्जी लोगों की उन्नति ही होती रहेगी, हानि की आशा न रखें। (३)

५. "जब तक, लिच्छवियो! ये वज्जी लोग अपने वृद्धजनों का सत्कार, गौरव, मान एवं पूजा करते रहेंगे, उनकी कही हुई बात पर ध्यान देंगे; तब तक, लिच्छवियो! वज्जियों की उन्नति ही होती रहेगी, किसी प्रकार की हानि की सम्भावना नहीं है। (४)

६. "जब तक, लिच्छवियो! इन वज्जियों के घरों की स्त्रियाँ या कुमारियाँ अपना घर हठात् नहीं छोड़ेंगी तब तक, लिच्छवियो! इन वज्जिजनों की उन्नति ही समझो, उनकी हानि की कोई सम्भावना नहीं। (५)

७. "जब तक, लिच्छवियो! ये वज्जी लोग अपने चैत्यों (मन्दिरों) की बाह्य एवं आभ्यन्तर रूप से पूजा, गौरव एवं सत्कार करते रहेंगे, वहाँ पारम्परिक धर्म (भेंट, पूजा) चढ़ाते रहेंगे तब तक इनकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि की सम्भावना नहीं। (६)

८. ''यावकीवञ्च, लिच्छवी, वज्जीनं अरहन्तेसु धम्मिका रक्खावरणगुत्ति सुसंविहिता भविस्सति—'किन्ति अनागता च अरहन्तो विजितं आगच्छेय्युं, आगता च अरहन्तो विजिते फासुं विहरेय्युं' ति; वुड्ढियेव, लिच्छवी, वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

९. ''यावकीवञ्च, लिच्छवी, इमे सत्त अपरिहानिया धम्मा वज्जीसु ठस्सन्ति, इमेसु च सत्तसु अपरिहानियेसु धम्मेसु वज्जी सन्दिस्सिस्सन्ति; बुद्धियेव, लिच्छवी, वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानी'' ति। ●

[B.409] **२. वस्सकारसुत्तं :** १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा राजगहे विहरति गिज्झकूटे पब्बते। तेन खो पन समयेन राजा मागधो अजातसत्तु वेदेहिपुत्तो वज्जी अभियातुकामो होति। सो एवमाह—''अहं हिमे वज्जी एवं महिद्धिके एवंमहानुभावे उच्छेच्छामि, वज्जी विनासेस्सामि, वज्जी अनयब्यसनं आपादेस्सामी'' ति।

[N.165] २. अथ खो राजा मागधो अजातसत्तु वेदेहिपुत्तो वस्सकारं ब्राह्मणं मागधमहामत्तं आमन्तेसि—''एहि त्वं, ब्राह्मण, येन भगवा तेनुपसङ्कम; उपसङ्कमित्वा मम वचनेन भगवतो पादे सिरसा वन्दाहि, अप्पाबाधं अप्पातङ्कं लहुट्ठानं बलं फासुविहारं पुच्छ—'राजा, भन्ते, मागधो अजातसत्तु वेदेहिपुत्तो भगवतो पादे सिरसा वन्दति, अप्पाबाधं अप्पातङ्कं लहुट्ठानं बलं फासुविहारं पुच्छती' ति। एवं च वदेहि—'राजा, भन्ते, मागधो अजातसत्तु वेदेहिपुत्तो वज्जी अभियातुकामो। सो एवमाह—'अहं हिमे वज्जी एवंमहिद्धिके एवंमहानुभावे [R.18] उच्छेच्छामि, वज्जी विनासेस्सामि, वज्जी अनयब्यसनं आपादेस्सामी' ति। यथा ते

---

८. ''जब तक, लिच्छवियो! ये वज्जी लोग अर्हतों (ज्ञानी, सन्तों) की धार्मिक रक्षा एवं उनका पालन करते रहेंगे और यह चिन्तन करते रहेंगे—'जो ज्ञानी अर्हत् हमारे प्रदेश में नहीं आये वे भी यहाँ आवें और जो आये हैं वे इस प्रदेश में सुखपूर्वक साधना में लगे रहें', तब तक इन (वज्जियों) की वृद्धि ही होती रहेगी, हानि नहीं। (७)

९. ''लिच्छवियो! जब तक वज्जिजनों में ये सात अपरिहानीय धर्म बने रहेंगे जब तक ये सातों धर्म उनमें दिखायी देते रहेंगे; लिच्छवियो! तब तक उन वज्जियों की उन्नति ही समझो, उनकी हानि की आशा न रखना॥'' ●

**२. वर्षकारसूत्र : : सात अपरिहाणीय धर्म**

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) राजगृह के गृध्रकूट पर्वत पर साधना हेतु विराजमान थे। उस समय वैदेहिपुत्र राजा मागध अजातशत्रु वज्जियों के प्रदेश पर आक्रमण का विचार कर रहा था। उसने यह कहा—''मैं इन वज्जियों का जड़ से उखाड़ फेंकूँगा, इनको पूर्णत: नष्ट कर दूँगा, इनको सदा के लिये नष्ट-भ्रष्ट कर दूँगा।

२. तब राजा... अजातशत्रु ने अपने महामात्य वर्षकार ब्राह्मण को बुलाकर यह आदेश दिया—''ब्राह्मण! तुम भगवान् के पास जाओ और वहाँ जाकर उनको पैरों में प्रणाम कर उनको मेरी ओर से यह निवेदन करना—'राजा आपके श्रीचरणों में प्रणाम करते हैं, तथा आपका कुशल मङ्गल पूछते हैं।' पुन: यह कहना—'भन्ते! राजा अजातशत्रु वज्जियों के प्रदेश पर आक्रमण करना चाहता

भगवा ब्याकरोति, तं साधुकं उग्गहेत्वा मम आरोचेय्यासि। न हि तथागता वितथं भणन्ती'' ति।

३. ''एवं, भो'' ति खो वस्सकारो ब्राह्मणो मागधमहामत्तो रञ्ञो मागधस्स अजातसत्तुस्स वेदेहिपुत्तस्स पटिस्सुत्वा येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो वस्सकारो ब्राह्मणो मागधमहामत्तो भगवन्तं एतदवोच—''राजा, भो गोतम, मागधो अजातसत्तु वेदेहिपुत्तो भोतो गोतमस्स पादे सिरसा वन्दति, अप्पाबाधं अप्पातङ्कं लहुट्ठानं बलं फासुविहारं पुच्छति। राजा, भो गोतम, मागधो अजातसत्तु वेदेहिपुत्तो वज्जी अभियातुकामो. सो एवमाह—अहं हिमे वज्जी एवंमहिद्धिके एवंमहानुभावे उच्छेच्छामि, वज्जी विनासेस्सामि, वज्जी अनयब्यसनं आपादेस्सामी' '' ति।

४. तेन खो पन समयेन आयस्मा आनन्दो भगवतो पिट्ठितो ठितो होति [B.410] भगवन्तं बीजयमानो। अथ खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—''किन्ति ते, आनन्द, सुतं—'वज्जी अभिण्हं सन्निपाता सन्निपातबहुला' '' ति?

''सुतं मेतं, भन्ते—'वज्जी अभिण्हं सन्निपाता सन्निपातबहुला' '' ति।

''यावकीवञ्च, आनन्द, वज्जी अभिण्हं सन्निपाता भविस्सन्ति सन्निपातबहुला; वुद्धियेव, आनन्द, वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

५. ''किन्ति ते, आनन्द, सुतं—'वज्जी समग्गा सन्निपतन्ति, समग्गा [N.166] वुट्ठहन्ति, समग्गा वज्जिकरणीयानि करोन्ती' '' ति।

---

है, और वह यह कहता है—मैं इन वज्जियों को ...पूर्ववत्... नष्ट-भ्रष्ट कर दूँगा।' वे जैसा परामर्श दें उसको ध्यान से सुनकर यहाँ आकर मुझको बताओ। क्योंकि तथागत असत्य नहीं बोला करते।''

३. ''अच्छा, श्रीमन्!'' कहकर मगध-महामात्य वर्षकार ने राजा... अजातशत्रु का आदेश स्वीकार कर, वह भगवान् के सम्मुख गया, तथा उनसे कुशल मङ्गल=प्रश्न की वार्ता कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे वर्षकार ब्राह्मण महामात्य ने भगवान् से यह निवेदन किया—''भन्ते! राजा अजातशत्रु आपके श्रीचरणों में प्रणाम करता है। ...पूर्ववत्... नष्ट-भ्रष्ट कर दूँगा।''

४. उस समय आयुष्मान् आनन्द भगवान् के पीछे खड़े होकर उनको पंखा झल रहे थे। भगवान् ने आनन्द से पूछा—''आनन्द! क्या तुमने सुना है कि वज्जी लोग निरन्तर ऐक्यसूत्र में बँधे रहते हैं, ऐक्यसूत्र में ही बँधे हुए सर्वत्र बैठते उठते हैं?''

''हाँ, भन्ते! मैंने भी ऐसा ही सुना है।''

''तो, आनन्द! जब तक ये वज्जी लोग ऐक्यसूत्र में बँधे रहेंगे, ऐक्य सूत्र में बँधे हुए ही सर्वत्र उठेंगे, बैठेंगे, तब तक, आनन्द! इन वज्जियों की उन्नति ही समझनी चाहिये, हानि की कोई सम्भावना नहीं है। (१)

५. ''क्या, आनन्द! तुमने यह भी सुना है कि वज्जी लोग ऐक्यसूत्र में बँधे हुए उठते बैठते हैं तथा ऐक्य सूत्र में बँधे हुए ही अपने समग्र व्यावहारिक कार्य सम्पन्न करते हैं?''

"सुतं मेतं, भन्ते—'वज्जी समग्गा सन्निपतन्ति, समग्गा वुट्ठहन्ति, समग्गा वज्जिकरणीयानि करोन्ती' " ति।

"यावकीवञ्च, आनन्द, वज्जी समग्गा सन्निपतिस्सन्ति, समग्गा वुट्ठहिस्सन्ति, [R.19] समग्गा वज्जिकरणीयानि करिस्सन्ति; वुद्धियेव, आनन्द, वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि"।

६. "किन्ति ते, आनन्द, सुतं—'वज्जी अपञ्ञत्तं न पञ्ञापेन्ति, पञ्ञत्तं न समुच्छिन्दन्ति, यथापञ्ञत्ते पोराणे वज्जिधम्मे समादाय वत्तन्ती' " ति?

"सुतं मेतं, भन्ते—'वज्जी अपञ्ञत्तं न पञ्ञापेन्ति, पञ्ञत्तं न समुच्छिन्दन्ति, यथापञ्ञत्ते पोराणे वज्जिधम्मे समादाय वत्तन्ती' " ति।

"यावकीवञ्च, आनन्द, वज्जी अपञ्ञत्तं न पञ्ञापेस्सन्ति, पञ्ञत्तं न समुच्छिन्दिस्सन्ति, यथापञ्ञत्ते पोराणे वज्जिधम्मे समादाय वत्तिस्सन्ति; वुद्धियेव, आनन्द, वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

७. "किन्ति ते, आनन्द, सुतं—'वज्जी ये ते वज्जीनं वज्जिमहल्लका ते सक्करोन्ति गरुं करोन्ति मानेन्ति पूजेन्ति, तेसं च सोतब्बं मञ्ञन्ती' " ति?

"सुतं मेतं भन्ते—'वज्जी ये ते वज्जीनं वज्जिमहल्लका ते सक्करोन्ति गरुं करोन्ति मानेन्ति पूजेन्ति, तेसं च सोतब्बं मञ्ञन्ती' " ति।

"यावकीवञ्च, आनन्द, वज्जी ये ते वज्जीनं वज्जिमहल्लका ते सक्करिस्सन्ति गरुं करिस्सन्ति मानेस्सन्ति पूजेस्सन्ति, तेसं च सोतब्बं मञ्ञिस्सन्ति; वुद्धियेव, आनन्द, वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

---

"हाँ, भन्ते! मैंने भी ऐसा ही सुना है।"

"तो, आनन्द! जब तक ये वज्जी लोग ऐसा करते रहेंगे, इनकी वृद्धि ही होगी, हानि की कोई सम्भावना नहीं है। (२)

६. "क्या, आनन्द! तुमने यह भी सुना है कि वज्जी लोग न बनाये हुए नियम किसी को बताते नहीं हैं तथा बने हुए नियमों का उल्लङ्घन नहीं करते और पुराने बने हुए नियमों के अनुसार ही अपने पारम्परिक दर्मों का पालन करते हैं?"

"हां, भन्ते! मैंने भी ऐसा ही सुना है।"

"तो, आनन्द! जब तक ये वज्जी लोग ऐसा करते रहेंगे, इनकी उन्नति ही होगी, इनकी हानि की कोई सम्भावना नहीं है। (३)

७. "और क्या, आनन्द! तुमने यह भी सुना है—ये वज्जी लोग अपने वृद्धजनों का अतिशय मान, गौरव तथा सत्कार करते हैं तथा उनकी कही हुई बातों को ध्यापूर्वक सुनते हैं?"

"हाँ, भन्ते! सुना तो मैंने भी ऐसा ही है।"

"तो, आनन्द! वज्जी लोग अपने वृद्धजनों का आदर करते रहेंगे तथा उनकी कही हुई बात को मानते रहेंगे, इनकी उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं। (४)

८. ''किन्ति ते, आनन्द, सुतं—'वज्जी या ता कुलित्थियो कुलकुमारियो ता न ओकस्स पसय्ह वासेन्ती' '' ति?

''सुतं मेतं, भन्ते—'वज्जी या ता कुलित्थियो कुलकुमारियो ता न ओकस्स [B.411] पसय्ह वासेन्ती' '' ति।

''यावकीवञ्च, आनन्द, वज्जी या ता कुलित्थियो कुलकुमारियो ता न ओकस्स पसय्ह वासेसन्ति; वुद्धियेव, आनन्द, वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

९. ''किन्ति ते, आनन्द, सुतं—'वज्जी यानि तानि वज्जीनं वज्जि- [N.167] चेतियानि अब्भन्तरानि चेव बाहिरानि च तानि सक्करोन्ति गरुं करोन्ति मानेन्ति पूजेन्ति, तेसं च दिन्नपुब्बं कतपुब्बं धम्मिकं बलिं नो परिहापेन्ती' '' ति?

''सुतं मेतं, भन्ते—'वज्जी यानि तानि वज्जीनं वज्जिचेतियानि अब्भन्तरानि चेव बाहिरानि च तानि सक्करोन्ति गरुं करोन्ति मानेन्ति पूजेन्ति, तेसं च दिन्नपुब्बं कतपुब्बं धम्मिकं बलिं नो परिहापेन्ती' '' ति।

''यावकीवञ्च, आनन्द, वज्जी यानि तानि वज्जीनं वज्जिचेतियानि [R.20] अब्भन्तरानि चेव बाहिरानि च तानि सक्करिस्सन्ति गरुं करिस्सन्ति मानेस्सन्ति पूजेस्सन्ति, तेसं च दिन्नपुब्बं कतपुब्बं धम्मिकं बलिं नो परिहापेस्सन्ति; वुद्धियेव, आनन्द, वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

१०. ''किन्ति ते, आनन्द, सुतं—'वज्जीनं अरहन्तेसु धम्मिका रक्खावरणगुत्ति सुसंविहिता—किन्ति अनागता च अरहन्तो विजितं आगच्छेय्युं, आगता च अरहन्तो विजिते फासुं विहरेय्युं' '' ति?

---

८. ''क्या, आनन्द! तुमने यह भी सुना है कि वज्जी लोगों की स्त्रियाँ एवं उनकी कुमारियाँ हठात् घर से बाहर नहीं निकलतीं?''

''हाँ, भन्ते! मैंने भी ऐसा ही सुना है।...''

''तो, आनन्द! जब तक वज्जी लोगों की स्त्रियाँ तथा कुमारियाँ इसी प्रकार अनुशासन में रहेंगी, वज्जियों की उन्नति ही होती रहेगी, हानि नहीं। (५)

९. ''क्या, आनन्द! तुमने यह भी सुना है कि दो वज्जी लोग अपने आभ्यन्तर एवं बाह्य धार्मिक मन्दिरों चैत्यों का सत्कार, गौरव, मान या पूजा करते हैं तथा उनको पूर्वनिर्धारित बलि (पारम्परिक भेंट, पूजा) चढ़ाते रहते हैं?''

''हाँ, भन्ते! मैंने भी यही सुना है।...''

''तो, आनन्द! जब तक वज्जी लोग ऐसा करते रहेंगे तब तक उनकी उन्नति ही होगी, अवनति नहीं। (६)

१०. ''क्या, आनन्द! तुमने यह भी सुना है कि वज्जी लोग इन धार्मिक बातों का बहुत ध्यान रखते हैं कि उनके प्रदेश में आकर जो अर्हत् जन रहते हैं वे सुखपूर्वक साधना करें तथा जो न आये हों, भविष्य में वे भी आवें तथा यहाँ आकर सुविधूपर्वक साधनारत रहें?''

"सुतं मेतं, भन्ते—'वज्जीनं अरहन्तेसु धम्मिका रक्खावरणगुत्ति सुसंविहिता भविस्सति—किन्ति अनागता च अरहन्तो विजितं आगच्छेय्युं, आगता च अरहन्तो विजिते फासुं विहरेय्युं' '' ति।

"यावकीवञ्च, आनन्द, वज्जीनं अरहन्तेसु धम्मिका रक्खावरणगुत्ति सुसंविहिता भविस्सति—'किन्ति अनागता च अरहन्तो विजितं आगच्छेय्युं, आगता च अरहन्तो विजिते फासुं विहरेय्युं' ति; वुद्धियेव, आनन्द वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानी'' ति।

११. अथ खो भगवा वस्सकारं ब्राह्मणं मागधमहामत्तं आमन्तेसि—''एकमिदाहं, ब्राह्मण, समयं वेसालियं विहरामि सारन्ददे चेतिये। तत्राहं, ब्राह्मण, वज्जीनं इमे सत्त अपरिहानिये धम्मे देसेसिं। यावकीवञ्च, ब्राह्मण, इमे सत्त अपरिहानिया धम्मा वज्जीसु ठस्सन्ति, इमेसु च सत्तसु अपरिहारनियेसु धम्मेसु वज्जी सन्दिस्सिस्सन्ति; वुद्धियेव, ब्राह्मण, वज्जीनं पाटिकङ्खा, नो परिहानी'' ति।

[B.412] १२. ''एकमेकेन पि भो, गोतम, अपरिहानियेन धम्मेन समन्नागतानं वज्जीनं वुद्धियेव पाटिकङ्खा, नो परिहानि; को पन वादो सत्तहि अपरिहानियेहि धम्मेहि! [N.168, R.21] अकरणीया च, भो गोतम, वज्जी रञ्ञा मागधेन अजातसत्तुना वेदेहिपुत्तेन यदिदं युद्धस्स, अञ्ञत्र उपलापनाय, अञ्ञत्र मिथुभेदा। हन्द च दानि मयं, भो गोतम, गच्छाम, बहुकिच्चा मयं बहुकरणीया'' ति।

''यस्सदानि त्वं, ब्राह्मण, कालं मञ्ञसी'' ति।

---

''हाँ, भन्ते! मैंने भी यह सुना है।...''

''तो, आनन्द! जब तक वज्जी ऐसा ध्यान रखेंगे तब तक उनकी उन्नति ही होगी, अवनति नहीं।'' (७)

११. तब भगवान् ने वर्षकार महामात्य से यह कहा—''ब्राह्मण! मैंने ही एक समय वज्जी लोगों को वैशाली के सारन्दद चैत्य में इन सात अपरिहानीय धर्मों की देशना की थी। और ब्राह्मण! जब तक इन सात अपरिहानीय धर्मों का वज्जी लोग पालन करते रहेंगे, इन पर ध्यान देंगे तब तक उनकी उन्नति ही होगी, अवनति नहीं।''

(वर्षकार ब्राह्मण महामात्य ने कहा—)

१२. ''भो गौतम! इनमें एक एक धर्म के पालन से भी उन्नति की ही सम्भावना है, अवनति की नहीं। यदि कोई सातों धर्मों का पालन करता है, तब तो उसका कहना ही क्या! अब राजा मागध अजातशत्रु को वज्जियों से युद्ध की बात ध्यान से निकाल देनी चाहिये, यह तो प्रलापमात्र है, साथ ही मैत्रीभङ्ग भी। अच्छा, भो गौतम! अब मैं चलूँ, मुझे अन्य भी बहुत से कार्य हैं।''

''ब्राह्मण! जैसा तुम उचित समझो।''

तब वह मगधमहामात्य वर्षकार ब्राह्मण भगवान् के भाषण का अभिननन्दन अनुमोदन कर आसन से उठकर चला गया॥ ●

१३. अथ खो वस्सकारो ब्राह्मणो मागधमहामत्तो भगवतो भासितं अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा उट्ठायासना पक्कामी ति॥ ●

**३. पठमसत्तकसुत्तं** : १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा राजगहे विहरति गिज्झकूटे पब्बते। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"सत्त वो, भिक्खवे, अपरिहानिये धम्मे देसेस्सामि। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी" ति। "एवं, भन्ते" ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

२. "कतमे च, भिक्खवे, सत्त अपरिहानिया धम्मा? यावकीवञ्च, भिक्खवे, भिक्खू अभिण्हं सन्निपाता भविस्सन्ति सन्निपातबहुला; वुद्धियेव, भिक्खवे, भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

३. "यावकीवञ्च, भिक्खवे, भिक्खू समग्गा सन्निपतिस्सन्ति, समग्गा वुट्ठहिस्सन्ति, समग्गा सङ्घकरणीयानि करिस्सन्ति; वुद्धियेव, भिक्खवे, भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

४. "यावकीवञ्च, भिक्खवे, भिक्खू अपञ्ञत्तं न पञ्ञापेस्सन्ति, पञ्ञत्तं न समुच्छिन्दिस्सन्ति, यथापञ्ञत्तेसु सिक्खापदेसु समादाय वत्तिस्सन्ति; वुद्धियेव, भिक्खवे, भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

५. "यावकीवञ्च, भिक्खवे, भिक्खू ये ते भिक्खू थेरा रत्तञ्ञू चिरपब्बजिता सङ्घपितरो सङ्घपरिणायका ते सक्करिस्सन्ति गरुं करिस्सन्ति मानेस्सन्ति पूजेस्सन्ति, तेसं च सोतब्बं मञ्ञिस्सन्ति; वुद्धियेव, भिक्खवे, भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

---

**३. प्रथम सप्तक धर्म : : भिक्षुओं के सात अपरिहेय धर्म**

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) राजगृह के गृध्रकूट पर्वत पर साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को यह कहा—"भिक्षुओ! मैं तुमको सात अपरिहानीय धर्म बताऊँगा, उनको तुम ध्यान से सुनो और मन में बैठा लो। मैं बताता हूँ।" अच्छा, भन्ते!" कहकर भिक्षुओं ने भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य की। भगवान् यह बोले—

२. भिक्षुओ! ये सात अपरिहानीय धर्म कौन से हैं? भिक्षुओ! जब तक भिक्षुजन एकता-सम्पन्न रहेंगे तब तक उनकी साधना में सर्वथा उन्नति ही होगी, हानि की सम्भावना नहीं है। (१)

३. "भिक्षुओ! जब तक भिक्षु साथ मिलकर उठेंगे, बैठेंगे (उनमें कोई कलह न होगा) तथा सङ्घ के समस्त कार्यों को सब मिलकर सम्पन्न करेंगे; तब तक भिक्षुओं की उन्नति ही समझो, हानि की सम्भावना नहीं। (२)

४. "जब तक भिक्षुजन तथागत द्वारा अनुपदिष्ट को उपदिष्ट नहीं बतायेंगे, तथा उपदिष्ट का उल्लङ्घन नहीं करेंगे तब तक... सम्भावना नहीं। (३)

५. "भिक्षुओ! जब तक भिक्षु लोग अपने से वृद्ध, दीर्घकालीन, बहुत पहले प्रव्रजित हुए, सङ्घ के पिता के समान, सङ्घ के मार्गदर्शक (परिणायक) स्थविर भिक्षुओं का सत्कार, मान, गौरव तथा पूजा करते रहेंगे तब तक ...पूर्ववत्... हानि नहीं होगी। (४)

[B.413] ६. ''यावकीवञ्च, भिक्खवे, भिक्खू उप्पन्नाय तण्हाय पोनोब्भविकाय न वसं गच्छिस्सन्ति; वुड्डियेव, भिक्खवे, भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

[N.169] ७. ''यावकीवञ्च, भिक्खवे, भिक्खू आरञ्ञकेसु सेनासनेसु सापेक्खा [R.22] भविस्सन्ति; वुड्डियेव, भिक्खवे, भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

८. ''यावकीवञ्च, भिक्खवे, भिक्खू पच्चत्तञ्ञेव सतिं उपट्ठापेस्सन्ति—'किन्ति अनागता च पेसला सब्रह्मचारी आगच्छेय्युं, आगता च पेसला सब्रह्मचारी फासुं विहरेय्युं' ति; वुड्डियेव, भिक्खवे, भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

९. ''यावकीवञ्च, भिक्खवे, इमे सत्त अपरिहानिया धम्मा भिक्खूसु ठस्सन्ति, इमेसु च सत्तसु अपरिहानियेसु धम्मेसु भिक्खू सन्दिस्सिस्सन्ति; वुड्डियेव, भिक्खवे, भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानी'' ति॥ ●

**४. दुतियसत्तकसुत्तं :** १. ''सत्त वो, भिक्खवे, अपटिहानिये धम्मे देसेस्सामि। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ ...पे०... कतमे च, भिक्खवे, सत्त अपरिहानिया धम्मा? यावकीवञ्च, भिक्खवे, भिक्खू न कम्मारामा भविस्सन्ति न कम्मरता न कम्मारामतं अनुयुत्ता; वुड्डियेव, भिक्खवे, भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

२. ''यावकीवञ्च, भिक्खवे, भिक्खू न भस्सारामा भविस्सन्ति ...पे०... न निद्दारामा भविस्सन्ति... न सङ्गणिकारामा भविस्सन्ति... न पापिच्छा भविस्सन्ति न पापिकानं इच्छानं

---

६. ''जब तक, भिक्षुओ! भिक्षुजन पुनः पुनः उत्पन्न होने वाली अपनी तृष्णा के वश में नहीं होंगे तब तक उन भिक्षुओं की उन्नति ही होगी, हानि नहीं। (५)

७. ''जब तक, भिक्षुओ! भिक्षुजन अरण्यवास में अपना मन लगाये रहेंगे (ग्राम निगमों में आसक्ति नहीं रखेंगे) तब तक उनकी उन्नति ही समझो, हानि नहीं। (६)

८. ''जब तक, भिक्षुओ! भिक्षुजन प्रत्येक भिक्षु के लिये अपनी यह स्मृति बनाये रखेंगे—'न आये हुए धर्मप्रवीण हमारे इस विहार आवें, तथा यहाँ आये भिक्षु सुखपूर्वक साधनारत रहें', तब तक उनकी वृद्धि ही है, हानि नहीं—ऐसा समझो। (७)

९. ''भिक्षुओ! जब तक भिक्षुजन इन सात अपरिहाणीय धर्मों से आबद्ध रहेंगे, जब तक इन सात अपरिहाणीय धर्मों के अनुसार चलेंगे तब तक उनकी साधना में उन्नति ही समझो, हानि की कोई सम्भावना नहीं है॥'' ●

**४. द्वितीय सप्तकसूत्र : : भिक्षुओं द्वारा सात अपरिहेय धर्म**

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको सात अपरिहाणीय धर्मों की देशना करूँगा। उसको तुम ध्यान से सुनो और मन में बैठा लो। ...पूर्ववत्... भिक्षुओ! ये सात अपरिहाणीय धर्म कौन से हैं?

''भिक्षुओ! जब तक भिक्षुजन कर्माराम, कर्मरत या कर्मारामता में आसक्त नहीं होंगे तब तक इनकी उन्नति ही होगी, अवनति की सम्भावना नहीं है। (१)

२. भिक्षुओ! जब तक भिक्षु भस्साराम (व्यर्थ बातचीत=बकवाद) नहीं होंगे... निद्राराम नहीं होंगे... सङ्गणिकाराम न होंगे... पापेच्छ न होंगे... पापियों का साथ न करेंगे, पापियों के साथ न

वसं गता ... न पापमित्ता भविस्सन्ति न पापसहाया न पापसम्पवङ्का... न ओरमत्तकेन विसेसाधिगमेन अन्तरावोसानं आपज्जिस्सन्ति; वुद्धियेव, भिक्खवे, भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

३. ''यावकीवञ्च, भिक्खवे, इमे सत्त अपरिहानिया धम्मा भिक्खूसु ठस्सन्ति, इमेसु च सत्तसु अपरिहानियेसु धम्मेसु भिक्खू सन्दिस्सिस्सन्ति; वुद्धियेव, भिक्खवे, भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानी'' ति॥ ●

**५. ततियसत्तकसुत्तं :** १. ''सत्त वो, भिक्खवे, अपरिहानिये धम्मे देसेस्सामि। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ ...पे०... कतमे च, भिक्खवे, सत्त अपरिहानिया [B.414] धम्मा? यावकीवञ्च, भिक्खवे, भिक्खू सद्धा भविस्सन्ति; वुद्धियेव, [R.23,N.170] भिक्खवे, भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

२. ''यावकीवञ्च, भिक्खवे, भिक्खू हिरिमन्तो भविस्सन्ति ...पे०... ओत्तप्पिनो भविस्सन्ति... बहुस्सुता भविस्सन्ति... आरद्धविरिया भविस्सन्ति... सतिमन्तो भविस्सन्ति ...पञ्ञवन्तो भविस्सन्ति; वुद्धियेव, भिक्खवे, भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

३. ''यावकीवञ्च, भिक्खवे, इमे सत्त अपरिहानिया धम्मा भिक्खूसु ठस्सन्ति, इमेसु च सत्तसु अपरिहानियेसु धम्मेसु भिक्खू सन्दिस्सिस्सन्ति; वुद्धियेव, भिक्खवे, भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानी'' ति॥ ●

**६. बोज्झङ्गसुत्तं :** १. ''सत्त वो, भिक्खवे, अपरिहानिये धम्मे देसेस्सामि। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ ...पे०... कतमे च, भिक्खवे, सत्त अपरिहानिया धम्मा?

---

उठेंगे बैठेंगे... बहुत अल्प पाकर उसके मद में उन्मत्त न होंगे तब तक उनकी वृद्धि ही समझें, हानि नहीं होगी। (२-७)

३. ''जब तक, भिक्षुओ! ये सात धर्म भिक्षुओं में रहेंगे, उनका मार्गदर्शन करते रहेंगे, तब तक भिक्षुओं की उन्नति ही समझनी चाहिये, उनकी हानि की सम्भावना कथमपि नहीं है॥'' ●

**५. तृतीय सप्तकसूत्र : : सात अपरिहाणीय धर्म**

१. ''सात अपरिहाणीय धर्मों की देशना करूँगा ...पूर्ववत्... कौन से सात अपरिहाणीय धर्म हैं?

''भिक्षुओ! जब तक भिक्षुजन (रत्नत्रय के प्रति) श्रद्धालु रहेंगे तब तक उनकी उन्नति ही होगी, अवनति नहीं। (१)

२. ''जब तक, भिक्षुओ! भिक्षुजन लज्जालु... पापभीरु... बहुश्रुत... साधना में उद्यमरत रहेंगे... स्मृतिमान् रहेंगे... प्रज्ञावान् रहेंगे, तब तक ...पूर्ववत्...। (२-७)

३. ''भिक्षुओ! जब तक भिक्षुजनों में ये सात अपरिहाणीय धर्म रहेंगे... तब तक भिक्षुओं की वृद्धि की ही सम्भावना करनी चाहिये, हानि की नहीं॥'' ●

**६. बोध्यङ्ग सूत्र : : सात अपरिहाणीय धर्म**

१. ''भिक्षुओ! मैं तुमको सात अपरिहाणीय धर्मों की देशना करूगा।...पूर्ववत्...

यावकीवञ्च, भिक्खवे, भिक्खू सतिसम्बोज्झङ्गं भावेस्सन्ति; वुद्धियेव, भिक्खवे, भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

२. "यावकीवञ्च, भिक्खवे, भिक्खू धम्मविचयसम्बोज्झङ्गं भावेस्सन्ति ...पे०... विरियसम्बोज्झङ्गं भावेस्सन्ति... पीतिसम्बोज्झङ्गं भावेस्सन्ति... पस्सद्धिसम्बोज्झङ्गं भावेस्सन्ति... समाधिसम्बोज्झङ्गं भावेस्सन्ति... उपेक्खासम्बोज्झङ्गं भावेस्सन्ति; वुद्धियेव, भिक्खवे, भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

३. "यावकीवञ्च, भिक्खवे, इमे सत्त अपरिहानिया धम्मा भिक्खूसु ठस्सन्ति, इमेसु च सत्तसु अपरिहानियेसु धम्मेसु भिक्खू सन्दिस्सिस्सन्ति; वुद्धियेव, भिक्खवे, भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानी" ति॥ ●

[R.24] **७. सञ्ञासुत्तं** : १. "सत्त वो, भिक्खवे, अपरिहानिये धम्मे देसेस्सामि। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ ...पे०... कतमे च, भिक्खवे, सत्त अपरिहानिया धम्मा? [B.415] यावकीवञ्च, भिक्खवे, भिक्खू अनिच्चसञ्ञं भावेस्सन्ति; वुद्धियेव, भिक्खवे, भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

[N.171] २. "यावकीवञ्च, भिक्खवे, भिक्खू अनत्तसञ्ञं भावेस्सन्ति ...पे०... असुभसञ्ञं भावेस्सन्ति... आदीनवसञ्ञं... पहानसञ्ञं भावेस्सन्ति... विरागसञ्ञं भावेस्सन्ति... निरोधसञ्ञं भावेस्सन्ति; वुद्धियेव, भिक्खवे, भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानि।

३. "यावकीवञ्च, भिक्खवे, इमे सत्त अपरिहानिया धम्मा भिक्खूसु ठस्सन्ति, इमेसु च सत्तसु अपरिहानियेसु धम्मेसु भिक्खू सन्दिस्सिस्सन्ति; वुद्धियेव, भिक्खवे, भिक्खूनं पाटिकङ्खा, नो परिहानी" ति॥ ●

---

"भिक्षुओ! जब तक भिक्षुओ! भिक्षुजन स्मृतिसम्बोध्यङ्ग की भावना करते रहेंगे... पूर्ववत्...। (१)

२. "भिक्षुओ! जब तक भिक्षुजन धर्मविचयसम्बोध्यङ्ग की... वीर्यसम्बोध्यङ्ग की... प्रीतिसम्बोध्यङ्ग की... प्रश्रब्धिसम्बोध्यङ्ग की... समाधिसम्बोध्यङ्ग की... उपेक्षासम्बोध्यङ्ग की भावना करते रहेंगे तब तक भिक्षुओ! उनकी साधना में वृद्धि की सम्भावना है, हानि की नहीं॥"

३. जब तक भिक्षुओ! ये सात धर्म ...पूर्ववत्..."॥ ●

**७. संज्ञासूत्र : : सात अपरिहाणीय धर्म**

१. "भिक्षुओ! भिक्षुजन ...पूर्ववत्... जब तक अनित्यसंज्ञा की भावना करते रहेंगे... हांनि की नहीं। (१)

२. भिक्षुओ! जब तक भिक्षुजन अनात्मसंज्ञा की... अशुभसंज्ञा की... आदीनवसंज्ञा की... प्रहाणसंज्ञा की... विरागसंज्ञा की... निरोधसंज्ञा भावना करते रहेंगे ...पूर्ववत्... हानि की सम्भावना नहीं। (२-७)

३. "जब तक, भिक्षुओ! ये सात अपरिहाणीय धर्म भिक्षुओं में ...पूर्ववत्... हानि की सम्भावना नहीं।" ●

**८. पठमपरिहानिसुत्तं :** १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"सत्तिमे, भिक्खवे, धम्मा सेखस्स भिक्खुनो परिहानाय संवत्तन्ति। कतमे सत्त? कम्मारामता, भस्सारामता, निद्दारामता, सङ्गणिकारामता, इन्द्रियेसु अगुत्तद्वारता, भोजने अमत्तञ्ञुता, सन्ति खो पन सङ्घे सङ्घकरणीयानि; तत्र सेखो भिक्खु इति पटिसञ्चिक्खति—'सन्ति खो पन सङ्घे थेरा रत्तञ्ञू चिरपब्बजिता भारवाहिनो, न ते तेन पञ्ञायिस्सन्ती' ति अत्तना तेसु योगं आपज्जति। इमे खो, भिक्खवे, सत्त धम्मा सेखस्स भिक्खुनो परिहानाय संवत्तन्ति।

२. "सत्तिमे, भिक्खवे, धम्मा सेखस्स भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ति। कतमे सत्त? न कम्मारामता, न भस्सारामता, न निद्दारामता, न सङ्गणिकारामता, इन्द्रियेसु [R.25] गुत्तद्वारता, भोजने मत्तञ्ञुता, सन्ति खो पन सङ्घे सङ्घकरणीयानि; तत्र सेखो भिक्खु इति पटिसञ्चिक्खति—'सन्ति खो पन सङ्घे थेरा रत्तञ्ञू चिरपब्बजिता भारवाहिनो, ते तेन पञ्ञायिस्सन्ती' ति अत्तना न तेसु योगं आपज्जति। इमे खो, भिक्खवे, सत्त धम्मा सेखस्स भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ती" ति॥ ●

**९. दुतियपरिहानिसुत्तं :** १. "सत्तिमे, भिक्खवे, धम्मा उपासकस्स परिहानाय संवत्तन्ति। कतमे सत्त? भिक्खुदस्सनं हापेति, सद्धम्मस्सवनं पमज्जति, अधिसीले [B.416] न सिक्खति, अप्पसादबहुलो होति, भिक्खूसु थेरेसु चेव नवेसु च मज्झिमेसु च [N.172] उपारम्भचित्तो धम्मं सुणाति रन्धगवेसी, इतो बहिद्धा दक्खिणेय्यं गवेसति, तत्थ च पुब्बकारं करोति। इमे खो, भिक्खवे, सत्त धम्मा उपासकस्स परिहानाय संवत्तन्ति।

---

**८. प्रथम परिहाणिसूत्र : : सात परिहाणीय (त्याज्य) धर्म**

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवन विहार में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय भगवान् ने भिक्षुओं को यह देशना की—"भिक्षुओ! शैक्ष्य भिक्षु के लिये इन सात धर्मों को त्याग देना ही उचित है। कौन से सात धर्म? १. कर्मारामता, २. भस्सारामता, ३. निद्रारामता, ४. सङ्गणिकारामता, ५. इन्द्रियों में असंयम, ६. भोजन की मात्रा का अज्ञान एवं ७. जो सङ्घ के कृत्यों के विषय में वह शैक्ष्य भिक्षु सोचता है—'ये सङ्घ में पुराने दीर्घायु चिरप्रव्रजित जीवन का भार ढोनेवाले स्थविर भिक्षु हैं, वे इन (सङ्घकृत्यों) का क्या करेंगे'—यह सोचकर उन (कृत्यों) से अपना ही सम्बन्ध जोड़ लेता है। भिक्षुओ! ये सात धर्म शैक्ष्य भिक्षु को त्याग देने चाहिये।

२. (परन्तु) "भिक्षुओ! ये सात धर्म उस शैक्ष्य भिक्षु को कभी नहीं त्यागने चाहिये। कौन से सात? १. न कर्मारामता ...पूर्ववत्... इनसे अपना सम्बन्ध नहीं जोड़ना चाहिये। भिक्षुओ! ये सात धर्म उस शैक्ष्य भिक्षु को नहीं त्यागने चाहिये॥" ●

**९. द्वितीय परिहाणिसूत्र : : उपासक के लिये सात धर्म त्याज्य एवं अत्याज्य**

१. "भिक्षुओ! किसी भी उपासक की हानि के लिये ये सात धर्म होते हैं। कौन से सात? (१) जो भिक्षुदर्शन नहीं करता, (२) सद्धर्म श्रवण की उपेक्षा करता है, (३) सदाचार-विषयक

२. "सत्तिमे, भिक्खवे, धम्मा उपासकस्स अपरिहानाय संवत्तन्ति। कतमे सत्त? भिक्खुदस्सनं न हापेति, सद्धम्मस्सवनं नप्पमज्जति, अधिसीले सिक्खति, पसादबहुलो होति, भिक्खूसु थेरेसु चेव नवेसु च मज्झिमेसु च अनुपारम्भचित्तो धम्मं सुणाति न रन्धगवेसी, न इतो बहिद्धा दक्खिणेय्यं गवेसति, इध च पुब्बकारं करोति। इमे खो, भिक्खवे, सत्त धम्मा उपासकस्स अपरिहानाय संवत्तन्ती" ति।

३. इदमवोच भगवा। इदं वत्वान सुगतो अथापरं एतदवोच सत्था—

[R.26] "दस्सनं भावितत्तानं, यो हापेति उपासको।
सवनं च अरियधम्मानं, अधिसीले न सिक्खति॥
"अप्पसादो च भिक्खूसु, भिय्यो भिय्यो पवड्ढति।
उपारम्भकचित्तो च, सद्धम्मं सोतुमिच्छति॥
"इतो बहिद्धा अञ्ञं च, दक्खिणेय्यं गवेसति।
तत्थेव च पुब्बकारं, यो करोति उपासको॥
"एते खो परिहानिये, सत्त धम्मे सुदेसिते।
उपासको सेवमानो, सद्धम्मा परिहायति॥ (क)
"दस्सनं भावितत्तानं, यो न हापेति उपासको।
सवनं च अरियधम्मानं, अधिसीले न सिक्खति॥

---

शिक्षा ग्रहण नहीं करता, (४) उसमें श्रद्धा नहीं रखता, (५) स्थविर मध्यम एवं नव भिक्षुओं द्वारा उपदेश किये जाते समय उस उपदेश में छिद्र (दोष) खोजने के लिये उसको उपालम्भ देता हुआ सुनता है, (६) सङ्घ के बाहर किसी अन्य सम्प्रदाय वाले को दान के लिये खोजता है, (७) तथा उसी के लिये पूर्वकृत्य करता है। भिक्षुओ! उपासक के लिये ये सात धर्म त्याज्य (अग्राह्य) होते हैं।

२. "तथा भिक्षुओ! उपासक के लिये ये सात धर्म अत्याज्य (ग्राह्य) होते हैं। कौन से सात? जो भिक्षुदर्शन मनोयोगपूर्वक करता है, सद्धर्म श्रवण में उपेक्षा नहीं करता है, सदाचार विषयक शिक्षा ग्रहण करता है, उसमें श्रद्धा रखता है, स्थविर, मध्यम एवं नवीन भिक्षुओं का धर्मोपदेश छिद्रान्वेषण हेतु या उपालम्भ देने के लिये नहीं सुनता, सङ्घ के बाहर किसी अन्य सम्प्रदायावलम्बी को दान के लिये नहीं खोजता न उसी के लिये पूर्वकृत्य करता है। भिक्षुओ! ये सात धर्म उपासक को कभी नहीं छोड़ने चाहिये।"

३. भगवान् ने यह देशना की। तथा यह कहकर सुगत ने (गाथा के माध्यम से) यह भी कहा—

(१) "जो उपासक महात्माओं का दर्शन छोड़ देता है, (२) आर्यधर्म का श्रवण त्याग देता है, (३) सदाचार की शिक्षा ग्रहण नहीं करता, (४) भिक्षुओं में श्रद्धा नहीं रखता, (५) सुनकर उपालम्भ देने का मन बनाकर धर्मश्रवण करता है, (६) दानहेतु सङ्घ से बाहर किसी अन्य सम्प्रदायावलम्बी को खोजता है, तथा (७) उसी के लिये दान का पूर्वकृत्य जो उपासक करता है।

"पसादो चस्स भिक्खूसु, भिय्यो भिय्यो पवड्ढति।
अनुपारम्भचित्तो च, सद्धम्मं सोतुमिच्छति॥
"न इतो बहिद्धा अञ्ञं, दक्खिणेय्यं गवेसति।
इधेव च पुब्बकारं, यो करोति उपासको॥
"एते खो अपरिहानिये, सत्त धम्मे सुदेसिते। [B.417]
उपासको सेवमानो, सद्धम्मा न परिहायती" ति॥ (ख) ●

**१०. विपत्तिसुत्तं :** १. सत्तिमा, भिक्खवे, उपासकस्स विपत्तियो [N.173] ...पे०...। सत्तिमा, भिक्खवे, उपासकस्स सम्पदा ...पे०... ॥ ●

**११. पराभवसुत्तं :** १. "सत्तिमे, भिक्खवे उपासकस्स पराभवा ...पे०...। सत्तिमे, भिक्खवे, उपासकस्स सम्भवा। कतमे सत्त? भिक्खुदस्सनं न हापेति, सद्धम्मस्सवनं नप्पमज्जति, अधिसीले सिक्खति, पसादबहुलो होति, भिक्खूसु थेरेसु चेव नवेसु च मज्झिमेसु च अनुपारम्भचित्तो धम्मं सुणाति न रन्धगवेसी, न इतो बहिद्धा दक्खिणेय्यं गवेसति, इध च पुब्बकारं करोति। इमे खो, भिक्खवे, सत्त उपासकस्स सम्भवा ति।

"दस्सनं भावितत्तानं, यो हापेति उपासको। [R.27]
सवनं च अरियधम्मानं, अधिसीले न सिक्खति॥
"अप्पसादो च भिक्खूसु, भिय्यो भिय्यो पवड्ढति।
उपारम्भकचित्तो च, सद्धम्मं सोतुमिच्छति॥
"इतो च बहिद्धा अञ्ञं, दक्खिणेय्यं गवेसति।
तत्थेव च पुब्बकारं, यो करोति उपासको॥

---

इस प्रकार मेरे द्वारा अनुपदिष्ट इन परिहाणीय सात धर्मों पर जो उपासक आचरण करता है वह सद्धर्म से निश्चय ही च्युत हो जायगा। (क)

"(परन्तु) जो महात्मा भिक्षुओं का दर्शन नहीं त्यागता, आर्यधर्मों का श्रवण तथा सदाचार की शिक्षा का त्याग नहीं करता तथा भिक्षुओं में श्रद्धा रखता है, तथा क्रमशः इसको बढ़ाता रहता है, उनसे धर्मश्रवण भी उनको उपालम्भ देने की दृष्टि से न सुनता। तथा सङ्घ के बाहर किसी अन्य धर्मावलम्भी को दान देने हेतु न चुनता है न उसके लिये पूर्वकृत्य (भोजनदान आदि) करता है— इस प्रकार ये सात धर्म उपासकों के लिये मेरे द्वारा उपदिष्ट हैं। जो उपासक इन पर आचरण करेगा वह सद्धर्म से कभी च्युत नहीं होगा॥ (ख) ●

**१०. विपत्तिसूत्र : : उपासक के लिये सात विपत्तियाँ एवं सम्पत्तियाँ**

"भिक्षुओ! उपासक के लिये ये सात विपत्तियाँ कही गयी हैं ...पूर्ववत्...। तथा, भिक्षुओ! उपासक के लिये ये सात सम्पत्तियाँ कही गयी हैं ...पूर्ववत्...।

*[पूर्वसूत्र के समान ही इस सूत्र का भी विस्तार कर लें।]* ●

**११. पराभवसूत्र : : सात पराभव एवं सात सम्भव**

१. "भिक्षुओ! उपासक के लिये ये सात पराभव (कारक धर्म) हैं ...पूर्वसूत्रवत्...।

"एते खो परिहानिये, सत्त धम्मे सुदेसिते।
उपासको सेवमानो, सद्धम्मा परिहायति॥ (क)
"दस्सनं भावितत्तानं, यो न हापेति उपासको।
सवनं च अरियधम्मानं, अधिसीले न सिक्खति॥
"पसादो चस्स भिक्खूसु, भिय्यो भिय्यो पवड्ढति।
अनुपारम्भचित्तो च, सद्धम्मं सोतुमिच्छति॥
[B.418] "न इतो बहिद्धा अञ्ञं, दक्खिणेय्यं गवेसति।
इधेव च पुब्बकारं, यो करोति उपासको॥
"एते खो अपरिहानिये, सत्त धम्मे सुदेसिते।
उपासको सेवमानो, सद्धम्मा न परिहायती" ति॥ (ख)

**वज्जिसत्तकवग्गो ततियो॥**

**तस्सुद्दानं**

[N.174] सारन्ददवस्सकारो च, तिसत्तकानि भिक्खुका।
बोधिसञ्ञा द्वे च हानि, विपत्ति च पराभवो ति॥

## ४. देवतावग्गो

**१. अप्पमादगारवसुत्तं :** १. अथ खो अञ्ञतरा देवता अभिक्कन्ताय रत्तिया
[R.28] अभिक्कन्तवण्णा केवलकप्पं जेतवनं ओभासेत्वा येन भगवा तेनुपसङ्कमि;

---

२. "और, भिक्षुओ! उपासक के लिये ये सात सम्भव (उद्धव=उन्नति) कारक धर्म हैं। कौन से सात? ...पूर्ववत्... ॥

*[पूर्ववर्णित द्वितीय परिहाणिसूत्र के समान ही इस सूत्र का विस्तार कर लें।]*

**वज्जिसप्तकवर्ग सप्तम सम्पन्न॥**

**इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची**

१. सारन्दद सूत्र, २. वर्षकारसूत्र, ३. प्रथम सप्तकसूत्र, ४. द्वितीय सप्तकसूत्र, ५. तृतीय सप्तकसूत्र, ६. बोध्यङ्गसूत्र, ७. संज्ञासूत्र, ८. प्रथमपरिहाणिसूत्र, ९. द्वितीय परिहाणिसूत्र, १०. विपत्तिसूत्र, एवं ११. पराभवसूत्र॥

## ४. देवतावर्ग

**१. अप्रमाद गौरवसूत्र : : सात अपरिहेय धर्म**

१. तब कोई अतिशय तेजस्वी देवता चाँदनी रात में पहले से ही प्रकाशमय जेतवन को कुछ

उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठिता खो सा देवता भगवन्तं एतदवोच—

२. ''सत्तिमे, भन्ते, धम्मा भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ति। कतमे सत्त? सत्थुगारवता, धम्मगारवता, सङ्घगारवता, सिक्खागारवता, समाधिगारवता, अप्पमादगारवता, पटिसन्थारगारवता—इमे खो, भन्ते, सत्त धम्मा भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ती'' ति। इदमवोच सा देवता। समनुञ्ञो सत्था अहोसि। अथ खो सा देवता ''समनुञ्ञो मे सत्था'' ति भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा तत्थेवन्तरधायि।

३. अथ खो भगवा तस्सा रत्तिया अच्चयेन भिक्खू आमन्तेसि—''इमं, भिक्खवे, रत्तिं अञ्ञतरा देवता अभिक्कन्ताय रत्तिया अभिक्कन्तवण्णा केवलकप्पं जेतवनं [B.419] ओभासेत्वा येनाहं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा मं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठिता खो, भिक्खवे, सा देवता मं एतदवोच—'सत्तिमे, भन्ते, धम्मा भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ति। कतमे सत्त? सत्थुगारवता, धम्मगारवता, सङ्घगारवता, सिक्खागारवता, समाधिगारवता, अप्पमादगारवता, पटिसन्थारगारवता—इमे खो, भन्ते, सत्त धम्मा भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ती' ति। इदमवोच, भिक्खवे, सा देवता। इदं वत्वा मं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा तत्थेवन्तरधायी ति॥

''सत्थुगरु धम्मगरु, सङ्घे च तिब्बगारवो। [N.175]
समाधिगरु आतापी, सिक्खाय तिब्बगारवो॥
''अप्पमादगरु भिक्खु, पटिसन्थारगारवो।

---

अधिक प्रकाशित करता हुआ भगवान् के सम्मुख आया। आकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर खड़ा हो गया। एक ओर खड़े हुए उसने भगवान् से यह निवेदन किया—

२. ''भन्ते! किसी भी भिक्षु के लिये ये सात अपरिहाणीय धर्म होते हैं। कौन से सात? (१) शास्ता के प्रति गौरव, (२) धर्म के प्रति..., (३) सङ्घ के प्रति गौरव..., (४) धर्म शिक्षा के प्रति... (५) समाधि के प्रति... (६) अप्रमाद के प्रति... तथा (७) मैत्रीपूर्ण स्वागत के प्रति गौरव—भन्ते! ये सात धर्म किसी भी भिक्षु के लिये अपरिहाणीय होते हैं।'' उस देवता ने यह कहा। शास्ता ने भी देवता के इस कथन का अनुमोदन किया। तब वह देवता, यह जानकर कि भगवान् ने भी मेरी बात का अनुमोदन कर दिया, भगवान् को प्रणाम प्रदक्षिणा कर वहीं अन्तर्हित हो गया।

३. तब भगवान् ने, उस रात्रि के व्यतीत होने पर, भिक्षुओं को यह बताया—''भिक्षुओ! विगत रात्रि में ...पूर्ववत्... वहीं अन्तर्हित हो गया।

''प्रत्येक भिक्षु को शास्ता के प्रति, धर्म के प्रति, सङ्घ के प्रति अतिशय गौरव रखना चाहिये। इसी प्रकार वह समाधि तथा शिक्षाप्राप्ति के प्रति अतिशय गौरव रखता हुआ उनके लिये प्रयत्नशील (अस्थायी) बने। साथ ही वह धर्मसाधना में अप्रमाद तथा आगन्तुकों के मैत्रीपूर्ण स्वागत के प्रति गौरवपूर्ण रहे। ऐसा भिक्षु, इन धर्मों को न त्यागता हुआ, समझ लो कि वह निर्वाण के समीप ही पहुँच गया॥''

●

अभब्बो परिहानाय, निब्बानस्सेव सन्तिके'' ति॥

**२. हिरीगारवसुत्तं :** १. ''इमं, भिक्खवे, रत्तिं अञ्ञतरा देवता अभिक्कन्ताय [R.29] रत्तिया अभिक्कन्तवण्णा केवलकप्पं जेतवनं ओभासेत्वा येनाहं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा मं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठिता खो, भिक्खवे, सा देवता मं एतदवोच—'सत्तिमे, भन्ते, धम्मा भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ति। कतमे सत्त? सत्थुगारवता, धम्मगारवता, सङ्घगारवता, सिक्खागारवता, समाधिगारवता, हिरिगारवता, ओत्तप्पगारवता—इमे खो, भन्ते, सत्त धम्मा भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ती' ति। इदमवोच, भिक्खवे, सा देवता। इदं वत्वा मं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा तत्थेवन्तरधायी ति॥

''सत्थुगरु धम्मगरु, सङ्घे च तिब्बगारवो।
समाधिगरु आतापी, सिक्खाय तिब्बगारवो॥
''हिरि ओत्तप्पसम्पन्नो, सप्पतिस्सो सगारवो।
अभब्बो परिहानाय, निब्बानस्सेव सन्तिके'' ति॥

[B.420] **३. पठमसोवचस्सतासुत्तं :** १. ''इमं, भिक्खवे, रत्तिं अञ्ञतरा देवता ...पे०... मं एतदवोच—'सत्तिमे, भन्ते, धम्मा भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ति। कतमे सत्त? सत्थुगारवता, धम्मगारवता, सङ्घगारवता, सिक्खागारवता, समाधिगारवता, सोवचस्सता, कल्याणमित्तता—इमे खो, भन्ते, सत्त धम्मा भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ती' ति। इदमवोच, भिक्खवे, सा देवता। इदं वत्वा मं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा तत्थेवन्तरधायी ति।

''सत्थुगरु धम्मगरु, सङ्घे च तिब्बगारवो।
समाधिगरु आतापी, सिक्खाय तिब्बगारवो॥
[N.176] ''कल्याणमित्तो सुवचो, सप्पतिस्सो सगारवो।
अभब्बो परिहानाय, निब्बानस्सेव सन्तिके'' ति॥

---

**२. ह्रीगौरवसूत्र : : सात अपरिहाणीय धर्म**

''भिक्षुओ! इस विगत रात्रि में कोई देवता ...पूर्ववत्... 'भन्ते! ये सात धर्म भिक्षु के लिये अपरिहेय होते हैं। कौन से सात? शास्ता के प्रति गौरव ...पूर्ववत्... समाधि के प्रति गौरव तथा लज्जा के प्रति गौरव एवं पापभीरुता के प्रति गौरव ...पूर्ववत्... वहीं अन्तर्हित हो गया।

''प्रत्येक भिक्षु को शास्ता के प्रति... लज्जा एवं पापभीरुता से सम्पन्न रहना चाहिये। ...पूर्ववत्... समझ लो कि वह निर्वाण के समीप ही पहुँच गया॥''

**३. प्रथम सौवचस्यसूत्र : : भिक्षु के लिये सात अपरिहेय धर्म**

१. ''भिक्षुओ! इस विगत रात्रि में कोई देवता ...पूर्ववत्... मुझसे यों बोला—भन्ते! शास्ता के प्रति गौरव ...पूर्ववत्... समाधि के प्रति गौरव... आज्ञाकारिता के प्रति गौरव... तथा कल्याणमित्रता ...पूर्ववत्... वहीं अन्तर्हित हो गया।

''प्रत्येक भिक्षु को शास्ता के प्रति... आज्ञाकारिता के प्रति... कल्याणमित्रता से सम्पन्न रहना चाहिये ...पूर्ववत्... समझ लो कि वह निर्वाण के समीप ही पहुँच गया॥''

**४. दुतियसोवचस्सतासुत्तं :** १. ''इमं, भिक्खवे, रत्तिं अञ्ञतरा देवता [R.30] अभिक्कन्ताय रत्तिया अभिक्कन्तवण्णा ...पे०... 'सत्तिमे, भन्ते, धम्मा भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ति। कतमे सत्त? सत्थुगारवता, धम्मगारवता, सङ्घगारवता, सिक्खागारवता, समाधिगारवता, सोवचस्सता, कल्याणमित्तता—इमे खो, भन्ते, सत्त धम्मा भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ती' ति। इदमवोच, भिक्खवे, सा देवता। इदं वत्वा मं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा तत्थेवन्तरधायी'' ति।

२. एवं वुत्ते आयस्मा सारिपुत्तो भगवन्तं एतदवोच—''इमस्स खो अहं, भन्ते, भगवता सङ्खित्तेन भासितस्स एवं वित्थारेन अत्थं आजानामि। इध, भन्ते, भिक्खु अत्तना च सत्थुगारवो होति, सत्थुगारवताय च वण्णवादी। ये चञ्ञे भिक्खू न सत्थुगारवा ते च सत्थुगारवताय समादपेति। ये चञ्ञे भिक्खू सत्थुगारवा तेसं च वण्णं भणति भूतं तच्छं कालेन। अत्तना च धम्मगारवो होति ...पे०... सङ्घगारबो होति... सिक्खागारवो होति ...समाधिगारवो होति... सुवचो होति... कल्याणमित्तो होति, कल्याणमित्तताय च वण्णवादी। ये चञ्ञे भिक्खू न कल्याणमित्ता ते च कल्याणमित्तताय समादपेति। ये [B.421] चञ्ञे भिक्खू कल्याणमित्ता तेसं च वण्णं भणति भूतं तच्छं कालेना ति। इमस्स खो अहं, भन्ते, भगवता सङ्खित्तेन भासितस्स एवं वित्थारेन अत्थं आजानामी'' ति।

३. ''साधु साधु, सारिपुत्त! साधु खो त्वं, सारिपुत्त, इमस्स मया सङ्खित्तेन भासितस्स एवं वित्थारेन अत्थं आजानासि। इध, सारिपुत्त, भिक्खु अत्तना च सत्थुगारवो होति, सत्थुगारवताय च वण्णवादी। ये चञ्ञे भिक्खू न सत्थुगारवा ते च [R.31] सत्थुगारवताय समादपेति। ये चञ्ञे भिक्खू सत्थुगारवा तेसं च वण्णं भणति भूतं तच्छं

---

**४. द्वितीय सौवचस्यसूत्र : : भिक्षु के लिये सात अपरिहेय धर्म**

१. ''भिक्षुओ! इस विगत रात्रि में कोई देवता ...पूर्ववत्... कल्याणमित्रता के प्रति गौरव ...पूर्ववत्... वहीं अन्तर्हित हो गया।''

२. भगवान् के द्वारा ऐसा कहे जाने पर, आयुष्मान् सारिपुत्र ने भगवान् से यह निवेदन किया—''भन्ते! आपके इस कथन का अभिप्राय मैं इस प्रकार समझा हूँ—''यहाँ, भन्ते! कोई भिक्षु स्वयं शास्ता का गौरव करता है, शास्ता के गौरव की प्रशंसा करता है, जो भिक्षु शास्ता का गौरव नहीं करता उसको वैसा करने हेतु समय-समय पर प्रेरित करता है, तथा जो भिक्षु शास्ता का गौरव करता है उसकी लोगों में यथासमय प्रशंसा करता रहता है। स्वयं धर्म का गौरव करता है... स्वयं सङ्घ का गौरव करता है... स्वयं शिक्षा का गौरव करता है... स्वयं समाधि का गौरव करता है... स्वयं समाधि का गौरव करता है... स्वयं आज्ञाकारी होता है... स्वयं कल्याणमित्र होता है, कल्याणमित्रता की प्रशंसा करता है, जो भिक्षु कल्याणमित्र नहीं होते उनको कल्याणमित्र बनने के लिये प्रेरित करता है, तथा जो कल्याणमित्र होते हैं उनकी समय समय पर लोगों में प्रशंसा करता है'। भन्ते! आपके इस संक्षिप्त कथन का अभिप्राय मैं इस प्रकार विस्तारपूर्वक समझा हूँ।''

३. ''साधु साधु सारिपुत्र! तुम मेरे संक्षिप्त कथन का विस्तृत अर्थ बहुत उचित समझ रहे हो।

[N.177] कालेन। अत्तना च धम्मगारवो होति ...पे०... सङ्घगारवो होति... सिक्खागारवो होति... समाधिगारवो होति... सुवचो होति... कल्याणमित्तो होति, कल्याणमित्तताय च वण्णवादी। ये चञ्ञे भिक्खू न कल्याणमित्ता ते च कल्याणमित्तताय समादपेति। ये चञ्ञे भिक्खू कल्याणमित्ता तेसं च वण्णं भणति भूतं तच्छं कालेना ति। इमस्स खो, सारिपुत्त, मया सङ्खित्तेन भासितस्स एवं वित्थारेन अत्थो दट्ठब्बो'' ति॥ ●

**५. पठममित्तसुत्तं :** १. ''सत्तहि, भिक्खवे, अङ्गेहि समन्नागतो मित्तो सेवितब्बो। कतमेहि सत्तहि? दुद्दं ददाति, दुक्करं करोति, दुक्खमं खमति, गुय्हस्स आवि करोति, गुय्हस्स परिगूहति, आपदासु न जहाति, खीणेन नातिमञ्ञति। इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि अङ्गेहि समन्नागतो मित्तो सेवितब्बो ति।

''दुद्दं ददाति मित्तो, दुक्करं चा पि कुब्बति।
अथोपिस्स दुरुत्तानि, खमति दुक्खमानि च॥
''गुय्हं च तस्स अक्खाति, गुय्हस्स परिगूहति।
आपदासु न जहाति, खीणेन नातिमञ्ञति॥
''यम्हि एतानि ठानानि, संविज्जन्तीध पुग्गले।
सो मित्तो मित्तकामेन, भजितब्बो तथाविधो'' ति॥ ●

[B.422, R.32] **६. दुतियमित्तसुत्तं :** १. ''सत्तहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु मित्तो सेवितब्बो भजितब्बो पयिरुपासितब्बो अपि पनुज्जमानेन पि। कतमेहि सत्तहि? पियो

---

यहाँ, सारिपुत्र! कोई भिक्षु स्वयं शास्ता का गौरव करता है ...पूर्ववत्... जो भिक्षु स्वयं कल्याणमित्र होते हैं वह समाज में उनकी प्रशंसा करता है। सारिपुत्र! मेरे इस संक्षिप्त कथन का यही विस्तृत अर्थ समझना चाहिये॥'' ●

**५. प्रथम मित्रसूत्र : : सात अङ्गों से युक्त को मित्र बनावे**

''भिक्षुओ! सात अङ्गों से युक्त पुरुष का मित्ररूप में साथ करना चाहिये। कौन से सात? (१) जो दुर्लभ का भी दान कर देता है, (२) दुष्कर कार्य भी पूर्ण कर देता है, (३) दुःसह बात को भी सहन कर लेता है, (४) अपनी गोपनीय बात भी बता देता है, (५) दूसरों की गोपनीय बात को छिपाये रखता है, (६) आपत्ति (सङ्कट) में भी साथ नहीं छोड़ता, तथा (७) सम्पत्ति से क्षीण का भी अपमान नहीं करता। भिक्षुओ! इन सात अङ्गों (गुणों) से युक्त का मित्ररूप में साथ करना चाहिये।

''जो दुर्लभ का भी दान कर देता है, दुष्कर कार्य भी पूर्ण कर देता है। तथा जो दुःसह दुर्वचनों को भी क्षमा कर देता है॥

''अपना गोपनीय बता देता है, (परन्तु) दूसरों के गोपनीय की रक्षा करता है। आपत्ति में भी साथ नहीं छोड़ता, सम्पत्ति से क्षीण का अपमान नहीं करता॥

''जिस पुद्गल में ये गुण विद्यमान हों, मित्रता चाहने वाले को ऐसे ही पुरुष से मित्रता करनी चाहिये॥'' ●

च होति मनापो च गरु च भावनीयो च वत्ता च वचनक्खमो च गम्भीरं च कथं कत्ता होति नो च अट्ठाने नियोजेति। इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु मित्तो सेवितब्बो भजितब्बो पयिरुपासितब्बो अपि पनुज्जमानेन पी ति।

''पियो गरु भावनीयो, वत्ता च वचनक्खमो।
गम्भीरं च कथं कत्ता, नो चट्ठाने नियोजको॥
''यम्हि एतानि ठानानि, संविज्जन्तीध पुग्गले। [N.178]
सो मित्तो मित्तकामेन, अत्थकामानुकम्पतो।
अपि नासियमानेन, भजितब्बो तथाविधो'' ति॥ ●

**७. पठमपटिसम्भिदासुत्तं** : १. ''सत्तहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु नचिरस्सेव चतस्सो पटिसम्भिदा सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरेय्य। कतमेहि सत्तहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु 'इदं मे चेतसो लीनत्तं' ति यथाभूतं पजानाति; अज्झत्तं सङ्खित्तं वा चित्तं 'अज्झत्तं मे सङ्खित्तं चित्तं' ति यथाभूतं पजानाति; बहिद्धा विक्खित्तं वा चित्तं 'बहिद्धा मे विक्खित्तं चित्तं' ति यथाभूतं पजानाति; तस्स विदिता वेदना उप्पज्जन्ति, विदिता उपट्ठहन्ति, विदिता अब्भत्थं गच्छन्ति; विदिता सञ्ञा उप्पज्जन्ति, विदिता उपट्ठहन्ति, [R.33] विदिता अब्भत्थं गच्छन्ति; विदिता वितक्का उप्पज्जन्ति, विदिता उपट्ठहन्ति, विदिता

---

**६. द्वितीय मित्रसूत्र : : सात अङ्गों से युक्त को मित्र माने**

१. ''भिक्षुओ! सात अङ्गों से युक्त भिक्षु की मित्र के रूप में सेवा करनी चाहिये, उपासना करनी चाहिये, भले ही वह दूर भगाने का प्रयास करता रहे। किन सात अङ्गों से? (१) जो प्रिय हो, (२) मनोनुकूल हो, (३) अपने से गौरवास्पद हो, (४) पूजनीय हो, (५) हितकर बातों का उपदेश करता हो, (६) गम्भीरवक्ता हो तथा (७) कुपथ में जाने से रोकता हो। भिक्षुओ! इन सात अङ्गों से युक्त भिक्षु की मित्र के रूप में सेवा तथा उपासना करनी चाहिये, भले ही वह दूर भगाता रहे।

''मैत्री के इच्छुक पुरुष को जो प्रिय, गुरु, पूजनीय, वक्ता, व्याख्यानचतुर, गम्भीरोपदेशक तथा कुपथ में प्रवृत्त न होने देनेवाला हो—ऐसे गुण जिस सज्जन में विद्यमान हों, ऐसा ही पुरुष अपने प्रयोजन की पूर्ति तथा हित की दृष्टि से, मित्र बनाना उचित है भले ही वह उपेक्षा दिखाता हुआ उसको दूर ही भगाना चाहता हो॥'' ●

**७. प्रथम प्रतिसंविदासूत्र : : प्रतिसंविदा के लिये सात धर्म**

१. ''भिक्षुओ! सात धर्मों से युक्त भिक्षु शीघ्र ही चारों प्रतिसंविदाओं (मीमांसायुक्त ज्ञान) को स्वयं जानकर, साक्षात् कर प्राप्त कर साधना करे। किन सातों से? (१) यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु 'यह मेरे चित्त का सङ्कोच है'—यह यथार्थतः जानता है; (२) वह अपने अध्यात्म संक्षिप्त चित्त को 'मेरा चित्त अध्यात्म संक्षिप्त है'—ऐसा यथार्थतः जानता है; (३) वह अपने बाह्य विक्षिप्त चित्त को 'मेरा चित्त इस समय बाह्य विषयों में विक्षिप्त है'—यह यथार्थतः जानता है; (४) उसके द्वारा ज्ञात वेदनाएँ उत्पन्न होती है, ज्ञात वेदनाएँ ही ठहरती हैं, तथा ज्ञात वेदनाएँ ही नष्ट होती हैं; (५) उसके

अब्भत्थं गच्छन्ति; सप्पायासप्पायेसु खो पनस्स धम्मेसु हीनप्पणीतेसु कण्हसुक्क-सप्पतिभागेसु निमित्तं सुग्गहितं होति सुमनसिकतं सूपधारितं सुप्पटिविद्धं पञ्ञाय। इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु नचिरस्सेव चतस्सो पटिसम्भिदा सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरेय्या'' ति॥ ●

[B.423] **८. दुतियपटिसम्भिदासुत्तं :** १. ''सत्तहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो सारिपुत्तो चतस्सो पटिसम्भिदा सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। कतमेहि सत्तहि? इध, भिक्खवे, सारिपुत्तो 'इदं मे चेतसो लीनत्तं' ति यथाभूतं पजानाति; अज्झत्तं सङ्खित्तं वा चित्तं 'अज्झत्तं मे सङ्खित्तं चित्तं' ति यथाभूतं पजानाति; बहिद्धा विक्खित्तं वा चित्तं 'बहिद्धा मे विक्खित्तं चित्तं' ति यथाभूतं पजानाति; तस्स विदिता वेदना उप्पज्जन्ति, विदिता उपट्ठहन्ति, विदिता अब्भत्थं गच्छन्ति; विदिता सञ्ञा ...पे०... वितक्का उप्पज्जन्ति, विदिता उपट्ठहन्ति, विदिता अब्भत्थं गच्छन्ति; सप्पायासप्पायेसु खो पनस्स धम्मेसु हीनप्पणीतेसु [N.179] कण्हसुक्कसप्पटिभागेसु निमित्तं सुग्गहितं सुमनसिकतं सूपधारितं सुप्पटिविद्धं पञ्ञाय। इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि धम्मेहि समन्नागतो सारिपुत्तो चतस्सो पटिसम्भिदा सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरती'' ति॥ ●

**९. पठमवससुत्तं :** १. ''सत्तहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु चित्तं वसे [R.34] वत्तेति, नो च भिक्खु चित्तस्स वसेन वत्तति। कतमेहि सत्तहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु समाधिकुसलो होति, समाधिस्स समापत्तिकुसलो होति, समाधिस्स ठितिकुसलो होति, समाधिस्स वुट्ठानकुसलो होति, समाधिस्स कल्याणकुसलो होति, समाधिस्स

---

द्वारा ज्ञात संज्ञाएँ ही उत्पन्न होती हैं... स्थिर रहती हैं... नष्ट होती हैं; (६) उसके द्वारा ज्ञात वितर्क ही उत्पन्न होते हैं... स्थिर रहते हैं; नष्ट होते हैं; (७) वह लाभप्रद या हानिकारक और अच्छे बुरे पापमय पुण्यमय धर्मों को निमित्तों को प्रज्ञा द्वारा मन में भलीभाँति बैठा लेता है, निश्चय कर लेता है। भिक्षुओ! इन सात धर्मों से युक्त भिक्षु शीघ्र ही चारों प्रतिसंविदाओं को स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर साधना करे॥'' ●

**८. द्वितीय प्रतिसंविदासूत्र : : प्रतिसंविदा के लिये सारिपुत्र के सात धर्म**

१. ''भिक्षुओ! सात धर्मों से युक्त सारिपुत्र चार प्रतिसंविदाओं को स्वयं जानकर, साक्षात्कार, प्राप्त कर साधना करता है। कौन से सात धर्मों से?...पूर्ववत्... ॥

*[पूर्वसूत्र के समान ही इस सूत्र का भी, 'भिक्षु' के स्थान पर 'सारिपुत्र' शब्द लगाकर, विस्तार कर लें।]* ●

**९. प्रथम वशसूत्र : : सात धर्मों से भिक्षु का स्वचित्त पर नियन्त्रण**

१. सात धर्मों से युक्त भिक्षु स्वचित्त को अपने वश (नियन्त्रण) में रखता है, वह चित्त के अधीन नहीं हो पाता। किन सात से? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु १. समाधिज्ञान में कुशल होता है; २. समाधि की प्राप्ति में...; ३. समाधि की स्थिति में...; ४. समाधि के व्युत्थान में...; ५. समाधि की

गोचरकुसलो होति, समाधिस्स अभिनीहारकुसलो होति। इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु चित्तं वसे वत्तेति, नो च भिक्खु चित्तस्स वसेन वत्तती'' ति॥ ●

**१०. दुतियवससुत्तं :** १. ''सत्तहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो सारिपुत्तो चित्तं वसे वत्तेति, नो च सारिपुत्तो चित्तस्स वसेन वत्तति। कतमेहि सत्तहि? इध, भिक्खवे, सारिपुत्तो समाधिकुसलो होति, समाधिस्स समापत्तिकुसलो, समाधिस्स ठितिकुसलो, समाधिस्स वुट्ठानकुसलो, समाधिस्स कल्याणकुसलो, समाधिस्स गोचरकुसलो, [B.424] समाधिस्स अभिनीहारकुसलो होति। इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि धम्मेहि समन्नागतो सारिपुत्तो चित्तं वसे वत्तेति, नो च सारिपुत्तो चित्तस्स वसेन वत्तती'' ति॥ ●

**११. पठमनिद्दससुत्तं :** १. अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय सावत्थिं पिण्डाय पाविसि। अथ खो आयस्मतो सारिपुत्तस्स एतदहोसि— ''अतिप्पगो खो ताव सावत्थियं पिण्डाय चरितुं। यन्नूनाहं येन अञ्ञतित्थियानं [R.35] परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमेय्यं'' ति। अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो येन अञ्ञ-तित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा तेहि अञ्ञतित्थियेहि [N.180] परिब्बाजकेहि सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। तेन खो पन समयेन तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं सन्निसिन्नानं सन्निपतितानं अयमन्तराकथा उदपादि—''यो हि कोचि, आवुसो, द्वादसवस्सानि परिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं चरति, 'निद्दसो भिक्खू' ति अलं वचनाया'' ति।

२. अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं भासितं नेव

---

दक्षता में...; ६. समाधि के क्षेत्र में...; ७. समाधि के अभिनीहार (सङ्कल्प=अधिष्ठान) में कुशल होता है। इन सात धर्मों से युक्त ...पूर्ववत्... ॥'' ●

**१०. द्वितीय वशसूत्र : : सात धर्मों से युक्त सारिपुत्त का चित्त**

१. ''भिक्षुओ! सात धर्मों से युक्त सारिपुत्र का चित्त उसके नियन्त्रण (वश) में रहता है। किन सात धर्मों से? ...पूर्वसूत्रवत्... ॥'' ●

*[इस सूत्र का भी 'भिक्षु' के स्थान पर 'सारिपुत्र' शब्द लगाकर पूर्वसूत्र के समान ही विस्तार कर लें।]* ●

**११. प्रथम निर्दशसूत्र : : सात निर्दश वस्तु**

१. तब कभी आयुष्मान् सारिपुत्र प्रात:काल शरीर पर वस्त्र व्यवस्थित कर पात्र चीवर लेकर श्रावस्ती में भिक्षाकर्म हेतु प्रविष्ट हुए। उस समय आयुष्मान् सारिपुत्र को यह विचार हुआ— ''श्रावस्ती में भिक्षा के लिये प्रवेश हेतु बहुत समय शेष है, तो क्यों न मैं इतना समय किन्हीं अन्य तीर्थिक परिव्राजकों के आश्रम में बिता लूँ।'' यह विचार कर वे समीप के किसी आश्रम में चले गये। जाकर वहाँ के आश्रमवासियों से कुशल-मङ्गल प्रश्नानन्तर एक ओर बैठ गये। उस समय उन परिव्राजकों के बीच यह संवाद चल रहा था—''आयुष्मानो! जो कोई साधक बारह वर्ष तक निरन्तर परिशुद्ध धर्मसाधना कर लेता है, उसे 'निर्दश भिक्षु' कहा जा सकता है।''

अभिनन्दि नप्पटिक्कोसि। अनभिनन्दित्वा अप्पटिक्कोसित्वा उट्ठायासना पक्कामि ''भगवतो सन्तिके एतस्स भासितस्स अत्थं आजानिस्सामी'' ति।

३. अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो सावत्थियं पिण्डाय चरित्वा पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा सारिपुत्तो भगवन्तं एतदवोच—

''इधाहं, भन्ते, पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय सावत्थिं पिण्डाय पाविसिं। तस्स मय्हं, भन्ते, एतदहोसि—'अतिप्पगो खो ताव सावत्थियं पिण्डाय चरितुं। यन्नूनाहं येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमेय्यं' ति। अथ ख्वाहं, भन्ते, येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमिं; उपसङ्कमित्वा तेहि अञ्ञतित्थियेहि परिब्बाजकेहि सद्धिं सम्मोदिं। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं [R.36] निसीदिं। तेन खो पन, भन्ते, समयेन तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं सन्निसिन्नानं [B.425] सन्निपतितानं अयमन्तराकथा उदपादि—'यो हि कोचि, आवुसो, द्वादसवस्सानि परिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं चरति, निद्दसो भिक्खू ति अलं वचनाया' ति। अथ ख्वाहं, भन्ते, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं भासितं नेव अभिनन्दिं नप्पटिक्कोसिं। अनभिनन्दित्वा अप्पटिक्कोसित्वा उट्ठायासना पक्कमिं—'भगवतो सन्तिके एतस्स अत्थं आजानिस्सामी' ति। सक्का नु खो, भन्ते, इमस्मिं धम्मविनये केवलं वस्सगणनमत्तेन निद्दसो भिक्खु पञ्ञापेतुं'' ति?

[N.181] ४. ''न खो, सारिपुत्त, सक्का इमस्मिं धम्मविनये केवलं वस्सगणनमत्तेन निद्दसो भिक्खु पञ्ञापेतुं। सत्त खो इमानि, सारिपुत्त, निद्दसवत्थूनि मया सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा पवेदितानि। कतमानि सत्त? इध, सारिपुत्त, भिक्खु सिक्खासमादाने तिब्बच्छन्दो होति आयतिं च सिक्खासमादाने अविगतपेमो, धम्मनिसन्तिया तिब्बच्छन्दो होति आयतिं च

---

२. तब आयुष्मान् सारिपुत्र ने उन परिव्राजकों के इस संवाद का न तो अनुमोदन किया और न विरोध ही। अनुमोदन या विरोध न कर वे आसन से उठकर वहाँ से यह सोचकर चल दिये कि क्यों न इन संवाद का निर्णय भगवान् से सुन कर जान लिया जाय।

३. तब आयुष्मान् सारिपुत्र श्रावस्ती में भिक्षाकर्म कर, भोजन से निवृत्त होकर, भगवान् के सम्मुख आये। आकर उन को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक और बैठे हुए उन ने भगवान् से यह निवेदन किया—

''यहाँ, भन्ते! आज मैं प्रात:काल ...पूर्ववत्... क्यों न इस संवाद का निर्णय भगवान् से सुन कर जान लिया जाय। क्या, भन्ते! हमारे इस धर्मविनय में साधनावर्षों की गणनामात्र से किस भिक्षु को 'निर्दश भिक्षु' कहा जा सकता है?''

४. ''नहीं, सारिपुत्र! इस धर्मविनय में केवल धर्मसाधना के वर्षों की गणनामात्र से किसी भिक्षु को 'निर्दश भिक्षु'—ऐसा नहीं कहा जा सकता। अपितु सारिपुत्र! मैने सात निर्दश वस्तुएँ स्वयं साक्षात् कर उपदिष्ट की हैं। कौन सी सात? (१) यहाँ, सारिपुत्र! कोई भिक्षु भिक्षुनियमों के ग्रहण

धम्मनिसन्तिया अविगतपेमो, इच्छाविनये तिब्बच्छन्दो होति आयतिं च इच्छाविनये अविगतपेमो, पटिसल्लाने तिब्बच्छन्दो होति आयतिं च पटिसल्लाने अविगतपेमो, विरियारम्भे तिब्बच्छन्दो होति आयतिं च विरियारम्भे अविगतपेमो, सतिनेपक्के तिब्बच्छन्दो होति आयतिं च सतिनेपक्के अविगतपेमो, दिट्ठिपटिवेधे तिब्बच्छन्दो होति आयतिं च दिट्ठिपटिवेधे अविगतपेमो। इमानि खो, सारिपुत्त, सत्त निद्दसवत्थूनि मया सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा पवेदितानि। इमेहि खो, सारिपुत्त, सत्तहि निद्दसवत्थूहि समन्नागतो भिक्खु द्वादस चे पि वस्सानि परिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं चरति, 'निद्दसो भिक्खू' ति अलं वचनाय; चतुब्बीसति चे पि वस्सानि परिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं चरति, 'निद्दसो भिक्खू' ति अलं वचनाय; छत्तिंसति चे पि वस्सानि परिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं चरति, 'निद्दसो [R.37] भिक्खू' ति अलं वचनाय, अट्ठचत्तारीसं चे पि वस्सानि परिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं चरति, 'निद्दसो भिक्खू' ति अलं वचनाया'' ति॥

**१२. दुतियनिद्दससुत्तं :** १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा कोसम्बियं विहरति घोसितारामे। अथ खो आयस्मा आनन्दो पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय [B.426] कोसम्बिं पिण्डाय पाविसि। अथ खो आयस्मतो आनन्दस्स एतदहोसि—''अतिप्पगो खो ताव कोसम्बियं पिण्डाय चरितुं। यन्नूनाहं येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमेय्यं'' ति। अथ खो आयस्मा आनन्दो येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा तेहि अञ्ञतित्थियेहि परिब्बाजकेहि सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि।

२. तेन खो पन समयेन तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं सन्निसिन्नानं [N.182] सन्निपतितानं अयमन्तराकथा उदपादि—''यो हि कोचि, आवुसो, द्वादस वस्सानि परिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं चरति, 'निद्दसो भिक्खू' ति अलं वचनाया'' ति।

---

एवं पालन में अतिशय अनुराग वाला होता है, भविष्य में भी उन नियमों के ग्रहण एवं पालन में अनुरागरहित नहीं होता। ...पूर्ववत्[१]... सारिपुत्र इन सात निर्दशवस्तुओं को, मैंने स्वयं जानकर साक्षात् कर, उपदिष्ट किया है। इन सात निर्दश वस्तुओं से सम्पन्न भिक्षु बारह वर्ष भी निरन्तर साधना करे तो वह निर्दश कहला सकता है, चौबीस वर्ष... छत्तीस वर्ष... अड़तालीस वर्ष तक निरन्तर धर्मसाधना करे तो भी 'निर्दश भिक्षु' कहला सकता है॥'' ●

**१२. द्वितीय निर्दशसूत्र : : सात निर्दश वस्तुएँ**

१. ऐसा मैने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) कौशाम्बी के घोषिताराम में साधना हेतु विराजमान थे। उस समय आयुष्मान् आनन्द प्रातःकाल... पूर्वसूत्रवत्... अड़तालीस वर्ष तक निरन्तर धर्मसाधना करे तो भी 'निर्दश भिक्षु' कहला सकता है॥ ●

---

१. पीछे इसी निपात के **अनुशयवर्ग** में व्याख्यात दशम **निर्दशसूत्र** का ही अविकल विस्तार कर ले। साथ ही **दीघनिकाय** (बौ०भा०ग्र०मा० ३६), तृतीय भाग, पृ० ८०० की टिप्पणी भी देखें।—सं०।

३. अथ खो आयस्मा आनन्दो तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं भासितं नेव अभिनन्दि नप्पटिक्कोसि। अनभिनन्दित्वा अप्पटिक्कोसित्वा उट्ठायासना पक्कामि—''भगवतो सन्तिके एतस्स भासितस्स अत्थं आजानिस्सामी'' ति। अथ खो आयस्मा आनन्दो कोसम्बियं पिण्डाय चरित्वा पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; [R.38] उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—

''इधाहं, भन्ते, पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय कोसम्बिं पिण्डाय पाविसिं। तस्स मय्हं, भन्ते, एतदहोसि—'अतिप्पगो खो ताव कोसम्बियं पिण्डाय चरितुं। यन्नूनाहं येन अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं आरामो तेनुपसङ्कमेय्यं' ति ...पे०... तेहि सद्धिं सम्मोदिं। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदिं। तेन खो पन, भन्ते, समयेन तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं सन्निसिन्नानं सन्निपतितानं अयमन्तराकथा उदपादि—'यो हि कोचि, आवुसो, द्वादसवस्सानि परिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं चरति, निद्दसो भिक्खू ति अलं वचनाया' ति। अथ ख्वाहं, भन्ते, तेसं अञ्ञतित्थियानं [B.427] परिब्बाजकानं भासितं नेव अभिनन्दिं नप्पटिक्कोसिं। अनभिनन्दित्वा, अप्पटिक्कोसित्वा उट्ठायासना पक्कमिं—'भगवतो सन्तिके एतस्स भासितस्स अत्थं आजानिस्सामी' ति। सक्का नु खो, भन्ते, इमस्मिं धम्मविनये केवलं वस्सगणनमत्तेन निद्दसो भिक्खु पञ्ञापेतुं'' ति?

४. ''न खो, आनन्द, सक्का इमस्मिं धम्मविनये केवलं वस्सगणनमत्तेन निद्दसो भिक्खु पञ्ञापेतुं। सत्त खो इमानि, आनन्द, निद्दसवत्थूनि मया सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा पवेदितानि। कतमानि सत्त? इधानन्द, भिक्खु, सद्धो होति, हिरीमा होति, ओत्तप्पी होति, [R.39] बहुस्सुतो होति, आरद्धविरियो होति, सतिमा होति, पञ्ञवा होति। इमानि खो, आनन्द, सत्त निद्दसवत्थूनि मया सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा पवेदितानि। इमेहि खो, आनन्द, [N.183] सत्तहि निद्दसवत्थूहि समन्नागतो भिक्खु द्वादस चे पि वस्सानि परिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं चरति, 'निद्दसो भिक्खू' ति अलं वचनाय; चतुब्बीसति चे पि वस्सानि परिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं चरति, 'निद्दसो भिक्खू' ति अलं वचनाय; छत्तिंसति चे पि वस्सानि परिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं चरति, 'निद्दसो भिक्खू' ति अलं वचनाय, अट्ठचत्तारीसं चे पि वस्सानि परिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं चरति, 'निद्दसो भिक्खू' ति अलं वचनाया'' ति॥ ●

देवतावग्गो चतुत्थो॥

---

[अनुपद में वर्णित प्रथम निर्दशसूत्र के समान ही, 'सारिपुत्र' के स्थान पर 'आनन्द' शब्द लगाकर इस सूत्र का अविकल विस्तार कर लें।]

देवतावर्ग चतुर्थ सम्पन्न॥

**तस्सुद्दानं**

अप्पमादो हिरी चेव, द्वे सुवचा दुवे मित्ता।
द्वे पटिसम्भिदा द्वे वसा, दुवे निद्दसवत्थुना ति॥

## ५. महायञ्ञवग्गो

**१. सत्तविञ्ञाणट्ठितिसुत्तं :** १. "सत्तिमा, भिक्खवे, विञ्ञाणट्ठितियो। कतमा सत्त? सन्ति, भिक्खवे, सत्ता नानत्तकाया नानत्तसञ्ञिनो, सेय्यथापि मनुस्सा एकच्चे च देवा एकच्चे च विनिपातिका। अयं पठमा विञ्ञाणट्ठिति।

२. "सन्ति, भिक्खवे, सत्ता नानत्तकाया एकत्तसञ्ञिनो, सेय्यथापि देवा [R.40] ब्रह्मकायिका पठमाभिनिब्बत्ता। अयं दुतिया विञ्ञाणट्ठिति।

३. "सन्ति, भिक्खवे सत्ता एकत्तकाया नानत्तसञ्ञिनो, सेय्यथापि देवा [B.428] आभस्सरा। अयं ततिया विञ्ञाणट्ठिति।

४. "सन्ति, भिक्खवे, सत्ता एकत्तकाया एकत्तसञ्ञिनो, सेय्यथापि देवा सुभकिण्हा। अयं चतुत्थी विञ्ञाणट्ठिति।

---

**इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची**

१. अप्रमादगौरवसूत्र, २. ह्रीगौरवसूत्र, ३. प्रथम सौवचस्यसूत्र, ४. द्वितीय सौवचस्यसूत्र, ५. प्रथम मित्रसूत्र, ६. द्वितीय मित्रसूत्र ७. प्रथम प्रतिसंविदासूत्र, ८. द्वितीय प्रतिसंविदासूत्र, ९. प्रथम वशसूत्र, १०. द्वितीय वशसूत्र, ११. प्रथम निर्दशसूत्र, एवं १२. द्वितीय निर्दशसूत्र॥

## ५. महायज्ञवर्ग

**१. सप्तविज्ञानस्थितिसूत्र : : सात विज्ञानस्थितियाँ**

१. "भिक्षुओ! ये सात विज्ञानस्थितियाँ हैं? कौन सी सात? भिक्षुओ! कोई प्राणी नाना शरीर वाले, नाना संज्ञा (नाम) वाले होते हैं; जैसे—मनुष्य, कोई कोई देव या कोई कोई वैनिपातिक (प्रेतयोनिवाले)—यह प्रथम विज्ञानस्थिति है। (१)

२. "(परन्तु) भिक्षुओ! कोई कोई प्राणी नाना शरीर वाले, किन्तु एक ही नाम (संज्ञा) वाले होते हैं; जैसे—प्रथम उत्पन्न ब्रह्मकायिक देवता—यह द्वितीय विज्ञानस्थिति है। (२)

३. "भिक्षुओ! कोई कोई प्राणी एक ही शरीर वाले, किन्तु अनेक नाम वाले होते हैं, जैसे—आभास्वर देवता—यह तृतीय विज्ञानस्थिति है। (३)

४. "भिक्षुओ! कोई कोई प्राणी एक ही शरीर वाले तथा एक ही संज्ञा वाले भी होते हैं; जैसे—शुभकृत्स्न देवता—यह चतुर्थ विज्ञानस्थिति है। (४)

५. ''सन्ति, भिक्खवे, सत्ता सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा पटिघसञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा 'अनन्तो आकासो' ति आकासानञ्चायतनूपगा। अयं पञ्चमी विञ्ञाणट्ठिति।

[N.184] ६. ''सन्ति, भिक्खवे, सत्ता सब्बसो आकासानञ्चायतनं समतिक्कम्म 'अनन्तं विञ्ञाणं' ति विञ्ञाणञ्चायतनूपगा। अयं छट्ठी विञ्ञाणट्ठिति।

७. ''सन्ति, भिक्खवे, सत्ता सब्बसो विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम 'नत्थि किञ्ची' ति आकिञ्चञ्ञायतनूपगा। अयं सत्तमी विञ्ञाणट्ठिति।

इमा खो, भिक्खवे, सत्त विञ्ञाणट्ठितियो'' ति॥ ●

**२. समाधिपरिक्खारसुत्तं :** १. ''सत्तिमे, भिक्खवे, समाधिपरिक्खारा। कतमे सत्त? सम्मादिट्ठि, सम्मासङ्कप्पो, सम्मावाचा, सम्माकम्मन्तो, सम्माआजीवो, सम्मा-वायामो, सम्मासति। या खो, भिक्खवे, इमेहि सत्तहङ्गेहि चित्तस्सेकग्गता परिक्खता, अयं वुच्चति, भिक्खवे, अरियो सम्मासमाधि सउपनिसो इति पि सपरिक्खारो इति पी'' ति॥ ●

[R.41] **३. पठमअग्गिसुत्तं :** १. ''सत्तिमे, भिक्खवे, अग्गी। कतमे सत्त? रागग्गि, दोसग्गि, मोहग्गि, आहुनेय्यग्गि, गहपतग्गि, दक्खिणेय्यग्गि, कट्ठग्गि—इमे खो, भिक्खवे, सत्त अग्गी'' ति॥ ●

**४. दुतियअग्गिसुत्तं :** १. तेन खो पन समयेन उग्गतसरीरस्स ब्राह्मणस्स

---

५. ''भिक्षुओ! कोई कोई प्राणी रूप एवं संज्ञा—दोनों का ही अतिक्रमण कर, प्रतिघसंज्ञाओं के अस्त (नष्ट) हो जाने से, नानात्व संज्ञा को मन में न करने से 'आकाश अनन्त है'—इस आकाशान्त्यायतन को प्राप्त होता है—यह पञ्चम विज्ञानस्थिति है। (५)

६. (पुनः) भिक्षुओ! कोई प्राणी आकाशानन्त्यायतन से भी आगे बढ़कर 'विज्ञान अनन्त है'—इस विज्ञानान्त्यायतन को प्राप्त होता है—यह षष्ठ विज्ञानस्थिति है। (६)

७. ''भिक्षुओ! कोई प्राणी विज्ञानानन्त्यायतन स्थिति को भी पीछे छोड़कर 'कुछ नहीं है'—इस आकिञ्चन्यायतन को प्राप्त होता है—यह सप्तम विज्ञानस्थिति है। (७)

''भिक्षुओ! ये सात विज्ञानस्थितियाँ है॥'' ●

**२. समाधिपरिष्कारसूत्र : : सात समाधिपरिष्कार**

१. ''भिक्षुओ! ये सात धर्म (साधन) समाधि में आवश्यक होते हैं। कौन से सात? १. सम्यग्दृष्टि, २. सम्यक्सङ्कल्प, ३. सम्यग्वाक्, ४. सम्यक्कर्मान्त, ५. सम्यगाजीव, ६. सम्यग्व्यायाम (सम्यक् प्रयत्न), एवं ७. सम्यक्स्मृति। भिक्षुओ! इन सात अङ्गों से चित्त की जो एकाग्रता तथा नियन्त्रण होता है, यही भिक्षुओ! उत्तम समाधि साधन तथा उपकरण सहित कहलाती है।'' ●

**३. प्रथम अग्निसूत्र : : सप्तविध अग्नि**

१. ''भिक्षुओ! ये सात अग्नि हैं। कौन सी सात? १. रागाग्नि, २. द्वेषाग्नि, ३. मोहाग्नि, ४. आहवनीयाग्नि, ५. गार्हपत्याग्नि, ६. दाक्षिणेयाग्नि एवं ७. काष्ठाग्नि। भिक्षुओ! लोक में यह सप्तविध अग्नि है॥'' ●

महायञ्ञो उपक्खटो होति। पञ्च उसभसतानि थूणूपनीतानि होन्ति यञ्ञत्थाय, पञ्च वच्छतरसतानि थूणूपनीतानि होन्ति यञ्ञत्थाय, पञ्च वच्छतरिसतानि थूणूपनीतानि [B.429] होन्ति यञ्ञत्थाय, पञ्च अजसतानि थूणूपनीतानि होन्ति यञ्ञत्थाय, पञ्च उरब्भसतानि थूणूपनीतानि होन्ति यञ्ञत्थाय। अथ खो उग्गतसरीरो ब्राह्मणो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो उग्गतसरीरो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—

२. ''सुतं मेतं, भो गोतम, अग्गिस्स आदानं यूपस्स उत्सापनं महप्फलं [N.185] होति महानिसंसं'' ति।

''मया पि खो एतं, ब्राह्मण, सुतं अग्गिस्स आदानं यूपस्स उस्सापनं महप्फलं होति महानिसंसं'' ति। दुतियं पि खो उग्गतसरीरो ब्राह्मणो ...पे०... ततियं पि खो उग्गतसरीरो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—''सुतं मेतं, भो गोतम, अग्गिस्स आदानं यूपस्स उस्सापनं महप्फलं होति महानिसंसं'' ति।

''मया पि खो एतं, ब्राह्मण, सुतं अग्गिस्स आदानं यूपस्स उस्सापनं महप्फलं होति महानिसंसं'' ति।

''तयिदं, भो गोतम, समेति भोतो चेव गोतमस्स अम्हाकं च, यदिदं सब्बेन [R.42] सब्बं''।

३. एवं वुत्ते आयस्मा आनन्दो उग्गतसरीरं ब्राह्मणं एतदवोच—''न खो, ब्राह्मण,

---

**४. द्वितीय अग्निसूत्र** : :

१. उस समय उद्गतशरीर ब्राह्मण के घर किसी महायज्ञ का उपक्रम होने वाला था। उस यज्ञ की पूर्ति के लिये पाँच सौ बैल खूँटों से बँधे हुए थे, पाँच सौ बछड़े... पाँच सौ बछड़ियाँ... पाँच सौ बकरा बकरियाँ तथा पाँच सौ भेड़ा तथा भेड़ खूँटों से बँधे हुए थे। तब वह उद्गतशरीर ब्राह्मण, जहाँ भगवान् (बुद्ध) विराजमान थे वहाँ पहुँचा। वहाँ पहुँचकर भगवान् से कुशल मङ्गल पूछकर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठ हुए उस उद्गतशरीर ब्राह्मण ने भगवान् से यह निवेदन किया—

२. ''भो गौतम! मैने सुना है—'अग्नि का आधान एवं यज्ञस्तम्भ का गाड़ना अतिशय फलदायक होता है'।''

''ब्राह्मण! मैने भी सुना है—'अग्नि का आधान एवं यज्ञस्तम्भ का गाड़ना अतिशय फलदायक होता है'।''

दूसरी बार भी उद्गतशरीर ब्राह्मण... तीसरी बार भी उद्गतशरीर ब्राह्मण ने भगवान् से यह कहा—

''भो गौतम! मैने सुना है—'अग्नि का आधान ...पूर्ववत्... फलदायक होता है'।''

''हाँ ब्राह्मण! मैने भी सुना है—अग्नि का आधान ...पूर्ववत्... फलदायक होता है।''

''तब तो, भो गौतम! आप और हम—दोनों ही इस बात पर सर्वथा सहमत हैं?''

३. ब्राह्मण द्वारा ऐसा कहे जाने पर, आयुष्मान् आनन्द ने उद्गतशरीर ब्राह्मण से यह कहा—

तथागता एवं पुच्छितब्बा—'सुतं मेतं, भो गोतम, अग्गिस्स आदानं यूपस्स उस्सापनं महप्फलं होति महानिसंसं' ति। एवं खो, ब्राह्मण, तथागता पुच्छितब्बा—'अहं हि, भन्ते, अग्गिं आदातुकामो यूपं उस्सापेतुकामो। ओवदतु मं, भन्ते, भगवा। अनुसासतु मं, भन्ते, भगवा यं मम अस्स दीघरत्तं हिताय सुखाया' '' ति।

४. अथ खो उग्गतसरीरो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—''अहं हि, भो गोतम, अग्गिं आदातुकामो यूपं उस्सापेतुकामो। ओवदतु मं भवं गोतमो। अनुसासतु मं भवं गोतमो यं मम अस्स दीघरत्तं हिताय सुखाया'' ति।

५. ''अग्गिं, ब्राह्मण, आदेन्तो यूपं उस्सापेन्तो पुब्बेव यञ्ञा तीणि सत्थानि उस्सापेति अकुसलानि दुक्खुद्रयानि दुक्खविपाकानि। कतमानि तीणि? कायसत्थं, [B.430] वचीसत्थं, मनोसत्थं। अग्गिं, ब्राह्मण, आदेन्तो यूपं उस्सापेन्तो पुब्बेव यञ्ञा एवं चित्तं उप्पादेसि—'एत्तका उसभा हञ्ञन्तु यञ्ञत्थाय, एत्तका वच्छतरा हञ्ञन्तु यञ्ञत्थाय, एत्तका वच्छतरियो हञ्ञन्तु यञ्ञत्थाय, एत्तका अजा हञ्ञन्तु यञ्ञत्थाय, एत्तका उरब्भा [N.186] हञ्ञन्तु यञ्ञत्थाया' ति। सो 'पुञ्ञं करोमी' ति अपुञ्ञं करोति, 'कुसलं करोमी' [R.43] ति अकुसलं करोति, 'सुगतिया मग्गं परियेसामी' ति दुग्गतिया मग्गं परियेसति। अग्गिं, ब्राह्मण, आदेन्तो यूपं उस्सापेन्तो पुब्बेव यञ्ञा इदं पठमं मनोसत्थं उस्सापेति अकुसलं दुक्खुद्रयं दुक्खविपाकं।

६. ''पुन च परं, ब्राह्मण, अग्गिं आदेन्तो यूपं उस्सापेन्तो पुब्बेव यञ्ञा एवं वाचं

---

''ब्राह्मण! तथागत से प्रश्न करने की यह विधि नहीं है—'मैने सुना है, भो गौतम! कि अग्नि का आधान ...पूर्ववत्... फलदायक होता है', अपितु यही प्रश्न इस प्रकार करना चाहिये—'भन्ते! मैं अग्नि का आधान करना चाहता हूँ, यज्ञस्तम्भ का उत्सारण करना चाहता हूँ। मुझे आप भगवान् ऐसा उचित परामर्श दें जो मेरे लिये चिरकाल तक हितकर या सुखप्रद हो।'''

४. तब उद्गतशरीर ब्राह्मण ने भगवान् से यह निवेदन किया—''भो गौतम! मैं यज्ञ करना चाहता हूँ, यज्ञस्तम्भ का... पूर्ववत्... सुखप्रद हो!''

५. ''ब्राह्मण! अग्नि का आधान (यज्ञ) करने वाला, यज्ञस्तम्भ का उत्सारण करने वाला यज्ञ आरम्भ करने से पूर्व ही तीन शस्त्र उठा लेता है—१. कायशस्त्र, २. वाक्शस्त्र एवं मन:शस्त्र, जो कि पापमय हैं, दु:खवर्धक हैं तथा दु:खमय फल देने वाले हैं। ब्राह्मण! यज्ञारम्भक पुरुष सर्वप्रथम अपने मन में यह सोचता है—'इतने वृषभ (बैल) यज्ञ में बलि चढाये जायँ, इतने बछड़े... इतनी बछड़ियाँ... इतने बकरे... इतनी भेड़ यज्ञ में बलि चढायी जायँ।' वह 'पुण्य करूँगा'—यह सोचता हुआ वस्तुत: अपुण्य ही करता है, 'कुशल कर्म करूँगा'—यह सोचता हुआ भी अकुशल कर्म ही करता है, 'मेरी सद्गति होगी'—यह सोचता हुआ भी अपनी असद्गति के साधन ही एकत्र करता है। इस प्रकार ब्राह्मण! वह यज्ञारम्भक पुरुष, यज्ञ आरम्भ करने से पूर्व ही, अपना ऐसा मन:शस्त्र उठा लेता है जो उसके लिये पापमय, दु:खवर्धक तथा दु:खमय फल देने वाला होता है। (१)

६. ''पुन:, ब्राह्मण! अग्नि का आधान करने वाला, यज्ञस्तम्भ का उत्सारक, यज्ञ आरम्भ

भासति—'एत्तका उसभा हञ्ञन्तु यञ्ञत्थाय, एत्तका वच्छतरा हञ्ञन्तु यञ्ञत्थाय, एत्तका वच्छतरियो हञ्ञन्तु यञ्ञत्थाय, एत्तका अजा हञ्ञन्तु यञ्ञत्थाय, एत्तका उरब्भा हञ्ञन्तु यञ्ञत्थाया' ति। सो 'पुञ्ञं करोमी' ति अपुञ्ञं करोति, 'कुसलं करोमी' ति अकुसलं करोति, 'सुगतिया मग्गं परियेसामी' ति दुग्गतिया मग्गं परियेसति। अग्गिं, ब्राह्मण, आदेन्तो यूपं उस्सापेन्तो पुब्बेव यञ्ञा इदं दुतियं वचीसत्थं उस्सापेति अकुसलं दुक्खुद्रयं दुक्खविपाकं।

७. ''पुन च परं, ब्राह्मण, अग्गिं आदेन्तो यूपं उस्सापेन्तो पुब्बेव यञ्ञा सयं पठमं समारम्भति उसभा हन्तुं यञ्ञत्थाय, सयं पठमं समारम्भति वच्छतरा हन्तुं यञ्ञत्थाय, सयं पठमं समारम्भति वच्छतरियो हन्तुं यञ्ञत्थाय, सयं पठमं समारम्भति अजा हन्तुं यञ्ञत्थाय, सयं पठमं समारम्भति उरब्भा हन्तुं यञ्ञत्थाय। सो 'पुञ्ञं करोमी' ति अपुञ्ञं करोति, 'कुसलं करोमी' ति अकुसलं करोति, 'सुगतिया मग्गं परियेसामी' ति दुग्गतिया मग्गं परियेसति। अग्गिं, ब्राह्मण, आदेन्तो यूपं उस्सापेन्तो पुब्बेव यञ्ञा इदं ततियं कायसत्थं उस्सापेति अकुसलं दुक्खुद्रयं दुक्खविपाकं। अग्गिं, ब्राह्मण, आदेन्तो यूपं उस्सापेन्तो पुब्बेव यञ्ञा इमानि तीणि सत्थानि उस्सापेति अकुसलानि दुक्खुद्रयानि दुक्खविपाकानि।

८. ''तयोमे, ब्राह्मण, अग्गी पहातब्बा परिवज्जेतब्बा, न सेवितब्बा। [B.431,R.44] कतमे तयो? रागग्गि, दोसग्गि, मोहग्गि।

९. ''कस्मा चायं, ब्राह्मण, रागग्गि पहातब्बो परिवज्जेतब्बो, न सेवितब्बो? रत्तो

---

करने से पूर्व अपनी वाणी से यह बोलता है—'इतने वृषभ... इतने बछड़े... इतनी बछड़ियाँ... इतने बकरे... इतनी भेड़ें यज्ञ में बलि चढायी जायँ। यह बोलता हुआ वह पुण्य के बदले अपुण्य, कुशल के बदले अकुशल तथा सद्गति के बदले में असद्गति ही अपने शिर ले लेता है। इस प्रकार, ब्राह्मण! वह यज्ञारम्भक यज्ञ प्रारम्भ करने से पूर्व ही यह द्वितीय वाक्शस्त्र उठा लेता है जो कि उसके लिये पापमय, दुःखवर्धक तथा दुःखमय फल देने वाला होता है। (२)

७. ''पुनः, ब्राह्मण! अग्नि का आधान करने वाला, यज्ञस्तम्भ का उत्सारक यज्ञ आरम्भ करने से पूर्व यह कायशस्त्र उठा लेता है और यज्ञ के लिये पशुबलि चढाते समय स्वयं सर्वप्रथम वृषभों... बछड़ों... बछड़ियों... बकरों... भेड़ों का वध करना आरम्भ करता है। इस प्रकार वह पुण्य करना चाहता हुआ अपुण्य कर बैठता है, कुशल करना चाहता हुआ अकुशल एवं सुगति चाहता हुआ असद्गति की ओर चलने लगता है। इस तरह, ब्राह्मण! वह यज्ञारम्भक, यज्ञ आरम्भ करने से पूर्व ही यह तृतीय कायशस्त्र उठा लेता है जो अकुशलोत्पादक, दुःखमय एवं दुःखफल देने वाला है। इस प्रकार ब्राह्मण! वह यज्ञारम्भक, यज्ञ आरम्भ करने से पूर्व ही, अपने हाथ में ये उपर्युक्त तीन शस्त्र ग्रहण कर लेता है, जो कि अकुशल, दुःखमय एवं दुःखफलप्रद हैं। (३)

८. ''ब्राह्मण! इन तीन अग्नियों का त्याग कर देना चाहिये, दूर हटा देना चाहिये। कौन सी तीन? (१) रागाग्नि, (२) द्वेषाग्नि एवं (३) मोहाग्नि।

९. ''ब्राह्मण! यह रागाग्नि क्या है, जिसका त्याग एवं परिवर्तन कर देना चाहिये? ब्राह्मण!

खो, ब्राह्मण, रागेन अभिभूतो परियादिन्नचित्तो कायेन दुच्चरितं चरति, वाचाय दुच्चरितं चरति, मनसा दुच्चरितं चरति! सो कायेन दुच्चरितं चरित्वा, वाचाय दुच्चरितं चरित्वा, मनसा [N.187] दुच्चरितं चरित्वा कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति। तस्मायं रागग्गि पहातब्बो परिवज्जेतब्बो, न सेवितब्बो।

१०. ''कस्मा चायं, ब्राह्मण, दोसग्गि पहातब्बो परिवज्जेतब्बो, न सेवितब्बो? दुट्ठो खो, ब्राह्मण, दोसेन अभिभूतो परियादिन्नचित्तो कायेन दुच्चरितं चरति, वाचाय दुच्चरितं चरति, मनसा दुच्चरितं चरति। सो कायेन दुच्चरितं चरित्वा, वाचाय दुच्चरितं चरित्वा, मनसा दुच्चरितं चरित्वा कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति। तस्मायं दोसग्गि पहातब्बो परिवज्जेतब्बो, न सेवितब्बो।

११. ''कस्मा चायं, ब्राह्मण, मोहग्गि पहातब्बो परिवज्जेतब्बो, न सेवितब्बो? मूळ्हो खो, ब्राह्मण, मोहेन अभिभूतो परियादिन्नचित्तो कायेन दुच्चरितं चरति, वाचाय दुच्चरितं चरति, मनसा दुच्चरितं चरति। सो कायेन दुच्चरितं चरित्वा, वाचाय दुच्चरितं चरित्वा, मनसा दुच्चरितं चरित्वा कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति। तस्मायं मोहग्गि पहातब्बो परिवज्जेतब्बो, न सेवितब्बो। इमे खो तयो, ब्राह्मण, अग्गी पहातब्बा परिवज्जेतब्बा, न सेवितब्बा।

१२. ''तयो खो, ब्राह्मण, अग्गी सक्कत्वा गरुं कत्वा मानेत्वा पूजेत्वा सम्मा सुखं [R.45] परिहातब्बा। कतमे तयो? आहुनेय्यग्गि, गहपतग्गि, दक्खिणेय्यग्गि।

---

ऐसा पुरुष जो किसी विषय में अनुरक्त हो, उसमें मन लगाये हो, वह काय से, वाणी से एवं मन से दुराचार करने लगता है। वह काय, वाक् एवं मन से दुराचार करता हुआ, देहपात के बाद मरणानन्तर अपायभूत, दुर्गतिमय नरक में जा गिरता है, अत: इस रागाग्नि का सर्वथा त्याग एवं परिवर्जन कर देना चाहिये। (१)

१०. ''ब्राह्मण! और वह द्वेषाग्नि क्यों छोड़नी चाहिये? दूर हटानी चाहिये? क्यों इसका आसेवन (प्रयोग) नहीं करना चाहिये? क्योंकि, ब्राह्मण! कोई द्वेषी पुरुष किसी के प्रति द्वेषाभिभूत होता हुआ, उसी द्वेष से उत्साहित होकर काय, वाक् एवं मन से दुश्चरित करने लगता है। वह ऐसा करता हुआ, देहपात के बाद, मरणानन्तर अपायभूत, दुर्गतिमय नरक में जा गिरता है। अत:, ब्राह्मण! इस द्वेषाग्नि का भी सर्वथा त्याग एवं परिवर्जन किये रखना चाहिये।

११. ''ब्राह्मण! उस मोहाग्नि का त्याग क्यों करना चाहिये? क्यों दूर हटाना चाहिये? कोई मुग्ध पुरुष किसी विषय में मोह से अभिभूत होकर, उसी मोह में मन लगाता हुआ काय, वाक् एवं मन से दुश्चरित करता हुआ, देहपात के बाद, मरणानन्तर... अत:, ब्राह्मण! इस मोहाग्नि का भी... परिवर्जन किये रहना चाहिये।

१२. (इसके विपरीत) ''इन तीन अग्नियों का सत्कार, गौरव, सम्मान, एवं पूजा करते हुए उनको भलीभाँति सुविधापूर्वक ग्रहण करना चाहिये। कौन सी तीन अग्नि? (१) आहवनीय (भेंट देने योग्य) अग्नि, (२) गृहपति अग्नि, (३) एवं दक्षिणेयाग्नि।

१३. "कतमो च, ब्राह्मण, आहुनेय्यग्गि? इध, ब्राह्मण, यस्स ते होन्ति माता ति वा पिता ति वा, अयं वुच्चति, ब्राह्मण, आहुनेय्यग्गि। तं किस्स हेतु? अतोहयं, ब्राह्मण, आहुतो सम्भूतो, तस्मायं आहुनेय्यग्गि सक्कत्वा गरुं कत्वा मानेत्वा पूजेत्वा सम्मा सुखं [B.432] परिहातब्बो।

१४. "कतमो च, ब्राह्मण, गहपतग्गि? इध, ब्राह्मण, यस्स ते होन्ति पुत्ता ति वा दारा ति वा दासा ति वा पेस्सा ति वा कम्मकरा ति वा, अयं वुच्चति, ब्राह्मण, गहपतग्गि। तस्मायं गहपतग्गि सक्कत्वा गरुं कत्वा मानेत्वा पूजेत्वा सम्मा सुखं परिहातब्बो।

१५. "कतमो च, ब्राह्मण, दक्खिणेय्यग्गि? इध, ब्राह्मण, ये ते समण- [N.188] ब्राह्मणा परप्पवादा पटिविरता खन्तिसोरच्चे निविट्ठा एकमत्तानं दमेन्ति, एकमत्तानं समेन्ति, एकमत्तानं परिनिब्बापेन्ति, अयं वुच्चति, ब्राह्मण, दक्खिणेय्यग्गि। तस्मायं दक्खिणेय्यग्गि सक्कत्वा गरुं कत्वा मानेत्वा पूजेत्वा सम्मा सुखं परिहातब्बो। इमे खो, ब्राह्मण, तयो अग्गी सक्कत्वा गरुं कत्वा मानेत्वा पूजेत्वा सम्मा सुखं परिहातब्बा।

१६. "अयं खो पन, ब्राह्मण, कट्ठग्गि कालेन कालं उज्जलेतब्बो, कालेन कालं अज्झुपेक्खितब्बो, कालेन कालं निब्बापेतब्बो, कालेन कालं निक्खिपितब्बो" ति।

१७. "एवं वुत्ते उग्गतसरीरो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—"अभिक्कन्तं, भो गोतम, अभिक्कन्तं, भो गोतम ...पे०... उपासकं मं भवं गोतमो धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं ति। एसाहं, भो गोतम, पञ्च उसभतसानि मुञ्चामि जीवितं देमि, पञ्च [R.46]

---

१३. "ब्राह्मण! यह 'आहवनीयाग्नि' कौन है? ब्राह्मण! यहाँ उसके जो माता पिता है, वे ही 'आहवनीयाग्नि' कहलाते हैं। वह क्यों? क्योंकि उनको भेंट दी जाती है, सत्कार किया जाता है, अत: इस आहवनीयाग्नि का सत्कार कर... पूजा कर उनको भलीभाँति सुखपूर्वक स्वीकार करना चाहिये। (१)

१४. "ब्राह्मण! यह 'गृहपति-अग्नि' क्या कहलाती है? ब्राह्मण! यहाँ जो उसके पुत्र, स्त्री, दास, कर्मकर हैं वे गृहपति-अग्नि कहलाते हैं। अत: इस गृहपति-अग्नि का सत्कार, गौरव, मान एवं पूजा कर उनको भलीभाँति सुखपूर्वक स्वीकारना चाहिये। (२)

१५. "ब्राह्मण! यह 'दक्षिणेयाग्नि' कौन कहलाती है? ब्राह्मण! यहाँ जो दूसरों की निन्दा-स्तुति से दूर रहने वाले, क्षमा एवं नम्रता की प्रतिमूर्ति, एकमात्र स्वयं पर संयम करने वाले होते हैं, एकान्तत: स्वयं को परिनिर्वाण की ओर ले जाने वाले होते हैं—ये कहलाते हैं दक्षिणेयाग्नि। अत: इस दक्षिणेयाग्नि का भी सत्कार... कर भलीभाँति सुखूपूर्वक स्वीकारना चाहिये। (२)

१६. "ब्राह्मण! इस साधारण काष्ठ से जलायी जाने वाली अग्नि को समय समय पर प्रज्वलित किये रखना चाहिये, तथा समय समय पर बुझाये रखना चाहिये, और समय समय पर एक ओर रख देना चाहिये।" (३)

१७. (भगवान् द्वारा) ऐसा कहे जाने पर वह उद्गतशरीर ब्राह्मण बोला—"भो गौतम! आपने बहुत ही उचित कहा, भो गौतम ...पूर्ववत्... आज से आप मुझे, मेरे शरीर में प्राण रहने तक अपना

वच्छतरसतानि मुञ्चामि जीवितं देमि, पञ्च वच्छतरिसतानि मुञ्चामि जीवितं देमि, पञ्च अजसतानि मुञ्चामि जीवितं देमि, पञ्च उरब्भसतानि मुञ्चामि जीवितं देमि। हरितानि चेव तिणानि खादन्तु, सीतानि च पानीयानि पिबन्तु, सीतो च नेसं वातो उपवायतं'' ति॥ ●

५. **पठमसञ्ञासुत्तं** : १. ''सत्तिमा, भिक्खवे, सञ्ञा भाविता बहुलीकता महप्फला होन्ति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना। कतमा सत्त? असुभसञ्ञा, [B.433] मरणसञ्ञा, आहारे पटिकूलसञ्ञा, सब्बलोके अनभिरतसञ्ञा, अनिच्चसञ्ञा, अनिच्चे दुक्खसञ्ञा, दुक्खे अनत्तसञ्ञा—इमा खो, भिक्खवे, सत्त सञ्ञा भाविता बहुलीकता महप्फला होन्ति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना'' ति॥ ●

६. **दुतियसञ्ञासुत्तं** : १. ''सत्तिमा, भिक्खवे, सञ्ञा भाविता बहुलीकता महप्फला होन्ति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना। कतमा सत्त? असुभसञ्ञा, [N.189] मरणसञ्ञा, आहारे पटिकूलसञ्ञा, सब्बलोके अनभिरतसञ्ञा, अनिच्चसञ्ञा, अनिच्चे दुक्खसञ्ञा, दुक्खे अनत्तसञ्ञा—इमा खो, भिक्खवे, सत्त सञ्ञा भाविता बहुलीकता महप्फला होन्ति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना ति॥

२. ''असुभसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना' ति। इति खो पनेतं वुत्तं, किं चेतं पटिच्च वुत्तं? असुभसञ्ञा- [R.47] परिचितेन, भिक्खवे, भिक्खुनो चेतसा बहुलं विहरतो मेथुनधम्मसमापत्तिया चित्तं

---

शरणागत उपासक समझें। भो गौतम! मैं अब इन पाँच सौ वृषभों को छोड़ता हूँ, जीवनदान देता हूँ; पाँच सौ बछड़ों को.. पाँच सौ बछड़ियों को... पाँच सौ बकरे-बकरियों को... पाँच सै भेड़ों को मुक्त करता हूँ, जीवनदान देता हूँ। ये स्वच्छन्द होकर हरा घास चरें, स्रोतों का स्वच्छ जल पीयें तथा शीतल मन्द सुगन्ध वायु का सेवन करें॥'' ●

**५. प्रथम संज्ञासूत्र : : सात शुभफलप्रद संज्ञाएँ**

१. ''भिक्षुओ! इन सात संज्ञाओं की भावना किये जाने पर, अभ्यास किये जाने पर ये अतिशय फलप्रद होती हैं तथा ये अमृत (निर्वाण) की ओर ले जाने वाली तथा निर्वाण तक पहुँचाने वाली हैं। कौन सी सात? (१) (काया में) अशुभ संज्ञा, एवं (२) मरणसंज्ञा; ३. आहार में प्रतिकूलसंज्ञा, ४. सर्वत्र लोक में अनभिरति (अरुचि) संज्ञा, ५. अनित्यसंज्ञा, ६. अनित्य (धर्मों) में दुःखसंज्ञा एवं ७. दुःख में अनात्मसंज्ञा—भिक्षुओ! ये सात संज्ञाएँ, भावना तथा अभ्यास किये जाने पर, अतिशय शुभफलप्रद होती हैं; निर्वाण की ओर ले जाने वाली तथा निर्वाण तक पहुँचाने वाली होती हैं॥'' ●

**६. द्वितीय संज्ञासूत्र : : सात संज्ञाएँ**

१. ''भिक्षुओ! ये सात संज्ञाएँ ...पूर्ववत्... निर्वाण तक पहुँचाने वाली होती हैं।

२. ''भिक्षुओ! '**अशुभ संज्ञा,** साधना किये जाने पर, भावना किये जाने पर, अभ्यास किये जाने पर अतिशय फलप्रद, निर्वाण की ओर ले जाने वाली तथा निर्वाण तक पहुँचाने वाली होती है'—यह जो कहा गया, वह किसलिये कहा गया? भिक्षुओ! प्रायः अशुभसंज्ञा से परिचित चित्त

पतिलीयति पतिकुटति पतिवत्तति, न सम्पसारियति, उपेक्खा वा पाटिकुल्यता वा सण्ठाति। सेय्यथापि, भिक्खवे, कुक्कुटपत्तं वा न्हारुदद्दुलं वा अग्गिम्हि पक्खित्तं पतिलीयति पतिकुटति पतिवत्तति, न सम्पसारियति; एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खुनो असुभ-सञ्ञापरिचितेन चेतसा बहुलं विहरतो मेथुनधम्मसमापत्तिया चित्तं पतिलीयति पतिकुटति पतिवत्तति, न सम्पसारियति उपेक्खा वा पाटिकुल्यता वा सण्ठाति।

''सचे, भिक्खवे, भिक्खुनो असुभसञ्ञापरिचितेन चेतसा बहुलं विहरतो मेथुन-धम्मसमापत्तिया चित्तं अनुसन्दहति अप्पटिकुल्यता सण्ठाति; वेदितब्बमेतं, भिक्खवे, भिक्खुना 'अभाविता मे असुभसञ्ञा, नत्थि मे पुब्बेनापरं विसेसो, अप्पत्तं मे भावनाबलं' ति। इति ह तत्थ सम्पजानो होति। सचे पन, भिक्खवे, भिक्खुनो असुभसञ्ञापरिचितेन चेतसा बहुलं विहरतो मेधुनधम्मसमापत्तिया चित्तं पतिलीयति पतिकुटति पतिवत्तति, न सम्पसारियति उपेक्खा वा पाटिकुल्यता वा सण्ठाति; वेदितब्बमेतं, भिक्खवे, भिक्खुना 'सुभाविता मे असुभसञ्ञा, अत्थि मे पुब्बेनापरं विसेसो, पत्तं मे भावनाबलं' ति। [B.431] इति ह तत्थ सम्पजानो होति। 'असुभसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

३. ''मरणसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला होति [R.48] महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना' ति, इति खो पनेतं वुत्तं, किं चेतं पटिच्च वुत्तं? मरणसञ्ञापरिचितेन, भिक्खवे, भिक्खुनो चेतसा बहुलं विहरतो जीवित- [N.190]

---

से साधना करने वाले भिक्षु का चित्त मैथुन धर्म से विरत हो जाता है, उससे दूर रहने लगता है, उधर उसका चित्त नहीं लगता, वह उससे उपेक्षा करने लगता है, चिढ़ने लगता है। भिक्षुओ! जैसे मुर्गे का पंख अग्नि में डालने पर चिटचिटाने लगता है, सङ्कुचित होने लगता है, वहाँ फैलता नहीं है; इसी प्रकार अशुभसंज्ञा से परिचित चित्त से साधना करने वाले भिक्षु का चित्त ...पूर्ववत्... उपेक्षा करने लगता है, उससे चिढ़ने लगता है।

''यदि, भिक्षुओ! अशुभ संज्ञा से परिचित चित्त से साधक भिक्षु का चित्त मैथुन धर्म से विरत न हो तो, भिक्षुओ! उस भिक्षु को समझ लेना चाहिये कि उसके द्वारा कृत अशुभ संज्ञा की साधना पूर्णतः सफल नहीं हुई है; क्योंकि उसमें पहले की अपेक्षा कोई विशेषता नहीं आयी है, उसे इस साधना से कोई अतिरिक्त सामर्थ्य प्राप्त नहीं हुआ है। ऐसा वह समझ भी जाता है। हाँ, यदि इस अशुभसंज्ञा की साधना सफल हो जाती है तो उसे मैथुन धर्म से विरति हो जाती है तब उसे ज्ञात हो जाता है कि उसकी वह साधना सफल हो गयी; क्योंकि उसको उस साधना का विशेष फल मिलने लगता है। भिक्षुओ! 'अशुभ संज्ञा की साधना करने पर, अभ्यास करने पर वह अतिशय फलवती होती है...' यह जो कहा था, यह इसी आशय से कहा था। (१)

३. ''भिक्षुओ! '**मरणसंज्ञा** साधना किये जाने पर...' यह जो कहा था, यह किस आशय से कहा था? भिक्षुओ! प्रायः मरणसंज्ञा से परिचित चित्त से ...पूर्ववत्... जीने की इच्छा रूप तृष्णा से विरत हो जाता है, उससे दूर रहने लगता है... उसे चिढ़ने लगता है।

निकन्तिया चित्तं पतिलीयति पतिकुटति पतिवत्तति, न सम्पसारियति उपेक्खा वा पाटिकुल्यता वा सण्ठाति। सेय्यथापि, भिक्खवे, कुक्कुटपत्तं वा न्हारुदद्दुलं वा अग्गिम्हि पक्खित्तं पतिलीयति पतिकुटति पतिवत्तति, न सम्पसारियति। एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खुनो मरणसञ्ञापरिचितेन चेतसा बहुलं विहरतो जीवितनिकन्तिया चित्तं पतिलीयति पतिकुटति पतिवत्तति, न सम्पसारियति उपेक्खा वा पाटिकुल्यता वा सण्ठाति।

"सचे, भिक्खवे, भिक्खुनो मरणसञ्ञापरिचितेन चेतसा बहुलं विहरतो जीवितनिकन्तिया चित्तं अनुसन्दहति अप्पटिकुल्यता सण्ठाति; वेदितब्बमेतं, भिक्खवे, भिक्खुना 'अभाविता मे मरणसञ्ञा, नत्थि मे पुब्बेनापरं विसेसो, अप्पत्तं मे भावनाबलं' ति। इति ह तत्थ सम्पजानो होति। सचे पन, भिक्खवे, भिक्खुनो मरणसञ्ञापरिचितेन चेतसा बहुलं विहरतो जीवितनिकन्तिया चित्तं पतिलीयति पतिकुटति पतिवत्तति, न सम्पसारियति उपेक्खा वा पाटिकुल्यता वा सण्ठाति; वेदितब्बमेतं, भिक्खवे, भिक्खुना 'सुभाविता मे [R.49] मरणसञ्ञा, अत्थि मे पुब्बेनापरं विसेसो, पत्तं मे भावनाबलं' ति। इति ह तत्थ सम्पजानो होति। 'मरणसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

४. "आहारे पटिकूलसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना' ति, इति खो पनेतं वुत्तं, किं चेतं पटिच्च वुत्तं? [B.435] आहारे पटिकूलसञ्ञापरिचितेन, भिक्खवे, भिक्खुनो चेतसा बहुलं विहरतो रसतण्हाय चित्तं पतिलीयति ...पे०... उपेक्खा वा पाटिकुल्यता वा सण्ठाति। सेय्यथापि, भिक्खवे, कुक्कुटपत्तं वा न्हारुदद्दुलं वा अग्गिम्हि पक्खित्तं पतिलीयति पतिकुटति पतिवत्तति, न सम्पसारियति। एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खुनो आहारे पटिकूलसञ्ञा-परिचितेन चेतसा बहुलं विहरतो रसतण्हाय चित्तं पतिलीयति ...पे०... उपेक्खा वा पाटिकुल्यता वा सण्ठाति।

"सचे, भिक्खवे, भिक्खुनो आहारे पटिकूलसञ्ञापरिचितेन चेतसा बहुलं विहरतो

---

"यदि, भिक्षुओ! मरणसंज्ञा की साधना करने वाले भिक्षु का चित्त जीने की इच्छा में आसक्त ही रहता है, उससे दूर नहीं होता तो वह समझ लेता है कि उसकी मरणसंज्ञा पूर्ण नहीं हुई। हाँ, यदि उसका चित्त मरणसंज्ञा की साधना करते करते जीने की इच्छा में निरासक्त हो जाता है... तो वह समझ लेता है कि उसकी मरणसंज्ञा की भावना पूर्ण हो गयी है...। 'मरणसंज्ञा की साधना निर्वाण तक पहुँच देती है'—यह जो कहा था, यह इसी उद्देश्य से कहा था। (२)

४. "भिक्षुओ! '**आहार में प्रतिकूलसंज्ञा...** निर्वाण तक पहुँचाने वाली है'—यह जो कहा था वह किसलिये कहा था? आहार में प्रतिकूल संज्ञा से परिचित चित्त से प्राय: साधना करने वाले भिक्षु का चित्त रसतृष्णा से दूर होने लगता है... उससे चिढ़ने लगता है। जैसे भिक्षुओ! मुर्गे का पङ्ख ...पूर्ववत्... दूर होने लगता है, उससे चिढ़ने लगता है।

रसतण्हाय चित्तं अनुसन्दहति अप्पटिकुल्यता सण्ठाति; वेदितब्बमेतं, भिक्खवे, [N.191] भिक्खुना 'अभाविता मे आहारे पटिकूलसञ्ञा, नत्थि मे पुब्बेनापरं विसेसो, अप्पत्तं मे भावनाबलं' ति। इति ह तत्थ सम्पजानो होति। सचे पन, भिक्खवे, भिक्खुनो आहारे पटिकूलसञ्ञापरिचितेन चेतसा बहुलं विहरतो रसतण्हाय चित्तं पतिलीयति ...पे०... उपेक्खा वा पाटिकुल्यता वा सण्ठाति; वेदितब्बमेतं, भिक्खवे, भिक्खुना 'सुभाविता मे आहारे पटिकूलसञ्ञा, अत्थि मे पुब्बेनापरं विसेसो, पत्तं मे भावनाबलं' ति। इति ह तत्थ सम्पजानो होति। 'आहारे पटिकूलसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला [R.50] होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

५. ''सब्बलोके अनभिरतसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना' ति, इति खो पनेतं वुत्तं, किं चेतं पटिच्च वुत्तं? सब्बलोके अनभिरतसञ्ञापरिचितेन, भिक्खवे, भिक्खुनो चेतसा बहुलं विहरतो लोकचित्रेसु चित्तं पतिलीयति ...पे०... सेय्यथापि, भिक्खवे ...पे०... पतिलीयति पतिकुटति पतिवत्तति, न सम्पसारियति। एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खुनो सब्बलोके अनभिरतसञ्ञापरिचितेन चेतसा बहुलं विहरतो लोकचित्रेसु चित्तं पतिलीयति पतिकुटति पतिवत्तति, न सम्पसारियति उपेक्खा वा पाटिकुल्यता वा सण्ठाति।

''सचे, भिक्खवे, भिक्खुनो सब्बलोके अनभिरतसञ्ञापरिचितेन चेतसा बहुलं विहरतो लोकचित्रेसु चित्तं अनुसन्दहति अप्पटिकुल्यता सण्ठाति; वेदितब्बमेतं, भिक्खवे, भिक्खुना 'अभाविता मे सब्बलोके अनभिरतसञ्ञा, नत्थि मे पुब्बेनापरं विसेसो, [B.436] अप्पत्तं मे भावनाबलं' ति। इति ह तत्थ सम्पजानो होति। सचे पन, भिक्खवे, [R.51] भिक्खुनो सब्बलोके अनभिरतसञ्ञापरिचितेन चेतसा बहुलं विहरतो लोकचित्रेसु चित्तं पतिलीयति ...पे०... उपेक्खा वा पाटिकुल्यता वा सण्ठाति; वेदितब्बमेतं, भिक्खवे, भिक्खुना 'सुभाविता मे सब्बलोके अनभिरतसञ्ञा, अत्थि मे पुब्बेनापरं विसेसो, पत्तं मे

---

''यदि, भिक्षुओ! आहार में प्रतिकूल संज्ञा की साधना करने वाले भिक्षु का चित्त रसतृष्णा से दूर नहीं होता... वह समझ लेता है कि मेरी यह साधना अभी पूर्ण नहीं हुई ...पूर्ववत्... आहार में प्रतिकूलसंज्ञा... यह इसी उद्देश्य से कहा था। (३)

५. ''भिक्षुओ! '**समस्त लोक में अनभिरतसंज्ञा...** निर्वाण तक पहुँचाने वाली है'—यह जो कहा था, वह किस आशय से कहा था? सर्वत्र लोक में अनभिरतसंज्ञा (अरुचि) से परिचित चित्त से प्राय: साधना करने वाले भिक्षु का चित्त शनै: शनै: लोक की विचित्रताओं के विषय में अनासक्त होने लगता है ...पूर्ववत्... जैसे भिक्षुओ ...पूर्ववत्... दूर होने लगता है, इसी प्रकार, भिक्षुओ! सर्वलोक में अनभिरतसंज्ञा से परिचित चित्त से... दूर होने लगता है, उससे चिढ़ने लगता है।

''यदि, भिक्षुओ! भिक्षु को सर्वलोक में अनभिरत संज्ञा से परिचित चित्त से... लोक के विषय में अनासक्त ...पूर्ववत्... सर्वलोक में अनभिरतसंज्ञा... इसीलिये कहा था। (४)

भावनाबलं' ति। इति ह तत्थ सम्पजानो होति। 'सब्बलोके अनभिरतसञ्ञा, भिक्खवे, [N.192] भाविता बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

६. "अनिच्चसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना' ति, इति खो पनेतं वुत्तं, किं चेतं पटिच्च वुत्तं? अनिच्च-सञ्ञापरिचितेन, भिक्खवे, भिक्खुनो चेतसा बहुलं विहरतो लाभसक्कारसिलोके चित्तं पतिलीयति ...पे०... उपेक्खा वा पाटिकुल्यता वा सण्ठाति। सेय्यथापि, भिक्खवे, कुक्कुटपत्तं वा न्हारुदद्दुलं वा अग्गिम्हि पक्खित्तं पतिलीयति पतिकुटति पतिवत्तति, न सम्पसारियति। एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खुनो अनिच्चसञ्ञापरिचितेन चेतसा बहुलं विहरतो लाभसक्कारसिलोके चित्तं पतिलीयति ...पे०... उपेक्खा वा पाटिकुल्यता वा सण्ठाति।

"सचे, भिक्खवे, भिक्खुनो अनिच्चसञ्ञापरिचितेन चेतसा बहुलं विहरतो लाभसक्कारसिलोके चित्तं अनुसन्दहति अप्पटिकुल्यता सण्ठाति; वेदितब्बमेतं, भिक्खवे, भिक्खुना 'अभाविता मे अनिच्चसञ्ञा, नत्थि मे पुब्बेनापरं विसेसो, अप्पत्तं मे भावनाबलं' ति। इति ह तत्थ सम्पजानो होति। सचे पन, भिक्खवे, भिक्खुनो अनिच्चसञ्ञापरिचितेन [R.52] चेतसा बहुलं विहरतो लाभसक्कारसिलोके चित्तं पतिलीयति पतिकुटति पतिवत्तति, न सम्पसारियति उपेक्खा वा पाटिकुल्यता वा सण्ठाति; वेदितब्बमेतं, भिक्खवे, भिक्खुना 'सुभाविता मे अनिच्चसञ्ञा, अत्थि मे पुब्बेनापरं विसेसो, पत्तं मे भावनाबलं' ति। इति ह तत्थ सम्पजानो होति। 'अनिच्चसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

[B.437] ७. "अनिच्चे दुक्खसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना' ति, इति खो पनेतं वुत्तं, किं चेतं पटिच्च वुत्तं? अनिच्चे दुक्खसञ्ञापरिचितेन, भिक्खवे, भिक्खुनो चेतसा बहुलं विहरतो आलस्से कोसज्जे

---

६. "भिक्षुओ! '**अनित्यसंज्ञा...** निर्वाण तक पहुँचाने वाली है'—यह जो कहा था, यह किसलिये कहा था? अनित्यसंज्ञा से परिचित चित्त से प्राय: साधना करने वाले भिक्षु का चित्त लौकिक लाभ सत्कार से शनै: शनै: विरत होने लगता है ...पूर्ववत्... जैसे, भिक्षुओ! ... दूर होने लगता है, उससे चिढ़ने लगता है।

"यदि, भिक्षुओ! अनित्य संज्ञा से परिचित चित्त से प्राय: साधना करने वाले भिक्षु का चित्त लाभ सत्कार की ही आकांक्षा करता रहता है ...पूर्ववत्... 'अनित्य संज्ञा... निर्वाण तक पहुँचाने वाली है'—यह जो कहा था, इसी उद्देश्य से कहा था। (५)

७. "भिक्षुओ! '**अनित्य में दु:खसंज्ञा** की भावना तथा अभ्यास...'—यह जो कहा था, किस उद्देश्य से कहा था? अनित्य में दु:खसंज्ञा से परिचित चित्त से भावना करने वाले भिक्षु के चित्त की आलस्य में, शिथिलता (सुस्ती) में, त्यागने योग्य प्रमाद में, साधना न करने योग्य धर्म में,

विस्सट्ठिये पमादे अननुयोगे अपच्चवेक्खणाय तिब्बा भयसञ्ञा पच्चुपट्ठिता होति, सेय्यथापि, भिक्खवे, उक्खित्तासिके वधके।

"सचे, भिक्खवे, भिक्खुनो अनिच्चे दुक्खसञ्ञापरिचितेन चेतसा बहुलं [N.193] विहरतो आलस्ये बहुलं विहरतो आलस्ये कोसज्जे विस्सट्ठिये पमादे अननुयोगे अपच्च-वेक्खणाय तिब्बा भयसञ्ञा न पच्चुपट्ठिता होति, सेय्यथापि, भिक्खवे, उक्खित्तासिके वधके। वेदितब्बमेतं, भिक्खवे, भिक्खुना 'अभाविता मे अनिच्चे दुक्खसञ्ञा, नत्थि मे पुब्बेनापरं विसेसो, अप्पत्तं मे भावनाबलं' ति। इति ह तत्थ सम्पजानो होति। सचे पन, भिक्खवे, भिक्खुनो अनिच्चे दुक्खसञ्ञापरिचितेन चेतसा बहुलं विहरतो आलस्ये कोसज्जे विस्सट्ठिये पमादे अननुयोगे अपच्चवेक्खणाय तिब्बा भयसञ्ञा पच्चुपट्ठिता होति, सेय्यथापि, भिक्खवे, उक्खित्तासिके वधके। वेदितब्बमेतं, भिक्खवे, भिक्खुना 'सुभाविता मे अनिच्चे दुक्खसञ्ञा, अत्थि मे पुब्बेनापरं विसेसो, पत्तं मे भावनाबलं' ति। इति ह तत्थ सम्पजानो होति। 'अनिच्चे दुक्खसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला [R.53] होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

८. "दुक्खे अनत्तसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना' ति, इति खो पनेतं वुत्तं, किं चेतं पटिच्च वुत्तं? दुक्खे अनत्तसञ्ञापरिचितेन, भिक्खवे, भिक्खुनो चेतसा बहुलं विहरतो इमस्मिं च सविञ्ञाणके काये बहिद्धा च सब्बनिमित्तेसु अहङ्कारममङ्कारमानापगतं मानसं होति विधासमतिक्कन्तं सन्तं सुविमुत्तं।

---

उसके विवेचन में वैसी ही भयग्रस्त स्थिति हो जाती है जैसे किसी खड्गधारी हत्यारे को देखने पर हुआ करती है।

"यदि, भिक्षुओ! अनित्य में दुःखसंज्ञा से परिचित चित्त से प्रायः साधना करने वाले भिक्षु का चित्त आलस्य में ...पूर्ववत्... भय नहीं मानता है ...पूर्ववत्... 'अनित्य में दुःखसंज्ञा निर्वाण तक पहुँचाने वाली है' यह जो कहा था, इसी आशय से कहा था। (६)

८. भिक्षुओ! '**दुःख में अनात्मसंज्ञा** की भावना एवं अभ्यास किये जाने पर, वह महान् फलप्रद एवं निर्वाण की ओर बढ़ाने वाली तथा निर्वाण तक पहुँचाने वाली होती है'—यह जो कहा गया है वह किस आशय से कहा गया है? दुःख में अनात्मसंज्ञा से परिचित चित्त से प्रायः साधना करते हुए भिक्षु का चित्त इस विज्ञानसहित काय में सभी बाह्य निमित्तों (विषयों) में अहङ्कार ममत्व एवं मान समाप्त हो जाता है वह तृष्णारहित, शान्त एवं सुविमुक्त कहलाता है।

"यदि, भिक्षुओ! दुःख में अनात्मसंज्ञा से परिचित चित्त से प्रायः साधना करते हुए भिक्षु का चित्त इस लोक में अहङ्कार, ममत्व एवं मान से व्यपगत नहीं होता, तृष्णारहित शान्त नहीं होता तो भिक्षुओ! उस भिक्षु को समझ लेना चाहिये कि उसकी दुःख में अनात्मसंज्ञा की भावना समीचीनतया सिद्ध नहीं हुई है; क्योंकि उसके चित्त में पहले की अपेक्षा अभी कोई विशेषता नहीं आयी है, अतः उसने भावनाबल प्राप्त नहीं किया है। ऐसा वह समझ जाता है। परन्तु यदि, भिक्षुओ!

"सचे, भिक्खवे, भिक्खुनो दुक्खे अनत्तसञ्ञापरिचितेन चेतसा बहुलं विहरतो इमस्मिं च सविञ्ञाणके काये बहिद्धा च सब्बनिमित्तेसु न अहङ्कारममङ्कारमानापगतं मानसं होति विधासमतिक्कन्तं सन्तं सुविमुत्तं; वेदितब्बमेतं, भिक्खवे, भिक्खुना 'अभाविता मे [B.438] दुक्खे अनत्तसञ्ञा, नत्थि मे पुब्बेनापरं विसेसो, अप्पत्तं मे भावनाबलं' ति। इति ह तत्थ सम्पजानो होति। सचे पन, भिक्खवे, भिक्खुनो दुक्खे अनत्तसञ्ञापरिचितेन चेतसा बहुलं विहरतो इमस्मिं च सविञ्ञाणके काये बहिद्धा च सब्बनिमित्तेसु अहङ्कारमम-ङ्कारमानापगतं मानसं होति विधासमतिक्कन्तं सन्तं सुविमुत्तं; वेदितब्बमेतं, भिक्खवे, [N.194] भिक्खुना 'सुभाविता मे दुक्खे अनत्तसञ्ञा, अत्थि मे पुब्बेनापरं विसेसो, पत्तं मे भावनाबलं' ति। इति ह तत्थ सम्पजानो होति। 'दुक्खे अनत्तसञ्ञा, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

९. "इमा खो, भिक्खवे, सत्त सञ्ञा भाविता बहुलीकता महप्फला होन्ति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना" ति॥ ●

[R.54] **७. मेथुनसुत्तं** : १. अथ खो जाणुस्सोणि ब्राह्मणो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो जाणुस्सोणि ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—"भवं पि नो गोतमो ब्रह्मचारी पटिजानाती" ति?

"यं हि तं, ब्राह्मण, सम्मा वदमानो वदेय्य—'अखण्डं अच्छिद्दं असबलं अकम्मासं परिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं चरती' ति, ममेव तं, ब्राह्मण, सम्मा वदमानो वदेय्य--'अहं

---

इस संज्ञा की प्राय: निरन्तर साधना कर्ता भिक्षु के चित्त में काया के प्रति अहङ्कार, ममत्व एवं मान विनष्ट हो जायँ तो समझ लेना चाहिये कि उसकी यह (दु:ख में अनात्म-) संज्ञा की भावना पूर्णत: सम्पन्न हो चुकी है। तथा उसका चित्त शान्त एवं सुविमुक्त हो चुका है। अब उसके चित्त में पहले की अपेक्षा विशेषता भी आ गयी है—यह उसकी समझ में आ जाता है। अत:, भिक्षुओ! ' — दु:ख में अनात्मसंज्ञा की साधना एवं अभ्यास महान् फलप्रद होता है। यह साधना निर्वाण मार्ग पर आरूढ कराने वाली तथा निर्वाण तक पहुँचाने वाली हैं'—यह इसी आशय से कहा गया है। (७)

९. "भिक्षुओ! ये सात संज्ञाएँ, साधना एवं अभ्यास किये जाने पर, अतिशय फलदायिनी होती हैं... निर्वाण तक पहुँचाने वाली होती हैं॥" ●

**७. मैथुनसूत्र : : सप्तविध मैथुन**

१. तब जानुश्रोणि ब्राह्मण जहाँ भगवान् विराजमान थे वहाँ गया। जाकर भगवान् से कुशल मङ्गल पूछकर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए जानुश्रोणि ब्राह्मण ने भगवान् से पूछा—"आप भी अपने को ब्रह्मचारी मानते हैं?"

"ब्राह्मण! यदि कोई किसी के विषय में कहना चाहे—'यह अखण्ड, निश्छिद्र, अविभिन्न, निष्कलङ्क एवं परिपूर्ण तथा परिशुद्ध ब्रह्मचर्य का पालन करता है, तो, ब्रह्मण! वह मेरे लिये ही ऐसा

हि, ब्राह्मण, अखण्डं अच्छिद्दं असबलं अकम्मासं परिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं चरामी' '' ति।

२. ''किं पन, भो गोतम, ब्रह्मचरियस्स खण्डं पि छिद्दं पि सबलं पि कम्मासं पी'' ति?

''इध, ब्राह्मण, एकच्चो समणो वा ब्राह्मणो वा सम्मा ब्रह्मचारी पटिजानमानो न हेव खो मातुगामेन सद्धिं द्वयंद्वयसमापत्तिं समापज्जति; अपि च खो मातुगामस्स उच्छादन-परिमद्दन-न्हापन-सम्बाहनं सादियति। सो तं अस्सादेति, तं निकामेति, तेन च वित्तिं आपज्जति। इदं पि खो, ब्राह्मण, ब्रह्मचरियस्स खण्डं पि छिद्दं पि सबलं पि कम्मासं पि। अयं वुच्चति, ब्राह्मण, अपरिसुद्धं ब्रह्मचरियं चरति, संयुत्तो मेथुनेन संयोगेन न परिमुच्चति [B.439] जातिया जराय मरणेन सोकेहि परिदेवेहि दुक्खेहि दोमनस्सेहि उपायासेहि, न परिमुच्चति दुक्खस्मा ति वदामि।

३. ''पुन च परं, ब्राह्मण, इधेकच्चो समणो वा ब्राह्मणो वा सम्मा ब्रह्मचारी [R.55] पटिजानमानो न हेव खो मातुगामेन सद्धिं द्वयन्द्वयसमापत्तिं समापज्जति; न पि मातुगामस्स उच्छादन-परिमद्दन-न्हापन-सम्बाहनं सादियति; अपि च खो मातुगामेन सद्धिं सञ्जग्घति सङ्कीळति सङ्केलायति ...पे०...। न पि मातुगामेन सद्धिं सञ्जग्घति सङ्कीळति सङ्केलायति; अपि च खो मातुगामेन चक्खुना चक्खुं उपनिज्झायति पेक्खति ...पे०...। न पि मातुगामस्स चक्खुना चक्खुं उपनिज्झायति पेक्खति; अपि च खो मातुगामेन सद्दं सुणाति तिरोकुड्डं वा तिरोपाकारं वा हसन्तिया वा भणन्तिया वा गायन्तिया वा रोदन्तिया वा ...पे०...। न पि

---

कह सकता है'—'मैं, ब्राह्मण! अखण्ड, अछिद्र, अविभिन्न, निष्कलङ्क, परिपूर्ण एवं परिशुद्ध ब्रह्मचर्य का पालन करता हूँ।''

२. ''क्या, भो गौतम! ब्रह्मचर्य में भी खण्ड, छिद्र एवं कलङ्क होता है?''

''यहाँ, ब्राह्मण! कोई श्रमण या ब्राह्मण किसी स्त्री के साथ 'दो का मिलना' (मैथुन) तो नहीं करता, परन्तु वह स्त्रियों द्वारा किये जाते हुए उत्सादन, परिमर्दन, स्नापन, एवं संवाहन को बहुत उत्सुकता से देखता है। वह इन कृत्यों को देखते रहना चाहता है, उनमें रस लेता है, उनमें प्रेम उत्पन्न करता है। यही, ब्राह्मण! उस ब्रह्मचर्य का खण्ड, छिद्र एवं कलङ्क होता है। ऐसे साधक के प्रति कहा जा सकता है कि वह अपरिशुद्ध ब्रह्मचर्य की साधना कर रहा है। वह भी एक प्रकार का मैथुन कर रहा होता है। इसके फलस्वरूप वह जन्म, जरा, मरण, शोक, परिदेव, दुःख, दौर्मनस्य तथा उपायास से मुक्त नहीं हो पाता—ऐसा मेरा मानना है। (१)

३. ''पुनः, ब्राह्मण! यहाँ कोई श्रमण या ब्राह्मण अपने को सर्वथा ब्रह्मचारी मानता हुआ भी यद्यपि किसी नारी के साथ मैथुन तो नहीं करता, और न किसी नारी के उत्सादन, परिमर्दन, स्नापन या संवाहन कर्म को देखने में उत्सुक रहता है; परन्तु वह किसी नारी के साथ हास-परिहास करता है, केलि करता है, किलोल करता है। ...पूर्ववत्...। (२)

मातुगामस्स सद्दं सुणाति तिरोकुड्डं वा तिरोपाकारं वा हसन्तिया वा भणन्तिया वा गायन्तिया वा रोदन्तिया वा; अपि च खो यानिस्स तानि पुब्बे मातुगामेन सद्धिं हसितलपितकीळितानि तानि अनुस्सरति ...पे०...। न पि यानिस्स तानि पुब्बे मातुगामेन सद्धिं हसितलपित-कीळितानि तानि अनुस्सरति; अपि च खो पस्सति गहपतिं वा गहपतिपुत्तं वा पञ्चहि कामगुणेहि समप्पितं समङ्गीभूतं परिचारयमानं ...पे०...। न पि पस्सति गहपतिं वा गहपतिपुत्तं वा पञ्चहि कामगुणेहि समप्पितं समङ्गीभूतं परिचारयमानं; अपि च खो अञ्ञतरं देवनिकायं पणिधाय ब्रह्मचरियं चरति इमिनाहं सीलेन वा वतेन वा तपेन वा ब्रह्मचरियेन वा देवो वा भविस्सामि देवञ्ञतरो वा ति। सो तं अस्सादेति, तं निकामेति, तेन च वित्तिं आपज्जति। इदं पि खो, ब्राह्मण, ब्रह्मचरियस्स खण्डं पि छिद्दं पि सबलं पि कम्मासं पि। अयं वुच्चति, ब्राह्मण, अपरिसुद्धं ब्रह्मचरियं चरति, संयुत्तो मेथुनेन संयोगेन, न [R.56] परिमुच्चति जातिया जराय मरणेन सोकेहि परिदेवेहि दुक्खेहि दोमनस्सेहि उपायासेहि, न परिमुच्चति दुक्खस्मा ति वदामि।

४. ''यावकीवञ्चाहं, ब्राह्मण, इमेसं सत्तन्नं मेथुनसंयोगानं अञ्ञतरञ्ञतर-

---

''...यद्यपि वह किसी नारी के साथ हास परिहास, केलि या किलोल भी नहीं करता, परन्तु वह किसी नारी से निरन्तर आँख मिलाता है। ...पूर्ववत्...। (३)

''...यद्यपि वह नारी के साथ निरन्तर आँख भी नहीं मिलाता; परन्तु वह किसी दीवार या प्राकार के पीछे छिपकर उसका गान सुनता है, उस हँसती हुई रोती हुई के शब्द सुनता है। ...पूर्ववत्...। (४)

''...यद्यपि वह किसी नारी के गायन, हास या रुदन शब्दों को सुनने में तो कोई उत्कण्ठा नहीं रखता, परन्तु वह अपने गृहस्थाश्रम की पूर्व स्त्री के गान, हास-परिहास एवं रुदन-शब्दों का अनुस्मरण करता रहता है। ...पूर्ववत्...। (५)

''...यद्यपि वह अपनी पूर्व स्त्री के गान, हास एवं रुदन-शब्दों में भी उत्कण्ठा नहीं रखता; परन्तु वह पाँचों कामगुणों में सम्पृक्त हुए किसी गृहपति या गृहपतिपुत्र को उत्सुकता से देखता है। ...पूर्ववत्...। (६)

''...यद्यपि वह ऐसे किसी गृहपति या गृपतिपुत्र को भी नहीं देखता; परन्तु वह देवनिकाय का सङ्कल्प कर ऐसी धर्मसाधना करने लगता है कि वह भी इस शील, व्रत, तप या ब्रह्मचर्य से अग्रिम जन्म में उस देवता के समान रूपवान्, वर्णवान् एवं सामर्थ्यवान् बने। वह उसके प्रति उत्सुकता रखता है, उसकी कामना (चाह) करता है, उससे स्नेह करने लगता है। ब्राह्मण! यह भी उसके ब्रह्मचर्य का खण्डित होना, छिद्रित होना, कलङ्कित होना कहलाता है। ब्राह्मण! ऐसे श्रमण या ब्राह्मण द्वारा साधित यह ब्रह्मचर्य खण्डित, छिद्रित, विभाजित एवं कलङ्कित कहलाता है। इसके फलस्वरूप, ब्राह्मण! वह साधक जन्म, जरा, मरण, शोक, परिदेव, दुःख, दौर्मनस्य एवं उपायास से मुक्त नहीं हो पाता। (७)

४. ''जब तक, ब्राह्मण! मैंने इन सप्तविध मैथुन-संयोगों में से किसी भी मैथुन-संयोग को

मेथुनसंयोगं अत्तनि अप्पहीनं समनुपस्सिं, नेव तावाहं, ब्राह्मण, सदेवके लोके समारके सब्रह्मके सस्समणब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुद्धो ति पच्चञ्ञासिं।

५. ''यतो च खोहं, ब्राह्मण, इमेसं सत्तन्नं मेथुनसंयोगानं अञ्ञतरञ्ञतर- [B.440] मेथुनसंयोगं अत्तनि अप्पहीनं न समनुपस्सिं, अथाहं, ब्राह्मण, सदेवके लोके [N.196] समारके सब्रह्मके सस्समणब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुद्धो ति पच्चञ्ञासिं। 'ञाणं च पन मे दस्सनं उदपादि, अकुप्पा मे विमुत्ति, अयमन्तिमा जाति, नत्थि दानि पुनब्भवो' '' ति।

६. एवं वुत्ते जाणुस्सोणि ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—''अभिक्कन्तं, भो गोतम; अभिक्कन्तं, भो गोतम ...पे०... उपासकं मं भवं गोतमो धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं'' ति॥ ●

**८. संयोगसुत्तं** : १. ''संयोगविसंयोगं वो, भिक्खवे, धम्मपरियायं [R.57] देसेस्सामि। तं सुणाथ ...पे०... कतमो च सो, भिक्खवे, संयोगो विसंयोगो धम्मपरियायो?

२. ''इत्थी, भिक्खवे, अज्झत्तं इत्थिन्द्रियं मनसि करोति इत्थिकुत्तं इत्थाकप्पं इत्थिविधं इत्थिच्छन्दं इत्थिस्सरं इत्थालङ्कारं। सा तत्थ रज्जति तत्राभिरमति। सा तत्थ रत्ता तत्राभिरता बहिद्धा पुरिसिन्द्रियं मनसि करोति पुरिसकुत्तं पुरिसाकप्पं पुरिसविधं पुरिसच्छन्दं

---

अपने में अप्रहीण पाया, तब तक मैंने, ब्राह्मण! देवलोक सहित तथा मार ब्रह्मा सहित एस श्रमण-ब्राह्मण प्रजा के सम्मुख यह घोषणा नहीं की कि मैं अद्वितीय सम्यक्सम्बोधि प्राप्त कर अभिसम्बुद्ध (सर्वथा ज्ञानी) बन चुका हूँ।

५. ''परन्तु, ब्राह्मण! जब मैंने अपने में इन सातों मैथुनसंयोगों में से सभी को प्रहीण पाया, तब मैंने, ब्राह्मण! ...पूर्ववत्... 'मैं अभिसम्बुद्ध हो गया'—यह घोषणा की। इस ज्ञान का मैंने साक्षात्कार कर लिया कि अब मेरी यह विमुक्ति अकोप्य (अविचल) है, अब मेरा यह जन्म अन्तिम है, अब मेरा इस संसार में पुनर्जन्म नहीं होगा।''

६. भगवान् के द्वारा ऐसी देशना किये जाने पर जानुश्रोणि ब्राह्मण ने भगवान् से यह निवेदन किया—''बहुत उचित कहा, भो गौतम! बहुत ही उचित! ...पूर्ववत्... आज से आप मुझे, मेरे जीवनपर्यन्त, अपना शरणागत उपासक समझें॥'' ●

**८. संयोगसूत्र : : सप्तविध संयोग एवं विसंयोग**

१. ''भिक्षुओ! अब मैं तुमको 'संयोग' एवं 'विसंयोग' नामक धर्मों की व्याख्या बताऊँगा, उसे तुम सुनो!...पूर्ववत्...।

भिक्षुओ! इनमें 'संयोग' धर्म कौन सा है? और 'विसंयोग' धर्म कौन सा?

**संयोग :** २. भिक्षुओ! स्त्री १. आध्यात्मिक स्त्रीन्द्रिय में, २. स्त्री के आचरण का, ३. स्त्री की चाल-ढाल का, ४. स्त्री के तौर-तरीकों का, ५. स्त्री के सोच-विचार का, ६. स्त्री के ऐश्वर्य का तथा ७. स्त्री के अलङ्कारों का ध्यान करती है। उसका वहाँ राग हो जाता है, वह वहाँ रस लेती है। वह

पुरिसस्सरं पुरिसालङ्कारं। सो तत्थ रज्जति तत्राभिरमति। सा तत्थ रत्ता तत्राभिरता बहिद्धा संयोगं आकङ्खति। यं चस्सा संयोगपच्चया उप्पज्जति सुखं सोमनस्सं तं च आकङ्खति। इत्थत्ते, भिक्खवे, अभिरता सत्ता पुरिसेसु संयोगं गता। एवं खो, भिक्खवे, इत्थी इत्थत्तं नातिवत्तति।

३. ''पुरिसो, भिक्खवे, अज्झत्तं पुरिसिन्द्रियं मनसि करोति पुरिसकुत्तं पुरिसाकप्पं पुरिसविधं पुरिसच्छन्दं पुरिसस्सरं पुरिसालङ्कारं। सो तत्थ रज्जति तत्राभिरमति। सो तत्थ रत्तो तत्राभिरतो बहिद्धा इत्थिन्द्रियं मनसि करोति इत्थिकुत्तं इत्थाकप्पं इत्थिविधं इत्थिच्छन्दं इत्थिस्सरं इत्थालङ्कारं। सो तत्थ रज्जति तत्राभिरमति। सो तत्थ रत्तो तत्राभिरतो बहिद्धा संयोगं आकङ्खति। यं चस्स संयोगपच्चया उप्पज्जति सुखं सोमनस्सं तं च आकङ्खति। [N.197,B.441,R.58] पुरिसत्ते, भिक्खवे, अभिरता सत्ता इत्थीसु संयोगं गता। एवं खो, भिक्खवे, पुरिसो पुरिसत्तं नातिवत्तति। एवं खो, भिक्खवे, संयोगो होति।

४. ''कथं च, भिक्खवे, विसंयोगो होति? इत्थी, भिक्खवे, अज्झत्तं इत्थिस्सरं इत्थालङ्कारं। सा तत्थ न रज्जति, सा तत्र नाभिरमति। सा तत्थ अरत्ता तत्र अनभिरता बहिद्धा पुरिसिन्द्रियं न मनसि करोति पुरिसकुत्तं पुरिसाकप्पं पुरिसविधं पुरिसच्छन्दं पुरिसस्सरं पुरिसालङ्कारं। सा तत्थ न रज्जति, तत्र नाभिरमति। सा तत्थ अरत्ता तत्र अनभिरता बहिद्धा

---

वहाँ रस लेती हुई, अनुरक्त होती हुई बाह्य पुरुषेन्द्रिय का, पुरुष के आचरण का, पुरुष की चाल-ढाल का, पुरुष के तौर-तरीकों का, पुरुष के सोच-विचार का, पुरुष के ऐश्वर्य का तथा पुरुष के अलङ्कारों का मन में ध्यान करती है। वह वहाँ अनुरक्त होती हुई रस का अनुभव करती है। वह वहाँ अनुरक्त एवं रसानुभव करती हुई उससे बाह्य संयोग चाहती है। और उसके उस संयोग के कारण जो सुख सौमनस्य उत्पन्न होता है उसे चाहती है। भिक्षुओ! स्त्रीत्व में अभिरत प्राणी पुरुषों के साथ संयोग प्राप्त करते हैं। इस प्रकार, भिक्षुओ! स्त्री स्त्रीत्व का अतिक्रमण नहीं कर पाती।

३. भिक्षुओ! पुरुष भी आध्यात्मिक पुरुषेन्द्रिय में, पुरुष के आचरण का, पुरुष की चाल-ढाल का, पुरुष के तौर-तरीकों का, पुरुष के सोच-विचार का, पुरुष के ऐश्वर्य का, पुरुष के अलङ्कार प्रसाधन का मन में ध्यान करता है। उसका वहाँ राग हो जाता है, वह वहाँ रस लेता है। वह वहाँ अनुरक्त होता हुआ, बाह्य स्त्रीन्द्रिय का मन में ध्यान करता है, स्त्री के आचरण का स्त्री की चाल-ढाल का ...पूर्ववत्... स्त्री के अलङ्कारों का मन में ध्यान करता है। वह वहाँ रस लेता है, अनुरक्त होता है। यों वह वहाँ रस लेता हुआ अनुरक्त होता हुआ उससे बाह्य संयोग की आकांक्षा करता है तथा उस संयोग से जो सुख एवं सौमनस्य उत्पन्न होता है उसकी आकांक्षा करता है। भिक्षुओ! पुरुषत्व में अभिरत प्राणी स्त्रियों के साथ संयोग प्राप्त करता है। इस तरह पुरुष पुरुषत्व को कभी अतिक्रान्त नहीं कर पाता। भिक्षुओ! यह 'संयोग' कहलाता है। (क)

**विसंयोग :** ४. ''भिक्षुओ! 'विसंयोग' क्या होता है? स्त्री आध्यात्मिक स्त्री-इन्द्रिय में स्त्री के आचरण का, स्त्री की चाल ढाल का ...पूर्ववत्... स्त्री के अलङ्कारों का मानसिक ध्यान नहीं करती। वह वहाँ अनुरक्त नहीं होती न उसमें कोई रुचि ही लेती है, वह वहाँ अनुरक्त न होती हुई,

संयोगं नाकङ्खति। यं चस्सा संयोगपच्चया उप्पज्जति सुखं सोमनस्सं तं च नाकङ्खति। इत्थत्ते, भिक्खवे, अनभिरता सत्ता पुरिसेसु विसंयोगं गता। एवं खो, भिक्खवे, इत्थी इत्थत्तं अतिवत्तति।

५. "पुरिसो, भिक्खवे, अज्झत्तं पुरिसिन्द्रियं न मनसि करोति पुरिसकुत्तं पुरिसाकप्पं पुरिसविधं पुरिसच्छन्दं पुरिसस्सरं पुरिसालङ्कारं। सो तत्थ न रज्जति, सो तत्र नाभिरमति। सो तत्थ अरत्तो तत्र अनभिरतो बहिद्धा इत्थिन्द्रियं न मनसि करोति इत्थिकुत्तं इत्थाकप्पं इत्थिविधं इत्थिच्छन्दं इत्थिस्सरं इत्थालङ्कारं। सो तत्थ रज्जति, तत्र नाभिरमति। सो तत्थ अरत्तो तत्र अनभिरतो बहिद्धा संयोगं नाकङ्खति। यं चस्स संयोगपच्चया उप्पज्जति सुखं सोमनस्सं तं च नाकङ्खति। पुरिसत्ते, भिक्खवे, अनभिरता सत्ता इत्थीसु विसंयोगं गता। एवं खो, भिक्खवे, पुरिसो पुरिसत्तं अतिवत्तति। एवं खो, भिक्खवे, विसंयोगो होति। [R.59] अयं खो, भिक्खवे, संयोगो विसंयोगो धम्मपरियायो" ति॥ ●

**९. दानमहप्फलसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा चम्पायं विहरति गग्गराय पोक्खरणिया तीरे। अथ खो सम्बहुला चम्पेय्यका उपासका येन आयस्मा सारिपुत्तो तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं सारिपुत्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदिंसु। एकमन्तं निसिन्ना खो चम्पेय्यका उपासका आयस्मन्तं सारिपुत्तं एतदवोचुं—[N.198,B.442] "चिरस्सुता नो, भन्ते, भगवतो सम्मुखा धम्मीकथा। साधु मयं, भन्ते, लभेय्याम भगवतो सम्मुखा धम्मिं कथं सवनाया" ति।

---

रुचि न लेती हुई बाह्य पुरुषेन्द्रिय का... पुरुषालङ्कारों का मन में ध्यान नहीं करती... न उससे बाह्य संयोग की आकांक्षा ही करती है। तथा उस संयोग के कारण प्राप्त होने वाले सुख सौमनस्य की भी आकांक्षा नहीं करती। भिक्षुओ! इस प्रकार स्त्रीत्व में अनुत्सुक प्राणी पुरुषों से विसंयुक्त (पृथक्) ही रहता है, अत: वैसी स्त्री स्त्रीत्व का अतिक्रमण करने में समर्थ है।

५. "भिक्षुओ! कोई पुरुष भी आध्यात्मिक पुरुषेन्द्रिय में ...पूर्ववत्... *(ऊपर के अनुबन्ध की तरह ही विस्तार कर लें।)* इस प्रकार, भिक्षुओ! पुरुषत्व में अनुत्सुक प्राणी स्त्रियों से विसंयुक्त (पृथक्) ही रहते हैं, अत: वैसा पुरुष पुरुषत्व का अतिक्रमण कर सकता है। इस प्रकार, भिक्षुओ! यह 'विसंयोग' कहलाता है। (ख)

यह, भिक्षुओ! 'संयोग' एवं 'विसंयोग' धर्मों की व्याख्या है। ●

**९. दानमहाफलसूत्र** : :

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) चम्पा नगरी की गग्गरा पुष्करिणी के तट पर साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय कभी चम्पावासी अनेक उपासक, जहाँ आयुष्मान् सारिपुत्र साधना कर रहे थे वहाँ, आये। आकर आयुष्मान् सारिपुत्र को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे हुए उन चम्पावासी उपासकों ने आयुष्मान् सारिपुत्र से यह निवेदन किया—"भन्ते! हम लोगों ने भगवान् के श्रीमुख से, बहुत समय हुआ, धार्मिक कथा नहीं सुनी, क्या ही अच्छा हो, अब हमको उनके श्रीमुख से कुछ धार्मिक सुनने को मिल जाय।"

"तेनहावुसो, तदहुपोसथे आगच्छेय्याथ, अप्पेव नाम लभेय्याथ भगवतो सम्मुखा धम्मिं कथं सवनाया" ति। "एवं, भन्ते" ति खो चम्पेय्यका उपासका आयस्मतो सारिपुत्तस्स पटिस्सुत्वा उट्ठायासना आयस्मन्तं सारिपुत्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कमिंसु।

२. अथ खो चम्पेय्यका उपासका तदहुपोसथे येनायस्मा सारिपुत्तो तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं सारिपुत्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठंसु। अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो तेहि चम्पेय्यकेहि उपासकेहि सद्धिं येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा सारिपुत्तो भगवन्तं एतदवोच—

[R.60] ३. "सिया नु खो, भन्ते, इधेकच्चस्स तादिसंयेव दानं दिन्नं न महप्फलं होति न महानिसंसं; सिया पन, भन्ते, इधेकच्चस्स तादिसंयेव दानं दिन्नं महप्फलं होति महानिसंसं" ति?

"सिया, सारिपुत्त, इधेकच्चस्स तादिसंयेव दानं दिन्नं न महप्फलं होति न महानिसंसं; सिया पुन, सारिपुत्त, इधेकच्चस्स तदिसंयेव दानं दिन्नं न महप्फलं होति महानिसंसं" ति।

४. "को नु खो, भन्ते, हेतु को पच्चयो येन मिधेकच्चस्स तादिसंयेव दानं दिन्नं न महप्फलं होति न महानिसंसं; को नु खो, भन्ते, हेतु को पच्चयो येन मिधेकच्चस्स तादिसंयेव दानं दिन्नं महप्फलं होति महानिसंसं" ति?

"इध, सारिपुत्त, एकच्चो सापेखो दानं देति, पतिबद्धचित्तो दानं देति, सन्निधिपेखो

---

"आयुष्मानो! हम लोग आगे आने वाले उपोसथ के दिन भगवान् के श्रीमुख से धार्मिक कथा सुनने का सौभाग्य प्राप्त कर सकेंगे। तब तुम आओ। तुम को भी यह सौभाग्य मिल जायगा!" यह सुनकर "अच्छा, भन्ते!" कहते हुए वे चम्पावासी उपासक अपने आसन से उठकर आयुष्मान् सारिपुत्र को प्रणाम-प्रदक्षिणा कर अपने अपने घरों को लौट गये।

२. तब वे चम्पावासी उपासक उपोसथ के दिन पुनः आयुष्मान सारिपुत्र के पास आये।... आयुष्मान् सारिपुत्र उन उपासकों को साथ लेकर भगवान् के सम्मुख पहुँचे। पहुँच कर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे आयुष्मान् सारिपुत्र ने भगवान् से यह जिज्ञासा प्रकट की—

३. "भन्ते! ऐसा क्यों होता है कि दो पुरुषों द्वारा एक ही प्रकार का दान दिये जाने पर भी उनमें से एक पुरुष का दान महान् फलदायक एवं शुभ परिणाम वाला होता है, जबकि दूसरे पुरुष द्वारा दिया गया वही दान उतना अच्छा फलदायक एवं शुभ परिणाम वाला नहीं होता?"

"हाँ, सारिपुत्र! ऐसा होता है कि दो पुरुषों द्वारा एक ही ...पूर्ववत्... शुभ परिणामवाला नहीं होता।"

४. "भन्ते! ऐसा होने में क्या कारण है कि दो पुरुषों द्वारा एक ही ...पूर्ववत्... शुभ परिणाम वाला नहीं होता?"

दानं देति, 'इमं पेच्च परिभुञ्जिस्सामी' ति दानं देति। सो तं दानं समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा अन्नं पानं वत्थं यानं मालागन्धविलेपनं सेय्यावसथपदीपेय्यं। तं किं मञ्ञसि, सारिपुत्त, ददेय्य इधेकच्चो एवरूपं दानं'' ति?

''एवं, भन्ते''।

५. ''तत्र, सारिपुत्त, य्वायं सापेखो दानं देति, पतिबद्धचित्तो दानं देति, [N.199] सन्निधिपेखो दानं देति, 'इमं पेच्च परिभुञ्जिस्सामी' ति दानं देति। सो तं दानं दत्वा [B.443] कायस्स भेदा परं मरणा चातुमहाराजिकानं देवानं सहब्यतं उपपज्जति। सो तं कम्मं [R.61] खेपेत्वा तं इद्धिं तं यसं तं आधिपच्चं आगामी होति आगन्ता इत्थत्तं।

६. ''इध पन, सारिपुत्त, एकच्चो न हेव खो सापेखो दानं देति, न पतिबद्धचित्तो दानं देति, न सन्निधिपेखो दानं देति, न 'इमं पेच्च परिभुञ्जिस्सामी' ति दानं देति; अपि च खो 'साहु दानं' ति दानं देति ...पे०... । न पि 'साहु दानं' ति दानं देति; अपि च खो 'दिन्नपुब्बं कतपुब्बं पितुपितामहेहि न अरहामि पोराणं कुलवंसं हापेतुं' ति दानं देति ...पे०... । न पि 'दिन्नपुब्बं कतपुब्बं पितुपितामहेहि न अरहामि पोराणं कुलवंसं हापेतुं' ति दानं देति; अपि च खो 'अहं पचामि, इमे न पचन्ति, नारहामि पचन्तो अपचन्तानं दानं अदातुं' ति दानं देति ...पे०... । न पि 'अहं पचामि, इमे न पचन्ति, नारहामि पचन्तो अपचन्तानं दानं अदातुं' ति

---

''यहाँ, सारिपुत्र! कोई पुरुष किसी अपेक्षा (आशा) से दान करता है, या किसी बात की पूर्ति मन में रखकर दान करता है, या फिर कुछ मिलने की बात सोचकर दान करता है, या फिर 'मरने के बाद इसके फल का उपभोग करूँगा'—यह सङ्कल्प कर दान करने की बात सोचता है तब वह किसी श्रमण या ब्राह्मण को अन्न, पान, वस्त्र, यान, माला गन्ध विलेपन, शय्या या प्रकाशयुक्त घर का दान करता है। तो क्या मानते हो, सारिपुत्र! किसी के द्वारा ऐसा दान दिया जाता है ना?''

''हाँ, भन्ते!''

५. ''वहाँ, सारिपुत्र! जो किसी अपेक्षा (आशा) से दान करता है ...पूर्ववत्... । वैसा दान कर वह चातुर्महाराजिक देवताओं के साथ उत्पन्न होता है। तब वहाँ कुछ कालक्षेप के बाद (उस कर्मफल के रूप में), यहाँ इस लोक में जन्म लेने पर उतनी सी ऋद्धि, उतना सा यश या उतना सा आधिपत्य (ऐश्वर्य) प्राप्त कर लेता है। (१)

६. ''पुनः, सारिपुत्र! यहाँ कोई दाता न किसी अपेक्षा से दान करता है ...पूर्ववत्... अपितु वह 'दान करना अच्छा होता है'—यह सोच कर दान करता है ...पूर्ववत्... । (२)

''... कोई दाता 'दान करना अच्छा होता है'—यह सोचकर भी दान नहीं करता, ...अपितु वह 'यह हमारे पिता, पितामह आदि द्वारा चलाया हुआ प्राचीन कुलक्रम है, इसे तोड़ना उचित नहीं है'—यह सोचकर दान करता है ...पूर्ववत्... । (३)

''...कोई दाता 'यह हमारे पिता-पितामह द्वारा चलाया हुआ पुराना कुलक्रम है, इसे तोड़ना उचित नहीं'—यह सोचकर भी दान नहीं करता... अपितु वह 'मैं कमा रहा हूँ, ये नहीं कमा रहे; न कमाने वाले को दान करना उचित है'—यह सोचकर दान करता है ...पूर्ववत्... । (४)

दानं देति; अपि च खो 'यथा तेसं पुब्बकानं इसीनं तानि महायञ्ञानि अहेसुं, सेय्यथीदं—अट्ठकस्स वामकस्स वामदेवस्स वेस्सामित्तस्स यमदग्गिनो अङ्गीरसस्स भारद्वाजस्स वासेट्ठस्स कस्सपस्स भगुनो, एवं मे अयं दानसंविभागो भविस्सती' ति दानं देति ...पे०... । न पि 'यथा तेसं पुब्बकानं इसीनं तानि महायञ्ञानि अहेसुं, सेय्यथीदं—अट्ठकस्स वामकस्स वामदेवस्स वेस्सामित्तस्स यमदग्गिनो अङ्गीरसस्स भारद्वाजस्स वासेट्ठस्स कस्सपस्स भगुनो, [R.62] एवं मे अयं दानसंविभागो भविस्सती' ति दानं देति; अपि च खो 'इमं मे दानं ददतो चित्तं पसीदति, अत्तमनता सोमनस्सं उपजायती' ति दानं देति ...पे०... । न पि 'इमं मे दानं ददतो चित्तं पसीदति, अत्तमनता सोमनस्सं उपजायती' ति दानं देति; अपि च खो चित्तालङ्कारचित्तपरिक्खारं दानं देति। सो तं दानं देति समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा अन्नं पानं वत्थं यानं मालागन्धविलेपनं सेय्यावसथपदीपेय्यं। तं किं मञ्ञसि, सारिपुत्त, ददेय्य इधेकच्चो एवरूपं दानं'' ति? ''एवं, भन्ते''।

[N.200] ७. ''तत्र, सारिपुत्त, य्वायं न हेव सापेखो दानं देति; न पतिबद्धचित्तो दानं देति; न सन्निधिपेखो दानं देति; न 'इमं पेच्च परिभुञ्जिस्सामी' ति दानं देति; न पि 'साहु दानं' ति [B.444] दानं देति; न पि 'दिन्नपुब्बं कतपुब्बं पितुपितामहेहि न अरहामि पोराणं कुलवंसं हापेतुं' ति दानं देति; न पि 'अहं पचामि, इमे न पचन्ति, नारहामि पचन्तो अपचन्तानं दानं अदातुं' ति दानं देति; न पि 'यथा तेसं पुब्बकानं इसीनं तानि महायञ्ञानि अहेसुं, सेय्यथीदं—अट्ठकस्स वामकस्स वामदेवस्स वेस्सामित्तस्स यमदग्गिनो अङ्गीरसस्स भारद्वाजस्स वासेट्ठस्स कस्सपस्स भगुनो, एवं मे अयं दानसंविभागो भविस्सती' ति दानं

---

''... कोई दाता 'मैं कमा रहा हूँ, ये नहीं कमा रहे; न कमानेवाले को दान करना उचित होता है',—यह सोचकर भी दान नहीं करता ...पूर्ववत्... अपितु वह 'जैसे हमारे पूर्वज ऋषि हुए थे—अष्टक, वामक, वामदेव, विश्वामित्र, यमदग्नि, अङ्गिरा, भारद्वाज, वसिष्ठ, कश्यप एवं भृगु—इन ऋषियों ने जो बड़े बड़े यज्ञ किये थे उनको जैसे उन यज्ञों का विशेष फल मिला था, वैसा ही इस दान का फल मुझको भी मिलेगा'—यह सोचकर दान करता है ...पूर्ववत्... । (५)

''...कोई दाता 'हमारे पूर्वज... इस दान का फल मुझको भी मिलेगा'—यह सोचकर भी दान नहीं करता... अपितु वह 'यह दान करने से मेरा चित्त प्रसन्न होगा, उसे सुख सौमनस्य होगा'—यह सोचकर दान करता है ...पूर्ववत्... । (६)

''... कोई दाता 'यह दान करने से मेरा चित्त प्रसन्न होगा, उसे सुख सौमनस्य होगा'—यह सोचकर दान नहीं करता... अपितु वह अपने चित्तालङ्कार एवं चित्तपरिष्कार के लिये दान करता है। वह यह किसी श्रमण ब्राह्मण को अन्न, पान, वस्त्र, यान, माला गन्धविलेपन, शय्या, तथा प्रकाशयुक्त घर-आदि का दान करता है। तो क्या मानते हो, सारिपुत्र, कोई दाता ऐसा दान करता है ना?'' (७) ''ऐसा ही है, भन्ते!''

७. ''वहाँ, सारिपुत्र! जो न किसी अपेक्षा से दान करता है, न उसमें आसक्त होकर दान करता है ...पूर्ववत्... न 'इस दान के करने से मेरा चित्त प्रसन्न होगा तथा सुख सौमनस्य प्राप्त

देति; न पि 'इमं मे दानं ददतो चित्तं पसीदति, अत्तमनता सोमनस्सं उपजायती' ति दानं देति; अपि च खो चित्तालङ्कारचित्तपरिक्खारं दानं देति। सो तं दानं दत्वा कायस्स भेदा परं [R.63] मरणा ब्रह्मकायिकानं देवानं सहब्यतं उपपज्जति। सो तं कम्मं खेपेत्वा तं इद्धिं तं यसं तं आधिपच्चं अनागामी होति अनागन्ता इत्थत्तं। अयं खो, सारिपुत्त, हेतु अयं पच्चयो येन मिधेकच्चस्स तादिसंयेव दानं दिन्नं न महप्फलं होति न महानिसंसं। अयं पन, सारिपुत्त, हेतु अयं पच्चयो येन मिधेकच्चस्स तादिसंयेव दानं दिन्नं महप्फलं होति महानिसंसं'' ति॥ ●

**१०. नन्दमातासुत्तं** : १. एवं मे सुतं। एकं समयं आयस्मा च सारिपुत्तो आयस्मा च महामोग्गल्लानो दक्खिणागिरिस्मिं चारिकं चरन्ति महता भिक्खुसङ्घेन सद्धिं। तेन खो पन समयेन वेळुकण्डकी नन्दमाता उपासिका रत्तिया पच्चूससमयं पच्चुट्ठाय **पारायनं** सरेन भासति।

२. तेन खो पन समयेन वेस्सवणो महाराजा उत्तराय दिसाय दक्खिणं दिसं गच्छति केनचिदेव करणीयेन। अस्सोसि खो वेस्सवणो महाराजा नन्दमाताय उपासिकाय पारायनं सरेन भासन्तिया, सुत्वा कथापरियोसानं आगमयमानो अट्ठासि।

३. अथ खो नन्दमाता उपासिका पारायनं सरेन भासित्वा तुण्ही अहोसि। अथ खो वेस्सवणो महाराजा नन्दमाताय उपासिकाय कथापरियोसानं विदित्वा अब्भनुमोदि—''साधु भगिनि, साधु भगिनी'' ति! [N.201]

---

करेगा'—यह सोचकर दान करता है; अपितु वह चित्तालङ्कार एवं चित्तपरिष्कार हेतु दान करता है। वह यह दान कर, देहपात के बाद मरणानन्तर, ब्रह्मकायिक देवों के साथ मैत्रीभाव से उत्पन्न होता है। वह वहाँ कुछ समय व्यतीत कर इस मनुष्य लोक में किये दान के अनुरूप ऋद्धि, यश, ऐश्वर्य आदि प्राप्त करने के लिये नहीं आता, अपितु वहीं अनागामी हो जाता है। सारिपुत्र! यह हेतु या यह प्रत्यय है कि किसी का किया हुआ दान वैसा फलदायक तथा वैसा शुभ परिणाम देनेवाला होता है॥'' ●

**१०. नन्दमातासूत्र : : सात अद्भुत धर्म**

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय आयुष्मान् सारिपुत्र एवं आयुष्मान् महामौद्गल्यायन विशाल भिक्षुसङ्घ के साथ दक्षिणागिरि में चारिका कर रहे थे। उस समय वेणुकण्टकी नन्दमाता उपासिका रात्रि के अन्तिम प्रहार (ब्राह्म मुहूर्त) में निद्रा त्याग कर **सुत्तनिपात** के **पारायणवर्ग** का सस्वर (सङ्गीतमय) पाठ कर रही थी।

२. उस समय वैश्रवण महाराज उत्तर दिशा से दक्षिण दिशा की ओर किसी कार्यविशेष से जा रहे थे। वैश्रवण महाराज ने नन्दमाता उपासिका द्वारा **सुत्तनिपात** के **पारायणवर्ग** का यह सस्वर पाठ किये जाते हुए सुना। सुन कर पाठसमाप्ति तक प्रतीक्षा करता हुआ वह वहीं ठहर गया।

३. अन्त में, नन्दमाता उपासिका पाठ समाप्त कर चुप हो गयी। तब वैश्रवण महाराज ने नन्दमाता उपासिका द्वारा पाठ की समाप्ति जान कर उसको यह साधुवाद (अभ्यनुमोदन) दिया—''बहुत अच्छा गाया, बहन! बहुत अच्छा!''

"को पनेसो, भद्रमुखा" ति ?

"अहं ते, भगिनि, भाता वेस्सवणो महाराजा" ति।

[B.445] "साधु, भद्रमुख, तेन हि यो मे अयं धम्मपरियायो भणितो इदं ते होतु आतिथेय्यं" ति।

"साधु, भगिनि, एतं चेव मे होतु आतिथेय्यं। स्वेव सारिपुत्तमोग्गल्लानप्पमुखो [R.64] भिक्खुसङ्घो अकतपातरासो वेळुकण्डकं आगमिस्सति, तं च भिक्खुसङ्घं परिविसित्वा मम दक्खिणं आदिसेय्यासि। एतं चेव मे भविस्सति आतिथेय्यं" ति।

४. अथ खो नन्दमाता उपासिका तस्सा रत्तिया अच्चयेन सके निवेसने पणीतं खादनीयं भोजनीयं पटियादापेसि। अथ खो सारिपुत्तमोग्गल्लानप्पमुखो भिक्खुसङ्घो अकतपातरासो येन वेळुकण्डको तदवसरि। अथ खो नन्दमाता उपासिका अञ्ञतरं पुरिसं आमन्तेसि—"एहि त्वं, अम्भो पुरिस, आरामं गन्त्वा भिक्खुसङ्घस्स कालं आरोचेहि—'कालो, भन्ते, अय्याय नन्दमातुया निवेसने निट्ठितं भत्तं''' ति। "एवं, अय्ये" ति खो सो पुरिसो नन्दमाताय उपासिकाय पटिस्सुत्वा आरामं गन्त्वा भिक्खुसङ्घस्स कालं आरोचेसि—"कालो, भन्ते, अय्याय नन्दमातुया निवेसने निट्ठितं भत्तं" ति। अथ खो सारिपुत्त-मोग्गल्लानप्पमुखो भिक्खुसङ्घो पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय येन नन्दमाताय उपासिकाय निवेसनं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। अथ खो नन्दमाता उपासिका सारिपुत्तमोग्गल्लानप्पमुखं भिक्खुसङ्घं पणीतेन खादनीयेन भोजनीयेन सहत्था सन्तप्पेसि सम्पवारेसि।

---

"परन्तु, भद्रमुख! आप कौन है ?"

"बहन! मैं आपका भाई वैश्रवण महाराज हूँ।"

"साधु, भद्रमुख! तो यह जो मैने धर्मपाठ किया है यही आप अपना आतिथ्यसत्कार मान लें!"

"बहन! ठीक है, मैं यही आतिथ्य सत्कार मान लेता हूँ। परन्तु कल सारिपुत्र एवं मौद्गल्यायन की प्रमुखता में विशाल भिक्षुसङ्घ प्रातःकालीन कलेवा (जलपान) किये विना ही इस वेणुकण्टक ग्राम में आयगा। आप मेरी ओर से उन को स्वयं अपने हाथों से परोस कर भोजन करा देना, यही मेरी दक्षिणा होगी। तथा यही मेरा आतिथ्य होगा।"

४. तब, उस रात्रि के बीत जाने पर, नन्दमाता उपासिका ने अपने घर पर बहुत रुचिकर एवं स्वादिष्ठ भोजन बनवाया। तभी आयुष्मान् सारिपुत्र एवं मौद्गल्यायन भी विशाल भिक्षुसङ्घ के साथ, विना कुछ कलेवा आदि किये ही उस वेणुकण्टक ग्राम में आ पहुँचे। तब नन्दमाता उपासिका ने एक पुरुष को बुलाया और उससे कहा—"अरे भाई! तुम विहार में जाकर भिक्षुसङ्घ को भोजन के समय की सूचना दो और कहो—"भन्ते! आर्य नन्दमाता के घर भोजन तय्यार है।" उस पुरुष ने "ठीक है, आर्ये!" कह कर विहार में जाकर भिक्षुसङ्घ को आर्या नन्दमाता का सन्देश सुना दिया। तब सारिपुत्र, मौद्गल्यायन सहित वह समस्त भिक्षुसङ्घ, वस्त्र सुव्यवस्थित कर, पात्रचीवर लेकर

५. अथ खो नन्दमाता उपासिका आयस्मन्तं सारिपुत्तं भुत्ताविं ओनीतपत्तपाणिं एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो नन्दमातरं उपासिकं आयस्मा सारिपुत्तो एतदवोच— "को पन ते, नन्दमाते, भिक्खुसङ्घस्स अब्भागमनं आरोचेसी" ति?

६. "इधाहं, भन्ते, रत्तिया पच्चूससमयं पच्चुट्ठाय पारायनं सरेन भासित्वा तुण्ही अहोसिं। अथ खो, भन्ते, वेस्सवणो महाराजा मम कथापरियोसानं विदित्वा [R.65] अब्भनुमोदि—'साधु, भगिनि, साधु भगिनी' ति! 'को पनेसो, भद्रमुखा' ति? [N.202] 'अहं ते, भगिनि, भाता वेस्सवणो महाराजा' ति। 'साधु, भद्रमुख, तेन हि यो मे [B.446] अयं धम्मपरियायो भणितो इदं ते होतु आतिथेय्यं' ति। 'साधु, भगिनि, एतं चेव मे होतु आतिथेय्यं। स्वेव सारिपुत्तमोग्गल्लानप्पमुखो भिक्खुसङ्घो अकतपातरासो वेळुकण्डकं आगमिस्सति, तं च भिक्खुसङ्घं परिविसित्वा मम दक्खिणं आदिसेय्यासि। एतं चेव मे भविस्सति आतिथेय्यं' ति। यदिदं, भन्ते, दाने पुञ्ञं च पुञ्ञमही च तं वेस्सवणस्स महाराजस्स सुखाय होतू" ति।

७. "अच्छरियं, नन्दमाते, अब्भुतं, नन्दमाते! यत्र हि नाम वेस्सवणेन महाराजेन एवंमहिद्धिकेन एवंमहेसक्खेन देवपुत्तेन सम्मुखा सल्लपिस्ससी" ति।

८. "न खो मे, भन्ते, एसेव अच्छरियो अब्भुतो धम्मो। अत्थि मे अञ्ञो पि अच्छरियो अब्भुतो धम्मो। इध मे, भन्ते, नन्दो नाम एकपुत्तको पियो मनापो। तं राजानो किस्मिञ्चिदेव पकरणे ओकस्स पसय्ह जीविता वोरोपेसुं। तस्मिं खो पनाहं, भन्ते, दारके गहिते वा गय्हमाने वा वधे वा वज्झमाने वा हते वा हञ्ञमाने वा नाभिजानामि चित्तस्स अञ्ञथत्तं" ति।

---

नन्दमाता उपासिका के घर पहुँचा और प्रज्ञप्त आसनों पर बैठ गया। तब उस नन्दमाता उपासिका ने अच्छा अच्छा रुचिकर भोजन अपने हाथों से परोसते हुए सारिपुत्र मौद्गल्यायन आदि समस्त भिक्षुसमूह को खिलाया।

५. तब नन्दमाता उपासिका, सारिपुत्र मौद्गल्यायन सहित समस्त भिक्षुसङ्घ को पात्र से हाथ हटाये हुए देख कर 'ये भोजन से तृप्त हो चुके'—ऐसा जान कर, एक ओर बैठ गयी। एक ओर बैठी हुई नन्दमाता उपासिका से आयुष्मान् सारिपुत्र ने यह पूछा—"नन्दमाते! तुम को इस भिक्षुसङ्घ के आगमन की पूर्व सूचना किसने दी?"

६. "भन्ते! मैं आज रात्रि के ब्राह्ममुहूर्त में निद्रात्याग कर पारायण का सस्वर पाठ समाप्त कर ही चुकी थी कि वैश्रवण महाराज ने ...पूर्ववत्... यही मेरा आतिथ्य होगा। अत:, भन्ते! इस भोजन दान से प्राप्त पुण्य और पुण्यफल वैश्रवण महाराज के लिये ही हो।"

७. "उपासिके! यह बहुत आश्चर्य की बात है कि आप का ऐसे ऋद्धिमान् एवं प्रतापी वैश्रवण महाराज जैसे देवता से संवाद होता है।" (१)

८. "भन्ते! मुझ में यही एक आश्चर्य धर्म नहीं है, अपितु मेरा एक नन्द नामक अतिप्रिय पुत्र था। उस को किसी प्रकरण में राजपुरुषों ने बहुत कष्ट दे कर बलात् मार दिया था। उस समय भन्ते!

"अच्छरियं, नन्दमाते, अब्भुतं नन्दमाते! यत्र हि नाम चित्तुप्पादं पि परिसोधेस्ससी" ति।

[R.66] ९. "न खो मे, भन्ते, एसेव अच्छरियो अब्भुतो धम्मो। अत्थि मे अञ्ञो पि अच्छरियो अब्भुतो धम्मो। इध मे, भन्ते, सामिको कालङ्कतो अञ्ञतरं यक्खयोनिं उपपन्नो। सो मे तेनेव पुरिमेन अत्तभावेन उद्दस्सेसि। न खो पनाहं, भन्ते, अभिजानामि ततोनिदानं चित्तस्स अञ्ञथत्तं" ति।

"अच्छरियं, नन्दमाते, अब्भुतं, नन्दमाते! यत्र हि नाम चित्तुप्पादं पि परिसोधेस्ससी" ति।

[N.203] १०. "न खो मे, भन्ते, एसेव अच्छरियो अब्भुतो धम्मो। अत्थि मे अञ्ञो पि अच्छरियो अब्भुतो धम्मो। यतोहं, भन्ते, सामिकस्स दहरस्सेव दहरा आनीता नाभिजानामि सामिकं मनसा पि अतिचरिता, कुतो पन कायेना" ति!

"अच्छरियं, नन्दमाते, अब्भुतं, नन्दमाते! यत्र हि नाम चित्तुप्पादं पि परिसोधेस्ससी" ति।

[B.447] ११. "न खो मे, भन्ते, एसेव अच्छरियो अब्भुतो धम्मो। अत्थि मे अञ्ञो पि अच्छरियो अब्भुतो धम्मो। यदाहं, भन्ते, उपासिका पटिदेसिता नाभिजानामि किञ्चि सिक्खापदं सञ्चिच्च वीतिक्कमिता" ति।

"अच्छरियं, नन्दमाते, अब्भुतं, नन्दमाते" ति!

१२. "न खो मे, भन्ते, एसेव अच्छरियो अब्भुतो धम्मो। अत्थि मे अञ्ञो पि अच्छरियो अब्भुतो धम्मो। इधाहं, भन्ते, यावदे आकङ्खामि विविच्चेव कामेहि विविच्च

---

पुत्र के पकड़े जाने पर, मारने के लिये ले जाते समय, या मारते समय उसको देखकर मेरे चित्त में कोई विकार उत्पन्न हुआ हो—ऐसा मैं नहीं जानती।"

"आश्चर्य है, नन्दमाता कि आपने अपने चित्त पर ऐसा विशेष निग्रह कर रखा है!" (२)

९. "भन्ते! मुझ में यही अद्भुत धर्म नहीं है, अपितु मेरा इस जन्म का स्वामी प्रेतयोनि में उत्पन्न हुआ है। वह अब जब कभी मेरे सामने आता है तो उसे देखकर मेरे चित्त में कोई काम विकार उत्पन्न नहीं होता।"

"आश्चर्य है, नन्दमाता! कि आप में ऐसी आश्चर्यमय चित्तशुद्धि भी है।" (३)

१०. "भन्ते! मुझ में यही आश्चर्यजनक धर्म नहीं है, अपितु मेरा जब से मेरे स्वामी के साथ विवाह हुआ था तब से किसी अन्य के प्रति मेरे चित्त में कोई कामविकार उत्पन्न नहीं हुआ।"

"आश्चर्य है, नन्दमाता! कि आप में ऐसा आश्चर्यजनक गुण है।" (४)

११. "भन्ते! मुझ में यही अद्भुतधर्म नहीं है, अपितु जब से मैं भगवान् की उपासिका बनी हूँ, तब से मैने उन से गृहीत किसी भी शिक्षापद का अपने संज्ञान में अतिक्रमण नहीं किया।"

"आश्चर्य है, नन्दमाता! कि आप में ऐसा आश्चर्यमय गुण है।" (५)

१२. "भन्ते! मुझ में यही आश्चर्यमय गुण नहीं है, अपितु मुझ में एक अन्य आश्चर्यमय गुण

अकुसलेहि धम्मेहि सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरामि। वितक्कविचारानं वूपसमा अज्झत्तं सम्पसादनं चेतसो एकोदिभावं अवितक्कं अविचारं विवेकजं पीतिसुखं दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरामि। पीतिया च विरागा उपेक्खिका च विहरामि सता च सम्पजाना सुखं च कायेन पटिसंवेदेमि, यं तं अरिया आचिक्खन्ति 'उपेक्खको सतिमा सुखविहारी' ति ततियं झानं उपसम्पज्ज विहरामि। सुखस्स च पहाना दुक्खस्स च पहाना पुब्बेव सोमनस्सदोमनस्सानं अत्थङ्गमा [R.67] अदुक्खमसुखं उपेक्खासतिपारिसुद्धिं चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरामी'' ति।

''अच्छरियं, नन्दमाते, अब्भुतं, नन्दमाते'' ति!

१३. ''न खो मे, भन्ते, एसेव अच्छरियो अब्भुतो धम्मो। अत्थि मे अञ्ञो पि अच्छरियो अब्भुतो धम्मो। यानिमानि, भन्ते, भगवता देसितानि पञ्चोरम्भागियानि संयोजनानि नाहं तेसं किञ्चि अत्तनि अप्पहीनं समनुपस्सामी'' ति।

''अच्छरियं, नन्दमाते, अब्भुतं, नन्दमाते'' ति!

[N.204] १४. अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो नन्दमातरं उपासिकं धम्मिया कथाय सन्दस्सेत्वा समादपेत्वा समुत्तेजेत्वा सम्पहंसेत्वा उट्ठायासना पक्कामी ति॥ **महायञ्ञवग्गो पञ्चमो॥** ●

**तस्सुद्दानं**

ठिति च परिक्खारं द्वे, अग्गी सञ्ञा च द्वे परा।
मेथुना संयोगो दानं, नन्दमातेन ते दसा ति॥ ●

**पठमो पण्णासको समत्तो॥**

---

भी है। भन्ते! मैं जितना चाहती हूँ उतना ही कामभोगों से दूर रह कर वितर्क विचार सहित प्रीतिसुखमय प्रथम ध्यान को प्राप्त कर साधना करती हूँ। ...पूर्ववत्...। सुख-दु:ख के प्रहाण से, सौमनस्य दौर्मनस्य के अस्त हो जाने से अदु:ख असुखमय उपेक्षास्मृति परिशुद्धियुक्त चतुर्थ ध्यान को प्राप्त कर साधना करती हूँ।''

''आश्चर्य है, नन्दमाता! कि आप में यह भी आश्चर्यमय गुणधर्म है।'' (६)

१३. ''भन्ते! न केवल मुझ में यही अद्भुत धर्म है, अपितु मुझ में एक अन्य आश्चर्यमय धर्म भी है। भन्ते! भगवान् ने जिन पाँच अवरभागीय संयोजनों के प्रहाण का उपदेश किया है उन में से कोई भी संयोजन मेरे चित्त से प्रहीण न हुआ हो—ऐसा मुझे ज्ञात नहीं।''

''आश्चर्य है, नन्दमाता! कि आप में ऐसा भी अद्भुत धर्म है।'' (७)

१४. तब आयुष्मान् सारिपुत्र ने नन्दमाता उपासिका को धार्मिक कथा कह कर धर्मसाधना के प्रति सन्तुष्ट एवं समुत्तेजित तथा सम्प्रहृष्ट किया॥ **महायज्ञ वर्ग पञ्चम सम्पन्न॥** ●

**इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची**

१. सप्तविज्ञानस्थितिसूत्र, २. समाधिपरिष्कारसूत्र, ३. प्रथम अग्निसूत्र, ४. द्वितीय अग्निसूत्र, ५. प्रथम संज्ञासूत्र, ६. द्वितीय संज्ञासूत्र, ७. मैथुनसूत्र, ८. संयोगसूत्र, ९. दानमहाफलसूत्र, एवं १०. नन्दमातासूत्र॥ **प्रथम पञ्चाशत्क सम्पन्न॥** ●

## ६. अब्याकतवग्गो

### दुतियो पण्णासको

[B.448] **१. अब्याकतसुत्तं :** १. अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु येन भगवा तेनुपसङ्कमि; [R.68] उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—''को नु खो, हेतु को पच्चयो येन सुतवतो अरियासावकस्स विचिकिच्छा नुप्पज्जति अब्याकतवत्थूसू'' ति?

२. ''दिट्ठिनिरोधो खो, भिक्खु, सुतवतो अरियसावकस्स विचिकिच्छा नुप्पज्जति अब्याकतवत्थूसु। 'होति तथागतो परं मरणा' ति खो, भिक्खु, दिट्ठिगतमेतं; 'न होति तथागतो परं मरणा' ति खो, भिक्खु, दिट्ठिगतमेतं; 'होति च न च होति तथागतो परं मरणा' ति खो, भिक्खु, दिट्ठिगतमेतं; 'नेव होति न न होति तथागतो परं मरणा' ति खो, भिक्खु, दिट्ठिगतमेतं। अस्सुतवा, भिक्खु, पुथुज्जनो दिट्ठिं नप्पजानाति, दिट्ठिसमुदयं नप्पजानाति, दिट्ठिनिरोधं, नप्पजानाति, दिट्ठिनिरोधगामिनिं पटिपदं नप्पजानाति। तस्स सा दिट्ठि पवड्ढति, सो न परिमुच्चति जातिया जराय मरणेन सोकेहि परिदेवेहि दुक्खेहि दोमनस्सेहि उपायासेहि, न परिमुच्चति दुक्खस्मा ति वदामि।

[N.205] ३. ''सुतवा च खो, भिक्खु, अरियसावको दिट्ठिं पजानाति, दिट्ठिसमुदयं पजानाति, दिट्ठिनिरोधं पजानाति, दिट्ठिरोधगामिनिं पटिपदं पजानाति। तस्स सा दिट्ठि

---

## ६. अव्याकृतवर्ग

### द्वितीय पञ्चाशत्क

**१. अव्याकृतसूत्र : : अव्याकृत वस्तुओं में असन्देह**

१. तब कोई भिक्षु भगवान् के सम्मुख आया, आ कर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठा हुआ वह भगवान् से यह बोला—''भन्ते! कौन हेतु या कौन प्रत्यय है, जिससे श्रुतवान् आर्यश्रावक को अव्याकृत वस्तुओं में विचिकित्सा (सन्देह) नहीं होती?''

२. ''दृष्टिनिरोध के कारण, भिक्षु! श्रुतवान् आर्यश्रावक को अव्याकृत वस्तुओं में विचिकित्सा उत्पन्न नहीं होती। 'तथागत मरणोत्तर भी रहते हैं'—यह बात, भिक्षु! दृष्टिगत (मिथ्यामत) है; 'तथागत मरणोत्तर नहीं रहते'—यह बात भी, भिक्षु! मिथ्या है; 'तथागत मरणोत्तर होते भी हैं, नहीं भी होते'—यह बात भी, भिक्षु! मिथ्या है; 'तथागत मरणोत्तर नहीं होते, न नहीं होते'—यह बात भी, भिक्षु! मिथ्या है। भिक्षु! अश्रुतवान् पृथग्जन मिथ्यादृष्टिसमुदय, मिथ्यादृष्टिनिरोध एवं मिथ्यादृष्टिनिरोधगामी मार्ग को नहीं जानता। अतः उसकी वह मिथ्यादृष्टि बढ़ती रहती है; इस कारण, वह जन्म जरा मरण शोक परिदेव दुःख दौर्मनस्य से छुटकारा नहीं पाता। संक्षेप में, वह दुःख से मुक्त नहीं होता—ऐसा मेरा मानना है।''

३. ''भिक्षु! श्रुतवान् आर्यश्रावक दृष्टि, दृष्टिसमुदय, दृष्टिनिरोध एवं दृष्टिनिरोधगामी मार्ग को जानता है; अतः उसकी वह दृष्टि निरुद्ध हो जाती है, इस कारण वह जन्म जरा... दुःख दौर्मनस्य से

निरुज्झति, सो परिमुच्चति जातिया जराय मरणेन सोकेहिं परिदेवहि दुक्खेहि दोमनस्सेहि उपायासेहि, परिमुच्चति दुक्खस्मा ति वदामि। एवं जानं खो, भिक्खु, सुतवा अरियसावको एवं पस्सं 'होति तथागतो परं मरणा' ति पि न ब्याकरोति; 'न होति तथागतो परं मरणा' ति पि न ब्याकरोति; 'होति च न च होति तथागतो परं मरणा' ति पि न व्याकरोति; 'नेव होति न न होति तथागतो परं मरणा' ति पि न ब्याकरोति। एवं जानं खो, भिक्खु, सुतवा अरियसावको एवं पस्सं एवं अब्याकरणधम्मो होति अब्याकतवत्थूसु। एवं जानं खो भिक्खु सुतवा अरियसावको एवं पस्सं न छम्भति, न कम्पति, न वेधति, न सन्तासं आपज्जति अब्याकतवत्थूसु।

४. '''होति तथागतो परं मरणा' ति खो, भिक्खु, तण्हागतमेतं ...पे०... [B.449] सञ्ञागतमेतं ...पे०... मञ्ञितमेतं ...पे०... पपञ्चितमेतं ...पे०... उपादानगतमेतं [R.69] ...पे०...। 'होति तथागतो परं मरणा' ति खो भिक्खु विप्पटिसारो एसो; 'न होति तथागतो परं मरणा' ति खो, भिक्खु, विप्पटिसारो एसो; 'होति च न च होति तथागतो परं मरणा' ति खो, भिक्खु, विप्पटिसारो एसो; 'नेव होति न न होति तथागतो परं मरणा' ति खो, भिक्खु, विप्पटिसारो एसो। अस्सुतवा, भिक्खु, पुथुज्जनो विप्पटिसारं नप्पजानाति, विप्पटिसारसमुदयं नप्पजानाति, विप्पटिसारनिरोधं नप्पजानाति, विप्पटिसारनिरोधगामिनिं पटिपदं नप्पजानाति। तस्स सो विप्पटिसारो पवड्ढति, सो न परिमुच्चति जातिया जराय मरणेन सोकेहि परिदेवेहि दुक्खेहि दोमनस्सेहि उपायासेहि, न परिमुच्चति दुक्खस्मा ति वदामि।

५. ''सुतवा च खो, भिक्खु, अरियसावको विप्पटिसारं पजानाति, विप्पटिसार-

---

मुक्त हो पा जाता है। संक्षेप में, 'वह दुःख से मुक्त हो जाता है'—ऐसा मैं मानता हूँ। ऐसा जानता हुआ, ऐसा देखता हुआ वह श्रुतवान् आर्यश्रावक 'तथागत मरणानन्तर भी होते हैं'—ऐसा व्याख्यान नहीं करता; 'तथागत मरणानन्तर नहीं होते'—ऐसा व्याख्यान भी नहीं करता; 'तथागत मरणानन्तर होते भी हैं, नहीं भी होते'—ऐसा व्याख्यान भी नहीं करता; और न 'तथागत नहीं होते, न नहीं होते'—यही व्याख्यान करता है। ऐसा जानता हुआ, ऐसा देखता हुआ वह श्रुतवान् आर्यश्रावक इन अव्याकृत वस्तुओं के व्याख्यान में न स्तब्ध होता है, न काँपता है, न विंधता है, न सन्त्रासयुक्त ही होता है।''

४. ''भिक्षु! 'तथागत मरणानन्तर होते हैं'—यह बात तृष्णा के कारण... संज्ञा के कारण... मान्यता के कारण... प्रपञ्च के कारण... उपादान के कारण मन में उत्पन्न होती है। 'तथागत मरणानन्तर भी रहते हैं'—यह बात, भिक्षु! विप्रतिसार (खेद) मात्र है, 'तथागत मरणानन्तर नहीं होते', 'तथागत मरणानन्तर होते भी नहीं भी होते', और 'तथागत मरणानन्तर नहीं होते, न नहीं होते'—ये मत भी साधक के विप्रतिसारमात्र हैं। अश्रुतवान् पृथग्जन, भिक्षु! विप्रतिसार को, विप्रतिसारसमुदय को, विप्रतिसारनिरोध को, विप्रतिसारनिरोधगामी मार्ग को नहीं जानता। अतः उसका वह विप्रतिसार बढ़ता जाता है, इस कारण वह जाति जरा मरण... दुःख दौर्मनस्य से छुटकारा नहीं पाता। संक्षेप में 'वह दुःख से मुक्त नहीं होता'—ऐसा मैं मानता हूँ।''

समुदयं पजानाति, विप्पटिसारनिरोधं पजानाति, विप्पटिसारनिरोधगामिनिं पटिपदं पजानाति। तस्स सो विप्पटिसारो निरुज्झति, सो परिमुच्चति जातिया ...पे०... दुक्खस्मा ति वदामि। एवं जानं खो, भिक्खु, सुतवा अरियसावको एवं पस्सं 'होति तथागतो परं मरणा' ति पि न [N.206] ब्याकरोति ...पे०... 'नेव होति न न होति तथागतो परं मरणा' ति पि न ब्याकरोति। एवं जानं खो, भिक्खु, सुतवा अरियसावको एवं पस्सं एवं अब्याकरणधम्मो होति अब्याकतवत्थूसु। एवं जानं खो, भिक्खु, सुतवा अरियसावको एवं पस्सं न छम्भति, न कम्पति, [R.70] न वेधति, न सन्तासं आपज्जति अब्याकतवत्थूसु। अयं खो, भिक्खु, हेतु अयं पच्चयो येन सुतवतो अरियसावकस्स विचिकिच्छा नुप्पज्जति अब्याकतवत्थूसू'' ति॥ ●

**२. पुरिसगतिसुत्तं :** १. ''सत्त च, भिक्खवे, पुरिसगतियो देसेस्सामि अनुपादा च परिनिब्बानं। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—''कतमा च, भिक्खु, सत्त पुरिसगतियो? [B.450] २. ''इध, भिक्खवे, भिक्खु एवं पटिपन्नो होति—'नो चस्स नो च मे सिया, न भविस्सति न मे भविस्सति, यदत्थि यं भूतं तं पजहामी' ति उपेक्खं पटिलभति। सो भवे न रज्जति, सम्भवे न रज्जति, अत्थुत्तरि पदं सन्तं सम्मप्पञ्ञाय पस्सति। तं च ख्वस्स पदं न सब्बेन सब्बं सच्छिकतं होति, तस्स न सब्बेन सब्बं मानानुसयो पहीनो होति, न सब्बेन सब्बं

---

५. श्रुतवान् आयश्रावक, भिक्षु! विप्रतिसार को, विप्रतिसारसमुदय को, विप्रतिसारनिरोध को, विप्रतिसारनिरोधगामिनी प्रतिपदा को जानता है। अतः उसका वह विप्रतिसार निरुद्ध हो जाता है; इस कारण, वह जाति जरा मरण... 'दुःख से मुक्त हो जाता है'—ऐसा मैं मानता हूँ। ऐसा जानता हुआ, ऐसा देखता हुआ वह श्रुतवान् आर्यश्रावक 'तथागत मरणानन्तर होते हैं'— ...पूर्ववत्... इन मतों का व्याख्यान नहीं करता। भिक्षु! ऐसा जानता हुआ, ऐसा देखता हुआ वह आर्यश्रावक अव्याकृत वस्तुओं के व्याख्यान में कोई रुचि नहीं रखता। ऐसा जानता हुआ, ऐसा देखता हुआ वह श्रुतवान् आर्यश्रावक इन अव्याकृत वस्तुओं के व्याख्यान में न स्तब्ध होता है, न काँपता है; न विंधता है, न सन्त्रासयुक्त ही होता है।

''भिक्षुओ! यह कारण है, यह प्रत्यय है, जिससे श्रुतवान् आर्यश्रावक की अव्याकृत वस्तुओं में विचिकित्सा नहीं होती।'' ●

**२. पुरुषगतिसूत्र : : सात पुरुषगति**

१. ''भिक्षुओ! मैं तुम को सात पुरुष-गतियों तथा निर्वाण के विषय में बताऊँगा। उस को सुनो तथा अपने मन में भली भाँति बैठा लो। मैं बताता हूँ।'' ''अच्छा, भन्ते!'' कह कर भिक्षुओं ने भगवान् का आदेश शिरोधार्य किया। भगवान् ने यह देशना की—''भिक्षुओ! सात पुरुषगतियाँ कौन सी होती हैं?

२. ''यहाँ, भिक्षुओ! कोई साधक भिक्षु ऐसा जान लेता है—'न था, न होने की सम्भावना है, न होगा; और जो इस समय है, जो हो चुका, उस को मैं छोड़ रहा हूँ।' तब वह (सांसारिक व्यवहार के प्रति) उपेक्षावृत्ति धारण कर लेता है। उस समय वह भव में, उत्पन्न में राग नहीं रखता;

भवरागानुसयो पहीनो होति, न सब्बेन सब्बं अविज्जानुसयो पहीनो होति। सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया अन्तरापरिनिब्बायी होति। सेय्यथापि, भिक्खवे, दिवसंसन्तत्ते अयोकपाले हञ्ञमाने पपटिका निब्बत्तित्वा निब्बायेय्य। एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु एवं पटिपन्नो होति—'नो चस्स नो च मे सिया, न भविस्सति न मे भविस्सति, यदत्थि यं भूतं तं पजहामी' ति उपेक्खं पटिलभति। सो भवे न रज्जति, सम्भवे न रज्जति, अत्थुत्तरिं पदं सन्तं सम्मप्पञ्ञाय पस्सति। तं च ख्वस्स पदं न सब्बेन [R.71] सब्बं सच्छिकतं होति, तस्स न सब्बेन सब्बं मानानुसयो पहीनो होति, न सब्बेन सब्बं भवरागानुसयो पहीनो होति, न सब्बेन सब्बं अविज्जानुसयो पहीनो होति। सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया अन्तरापरिनिब्बायी होति।

३. ''इध पन, भिक्खवे, भिक्खु एवं पटिपन्नो होति—'नो चस्स नो च मे [N.207] सिया, न भविस्सति न मे भविस्सति, यदत्थि यं भूतं तं पजहामी' ति उपेक्खं पटिलभति। सो भवे न रज्जति, सम्भवे न रज्जति, अत्थुत्तरिं पदं सन्तं सम्मप्पञ्ञाय पस्सति। तं च ख्वस्स पदं न सब्बेन सब्बं सच्छिकतं होति, तस्स न सब्बेन सब्बं मानानुसयो पहीनो होति, सब्बेन सब्बं भवरागानुसयो पहीनो होति, न सब्बेन सब्बं अविज्जानुसयो पहीनो होति। सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया अन्तरापरिनिब्बायी होति। सेय्यथापि, भिक्खवे, दिवसंसन्तत्ते अयोकपाले हञ्ञमाने पपटिका निब्बत्तित्वा उप्पतित्वा निब्बायेय्य। एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु एवं पटिपन्नो होति—नो चस्स नो च मे सिया ...पे०... सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया अन्तरापरिनिब्बायी होति।

४. ''इध पन भिक्खवे, भिक्खु एवं पटिपन्नो होति—नो चस्स नो च मे सिया

---

अपितु इससे ऊपर जो शान्त निर्वाण पद है उसको जानकर उसके साक्षात्कार में लग जाता है। परन्तु जब तक उसको उस शान्त पद का सर्वथा सब तरह से साक्षात्कार नहीं होता, तब तक न उसका मानानुशय सर्वथा प्रहीण होता है, और न भवरागानुशय, न अविद्यानुशय ही सर्वथा प्रहीण हो पाता है। वह उस समय पाँच अवरभागीय संयोजन क्षीण हो जाने से निर्वाण के मध्यमार्ग में (अन्तरा परिनिर्वायी) ही रहता है। जैसे, भिक्षुओ! दिन भर धूप में तपेय हुए किसी लौहकपाल पर चोट मारने पर उससे पपड़ियाँ (चिनगारियाँ) छूटने लगती हैं उसी प्रकार, भिक्षुओ! जब साधक भिक्षु यह जान लेता है—'न था, न होने की सम्भावना है, न होगा, और जो इस समय है, सत्ता में है उसको मैं छोड़ रहा हूँ', तब वह सांसारिक व्यवहार के प्रति उपेक्षावृत्ति धारण कर लेता है। उस समय वह न भव में, न सम्भव में राग रखता है, अपितु इस से ऊपर जो शान्त निर्वाण पद है उसको जानकर उसके साक्षात्कार में लग जाता है ...पूर्ववत्... निर्वाण के मध्यमार्ग में (अन्तरा परिनिर्वायी) ही रहता है।'' (१)

३. ''यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु ऐसा जान लेता है—'न मुझमें था, न होने की सम्भावना है, ...पूर्ववत्... संयोजनों के क्षीण होने से अन्तरापरिनिर्वायी ही रहता है। जैसे, भिक्षुओ! दिनभर धूप में तपे हुए किसी लोहकपाल पर चोट मारे जाने पर उससे पपड़ियाँ छूट कर, कुछ दूर उछलकर जाने

[B.451] ...पे०... सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया अन्तरापरिनिब्बायी होति। सेय्यथापि, भिक्खवे, दिवसंसन्तत्ते अयोकपाले हञ्ञमाने पपटिका निब्बत्तित्वा उप्पतित्वा अनुपहच्च तलं निब्बायेय्य। एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु एवं पटिपन्नो होति— [R.72] नो चस्स नो च मे सिया ...पे०... सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया अन्तरापरिनिब्बायी होति।

५. "इध पन भिक्खवे, भिक्खु एवं पटिपन्नो होति—नो चस्स नो च मे सिया ...पे०... सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया उपहच्चपरिनिब्बायी होति। सेय्यथापि, भिक्खवे, दिवसंसन्तत्ते अयोकपाले हञ्ञमाने पपटिका निब्बत्तित्वा उप्पतित्वा उपहच्च तलं निब्बायेय्य। एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु एवं पटिपन्नो होति—नो चस्स नो च मे सिया ...पे०... सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया उपहच्चपरिनिब्बायी होति।

६. "इध पन, भिक्खवे, भिक्खु एवं पटिपन्नो होति—नो चस्स नो च मे सिया ...पे०... सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया असङ्खारपरिनिब्बायी होति। सेय्यथापि, भिक्खवे, दिवसंसन्तत्ते अयोकपाले हञ्ञमाने पपटिका निब्बत्तित्वा उप्पतित्वा परित्ते तिणपुञ्जे वा कट्ठपुञ्जे वा निपतेय्य। सा तत्थ अग्गिं पि जनेय्य, धूमं पि जनेय्य, अग्गिं [N.208] पि जनेत्वा धूमं पि जनेत्वा तमेव परित्तं तिणपुञ्जं वा कट्ठपुञ्जं वा परियादियित्वा

---

पर वहाँ शान्त हो जाती हैं; उसी प्रकार, भिक्षुओ! वह भिक्षु यह जान लेता है ...पूर्ववत्... **अन्तरापरिनिर्वायी** ही रहता है।''' (२)

४. "यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु ऐसा जान लेता है—'न मुझमें था, न होने की सम्भावना है ...पूर्ववत्... संयोजनों के क्षीण होने से अन्तरापरिनिर्वायी ही रहता है। जैसे, भिक्षुओ! दिन भर धूप में तपे हुए किसी लौहकपाल पर चोट मारे जाने पर उससे पपड़ियाँ छूट कर कुछ दूर उछलकर जाने पर कोई हानि पहुँचाये विना ही वहाँ शान्त हो जाती हैं; उसी प्रकार भिक्षुओ! वह भिक्षु यह जान लेता है ...पूर्ववत्... अन्तरापरिनिर्वायी ही रहता है।''' (३)

५. "यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु ऐसा जान लेता है—'न मुझमें था, न होने की सम्भावना है ...पूर्ववत्... संयोजनों के क्षीण होने से उपहत्य परिनिर्वायी हो जाता है। जैसे, भिक्षुओ! दिन भर धूप में तपे हुए किसी लौहकपाल पर हथौड़े की चोट मारने पर, उससे पपड़ियाँ छूटकर उछलकर कुछ दूर जाकर साधारण हानि पहुँचाती हुई वहीं भूमि पर गिर जायँ; इसी प्रकार, भिक्षुओ! भिक्षु ...पूर्ववत्... **उपहत्य परिनिर्वायी** हो जाता है।''' (४)

६. "यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु जब ऐसा जान लेता है—'न था, न मुझमें होने की सम्भावना है ...पूर्ववत्... पाँचों अवरभागीय संयोजनों के क्षीण होने जाने से वह असंस्कारपरिनिर्वायी हो जाता है। जैसे, भिक्षुओ! दिन भर धूप में तपे हुए किसी लौहकपाल पर चोट मारने से उसकी पपड़ियाँ छूट कर, उछल कर किसी छोटी सी तृणराशि या काष्ठराशि पर जा गिरे। वे वहाँ उस तृणराशि या काष्ठराशि को जला दें, धूआँ उठा दे, जलाकर तथा धूआँ उठाकर उस अल्प तृणराशि

अनाहारा निब्बायेय्य। एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु एवं पटिपन्नो होति—नो चस्स नो च मे सिया ...पे०... सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया असङ्खारपरिनिब्बायी होति।

७. ''इध पन, भिक्खवे, भिक्खु एवं पटिपन्नो होति—नो चस्स नो च मे [R.73] सिया ...पे०... सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ससङ्खारपरिनिब्बायी होति। सेय्यथापि, भिक्खवे, दिवसंसन्तत्ते अयोकपाले हञ्ञमाने पपटिका निब्बत्तित्वा उप्पतित्वा विपुले तिणपुञ्जे वा कट्ठपुञ्जे वा निपतेय्य। सा तत्थ अग्गिं पि जनेय्य, धूमं पि जनेय्य, अग्गिं पि जनेत्वा धूमं पि जनेत्वा तमेव विपुलं तिणपुञ्जं वा कट्ठपुञ्जं वा परियादियित्वा अनाहारा निब्बायेय्य। एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु एवं पटिपन्नो होति—नो चस्स [B.452] नो च मे सिया ...पे०... सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया ससङ्खार-परिनिब्बायी होति।

८. ''इध पन, भिक्खवे, भिक्खु एवं पटिपन्नो होति—'नो चस्स नो च मे सिया, न भविस्सति, न मे भविस्सति, यदत्थि यं भूतं तं पजहामी' ति उपेक्खं पटिलभति। सो भवे न रज्जति, सम्भवे न रज्जति, अत्थुत्तरि पदं सन्तं सम्मप्पञ्ञाय पस्सति। तं च ख्वस्स पदं न सब्बेन सब्बं सच्छिकतं होति, तस्स न सब्बेन सब्बं मानानुसयो पहीनो होति, न सब्बेन सब्बं भवरागानुसयो पहीनो होति, न सब्बेन सब्बं अविज्जानुसयो पहीनो होति। सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया उद्धंसोतो होति अकनिट्ठगामी। सेय्यथापि, भिक्खवे,

---

या काष्ठराशि को जलाकर आगे अन्य इन्धन (आहार) न मिलने से वहीं बुझ जाती हैं; इसी प्रकार, भिक्षुओ! भिक्षु जब इस प्रकार जान लेता है— ...पूर्ववत्... वह **असंस्कारपरिनिर्वायी** हो जाता है।'' (५)

७. ''यहाँ, भिक्षुओ! जब कोई साधक भिक्षु यह जान लेता है—'न था, न मुझमें होने की सम्भावना है... पूर्ववत्... पाँचों अवरभागीय संयोजनों के क्षीण हो जाने से वह ससंस्कारपरिनिर्वायी हो जाता है। जैसे, भिक्षुओ! दिन भर धूप में तपे हुए किसी लौहकपाल पर चोट मारने से उसकी पपड़ियाँ छूट कर, उछल कर किसी विशाल तृण राशि या काष्ठपुञ्ज पर जा गिरे। वह वहाँ अग्नि लगा दे, धूआँ उठा दे, इस तरह वह उस तृणराशि में अग्नि लगा कर, उसे जलाकर, आगे आहार (इन्धन) न मिलने से वहीं बुझ जाय। इसी प्रकार, भिक्षुओ! वह भिक्षु ...पूर्ववत्... **ससंस्कार परिनिर्वायी** हो जाता है।''' (६)

८. ''यहाँ, भिक्षुओ! कोई साधक भिक्षु जब यह जान लेता है—'न था, न मुझमें होने की सम्भावना है, न होगा, मुझमें जो इस समय है, सत्ता में है, उसको छोड़ रहा हूँ।' तब वह (सांसारिक व्यवहार के प्रति) उपेक्षा धारण कर लेता है। उस समय वह न भव में, न सम्भव में राग रखता है, अपितु इससे आगे जो शान्त निर्वाण पद है उसके साक्षात्कार में लग जाता है। परन्तु वह पद उसको जब तक सर्वथा सब प्रकार से साक्षात् नहीं होता, तब तक उसके मानानुशय, भवरागानुशय तथा अविद्याशय सर्वथा सब प्रकार से क्षीण नहीं होते। तब वह पाँचों अवरभागीय संयोजनों के क्षीण

दिवसंसन्तत्ते अयोकपाले हञ्ञमाने पपटिका निब्बत्तित्वा उप्पतित्वा महन्ते तिणपुञ्जे वा [R.74] कट्ठपुञ्जे वा निपतेय्य। सा तत्थ अग्गिं पि जनेय्य, धूमं पि जनेय्य, अग्गिं पि जनेत्वा धूमं पि जनेत्वा तिणपुञ्जं वा कट्ठपुञ्जं वा परियादियित्वा गच्छं पि दहेय्य, दायं पि दहेय्य, गच्छं पि दहित्वा दायं पि दहित्वा हरितन्तं वा पथन्तं वा सेलन्तं वा उदकन्तं वा रमणीयं वा भूमिभागं आगम्म अनाहारा निब्बायेय्य। एवमेव खो, भिक्खवे, भिक्खु एवं पटिपन्नो होति—नो चस्स नो च मे सिया ...पे०... पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया उद्धंसोतो होति अकनिट्ठगामी। इमा खो, भिक्खवे, सत्त पुरिसगतियो।

[N.209] ९. "कतमं च, भिक्खवे, अनुपादापरिनिब्बानं? इध, भिक्खवे, भिक्खु एवं पटिपन्नो होति—'नो चस्स नो च मे सिया, न भविस्सति न मे भविस्सति, यदत्थि यं भूतं तं पजहामी' ति उपेक्खं पटिलभति। सो भवे न रज्जति, सम्भवे न रज्जति, अत्थुत्तरि पदं सन्तं सम्मप्पञ्ञाय पस्सति। तं च ख्वस्स पदं सब्बेन सब्बं सच्छिकतं होति, तस्स सब्बेन सब्बं मानानुसयो पहीनो होति, सब्बेन सब्बं भवरागानुसयो पहीनो होति, सब्बेन सब्बं अविज्जानुसयो पहीनो होति। सो आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। इदं वुच्चति, भिक्खवे, अनुपादापरिनिब्बानं। इमा खो, भिक्खवे, सत्त पुरिसगतियो अनुपादा च परिनिब्बानं" ति। ●

---

हो जाने से ऊर्ध्वस्रोत अकनिष्ठगामी हो जाता है। जैसे, भिक्षुओ! दिन भर धूप में तपे हुए किसी लौहकपाल पर (हथौड़े से) चोट मारने पर उसकी पपड़ियाँ छूटकर, दूर स्थित किसी विशाल तृणराशि या काष्ठपुञ्ज पर जा गिरें। वहाँ वे अग्नि एवं धूआँ पैदा कर दें; ऐसा कर वे उस तृणपुञ्ज या काष्ठपुञ्ज को जला कर अन्य किसी छोटे पौधे को भी, वन को भी जला दे। उनको जला कर किसी हरित प्रदेश में, पृथ्वी (समतल), पर्वत या जल प्रदेश के किसी रमणीय भूभाग में पहुँचकर आगे अन्य आहार (इन्धन) न मिलने पर, स्वयं ही बुझ जाय। इसी प्रकार, भिक्षुओ! जो साधक भिक्षु यह जान लेता है ...पूर्ववत्... वह पाँचों अवरभागीय संयोजनों के क्षीण हो जाने से **ऊर्ध्वस्रोत अकनिष्ठगामी** हो जाता है। (७)

"इस प्रकार, भिक्षुओ! पुरुष की ये **सात गतियाँ** होती हैं॥

९. "पुनः भिक्षुओ! यह 'अनुपादा (अनासक्त) परिनिर्वाण' क्या होता है? यहाँ भिक्षुओ! कोई भिक्षु यह जान लेता है—'न था, न मुझमें होने की सम्भावना है ...पूर्ववत्... तब वह संसार के प्रति क्रमशः उपेक्षा भाव प्रदर्शित करने लगता है। न उसका भव में राग रहता है, न सम्भव (उत्पत्ति) में। परन्तु वह इससे ऊपर जो शान्त पद है उसको यथार्थतः जानकर उसका साक्षात्कार करने लगता है। उसको उस पद का क्रमशः सर्वथा सर्व प्रकार से साक्षात्कार होने लगता है और साथ ही उसके मानानुशय, भवरागानुशय एवं अविद्यानुशय भी सर्वथा क्षीण हो जाते हैं। वह इस प्रकार, आश्रवों के क्षीण होने से ...पूर्ववत्... साक्षात्कार कर, प्राप्त कर साधना में लगा रहता है। इसे कहते हैं, भिक्षुओ! **अनुपादा परिनिर्वाण**।

"इस प्रकार, भिक्षुओ! पुरुष की ये सात गतियाँ एवं 'अनुपादा परिनिर्वाण' होते हैं॥" ●

**३. तिस्सब्रह्मासुत्तं** : १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा राजगहे विहरति [B.453] गिज्झकूटे पब्बते। अथ खो द्वे देवता अभिक्कन्ताय रत्तिया अभिक्कन्तवण्णा केवलकप्पं गिज्झकूटं ओभासेत्वा येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठंसु। एकमन्तं ठिता खो एका देवता भगवन्तं एतदवोच—''एता, भन्ते, [R.75] भिक्खुनियो विमुत्ता'' ति। अपरा देवता भगवन्तं एतदवोच—''एता, भन्ते, भिक्खुनियो अनुपादिसेसा सुविमुत्ता'' ति। इदमवोचुं ता देवता। समनुञ्ञो सत्था अहोसि। अथ खो ता देवता ''समनुञ्ञो सत्था'' ति भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा तत्थेवन्तरधायिंसु।

२. अथ खो भगवा तस्सा रत्तिया अच्चयेन भिक्खू आमन्तेसि—''इमं, भिक्खवे, रत्तिं द्वे देवता अभिक्कन्ताय रत्तिया अभिक्कन्तवण्णा केवलकप्पं गिज्झकूटं ओभासेत्वा येनाहं तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा मं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठंसु। एकमन्तं ठिता खो, भिक्खवे, एका देवता मं एतदवोच—'एता, भन्ते, भिक्खुनियो विमुत्ता' ति। अपरा देवता मं एतदवोच—'एता, भन्ते, भिक्खुनियो अनुपादिसेसा सुविमुत्ता' ति। इदमवोचुं, भिक्खवे, ता देवता। इदं वत्वा मं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा तत्थेवन्तरधायिंसू'' ति।

३. तेन खो पन समयेन आयस्मा महामोग्गल्लानो भगवतो अविदूरे [N.210] निसिन्नो होति। अथ खो आयस्मतो महामोग्गल्लानस्स एतदहोसि—''कतमेसानं खो देवानं एवं ञाणं होति—'सउपादिसेसे वा सउपादिसेसो ति, अनुपादिसेसे वा अनुपादिसेसो''' ति? तेन खो पन समयेन तिस्सो नाम भिक्खु अधुनाकालङ्कतो अञ्ञतरं ब्रह्मलोकं उपपन्नो होति। तत्रा पि नं एवं जानन्ति—''तिस्सो ब्रह्मा महिद्धिको महानुभावो'' ति।

---

**३. तिष्यब्रह्मासूत्र : : निर्वाण के ज्ञाता सप्तविध पुद्गल।**

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) राजगृह में गृध्रकूट पर्वत पर साधनाहेतु विराजमान थे। तब एक चाँदनी रात्रि में तेजस्वी वर्णवाले दो देवता प्राय: प्रकाशमय गृध्रकूट को विशेषरूप से प्रकाशित करते हुए भगवान् के सम्मुख आये। वे आकर, भगवान् को प्रणाम कर एक ओर खड़े हो गये। एक ओर खड़े हुए उन देवताओं में से एक ने भगवान् से यह निवेदन किया—''ये भिक्षुणियाँ विमुक्त हो चुकी हैं।'' पुन: दूसरे ने कहा—''ये भिक्षुणियाँ अशेष उपधि के निरोध वाली मुक्ति (निर्वाण) प्राप्त कर चुकी है।'' उन देवताओं ने यह कहा। शास्ता ने भी उन देवताओं की बात का अनुमोदन किया। तब वे देवता भी ''भगवान् ने भी हमारे कथन का अनुमोदन कर दिया''—यह समझकर, भगवान् को प्रणाम-प्रदक्षिणा कर वहीं अन्तर्हित हो गये।

२. तब भगवान् ने, उस रात्रि के व्यतीत होने पर, भिक्षुओं को बुलाकर उनको बताया—''भिक्षुओ! विगत रात्रि में दो तेजस्वी देवता ...पूर्ववत्... वहीं अन्तर्हित हो गये।''

३. उस समय आयुष्मान् महामौद्गल्यायन भगवान् के समीप ही बैठे थे। तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायन को यह विचार हुआ—''किन देवताओं को यह ज्ञान होता है—सोपधिशेष (जिसमें रूप, वेदना, संज्ञा आदि स्कन्धों का ज्ञान अवशिष्ट हो) में सोपधिशेष, तथा अनुपधिशेष (जिसमें रूप, वेदना, संज्ञा आदि स्कन्धों का ज्ञान अवशिष्ट न हो) में अनुपधिशेष होता है?'' उस

४. अथ खो आयस्मा महामोग्गल्लानो—सेय्यथापि नाम बलवा पुरिसो सम्मिञ्जितं वा बाहं पसारेय्य, पसारितं वा बाहं सम्मिञ्जेय्य, एवमेव—गिज्झकूटे पब्बते [B.454] अन्तरहितो तस्मिं ब्रह्मलोके पातुरहोसि। अद्दसा खो तिस्सो ब्रह्मा आयस्मन्तं [R.76] महामोग्गल्लानं दूरतो व आगच्छन्तं। दिस्वा आयस्मन्तं महामोग्गल्लानं एतदवोच—"एहि खो, मारिस मोग्गल्लान; स्वागतं, मारिस मोग्गल्लान! चिरस्सं खो, मारिस मोग्गल्लान, इमं परियायमकासि, यदिदं इधागमनाय। निसीद, मारिस मोग्गल्लान, इदमासनं पञ्ञत्तं" ति। निसीदि खो आयस्मा महामोग्गल्लानो पञ्ञत्ते आसने। तिस्सो पि खो ब्रह्मा आयस्मन्तं महामोग्गल्लानं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो तिस्सं ब्रह्मानं आयस्मा महामोग्गल्लानो एतदवोच—"कतमेसानं खो, तिस्स, देवानं एवं ञाणं होति—'सउपादिसेसे वा सउपादिसेसो ति, अनुपादिसेसे वा अनुपादिसेसो'" ति?

"ब्रह्मकायिकानं खो, मारिस मोग्गल्लान, देवानं एवं ञाणं होति—'सउपादिसेसे वा सउपादिसेसो ति, अनुपादिसेसे वा अनुपादिसेसो'" ति।

५. "सब्बेसञ्ञेव खो, तिस्स, ब्रह्मकायिकानं देवानं एवं ञाणं होति—'सउपादिसेसे वा सउपादिसेसो ति, अनुपादिसेसे वा अनुपादिसेसो'" ति?

"न खो, मारिस मोग्गल्लान, सब्बेसं ब्रह्मकायिकानं देवानं एवं ञाणं होति—'सउपादिसेसे वा सउपादिसेसो ति, अनुपादिसेसे वा अनुपादिसेसो' ति।

६. "ये खो ते, मारिस मोग्गल्लान, ब्रह्मकायिका देवा ब्रह्मेन आयुना सन्तुट्ठा ब्रह्मेन [N.211] सुखेन ब्रह्मेन यसेन ब्रह्मेन आधिपतेय्येन सन्तुट्ठा, ते उत्तरि निस्सरणं यथाभूतं

---

समय तिष्य नामक भिक्षु अभी अब मरणभाव को प्राप्त कर ब्रह्मलोक में उत्पन्न हुए थे। वहाँ के रहने वाले अन्य प्राणी भी उनको महान् ऋद्धि एवं प्रताप से युक्त 'तिष्य ब्रह्मा' नाम से ही जानते थे।

४. तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायन, जैसे कोई बलवान् पुरुष ...पूर्ववत्..., गृध्रकूट पर्वत पर अन्तर्हित होकर ब्रह्मलोक में प्रकट हुए। तब तिष्य ब्रह्मा ने आयुष्मान् महामौद्गल्यायन को आते हुए दूर से ही देख लिया। देखकर वह तिष्य ब्रह्मा यह बोला—"आइये, मार्ष मौद्गल्यायन! आपका स्वागत है, मार्ष मौद्गल्यायन। बहुत समय बाद आपने इधर पधारने का अवसर निकाला। विराजिये, मार्ष मौद्गल्यायन! यह आसन बिछा हुआ है। तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायन प्रज्ञप्त आसन पर विराजे। वह तिष्य ब्रह्मा भी आयुष्मान् महामौद्गल्यायन को अभिवादन कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे तिष्य ब्रह्मा को आयुष्मान् महामौद्गल्यायन ने यह पूछा—"किन देवताओं को सोपधिशेष में सोपधिशेष का तथा निरुपधिशेष में निरुपधिशेष का ज्ञान होता है?"

"ब्रह्मकायिक देवताओं को, मार्ष मौद्गल्यायन! ऐसा ज्ञान होता है—...पूर्ववत्...।"

५. "क्या तिष्य सभी ब्रह्मकायिक देवों को यह ज्ञान होता है—...पूर्ववत्... ?"

"नहीं, मार्ष मौद्गल्यायन! सभी ब्रह्मकायिक देवों को ऐसा ज्ञान नहीं होता है—...पूर्ववत्...।

६. "मार्ष मौद्गल्यायन! जो ब्रह्मकायिक देव ब्राह्म आयु से, ब्राह्म वर्ण से, ब्राह्म सुख से, ब्राह्म यश से, ब्राह्म ऐश्वर्य से सन्तुष्ट हैं, वे उससे ऊपर निस्सरण मार्ग नहीं जानते; अतः उनको वैसा ज्ञान

नप्पजानन्ति। तेसं न एवं ञाणं होति—'सउपादिसेसे वा सउपादिसेसो ति, अनुपादिसेसे वा अनुपादिसेसो' ति। ये च खो ते, मारिस मोग्गल्लान, ब्रह्मकायिका देवा ब्रह्मेन आयुना असन्तुट्ठा, ब्रह्मेन वण्णेन ब्रह्मेन सुखेन ब्रह्मेन यसेन ब्रह्मेन आधिपतेय्येन असन्तुट्ठा ते [R.77] च उत्तरि निस्सरणं यथाभूतं पजानन्ति। तेसं एवं ञाणं होति—'सउपादिसेसे वा सउपादिसेसो ति, अनुपादिसेसे वा अनुरादिसेसो' ति।

७. ''इध, मारिस मोग्गल्लान, भिक्खु उभतोभागविमुत्तो होति। तमेनं ते देवा एवं जानन्ति—'अयं खो आयस्मा उभतोभागविमुत्तो। यावस्स कायो ठस्सति ताव नं दक्खन्ति देवमनुस्सा। कायस्स भेदा न नं दक्खन्ति देवमनुस्सा' ति। एवं पि खो, मारिस [B.455] मोग्गल्लान, तेसं देवानं ञाणं होति—'सउपादिसेसे वा सउपादिसेसो ति, अनुपादिसेसे वा अनुपादिसेसो' ति।

८. ''इध पन, मारिस मोग्गल्लान, भिक्खु पञ्ञाविमुत्तो होति। तमेनं ते देवा एवं जानन्ति—'अयं खो आयस्मा पञ्ञाविमुत्तो। यावस्स कायो ठस्सति ताव नं दक्खन्ति देवमनुस्सा। कायस्स भेदा न नं दक्खन्ति देवमनुस्सा' ति। एवं पि खो, मारिस मोग्गल्लान, तेसं देवानं ञाणं होति—'सउपादिसेसे वा सउपादिसेसो ति, अनुपादिसेसे वा अनुपादिसेसो' ति।

९. ''इध पन, मारिस मोग्गल्लान, भिक्खु कायसक्खि होति। तमेनं देवा एवं जानन्ति—'अयं खो आयस्मा कायसक्खि। अप्पेव नाम अयमायस्मा अनुलोमिकानि सेनासनानि पटिसेवमानो कल्याणमित्ते भजमानो इन्द्रियानि समन्नानयमानो—यस्सत्थाय कुलपुत्ता सम्मदेव अगारस्मा अनगारियं पब्बजन्ति तदनुत्तरं—ब्रह्मचरियपरियोसानं दिट्ठेव

---

नहीं होता—...पूर्ववत्...। हाँ, मार्ष मौद्गल्यायन! जो ब्रह्मकायिक देव ब्राह्म आयु, वर्ण, सुख, यश एवं ऐश्वर्य से सन्तुष्ट नहीं हैं, वे उससे ऊपर निःसरण का मार्ग जानते हैं, उनको यह ज्ञान होता है—...पूर्ववत्...।

७. ''यहाँ, मार्ष मौद्गल्यायन! कोई भिक्षु उभयभागविमुक्त (नामकाय एवं रूपकाय—दोनों भागों से विमुक्त) होता है, उसके विषय में वे देवता ऐसा जानते हैं—'यह आयुष्मान् **उभयतोभागविमुक्त** है। जब तक इसकी काया रहेगी तभी तक देवता या मनुष्य इसको देख पायेंगे। देहपात के बाद इसको न देवता देख पायेंगे न मनुष्य। इस प्रकार भी उन देवताओं को यह ज्ञान होता है—...पूर्ववत्...। (१)

८. ''पुनः, मार्ष मौद्गल्यायन! यहाँ कोई भिक्षु **प्रज्ञाविमुक्त** (प्रज्ञा द्वारा विमुक्ति प्राप्त) होता है। ...पूर्ववत्...। (२)

९. ''पुनः मार्ष मौद्गल्यायन! कोई भिक्षु **कायसाक्षी** (शरीर से सत्य का साक्षात्कर्ता) होता है। उसके विषय में देवता यह जानते हैं—'यह आयुष्मान् कायसाक्षी है। हो सकता है यह आयुष्मान् अनुलोम शयनासन आदि का उपभोग करता हुआ, कल्याणमित्रों का सङ्ग करता हुआ, इन्द्रियों पर संयम रखता हुआ—जिसके लिये कुलपुत्र घर छोड़कर अनागारिक प्रव्रज्या ग्रहण करते हैं—उस

धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरेय्या' ति। एवं पि खो, मारिस मोग्गल्लान, तेसं देवानं ञाणं होति—'सउपादिसेसे वा सउपादिसेसो ति, अनुपादिसेसे वा अनुपादिसेसो' ति।

१०. "इध पन, मारिस मोग्गल्लान, भिक्खु दिट्ठिप्पत्तो होति ...पे०... सद्धाविमुत्तो होति ...पे०... धम्मानुसारी होति। तमेनं ते देवा एवं जानन्ति—'अयं खो [N.212,R.78] आयस्मा धम्मानुसारी। अप्पेव नाम अयमायस्मा अनुलोमिकानि सेनासनानि पटिसेवमानो कल्याणमित्ते भजमानो इन्द्रियानि समन्नानयमानो—यस्सत्थाय कुलपुत्ता सम्मदेव अगारस्मा अनगारियं पब्बजन्ति तदनुत्तरं—ब्रह्मचरियपरियोसानं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरेय्या' ति। एवं पि खो, मारिस मोग्गल्लान, तेसं देवानं ञाणं होति—'सउपादिसे वा सउपादिसेसो ति, अनुपादिसेसे वा अनुपादिसेसो''' ति।

११. अथ खो आयस्मा महामोग्गल्लानो तिस्सस्स ब्रह्मुनो भासितं अभिनन्दित्वा अनुमोदित्वा—सेय्यथापि नाम बलवा पुरिसो सम्मिञ्जितं वा बाहं पसारेय्य, पसारितं वा बाहं सम्मिञ्जेय्य, एवमेव—ब्रह्मलोके अन्तरहितो गिज्झकूटे पब्बते पातुरहोसि। अथ खो आयस्मा महामोग्गल्लानो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा [B.456] एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा महामोग्गल्लानो यावतको अहोसि तिस्सेन ब्रह्मुना सद्धिं कथासल्लापो तं सब्बं भगवतो अरोचेसि।

१२. "न हि पन ते, मोग्गल्लान, तिस्सो ब्रह्मा सत्तमं अनिमित्तविहारिं पुग्गलं देसेति"।

"एतस्स, भगवा, कोलो; एतस्स, सुगत, कालो! यं भगवा सत्तमं अनिमित्तविहारिं पुग्गलं देसेय्य। भगवतो सुत्वा भिक्खू धारेस्सन्ती" ति।

---

अनुपम धर्मसाधना की अनित्य अवस्था को स्वयं जानकर, साक्षात् कर प्राप्त कर साधना करे'। ऐसे भी, मार्ष मौद्गल्यायन! उन देवताओं को यह ज्ञान होता है—...पूर्ववत्...। (३)

१०. "पुनः यहाँ, मार्ष मौद्गल्यायन! कोई भिक्षु **दृष्टिप्राप्त** (सम्यग्दृष्टिसम्पन्न) होता है...पूर्ववत्...। (४)

"पुनः यहाँ, मार्ष मौद्गल्यायन! कोई भिक्षु **श्रद्धाविमुक्त** होता है...पूर्ववत्...। (५)

"पुनः यहाँ, मार्ष मौद्गल्यायन! कोई भिक्षु **धर्मानुसारी** होता है। उसके विषय में देवता यह जानते हैं—यह आयुष्मान् धर्मानुसारी साधक है। हो सकता है, यह ...पूर्ववत्... सोपधिशेष में सोपधिशेष एवं अनुपधिशेष में अनुपधिशेष जानते हैं।" (६)

११. तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायन उस तिष्य ब्रह्मा के इस व्याख्यान का अभिनन्दन एवं अनुमोदन कर ...पूर्ववत्... गृध्रकूट पर्वत पर प्रकट हुए। तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायन ...पूर्ववत्... आयुष्मान् महामौद्गल्यायन ने तिष्य ब्रह्मा के साथ हुआ अपना संवाद भगवान् को सुनाया।

१२. (भगवान् बोले—) "परन्तु, मौद्गल्यायन! उस तिष्य ब्रह्मा ने तुमको सप्तम **अनिमित्तविहारी** पुद्गल के विषय में तो कुछ नहीं बताया।"

"तेन हि, मोग्गल्लान, सुणाहि, साधुकं मनसि करोहि; भासिस्सामी" ति। "एवं, भन्ते" ति खो आयस्मा महामोग्गल्लानो भगवतो पच्चस्सोसि। भगवा एतदवोच—

१३. "इध, मोग्गल्लान, भिक्खु सब्बनिमित्तानं अमनसिकारा अनिमित्तं चेतोसमाधिं उपसम्पज्ज विहरति। तमेनं ते देवा एवं जानन्ति—'अयं खो आयस्मा सब्बनिमित्तानं अमनसिकारा अनिमित्तं चेतोसमाधिं उपसम्पज्ज विहरति। अप्पेव नाम अयमायस्मा अनुलोमिकानि सेनासनानि पटिसेवमानो कल्याणमित्ते भजमानो इन्द्रियानि समन्नानयमानो—यस्सत्थाय कुलपुत्ता सम्मदेव अगारस्मा अनगारियं पब्बजन्ति तदनुत्तरं—ब्रह्मचरियपरियोसानं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज [N.213, R.79] विहरेय्या' ति। एवं खो, मोग्गल्लान, तेसं देवानं ञाणं होति—'सउपादिसेसे वा सउपादिसेसो ति, अनुपादिसेसे वा अनुपादिसेसो' " ति॥ ●

**४. सीहसेनापतिसुत्तं :** १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा वेसालियं विहरति महावने कूटागारसालायं। अथ खो सीहो सेनापति येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सीहो सेनापति भगवन्तं एतदवोच—"सक्का नु खो, भन्ते, सन्दिट्ठिकं दानफलं पञ्ञापेतुं" ति?

२. "तेन हि, सीह, तञ्ञेवेत्थ पटिपुच्छिस्सामि, यथा ते खमेय्य तथा नं व्याकरेय्यासि। तं किं मञ्ञसि, सीह, इध द्वे पुरिसा—एको पुरिसो अस्सद्धो मच्छरी

---

"भगवन्! यही सुअवसर है, इसी का, सुगत! उचित समय है कि भगवान् अनिमित्तविहारी पुद्गल के विषय में देशना करें। भिक्षु उसे आपसे सुनकर अपने मन में बैठा लेंगे।"

"तो, मौद्गल्यायन! सुनो, ठीक से मन में बैठा लो। मैं बताता हूँ।"

"अच्छा, भन्ते!" कहकर आयुष्मान् मौद्गल्यायन ने उत्तर दिया। भगवान् बोले—

१३. "यहाँ, मौद्गल्यायन! कोई भिक्षु सभी निमित्तों (कारणों) को मन से दूर हटाकर अनिमित्तक चित्तसमाधि को प्राप्त कर साधना करता है। उसके विषय में देवता यों जानते हैं—'यह आयुष्मान् सभी निमित्तों को मन से दूर हटाकर अनिमित्तक चित्तसमाधि प्राप्त कर साधना कर रहा है। हो सकता है, यह अनुलोम (अनुकूल) शयनासनादि का उपभोग करता हुआ ...पूर्ववत्... प्राप्त कर साधना करे।' इस प्रकार, मोग्गल्लान! वे देवता सोपाधिशेष में सोपधिशेष को तथा निरुपधिशेष में निरुपधिशेष को जानते हैं॥" (७) ●

**४. सिंहसेनापतिसूत्र : : सप्तविध दान**

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) वैशाली के महावन की कूटागारशाला में साधनाहेतु विराजमान थे। तब सिंह सेनापति, जहाँ भगवान् विराजमान थे वहाँ गया। जाकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे सिंह सेनापति से भगवान् से यह जिज्ञासा प्रकट की—"भन्ते! क्या ऐहलौकिक (सान्दृष्टिक) दान का फल प्रज्ञप्त किया जा सकता है?"

२. "तो, सिंह! मैं तुमसे ही पूछता हूँ, तुमको जो उचित लगे वैसा उत्तर दो। क्या मानते हो,

[B.457] कदरियो परिभासको, एको पुरिसो सद्धो दानपति अनुप्पदानरतो। तं किं मञ्ञसि, सीह, कं नु खो अरहन्तो पठमं अनुकम्पन्ता अनुकम्पेय्युं—'यो वा सो पुरिसो अस्सद्धो मच्छरी कदरियो परिभासको, यो वा सो पुरिसो सद्धो दानपति अनुप्पदानरतो' '' ति ?

''यो सो, भन्ते, पुरिसो अस्सद्धो मच्छरी कदरियो परिभासको, किं तं अरहन्तो पठमं अनुकम्पन्ता अनुकम्पिस्सन्ति! यो च खो सो, भन्ते, पुरिसो सद्धो दानपति अनुप्पदानरतो तंयेव अरहन्तो पठमं अनुकम्पन्ता अनुकम्पेय्युं''।

३. ''तं किं मञ्ञसि, सीह, कं नु खो अरहन्तो पठमं उपसङ्कमन्ता उपसङ्कमेय्युं—'यो वा सो पुरिसो अस्सद्धो मच्छरी कदरियो परिभासको, यो वा सो पुरिसो सद्धो दानपति [R.80] अनुप्पदानरती' '' ति ?

''यो सो, भन्ते, पुरिसो अस्सद्धो मच्छरी कदरियो परिभासको, किं तं अरहन्तो पठमं उपसङ्कमन्ता उपसङ्कमिस्सन्ति! यो च खो सो, भन्ते, पुरिसो सद्धो दानपति अनुप्पदानरतो तंयेव अरहन्तो पठमं उपसङ्कमन्ता उपसङ्कमेय्युं''।

४. ''तं किं मञ्ञसि, सीह, कुस्स नु खो अरहन्तो पठमं पटिग्गण्हन्ता पटिग्गण्हेय्युं—'यो वा सो पुरिसो अस्सद्धो मच्छरी कदरियो परिभासको, यो वा सो पुरिसो सद्धो दानपति अनुप्पदानरतो' '' ति ?

[N.214] ''यो सो, भन्ते, पुरिसो अस्सद्धो मच्छरी कदरियो परिभासको, किं तं तस्स

---

सिंह! यहाँ दो पुरुष हों। उनमें एक पुरुष रत्नत्रय के प्रति अश्रद्धालु, अभिमानी, कंजूस (लोभी) तथा परनिन्दक हो; तथा दूसरा पुरुष श्रद्धापूर्वक दान करने में उत्साही एवं सतत दानशील हो। तो यहाँ क्या मानते हो, सिंह! अर्हत् जन कृपा करते हुए इन दोनों में से किस पर पहले कृपा करेंगे—क्या उस पर जो अश्रद्धा, अभिमान आदि दुर्गुणों से युक्त है, या जो श्रद्धापूर्वक दानक्रिया में उत्साही एवं सतत दानशील है ?''

''भन्ते! अर्हत् जन अनुकम्पा करते हुए उस पर क्या पहले अनुकम्पा करेंगे जो अश्रद्धा, अभिमान आदि दुर्गुणों से पूर्ण हो! वे तो अनुकम्पा करते हुए उसी पर पहले अनुकम्पा करेंगे जो पुरुष श्रद्धापूर्वक दानक्रियाओं में उत्साही एवं सतत दानशील है। (१)

३. ''तो क्या मानते हो, सिंह! वे अर्हत् जन किसी के पास जाते हुए पहले किसके पास जायेंगे? जो अश्रद्धालु अभिमानी आदि है या जो श्रद्धापूर्वक दानक्रिया में उत्साही एवं सतत दानशील है ?''

''भन्ते! जो पुरुष अश्रद्धालु, अभिमानी आदि है, अर्हत् जन अनुकम्पा करके पहले उसके पास क्या जायेंगे! वे तो पहले उसी के पास जायेंगे जो श्रद्धापूर्वक दानक्रिया में उत्साही तथा सतत दानशील हैं।'' (२)

४. ''तो क्या मानते हो, सिंह! वे अर्हत्जन अनुकम्पा करते हुए किससे पहले कुछ लेंगे? उससे जो अश्रद्धालु एवं अभिमानी आदि है या उससे जो श्रद्धापूर्वक दानक्रिया में उत्साही एवं सतत दानशील है ?''

अरहन्तो पठमं पटिग्गण्हन्ता पटिग्गण्हिस्सन्ति! यो च खो सो, भन्ते, पुरिसो सद्धो दानपति अनुप्पदानरतो तस्सेव अरहन्तो पठमं पटिग्गण्हन्ता पटिग्गण्हेय्युं' ''।

'५. ''तं किं मञ्ञसि, सीह, कस्स नु खो अरहन्तो पठमं धम्मं देसेन्ता देसेय्युं—'यो वा सो पुरिसो अस्सद्धो मच्छरी कदरियो परिभासको, यो वा सो पुरिसो सद्धो दानपति अनुप्पदानरतो' '' ति?

''यो सो, भन्ते, पुरिसो अस्सद्धो मच्छरी कदरियो परिभासको, किं तं तस्स अरहन्तो पठमं धम्मं देसेन्ता देसेस्सन्ति! यो च खो सो, भन्ते, पुरिसो सद्धो दानपति अनुप्पदानरतो तस्सेव अरहन्तो पठमं देसेन्ता देसेय्युं''।

६. ''तं किं मञ्ञसि, सीह, कस्स नु खो कल्याणो कित्तिसद्दो [B.458] अब्भुग्गच्छेय्य—'यो वा सो पुरिसो अस्सद्धो मच्छरी कदरियो परिभासको, यो वा सो पुरिसो सद्धो दानपति अनुप्पदानरतो' '' ति?

''यो सो, भन्ते, पुरिसो अस्सद्धो मच्छरी कदरियो परिभासको, किं तं तस्स कल्याणो कित्तिसद्दो अब्भुग्गच्छिस्सति! यो च खो सो, भन्ते, पुरिसो सद्धो दानपति अनुप्पदानरतो तस्सेव कल्याणो कित्तिसद्दो अब्भुग्गच्छेय्य''।

७. ''तं किं मञ्ञसि, सीह, को नु खो यंयदेव परिसं उपसङ्कमेय्य, यदि खत्तियपरिसं यदि ब्राह्मणपरिसं यदि गहपतिपरिसं यदि समणपरिसं विसारदो उपसङ्कमेय्य अमङ्कुभूतो—'यो वा सो पुरिसो अस्सद्धो मच्छरी कदरियो [R.81] परिभासको, यो वा सो पुरिसो सद्धो दानपति अनुप्पदानरतो' '' ति?

---

''भन्ते! जो पुरुष अश्रद्धालु है, अभिमानी है... अर्हत् जन अनुकम्पा करते हुए पहले उससे क्या लेंगे? वे तो अनुकम्पा करते हुए श्रद्धापूर्वक दानक्रिया में उत्साही तथा सतत दानशील से ही कुछ लेना चाहेंगे।'' (३)

५. ''तो क्या मानते हो सिंह! वे अर्हत्जन धर्मदेशना की इच्छा कर अनुकम्पा करते हुए किसको पहले धर्मदेशना करेंगे? उसको जो अश्रद्धालु, अभिमानी है; अथवा उसको जो श्रद्धापूर्वक दानक्रिया में उत्साही एवं सतत दानक्रियाशील है?''

''भन्ते! वे कृपालु अर्हत् जन पहले उसको क्या धर्मदेशना करेंगे जो अश्रद्धालु एवं अभिमानी है! वे तो अनुकम्पा करते हुए पहले उसी को धर्मदेशना करेंगे जो श्रद्धापूर्वक दानक्रिया में उत्साही एवं सतत दानक्रियाशील है?'' (४)

६. ''तो क्या मानते हो, सिंह! लोक में किसका यश फैलेगा? जो अश्रद्धालु एवं अभिमानी आदि है उसका? या श्रद्धापूर्वक दानक्रिया में उत्साही एवं सतत दानशील का?

''भन्ते! लोक में उसका यश क्या फैलेगा जो अश्रद्धालु एवं अभिमानी है? लोकमें यश उसी का फैलता है जो श्रद्धापूर्वक, दानक्रिया में उत्साही एवं सतत दानक्रियाशील होता है।'' (५)

७. ''तो क्या मानते हो, सिंह! इनमें से कौन सा पुरुष जिस किसी परिषद् में जाय, भले ही वह क्षत्रियपरिषद् हो या ब्राह्मणपरिषद् हो, या फिर गृहपतिपरिषद् हो या श्रमणपरिषद् हो, अपना

"यो सो, भन्ते, पुरिसो अस्सद्धो मच्छरी कदरियो परिभासको, किं सो यंयदेव परिसं उपसङ्कमिस्सति, यदि खत्तियपरिसं यदि ब्राह्मणपरिसं यदि गहपतिपरिसं यदि समणपरिसं विसारदो उपसङ्कमिस्सति अमङ्कुभूतो! यो च खो सो, भन्ते, पुरिसो सद्धो दानपति अनुप्पदानरतो सो यंयदेव परिसं उपसङ्कमेय्य, यदि खत्तियपरिसं यदि ब्राह्मणपरिसं [N.215] यदि गहपतिपरिसं यदि समणपरिसं विसारदो उपसङ्कमेय्य अमङ्कुभूतो"।

८. "तं किं मञ्ञसि, सीह, को नु खो कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जेय्य—'यो वा सो पुरिसो अस्सद्धो मच्छरी कदरियो परिभासको, यो वा सो पुरिसो सद्धो दानपति अनुप्पदानरतो' " ति?

"यो सो, भन्ते, पुरिसो अस्सद्धो मच्छरी कदरियो परिभासको, किं सो कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जिस्सति! यो च खो सो, भन्ते, पुरिसो सद्धो दानपति अनुप्पदानरतो सो कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जेय्य।

९. "यानिमानि, भन्ते, भगवता सन्दिट्ठिकानि दानफलानि अक्खातानि, नाहं एत्थ भगवतो सद्धाय गच्छामि। अहं पि एतानि जानामि। अहं, भन्ते, दायको दानपति, मं अरहन्तो पठमं अनुकम्पन्ता अनुकम्पन्ति। अहं, भन्ते, दायको दानपति, मं अरहन्तो पठमं उपसङ्कमन्ता उपसङ्कमन्ति। अहं, भन्ते, दायको दानपति, मय्हं अरहन्तो पठमं पटिग्गण्हन्ता [B.459] पटिग्गण्हन्ति। अहं, भन्ते, दायको दानपति, मय्हं अरहन्तो पठमं धम्मं देसेन्ता देसेन्ति। अहं, भन्ते, दायको दानपति, मय्हं कल्याणो कित्तिसद्दो अब्भुग्गतो—'सीहो

---

शिर ऊँचा उठाकर ही (निर्भीकतापूर्वक) जायगा? वह जो अश्रद्धालु, अभिमानी आदि है या वह जो श्रद्धापूर्वक दानक्रिया में उत्साही तथा सतत दानक्रियाशील है?"

"भन्ते! जो अश्रद्धालु है, अभिमानी है... वह इन उपर्युक्त परिषदों में क्या शिर ऊँचा करके जायेगा! यहाँ तो वही पुरुष शिर ऊँचा करके जायगा जो श्रद्धापूर्वक दानक्रिया में उत्साही एवं सतत दानक्रियाशील है।" (६)

८. "तो क्या मानते हो, सिंह! इन दोनों पुरुषों में से कौन सा पुरुष अपने देहपात के बाद, मरणानन्तर, सुगतिमय स्वर्गलोक में उत्पन्न होगा? वह जो रत्नत्रय के प्रति अश्रद्धालु, अभिमानी, कंजूस तथा परनिन्दक है या जो श्रद्धापूर्वक दानक्रिया में उत्साही तथा सतत दानक्रियाशील है?"

"भन्ते! जो पुरुष अश्रद्धालु, अभिमानी आदि है वह देहपात के बाद क्या सुगतिमय स्वर्गलोक में उत्पन्न होगा! ऐसे स्वर्गलोक में तो वही उत्पन्न होगा जो श्रद्धापूर्वक दानक्रिया में उत्साही एवं सतत दानक्रियाशील है। (७)

९. "भन्ते! ये जो आपने दानक्रिया के ऐहलौकिक फल बताये हैं, इनको सुनकर मेरी आपके प्रति कोई नयी श्रद्धा उत्पन्न नहीं हुई; क्योंकि आपकी कृपा से मैं भी इन को जानता हूँ। भन्ते! मैं भी ऐसा दानदाता हूँ, जिसपर अर्हत् जन अनुकम्पा करते हुए प्रथम अनुकम्पा करते हैं, पास आते हुए सर्वप्रथम मेरे पास ही आते हैं, किसी से ग्रहण करने की उनकी इच्छा होने पर सर्वप्रथम मुझसे ही ग्रहण करते हैं, धर्मदेशना के समय सर्वप्रथम मुझको ही धर्मदेशना करते हैं, मेरा ही कीर्तिशब्द लोक

सेनापति दायको कारको सङ्घुपट्ठाको' ति। अहं, भन्ते, दायको दानपति यंयदेव [R.82] परिसं उपसङ्कमामि, यदि खत्तियपरिसं ...पे०... यदि समणपरिसं विसारदो उपसङ्कमामि अमङ्कुभूतो। यानिमानि, भन्ते, भगवता सन्दिट्ठिकानि दानफलानि अक्खातानि, नाहं एत्थ भगवतो सद्धाय गच्छामि। अहं पि एतानि जानामि। यं च खो मं, भन्ते, भगवा एवमाह—'दायको, सीह, दानपति कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जती' ति। एताहं न जानामि, एत्थ च पनाहं, भगवतो सद्धाय गच्छामी'' ति।

१०. ''एवमेतं, सीह; एवमेतं, सीह! दायको, सीह, दानपति कायस्स भेदा परं परणा सुगतिं सग्गं लोकं उपप्जती'' ति॥

**५. अरक्खेय्यसुत्तं** : १. ''चत्तारिमानि, भिक्खवे, तथागतस्स [N.216] अरक्खेय्यानि, तीहि च अनुपवज्जो। कतमानि चत्तारि तथागतस्स अरक्खेय्यानि? परिसुद्धकायसमाचारो, भिक्खवे, तथागतो; नत्थि तथागतस्स कायदुच्चरितं यं तथागतो रक्खेय्य—'मा मे इदं परो अञ्ञासी' ति। परिसुद्धवचीसमाचारो, भिक्खवे, तथागतो; नत्थि तथागतस्स वचीदुच्चरितं यं तथागतो रक्खेय्य—'मा मे इदं परो अञ्ञासी' ति। परिसुद्धमनोसमाचारो, भिक्खवे, तथागतो; नत्थि तथागतस्स मनोदुच्चरितं यं तथागतो रक्खेय्य—'मा मे इदं परो अञ्ञासी' ति। परिसुद्धाजीवो, भिक्खवे, तथागतो; नत्थि तथागतस्स मिच्छाआजीवो यं तथागतो रक्खेय्य—'मा मे इदं परो अञ्ञासी' ति। इमानि चत्तारि तथागतस्स अरक्खेय्यानि।

---

में सर्वाधिक फैला हुआ है; तथा, भन्ते, मैं जिस किसी भी परिषद् में जाता हूँ, भले ही वह क्षत्रियपरिषद् हो, ब्राह्मणपरिषद् हो, गृहपतिपरिषद् हो या श्रमणपरिषद् हो, मैं सर्वत्र शिर ऊँचा कर निर्भीकतापूर्वक जाता हूँ। अत:, भन्ते! आपने जो दान के ऐहलौकिक फल बताये हैं, वे सब मुझमें भी चरितार्थ होते हैं। अत: इनके सुनने से आपमें मेरी कोई नयी श्रद्धा नहीं जगी। हाँ,आपने जो यह कहा—'सिंह! दानी पुरुष, देहपात के बाद, मरणानन्तर सुगतिमय स्वर्गलोक में उत्पन्न होता है', इसे मैं नहीं जानता था। इसको सुनकर आपमें मेरी श्रद्धा पूर्वापेक्षया दृढ हो गयी है।''

१०. ''सिंह! तुम उचित ही कह रहे हो कि दानदाता मरणानन्तर सुगतिमय स्वर्गलोक में उत्पन्न होता है॥''

**५. अरक्षणीयसूत्र : : भगवान् के चार अरक्षणीय एवं तीन निर्दोष धर्म**

१. ''भिक्षुओ! तथागत के ये चार धर्म अरक्षणीय (न छिपाने योग्य) तथा तीन अनुपवद्य (निर्दोष) धर्म है। तथागत के चार अरक्षणीय धर्म कौन हैं? (१) परिशुद्ध कायसमाचार। भिक्षुओ! तथागत का ऐसा कोई कायदुश्चरित नहीं है कि जिसे तथागत लोक में छिपाकर रखें कि कोई इसे जान न जाय। (२) परिशुद्ध वाक्-समाचार। भिक्षुओ! तथागत की वाणी का ऐसा कोई दुश्चरित नहीं है कि जिसे तथागत लोक से छिपाकर रखें कि इसे कोई जान न जाय। (३) परिशुद्ध मन:समाचार। तथागत का ऐसा कोई मनोदुश्चरित नहीं है कि जिसे वे लोक से छिपाकर रखना चाहें कि इसे कोई जान न जाय। (४) भिक्षुओ! तथागत परिशुद्धाजीव हैं। तथागत की ऐसी कोई

[R.83] २. ''कतमेहि तीहि अनुपवज्जो? स्वाक्खातधम्मो, भिक्खवे, तथागतो। तत्र वत मं समणो वा ब्राह्मणो वा देवो वा मारो वा ब्रह्मा वा कोचि वा लोकस्मिं सहधम्मेन पटिचोदेस्सति—'इति पि त्वं न स्वाक्खातधम्मो' ति। निमित्तमेतं, भिक्खवे, न [B.460] समनुपस्सामि। एतमहं, भिक्खवे, निमित्तं असमनुपस्सन्तो खेमप्पत्तो अभयप्पत्तो वेसारज्जप्पत्तो विहरामि।

३. ''सुपञ्ञत्ता खो पन, मे भिक्खवे, सावकानं निब्बानगामिनी पटिपदा। यथापटिपन्ना मम सावका आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ति। तत्र वत मं समणो वा ब्राह्मणो वा देवो मा मारो वा ब्रह्मा वा कोचि वा लोकस्मिं सहधम्मेन पटिचोदेस्सति—'इति पि ते न सुपञ्ञत्ता सावकानं निब्बानगामिनी पटिपदा। यथापटिपन्ना तव सावका आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ती' ति। निमित्तमेतं, भिक्खवे, न समनुपस्सामि। एतमहं, भिक्खवे, निमित्तं असमनुपस्सन्तो खेमप्पत्तो अभयप्पत्तो वेसारज्जप्पत्तो विहरामि।

४. ''अनेकसता खो पन मे, भिक्खवे, सावकपरिसा आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ति। तत्र वत मं समणो वा ब्राह्मणो वा देवो मा मारो वा ब्रह्मा [N.217] वा कोचि वा लोकस्मिं सहधम्मेन पटिचोदेस्सति—'इति पि ते न अनेकसता सावकपरिसा आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरन्ती' ति। निमित्तमेतं, भिक्खवे, न समनुपस्सामि। एतमहं,

---

मिथ्या आजीविका (जीवनयात्रा का साधन) नहीं है जिसे वे लोक से छिपाकर रखें कि इसे अन्य कोई जान न जाय।

''भिक्षुओ! तथागत के ये चार अरक्षणीय धर्म हैं। (१-४)

२. ''किन तीन से तथागत निर्दोष हैं? तथागत ने अपने धर्म का व्याख्यान बहुत स्पष्ट किया है। वहाँ मुझको कोई भी श्रमण, ब्राह्मण, देव, मार, ब्रह्मा या कोई अन्य इस लोक में किसी भी प्रसङ्ग में यह उपालम्भ नहीं दे सकता कि आपने यहाँ अपने धर्म का स्पष्ट व्याख्यान नहीं किया है! ऐसे उपालम्भ का मैं कोई कारण नहीं देखता। ऐसा कोई कारण न देखता हुआ मैं सकुशल, निर्भय एवं दक्षता के साथ (धर्मोपदेश करता हुआ) विचरण करता हूँ।

३. ''भिक्षुओ! मैंने अपने श्रावकों को निर्वाण तक पहुँचाने वाला मार्ग (उपाय) भी भली भाँति बतलाया है। जिसके अनुसार साधना करते हुए मेरे श्रावक आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति एवं प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में जानकर, साक्षात् कर, प्राप्तकर साधना में लगे रहते हैं। वहाँ मुझको ...पूर्ववत्... कि आपने श्रावकों निर्वाण तक पहुँचाने वाला मार्ग यहाँ स्पष्ट रूप से नहीं बताया है।... ऐसे उपालम्भ का मैं कोई कारण नहीं देखता। ऐसा कोई कारण न देखता हुआ मैं ...पूर्ववत्... विचरण करता हूँ।

४. ''भिक्षुओ! मेरी हजारों श्रावकपरिषदें आश्रवों के क्षय से ...पूर्ववत्... साक्षात् कर साधना में लगी हुई हैं। वहाँ मुझको ...पूर्ववत्... वे साधना में नहीं लगी हुई हैं—ऐसे उपालम्भ का मैं कोई

भिक्खवे, निमित्तं असमनुपस्सन्तो खेमप्पत्तो अभयप्पत्तो वेसारज्जप्पत्तो विहरामि। [R.84] इमेहि तीहि अनुपवज्जो।

५. "इमानि खो, भिक्खवे, चत्तारि तथागतस्स अरक्खेय्यानि, इमेहि च तीहि अनुपवज्जो" ति॥ ●

६. **किमिलसुत्तं** : १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा किमिलायं विहरति निचुलवने। अथ खो आयस्मा किमिलो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा किमिलो भगवन्तं एतदवोच—"को नु खो, भन्ते, हेतु को पच्चयो चेन तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो न चिरट्ठितिको होती" ति?

२. "इध, किमिल, तथागते परिनिब्बुते भिक्खू भिक्खुनियो उपासका [B.461] उपासिकायो सत्थरि अगारवा विहरन्ति अप्पतिस्सा, धम्मे अगारवा विहरन्ति अप्पतिस्सा, सङ्घे अगारवा विहरन्ति अप्पतिस्सा, सिक्खाय अगारवा विहरन्ति अप्पतिस्सा, समाधिस्मिं अगारवा विहरन्ति अप्पतिस्सा, अप्पमादे अगारवा विहरन्ति अप्पतिस्सा, पटिसन्थारे अगारवा विहरन्ति अप्पतिस्सा। अयं खो, किमिल, हेतु अयं पच्चयो येन तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो न चिरट्ठितिको होती" ति।

३. "को पन, भन्ते, हेतु को पच्चयो येन तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो चिरट्ठितिको होती" ति?

"इध, किमिल, तथागते परिनिब्बुते भिक्खू भिक्खुनियो उपासका उपासिकायो

---

कारण नहीं देखता। ऐसा कारण न देखता हुआ मैं सकुशल, निर्भय एवं दक्षता के साथ लोक में विचरण करता हूँ। इन तीनों ही धर्मों में मैं निर्दोष हूँ। (५-७)

५. "इस प्रकार, भिक्षुओ! तथागत के ये चार धर्म अरक्षणीय हैं, तथा इन तीन धर्मों से तथागत निर्दोष हैं।" ●

**६. किमिलसूत्र : : सद्धर्मवृद्धिकारक सात धर्म**

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) किमिला के निचुलवन में साधनहेतु विराजमान थे। तब (कभी) आयुष्मान् किमिल, जहाँ भगवान् विराजमान थे वहाँ आये। आकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे आयुष्मान् किमिल ने भगवान् से यह पूछा—"भन्ते! क्या हेतु तथा क्या प्रत्यय है कि जिससे तथागत के परिनिर्वृत होने पर सद्धर्म चिरकाल तक नहीं ठहर पाता?"

२. "किमिल! तथागत के परिनिर्वृत होने पर जब भिक्षु, भिक्षुणियाँ, उपासक, उपासिकाएँ शास्ता में गौरव नहीं रखते, अपितु उसके अनुशासन से बाहर हो जाते हैं, उसके उपदिष्ट धर्म के प्रति... सङ्घ के प्रति... शिक्षा के प्रति... आवश्यक कर्तव्यों के प्रति गौरवविहीन एवं विद्रोही हो जाते हैं। किमिल! यह हेतु तथा यह प्रत्यय है जिसके कारण तथागत के परिनिर्वृत होने पर सद्धर्म चिरस्थायी नहीं रह पाता।" (१)

सत्थरि अगारवा विहरन्ति सप्पतिस्सा, धम्मे सगारवा विहरन्ति सप्पतिस्सा, सङ्घे सगारवा विहरन्ति सप्पतिस्सा, सिक्खाय सगारवा विहरन्ति सप्पतिस्सा, समाधिस्मिं सगारवा विहरन्ति सप्पतिस्सा, अप्पमादे सगारवा विहरन्ति सप्पतिस्सा, पटिसन्थारे सगारवा [N.218] विहरन्ति सप्पतिस्सा। अयं खो, किमिल, हेतु अयं पच्चयो येन तथागते परिनिब्बुते सद्धम्मो न चिरट्ठितिको होती'' ति। ●

[R.85] **७. सत्तधम्मसुत्तं :** १. ''सत्तहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु नचिरस्सेव आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरेय्य। कतमेहि सत्तहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु सद्धो होति, सीलवा होति, बहुस्सुतो होति, पटिसल्लीनो होति, आरद्धविरियो होति, सतिमा होति, पञ्ञवा होति। इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु नचिस्सेव आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरेय्या'' ति॥ ●

**८. पचलायमानसुत्तं :** १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा भग्गेसु विहरति सुंसुमारगिरे भेसकळावने मिगदाये। तेन खो पन समयेन आयस्मा महामोग्गल्लानो मगधेसु [B.462] कल्लवाळपुत्तगामे पचलायमानो निसिन्नो होति। अद्दसा खो भगवा दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन आयस्मन्तं महामोग्गल्लानं मगधेसु कल्लवाळपुत्तगामे पचलायमानं निसिन्नं। दिस्वा सेय्यथापि नाम बलवा पुरिसो सम्मिञ्जितं वा बाहं पसारेय्य, पसारितं वा बाहं सम्मिञ्जेय्य, एवमेव—भग्गेसु सुंसुमारगिरे भेसकळावने मिगदाये

---

३. ''भन्ते! फिर क्या कारण तथा क्या प्रत्यय है कि तथागत के परिनिर्वृत होनेपर सद्धर्म चिरकाल तक वृद्धिङ्गत होता रहता है?''

''किमिल! तथागत के परिनिर्वृत होने पर जब भिक्षु... शास्ता में... धर्म में... सङ्घ में... शिक्षा में... समाधि में... अप्रमाद में... आवश्यक कर्तव्यों में गौरव रखते हुए अनुशासनपूर्वक साधनारत रहते हैं। किमिल! यह कारण तथा यह प्रत्यय है कि तथागत के परिनिर्वृत होने पर भी सद्धर्म चिरस्थितिक रह जाता है॥'' ●

**७. सप्तधर्मसूत्र** : :

१. ''भिक्षुओ! सात धर्मों से युक्त भिक्षु शीघ्र ही आश्रवों के क्षय से ...पूर्ववत्... साक्षात् कर, प्राप्त कर साधनारत रहे। किन सात धर्मों से? यहाँ, भिक्षुओ! वह भिक्षु श्रद्धालु रहे, शीलवान् रहे, बहुश्रुत... एकान्तरत... उद्योगरत..., स्मृतिमान्... प्रज्ञावान् रहे। भिक्षुओ! इन सात धर्मों से युक्त भिक्षु शीघ्र ही आश्रवों के क्षय से ...पूर्ववत्... साक्षात् कर, प्राप्त कर साधनारत रहे॥'' ●

**८. प्रचलायमानसूत्र** : :

१. ऐसा मैंने सुना है कि एक समय भगवान् (बुद्ध) भर्ग प्रदेश के सुंसुमार गिरि के भेषकड़ावनस्थित मृगदाव में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय आयुष्मान् महामौद्गल्यायन मगध देश के कल्लवाडपुत्र ग्राम में साधना करते हुए ऊँघ रहे (तन्द्रामग्न) थे। उस समय भगवान् ने अपने मानवदुर्लभ दिव्य चक्षुरिन्द्रिय से आयुष्मान् महामौद्गल्यायन को मगध प्रदेश कल्लवाड़पुत्तग्राम में

अन्तरहितो मगधेसु कल्लवाळपुत्तगामे आयस्मतो महामोग्गल्लानस्स सम्मुखे पातुरहोसि। निसीदि भगवा पञ्ञत्ते आसने। निसज्ज खो भगवा आयस्मन्तं महामोग्गल्लानं एतदवोच—

२. "पचलायसि नो त्वं, मोग्गल्लान, पचलायसि नो त्वं, मोग्गल्लाना" ति?

"एवं, भन्ते!"

"तस्मातिह, मोग्गल्लान, यथासञ्ञिस्स ते विहरतो तं मिद्धं ओक्कमति, तं सञ्ञं मा मनसाकासि, तं सञ्ञं मा बहुलमकासि। ठानं खो पनेतं, मोग्गल्लान, [N.219, R.86] विज्जति यं ते एवं विहरतो तं मिद्धं पहीयेथ।

३. "नो चे ते एवं विहरतो तं मिद्धं पहीयेथ, ततो त्वं, मोग्गल्लान, यथासुतं यथापरियत्तं धम्मं चेतसा अनुवितक्केय्यासि अनुविचारेय्यासि, मनसा अनुपेक्खेय्यासि। ठानं खो पनेतं विज्जति यं ते एवं विहरतो तं मिद्धं पहीयेथ।

४. "नो चे ते एवं विहरतो तं मिद्धं पहीयेथ, ततो त्वं, मोग्गल्लान, यथासुतं यथापरियत्तं धम्मं वित्थारेन सज्झायं करेय्यासि। ठानं खो पनेतं विज्जति यं ते एवं विहरतो तं मिद्धं पहीयेथ।

५. "नो चे ते एवं विहरतो तं मिद्धं पहीयेथ, ततो त्वं, मोग्गल्लान, उभो कण्णसोतानि आविञ्छेय्यासि, पाणिना गत्तानि अनुमज्जेय्यासि। ठानं खो पनेतं विज्जति यं ते एवं विहरतो तं मिद्धं पहीयेथ।

६. "नो चे ते एवं विहरतो तं मिद्धं पहीयेथ, ततो त्वं, मोग्गल्लान, उट्ठायासना उदकेन अक्खीनि अनुमज्जित्वा दिसा अनुविलोकेय्यासि, नक्खत्तानि तारकरूपानि [B.463] उल्लोकेय्यासि। ठानं खो पनेतं विज्जति यं ते एवं विहरतो तं मिद्धं पहीयेथ।

---

साधना के समय तन्द्रामग्न देखा। देखकर, जैसे कोई बलवान् पुरुष ...पूर्ववत्... महामौद्गल्यायन से यह बोले—

२. "मौद्गल्यायन! तुम तन्द्रामग्न हो? तुम ऊँघ रहे हो?" "हाँ, भन्ते!"

"मौद्गल्यायन! जिस कारण से तुमको यह आलस्य (तन्द्रा) सता रहा है, उस कारण के साथ साधना करना त्याग दो। तुम्हारे लिये यही उचित रहेगा, मौद्गल्यायन! ऐसा करने से तुम्हारा यह आलस्य प्रहीण हो जायगा।"

३. "यदि इस प्रकार साधना करने से तुम्हारा यह आलस्य विनष्ट न हो तो, मौद्गल्याययन! तुमने गुरुमुख से जो धर्म जैसा सुना है, जैसा तुमको स्मरण है उसकी स्वचित्त से वितर्कणा, विचारणा एवं ध्यान करो, इस प्रकार साधना करने से तुम्हारा यह आलस्य विनष्ट हो जायगा। (१)

४. "यदि इस प्रकार साधना करने से भी तुम्हारा यह आलस्य न निवृत्त हो तो तुम अपने उस यथाश्रुत यथाधीत धर्म का स्वाध्याय करो, इस प्रकार भी तुम्हारा यह आलस्य विनष्ट हो सकता है। (२)

५. यदि इस प्रकार साधना करने से भी न विनष्ट हो तो तुम अपने दोनों कानों को हाथों से मसलो, शरीर को हाथों से थपथपाओ। ऐसा करने से तुम्हारा यह आलस्य दूर हो जायगा। (३)

७. "नो चे ते एवं विहरतो तं मिद्धं पहीयेथ, ततो त्वं, मोग्गल्लान, आलोकसञ्ञं मनसि करेय्यासि, दिवासञ्ञं अधिट्ठहेय्यासि—यथा दिवा तथा रत्तिं यथा रत्तिं तथा दिवा। इति विवटेन चेतसा अपरियोनद्धेन सप्पभासं चित्तं भावेय्यासि। ठानं खो पनेतं विज्जति यं ते एवं विहरतो तं मिद्धं पहीयेथ।

[R.87] ८. "नो चे ते एवं विहरतो तं मिद्धं पहीयेथ, ततो त्वं, मोग्गल्लान, पच्छापुरेसञ्ञी चङ्कमं अधिट्ठहेय्यासि अन्तोगतेहि इन्द्रियेहि अबहिगतेन मानसेन। ठानं खो पनेतं विज्जति यं ते एवं विहरतो तं मिद्धं पहीयेथ।

९. "नो चे ते एवं विहरतो तं मिद्धं पहीयेथ, ततो त्वं, मोग्गल्लान, दक्खिणेन पस्सेन सीहसेय्यं कप्पेय्यासि पादे पादं अच्चाधाय सतो सम्पजानो उट्ठानसञ्ञं मनसि करित्वा। पटिबुद्धेन च ते, मोग्गल्लान, खिप्पञ्ञेव पच्चुट्ठातब्बं—'न सेय्यसुखं न [N.220] पस्ससुखं न मिद्धसुखं अनुयुत्तो विहरिस्सामी' ति। एवं हि ते, मोग्गल्लान, सिक्खितब्बं।

१०. "तस्मातिह, मोग्गलान, एवं सिक्खितब्बं—'न उच्चासोण्डं पग्गहेत्वा कुलानि उपसङ्कमिस्सामी' ति। एवं हि ते, मोग्गल्लान, सिक्खितब्बं। सचे, मोग्गल्लान, भिक्खु उच्चासोण्डं पग्गहेत्वा कुलानि उपसङ्कमति, सन्ति हि, मोग्गल्लान, कुलेसु किच्चकरणीयानि। येहि मनुस्सा आगतं भिक्खुं न मनसि करोन्ति, तत्र भिक्खुस्स एवं

---

६. "यदि ऐसा करने से भी तुम्हारा यह आलस्य दूर न हो तो अपने नेत्रों पर जल के छींटे दो, फिर चारों ओर देखो, तब तुम्हें आकाश के तारे नक्षत्र के समान बृहदाकार में दिखायी देने लगेंगे। हो सकता है, इस उपाय से तुम्हारा यह आलस्य नष्ट हो जाय। (४)

७. "यदि इस उपाय से भी तुम्हारा आलस्य दूर न हो तो मन में एक विशेष प्रकाश की कल्पना करो, जैसे दिन का प्रकाश होता है। जैसे दिन वैसे ही (प्रकाशमय) रात्रि की कल्पना करो। इस प्रकार खुले चित्त से आलोकमय चित्त की भावना करो। सम्भव है, इस उपाय से ही तुम्हारा यह आलस्य दूर हो जाय। (५)

८. "यदि ऐसा करने से भी तुम्हारा यह आलस्य दूर न हो तो, मौद्गल्यायन! तुम आगे पीछे टहलना आरम्भ कर दो, उस समय तुम्हारी इन्द्रियाँ तथा मन बाह्य विषयों की ओर न दौड़ें। हो सकता है, इस उपाय से तुम्हारा यह आलस्य विनष्ट हो जाय। (६)

९. "यदि इस उपाय से भी तुम्हारा यह आलस्य दूर न हो तो तुम सिंहशय्या से लेट जाओ, स्मृतिसम्प्रजन्यपूर्वक पैर पर पैर रखकर मन में उत्थानसंज्ञा की भावना करो। इस प्रकार, मौद्गल्यायन! तुम प्रतिबुद्ध चित्त से यह निश्चय करो—'अब मैं शय्यासुख, पार्श्वसुख, आलस्य सुख से सम्पृक्त होकर साधना नहीं करूँगा।' मौद्गल्यायन! तुम ऐसी शिक्षा ग्रहण करो। (७)

१०. "अत:, मौद्गल्यायन! तुम्हें यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये—'मैं शिर ऊँचा कर गृहस्थों के घरों में नहीं जाऊँगा।' मौद्गल्यायन! ऐसा तुमको सीखना चाहिये; क्योंकि, मौद्गल्यायन! घरों में अनेक प्रकार के कार्य होते रहते हैं, हो सकता है, वे लोग उनके कारण, आगत भिक्षु को न देख

होति—'कोसु नाम इदानि मं इमस्मिं कुले परिभिन्दि, विरत्तरूपा दानिमे मयि मनुस्सा' ति। इतिस्स अलाभेन मङ्कुभावो, मङ्कुभूतस्स उद्धच्चं, उद्धतस्स असंवरो, असंवुतस्स आरा चित्तं समाधिम्हा।

११. ''तस्मातिह, मोग्गलान, एवं सिक्खितब्बं—'न विग्गाहिककथं कथेस्सामी' ति। एवं हि ते, मोग्गल्लान, सिक्खितब्बं। विग्गाहिकाय, मोग्गल्लान, कथाय सति [B.464] कथाबाहुल्लं पाटिकङ्खं, कथाबाहुल्ले सति उद्धच्चं, उद्धतस्स असंवरो, असंवुतस्स [R.88] आरा चित्तं समाधिम्हा। नाहं, मोग्गल्लान, सब्बेहेव संसग्गं वण्णयामि। न पनाहं, मोग्गल्लान, सब्बेहेव संसग्गं न वण्णयामि। सगहट्ठपब्बजितेहि खो अहं, मोग्गल्लान, संसग्गं न वण्णयामि। यानि च खो तानि सेनासनानि अप्पसद्दानि अप्पनिग्घोसानि विजनवातानि मनुस्सराहस्सेय्यकानि पटिसल्लानसारुप्पानि तथारूपेहि सेनासनेहि संसग्गं वण्णयामी'' ति।

१२. एवं वुत्ते आयस्मा महामोग्गल्लानो भगवन्तं एतदवोच—''कित्तावता नु खो, भन्ते, भिक्खु सङ्खित्तेन तण्हासङ्खयविमुत्तो होति अच्चन्तनिट्ठो अच्चन्तयोगक्खेमी अच्चन्तब्रह्मचारी अच्चन्तपरियोसानो सेट्ठो देवमनुस्सानं'' ति?

''इध, मोग्गल्लान, भिक्खुनो सुतं होति—'सब्बे धम्मा नालं अभिनिवेसाया' ति; एवं चेतं, मोग्गल्लान, भिक्खुनो सुतं होति—'सब्बे धम्मा नालं अभिनिवेसाया' ति, सो

---

पावें। तब उस भिक्षु के मन में यह विचार हो—'अरे! यहाँ मुझको किसने भेज दिया, यहाँ तो सब मेरी उपेक्षा कर रहे हैं!' इस प्रकार प्राप्य की अप्राप्ति से चित्त में विषाद, विषाद से औद्धत्य, औद्धत्य से असंयम होने लगे। इस असंयम से साधक का चित्त समाधि से दूर होने लगता है।

११. ''और, मौद्गल्यायन! तुमको यह भी सीखना चाहिये—'कलह कराने वाली बात नहीं करूँगा।' ऐसा तुमको सीखना चाहिये; क्योंकि कलहकारक बातों से, मौद्गल्यायन! विविध प्रकार की नयी बातें होने लगती हैं, उनके होने से औद्धत्य, औद्धत्य से असंयम होने लगता है। यह असंयम साधक को समाधि से दूर कर देता है। परन्तु, मौद्गल्यायन! सभी के साथ सम्बन्ध रखने का भी मैं उपदेश नहीं करता, और न गृहस्थ एवं प्रव्रजितों में से किसी एक के साथ सम्बन्ध न रखने का ही उपदेश करता हूँ। ऐसे शयनासन (निवास=सोने बैठने के स्थान), जहाँ शब्द कम हो, कोलाहल कम हो, जहाँ एकान्त हो, लोगों का आना जाना बहुत कम हो, जो ध्यान के लिये अनुकूल हों, ऐसे शयनासनों का उपयोग मेरे द्वारा अनुमत है।''

१२. ऐसा कहे जाने पर, आयुष्मान् महामौद्गल्यायन ने भगवान् से यह पूछा—''भन्ते! किस संक्षिप्त साधना से साधक अपनी तृष्णा का क्षय कर विमुक्त हो सकता है? एकान्तनिष्ठ, एकान्त योगक्षेम, एकान्त धर्मसाधना तथा एकान्ततः पूर्ण सीमा की साधना तक पहुँचकर देव-मनुष्यों में श्रेष्ठ कहला सकता है?''

''मौद्गल्यायन! यहाँ भिक्षु ने (शास्ता से) यह सुन रखा होता है—'सभी धर्मों में प्रवृत्ति उचित नहीं होती।' यह सुनकर वह सभी धर्मों का अभिज्ञान, परिज्ञान करता है। वह सभी धर्मों का

सब्बं धम्मं अभिजानाति, सब्बं धम्मं अभिञ्ञाय सब्बं धम्मं परिजानाति। सब्बं धम्मं परिञ्ञाय यं किञ्चि वेदनं वेदियति सुखं वा दुक्खं वा अदुक्खमसुखं वा। सो तासु वेदनासु अनिच्चानुपस्सी विहरति, विरागानुपस्सी विहरति, निरोधानुपस्सी विहरति, पटि- [N.221] निस्सग्गानुपस्सी विहरति। सो तासु वेदनासु अनिच्चानुपस्सी विहरन्तो विरागानुपस्सी विहरन्तो निरोधानुपस्सी विहरन्तो पटिनिस्सग्गानुपस्सी विहरन्तो न किञ्चि लोके उपादियति, अनुपादियं न परितस्सति, अपरितस्सं पच्चत्तंयेव परिनिब्बायति। 'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया' ति पजानाति। एत्तावता खो, मोग्गल्लान, भिक्खु सङ्खित्तेन तण्हासङ्खयविमुत्तो होति अच्चन्तनिट्ठो अच्चन्तयोगक्खेमी अच्चन्तब्रह्मचारी अच्चन्तपरियोसानो सेट्ठो देवमनुस्सानं'' ति॥ ●

**९. मेत्तसुत्तं** : १. ''मा, भिक्खवे, पुञ्ञानं भायित्थ। सुखस्सेतं, भिक्खवे, [B.465, R.89] अधिवचनं यदिदं पुञ्ञानं ति। अभिजानामि खो पनाहं, भिक्खवे, दीघरत्तं कतानं पुञ्ञानं दीघरत्तं इट्ठं कन्तं मनापं विपाकं पच्चनुभूतं। सत्तवस्सानि मेत्तं चित्तं भावेसिं। सत्तवस्सानि मेत्तं चित्तं भावेत्वा सत्तसंवट्टविवट्टकप्पे नयिमं लोकं पुनागमासिं। संवट्टमाने सुदाहं, भिक्खवे, लोके आभस्सरूपगो होमि, विवट्टमाने लोके सुञ्ञं ब्रह्मविमानं उपपज्जामि।

२. ''तत्र सुदं, भिक्खवे, ब्रह्मा होमि महाब्रह्मा अभिभू अनभिभूतो अञ्ञदत्थुदसो वसवत्ती। छत्तिंसक्खत्तुं खो पनाहं, भिक्खवे, सक्को अहोसि देवानमिन्दो; अनेकसतक्खत्तुं राजा अहोसि चक्कवत्ती धम्मिको धम्मराजा चातुरन्तो विजितावी जनपदत्थावरियप्पत्तो सत्तरतनसमन्नागतो। तस्स मय्हं, भिक्खवे, इमानि सत्त रतनानि अहेसुं, सेय्यथीदं—

---

अभिज्ञान परिज्ञान कर जिस किसी भी वेदना का अनुभव करता है, भले ही वह सुखमय हो या दुःखमय या अदुःख-असुखमय; वह उन सभी वेदनाओं में अनित्यानुपश्यना की, विरागानुपशयना की, निरोधानुपश्यना की, प्रतिनिसर्गानुपश्यना की साधना करता है। ऐसी साधना करता हुआ वह लोक में किसी वस्तु का उपादान (ग्रहण) नहीं करता, या उसके न मिलने पर कोई खेद नहीं मानता। इस प्रकार खिन्न न होता हुआ अन्त में परिनिर्वाण प्राप्त कर लेता है। और वह जान जाता है—'मेरी जन्मपरम्परा क्षीण हो चुकी है, धर्मसाधना पूर्ण हो चुकी है, मेरा कर्तव्य पूर्ण हो चुका है, अब मेरा कोई कर्तव्य अवशिष्ट नहीं है।' इस प्रकार, मौद्गल्यायन! इस संक्षिप्त साधना से साधक अपनी तृष्णा का क्षय कर विमुक्त हो जाता है ...पूर्ववत्... देवमनुष्यों में श्रेष्ठ कहलाता है॥''●

**९. मैत्रसूत्र : : पुण्यकर्म का फल**

१. ''भिक्षुओ! पुण्यकर्म से न डरो। क्योंकि, भिक्षुओ! 'पुण्य' तो सुख का ही दूसरा नाम है। भिक्षुओ! मैंने दीर्घकाल तक किये हुए पुण्यों का जो इष्ट कान्त एवं मनोनुकूल फल भोगा है, उसको मैं जानता हूँ। मैने सात वर्ष तक निरन्तर मैत्रीचित्त की भावना की। उस के फलस्वरूप मैं सात संवर्त-विवर्त कल्प तक इस लोक में नहीं आया।

भिक्षुओ! मैं एक बार महा ब्रह्मा तथा छत्तीस (३६) बार देवराज इन्द्र के रूप में शक्र बन

चक्करतनं, हत्थिरतनं, अस्सरतनं, मणिरतनं, इत्थिरतनं, गहपतिरतनं, परिणायकरतनमेव सत्तमं। परोसहस्सं खो पन मे, भिक्खवे, पुत्ता अहेसुं सूरा वीरङ्गरूपा परसेनप्पमद्दना। सो इमं पथविं सागरपरियन्तं अदण्डेन असत्थेन धम्मेन अभिविजिय अज्झावसिं ति।

''पस्स पुञ्ञानं विपाकं, कुसलानं सुखेसिनो। [N.222]
मेत्तं चित्तं विभावेत्वा, सत्तवस्सानि भिक्खवे।
सत्त संवट्टविवट्टकप्पे, नयिमं लोकं पुनागमिं॥ [R.90]
''संवट्टमाने लोकम्हि, होमि आभस्सरूपगो।
विवट्टमाने लोकस्मिं, सुञ्ञब्रह्मूपगो अहुं॥
''सत्तक्खत्तुं महाब्रह्मा, वसवत्ती तदा अहुं।
छत्तिंसक्खत्तुं देविन्दो, देवरज्जमकारयिं॥
''चक्कवत्ती अहुं राजा, जम्बुमण्डस्स इस्सरो। [B.466]
मुद्धाभिसित्तो खत्तियो, मनुस्साधिपती अहुं॥
''अदण्डेन असत्थेन, विजेय्य पथविं इमं।
असाहसेन कम्मेन, समेन मनुसासि तं॥
''धम्मेन रज्जं कारेत्वा, अस्मिं पथविमण्डले।
महद्धने महोभोगे, अड्ढे अजायिहं कुले॥
''सब्बकामेहि सम्पन्ने, रतनेहि च सत्तहि।
बुद्धा सङ्गाहका लोके, तेहि एतं सुदेसितं॥

---

चुका हूँ। सैंकड़ों बार चक्रवर्ती सम्राट् बन चुका हूँ। जहाँ मैंने धर्मपूर्वक धर्मराज बनकर चारों दिशाओं के अन्त तक समस्त प्रदेश जीतकर चिरकाल तक एक स्थिर राज्य किया, तथा हस्तिरत्न आदि सातों रत्नों का स्वामी बना; उस समय मुझको हजारों पुत्र हुए जो सभी शूर, वीर, एवं शत्रुओं की बड़ी से बड़ी सेनाओं का मानमर्दन करनेवाले थे। इस प्रकार मैंने समुद्रपर्यन्त भूमण्डल को धर्मपूर्वक नियन्त्रित कर राज्य किया था।

''भिक्षुओ! मुझ सुखैषी के कुशलमय पुण्यकर्मों का फल देखो। मैंने सात वर्ष तक मैत्रीचित्त की भावना की। मैं सात संवर्त एवं विवर्त कल्पों तक इस लोक में पुन: नहीं आया॥

''जब इस लोक का संवर्त होता था तो आभस्वर देवलोक चला जाता था, और विवर्त होता था तो शून्य ब्रह्मलोक में चला जाता था॥

''मैं सात बार वशवर्ती ब्रह्मा हुआ तथा छत्तीस (३६) बार देवराज इन्द्र बना॥

''मैं इस समस्त जम्बूद्वीप के मनुष्यों का चक्रवर्ती मूर्धाभिषिक्त सम्राट् भी बना॥

''जबकि मैंने दण्ड एवं शस्त्र के विना ही इस समस्त पृथ्वी को जीतकर, विना कोई लूटपात किये ही, इसपर राज्य किया था॥

''इस समस्त भूमण्डल पर धर्मपूर्वक राज्य कर सम्पत्तिशाली एवं ऐश्वर्यसम्पन्न आढ्यकुल में भी मैं उत्पन्न हुआ॥

"एसो हेतु महन्तस्स, पथब्यो मे न विपज्जति।
पहूतवित्तूपकरणो, राजा होति पतापवा॥
"इद्धिमा यसवा होति, जम्बुमण्डस्स इस्सरो।
को सुत्वा नप्पसीदेय्य, अपि कण्हाभिजातियो॥
[R.91] "तस्मा हि अत्तकामेन, महत्तमभिकङ्खता।
सद्धम्मो गरुकातब्बो, सरं बुद्धानसासनं" ति॥

[N.223] **१०. भरियासुत्तं :** १. अथ खो भगवा पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय येन अनाथपिण्डिकस्स गहपतिस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। तेन खो पन समयेन अनाथपिण्डिकस्स गहपतिस्स निवेसने मनुस्सा उच्चासद्दा महासद्दा होन्ति। अथ खो अनाथपिण्डिको गहपति येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो अनाथपिण्डिकं गहपतिं भगवा एतदवोच—

[B.467] २. "किं नु ते, गहपति, निवेसने मनुस्सा उच्चासद्दा महासद्दा केवट्टा मञ्ञे मच्छविलोपे" ति?

"अयं भन्ते, सुजाता घरसुण्हा अड्ढकुला आनीता। सा नेव सस्सुं आदियति, न ससुरं आदियति, न सामिकं आदियति, भगवन्तं पि न सक्करोति न गरुं करोति न मानेति न पूजेती" ति।

---

"सात रत्नों के माध्यम से अपनी सभी कामनाएँ पूर्ण कर मैं लोकसंग्राहक बुद्ध बना, जिसने यह अनुपम धर्मोपदेश किया॥

"इस भूमण्डल पर मेरे महत्त्व का यही कारण है, अत: इसका मुझे कोई खेद नहीं है। प्रभूत धन वाले साधनों वाला कोई प्रतापवान् ही राजा हुआ करता है॥

"जम्बूद्वीप का सम्राट् कोई ऋद्धिमान् एवं यशस्वी पुरुष ही हुआ करता है। इसे सुनकर कौन पापी से भी पापी प्रसन्न नहीं होगा॥

"अत: आत्महितैषी एवं महत्त्वाकांक्षी साधक को बुद्धोपदेशों का स्मरण करते हुए सद्धर्म का सम्मान करना चाहिये॥"

**१०. भार्यासूत्र : : सप्तविध भार्याएँ**

१. ...तब भगवान् (बुद्ध) प्रात:काल, वस्त्र सुव्यविस्थित कर, पात्र चीवर लेकर अनाथपिण्डिक गृहपति के घर पधारे। पधारकर प्रज्ञप्त आसन पर विराजे। उस समय अनाथपिण्डिक गृहपति के घर बहुत कोलाहल हो रहा था। तब अनाथपिण्डिक गृहपति भगवान् के सम्मुख आया। आकर, भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। इस प्रकार बैठे हुए उस अनाथपिण्डिक गृहपति से भगवान् ने पूछा—

२. "गृहपति! आज तुम्हारे घर में यह कैसा कोलाहल है, मानो मछली-बाजार लगा हो?"

"भन्ते! यह मेरी सुजाता नामक पुत्रवधू किसी आढ्यकुल से इस घर में आयी है। (उसी गर्व

३. अथ खो भगवा सुजातं घरसुण्हं आमन्तेसि—"एहि, सुजाते" ति! "एवं, भन्ते" ति खो सुजाता घरसुण्हा भगवतो पटिस्सुत्वा येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो सुजातं घरसुण्हं भगवा एतदवोच— [R.92]

४. "सत्त खो इमा, सुजाते, पुरिसस्स भरियायो। कतमा सत्त? वधकसमा, चोरीसमा, अय्यसमा, मातासमा, भगिनीसमा, सखीसमा, दासीसमा—इमा खो, सुजाते, सत्त पुरिसस्स भरियायो। तासं त्वं कतमा" ति?

"न खो अहं, भन्ते, इमस्स भगवता सङ्खित्तेन भासितस्स वित्थारेन अत्थं आजानामि। साधु मे, भन्ते, भगवा तथा धम्मं देसेतु यथाहं इमस्स भगवता सङ्खित्तेन भासितस्स वित्थारेन अत्थं जानेय्यं" ति।

"तेन हि, सुजाते, सुणाहि, साधुकं मनसि करोहि; भासिस्सामी" ति।

[N.224] "एवं, भन्ते" ति खो सुजाता घरसुण्हा भगवतो पच्चस्सोसि। भगवा एतदवोच—

५. "पदुट्ठचित्ता अहितानुकम्पिनी, अञ्ञेसु रत्ता अतिमञ्ञते पतिं।
धनेन कीतस्स वधाय उस्सुका, या एवरूपा पुरिस्स भरिया।
'वधा च भरिया' ति च सा पवुच्चति॥

---

में) यह न अपनी सास का आदर करती है, न श्वसुर का और न अपने स्वामी का ही आदर करती है, यहाँ तक कि यह भगवान् (आप) का भी न सम्मान करती है, न गौरव और न पूजा या प्रतिष्ठा ही करती है।"

३. तब भगवान् ने उस घर की पुत्रवधू सुजाता को यह कहकर अपने सम्मुख बुलाया—"सुजाते! यहाँ आओ!" "अच्छा, भन्ते!" कहती हुई सुजाता भगवान् के सम्मुख आयी। आकर, भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गयी। एक ओर बैठी उस सुजाता को भगवान् ने यह उपदेश किया—

४. "सुजाते! लोक में पुरुषों की सात प्रकार की भार्याएँ (पत्नियाँ) होती हैं। कौन सी सात? (१) वधक के समान, (२) चौर के समान, (३) आर्या के समान, (४) माता के समान, (५) बहन के समान, (६) सखी के समान तथा (७) दासी के समान—सुजाते! ये पुरुष को सात प्रकार की भार्याएँ होती हैं। इनमें तुम अपने को किस प्रकार की मानती हो?"

"भन्ते! मैं आपके संक्षिप्त कथन का अर्थ नहीं समझी हूँ। अच्छा हो, भन्ते! आप मुझको यह प्रकरण इस प्रकार स्पष्ट समझावें कि मैं आपके प्रश्न का उचित उत्तर दे सकूँ।"

"तो, सुजाते! सुनो, भलीभाँति मन में बैठा लो। बताता हूँ।"

"अच्छा, भन्ते!" कहकर सुजाता ने भगवान् की आज्ञा मान ली। भगवान् ने यह कहा—

५. "जो स्त्री पति के प्रति द्वेषभाव रखती हो, उसका अहित चिन्तन करती हो, परपुरुष में आसक्त हो, पति का अपमान करती हो, यदि उसका पति धन से क्रीत है तो उसका वध कराने में उत्सुक हो—ऐसी स्त्री '**वधक भार्या**' कहलाती है॥ (१)

६. "यं इत्थिया विन्दति सामिको धनं, सिप्पं वणिज्जं च कसिं अधिट्ठहं।
अप्पं पि तस्स अप्पहातुमिच्छति, या एवरूपा पुरिस्स भरिया।
'चौरी च भरिया' ति च सा पवुच्चति॥

[B.468] ७. "अकम्मकामा अलसा महग्घसा, फरुसा च चण्डी च दुरुत्तवादिनी।
उट्ठायकानं अभिभुय्य वत्तति, या एवरूपा पुरिस्स भरिया।
'अय्या च भरिया' ति च सा पवुच्चति॥

[R.93] ८. "या सब्बदा होति हितानुकम्पिनी, माता व पुत्तं अनुरक्खते पतिं।
ततो धनं सम्भतमस्स रक्खति, या एवरूपा पुरिस्स भरिया।
'माता च भरिया' ति च सा पवुच्चति॥

९. "यथा पि जेट्ठा भगिनी कनिट्ठका, सगारवा होति सकम्हि सामिके।
हिरीमना भत्तुवसानुवत्तिनी, या एवरूपा पुरिस्स भरिया।
'भगिनी च भरिया' ति च सा पवुच्चति॥

[N.225]१०. "या चीध दिस्वान पतिं पमोदति, सखी सखारं व चिरस्समागतं।
कोलेय्यका सीलवती पतिब्बता, या एवरूपा पुरिसस्स भरिया।
'सखी च भरिया' ति च सा पवुच्चति॥

११. "अक्कुद्धसन्ता वधदण्डतज्जिता, अदुट्ठचित्ता पतिनो तितिक्खति।
अक्कोधना भत्तुवसानुवत्तिनी, या एवरूपा पुरिसस्स भरिया।
'दासी च भरिया' ति च सा पवुच्चति॥

---

६. "पति जो धन शिल्प, व्यापार, कृषि के आलम्बन से अपनी स्त्री को लाकर देता है, जो स्त्री उसमें से कुछ भी अंश छिपाने की इच्छा करती है ऐसी वह किसी पुरुष की भार्या **'चौर भार्या'** कहलाती है॥ (२)

७. "घर का कोई भी कार्य करना न चाहने वाली आलसी, अत्यधिक खानेवाली, कठोर वचन बोलने वाली, अपने कर्मचारियों के साथ अपमानजनक व्यवहार करने वाली, एवं कटुभाषिणी स्त्री **'स्वामिनी भार्या'** कहलाती है॥ (३)

८. "जो सदा पति का हित ही चाहती हैं, जैसे कोई माता अपने पुत्र का निरन्तर हित चाहती हो; उससे प्राप्त धन को सुरक्षित (सम्हाल कर) रखती है, ऐसी स्त्री **'माता भार्या'** कहलाती है॥ (४)

९. "जैसे छोटी बहन बड़ी बहन का सम्मान करती है, वैसे ही जो अपने स्वामी का सम्मान करती हो वह लज्जालु एवं पति के अधीन रहने वाली स्त्री **'भगिनी भार्या'** कहलाती है॥ (५)

१०. "जो पति को देखकर प्रसन्न होती हो, जैसे कोई मित्र बहुत दिनों बाद मिलने वाले मित्र को देखकर प्रसन्न होता है, ऐसी कुलपरम्परा को निभाने वाली, शीलवती तथा पतिव्रता स्त्री **'सखी भार्या'** कहलाती है॥ (६)

११. "जो कभी क्रोध नहीं करती, सदा शान्त रहती है, वध एवं दण्ड का भय मानती है, पति

१२. "'या चीध भरिया वधका' ति वुच्चति, 'चोरी च अय्या' ति च या पवुच्चति।
दुस्सीलरूपा फरुसा अनादरा, कायस्स भेदा निरयं वजन्ति ता॥
[B.469] १३. "'या चीध माता भगिनी सखी' ति च, 'दासी च भरिया' ति च सा पवुच्चति।
सीले ठितत्ता चिररत्तसंवुता, कायस्स भेदा सुगतिं वजन्ति ता ति॥
१४. इमा खो, सुजाते, सत्त पुरिसस्स भरियायो। तासं त्वं कतमा" ति?
"अज्जतग्गे मं, भन्ते, भगवा दासीसमं सामिकस्स भरियं धारेतू" ति॥ [R.94] ●

**११. कोधनसुत्तं** : १. "सत्तिमे, भिक्खवे, धम्मा सपत्तकन्ता सपत्तकरणा कोधनं आगच्छन्ति इत्थिं वा पुरिसं वा। कतमे सत्त? इध, भिक्खवे, सपत्तो सपत्तस्स एवं इच्छति— 'अहो वतायं दुब्बण्णो अस्सा' ति! तं किस्स हेतु? न, भिक्खवे, सपत्तो सपत्तस्स वण्णवताय नन्दति। कोधनोयं, भिक्खवे, पुरिसपुग्गलो कोधाभिभूतो कोधपरेतो, किञ्चा पि सो होति सुन्हातो सुविलित्तो कप्पितकेसमस्सु ओदातवत्थवसनो; अथ खो सो [N.226] दुब्बण्णो व होति कोधाभिभूतो। अयं, भिक्खवे, पठमो धम्मो सपत्तकन्तो सपत्तकरणो कोधनं आगच्छति इत्थिं वा पुरिसं वा।

---

के प्रति कभी द्वेष नहीं रखती, पति की बातों को सहन करती है, अक्रोधी एवं पति के वश में रहने वाली स्त्री **'दासी भार्या'** कहलाती है॥ (७)

१२. "इन सात प्रकार की भार्याओं में जो **वधक भार्या** एवं **चौरी भार्या** के रूप में वर्णित हुई हैं वे दु:शील, कठोर बोलनेवाली तथा बड़े बूढ़ों का अपमान करने वाली स्त्रियाँ, देहपात के बाद, मरणानन्तर नरक में जा गिरती हैं॥

१३. "तथा **माता भार्या, भगिनी भार्या** या **सखी भार्या** या **दासी भार्या** के रूप में जिनका वर्णन किया गया है, वे स्त्रियाँ सदाचाररत होने के कारण, तथा पति के प्रति अतिशय राग एवं संयम रखने के कारण, मरणानन्तर, स्वर्गलोक में जाकर सुख भोगती हैं॥

१४. "सुजाते! ये सात प्रकार की भार्याएँ लोक में पुरुषों की भार्याएँ देखी जाती हैं, उन सातों में से तुम अपने को किस प्रकार की भार्या मानती हो?"

"भन्ते! आज से आप मुझे मेरे स्वामी की **दासीसमान भार्या** समझें॥" ●

**११. क्रोधनसूत्र : : शत्रुता बढ़ाने वाला सात धर्म**

१. "भिक्षुओ! ये सात धर्म शत्रुओं को प्रिय लगने वाले तथा शत्रुता बढ़ाने वाले एवं स्त्री या पुरुष को क्रुद्ध करने वाले होते हैं। कौन से सात? यहाँ, भिक्षुओ! कोई शत्रु अपने शत्रु के लिये यह चाहता है—"यह दुर्वण (कुरूप) हो जाय।" वह किसलिये? क्योंकि कोई भी विरोधी अपने शत्रु को शुद्ध वर्ण में देखकर प्रसन्न नहीं होता। भिक्षुओ! यह क्रोधी पुरुष क्रोध के वश होकर क्रोध से भर जाता है। भले ही उसने तत्काल भले प्रकार से स्नान किया हो, चन्दनादि का लेप लगाया हो, दाढ़ी मूँछ मुड़ायी हो, स्वच्छ श्वेत वस्त्र पहने हो, परन्तु वह क्रोधाभिभूत पुरुष दुर्वण ही दिखायी देता है। भिक्षुओ! यह **प्रथम धर्म** है जो शत्रु को प्रिय लगने वाला तथा शत्रुता पैदा करने वाला एवं स्त्री या पुरुष को क्रोधी बना देनेवाला होता है।

२. ''पुन च परं, भिक्खवे, सपत्तो सपत्तस्स एवं इच्छति—'अहो वतायं दुक्खं सयेय्या' ति! तं किस्स हेतु? न, भिक्खवे, सपत्तो सपत्तस्स सुखसेय्याय नन्दति। कोधनोयं, भिक्खवे, पुरिसपुग्गलो कोधाभिभूतो कोधपरेतो, किञ्चा पि सो पल्लङ्के सेति गोनकत्थते पटलिकत्थते कदलिमिपगवरपच्चत्थरणे सउत्तरच्छदे उभतोलोहितकूपधाने; अथ खो सो दुक्खञ्ञेव सेति कोधाभिभूतो। अयं, भिक्खवे, दुतियो धम्मो सपत्तकन्तो सपत्तकरणो कोधनं आगच्छति इत्थिं वा पुरिसं वा।

३. ''पुन च परं, भिक्खवे, सपत्तो सपत्तस्स एवं इच्छति—'अहो वतायं न पचुरत्थो अस्सा' ति! तं किस्स हेतु? न, भिक्खवे, सपत्तो सपत्तस्स पचुरत्थताय नन्दति। [R.95] कोधनोयं, भिक्खवे, पुरिसपुग्गलो कोधाभिभूतो कोधपरेतो, अनत्थं पि गहेत्वा [B.470] 'अत्थो मे गहितो' ति मञ्ञति, अत्थं पि गहेत्वा 'अनत्थो मे गहितो' ति मञ्ञति। तस्सिमे धम्मा अञ्ञमञ्ञं विपच्चनीका गहिता दीघरत्तं अहिताय दुक्खाय संवत्तन्ति कोधाभिभूतस्स। अयं, भिक्खवे, ततियो धम्मो सपत्तकन्तो सपत्तकरणो कोधनं आगच्छति इत्थिं वा पुरिसं वा।

४. ''पुन च परं, भिक्खवे, सपत्तो सपत्तस्स एवं इच्छति—'अहो वतायं न भोगवा अस्सा' ति! तं किस्स हेतु? न, भिक्खवे, सपत्तो सपत्तस्स भोगवताय नन्दति। कोधनस्स, भिक्खवे, पुरिसपुग्गलस्स कोधाभिभूतस्स कोधपरेतस्स, ये पिस्स ते होन्ति भोगा उट्ठानविरियाधिगता बाहाबलपरिचिता सेदावक्खित्ता धम्मिका धम्मलद्धा, ते पि राजानो राजकोसं पवेसेन्ति कोधाभिभूतस्स। अयं, भिक्खवे, चतुत्थो धम्मो सपत्तकन्तो सपत्तकरणो कोधनं आगच्छति इत्थिं वा पुरिसं वा।

---

२. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई विरोधी अपने शत्रु के लिये यह चाहता है—'अरे! यह दुःखमग्न होकर सोये।' वह किसलिये? क्योंकि कोई भी विरोधी अपने शत्रु को सुख से सोते हुए नहीं देखना चाहता। भिक्षुओ! यह क्रोधी पुरुष यह सुनकर क्रोधमग्न हो जाता है; भले ही वह स्वयं अच्छे पलंग पर गद्दा तकिया आदि लगाकर सुखपूर्वक सोया हो। परन्तु वह क्रोध के कारण दुःखपूर्वक ही सोता है। भिक्षुओ! यह **दूसरा धर्म** है जो ...पूर्ववत्...।

३. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई विरोधी अपने शत्रु के लिये यह सोचता है—'अरे! इसके पास अधिक धन न हो।' वह किसलिये? क्योंकि, भिक्षुओ! कोई भी विरोधी अपने शत्रु के पास अधिक धन नहीं देखना चाहता। इसे सुनकर वह क्रुद्ध पुरुष, उसका कोई अनर्थ दूर कर देने पर भी, 'इसने मेरा धन हड़प लिया'—ऐसा मानता है; और उसको कुछ दिये जाने पर भी वह यही सोचता है—'यह मेरा अनर्थ करने के लिये कोई षड्यन्त्र कर रहा है'। इस तरह उसके द्वारा ये परस्पर विरोधी धर्म स्वीकार किये जाने पर ये उस क्रोधी के लिये दीर्घकाल तक अहितकर एवं दुःखप्रद ही होंगे। भिक्षुओ! यह **तीसरा धर्म** है, जो ...पूर्ववत्...।

४.''पुनः ...पूर्ववत्... 'अरे! इसको उपभोग के लिये अधिक भोग सम्पत्ति न मिले।' वह किसलिये? क्योंकि, भिक्षुओ! कोई भी विरोधी अपने विरोधी के पास अधिक भोगसम्पत्ति देखकर

५. ''पुन च परं, भिक्खवे, सपत्तो सपत्तस्स एवं इच्छति—'अहो वतायं न यसवा अस्सा' ति! तं किस्स हेतु? न, भिक्खवे, सपत्तो सपत्तस्स यसवताय नन्दति। कोधनोयं, भिक्खवे, पुरिसपुग्गलो कोधाभिभूतो कोधपरेतो, यो पिस्स सो होति यसो अप्पमादाधिगतो, तम्हा पि धंसति कोधाभिभूतो। अयं, भिक्खवे, पञ्चमो धम्मो सपत्तकन्तो [N.227] सपत्तकरणो कोधनं आगच्छति इत्थिं वा पुरिसं वा।

६. ''पुन च परं, भिक्खवे, सपत्तो सपत्तस्स एवं इच्छति—'अहो वतायं न मित्तवा अस्सा' ति! तं किस्स हेतु? न, भिक्खवे, सपत्तो सपत्तस्स मित्तवताय नन्दति। कोधनं, भिक्खवे, पुग्गलं कोधाभिभूतं कोधपरेतं, ये पिस्स ते होन्ति मित्तामच्चा ञातिसालोहिता, ते पि आरका परिवज्जन्ति कोधाभिभूतं। अयं, भिक्खवे, छट्ठो धम्मो सपत्तकन्तो सपत्तकरणो कोधनं आगच्छति इत्थिं वा पुरिसं वा।

७. ''पुन च परं, भिक्खवे, सपत्तो सपत्तस्स एवं इच्छति—'अहो वतायं [R.96] कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जेय्या' ति! तं किस्स हेतु? न, भिक्खवे, सपत्तो सपत्तस्स सुगतिगमने नन्दति। कोधनोयं, भिक्खवे, पुरिसपुग्गलो कोधाभिभूतो कोधपरेतो, कायेन दुच्चरितं चरति, वाचाय दुच्चरितं चरति, मनसा दुच्चरितं चरति। सो कायेन दुच्चरितं चरित्वा वाचाय ...पे०... कायस्स भेदा परं मरणा अपायं [B.471] दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति कोधाभिभूतो। अयं, भिक्खवे, सत्तमो धम्मो सपत्तकन्तो सपत्तकरणो कोधनं आगच्छति इत्थिं वा पुरिसं वा। इमे खो, भिक्खवे, सत्त धम्मा सपत्तकन्ता सपत्तकरणा कोधनं आगच्छन्ति इत्थिं वा पुरिसं वा ति।

---

प्रसन्न नहीं होता। यह सुनकर वह शत्रु क्रुद्ध हो जाता है। इस क्रोधी स्वभाव के कारण राजालोग उसकी खून-पसीने से कमायी हुई वैध सम्पत्ति पर भी अधिकार कर लेते हैं, और उसे राजकोष में डाल लेते हैं। इस प्रकार वह नंगा-भूखा रह जाता है। भिक्षुओ! यह **चतुर्थ धर्म** जो ...पूर्ववत्... ।

५. ''पुनः ...पूर्ववत्... 'अरे! इसका लोक में यश न फैले।' वह किसलिये? क्योंकि, भिक्षुओ! कोई भी विरोधी अपने शत्रु का लोक में यश फैलते हुए देखना सुनना नहीं चाहता। विरोधी की यह बात सुनकर वह क्रुद्ध होता है। इस क्रोध के कारण सावधानी से कृत कर्मों के कारण उसका उत्पन्न यश भी लोक में नष्ट होने लगता है। इस प्रकार वह लोक में असम्मानित जीवन ही बिताता है। भिक्षुओ! यह **पाँचवाँ धर्म** ...पूर्ववत्... ।

६. ''पुनः ...पूर्ववत्... 'अरे! इसका कोई मित्र न बनने पावे।' वह किसलिये? क्योंकि, भिक्षुओ! कोई भी पुरुष किसी को अपने शत्रु का मित्र बना देखकर प्रसन्न नहीं होता। यह सुनकर क्रोध करने से उसके जो अब तक मित्र या सम्बन्धिजन थे वे भी, इसके इस क्रोधी स्वभाव के कारण, इसका साथ छोड़ देते हैं। भिक्षुओ! यह **छठा धर्म** है, जो ...पूर्ववत्... ।

७. ''पुनः, भिक्षओ! ...'अरे! यह मरणानन्तर नरक में जा गिरे!' वह किस लिये? क्यों कि पुरुष अपने शत्रु को स्वर्ग में सुख भोगते हुए नहीं देखना चाहता। वह क्रोधी पुरुष, यह सुन कर क्रोधाभिभूत होकर काय, वाक् एवं मन से चाहे जैसे दुराचार करने लगता है। इन दुराचारों के

"कोधनो दुब्बण्णो होति, अथो दुक्खं पि सेति सो।
अथो अत्थं गहेत्वान, अनत्थं अधिपज्जति॥
"ततो कायेन वाचाय, वधं कत्वान कोधनो।
कोधाभिभूतो पुरिसो, धनजानिं निगच्छति॥
"कोधसम्मदसम्मत्तो, आयसक्यं निगच्छति।
ञातिमित्ता सुहज्जा च, परिवज्जन्ति कोधनं॥
"अनत्थजननो कोधो, कोधो चित्तप्पकोपनो।
भयमन्तरतो जातं, तं जनो नावबुज्झति॥
"कुद्धो अत्थं न जानाति, कुद्धो धम्मं न पस्सति।
अन्धतमं तदा होति, यं कोधो सहते नरं॥
[N.228,R.97] "यं कुद्धो उपरोधेति, सुकरं विय दुक्करं।
पच्छा सो विगते कोधे, अग्गिदड्ढो व तप्पति॥
"दुम्मङ्कुयं पदस्सेति, धूमं धूमीव पावको।
यतो पतायति कोधो, येन कुज्झन्ति मानवा॥

---

फलस्वरूप, मरणानन्तर उसका नरक में पात अवश्यम्भावी है। भिक्षुओ! यह **सातवाँ धर्म** है, जो विरोधियों को प्रिय है एवं विरोधी बना देने वाला है और किसी भी क्रोधी पुरुष या स्त्री को आवृत कर लेता है। (१-७)

"क्रोधी पुरुष निरन्तर दुर्वर्ण दिखायी देता है, उसकी निद्रा भी दु:ख से सम्पृक्त ही रहती है। तथा उसका कुछ हित करिये तब भी उसको वह अपना अहित ही समझता है॥"

"तब वह क्रोधी पुरुष काय, वाक् एवं मन से दुश्चरित करता हुआ अपना नाश करने पर ही सन्नद्ध हो जाता है और अपने अर्जित धन की स्वयं ही हानि कर बैठता है॥"

"इस तरह उस क्रोधी पुरुष का अपमानित जीवन व्यतीत होना आरम्भ होता है। उस क्रोधी पुरुष का, अन्त में, उसके मित्र एवं सम्बन्धिजन भी साथ छोड़ देते हैं॥"

"उसका यह क्रोध ही उसके सब अनर्थों का मूल है, उस का चित्त भी, निरन्तर क्रोध के कारण, सदा चञ्चल रहता है। वह अपने मन में निरन्तर डरा हुआ सा रहता है। परन्तु वह स्वयं इन सब बातों का कारण नहीं समझ पाता॥"

"क्रोधी पुरुष न अर्थ ज्ञान ही कर पाता है और न धर्म का साक्षात्कार ही कर पाता है। जिस पर क्रोध आरूढ हो जाता है उसका जीवन सर्वथा अन्धकारमय हो जाता है॥"

"जो सरल समझकर कहीं बाधा डालता है वही उसके लिये दुष्कर हो जाता है। वह क्रोध शान्त होने पर उस पर उसी तरह पश्चात्ताप करता है जैसे किसी को अग्नि से जल जाने पर हुआ करता है॥"

"यह क्रोध बहुत कठिनाई से शान्त होने वाला होता है; जैसे अतिशय धूमवाली अग्नि। इससे क्रोध बढ़ता ही है, इससे लोग क्रुद्ध ही होते हैं॥"

"नास्स हिरी न ओत्तप्पं, न वाचो होति गारवो।
कोधेन अभिभूतस्स, न दीपं होति किञ्चनं॥
"तपनीयानि कम्मानि, यानि धम्मेहि आरका।
तानि आरोचयिस्सामि, तं सुणाथ यथातथं॥
"कुद्धो हि पितरं हन्ति, हन्ति कुद्धो समातरं।
कुद्धो हि ब्राह्मणं हन्ति, हन्ति कुद्धो पुथुज्जनं॥
"याय मातु भतो पोसो, इमं लोकं अवेक्खति। [B.472]
तं पि पाणददिं सन्तिं, हन्ति कुद्धो पुथुज्जनो॥
"अत्तूपमा हि ते सत्ता, सत्ता हि परमो पियो।
हन्ति कुद्धो पुथुत्तानं, नानारूपेसु मुच्छितो॥
"असिना हन्ति अत्तानं, विसं खादन्ति मुच्छिता।
रज्जुया वज्झ मीयन्ति, पब्बतानं पि कन्दरे॥
"भूनहच्चानि कम्मानि, अत्तमारणियानि च। [R.98]
करोन्ता नावबुज्झन्ति, कोधजातो पराभवो॥
"इतायं कोधरूपेन, मच्चुपासो गुहासयो।
तं दमेन समुच्छिन्दे, पञ्ञाविरियेन दिट्ठिया॥
"यथा मेतं अकुसलं, समुच्छिन्देथ पण्डितो।

---

"न इसको कोई लज्जा है, न पापभीरुता। न इसके वचन का ही कोई महत्त्व है। क्रोधाभिभूत पुरुष का कोई शरणस्थल (द्वीप=रक्षक) नहीं होता॥"

"इन धर्मों से उत्पन्न ताप (कष्ट) दायक कर्मों का क्रमशः वर्णन करता हूँ, उनको सुनो॥"

"क्रोधी पुरुष पिता को भी मार सकता है, अपनी माता को भी मार सकता है। यह ब्राह्मण की हत्या भी कर सकता है, तथा यह किसी पृथग्जन को भी मार सकता है॥"

"जिस माता द्वारा पाला पोसा जाने पर बालक इस संसार को देखने योग्य बनता है, वह क्रोधी उस प्राणदात्री माता को भी मार सकता है॥"

"सभी अन्य प्राणी भी अपनी आत्मा के ही समान हैं। आत्मा सबको प्रिय होती है। क्रोधाभिभूत पुरुष अनेक रूपों में उद्भूत अपनी सरल आत्मा को भी मार सकता है॥"

"ये क्रोधाभिभूत पुरुष अपने आप को तलवार से भी काट सकते हैं। अपनी मृत्यु के लिये विष भी खा सकते हैं, स्वयं रस्सी से बँधकर भी मर सकते हैं, या पहाड़ों की गुफाओं में जाकर भी मर सकते हैं॥"

"ये क्रोधी पुरुष आत्मघातक भ्रूणहत्या जैसे कर्म करते हुए भी भय नहीं मानते।"

"अतः साधक इस अतिशय गुप्त क्रोधरूप मृत्युपाश को इन्द्रियसंयम, प्रज्ञा, उत्तम प्रयत्न एवं सम्यग्दृष्टि द्वारा काटने का प्रयास करे।"

"बुद्धिमान् पुरुष को चाहिये कि वह इस अकुशल को इस प्रकार काट दे कि इसके पुनः

तथेव धम्मे सिक्खेथ, मा नो दुम्मङ्कुयं अहु॥
''वीतकोधा अनायासा, वीतलोभा अनुस्सुका।
दन्ता कोधं पहन्त्वान, परिनिब्बन्ति अनासवा'' ति॥ ●

**अब्याकतवग्गो छट्ठो॥**

**तस्सुद्दानं**

[N.229] अब्याकतो पुरिसगति, तिस्स सीह अरक्खियं।
किमिलं सत्त पचला, मेत्ता भरिया कोधेकादसा ति॥ ●

## ७. महावग्गो

**१. हिरीओत्तप्पसुत्तं :** १. ''हिरोत्तप्पे, भिक्खवे, असति हिरोत्तप्पविपन्नस्स [R.99] हतूपनिसो होति इन्द्रियसंवरो; इन्द्रियसंवरे असति इन्द्रियसंवरविपन्नस्स हतूपनिसं होति सीलं; सीले असति सीलविपन्नस्स हतूपनिसो होति सम्मासमाधि; सम्मासमाधिम्हि [B.473] असति सम्मासमाधिविपन्नस्स हतूपनिसं होति यथाभूतञाणदस्सनं; यथाभूत-ञाणदस्सने असति यथाभूतञाणदस्सनविपन्नस्स हतूपनिसो होति निब्बिदाविरागो;

---

उत्पाद की सम्भावना ही न रहे। तथा इस के लिये ऐसे धर्मों की शिक्षा ले जिन की साधना से यह कठिनता से दबाया जा सकने वाला धर्म (क्रोध) पूर्णत: विनष्ट हो जाय॥''

''क्रोधरहित, निरुद्यम, लोभाहित, संसार के प्रति उपेक्षा भाव रखने वाले इन्द्रियसंयमी साधकजन ही आश्रवरहित होकर परिनिर्वाण को प्राप्त करते हैं॥'' ●

**अव्याकृत वर्ग षष्ठ सम्पन्न॥**

**इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची**

१. अव्याकृतसूत्र, २. पुरुषगतिसूत्र, ३. तिष्यब्रह्मसूत्र, ४. सिंहसेनापतिसूत्र, ५. अरक्षणीयसूत्र, ६. किमिलसूत्र, ७. सप्तधर्मसूत्र, ८. प्रचलायमानसूत्र, ९. मैत्रसूत्र, १०. भार्यासूत्र, ११. क्रोधनसूत्र॥

## ७. महावर्ग

**१. ह्री-अवत्राप्यसूत्र : : सात धर्म**

''भिक्षुओ! ह्री एवं अवत्राप्य (पापभीरुता) के न रहने पर अवत्राप्यरहित साधक के लिये इन्द्रियसंवर साधनरहित हो जाता है। इन्द्रियसंवर के न रहने पर उसका शील नि:साधन हो जाता है। शील के न रहने पर उसकी सम्यक्समाधि नष्ट हो जाती है। सम्यक्समाधि के न रहने पर, सम्यक्समाधिरहित उस साधक का यथाभूतज्ञानदर्शन विनष्ट हो जाता है। यथाभूत (सत्य) ज्ञानदर्शन के न रहने पर यथाभूतज्ञानदर्शनरहित उस साधक का निर्विदा एवं वैराग्य नष्ट हो जाता है।

निब्बिदाविरागे असति निब्बिदाविरागविपन्नस्स हतूपनिसं होति विमुत्तिञाणदस्सनं। सेय्यथापि, भिक्खवे, रुक्खो साखापलासविपन्नो। तस्स पपटिका पि न पारिपूरिं गच्छति, तचो पि फेग्गु पि सारो पि न पारिपूरिं गच्छति। एवमेव खो, भिक्खवे, हिरोत्तप्पे असति हिरोत्तप्पविपन्नस्स हतूपनिसो होति इन्द्रियसंवरो; इन्द्रियसंवरे असति इन्द्रियसंवरविपन्नस्स हतूपनिसं होति सीलं; सीले असति सीलविपन्नस्स हतूपनिसो होति सम्मासमाधि; सम्मासमाधिम्हि असति सम्मासमाधिविपन्नस्स हतूपनिसं होति यथाभूतञाणदस्सनं; यथाभूतञाणदस्सने असति यथाभूञाणदस्सनविपन्नस्स हतूपनिसो होति निब्बिदाविरागो; निब्बिदाविरागे असति निब्बिदाविरागविपन्नस्स हतूपनिसं होति विमुत्तिञाणदस्सनं।

२. ''हिरोत्तप्पे, भिक्खवे, सति हिरोत्तप्पसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति इन्द्रियसंवरो; इन्द्रियसंवरे सति इन्द्रियसंवरसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति सीलं; सीले सति सीलसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति सम्मासमाधि; सम्मासमाधिम्हि सति सम्मा-समाधिसम्पन्नस्स उपनिसम्पन्नं होति यथाभूतञाणदस्सनं; यथाभूतञाणदस्सने सति [N.230] यथाभूतञाणदस्सनसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति निब्बिदाविरागो; निब्बिदाविरागे सति निब्बिदाविरागसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति विमुत्तिञाणदस्सनं। सेय्यथापि, भिक्खवे, रुक्खो साखापलाससम्पन्नो। तस्स पपटिका पि पारिपूरिं गच्छति, तचो पि फेग्गु पि सारो पि न पारिपूरिं गच्छति। एवमेव खो, भिक्खवे, हिरोत्तप्पे सति हिरोत्तप्पसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति ...पे०... विमुत्तिञाणदस्सनं'' ति॥ ●

**२. सत्तसुरियसुत्तं :** १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा वेसालियं विहरति [R.100] अम्बपालिवने। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—''भिक्खवो'' ति। ''भदन्ते'' ति ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

२. ''अनिच्चा, भिक्खवे, सङ्खारा; अधुवा, भिक्खवे, सङ्खारा; [B.474]

---

निर्विदा-वैराग्य के नष्ट होने पर निर्विदा-वैराग्यरहित उस साधक का विमुत्तिज्ञानदर्शन विनष्ट हो जाता है। जैसे, भिक्षुओ! कोई शाखापलाशरहित वृक्ष हो; जिसकी पर्पटिका (त्वचा), छाल, तथा स्कन्ध आदि कुछ भी न हो; उसी प्रकार, ह्री एवं अवत्राप्य के न रहने पर साधक भिक्षु का ...पूर्ववत्... विमुक्तिज्ञानदर्शन विनष्ट हो जाता है।''

२. ''(परन्तु) भिक्षुओ! ह्री एवं अवत्राप्य के रहने पर उस ह्री-अवत्राप्यसम्पन्न साधक का इन्द्रियसंयम भी व्यवस्थित रहता है; इन्द्रियसंयम के रहने पर ...पूर्ववत्... विमुक्तिज्ञानदर्शन सुसम्पन्न रहता है।'' ●

**२. सप्तसूर्यसूत्र : : संस्कारों की अनित्यता**

१. ऐसा मैने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) वैशाली के आम्रपालिवन में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को ...पूर्ववत्...। भगवान् ने यह उपदेश किया—

२. ''भिक्षुओ! सभी संस्कार अनित्य हैं, अशाश्वत (विनाशी) हैं, इन संस्कारों से कोई

अनस्सासिका, भिक्खवे, सङ्खारा। यावञ्चिदं, भिक्खवे, अलमेव सब्बसङ्खारेसु निब्बिन्दितुं अलं विरज्जितुं अलं विमुच्चितुं।

३. ''सिनेरु, भिक्खवे, पब्बतराजा चतुरासीतियोजनसहस्सानि आयामेन, चतुरासीतियोजनसहस्सानि वित्थारेन, चतुरासीतियोजनसहस्सानि महासमुद्दे अज्झोगाळ्हो, चतुरासीतियोजनसहस्सानि महासमुद्दा अच्चुग्गतो। होति खो सो, भिक्खवे, समयो यं कदाचि करहचि दीघस्स अद्धुनो अच्चयेन बहूनि वस्सानि बहूनि वस्ससतानि बहूनि वस्ससहस्सानि बहूनि वस्ससतसहस्सानि देवो न वस्सति। देवे खो पन, भिक्खवे, अवस्सन्ते ये केचिमे बीचगामभूतगामा ओसधितिणवनप्पतयो ते उस्सुस्सन्ति, विसुस्सन्ति, न भवन्ति। एवं अनिच्चा, भिक्खवे, सङ्खारा; एवं अधुवा, भिक्खवे, सङ्खारा ...पे०... अलं विमुच्चितुं।

४. ''होति खो सो, भिक्खवे, समयो यं कदाचि करहचि दीघस्स अद्धुनो अच्चयेन [R.101] दुतियो सुरियो पातुभवति। दुतियस्स, भिक्खवे, सुरियस्स पातुभावा या काचि कुन्नदियो कुसोब्भा ता उस्सुस्सन्ति विसुस्सन्ति, न भवन्ति। एवं अनिच्चा, भिक्खवे, सङ्खारा ...पे०... अलं विमुच्चितुं।

[N.231] ५. ''होति खो सो, भिक्खवे, समयो यं कदाचि करहचि दीघस्स अद्धुनो अच्चयेन ततियो सुरियो पातुभवति। ततियस्स, भिक्खवे, सुरियस्स पातुभावा या काचि महानदियो, सेय्यथीदं—गङ्गा, यमुना, अचिरवती, सरभू, मही, ता उस्सुस्सन्ति विसुस्सन्ति, न भवन्ति। एवं अनिच्चा भिक्खवे, सङ्खारा ...पे०... अलं विमुच्चितुं।

---

आश्वासन मिलने वाला नहीं है। अतः, भिक्षुओ! जहाँ तक संस्कारों की बात है, तुमको सभी संस्कारों के प्रति निर्वेद (ग्लानि) एवं वैराग्य तथा त्याग की भावना रखनी चाहिये। (१)

३. ''भिक्षुओ! सुमेरु पर्वतराज लम्बाई में चौरासी हजार योजन है, विस्तार में भी चौरासी हजार योजन है, और चौरासी हजार ही समुद्र में डूबा हुआ है तथा चौरासी हजार ही समुद्र से ऊपर उठा हुआ है। भिक्षुओ! ऐसा भी एक समय आता है, जब बहुत समय बीत जाने पर भी, बहुत से वर्ष, यहाँ तक कि सैंकड़ों, हजारों, लाखों वर्ष बीत जाने पर भी वहाँ वर्षा नहीं होती। इस प्रकार, वर्षा न होने पर, वहाँ उत्पन्न बीजसमूह, जीवसमूह, औषधि, तृण एवं वनस्पतिसमूह सूख जाते हैं, नहीं रह जाते। इस प्रकार ये संस्कार भी अनित्य एवं विनाशी हैं ...पूर्ववत्... त्याग की भावना रखनी चाहिये।'' (२)

४. ''और, भिक्षुओ! एक समय ऐसा भी होता है जब, कभी बहुत समय बीतने के बाद, द्वितीय सूर्य पैदा होता है। भिक्षुओ! उस द्वितीय सूर्य के पैदा होने पर जितनी छोटी नदियाँ या छोटे जलस्रोत हैं वे सब सूख जाते हैं, उन में जल नहीं रहता; इसी प्रकार, भिक्षुओ! ये संस्कार भी अनित्य एवं विनाशी हैं ...पूर्ववत्... त्याग की भावना रखनी चाहिये।'' (३)

५. भिक्षुओ! कभी वह समय भी आता है जब, बहुत काल बीतने के बाद, तीसरे सूर्य का प्रादुर्भाव होता है। तृतीय सूर्य के प्रादुर्भाव से जितनी भी बड़ी नदियाँ हैं; जैसे—गङ्गा, यमुना,

६. ''होति खो सो, भिक्खवे, समयो यं कदाचि करहचि दीघस्स अद्धुनो अच्चयेन चतुत्थो सुरियो पातुभवति। चतुत्थस्स, भिक्खवे, सुरियस्स पातुभावा ये ते महासरा यतो इमा महानदियो पवत्तन्ति, सेय्यथीदं—अनोतत्ता, सीहपपाता, रथकारा, कण्णमुण्डा, कुणाला, छद्दन्ता, मन्दाकिनिया, ता उस्सुस्सन्ति विसुस्सन्ति, न भवन्ति। एवं अनिच्चा, भिक्खवे, सङ्खारा ...पे०... अलं विमुच्चितुं।

७. ''होति खो सो, भिक्खवे, समयो यं कदाचि करहचि दीघस्स अद्धुनो अच्चयेन पञ्चमो सुरियो पातुभवति। पञ्चमस्स, भिक्खवे, सुरियस्स पातुभावा योजनसतिकानि पि महासमुद्दे उदकानि ओगच्छन्ति, द्वियोजनसतिकानि पि महासमुद्दे उदकानि [B.475] ओगच्छन्ति, तियोजनसतिकानि पि, चतुयोजनसतिकानि पि, पञ्चयोजनसतिकानि पि, छयोजनसतिकानि पि, सत्तयोजनसतिकानि पि महासमुद्दे उदकानि ओगच्छन्ति; सत्ततालं पि महासमुद्दे उदकं सण्ठाति, छतालं पि, पञ्चतालं पि, चतुतालं पि, तितालं पि, द्वितालं पि, तालमत्तं पि महासमुद्दे उदकं सण्ठाति; सत्तपोरिसं पि महासमुद्दे उदकं सण्ठाति, [R.102] छपोरिसं पि, पञ्चपोरिसं पि, चतुपोरिसं पि, तिपोरिसं पि, द्विपोरिसं पि, पोरिसं पि, अड्ढपोरिसं पि, कटिमत्तं पि, जण्णुकामत्तं पि, गोप्फकमत्तं पि महासमुद्दे उदकं सण्ठाति। सेय्यथापि, भिक्खवे, सरदसमये थुल्लफुसितके देवे वस्सन्ते तत्थ तत्थ गोपदेसु उदकानि

---

अचिरवती, सरयू, एवं मही—ये सब सूख जाती हैं, जल से रिक्त हो जाती हैं। इसी प्रकार, भिक्षुओ! सभी संस्कार ...पूर्ववत्... त्याग की भावना करनी चाहिये। (४)

६. ''भिक्षुओ! पुनः एक समय वह भी आता है, जब बहुत काल बीतने के बाद, चतुर्थ सूर्य का प्रादुर्भाव होता है। उस सूर्य के प्रादुर्भाव से जितने भी महान् सरोवर हैं, जिन से ये विशाल नदियाँ निकलती हैं; जैसे—अनवतप्त, सिंहप्रपात, रथकार, कर्णमुण्ड, कुणाल, षड्दन्त एवं मन्दाकिनी—ये सब सूख जाते हैं, जल विहीन हो जाते हैं; इसी प्रकार, भिक्षुओ! ये संस्कार भी ...पूवर्वत्... त्याग की भावना करनी चाहिये।'' (५)

७. ''और, भिक्षुओ! एक समय वह भी आता है कि जब, कभी लम्बा काल बीत जाने के बाद, पंचम सूर्य का प्रादुर्भाव होता है। भिक्षुओ! इस पञ्चम सूर्य के प्रादुर्भूत होने से उसके प्रखर ताप के कारण महासमुद्र का जल सैकड़ों योजन नीचे चला जाता है, दो सौ योजन... तीन सौ योजन... चार सौ योजन... पाँच सौ योजन... छह सौ योजन... महासमुद्र का जल सात सौ योजन नीचे चला जाता है। फिर कभी उसी समुद्र में केवल सात ताल जितना जल रह जाता है, छह ताल... पाँच ताल... चार ताल... तीन ताल... दो ताल... एकताल मात्र जल रह जाता है। कभी इस से भी कम छह पुरुष... पाँच पुरुष... चार पुरुष... तीन पुरुष... दो पुरुष... एक पुरुष प्रमाण जल रह जाता है; कभी आधा पुरुष... कभी पुरुष की कटिमात्र... कभी पुरुष के जानु (घुटना) मात्र... कभी पुरुष के गुल्फ (टखना) मात्र जल समुद्र में रह जाता है और कभी तो इससे भी नीचे चला जाता है। जैसे, भिक्षुओ! शरद् ऋतु में मोटी बूँदों में जल बरस रहा हो उस से गायों के खुरों से बने आकार में जितना जल भरता है उतना जल रह जाय। कहने का तात्पर्य यह है भिक्षुओ! कि उस पञ्चम सूर्य के

ठितानि होन्ति; एवमेव खो, भिक्खवे, तत्थ तत्थ गोप्फकमत्तानि महासमुद्दे उदकानि ठितानि होन्ति। पञ्चमस्स, भिक्खवे, सुरियस्स पातुभावा अङ्गुलिपब्बमत्तं पि महासमुद्दे उदकं न होति। एवं अनिच्चा, भिक्खवे, सङ्खारा ...पे०... अलं विमुच्चितुं।

[N.232] ८. ''होति खो सो, भिक्खवे, समयो यं कदाचि करहचि दीघस्स अद्धुनो अच्चयेन छट्ठो सुरियो पातुभवति। छट्ठस्स, भिक्खवे, सुरियस्स पातुभावा अयं च महापथवी सिनेरु च पब्बतराजा धूमायन्ति संधूमायन्ति, सम्पधूमायन्ति। सेय्यथापि, भिक्खवे, कुम्भकारपाको आलेपितो पठमं धूमेति संधूमेति सम्पधूमेति; एवमेव खो, भिक्खवे, छट्ठस्स सुरियस्स पातुभावा अयं च महापथवी सिनेरु च पब्बतराजा धूमायन्ति संधूमायन्ति सम्पधूमायन्ति। एवं अनिच्चा, भिक्खवे, सङ्खारा ...पे०... अलं विमुच्चितुं।

[R.103] ९. ''होति खो सो, भिक्खवे, समयो यं कदाचि करहचि दीघस्स अद्धुनो अच्चयेन सत्तमो सुरियो पातुभवति। सत्तमस्स, भिक्खवे, सुरियस्स पातुभावा अयं च [B.476] महापथवी सिनेरु च पब्बतराजा आदिप्पन्ति पज्जलन्ति एकजाला भवन्ति। इमिस्सा च, भिक्खवे, महापथविया सिनेरुस्स च पब्बतराजस्स झायमानानं दय्हमानानं अच्चि वातेन खित्ता याव ब्रह्मलोका पि गच्छति। सिनेरुस्स, भिक्खवे, पब्बतराजस्स झायमानस्स दय्हमानस्स विनस्समानस्स महता तेजोखन्धेन अभिभूतस्स योजनसतिकानि पि कूटानि पलुज्जन्ति, द्वियोजनसतिकानि पि, तियोजनसतिकानि पि, चतुयोजनसतिकानि पि, पञ्चयोजनसतिकानि पि कूटानि पलुज्जन्ति। इमिस्सा च, भिक्खवे, महापथविया सिनेरुस्स च पब्बतराजस्स झायमानानं दय्हमानानं नेव छारिका पञ्ञायति न मसि। सेय्यथापि, भिक्खवे, सप्पिस्स वा तेलस्स वा झायमानस्स दय्हमानस्स नेव छारिका पञ्ञायति न मसि; एवमेव खो, भिक्खवे, इमिस्सा च महापथविया सिनेरुस्स च

---

प्रादुर्भाव से, प्रखर ताप के कारण, अङ्गुलि का एक पर्व डूबने योग्य जल भी नहीं रह जाता। इसी प्रकार, भिक्षुओ! ये सभी संस्कार ...पूर्ववत्... त्याग की भावना करनी चाहिये।''

८. ''भिक्षुओ! एक समय वह भी आता है जब बहुत काल के बाद षष्ठ सूर्य का प्रादुर्भाव होता है। उसके प्रखरतम ताप से यह महापृथ्वी एवं सुमेरु पर्वतराज उष्ण होकर धूआँ फेंकने लगते हैं; जैसे भिक्षुओ! कुम्भकार का आँवा आलेप के बाद पहले धूआँ फेंकता है; इसी प्रकार, भिक्षुओ! ये सभी संस्कार ...पूर्ववत्... त्याग की भावना करनी चाहिये।''

९. ''भिक्षुओ! ऐसा भी एक समय आता है जब कि एक लम्बा समय बीतने के बाद, सातवें सूर्य का प्रादुर्भाव होता है। सातवें सूर्य का प्रादुर्भाव होने पर उसके प्रखरतम ताप से यह महापृथ्वी एवं सुमेरुपर्वतराज जल उठते हैं। इस महापृथ्वी एवं सुमेरु पर्वतराज सुमेरु की वह अग्नि, वायु के सहारे से, ब्रह्मलोक तक पहुँच जाती है। इस फैली हुई प्रज्वलित अग्नि से मार्ग में पड़ने वाले पर्वतों के सैकड़ों योजन ऊँचे बड़े बड़े शिखर, दो सौ योजन ऊँचे, तीन सौ योजन ऊँचे, चार सौ योजन ऊँचे, पाँच सौ योजन ऊँचे पर्वतशिखर जलकर राख हो जाते हैं। भिक्षुओ! इस महापृथ्वी और सुमेरु पर्वतराज के इस प्रकार सर्वथा जल जाने के बाद न उनकी राख मिलती है, न कालिख। जैसे,

पब्बतराजस्स झायमानानं दय्हमानानं नेव छारिका पञ्ञायति न मसि। एवं अनिच्चा, भिक्खवे, सङ्खारा; एवं अधुवा, भिक्खवे, सङ्खारा; एवं अनस्सासिका, भिक्खवे, सङ्खारा। यावञ्चिदं, भिक्खवे, अलमेव सब्बसङ्खारेसु निब्बिन्दितुं अलं विरज्जितुं अलं विमुच्चितुं।

१०. "तत्र, भिक्खवे, को मन्ता को सद्धाता—'अयं च पथवी सिनेरु च [N.233] पब्बतराजा दय्हिस्सन्ति विनस्सिस्सन्ति, न भविस्सन्ती' ति अञ्ञत्र दिट्ठपदेहि!

"भूतपुब्बं, भिक्खवे, सुनेत्तो नाम सत्था अहोसि तित्थकरो कामेसु वीतरागो। सुनेत्तस्स खो पन, भिक्खवे, सत्थुनो अनेकानि सावकसतानि अहेसुं। सुनेत्तो, भिक्खवे, सत्था सावकानं ब्रह्मलोकसहब्यताय धम्मं देसेसि। ये खो पन, भिक्खवे, सुनेत्तस्स [R.104] सत्थुनो ब्रह्मलोकसहब्यताय धम्मं देसेन्तस्स सब्बेन सब्बं सासनं आजानिंसु ते कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं ब्रह्मलोकं उपपज्जिंसु। ये न सब्बेन सब्बं सासनं आजानिंसु ते कायस्स भेदा परं मरणा अप्पेकच्चे परनिम्मितवसवत्तीनं देवानं सहब्यतं उपपज्जिंसु, अप्पेकच्चे निम्मानरतीनं देवानं सहब्यतं उपपज्जिंसु, अप्पेकच्चे तुसितानं देवानं सहब्यतं उपपज्जिंसु अप्पेकच्चे यामानं देवानं सहब्यतं उपपज्जिंसु, अप्पेकच्चे तावतिंसानं देवानं सहब्यतं उपपज्जिंसु, अप्पेकच्चे चातुमहाराजिकानं देवानं सहब्यतं उपपज्जिंसु, अप्पेकच्चे खत्तियमहासालानं सहब्यतं उपपज्जिंसु, अप्पेकच्चे ब्राह्मणमहासालानं सहब्यतं उपपज्जिंसु, अप्पेकच्चे गहपतिमहासालानं सहब्यतं उपपज्जिंसु।

११. "अथ खो, भिक्खवे, सुनेत्तस्स सत्थुनो एतदहोसि—'न खो मेतं पतिरूपं

---

भिक्षुओ! दीप के घी एवं तैल के जल जाने के बाद न उसकी राख मिलती है न कालिख; इसी प्रकार, भिक्षुओ! सभी संस्कार अनित्य हैं। अत: भिक्षुओ! इन सभी संस्कारों में निर्विदा वैराग्य एवं त्याग की भावना करनी चाहिये।" (७)

१०. "भिक्षुओ! इस बात की कौन मीमांसा करेगा या इस पर श्रद्धा करेगा कि यह महापृथ्वी या सुमेरु पर्वतराज इस प्रकार सर्वांशत: जलकर नष्ट हो जायँगे कि इन की सत्ता भी न रहेगी। प्रत्यक्षदर्शी (इतिहास के ज्ञाता) ही इसके एकमात्र साक्षी रह जायँगे।"

"पहले कभी, भिक्षुओ! सुनेत्र नामक शास्ता हुए थे जो धर्मद्रष्टा (तीथङ्कर) भी थे और वासनाओं में निरासक्त। भिक्षुओ! इन सुनेत्र शास्ता के अनेक शत श्रावक थे। भिक्षुओ! वे सुनेत्र शास्ता अपने शिष्यों को ब्रह्मलोक से मैत्री भावना के उपदेशक थे। जो उस सुनेत्र शास्ता के ब्रह्मलोक से मैत्री भावना का उपदेश अपने मन में ठीक से बैठाकर उसकी साधना कर सके वे, अपने इस देहपात के बाद, मरणानन्तर ब्रह्मलोक में उत्पन्न हो गये। परन्तु जो उनके उपदेश को अपने मन में उचित पद्धति से मन में न बैठा सके वे उसकी उसी प्रकार से साधना कर देहपात के बाद, कोई परनिर्मित देवों की मैत्री प्राप्त कर... कुछ निर्माणरति देवों के साथ मैत्रीभाव प्राप्त कर... कुछ तुषित देवों के साथ... कुछ यामदेवों के साथ... कुछ त्रायस्त्रिंश देवों के साथ... कुछ चातुर्महाराजिक देवों के साथ... कुछ क्षत्रियों के उच्च कुलों में... कुछ ब्राह्मणों के उच्च कुलों में... कुछ गृहपतियों के उच्च कुलों में मैत्रीभाव के साथ उत्पन्न हुए।

[B.477] 'योहं सावकानं समसमगतियो अस्सं अभिसम्परायं, यन्नूनाहं उत्तरि मेत्तं भावेय्यं' ति।

१२. "अथ खो, भिक्खवे, सुनेत्तो सत्था सत्त वस्सानि मेत्तं चित्तं भावेसि। सत्तवस्सानि मेत्तं चित्तं भावेत्वा सत्तसंवट्टविवट्टकप्पे नयिमं लोकं पुनरागमासि। संवट्टमाने [R.105] सुदं, भिक्खवे, लोके आभस्सरूपगो होति। विवट्टमाने लोके सुञ्ञं ब्रह्मविमानं उपपज्जति। तत्र सुदं, भिक्खवे, ब्रह्मा होति महाब्रह्मा अभिभू अनभिभूतो अञ्ञदत्थुदसो वसवत्ती। छत्तिंसक्खत्तुं खो पन, भिक्खवे, सक्को अहोसि देवानमिन्दो। अनेकसतक्खत्तुं राजा अहोसि चक्कवत्ती धम्मिको धम्मराजा चातुरन्तो विजितावी जनपदत्थावरियप्पत्तो सत्तरतनसमन्नागतो। परोसहस्सं खो पनस्स पुत्ता अहेसुं सूरा वीरङ्गरूपा परसेनप्पमद्दना। [N.234] सो इमं पथविं सागरपरियन्तं अदण्डेन असत्थेन धम्मेन अभिविजिय अज्झावसि। सो हि नाम, भिक्खवे, सुनेत्तो सत्था एवं दीघायुको समानो एवं चिरट्ठितिको अपरिमुत्तो अहोसि 'जातिया जराय मरणेन सोकेहि परिदेवेहि दुक्खेहि दोमनस्सेहि उपायासेहि। अपरिमुत्तो दुक्खस्मा ति वदामि।

१३. "तं किस्स हेतु? चतुन्नं धम्मानं अननुबोधा अप्पटिवेधा। कतमेसं चतुन्नं? अरियस्स, भिक्खवे, सीलस्स अननुबोधा अप्पटिवेधा, अरियस्स समाधिस्स अननुबोधा अप्पटिवेधा, अरियाय पञ्ञाय अननुबोधा अप्पटिवेधा, अरियाय विमुत्तिया अननुबोधा

---

११. "तब उन सुनेत्र शास्ता के मन में यह विचार उठा—'यह मेरे लिये उचित नहीं है कि मैं भी अपने शिष्यों के समान ही दूसरे लोकों में उत्पन्न होऊँ! मुझे तो कुछ अतिरिक्त (विशेष) साधना करनी चाहिये।'

१२. "तब, भिक्षुओ! सुनेत्र शास्ता ने सात वर्ष तक निरन्तर मैत्री भावना की साधना की। सात वर्ष तक मैत्रीचित्त की भावना करने के फलस्वरूप वे सात संवर्त-विवर्त कल्प तक इस लोक में उत्पन्न नहीं हुए। भिक्षुओ! पुनः किसी संवर्त कल्प में वे आभस्वर देवलोक में उत्पन्न हुए। तथा अन्य विवर्त कल्प में वे शून्य ब्रह्मलोक में उत्पन्न हुए। उस समय उस ब्रह्मलोक का महाब्रह्मा सर्वविजयी, किसी से भी परास्त न होने वाला, निश्चयात्मक ज्ञानी वशवर्ती ब्रह्मा था। ३६ (छत्तीस) बार वे देवेन्द्र शक्र बने। सैंकड़ों बार वे ऐसे चक्रवर्ती सम्राट् बने जो धार्मिक धर्मपूर्वक राज्य करनेवाले, चतुर्दिग्विजयी, जनपदों में शान्ति एवं स्थिरता लाने वाले तथा सातों रत्नों के प्रापक बने। जिनके उस समय हजारों पुत्र हुए जो शूर वीर तथा शत्रुसेना के संहारक थे। वे (सुनेत्र) इस समस्त सागरपर्यन्त पृथ्वी को विना किसी दण्ड एवं शस्त्र की सहायता से जीतकर शासन करते रहे। इस प्रकार भिक्षुओ! वे सुनेत्र शास्ता इतने दीर्घायु एवं ऐसे चिरस्थायी होकर भी जाति, जरा, मरण, शोक, परिदेव, दुःख, दौर्मनस्य तथा पश्चात्ताप से सर्वथा मुक्त न हो सके—ऐसा मेरा मानना है।

१३. "इसमें क्या कारण है? चार धर्मों का अनुबोध (समस्त ज्ञान) तथा प्रतिवेध (ज्ञान के अन्तस्तल तक प्रवेश) न होने के कारण। कौन से चार धर्मों का? (१) आर्य शील का अनुवेध-प्रतिवेध उनको नहीं हुआ था, (२) आर्य समाधि का..., (३) आर्य प्रज्ञा का..., (४) आर्य विमुक्ति

अप्पटिवेधा। तयिदं, भिक्खवे, अरियं सीलं अनुबुद्धं पटिविद्धं, अरियो समाधि अनुबोधा पटिविद्धो अरिया पञ्ञा अनुबोधा पटिविद्धा, अरिया विमुत्ति अनुबोधा पटिविद्धा, उच्छिन्ना भवतण्हा, खीणा भवनेत्ति, नत्थि दानि पुनब्भवो'' ति।

१४. इदमवोच भगवा। इदं वत्वान सुगतो अथापरं एतदवोच सत्था— [R.106]

''सीलं समाधि पञ्ञा च, विमुत्ति च अनुत्तरा।
अनुबुद्धा इमे धम्मा, गोतमेन यसस्सिना॥
''इति बुद्धो अभिञ्ञाय, धम्ममक्खासि भिक्खुनं।
दुक्खस्सन्तकरो सत्था, चक्खुमा परिनिब्बुतो'' ति॥ ●

**३. नगरोपमसुत्तं** : १. ''यतो खो, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमं नगरं [B.478] सत्तहि नगरपरिक्खारेहि सुपरिक्खतं होति, चतुन्नं च आहारानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी। इदं वुच्चति, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमं नगरं अकरणीयं बाहिरेहि पच्चत्थिकेहि पच्चामित्तेहि।

२. ''कतमेहि सत्तहि नगरपरिक्खारेहि सुपरिक्खतं होति? इध, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे एसिका होति गम्भीरनेमा सुनिखाता अचला असम्पवेधी। इमिना पठमेन नगरपरिक्खारेन सुपरिक्खतं होति रञ्ञो पच्चन्तिमं नगरं अब्भन्तरानं गुत्तिया बाहिरानं पटिघाताय।

---

का अनुवेध-प्रतिवेध नहीं हुआ था। भिक्षुओ! आज (मेरा) वह आर्यशील, आर्यसमाधि, आर्यप्रज्ञा एवं आर्यविमुक्ति सर्वथा अनुविद्ध एवं प्रतिविद्ध हो चुकी है। इस अनुवेध एवं प्रतिवेध के कारण मेरी भवतृष्णा नष्ट हो चुकी है, भवनेत्री (बन्धन-रज्जु) टूट चुकी है, अब यहाँ मेरा पुनर्जन्म नहीं होगा।''

भगवान् ने यह कहा। ऐसा कहकर सुगत ने (गाथाओं के माध्यम से) यह भी कहा—

''शील, समाधि, प्रज्ञा एवं श्रेष्ठ विमुक्ति—ये चार धर्म यशस्वी गौतम ने पूर्णतः ज्ञात कर लिये हैं॥

''इस प्रकार तथागत बुद्ध ने स्वयं जानकर, साक्षात्कार कर शिष्यों को इनका उपदेश किया। जो उपदेश सर्व दुःखों के नाशक हैं। तदनन्तर ही वे ज्ञानी बुद्ध परिनिर्वृत हुए॥'' ●

**३. नगरोपमसूत्र : : सात धर्म एवं चार ध्यान**

१. ''भिक्षुओ! किसी राजा का कोई सीमान्त नगर सात प्रकार के नगर-परिष्कारों (सुरक्षाओं) से सुरक्षित रहता है, जहाँ चतुर्विध आहार सर्वथा सुलभ होते हैं; भिक्षुओ! राजा का वह सीमान्त नगर किसी बलवान् से बलवान् शत्रु द्वारा भी किन्हीं बाह्य उपकरणों से नहीं जीता जा सकता।

२. ''किन सात सुरक्षाओं से राजा का वह सीमान्त नगर सुपरिष्कृत होता है? यहाँ, भिक्षुओ! राजा के उस सीमान्त नगर की एषिकाएँ (दृढ़ स्तम्भ) गहरी नींव वाली, अधिक नीचे तक गड़ी हुई, अचल (न हिलायी जा सकने योग्य) तथा अकम्प्य हों। इस प्रथम नगरपरिष्कार से वह नगर

३. ''पुन च परं, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे परिखा होति गम्भीरा चेव [N.235] वित्थता च। इमिना दुतियेन नगरपरिक्खारेन सुपरिक्खतं होति रञ्ञो पच्चन्तिमं नगरं अब्भन्तरानं गुत्तिया बाहिरानं पटिघाताय।

४. ''पुन च परं, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे अनुपरियायपथो होति उच्चो [R.107] चेव वित्थतो च। इमिना ततियेन नगरपरिक्खारेन सुपरिक्खतं होति रञ्ञो पच्चन्तिमं नगरं अब्भन्तरानं गुत्तिया बाहिरानं पटिघाताय।

५. ''पुन च परं, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे बहुं आवुधं सन्निचितं होति सलाकं चेव जेवनिकं च। इमिना चतुत्थेन नगरपरिक्खारेन सुपरिक्खतं होति रञ्ञो पच्चन्तिमं नगरं अब्भन्तरानं गुत्तिया बाहिरानं पटिघाताय।

६. ''पुन च परं, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे बहुबलकायो पटिवसति, सेय्यथीदं—हत्थारोहा अस्सारोहा रथिका धनुग्गहा चेलका चलका पिण्डदायका उग्गा राजपुत्ता पक्खन्दिनो महानागा सूरा चम्मयोधिनो दासकपुत्ता। इमिना पञ्चमेन नगरपरिक्खारेन सुपरिक्खतं होति रञ्ञो पच्चन्तिमं नगरं अब्भन्तरानं गुत्तिया बाहिरानं पटिघाताय।

७. ''पुन च परं, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे दोवारिको होति पण्डितो ब्यत्तो [B.479] मेधावी अञ्ञातानं निवारेता ञातानं पवेसेता। इमिना छट्ठेन नगरपरिक्खारेन सुपरिक्खतं होति रञ्ञो पच्चन्तिमं नगरं अब्भन्तरानं गुत्तिया बाहिरानं पटिघाताय।

८. ''पुन च परं, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे पाकारो होति उच्चो चेव वित्थतो

---

सुपरिष्कृत होता है। इससे उस नगर की आन्तरिक सुरक्षा बाह्य आक्रमणों के समय सुपरिष्कृत मानी जाती है। (१)

३. ''पुनः, भिक्षुओ! राजा के उस सीमान्त नगर के चारों ओर खुदी हुई खाइयाँ (परिखा) गहरी एवं चौड़ी होती हैं। अतः इस द्वितीय नगरपरिष्कार के कारण भी वह सीमान्त नगर सुपरिष्कृत होता है। (२)

४. ''पुनः, भिक्षुओ! उस सीमान्त नगर में जाने वाला गुप्त समानान्तर मार्ग भी ऊँचा एवं विस्तृत होता है। ...पूर्ववत्...। (३)

५. ''पुनः, भिक्षुओ! उस सीमान्त नगर में विशाल आयुध-भाण्डागार हो, जिसमें छोटे बड़े शस्त्रास्त्रों का आधिक्य हो। ...पूर्ववत्...। (४)

६. पुनः, भिक्षुओ! उस सीमान्त नगर में शूर वीर सेना का बाहुल्य हो, जिसमें हाथी, घुड़सवार, रथी, धनुर्धारी, तम्बू आदि तथा उनको ढोने वाले, रसोइया, प्रतापी क्षत्रिय सैनिक, लड़ाकू हाथी, ढाल-तलवारों से युद्ध करने वाले वेतनभोगी सैनिक हों। ...पूर्ववत्...। (५)

७. पुनः, भिक्षुओ! उस सीमान्त नगर का एक प्रधान द्वारपाल हो, जो बुद्धिमान्, चतुर, मेधावी, अपरिचितों को रोक देने वाला, तथा परिचितों को ही वहाँ प्रवेश देने वाला हो। ...पूर्ववत्...। (६)

च वासनलेपनसम्पन्नो च। इमिना सत्तमेन नगरपरिक्खारेन सुपरिक्खतं होति रञ्ञो पच्चन्तिमं नगरं अब्भन्तरानं गुत्तिया बाहिरानं पटिघाताय। इमेहि सत्तहि [R.108] नगरपरिक्खारेहि सुपरिक्खतं होति।

९. ''कतमेसं चतुन्नं आहारानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी? इध, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे बहुं तिणकट्ठोदकं सन्निचितं होति अब्भन्तरानं [N.236] रतिया अपरितस्साय फासुविहाराय बाहिरानं पटिघाताय।

१०. ''पुन च परं, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे बहुं सालियवकं सन्निचितं होति अब्भन्तरानं रतिया अपरितस्साय फासुविहाय बाहिरानं पटिघाताय।

११. ''पुन च परं, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे बहुं तिलमुग्गमासापरण्णं सन्निचितं होति अब्भन्तरानं रतिया अपरितस्साय फासुविहाराय बाहिरानं पटिघाताय।

१२. ''पुन च परं, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे बहुं भेसज्जं सन्निचितं होति, सेय्यथीदं—सप्पि नवनीतं तेलं मधु फाणितं लोणं अब्भन्तरानं रतिया अपरितस्साय फासुविहाराय बाहिरानं पटिघाताय। इमेसं खो, भिक्खवे, चतुन्नं आहारानं निकामलाभी होति अकिच्छालाभी अकसिरलाभी।

१३. ''यतो खो, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमं नगरं इमेहि सत्तहि नगरपरिक्खारेहि सुपरिक्खतं होति, इमेसं च चतुन्नं आहारानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी

---

८. ''पुन:, भिक्षुओ! राजा के उस सीमान्त नगर के चारों ओर सुदृढ़ प्राकार (ऊँची, चौड़ी दीवार) हो, जो ऊँचा हो, विस्तृत से तथा उसमें किसी स्थान पर भी टूट-फूट न हो। इस सप्तम नगर परिष्कार से सुपरिष्कृत वह सीमान्त नगर बलवान् से बलवान् शत्रुसेना का छोटा या बड़ा आक्रमण सहने में समर्थ होता है। इन सात नगरपरिष्कारों से युक्त कोई भी आदर्श सीमान्त नगर सुपरिष्कृत माना जाता है। (७) (क)

९. ''कौन चार प्रकार के आहार उस सीमान्तनगर में निश्चयपूर्वक सुलभ होने चाहिये? यहाँ, भिक्षुओ! राजा के उस सीमान्त नगर में तृण, काष्ठ, एवं उदक का बाहुल्य होना चाहिये, जिससे उस नगर के वासी सैनिक उसमें सुख-सुविधापूर्वक रहते हुए बाह्य शत्रु के आक्रमण का उत्तर दे सकें। (१)

१०. ''पुन:, भिक्षुओ! राजा के उस सीमान्त नगर में शालि (चावल) एवं यव (जौ) का भी विशाल संग्रह होना चाहिये, जिससे ...पूर्ववत्...। (२)

११. ''पुन:, भिक्षुओ! राजा के उस सीमान्त नगर में तिल, मूँग, उड़द या छोटे अन्न का भी अतिशय संग्रह रहना चाहिये, जिससे ...पूर्ववत्...। (३)

१२. ''पुन:, भिक्षुओ! उस सीमान्त नगर में विविध ओषधियों का भी विपुल भण्डार होना चाहिये, जिससे वहाँ के निवासी उनका उपयोग कर स्वस्थ रहते हुए ...पूर्ववत्...। (४) (ख)

१३. जैसे, भिक्षुओ! राजा का वह सीमान्तनगर इन सात परिष्कारों तथा चतुर्विध आहारों से परिपूर्ण रहकर बाह्य शत्रु को आक्रमण का दृढ़ता तथा वीरतापूर्वक उत्तर देने में समर्थ होता है, उसी

अकसिरलाभी। इदं वुच्चति, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमं नगरं अकरणीयं बाहिरेहि [R.109] पच्चत्थिकेहि पच्चामित्तेहि। एवमेव खो, भिक्खवे, यतो अरियसावको सत्तहि [B.180] सद्धम्मेहि समन्नागतो होति, चतुन्नं च झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्म-सुखविहारानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी। अयं वुच्चति, भिक्खवे, अरियसावको अकरणीयो मारस्स अकरणीयो पापिमतो। कतमेहि सत्तहि सद्धम्मेहि समन्नागतो होति?

१४. "सेय्यथापि, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे एसिका होति गम्भीरनेमा सुनिखाता अचला असम्पवेधी अब्भन्तरानं गुत्तिया बाहिरानं पटिघाताय; एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावको सद्धो होति, सद्दहति तथागतस्स बोधिं 'इति पि सो ...पे०... बुद्धो भगवा' ति। सद्धेसिको, भिक्खवे, अरियसावको अकुसलं पजहति, कुसलं भावेति; सावज्जं पजहति, अनवज्जं भावेति; सुद्धं अत्तानं परिहरति। इमिना पठमेन सद्धम्मेन समन्नागतो होति।

[N.237] १५. "सेय्यथापि, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे परिक्खा होति गम्भीरा चेव वित्थता च अब्भन्तरानं गुत्तिया बाहिरानं पटिघाताय; एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावको हिरीमा होति, हिरीयति कायदुच्चरितेन वचीदुच्चरितेन मनोदुच्चरितेन, हिरीयति पापकानं अकुसलानं धम्मानं समापत्तिया। हिरीपरिखो खो, भिक्खवे, अरियसावको अकुसलं पजहति, कुसलं भावेति; सावज्जं पजहति, अनवज्जं भावेति; सुद्धं अत्तानं परिहरति। इमिना दुतियेन सद्धम्मेन समन्नागतो होति।

---

प्रकार, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक सात सद्धर्मों से युक्त तथा चार ध्यानों की सुविधापूर्वक साधना करने में समर्थ होता है। भिक्षुओ! इस आर्यश्रावक को पापी मार के आक्रमण का कोई भय नहीं होता।

"वह किन सात धर्मों से युक्त होता है?"

१४. जैसे, भिक्षुओ! राजा के उस सीमान्त नगर में सुपरिष्कृत बाह्य स्तम्भ (एषिका) बाह्य शत्रु के आक्रमण को रोकने में समर्थ हैं; उसी प्रकार, भिक्षुओ! यदि वह आर्यश्रावक तथागत के प्रति श्रद्धालु होता है तो ऐसा वह आर्यश्रावक अकुशल धर्मों का त्याग एवं कुशल धर्मों की भावना करने लगता है। तब सदोष धर्मों का त्याग एवं निर्दोष धर्मों की भावना करने लगता है, इस प्रकार वह इस प्रथम सद्धर्म से युक्त होकर अपने आपको क्रमशः शुद्ध करता चलता है। (१)

१५. "जैसे, भिक्षुओ! राजा के उस सीमान्त नगर में, बाह्य शत्रुओं से रक्षा के लिये, उसके चारों ओर गहरी और विस्तृत खाई होती है; वैसे ही, भिक्षुओ! वह आर्यश्रावक लज्जालु होता है अतः काय, वाक् एवं मन के दुराचारों के करने में लज्जा का अनुभव करता है। इस प्रकार वह आर्यश्रावक अपने चारों ओर लज्जारूप परिखा बनाकर अकुशल धर्मों का त्याग एवं कुशल धर्मों का ग्रहण करता है...। इस द्वितीय ...पूर्ववत्...। (२)

१६. "जैसे, भिक्षुओ! राजा के उस सीमान्त नगर में, बाह्य शत्रुओं से रक्षा के लिये... एक

१६. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे अनुपरियायपथो होति उच्चो चेव वित्थतो च अब्भन्तरानं गुत्तिया बाहिरानं पटिघाताय; एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावको ओत्तप्पी होति, ओत्तप्पति कायदुच्चरितेन वचीदुच्चरितेन मनोदुच्चरितेन, ओत्तप्पति पापकानं अकुसलानं धम्मानं समापत्तिया। ओत्तप्पपरियायपथो, भिक्खवे, भिक्खवे, अरियसावको अकुसलं पजहति, कुसलं भावेति; सावज्जं पजहति, [R.110] अनवज्जं भावेति; सुद्धं अत्तानं परिहरति। इमिना ततियेन सद्धम्मेन समन्नागतो होति।

१७. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे बहुं आवुधं सन्निचितं होति सलाकं चेव जेवनिकं च अब्भन्तरानं गुत्तिया बाहिरानं पटिघाताय; एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावको बहुस्सुतो होति ...पे०... दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा। सुतावुधो, भिक्खवे, अरियसावको अकुसलं पजहति, कुसलं भावेति; सावज्जं पजहति, अनवज्जं [B.481] भावेति; सुद्धं अत्तानं परिहरति। इमिना चतुत्थेन सद्धम्मेन समन्नागतो होति।

१८. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे बहुबलकायो पटिवसति, सेय्यथीदं—हत्थारोहा अस्सारोहा रथिका धनुग्गहा चेलका चलका पिण्डदायका उग्गा राजपुत्ता पक्खन्दिनो महानागा सूरा चम्मयोधिनो दासकपुत्ता अब्भन्तरानं गुत्तिया बाहिरानं पटिघाताय; एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावको आरद्धविरियो विहरति अकुसलानं धम्मानं पहानाय, कुसलानं धम्मानं उपसम्पदाय, थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु। विरियबलकायो, भिक्खवे, अरियसावको अकुसलं पजहति, कुसलं भावेति; सावज्जं पजहति, अनवज्जं भावेति; सुद्धं अत्तानं परिहरति। इमिना पञ्चमेन [N.238] सद्धम्मेन समन्नागतो होति।

---

गुप्त समानान्तर मार्ग बना लिया जाता है; उसी प्रकार, भिक्षुओ! आर्यश्रावक अवत्राप्य (पापभीरुता) युक्त होकर कायिक वाचिक एवं मानसिक धर्मों के आचरण से भय मानता है। इस तरह, भिक्षुओ! वह आर्यश्रावक अवत्राप्य रूप समानान्तर साधनामार्ग बना कर अकुशल धर्मों का त्याग एवं कुशल धर्मों का ग्रहण...। इस तृतीय सद्धर्म से ...पूर्ववत्...। (३)

१७. ''जैसे, भिक्षुओ! राजा के सीमान्त नगर में, बाह्य शत्रुओं से रक्षा के लिये... विशाल आयुध भण्डार रहता है, उसी प्रकार यह आर्यश्रावक बहुश्रुत होता है ...पूर्ववत्...। यह धर्मश्रावण का आयुध लेकर वह आर्यश्रावक अकुशल का त्याग एवं कुशल की भावना करता है।... । इस चतुर्थ सद्धर्म से ...पूर्ववत्...। (४)

१८. ''जैसे, भिक्षुओ! राजा के सीमान्त नगर में बहुत बड़ी सेना एकत्र रखी जाती है... बाह्य शत्रुओं से रक्षा के लिये; इसी प्रकार, भिक्षुओ! आर्यश्रावक साधना में विशेष प्रयास करने लगता है अकुशल धर्मों के प्रहाण एवं कुशल धर्मों की वृद्धि के लिये। इस तरह वह साधना में स्थिरता पाता है, उसमें दृढ़पराक्रम होता है तथा वहाँ निराश होकर कुशल धर्मों की साधना के मध्य में ही जूआ नहीं टेकता।... इस पञ्चम सद्धर्म से ...पूर्ववत्...। (५)

१९. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे दोवारिको होति पण्डितो ब्यत्तो मेधावी अञ्ञातानं निवारेता ञातानं पवेसेता अब्भन्तरानं गुत्तिया बाहिरानं [R.111] पटिघाताय; एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावको सतिमा होति परमेन सतिनेपक्केन समन्नागतो चिरकतं पि चिरभासितं पि सरिता अनुस्सरिता। सतिदोवारिको, भिक्खवे, अरियसावको अकुसलं पजहति, कुसलं भावेति; सावज्जं पजहति, अनवज्जं भावेति; सुद्धं अत्तानं परिहरति। इमिना छट्ठेन सद्धम्मेन समन्नागतो होति।

२०. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे पाकारो होति उच्चो चेव वित्थतो च वासनलेपनसम्पन्नो च अब्भन्तरानं गुत्तिया बाहिरानं पटिघाताय; एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावको पञ्ञवा होति उदयत्थगामिनिया पञ्ञाय समन्नागतो अरियाय निब्बेधिकाय सम्मा दुक्खक्खयगामिनिया। पञ्ञावासनलेपनसम्पन्नो, भिक्खवे, अरिय-सावको अकुसलं पजहति, कुसलं भावेति; सावज्जं पजहति, अनवज्जं भावेति; सुद्धं अत्तानं परिहरति। इमिना सत्तमेन सद्धम्मेन समन्नागतो होति। इमेहि सत्तहि सद्धम्मेहि समन्नागतो होति।

[B.482] २१. ''कतमेसं चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी? सेय्यथापि, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे बहुं तिणकट्ठोदकं सन्निचितं होति अब्भन्तरानं रतिया अपरितस्साय फासुविहाराय बाहिरानं पटिघाताय; एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावको विविच्चेव कामेहि ...पे०... पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति अत्तनो रतिया अपरितस्साय फासुविहाराय ओक्कमनाय निब्बानस्स।

---

१९. जैसे, भिक्षुओ! राजा के सीमान्तनगर में... बाह्य शत्रुओं से रक्षा हेतु कोई बुद्धिमान् द्वारपाल होता है ...पूर्ववत्...। इसी प्रकार, भिक्षुओ! वह आर्यश्रावक उच्चतम स्मृति की सूझबूझ से युक्त होकर चिरकृत एवं बहुत पहले की हुई एवं बहुत पहले कही हुई बात का भी स्मरण कर लेता है। यह आर्यश्रावक इस स्मृतिरूप द्वारपाल के सहारे से अकुशलों का त्याग एवं कुशलों का संग्रह करने लगता है...। इस षष्ठ सद्धर्म से ...पूर्ववत्...। (६)

२०. ''जैसे, भिक्षुओ! राजा के सीमान्त नगर में बड़ी ऊँची एवं चौड़ी दीवार होती है बाह्य शत्रुओं से रक्षा के लिये; उसी प्रकार, भिक्षुओ! आर्यश्रावक प्रज्ञावान् होता है, वह उसके सहारे से धर्मों के उन्माद एवं विनाश का ज्ञान करता है। तथा उस प्रज्ञा के सहारे से अकुशलों का त्याग एवं कुशलों का संग्रह करता है...। इस सप्तम सद्धर्म से ...पूर्ववत्...। (७) (क)

२१. ''इसी जन्म में सुखसाधना में सहायक किन चार ध्यानों का वह आर्यश्रावक अतिशय लाभी होता है? जैसे भिक्षुओ! राजा के सीमान्त नगर में बहुत से तृण (घास) काष्ठ एवं उदक का संग्रह होता है बाह्य शत्रुओं से रक्षा के लिये...; इसी प्रकार, भिक्षुओ! वह आर्यश्रावक कामभोगों से दूर रहता हुआ, अकुशल धर्मों को त्यागता हुआ ...पूर्ववत्... प्रथम ध्यान प्राप्त कर साधना करता है... निर्वाण प्राप्ति के लिये। (१)

२२. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे बहुं सालियवकं [R.112] सन्निचितं होति अब्भन्तरानं रतिया अपरितस्साय फासुविहाराय बाहिरानं पटिघाताय; एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावको वितक्कविचारानं वूपसमा ...पे०... दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरति अत्तनो रतिया अपरितस्साय फासुविहाराय ओक्कमनाय निब्बानस्स।

२३. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे बहुं तिल- [N.239] मुग्गमासापरण्णं सन्निचितं होति अब्भन्तरानं रतिया अपरितस्साय फासुविहाराय बाहिरानं पटिघाताय; एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावको पीतिया च विरागा ...पे०... ततियं झानं उपसम्पज्ज विहरति अत्तनो रतिया अपरितस्साय फासुविहाराय ओक्कमनाय निब्बानस्स।

२४. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, रञ्ञो पच्चन्तिमे नगरे बहुं भेसज्जं सन्निचितं होति, सेय्यथीदं—सप्पि नवनीतं तेलं मधु फाणितं लोणं अब्भन्तरानं रतिया अपरितस्साय फासुविहाराय बाहिरानं पटिघाताय; एवमेव खो, भिक्खवे, अरियसावको सुखस्स च पहाना दुक्खस्स च पहाना पुब्बेव सोमनस्सदोमनस्सानं अत्थङ्गमा अदुक्खमसुखं उपेक्खा-सतिपारिसुद्धिं चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति अत्तनो रतिया अपरितस्साय फासुविहाराय ओक्कमनाय निब्बानस्स। इमेसं चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी।

२५. ''यतो खो, भिक्खवे, अरियसावको इमेहि सत्तहि सद्धम्मेहि [R.113] समन्नागतो होति, इमेसं च चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकाम-लाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी। अयं वुच्चति, भिक्खवे, अरियसावको [B.483] अकरणीयो मारस्स अकरणीयो पापिमतो'' ति॥ ●

---

२२. जैसे, भिक्षुओ! राजा के सीमान्त नगर में... बाह्य शत्रुओं से रक्षाहेतु विशाल चावल एवं जौ का भण्डार सुरक्षित होता है...; इसी प्रकार, भिक्षुओ! वह आर्यश्रावक वितर्क एवं विचारों के शान्त हो जाने से ...पूर्ववत्... द्वितीय ध्यान... निर्वाण की प्राप्ति के लिये। (२)

२३. जैसे, भिक्षुओ! राजा के सीमान्त नगर में... बाह्य शत्रुओं से रक्षा के निमित्त कार्यसाधक तिल, मूँग, उड़द एवं मोटा अन्न अतिमात्रा में संगृहीत होता है; उसी प्रकार, भिक्षुओ! यह आर्यश्रावक प्रीति से भी वैराग्य होने से ...पूर्ववत्... तृतीय ध्यान को प्राप्त कर... निर्वाण तक पहुँचने के लिये। (३)

२४. जैसे, भिक्षुओ! राजा के सीमान्त नगर में... बाह्य शत्रुओं से रक्षा में सहायक बहुत सी ओषधियाँ एकत्र रखी जाती हैं; जैसे—घी, तैल, मधु, फाणित, नमक आदि; इसी प्रकार, भिक्षुओ! वह आर्यश्रावक सुख एवं दु:ख के प्रहाण से, सौमनस्य एवं दौर्मनस्य के नष्ट हो जाने से, अदु:ख-असुखमय उपेक्षायुक्त स्मृतिपरिशुद्धि रूप चतुर्थ ध्यान तक पहुँचकर साधना करता है... निर्वाण की अधिगति के लिये। (४) (ख)

२५. ''भिक्षुओ! जो आर्यश्रावक इन सातों सद्धर्मों से तथा इन आभ्यन्तर चारों ध्यानों से युक्त होता है, भिक्षुओ! यह उस पापी मार से कभी पराजित नहीं हो सकता॥'' ●

**४. धम्मञ्ञूसुत्तं :** १. ''सत्तहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमेहि सत्तहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु धम्मञ्ञू च होति अत्थञ्ञू च अत्तञ्ञू च मत्तञ्ञू च कालञ्ञू च परिसञ्ञू च पुग्गलपरोपरञ्ञू च।

२. ''कथं च, भिक्खवे, भिक्खु धम्मञ्ञू होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु धम्मं जानाति—सुत्तं गेय्यं वेय्याकरणं गाथं उदानं इतिवुत्तकं जातकं अब्भुतधम्मं वेदल्लं। नो चे, भिक्खवे, भिक्खु धम्मं जानेय्य—सुत्तं गेय्यं ...पे०... अब्भुतधम्मं वेदल्लं, नयिध 'धम्मञ्ञू' ति वुच्चेय्य। यस्मा च खो, भिक्खवे, भिक्खु धम्मं जानाति—सुत्तं गेय्यं ...पे०... अब्भुतधम्मं वेदल्लं, तस्मा 'धम्मञ्ञू' ति वुच्चति। इति धम्मञ्ञू।

[N.240] ३. ''अत्थञ्ञू च कथं होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु तस्स तस्सेव भासितस्स अत्थं जानाति—'अयं इमस्स भासितस्स अत्थो, अयं इमस्स भासितस्स अत्थो' ति। नो चे, भिक्खवे, भिक्खु तस्स तस्सेव भासितस्स अत्थं जानेय्य—'अयं इमस्स भासितस्स अत्थो, अयं इमस्स भासितस्स अत्थो' ति, नयिध 'अत्थञ्ञू' ति वुच्चेय्य। यस्मा च खो, भिक्खवे, [R.114] भिक्खु तस्स तस्सेव भासितस्स अत्थं जानाति—'अयं इमस्स भासितस्स अत्थो, अयं इमस्स भासितस्स अत्थो' ति, तस्मा 'अत्थञ्ञू' ति वुच्चति। इति धम्मञ्ञू अत्थञ्ञू।

४. ''अत्तञ्ञू च कथं होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु अत्तानं जानाति—'एत्तकोम्हि सद्धाय सीलेन सुतेन चागेन पञ्ञाय पटिभानेना' ति। नो चे, भिक्खवे, भिक्खु अत्तानं जानेय्य—'एत्तकोम्हि सद्धाय सीलेन सुतेन चागेन पञ्ञाय पटिभानेना' ति, नयिध 'अत्तञ्ञू'

---

**४. धर्मज्ञसूत्र : : सात धर्मों से युक्त भिक्षु भेंट देने योग्य**

१. ''भिक्षुओ! इन सात धर्मों से युक्त भिक्षु उपहारयोग्य ...पूर्ववत्... लोक के लिये अनुपम पुण्यक्षेत्र माना जाता है। किन सात धर्मों से? जो धर्मज्ञ हो, अर्थज्ञ हो, आत्मज्ञ हो, मात्राज्ञ हो, कालज्ञ हो, सभाकुशल हो, तथा पुद्गलविषयक परावरज्ञ (ऊँच, नीच को जानने वाला) हो।

२. कैसे, भिक्षुओ! कोई भिक्षु धर्मज्ञ होता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु धर्म को जानता है—सूत्र, गेय, व्याकरण, गाथा, उदान, इत्युक्तक, जातक, अद्भुत धर्म एवं वेदल्ल। जो भिक्षु सूत्र आदि धर्मों को नहीं जानता वह 'धर्मज्ञ' नहीं कहलाता। क्योंकि, भिक्षुओ! वह भिक्षु सूत्र, गेय आदि धर्मों को जानता है, अत: 'धर्मज्ञ' कहलाता है। **धर्मज्ञ** का व्याख्यान पूर्ण हुआ॥ (१)

३. ''और अर्थज्ञ कैसे होता है? यहाँ, भिक्षुओ! जो भिक्षु तथागत के उस उस भाषण का पृथक्श: अर्थ जानता है कि यह इस भाषण का अर्थ है तथा यह इस भाषण का अर्थ है। यदि वह इस प्रकार उस भाषण का पृथक्श: अर्थ नहीं जानता तो वह 'अर्थज्ञ' नहीं कहलाता। क्योंकि, भिक्षुओ! वह भिक्षु उस भाषण का पृथक् पृथक् अर्थ जानता है, अत: वह 'अर्थज्ञ' कहलाता है। इस प्रकार **धर्मज्ञ** एवं **अर्थज्ञ** का व्याख्यान पूर्ण हुआ॥ (२)

४.और वह 'आत्मज्ञ' कैसे कहलाता है? यहाँ, भिक्षुओ! जो साधक भिक्षु स्वयं के विषय में यह जानता है—मैं श्रद्धा, शील, श्रुत, त्याग, प्रज्ञा एवं प्रतिभान से इतना पूर्ण हूँ। जो भिक्षु अपने

ति वुच्चेय्य। यस्मा च, भिक्खवे, भिक्खु अत्तानं जानाति—'एत्तकोम्हि सद्धाय सीलेन सुतेन चागेन पञ्ञाय पटिभानेना' ति, तस्मा 'अत्तञ्ञू' ति वुच्चति। इति धम्मञ्ञू अत्थञ्ञू अत्तञ्ञू।

५. "मत्तञ्ञू च कथं होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु मत्तं जानाति [B.484] चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारानं पटिग्गहणाय। नो चे, भिक्खवे, भिक्खु मत्तं जानेय्य चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारानं पटिग्गहणाय, नयिध 'मत्तञ्ञू' ति वुच्चेय्य। यस्मा च खो, भिक्खवे, भिक्खु मत्तं जानाति चीवर-पिण्डपातसेनासनगिलाप्पच्चभेसज्जपरिक्खारानं पटिग्गहणाय, तस्मा 'मत्तञ्ञू' ति वुच्चति। इति धम्मञ्ञू अत्थञ्ञू अत्तञ्ञू मत्तञ्ञू।

६. "कालञ्ञू च कथं होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु, कालं जानाति—'अयं कालो उद्देसस्स, अयं कालो परिपुच्छाय, अयं कालो योगस्स, अयं कालो पटिसल्लानस्सा' ति। नो चे, भिक्खवे, भिक्खु कालं जानेय्य—'अयं कालो उद्देसस्स, अयं कालो परिपुच्छाय, अयं कालो योगस्स, अयं कालो पटिसल्लानस्सा' ति, नयिध 'कालञ्ञू' ति वुच्चेय्य। यस्मा च खो, भिक्खवे, भिक्खु कालं जानाति—'अयं कालो उद्देसस्स, अयं कालो परिपुच्छाय, अयं कालो योगस्स, अयं कालो पटिसल्लानस्सा' ति, तस्मा [N.241] 'कालञ्ञू' ति वुच्चति। इति धम्मञ्ञू अत्थञ्ञू अत्तञ्ञू मत्तञ्ञू कालञ्ञू।

७. "परिसञ्ञू च कथं होति? इध, भिक्खवे, भिक्खु परिसं जानाति—'अयं

---

श्रद्धा, शील आदि के विषय में कुछ भी नहीं जानता तो वह 'आत्मज्ञ' नहीं कहलाता। क्योंकि, भिक्षुओ! वह अपने शील, श्रद्धा, श्रुत, त्याग, प्रज्ञा एवं प्रतिभान की इयत्ता के विषय में जानता है अत: वह 'आत्मज्ञ' कहलाता है। इस प्रकार **धर्मज्ञ, अर्थज्ञ** एव **आत्मज्ञ** का व्याख्यान पूर्ण हुआ। (३)

५. "पुन: वह 'मात्राज्ञ' कैसे कहलाता है? यहाँ, भिक्षुओ! जो भिक्षु अपने लिये चीवर, पिण्डपात, शयनासन एवं रुग्ण होने पर पथ्य एवं औषध के ग्रहण की मात्रा का ज्ञान रखता है। जो भिक्षु अपने लिये इन उपर्युक्त चीवर आदि की मात्रा को नहीं जानता वह 'मात्राज्ञ' नहीं कहलाता। क्योंकि भिक्षुओ! वह अपने लिये इनके ग्रहण की मात्राओं को जानता है अत: वह 'मात्राज्ञ' कहलाता है॥" इस प्रकार **धर्मज्ञ, अर्थज्ञ, आत्मज्ञ** एवं **मात्रज्ञ** का व्याख्यान पूर्ण हुआ। (४)

६. "और वह 'कालज्ञ' कैसे कहलाता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु इन बातों का समय जानता है—कब धर्मपाठ करना है, कब गुरु या सब्रह्मचारियों से प्रश्न करना चाहिये, यह समय योग का है, यह समय एकान्तसाधना का है। परन्तु भिक्षुओ! जो भिक्षु इन सब बातों का समय जानता नहीं, वह 'कालज्ञ' नहीं कहलाता। क्योंकि वह इन उपर्युक्त बातों का समय नहीं जानता, अत: वह 'कालज्ञ' कहलाता है। यों **धर्मज्ञ, अर्थज्ञ, आत्मज्ञ, मात्राज्ञ** एवं **कालज्ञ** का वर्णन पूर्ण हुआ। (५)

७. " कोई सभाकुशल (परिषज्ज्ञ) कैसे कहलाता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु यह

खत्तियपरिसा, अयं ब्राह्मणपरिसा, अयं गहपतिपरिसा, अयं समणपरिसा। तत्थ एवं [R.115] उपसङ्कमितब्बं, एवं ठातब्बं, एवं कत्तब्बं, एवं निसीदितब्बं, एवं भासितब्बं, एवं तुण्हीभवितब्बं' ति। नो चे, भिक्खवे, भिक्खु परिसं जानेय्य—'अयं खत्तियपरिसा ...पे०... एवं तुण्हीभवितब्बं' ति, नयिध 'परिसञ्ञू' ति वुच्चेय्य। यस्मा च खो, भिक्खवे, भिक्खु परिसं जानाति—'अयं खत्तियपरिसा, अयं ब्राह्मणपरिसा, अयं गहपतिपरिसा, अयं समणपरिसा; तत्थ एवं उपसङ्कमितब्बं, एवं ठातब्बं, एवं कत्तब्बं, एवं निसीदितब्बं, एवं भासितब्बं, एवं तुण्ही भवितब्बं' ति, तस्मा 'परिसञ्ञू' ति वुच्चति। इति धम्मञ्ञू अत्थञ्ञू अत्तञ्ञू मत्तञ्ञू कालञ्ञू परिसञ्ञू।

८. ''पुग्गलपरोपरञ्ञू च कथं होति? इध, भिक्खवे, भिक्खुनो द्वयेन पुग्गला विदिता होन्ति। द्वे पुग्गला एको अरियानं दस्सनकामो, एको अरियानं न दस्सकामो। य्वायं [B.485] पुग्गलो अरियानं न दस्सनकामो, एवं सो तेनङ्गेन गारय्हो। य्वायं पुग्गलो अरियानं दस्सनकामो, एवं सो तेनङ्गेन पासंसो।

९. ''द्वे पुग्गला अरियानं दस्सनकामा, एको सद्धम्मं सोतुकामो, एको सद्धम्मं न सोतुकामो। य्वायं पुग्गलो सद्धम्मं न सोतुकामो, एवं सो तेनङ्गेन गारय्हो। य्वायं पुग्गलो सद्धम्मं सोतुकामो, एवं सो तेनङ्गेन पासंसो।

१०. ''द्वे पुग्गला सद्धम्मं सोतुकामा, एको ओहितसोतो धम्मं सुणाति, एको [R.116] अनोहितसोतो धम्मं सुणाति। य्वायं पुग्गलो अनोहितसोतो धम्मं सुणाति, एवं सो तेनङ्गेन गारय्हो। य्वायं पुग्गलो ओहितसोतो धम्मं सुणाति, एवं सो तेनङ्गेन पासंसो।

---

जानता है—'यह क्षत्रियपरिषद् है', 'यह ब्राह्मणपरिषद् है', 'यह गृहपतिपरिषद् है', या 'यह श्रमणपरिषद् है'। वहाँ ऐसे जाना चाहिये, ऐसे चुप रहना चाहिये। यदि, भिक्षुओ! वह भिक्षु नहीं जानता कि यह क्षत्रियपरिषद् है ...पूर्ववत्... ऐसे चुप रहना चाहिये तो वह 'परिषज्ज्ञ' नहीं कहलाता। क्योंकि, भिक्षुओ! वह भिक्षु जानता है कि यह क्षत्रियपरिषद् है ...पूर्ववत्... ऐसे चुप रहना चाहिये, अत: वह 'परिषज्ज्ञ' कहलाता है। यह **धर्मज्ञ, अर्थज्ञ, आत्मज्ञ, मात्राज्ञ, कालज्ञ** एवं **परिषज्ज्ञ** का वर्णन पूर्ण हुआ। (६)

८. ''पुद्गल के परावर ज्ञान के विषय में ज्ञाता कौन है? यहाँ, भिक्षुओ! किसी भी भिक्षु को दो तरह के पुद्गलों का ज्ञान होता है, एक वह जो आर्यों का सतत दर्शनाभिलाषी होता है, तथा दूसरा वह जो आर्यों का दर्शनाभिलाषी नहीं होता। यहाँ जो पुद्गल आर्यदर्शनाभिलाषी नहीं होता वह उस अङ्ग से लोक में निन्दनीय है। तथा जो आर्यदर्शनाभिलाषी है वह उस अङ्ग से प्रशंसनीय है।

९. आर्यों के दर्शनाभिलाषी भी दो पुद्गल होते हैं। एक सद्धर्म सुनने की इच्छा वाला, दूसरा सद्धर्म न सुनना चाहने वाला। उनमें जो पुद्गल सद्धर्म नहीं सुनना चाहता, वह उस अङ्ग से निन्दनीय है। और जो सद्धर्म सुनना चाहता है वह उस अङ्ग से प्रशंसनीय है।

१०. सद्धर्म सुनने की इच्छा वाले पुद्गल भी द्विविध होते हैं—एक सद्धर्म को ध्यानपूर्वक सुनने वाला, तथा दूसरा सद्धर्म को उपेक्षापूर्वक सुनने वाला। जो पुद्गल उपेक्षापूर्वक सद्धर्म को सुनने

११. "द्वे पुग्गला ओहितसोता धम्मं सुणन्ति, एको सुत्वा धम्मं धारेति, एको सुत्वा धम्मं न धारेति। य्वायं पुग्गलो सुत्वा न धम्मं धारेति, एवं सो तेनङ्गेन गारय्हो। य्वायं पुग्गलो सुत्वा धम्मं धारेति, एवं सो तेनङ्गेन पासंसो।

१२. "द्वे पुग्गला सुत्वा धम्मं धारेन्ति, एको धातानं धम्मानं अत्थं [N.242] उपपरिक्खति, एको धातानं धम्मानं अत्थं न उपपरिक्खति। य्वायं पुग्गलो धातानं धम्मानं अत्थं न उपपरिक्खति, एवं सो तेनङ्गेन गारय्हो। य्वायं पुग्गलो धातानं धम्मानं अत्थं उपपरिक्खति, एवं सो तेनङ्गेन पासंसो।

१३. "द्वे पुग्गला धातानं धम्मानं अत्थं उपपरिक्खन्ति, एको अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो, एको अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय न धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो। य्वायं पुग्गलो अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय न धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो, एवं सो तेनङ्गेन गारय्हो। य्वायं पुग्गलो अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो, एवं सो तेनङ्गेन पासंसो।

१४. "द्वे पुग्गला अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्ना, एको अत्तहिताय पटिपन्नो नो परहिताय, एको अत्तहिताय च पटिपन्नो परहिताय च। य्वायं

---

वाला है वह इस एक अङ्ग से निन्दनीय है। तथा जो पुद्गल सद्धर्म को ध्यानपूर्वक सुनता है वह इस एक अङ्ग से प्रशंसनीय है।

११. "सद्धर्म को ध्यानपूर्वक सुनने वालों के भी दो भेद हैं; एक—जो सद्धर्म को ध्यानपूर्वक सुनकर धारण करता है तथा दूसरा—जो ध्यानपूर्वक सुनकर भी उसको धारण नहीं करता। जो पुद्गल सुनकर भी धारण नहीं करता, वह इस एक अङ्ग से निन्दनीय है तथा जो सुनकर धारण कर लेता है वह इस एक अङ्ग से प्रशंसनीय है।

१२. इस सद्धर्म को धारण करनेवालों के भी दो भेद हैं; एक—जो धर्म को धारण करके भी उसके अर्थ पर विचार नहीं करते, तथा दूसरे—वे जो धर्म को धारण कर उसके अर्थ पर भी विचार करते हैं। धर्म को धारण कर उसके अर्थ पर विचार न करने वाला—इस एक अङ्ग से निन्दनीय है तथा धर्म को धारण कर उसके अर्थ पर भी विचार करने वाला—इस एक अङ्ग से प्रशंसनीय है।

१३. इस धर्म को धारण कर इसके अर्थ पर विचार करने वालों के भी दो भेद हैं। एक—वह जो उस धर्म को धारण कर उसका अर्थ जानकर उसके अनुसार आचरण करता है, तथा दूसरा—वह जो धर्म को एवं उसके अर्थ को जानकर भी उसके अनुसार आचरण नहीं करता। इनमें धर्म तथा उसका अर्थ जानकर भी उस पर आचरण न करने वाला—इस एक अङ्ग से निन्दनीय है। तथा धर्म एवं उसका अर्थ जानकर उस पर आचरण करने वाला—इस एक अङ्ग से प्रशंसनीय है।

१४. (अब) "इस धर्म को धारण कर इसका अर्थ जानकर इस पर आचरण करने वालों के भी दो भेद हैं। एक—जो इस धर्म को धारण कर इसका अर्थ जानकर इस पर आचरण करता हुआ भी आत्महित में ही सब कुछ करता है, परहित में कुछ नहीं करता। और दूसरा—वह जो इस ...पूर्ववत्... आचरण करता हुआ अपने लिये तथा पर के लिये भी सब कुछ करता है। इनमें जो

[B.486] पुग्गलो अत्तहिताय पटिपन्नो नो परहिताय, एवं सो तेनङ्गेन गारय्हो। य्वायं पुग्गलो अत्तहिताय च पटिपन्नो परहिताय च, एवं सो तेनङ्गेन पासंसो। एवं खो, भिक्खवे, भिक्खुनो द्वयेन पुग्गला विदिता होन्ति। एवं, भिक्खवे, भिक्खु पुग्गलपरोपरञ्ञू होति।

[R.117] १५. ''इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति पाहुनेय्यो ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा'' ति॥ ●

**५. पारिछत्तकसुत्तं :** १. ''यस्मिं, भिक्खवे, समये देवानं तावतिंसानं पारिछत्तको कोविळारो पण्डुपलासो होति, अत्तमना, भिक्खवे, देवा तावतिंसा तस्मिं समये होन्ति— 'पण्डुपलासो दानि पारिछत्तको कोविळारो नचिरस्सेव दानि पन्नपलासो भविस्सती' ति।

२. ''यस्मिं, भिक्खवे, समये देवानं तावतिंसानं पारिछत्तको कोविळारो पन्नपलासो [N.243] होति, अत्तमना, भिक्खवे, देवा तावतिंसा तस्मिं समये होन्ति—'पन्नपलासो दानि पारिछत्तको कोविळारो नचिरस्सेव दानि जालकजातो भविस्सती' ति।

३. ''यस्मिं, भिक्खवे, समये देवानं तावतिंसानं पारिछत्तको कोविळारो जालकजातो होति, अत्तमना, भिक्खवे, देवा तावतिंसा तस्मिं समये होन्ति—'जालकजातो दानि पारिछत्तको कोविळारो नचिरस्सेव दानि खारकजातो भविस्सती' ति।

४. ''यस्मिं, भिक्खवे, समये देवानं तावतिंसानं पारिछत्तको कोविळारो खारकजातो होति, अत्तमना, भिक्खवे, देवा तावतिंसा तस्मिं समये होन्ति—'खारकजातो दानि पारिछत्तको कोविळारो नचिरस्सेव दानि कुटुमलकजातो भविस्सती' ति।

---

आत्महित में ही सब कुछ करता है—वह इस एक अङ्ग से निन्दनीय है तथा जो आत्महित तथा परहित दोनों में लगा रहता है—वह इस एक अङ्ग से प्रशंसार्ह है।

इस प्रकार, भिक्षुओ! ये सभी पुद्गल दो दो के भेद से जाने जाते हैं। यों, भिक्षुओ! कोई पुद्गल पुद्गलों के ज्ञान के विषय में ज्ञाता होता है। (७)

१५. ''भिक्षुओ! इन सात धर्मों से युक्त भिक्षु उपहारयोग्य होता है... लोक के लिये अनुपम पुण्यक्षेत्र है॥'' ●

**५. पारिजातकसूत्र** : :

१. ''भिक्षुओ! जिस समय त्रायस्त्रिंश देवों का पारिजातक कोविदार वृक्ष पीले पत्तों वाला हो जाता है, भिक्षुओ! तब वे देवता अतिशय प्रमुदित होते हैं—'अब इस पारिजात कोविदार के पत्ते पीले पड़ गये हैं, शीघ्र ही इसके ये सब पत्ते झड़ जायेंगे।'

२. ''जिस समय भिक्षुओ! उस पारिजातक कोविदार के पत्ते झड़ जाते हैं तब वे त्रायस्त्रिंश देव प्रसन्न हो जाते हैं और सोचते हैं कि शीघ्र ही इस कोविदार पारिजात में जालक (छोटे कोंपल) फूट आयेंगे।''

३. ''जिस समय, भिक्षुओ! उस पारिजात में छोटे कोंपल (पत्तों के अंकुर) फूट आते हैं तब वे देवता प्रसन्न होते हैं कि इसमें कोंपल फूट आये हैं अब यह निश्चित ही बड़े बड़े पत्तों वाला हो जायगा।

५. ''यस्मिं, भिक्खवे, समये देवानं तावतिंसानं पारिछत्तको कोविळारो कुटुमलकजातो होति, अत्तमना, भिक्खवे, देवा तावतिंसा तस्मिं समये होन्ति—[B.487] 'कुटुमलकजातो दानि पारिछत्तको कोविळारो नचिरस्सेव दानि कोरकजातो भविस्सती' ति।

६. ''यस्मिं, भिक्खवे, समये देवानं तावतिंसानं पारिछत्तको कोविळारो [R.118] कोरकजातो होति, अत्तमना, भिक्खवे, देवा तावतिंसा तस्मिं समये होन्ति—'कोरकजातो दानि पारिछत्तको कोविळारो नचिरस्सेव दानि सब्बफालिपुल्लो भविस्सती' ति।

७. ''यस्मिं, भिक्खवे, समये देवानं तावतिंसानं पारिछत्तको कोविळारो सब्बफालिफुल्लो होति, अत्तमना, भिक्खवे, देवा तावतिंसा पारिछत्तकस्स कोविळारस्स मूले दिब्बे चत्तारो मासे पञ्चहि कामगुणेहि समप्पिता समङ्गीभूता परिचारेन्ति।

८. ''सब्बफालिफुल्लस्स खो पन, भिक्खवे, पारिछत्तकस्स कोविळारस्स समन्ता पञ्ञासयोजनानि आभाय फुटं होति, अनुवातं योजनसतं गन्धो गच्छति, अयमानुभावो पारिछत्तकस्स कोविळारस्स॥

९. ''एवमेव खो, भिक्खवे, यस्मिं समये अरियसावको अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जाय चेतेति, पण्डुपलासो, भिक्खवे, भिक्खवे, अरियसावको तस्मिं समये होति देवानं व तावतिंसानं पारिछत्तको कोविळारो।

१०. ''यस्मिं, भिक्खवे, समये अरियसावको केसमस्सुं ओहारेत्वा कासायानि वत्थानि अच्छादेत्वा अगारस्मा अनगारियं पब्बजितो होति, पन्नपलासो, भिक्खवे, [N.244] अरियसावको तस्मिं समये होति देवानं व तावतिंसानं पारिछत्तको कोविळारो।

---

४. ''जब, भिक्षुओ! उस पारिजात में बड़े बड़े पत्ते निकल आते हैं तब वे देवता प्रसन्न होकर सोचते हैं कि अब इसमें कुड्मल (पुष्पाङ्कुर) शीघ्र ही निकलेंगे।

५. ''जब, भिक्षुओ! उस पारिजातक में कुड्मल निकलते हैं तब वे देवता प्रसन्न होकर सोचते हैं कि अब इसमें बड़े फूल खिलेंगे।

६. ''जब, भिक्षुओ! उस पारिजातक में बड़े बड़े फूल खिल आते हैं तो वे देवता प्रसन्न होते हुए सोचते हैं कि अब यह वृक्ष सब तरह से फला फूला दिखायी देगा।

७. जब, भिक्षुओ! वह पारिजातक सब तरफ से फलफूल जाता है तब प्रसन्न हुए वे त्रायस्त्रिंश देव चार मास तक उस फले फूले वृक्ष के नीचे पञ्चविध कामभोगों का उपभोग करते हैं।

८. उस सब तरफ से फले फूले पारिजातक वृक्ष की आभा (प्रकाश) सब ओर पचास योजन तक पहुँचती है तथा चारों ओर उसकी गन्ध भी हवा के अनुकूल सौ योजन तक फैल जाती है। उस पारिजातक कोविदार वृक्ष का यह विशेष गुण है। (क)

९. ''इसी प्रकार, भिक्षुओ! यह आर्यश्रावक भी घर से अभिनिष्क्रमण कर प्रव्रज्या का सङ्कल्प करता है। उस समय वही स्थिति होती है मानो पारिजातक देववृक्ष के पत्ते पीले हो गये हों। (१)

१०. ''जिस समय, भिक्षुओ! आर्यश्रावक दाढ़ी मूँछ कटाकर, काषाय वस्त्र पहन कर, घर से

११. ''यस्मिं, भिक्खवे, समये अरियसावको विविच्चेव कामेहि ...पे०... पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरति, जालकजातो भिक्खवे, अरियसावको तस्मिं समये होति देवानं व तावतिंसानं पारिछत्तको कोविळारो।

[B.488] १२. ''यस्मिं, भिक्खवे, समये अरियसावको वितक्कविचारानं वूपसमा ...पे०... दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरति, खारकजातो, भिक्खवे, अरियसावको तस्मिं समये होति देवानं व तावतिंसानं पारिछत्तको कोविळारो।

[R.119] १३. ''यस्मिं, भिक्खवे, समये अरियसावको पीतिया च विरागा ...पे०... ततियं झानं उपसम्पज्ज विहरति, कुटुमलकजातो, भिक्खवे, अरियसावको तस्मिं समये होति देवानं व तावतिंसानं पारिछत्तको कोविळारो।

१४. ''यस्मिं, भिक्खवे, समये अरियसावको सुखस्स च पहाना दुक्खस्स च पहाना ...पे०... चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति, कोरकजातो, भिक्खवे, अरियसावको तस्मिं समये होति देवानं व तावतिंसानं पारिछत्तको कोविळारो।

१५. ''यस्मिं, भिक्खवे, समये अरियसावको आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति, सब्बफालिफुल्लो, भिक्खवे, अरियसावको तस्मिं समये होति देवानं व तावतिंसानं पारिछत्तको कोविळारो।

१६. ''तस्मिं, भिक्खवे, समये भुम्मा देवा सद्दमनुस्सावेन्ति—'एसो इत्थन्नामो

---

बेघर होकर प्रव्रजित होता है, तब लगता है, भिक्षुओ! मानो उस पारिजातक देववृक्ष के सभी पीले पत्ते गिर गये हों। (२)

११. ''जिस समय, भिक्षुओ! आर्यश्रावक कामभोगों से दूर रहकर... प्रथम ध्यान की साधना करने लगता है, तब ऐसा लगता है, भिक्षुओ! मानो पारिजातक वृक्ष में नये पत्राङ्कुर फूट रहे हों। (३)

१२. ''जब, भिक्षुओ! आर्यश्रावक वितर्क एवं विचारों के शान्त होने से ...पूर्ववत्... द्वितीय ध्यान की साधना करने लगता है; तब, भिक्षुओ! ऐसा लगता है मानो उस पारिजातक वृक्ष के वे पत्राङ्कुर बड़े बड़े पत्तों में परिवर्तित हो गये हों। (४)

१३. ''जब, भिक्षुओ! आर्यश्रावक प्रीति से भी वैराग्य होने के कारण ...पूर्ववत्... तृतीय ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है, तब भिक्षुओ! ऐसा लगता है मानो देवताओं के उस पारिजातक वृक्ष में नये पुष्पाङ्कुर आ गये हों। (५)

१४. ''जब, भिक्षुओ! आर्यश्रावक सुख एवं दुःख के प्रहाण से ...पूर्ववत्... चतुर्थ ध्यान को प्राप्त कर साधना करता है, उस समय, भिक्षुओ! ऐसा लगता है मानो त्रायस्त्रिंश देवों का वह पारिजातक वृक्ष फूलों से खिल उठा हो। (६)

१५. ''जब, भिक्षुओ! आर्यश्रावक आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति प्राप्त कर... साक्षात्कार साधना करता है तब भिक्षुओ! ऐसा लगता है मानो वह देववृक्ष सब तरफ से एक साथ खिल (फालिफुल्ल) उठा हो। (७)

आयस्मा इत्थन्नामस्स आयस्मतो सद्धिविहारिको अमुकम्हा गामा वा निगमा वा अगारस्मा अनगारियं पब्बजितो आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरती' ति। भुम्मानं देवानं सद्दं सुत्वा चातुमहाराजिका देवा ...पे०... तावतिंसा देवा... यामा देवा... तुसिता देवा... निम्मानरती देवा... परनिम्मित-वसवत्ती देवा... ब्रह्मकायिका देवा सद्दमनुस्सावेन्ति—'एसो इत्थन्नामो आयस्मा इत्थन्नामस्स आयस्मतो सद्धिविहारिको अमुकम्हा गामा वा निगमा वा अगारस्मा अनगारियं पब्बजितो आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरती' ति। इति ह तेन खणेन तेन मुहुत्तेन याव ब्रह्मलोका सद्दो [N.245] अब्भुग्गच्छति, अयमानुभावो खीणासवस्स भिक्खुनो" ति॥ [R.120]

**६. सक्कच्चसुत्तं** : १. अथ खो आयस्मतो सारिपुत्तस्स रहोगतस्स [B.489] पटिसल्लीनस्स एवं चेतसो परिवितक्को उदपादि—"किं नु खो भिक्खु सक्कत्वा गरुं कत्वा उपनिस्साय विहरन्तो अकुसलं पजहेय्य, कुसलं भावेय्या" ति? अथ खो आयस्मतो सारिपुत्तस्स एतदहोसि—"सत्थारं खो भिक्खु सक्कत्वा गरुं कत्वा उपनिस्साय विहरन्तो अकुसलं पजहेय्य, कुसलं भावेय्य। धम्मं खो भिक्खु ...पे०... अप्पमादं खो भिक्खु ...पे०... पटिसन्थारं खो भिक्खु सक्कत्वा गरुं कत्वा उपनिस्साय विहरन्तो अकुसलं पजहेय्य, कुसलं भावेय्या" ति।

२. अथ खो आयस्मतो सारिपुत्तस्स एतदहोसि—"इमे खो मे धम्मा परिसुद्धा

---

१६. "उस समय, भिक्षुओ! भौम देव उच्च स्वर में घोषणा करते हैं—"यह इस नाम वाले इस गोत्र वाले आयुष्मान् का सहविहारिक (भिक्षु) अमुक ग्राम से, अमुक निगम से घर से अभिनिष्क्रमण कर अनागारिक प्रव्रज्या को प्राप्त कर आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति एवं प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जीवनकाल में स्वयं जानकर, साक्षात् कर साधनारत है।" भौम देवों का यह उच्च घोष सुनकर चातुर्महाराजिक देव ...पूर्ववत्... त्रायस्त्रिंश देव... याम देव... तुषित देव... निर्माणरति देव... परनिर्मित वशवर्ती देव.... ब्रह्मकायिक देव इन शब्दों में उच्च घोष करते हैं—'यह इस नाम के, इस गोत्रके आयुष्मान् का सहविहारी ...पूर्ववत्... साक्षात् कर साधना कर रहा है'। इस प्रकार उस क्षण में, उस मुहूर्त में ब्रह्मलोक तक उस क्षीणाश्रव भिक्षु की प्रशंसा फैल जाती है। यही उस क्षीणाश्रव भिक्षु का प्रताप है॥" (ख)

**६. सत्कृत्यसूत्र : : सप्त सत्कार द्वारा कुशलधर्मसंग्रह**

१. तब कभी एकान्त में साधनारत आयुष्मान् सारिपुत्र के मन में यह विचार हुआ—"कोई भिक्षु किसका सत्कार एवं सम्मान कर, किसका आलम्बन कर साधना करता हुआ अकुशल धर्मों का त्याग करे एवं कुशल धर्मों का संग्रह करें?" तब आयुष्मान् सारिपुत्र के यह ध्यान में आया—"शास्ता का ही कोई भिक्षु सत्कार एवं सम्मान करता हुआ, उनका ही आलम्बन करता हुआ अकुशल धर्मों का त्याग करे एवं कुशल धर्मों का संग्रह करे। या फिर कोई भिक्षु धर्म का ...पूर्ववत्... सङ्घ का... शिक्षा का... समाधि का... अप्रमाद का... प्रतिसंस्तार (आवश्यक कर्तव्य)

परियोदाता, यन्नूनाहं इमे धम्मे गन्त्वा भगवतो आरोचेय्यं। एवं मे इमे धम्मा परिसुद्धा चेव भविस्सन्ति परिसुद्धसङ्खाततरा च। सेय्यथापि नाम पुरिसो सुवण्णनिक्खं अधिगच्छेय्य परिसुद्धं परियोदातं। तस्स एवमस्स—'अयं खो मे सुवण्णनिक्खो परिसुद्धो परियोदातो, यन्नूनाहं इमं सुवण्णनिक्खं गन्त्वा कम्मारानं दस्सेय्यं। एवं मे अयं सुवण्णनिक्खो सकम्मारगतो परिसुद्धो चेव भविस्सति परिसुद्धसङ्खाततरो च। एवमेव मे इमे धम्मा परिसुद्धा परियोदाता, यन्नूनाहं इमे धम्मे गन्त्वा भगवतो आरोचेय्यं। एवं मे इमे धम्मा परिसुद्धा चेव भविस्सन्ति परिसुद्धसङ्खाततरा चा' '' ति।

[R.121] ३. अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठितो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा सारिपुत्तो भगवन्तं एतदवोच—

''इध मय्हं, भन्ते, रहोगतस्स पटिसल्लीनस्स एवं चेतसो परिवितक्को उदपादि— [N.246] 'किं नु खो भिक्खु सक्कत्वा गरुं कत्वा उपनिस्साय विहरन्तो अकुसलं पजहेय्य, [B.490] कुसलं भावेय्या' ति? अथ खो तस्स मय्हं, भन्ते एतदहोसि—'सत्थारं खो भिक्खु सक्कत्वा गरुं कत्वा उपनिस्साय विहरन्तो अकुसलं पजहेय्य, कुसलं भावेय्य। धम्मं खो भिक्खु ...पे०... पटिसन्थारं खो भिक्खु सक्कत्वा ...पे०... कुसलं भावेय्या' ति। अथ खो तस्स मय्हं, भन्ते, एतदहोसि—'इमे खो मे धम्मा परिसुद्धा परियोदाता, यन्नूनाहं इमे धम्मे गन्त्वा भगवतो आरोचेय्यं। एवं मे इमे धम्मा परिसुद्धा चेव भविस्सन्ति परिसुद्धसङ्खाततरा च। सेय्यथापि नाम पुरिसो सुवण्णनिक्खं अधिगच्छेय्य परिसुद्धं परियोदातं। तस्स एवमस्स—अयं खो मे सुवण्णनिक्खो परिसुद्धो परियोदातो, यन्नूनाहं इमं सुवण्णनिक्खं

---

का सत्कार सम्मान करता हुआ उसका आलम्बन ग्रहण कर अकुशल धर्मों का त्याग करे एवं कुशल धर्मों का संग्रह करे।

२. तब पुनः आयुष्मान् सारिपुत्र के यह ध्यान में आया—''मेरे द्वारा आचरण किये जाते हुए ये धर्म स्वयं परिशुद्ध हैं, पर्यवदात हैं। तो क्यों न मैं भगवान् के सम्मुख जाकर इन धर्मों को उन्हें सुनाऊँ। इससे मेरे द्वारा गृहीत ये धर्म अपेक्षाकृत अधिक परिशुद्ध एवं पर्यवदात हो जायेंगे। जैसे कोई पुरुष अपने पास रखा हुआ शुद्ध सुवर्ण किसी सुनार के पास इस आशय से लेकर जाय—'यह मेरा शुद्ध सुवर्ण सुनार को दिखाने से और भी अधिक शुद्ध हो सकता है, यदि इसमें कोई कलङ्क होगा तो उसे भी वह निकाल देगा।' इसी प्रकार मैं भी भगवान् के सम्मुख जाकर अपने इन धर्मों को सुनाऊँ, जिससे मेरे ये धर्म पूर्वापेक्षया अधिक परिशुद्ध एवं पर्यवदात हो जायँगे।''

३. तब आयुष्मान् सारिपुत्र सायङ्काल एकान्त साधना से उठकर भगवान् के सम्मुख गये। जाकर उनको प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे आयुष्मान् सारिपुत्र ने भगवान् से यों निवेदन किया—

''यहाँ मुझे, भन्ते! आज एकान्तसाधना में बैठे हुए यह विचार हुआ—'कोई भिक्षु ...पूर्ववत्... जिससे मेरे ये धर्म पूर्वापेक्षया परिशुद्धतर हो जायँ।' ''

गन्त्वा कम्मारानं दस्सेय्यं। एवं मे अयं सुवण्णनिक्खो सकम्मारगतो परिसुद्धो चेव भविस्सति परिसुद्धसङ्खाततरो च। एवमेव मे इमे धम्मा परिसुद्धा परियोदाता, [R.122] यन्नूनाहं इमे धम्मे गन्त्वा भगवतो आरोचेय्यं। एवं मे इमे धम्मा परिसुद्धा चेव भविस्सन्ति परिसुद्धसङ्खाततरा चा' '' ति।

४. ''साधु साधु, सारिपुत्त! सत्थारं खो, सारिपुत्त, भिक्खु सक्कत्वा गरुं कत्वा उपनिस्साय विहरन्तो अकुसलं पजहेय्य, कुसलं भावेय्य। धम्मं खो, सारिपुत्त, भिक्खु सक्कत्वा गरुं कत्वा उपनिस्साय विहरन्तो अकुसलं पजहेय्य, कुसलं भावेय्य। सङ्घं खो ...पे०... सिक्खं खो... समाधिं खो... अप्पमादं खो... पटिसन्थारं खो, सारिपुत्त, भिक्खु सक्कत्वा गरुं कत्वा उपनिस्साय विहरन्तो अकुसलं पजहेय्य, कुसलं भावेय्या'' ति॥

५. एवं वुत्ते आयस्मा सारिपुत्तो भगवन्तं एतदवोच—''इमस्स खो अहं, भन्ते, भगवता सङ्खित्तेन भासितस्स एवं वित्थारेन अत्थं आजानामि। सो वत, भन्ते, भिक्खु सत्थरि अगारवो धम्मे सगारवो भविस्सती ति नेतं ठानं विज्जति। यो सो, भन्ते, भिक्खु सत्थरि अगारवो धम्मे पि सो अगारवो।

''सो वत, भन्ते, भिक्खु सत्थरि अगारवो धम्मे अगारवो सङ्घे सगारवो भविस्सती ति नेतं ठानं विज्जति। यो सो, भन्ते, भिक्खु सत्थरि अगारवो धम्मे अगारवो सङ्घे पि सो अगारवो।

''सो वत, भन्ते, भिक्खु सत्थरि अगारवो धम्मे अगारवो सङ्घे अगारवो सिक्खाय सगारवो भविस्सती ति नेतं ठानं विज्जति। यो सो, भन्ते, भिक्खु सत्थरि अगारवो [N.247] धम्मे अगारवो सङ्घे अगारवो सिक्खाय पि सो अगारवो।

---

४. ''सारिपुत्र! तुमने बहुत उचित कहा। सारिपुत्र! साधक भिक्षु शास्ता का... धर्म का... सङ्घ का... शिक्षा का... समाधि का... अप्रमाद का... प्रतिसंस्तार का सत्कार एवं सम्मान कर, उनका आश्रय लेकर साधना करता हुआ ही अकुशल धर्मों का प्रहाण एवं कुशल धर्मों का संग्रह कर सकता है।''

५. भगवान् द्वारा ऐसा उपदेश किये जाने पर, आयुष्मान् सारिपुत्र यह बोले—''भन्ते! मैं आपके द्वारा उपदिष्ट इस देशना का यह विस्तृत अर्थ समझा हूँ। वह भिक्षु शास्ता का सत्कार-सम्मान न करता हुआ धर्म का सत्कार-सम्मान करेगा—यह सम्भव नहीं है, क्योंकि जो शास्ता का सम्मान नहीं करता, वह उनके द्वारा उपदिष्ट धर्म का भी सम्मान नहीं करेगा। (१-२)

''इसी प्रकार, भन्ते! जो भिक्षु शास्ता एवं तदुपदिष्ट धर्म का सम्मान नहीं करता, वह (उनके द्वारा सञ्चालित) सङ्घ का सम्मान करेगा—यह सम्भव नहीं है; क्योंकि, भन्ते! जो शास्ता एवं उनके धर्म का सम्मान नहीं करता, वह उनके सङ्घ का भी सम्मान नहीं करेगा। (३)

''और, भन्ते! जो भिक्षु शास्ता, धर्म एवं सङ्घ का सम्मान नहीं करता वह उनके द्वारा प्रदत्त शिक्षा का सम्मान करेगा—यह भी सम्भव नहीं है; क्योंकि जो शास्ता, धर्म, सङ्घ का सम्मान नहीं करता, वह उनकी शिक्षा का भी सम्मान नहीं करेगा। (४)

[B.491] "सो वत, भन्ते, भिक्खु सत्थरि अगारवो धम्मे अगारवो सङ्घे अगारवो सिक्खाय अगारवो समाधिस्मिं सगारवो भविस्सती ति नेतं ठानं विज्जति। यो सो, भन्ते, भिक्खु सत्थरि अगारवो धम्मे अगारवो सङ्घे अगारवो सिक्खाय अगारवो समाधिस्मिं पि सो अगारवो।

"सो वत, भन्ते, भिक्खु सत्थरि अगारवो धम्मे अगारवो सङ्घे अगारवो सिक्खाय अगारवो समाधिस्मिं अगारवो अप्पमादे सगारवो भविस्सती ति नेतं ठानं विज्जति। यो सो, [R.123] भन्ते, भिक्खु सत्थरि अगारवो धम्मे अगारवो सङ्घे अगारवो सिक्खाय अगारवो समाधिस्मिं अगारवो अप्पमादे पि सो अगारवो।

"सो वत, भन्ते, भिक्खु सत्थरि अगारवो धम्मे अगारवो सङ्घे अगारवो सिक्खाय अगारवो समाधिस्मिं अगारवो अप्पमादे अगारवो पटिसन्थारे सगारवो भविस्सती ति नेतं ठानं विज्जति। यो सो, भन्ते, भिक्खु सत्थरि अगारवो ...पे०... अप्पमादे अगारवो पटिसन्थारे पि सो अगारवो।

६. "सो वत, भन्ते, भिक्खु सत्थरि सगारवो धम्मे अगारवो भविस्सती ति नेतं ठानं विज्जति। यो सो, भन्ते, भिक्खु सत्थरि सगारवो धम्मे पि सो सगारवो ...पे०... ।

"सो वत, भन्ते, भिक्खु सत्थरि सगारवो ...पे०... अप्पमादे सगारवो पटिसन्थारे अगारवो भविस्सती ति नेतं ठानं विज्जति। यो सो, भन्ते, भिक्खु सत्थरि सगारवो ...पे०... अप्पमादे सगारवो पटिसन्थारे पि सो सगारवो।

---

"इसी प्रकार, भन्ते! जो भिक्षु शास्ता, धर्म, सङ्घ एवं शिक्षा का सम्मान नहीं करता, वह उनसे उपदिष्ट समाधिसाधना का सम्मान करेगा—यह भी सम्भव नहीं है; क्योंकि जो शास्ता... शिक्षा का सम्मान नहीं करता, वह समाधि का भी सम्मान नहीं करेगा। (५)

"इसी प्रकार, भन्ते! जो भिक्षु शास्ता... समाधि का सम्मान नहीं करता वह अप्रमाद का सम्मान करेगा—यह सम्भव नहीं है; क्योंकि भन्ते! जो शास्ता... समाधि का सम्मान नहीं करता वह अप्रमाद का भी सम्मान करेगा—यह सम्भव नहीं है। (६)

"इसी प्रकार, भन्ते! जो भिक्षु शास्ता... धर्म... सङ्घ... शिक्षा... समाधि... अप्रमाद में गौरव तथा सम्मान नहीं रखता, वह प्रतिसंस्तार का सम्मान करेगा—यह सम्भव नहीं है; क्योंकि जो शास्ता ...पूर्ववत्... अप्रमाद का सम्मान नहीं करता, वह प्रतिसंस्तार का भी सम्मान नहीं करेगा। (७) (क)

६. (उसके विपरीत) "भन्ते! जो शास्ता का सम्मान करता है वह तदुपदिष्ट धर्म का सम्मान नहीं करेगा—यह सम्भव नहीं है; क्योंकि जो शास्ता का सम्मान करेगा वह उसके द्वारा उपदिष्ट धर्म का भी सम्मान करेगा ही।

"इसी प्रकार, भन्ते! जो शास्ता का, धर्म का... अप्रमाद का सम्मान करता है, वह प्रतिसंस्तार सम्मान न करे—यह सम्भव नहीं है; क्योंकि शास्ता एवं धर्म का सम्मान करेगा वह प्रतिसंस्तार का भी सम्मान करेगा ही।

७. "सो वत, भन्ते, भिक्खु सत्थरि सगारवो धम्मे पि सगारवो भविस्सती ति ठानमेतं विज्जति। यो सो, भन्ते, भिक्खु सत्थरि सगारवो धम्मे पि सो सगारवो ...पे०...।

"सो वत, भन्ते, भिक्खु सत्थरि सगारवो ...पे०... अप्पमादे सगारवो [R.124] पटिसन्थारे पि सगारवो भविस्सती ति ठानमेतं विज्जति। यो सो, भन्ते, भिक्खु सत्थरि सगारवो धम्मे सगारवो सङ्घे सगारवो सिक्खाय सगारवो समाधिस्मिं सगारवो अप्पमादे सगारवो पटिसन्थारे पि सो सगारवो ति।

८. "इमस्स खो अहं, भन्ते, भगवता सङ्खित्तेन भासितस्स एवं [N.248, R.492] वित्थारेन अत्थं आजानामी" ति॥

९. "साधु साधु, सारिपुत्त! साधु खो त्वं, सारिपुत्त, इमस्स मया सङ्खित्तेन भासितस्स एवं वित्थारेन अत्थं आजानासि। सो वत, सारिपुत्त, भिक्खु सत्थरि अगारवो धम्मे सगारवो भविस्सती ति नेतं ठानं विज्जति ...पे०... यो सो, सारिपुत्त, भिक्खु सत्थरि अगारवो धम्मे अगारवो सङ्घे अगारवो सिक्खाय अगारवो समाधिस्मिं अगारवो अप्पमादे पि सो अगारवो।

"सो वत, सारिपुत्त, भिक्खु सत्थरि अगारवो धम्मे अगारवो सङ्घे अगारवो सिक्खाय अगारवो समाधिस्मिं अगारवो अप्पमादे अगारवो पटिसन्थारे सगारवो भविस्सती ति नेतं ठानं विज्जति। यो सो, सारिपुत्त, भिक्खु सत्थरि अगारवो धम्मे अगारवो सङ्घे अगारवो सिक्खाय अगारवो समाधिस्मिं अगारवो अप्पमादे अगारवो पटिसन्थारे पि सो अगारवो।

१०. "सो वत, सारिपुत्त, भिक्खु सत्थरि सगारवो धम्मे अगारवो भविस्सती ति नेतं ठानं विज्जति ...पे०... यो सो, सारिपुत्त, भिक्खु सत्थरि सगारवो धम्मे पि सो [R.125] सगारवो ...पे०...।

---

७. "और, भन्ते! जो शास्ता का सम्मान करता है वह धर्म का भी सम्मान करेगा—यही सम्भव है; क्योंकि जो शास्ता का सम्मान करता है वह धर्म का भी सम्मान करेगा ही। (१) ...पूर्ववत्...।

और, भन्ते! जो भिक्षु शास्ता का सम्मान करेगा ...पूर्ववत्... वह प्रतिसंस्तार का भी सम्मान करेगा—यही सम्भव है; क्योंकि जो शास्ता, धर्म, सङ्घ, शिक्षा, समाधि एवं अप्रमाद का सम्मान करेगा, वह प्रतिसंस्तार का भी सम्मान करेगा ही। (७)

८. "भन्ते! आपके उस पूर्वकथन का मैं यही विस्तृत अर्थ समझा हूँ।"

९. "साधु! साधु सारिपुत्र! तुमने बहुत उचित कहा—तुम मेरे उस संक्षिप्त कथन का यह विस्तृत अर्थ उचित ही समझ रहे हो। सारिपुत्र जो भिक्षु शास्ता का गौरव या सम्मान नहीं करता ...पूर्ववत्...।

१०. ११. ...पूर्ववत्... प्रतिसंस्तार का गौरव एवं सम्मान करेगा ही।

''सो वत, सारिपुत्त, भिक्खु सत्थरि सगारवो धम्मे सगारवो ...पे०... अप्पमादे सगारवो पटिसन्थारे अगारवो भविस्सती ति नेतं ठानं विज्जति। यो सो, सारिपुत्त, भिक्खु सत्थरि सगारवो ...पे०... अप्पमादे सगारवो पटिसन्थारे पि सो सगारवो।

११. ''सो वत, सारिपुत्त, भिक्खु सत्थरि सगारवो धम्मे पि सगारवो भविस्सीती ति ठानमेतं विज्जति। यो सो, सारिपुत्त, भिक्खु सत्थरि सगारवो धम्मे पि सो सगारवो ...पे०...।

''सो वत, सारिपुत्त, भिक्खु सत्थरि सगारवो ...पे०... अप्पमादे सगारवो पटिसन्थारे पि सो सगारवो भविस्सीती ति ठानमेतं विज्जति। यो सो, सारिपुत्त, भिक्खु सत्थरि सगारवो ...पे०... अप्पमादे सगारवो पटिसन्थारे पि सो सगारवो ति।

[B.493] १२. ''इमस्स खो, सारिपुत्त, मया सङ्खित्तेन भासितस्स एवं वित्थारेन अत्थो दट्ठब्बो'' ति॥ ●

[N.249] **७. भावनासुत्तं** : १. ''भावनं अननुयुत्तस्स, भिक्खवे, भिक्खुनो विहरतो किञ्चा पि एवं इच्छा उप्पज्जेय्य—'अहो वत मे अनुपादाय आसवेहि चित्तं विमुच्चेय्या' ति, अथ ख्वास्स नेव अनुपादाय आसवेहि चित्तं विमुच्चति। तं किस्स हेतु? 'अभावितत्ता' तिस्स वचनीयं। किस्स अभावितत्ता? चतुन्नं सतिपट्ठानानं, चतुन्नं सम्मप्पधानानं, चतुन्नं इद्धिपादानं, पञ्चन्नं इन्द्रियानं, पञ्चन्नं बलानं, सत्तन्नं बोज्झङ्गानं, अरियस्स अट्ठङ्गिकस्स मग्गस्स।

२. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, कुक्कुटिया अण्डानि अट्ठ वा दस वा द्वादस वा। तानस्सु कुक्कुटिया न सम्मा अधिसयितानि, न सम्मा परिसेदितानि, न सम्मा परिभावितानि। [R.126] किञ्चा पि तस्सा कुक्कुटिया एवं इच्छा उप्पज्जेय्य—'अहो वत मे कुक्कुटपोतका पादनखसिखाय वा मुखतुण्डकेन वा अण्डकोसं पदालेत्वा सोत्थिना अभिनिब्भिज्जेय्युं' ति,

---

*(आयुष्मान् सारिपुत्र के कथन को ही पुनः दुहरा लें।)*

१२. ''सारिपुत्र! मेरे संक्षेप में कथित उपदेश का यही विस्तृत अर्थ समझो॥'' ●

**७. भावनासूत्र : : सात धर्मों की यथोचित भावना**

१. ''भिक्षुओ! अभ्यास न करने वाले किसी कृत्रिम साधक भिक्षु की भले ही यह इच्छा होती रहे—'मेरा चित्त आश्रवों से मुक्ति पा जाय'; परन्तु उसका चित्त आश्रवों से कथमपि विमुक्त नहीं होगा। इसमें क्या कारण है? इस प्रश्न का उत्तर 'उसने अभ्यास नहीं किया'—यही देना चाहिये। किसका अभ्यास नहीं किया? चार स्मृतिप्रस्थानों का, चार सम्यक्प्रधानों का, चार ऋद्धिपादों का, पाँच इन्द्रियों का, पाँच बलों का, सात बोध्यङ्गों का तथा आठ आर्यमार्गों का।

२. जैसे, भिक्षुओ! किसी मुर्गी ने आठ, दश, बारह अण्डे दिये हों। उस मुर्गी ने उन अण्डों को न ठीक से सेया हो, न ठीक से गर्मी पहुँचायी हो, न ठीक से उनको प्रभावित ही किया हो, फिर भी उसकी यह इच्छा हो—'ये मेरे बच्चे पैरों के नखों के अग्रभाग से या अपनी चोंच से अण्डों को फोड़कर सुखपूर्वक बाहर निकल आवें'; परन्तु यह सम्भव नहीं है कि वे बच्चे अपने पैरों के नखों

अथ खो अभब्बा व ते कुक्कुटपोतका पादनखसिखाय वा मुखतुण्डकेन वा अण्डकोसं पदालेत्वा सोत्थिना अभिनिब्भिज्जितुं। तं किस्स हेतु? तथा हि, भिक्खवे, कुक्कुटिया अण्डानि न सम्मा अधिसयितानि, न सम्मा परिसेदितानि, न सम्मा परिभावितानि। एवमेव खो, भिक्खवे, भावनं अननुयुत्तस्स भिक्खुनो विहरतो किञ्चा पि एवं इच्छा उप्पज्जेय्य—'अहो वत मे अनुपादाय आसवेहि चित्तं विमुच्चेय्या' ति, अथ ख्वास्स नेव अनुपादाय आसवेहि चित्तं विमुच्चति। तं किस्स हेतु? 'अभावितत्ता' तिस्स वचनीयं। किस्स अभावितत्ता? चतुन्नं सतिपट्ठानानं, चतुन्नं सम्मप्पधानानं, चतुन्नं इद्धिपादानं, पञ्चन्नं इन्द्रियानं, पञ्चन्नं बलानं, सत्तन्नं बोज्झङ्गानं, अरियस्स अट्ठङ्गिकस्स मग्गस्स।

३. "भावनं अनुयुत्तस्स, भिक्खवे, भिक्खुनो विहरतो किञ्चा पि न एवं इच्छा उप्पज्जेय्य—'अहो वत मे अनुपादाय आसवेहि चित्तं विमुच्चेय्या' ति, अथ ख्वास्स अनुपादाय आसवेहि चित्तं विमुच्चति। तं किस्स हेतु? 'भावितत्ता' तिस्स वचनीयं। किस्स भावितत्ता? चतुन्नं सतिपट्ठानानं, चतुन्नं सम्मप्पधानानं, चतुन्नं इद्धिपादानं, पञ्चन्नं इन्द्रियानं, पञ्चन्नं बलानं, सत्तन्नं बोज्झङ्गानं, अरियस्स अट्ठङ्गिकस्स मग्गस्स।

४. "सेय्यथापि, भिक्खवे, कुक्कुटिया अण्डानि अट्ठ वा दस वा [N.250,B.494] द्वादस वा। तानस्सु कुक्कुटिया सम्मा अधिसयितानि, सम्मा परिसेदितानि, सम्मा परिभावितानि। किञ्चा पि तस्सा कुक्कुटिया न एवं इच्छा उप्पज्जेय्य—'अहो वत मे कुक्कुटपोतका पादनखसिखाय वा मुखतुण्डकेन वा अण्डकोसं पदालेत्वा सोत्थिना अभिनिब्भिज्जेय्युं' ति, अथ खो भब्बा व ते कुक्कुटपोतका पादनखसिखाय वा मुखतुण्डकेन वा अण्डकोसं पदालेत्वा सोत्थिना अभिनिब्भिज्जितुं। तं किस्स हेतु? तथा हि, भिक्खवे, कुक्कुटिया अण्डानि सम्मा अधिसयितानि, सम्मा परिसेदितानि, सम्मा परिभावितानि।

---

के अग्रभाग से, या अपनी चोंच से अण्डों को फोड़कर सुखपूर्वक बाहर निकल आवें। वह क्यों? वह इसलिये कि उस मुर्गी ने उन अण्डों को विधिपूर्वक सेया नहीं है...। इसी प्रकार, भिक्षुओ! किसी अभ्यास न करने वाले कृत्रिम साधक भिक्षु को भले ही यह इच्छा होती रहे ...पूर्ववत्... तथा आठ आर्यमार्गों का। (क)

३. (परन्तु) "भिक्षुओ! भली प्रकार से अभ्यासकर्ता भिक्षु को भले ही यह इच्छा न भी उत्पन्न हो—'मेरा चित्त आश्रवों से विमुक्त हो जाय', तो भी उसका चित्त अभ्यास करते करते आश्रवों से विमुक्त हो ही जायगा। वह किसलिये? क्योंकि उसने भली भाँति अभ्यास किया है। किसका अभ्यास किया है? चार स्मृतिप्रस्थानों का ...पूर्ववत्... आठ आर्यमार्गों का।

४. "जैसे, भिक्षुओ! किसी मुर्गी ने आठ, दश या बारह अण्डे दिये हों। उस मुर्गी ने इन अण्डों को विधिपूर्वक सेया है, गर्मी पहुँचायी है, उनको प्रभावित किया है। तब भले ही उस मुर्गी की यह इच्छा न भी उत्पन्न हो—'मेरे बच्चे अपने पैरों के नखों के अग्रभाग से या अपनी चोंच से अण्डों को फोड़कर सुखपूर्वक बाहर निकल आवें', तो भी वे बच्चे समय आने पर सुखपूर्वक बाहर निकलने में समर्थ हैं। वह क्यों? वह इसलिये कि उस मुर्गी ने उनको यथाविधि सेया है...। इसी

[R.127] एवमेव खो, भिक्खवे, भावनं अननुयुत्तस्स भिक्खुनो विहरतो किञ्चा पि न एवं इच्छा उप्पज्जेय्य—'अहो वत मे अनुपादाय आसवेहि चित्तं विमुच्चेय्या' ति, अथ ख्वास्स अनुपादाय आसवेहि चित्तं विमुच्चति। तं किस्स हेतु? 'भावितत्ता' तिस्स वचनीयं। किस्स भावितत्ता? चतुन्नं सतिपट्ठानानं, ...पे०... अरियस्स अट्ठङ्गिकस्स मग्गस्स।

५. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, पलगण्डस्स वा पलगण्डन्तेवासिकस्स वा दिस्सन्ते व वासिजटे अङ्गुलिपदानि दिस्सति अङ्गुट्ठपदं। नो च ख्वास्स एवं ञाणं होति—'एत्तकं मे अज्ज वासिजटस्स खीणं, एत्तकं हिय्यो, एत्तकं परे' ति, अथ ख्वास्स खीणे 'खीणं' तेव ञाणं होति। एवमेव खो, भिक्खवे, भावनं अनुयुत्तस्स भिक्खुनो विहरतो किञ्चा पि न एवं ञाणं होति—'एत्तकं मे अज्ज आसवानं खीणं, एत्तकं हिय्यो, एत्तकं परे' ति, अथ ख्वास्स खीणे 'खीणं' तेव ञाणं होति।

६. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, सामुद्दिकाय नावाय वेत्तबन्धनबद्धाय छ मासानि उदके परियादाय हेमन्तिकेन थले उक्खित्ताय वातातपपरेतानि बन्धनानि, तानि पावुस्सकेन मेघेन अभिप्पवुट्ठानि अप्पकसिरेनेव परिहायन्ति, पूतिकानि भवन्ति। एवमेव खो, भिक्खवे, भावनं अनुयुत्तस्स भिक्खुनो विहरतो अप्पकसिरेनेव संयोजनानि पटिप्पस्सम्भन्ति, पूतिकानि भवन्ती ति॥ ●

[N.251,B.495,R.128] **८. अग्गिक्खन्धोपमसुत्तं** : १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा कोसलेसु चारिकं चरति महता भिक्खुसङ्घेन सद्धिं। अद्दसा खो भगवा अद्धानमग्गप्पटिपन्नो अञ्ञतरस्मिं पदेसे महन्तं अग्गिक्खन्धं आदित्तं सम्पज्जलितं सजोतिभूतं। दिस्वान मग्गा

---

प्रकार, भिक्षुओ! भली प्रकार से अभ्यासकर्ता भिक्षु को ...पूर्ववत्... चार स्मृतिप्रस्थानों का... आठ आर्यमार्गों का। (ख)

५. भिक्षुओ! जैसे कोई भवनशिल्पी या उसका कोई सहायक अपने हथौड़े की मूँठ पर अपनी अंगुलियों या अंगूठे का चिह्न देखता है। परन्तु उसको यह ज्ञान नहीं होता—'मेरा यह हथौड़ा आज इतना क्षीण हो गया, इतना कल क्षीण हुआ था, इतना परसों।' तो भी उसके क्षीण होने पर 'वह क्षीण हो गया'—इतना ही जानता है। इसी प्रकार, भिक्षुओ! अभ्यास में लगे भिक्षुकों को भी भले ही यह ज्ञान न हो कि आज मेरे आश्रव इतनी मात्रा में क्षीण हो गये, इतने कल या इतने परसों क्षीण हुए थे; परन्तु वह उनके क्षीण होने पर इतना तो जान ही जाता है कि मेरे आश्रव क्षीण हो गये।

६. ''जैसे, भिक्षुओ! वेंत की छाल की रस्सी से बंधी किसी समुद्री नौका को छह मास तक जल में रखकर पुनः उसको हेमन्त ऋतु में भूमि पर लाकर धूप एवं हवा में सुखावें, तदनन्तर वर्षाऋतु आने पर वे बन्धन जीर्ण शीर्ण हो जायँ, दुर्बल हो जायँ; इसी प्रकार, भिक्षुओ! भावना (साधनाभ्यास) में लगे हुए भिक्षु के संयोजन भी क्षीण हो जाते हैं, पुराने पड़ जाते हैं॥'' ●

**८. अग्निस्कन्धोपमसूत्र : : अग्निस्कन्धोपम सात धर्म**

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) भगवान् (बुद्ध) किसी समय कौसल देश में विशाल भिक्षुसङ्घ के साथ चारिका कर रहे थे। भगवान् ने मार्ग में चलते हुए किसी प्रदेश में एक विशाल अग्निपुञ्ज

ओक्कम्म अञ्ञतरस्मिं रुक्खमूले पञ्ञत्ते आसने निसीदि। निसज्ज खो भगवा भिक्खु आमन्तेसि—''पस्सथ नो तुम्हे, भिक्खवे, अमुं महन्तं अग्गिक्खन्धं आदित्तं सम्पज्जलितं सजोतिभूतं'' ति? ''एवं, भन्ते'' ति।

२. ''तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो वरं—यं अमुं महन्तं अग्गिक्खन्धं आदित्तं सम्पज्जलितं सजोतिभूतं आलिङ्गित्वा उपनिसीदेय्य वा उपनिपज्जेय्य वा, यं वा खत्तियकञ्ञं वा ब्राह्मणकञ्ञं वा गहपतिकञ्ञं वा मुदुतलुनहत्थपादं आलिङ्गित्वा उपनिसीदेय्य वा उपनिपज्जेय्य वा'' ति?

''एतदेव, भन्ते, वरं—यं खत्तियकञ्ञं वा ब्राह्मणकञ्ञं वा गहपतिकञ्ञं वा मुदुतलुनहत्थपादं आलिङ्गित्वा उपनिसीदेय्य वा उपनिपज्जेय्य वा, दुक्खं हेतं भन्ते, यं अमुं महन्तं अग्गिक्खन्धं आदित्तं सम्पज्जलितं सजोतिभूतं आलिङ्गित्वा उपनिसीदेय्य वा उपनिपज्जेय्य वा'' ति।

''आरोचयामि वो, भिक्खवे, पटिवेदयामि वो, भिक्खवे, यथा एतदेव तस्स वरं दुस्सीलस्स पापधम्मस्स असुचिसङ्कस्सरसमाचारस्स पटिच्छन्नकम्मन्तस्स अस्समणस्स समणपटिञ्ञस्स अब्रह्मचारिस्स ब्रह्मचारिपटिञ्ञस्स अन्तोपूतिकस्स अवस्सुतस्स कसम्बुजातस्स यं अमुं महन्तं अग्गिक्खन्धं आदित्तं सम्पज्जलितं सजोतिभूतं आलिङ्गित्वा उपनिसीदेय्य वा उपनिपज्जेय्य वा। तं किस्स हेतु? ततोनिदानं हि सो, भिक्खवे, मरणं वा

---

को जलते हुए देखा, जिसमें ऊँची ऊँची लपटें उठ रही थीं। उसे देखकर वे मार्ग से हटकर किसी वृक्ष के नीचे आसन बिछवा कर बैठ गये। बैठकर भगवान् ने भिक्षुओं से पूछा—''भिक्षुओ! क्या तुम इस जलते हुए अग्निपुञ्ज को देख रहे हो?''

''हाँ, भन्ते!''—भिक्षुओं ने कहा।

२. ''तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! इन दोनों में कौन अच्छा (हितकारी) है, क्या इस जलते हुए अग्निपुञ्ज को आलिङ्गन कर उसके साथ बैठ जाया जाय? या किसी क्षत्रियकन्या, ब्राह्मणकन्या या गृहपतिकन्या को, जिसके हाथ पैर मृदु हों,तरुण हो, आलिङ्गन कर उसके साथ बैठ जाया जाय या लेटा जाय?''

''भन्ते! इन दोनों में तो यही अच्छा है कि किसी क्षत्रियकन्या... गृहपतिकन्या का आलिङ्गन कर उसके साथ बैठे रहा जाय या लेट लिया जाय; क्योंकि इस अग्निस्कन्ध का आलिङ्गन कर उसके साथ बैठे रहना तो बहुत कष्टदायक प्रतीत होता है।''

''भिक्षुओ! मैं तुम्हें यही बताना चाहता हूँ, यही समझाना चाहता हूँ कि उस दुराचारी पापकर्मा, अपवित्र आचरण वाले, कहने को श्रमण-वेषधारी परन्तु आचरण से अश्रमण, वस्तुतः धर्मसाधना से दूर परन्तु धर्मसाधक का अभिनय करने वाले, हृदय के मलिन, कूड़े कचरे के समान भिक्षु के लिये यही अधिक अच्छा होगा कि वह इस प्रज्वलित अग्निस्कन्ध का आलिङ्गन कर, इसके साथ बैठकर जल मरे। वह किसलिये? वह इसलिये कि वह दुराचारी भिक्षु इस अग्निस्कन्ध के आलिङ्गन के कारण, भिक्षुओ! या तो मर जायगा या फिर मरणान्त कष्ट पायगा। ऐसा तो नहीं

[R.129] निगच्छेय्य मरणमत्तं वा दुक्खं, न त्वेव तप्पच्चया कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जेय्य।

"यं च खो सो, भिक्खवे, दुस्सीलो पापधम्मो असुचिसङ्कस्सरसमाचारो ...पे०... [N.252] कसम्बुजातो खत्तियकञ्ञं वा ब्राह्मणकञ्ञं वा गहपतिकञ्ञं वा मुदुतलुनहत्थपादं आलिङ्गेत्वा उपनिसीदति वा उपनिपज्जति वा, तं हि तस्स, भिक्खवे, होति दीघरत्तं अहिताय दुक्खाय कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उप्पज्जति।

[B.496] ३. "तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो वरं—यं बलवा पुरिसो दळ्हाय बालरज्जुया उभो जङ्घा वेठेत्वा घंसेय्य—सा छविं छिन्देय्य छविं छेत्वा चम्मं छिन्देय्य चम्मं छेत्वा मंसं छिन्देय्य मंसं छेत्वा न्हारुं छिन्देय्य न्हारुं छेत्वा अट्ठिं छिन्देय्य अट्ठिं छेत्वा अट्ठिमिञ्जं आहच्च तिट्ठेय्य, यं वा खत्तियमहासालानं वा ब्राह्मणमहासालानं वा गहपतिमहासालानं वा अभिवादनं सादियेय्या" ति?

"एतदेव, भन्ते, वरं—यं खत्तियमहासालानं वा ब्राह्मणमहासालानं वा गहपतिमहासालानं वा अभिवादनं सादियेय्य, दुक्खं हेतं, भन्ते, यं बलवा पुरिसो दळ्हाय वालरज्जुया ...पे०... अट्ठिमिञ्जं आहच्च तिट्ठेय्या" ति।

"आरोचयामि वो, भिक्खवे, पटिवेदयामि वो, भिक्खवे, यथा एतदेव तस्स वरं दुस्सीलस्स ...पे०... कसम्बुजातस्स यं बलवा पुरिसो दळ्हाय बालरज्जुया उभो जङ्घा

---

होगा कि वह उसके कारण, देहपात के बाद, मरणानन्तर अपायभूत एवं दुर्गतिमय नरक में जा गिरे, या नरकसमान किसी दुःखद योनि में उत्पन्न हो।

"भिक्षुओ! वह दुराचारी पापकर्मा, अपवित्र आचरण वाला ...पूर्ववत्... कूड़े कर्कट के समान भिक्षु जिस कोमल एवं तरुण हाथ पैरों वाली क्षत्रियकन्या, ब्राह्मणकन्या या गृहपतिकन्या का आलिङ्गन कर उसके साथ बैठता है या लेटता है वह कर्म उसके लिये चिरकाल तक अहितकर एवं दुःखद एवं मरणानन्तर उसके नरकपात का उत्तरदायी होता है। (१)

३. "तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! इन दोनों में कौन अच्छा है, क्या कोई बलवान् पुरुष किसी की दोनों जाँघों को बालों से बनी किसी दृढ़ रस्सी से घिसने लगे, उससे पहले उसकी ऊपरी चमड़ी छिल जाय, फिर आन्तरिक चर्म छिल जाय, फिर उससे मांस कटने लगे, मांस काटकर नसों को काट दे, नसों को काटकर अस्थियों को काटने लगे, अस्थि काटकर मज्जा को काटने लगे, उसे काटकर वह (रस्सी) रुक जाय, या किन्हीं क्षत्रिय धनपतियों का, ब्राह्मणधनपतियों का या गृहपतिधनपतियों का अभिवादन स्वीकार करे?"

"भन्ते! हमें तो यही उचित लगता है कि वह क्षत्रिय... गृहपतिधनपतियों का अभिवादन ही स्वीकार कर लें; क्योंकि किसी बलवान् पुरुष द्वारा किसी दृढ बाल-रज्जु से दोनों जाँघों का घर्षण तो बहुत कष्टप्रद होता है।"

"भिक्षुओ! मैं तुमको यही बताना चाहता हूँ, यही समझाना चाहता हूँ कि उस दुराचारी ...पूर्ववत्... भिक्षु के लिये यही अधिक अच्छा होगा कि वह उस बलवान् पुरुष द्वारा अपनी जाँघों

वेठेत्वा ...पे०... अट्ठिमिञ्जं आहच्च तिट्ठेय्य। तं किस्स हेतु? ततोनिदानं हि सो, भिक्खवे, [R.130] मरणं वा निगच्छेय्य मरणमत्तं वा दुक्खं, न त्वेव तप्पच्चया कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जेय्य। यं च खो सो, भिक्खवे, दुस्सीलो ...पे०... कसम्बुजातो खत्तियमहासालानं वा ब्राह्मणमहासालानं वा गहपतिमहासालानं वा अभिवादनं सादियति, तं हि तस्स, भिक्खवे, होति दीघरत्तं अहिताय दुक्खाय कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति।

४. "तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो वरं—यं बलवा पुरिसो तिण्हाय सत्तिया तेलधोताय पच्चोरस्मिं पहरेय्य, यं वा खत्तियमहासालानं वा ब्राह्मणमहासालानं वा गहपतिमहासालानं वा अञ्जलिकम्मं सादियेय्या" ति?

"एतदेव, भन्ते, वरं—यं खत्तियमहासालानं वा ब्राह्मणमहासालानं वा गहपति-महासालानं वा अञ्जलिकम्मं सादियेय्य, दुक्खं हेतं, भन्ते, यं बलवा पुरिसो तिण्हाय सत्तिया तेलधोताय पच्चोरस्मिं पहरेय्या" ति।

[N.253] "आरोचयामि वो, भिक्खवे, पटिवेदयामि वो, भिक्खवे, यथा एतदेव तस्स वरं दुस्सीलस्स ...पे०... कसम्बुजातस्स यं बलवा पुरिसो तिण्हाय सत्तिया तेलधोताय पच्चोरस्मिं पहरेय्य। तं किस्स हेतु? ततोनिदानं हि सो, भिक्खवे, मरणं वा निगच्छेय्य [B.497] मरणमत्तं वा दुक्खं, न त्वेव तप्पच्चया कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जेय्य। यं च खो सो, भिक्खवे, दुस्सीलो पापधम्मो ...पे०... कसम्बुजातो खत्तियमहासालानं वा ब्राह्मणमहासालानं वा गहपतिमहासालानं वा

---

का दृढ़ बाल-रज्जु से घर्षण कराना ही स्वीकार कर ले। वह क्यों? वह इसलिये कि उस कष्टप्रद घर्षण से उसकी मृत्यु हो जाय, या फिर उसको मरणान्तक कष्ट पहुँचे; वह कष्ट तो नहीं होगा जो उस भिक्षु को क्षत्रिय... गृहपति महाशालों का अभिवादन स्वीकार करने से होता है। उससे तो दीर्घकाल तक अहित, दुःख एवं मरणानन्तर उसका नरकपात भी सम्भव है। (२)

४. "तो, भिक्षुओ! क्या मानते हो, इन दोनों कष्टों में कौन सा कष्ट भोग लेना उचित है कि कोई बलवान् पुरुष तैल से भींगा हुआ भाला हमारी छाती में मारे या किन्हीं क्षत्रिय... गृहपति धनपतियों का अभिवादन स्वीकार करें?"

"भन्ते! हमें तो यही उचित लगता है कि वह क्षत्रिय... गृहपतिधनपतियों का अभिवादन स्वीकार कर ले; क्योंकि किसी बलवान् पुरुष द्वारा छाती में मारे गये तैलसिक्त भाले का प्रहार अतिशय कष्टदायी होता है।"

"भिक्षुओ! मैं तुमको यही बताना चाहता हूँ, यही समझाना चाहता हूँ कि उस दुराचारी... कूड़े कर्कट के समान हेय भिक्षु के लिये यही उचित होगा कि वह अपनी छाती में किसी बलवान् पुरुष द्वारा भाले से किया गया प्रहार सह ले; क्योंकि वह प्रहार केवल मृत्यु ही देगा या मृत्युतुल्य कष्ट; परन्तु उसके कारण मरणानन्तर वह कष्ट तो नहीं होगा जो उस... भिक्षु को क्षत्रिय... गृहपतिधनपतियों का अभिवादन स्वीकार करने से होता है, जो कि, भिक्षुओ! उसके लिये

अञ्जलिकम्मं सादियति, तं हि तस्स, भिक्खवे, होति दीघरत्तं अहिताय दुक्खाय कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति।

५. "तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो वरं—यं बलवा पुरिसो तत्तेन [R.131] अयोपट्टेन आदित्तेन सम्पज्जलितेन सजोतिभूतेन कायं सम्पलिवेठेय्य, यं वा खत्तियमहासालानं वा ब्राह्मणमहासालानं वा गहपतिमहासालानं वा सद्धादेय्यं चीवरं परिभुञ्जेय्या" ति?

"एतदेव, भन्ते, वरं—यं खत्तियमहासालानं वा ...पे०... सद्धादेय्यं चीवरं परिभुञ्जेय्य; दुक्खं हेतं, भन्ते, यं बलवा पुरिसो तत्तेन अयोपट्टेन आदित्तेन सम्पज्जलितेन सजोतिभूतेन कायं सम्पलिवेठेय्या" ति।

"आरोचयामि वो, भिक्खवे, पटिवेदयामि वो, भिक्खवे, यथा एतदेव तस्स वरं दुस्सीलस्स ...पे०... कसम्बुजातस्स यं बलवा पुरिसो तत्तेन अयोपट्टेन आदित्तेन सम्पज्जलितेन सजोतिभूतेन कायं सम्पलिवेठेय्य। तं किस्स हेतु? ततोनिदानं हि सो, भिक्खवे, मरणं वा निगच्छेय्य मरणमत्तं वा दुक्खं, न त्वेव तप्पच्चया कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जेय्य। यं च खो सो, भिक्खवे, दुस्सीलो ...पे०... कसम्बुजातो खत्तियमहासालानं वा ब्राह्मणमहासालानं वा गहपतिमहासालानं वा सद्धादेय्यं चीवरं परिभुञ्जति, तं हि तस्स, भिक्खवे, होति दीघरत्तं अहिताय दुक्खाय कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति।

६. "तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो वरं—यं बलवा पुरिसो तत्तेन

---

चिरकाल तक अहितकर एवं कष्टप्रद होता है तथा मरणानन्तर उसके लिये नरकपातकी भी सम्भावना बनाये रखता है। (३)

५. "तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! इन दोनों बातों में कौन सुविधाजनक है कि या तो कोई बलवान् पुरुष किसी उष्ण लौहपट्ट से उस भिक्षु के शरीर को स्थान स्थान पर स्पर्श कराये या फिर वह क्षत्रिय... गृहपति धनपतियों द्वारा श्रद्धाप्रदत्त चीवर आदि का उपभोग करे?"

"भन्ते! हम तो यही उचित समझते हैं वह क्षत्रिय... गृहपतिधनपतियों द्वारा श्रद्धाप्रदत्त चीवर आदि का ही उपभोग कर ले; क्योंकि उस तप्त लौहपट्ट का शरीर से स्पर्श कराना बहुत कष्टप्रद होता है।"

"भिक्षुओ! यहाँ मैं तुमको यही बताना चाहता हूँ, यही समझाना चाहता हूँ कि उस दुराचारी... कूड़े कर्कट के समान भिक्षु के लिये यही उचित होगा कि वह उस उष्ण लौहपट्ट से अपने शरीर का बार बार स्पर्श करा ले। वह क्यों? वह इसलिये कि वैसे स्पर्श से केवल मृत्यु होगी या मृत्युसमान कोई अन्य कष्ट; परन्तु इन क्षत्रिय... गृहपति धनपतियों द्वारा प्रदत्त चीवर तो उसके लिये दीर्घकाल तक अहितकर एवं कष्टप्रद होगा, यहाँ तक कि देहपात के बाद उसके नरकपात की भी सम्भावना बन जाती है। (४)

६. "तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! इन दो बातों में कौन सुविधाजनक है कि या तो कोई

अयोसङ्कुना मुखं विवरित्वा तत्तं लोहगुळं आदित्तं सम्पज्जलितं सजोतिभूतं मुखे पक्खिपेय्य—तं तस्स ओट्ठं पि दहेय्य मुखं पि दहेय्य जिव्हं पि दहेय्य कण्ठं पि [R.132] दहेय्य उरं पि दहेय्य अन्तं पि अन्तगुणं पि आदाय अधोभागा निक्खमेय्य, यं वा [N.254] खत्तियमहासालानं वा ब्राह्मणमहासालानं वा गहपतिमहासालानं वा सद्धादेय्यं [B.498] पिण्डपातं परिभुञ्जेय्या'' ति?

''एतदेव, भन्ते, वरं—यं खत्तियमहासालानं वा ब्राह्मणमहासालानं वा गहपतिमहासालानं वा सद्धादेय्यं पिण्डपातं परिभुञ्जेय्य, दुक्खं हेतं, भन्ते, यं बलवा पुरिसो तत्तेन अयोसङ्कुना मुखं विवरित्वा तत्तं लोहगुळं आदित्तं सम्पज्जलितं सजोतिभूतं मुखे पक्खिपेय्य—तं तस्स ओट्ठं पि दहेय्य मुखं पि दहेय्य जिव्हं पि दहेय्य उरं पि दहेय्य अन्तं पि अन्तगुणं पि आदाय अधोभागं निक्खमेय्या'' ति।

''आरोचयामि वो, भिक्खवे, पटिवेदयामि वो, भिक्खवे, यथा एतदेव तस्स वरं दुस्सीलस्स ...पे०... कसम्बुजातस्स यं बलवा पुरिसो तत्तेन अयोसङ्कुना मुखं विवरित्वा तत्तं लोहगुळं आदित्तं सम्पज्जलितं सजोतिभूतं मुखे पक्खिपेय्य—तं तस्स ओट्ठं पि दहेय्य मुखं पि दहेय्य जिव्हं पि दहेय्य कण्ठं पि दहेय्य उरं पि दहेय्य अन्तं पि अन्तगुणं पि आदाय अधोभागं निक्खमेय्य। तं किस्स हेतु? ततोनिदानं हि सो, भिक्खवे, मरणं वा निगच्छेय्य मरणमत्तं वा दुक्खं, न त्वेव तप्पच्चया कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जेय्य। यं च खो सो, भिक्खवे, दुस्सीलो पापधम्मो ...पे०... कसम्बुजातो खत्तियमहासालानं वा ब्राह्मणमहासालानं वा गहपतिमहासालानं वा सद्धादेय्यं पिण्डपातं परिभुञ्जति, तं हि तस्स होति दीघरत्तं अहिताय दुक्खाय कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति।

७. ''तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो वरं—यं बलवा पुरिसो सीसे वा

---

बलवान् पुरुष उसका मुख खोलकर तप्त लौह की संड़सी से उसके मुख में बलपूर्वक तप्त लोह का गोलक डाल दे, जिससे उसके ओष्ठ भी जल जाय, मुख भी जल जाय, जिह्वा भी जल उठे, कण्ठ और छाती, छोटी आँतों तथा बड़ी आँतों को जलाता हुआ वह अन्त में नीचे के (गुदा) मार्ग से निकल जाय या फिर किन्हीं क्षत्रिय... गृहपति धनपतियों द्वारा श्रद्धाप्रदत्त किसी पिण्डपात का आसेवन करे?''

''भन्ते! हम तो यही उचित समझते हैं कि वह क्षत्रिय... गृहपतिधनपतियों द्वारा श्रद्धाप्रदत्त पिण्डपात का ही आसेवन करे; क्योंकि किसी बलवान् पुरुष द्वारा सँड़सी से मुख खोल कर उस में बलपूर्वक तप्त लौहगोलक डालने से तो उसकी मृत्यु निश्चित है।''

''भिक्षुओ! यहाँ मैं तुमको बताना चाहता हूँ ...पूर्ववत्... नरकपात की भी सम्भावना बन जाती है। (५)

७. ''तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! कि इन दोनों बातों में कौन सुविधाजनक है—कोई

[R.133] गहेत्वा खन्धे वा गहेत्वा तत्तं अयोमञ्चं वा अयोपीठं वा अभिनिसीदापेय्य वा अभिनिपज्जापेय्य वा, यं वा खत्तियमहासालानं वा ब्राह्मणमहासालानं वा गहपति-महासालानं वा सद्धादेय्यं मञ्चपीठं परिभुञ्जेय्या'' ति?

''एतदेव, भन्ते, वरं—यं खत्तियमहासालानं वा ब्राह्मणमहासालानं वा गहपतिमहासालानं वा सद्धादेय्यं मञ्चपीठं परिभुञ्जेय्य; दुक्खं हेतं, भन्ते, यं बलवा पुरिसो सीसे वा गहेत्वा खन्धे वा गहेत्वा तत्तं अयोमञ्चं वा अयोपीठं वा अभिनिसीदापेय्य वा अभिनिपज्जापेय्य वा'' ति।

[N.255,B.499] ''आरोचयामि वो, भिक्खवे, पटिवेदयामि वो, भिक्खवे, यथा एतदेव तस्स वरं दुस्सीलस्स ...पे०... कसम्बुजातस्स यं बलवा पुरिसो सीसे वा गहेत्वा खन्धे वा गहेत्वा तत्तं अयोमञ्चं वा अयोपीठं वा अभिनिसीदापेय्य वा अभिनिपज्जापेय्य वा। तं किस्स हेतु? ततोनिदानं हि सो, भिक्खवे, मरणं वा निगच्छेय्य मरणमत्तं वा दुक्खं, न त्वेव तप्पच्चया कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जेय्य। यं च सो, भिक्खवे, दुस्सीलो पापधम्मो ...पे०... कसम्बुजातो खत्तियमहासालानं वा ब्राह्मणमहासालानं वा गहपतिमहासालानं वा सद्धादेय्यं मञ्चपीठं परिभुञ्जति। तं हि तस्स, भिक्खवे, होति दीघरत्तं अहिताय दुक्खाय कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति।

८. ''तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, कतमं नु खो वरं—यं बलवा पुरिसो उद्धंपादं अधोसिरं गहेत्वा तत्ताय लोहकुम्भिया पक्खिपेय्य आदित्ताय सम्पज्जलिताय सजोतिभूताय—सो तत्थ फेणुद्देहकं पच्चमानो सकिं पि उद्धं गच्छेय्य सकिं पि अधो गच्छेय्य सकिं पि तिरियं गच्छेय्य, यं वा खत्तियमहासालानं वा ब्राह्मणमहासालानं वा [R.134] गहपतिमहासालानं वा सद्धादेय्यं विहारं परिभुञ्जेय्या'' ति?

''एतदेव, भन्ते, वरं—यं खत्तियमहासालानं वा ब्राह्मणमहासालानं वा

---

बलवान् पुरुष किसी पुरुष का शिर पकड़कर, कन्धे पकड़कर उसको किसी जलते हुए लौहमञ्च पर या लौहपीठ पर बार बार बैठा जाय? या वह क्षत्रिय... गृहपति धनपतियों द्वारा श्रद्धाप्रदत्त मञ्चपीठ का आसेवन करे?''

''भन्ते! हमको तो यही उचित लगता है कि वह क्षत्रिय... धनपतियों द्वारा श्रद्धाप्रदत्त मञ्चपीठ का ही आसेवन करे; क्योंकि उस तप्त लौहमञ्च या लौहपीठ पर किसी बलवान् पुरुष द्वारा बार बार बैठाया जाना तो मृत्युसम कष्टदायी होता है।''

''भिक्षुओ! मैं तुम्हें यहाँ यह बताना चाहता हूँ ...पूर्ववत्... नरकपात की ही सम्भावना बनी रहती है। (६)

८. ''तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! इन दो बातों में कौन सी बात सुविधाजनक है—१. कोई बलवान् पुरुष किसी का शिर नीचे तथा पैर ऊपर कर उसे किसी भयङ्कर जलते हुए लोह के कटाह में बलपूर्वक डाल दे। वह वहाँ ऊपर नीचे होता हुआ, मुख से झाग फेंकता हुआ पचता रहे? या २. क्षत्रिय... धनपतियों द्वारा श्रद्धाप्रदत्त विहार (साधनास्थल) का आसेवन करे?''

गहपतिमहासालानं वा सद्धादेय्यं विहारं परिभुञ्जेय्य, दुक्खं हेतं, भन्ते, यं बलवा पुरिसो उद्धंपादं अधोसिरं गहेत्वा तत्ताय लोहकुम्भिया पक्खिपेय्य आदित्ताय सम्पज्जलिताय सजोतिभूताय—सो तत्थ फेणुद्देहकं पच्चमानो सकिं पि उद्धं गच्छेय्य सकिं पि अधो गच्छेय्य सकिं पि तिरियं गच्छेय्या'' ति।

''आरोचयामि वो, भिक्खवे, पटिवेदयामि वो, भिक्खवे, यथा एतदेव तस्स वरं दुस्सीलस्स पापधम्मस्स ...पे०... कसम्बुजातस्स यं बलवा पुरिसो उद्धंपादं अधोसिरं गहेत्वा ...पे०... सकिं पि तिरियं गच्छेय्य। तं किस्स हेतु? ततोनिदानं हि सो, भिक्खवे, मरणं वा निगच्छेय्य मरणमत्तं वा दुक्खं, न त्वेव तप्पच्चया कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जेय्य। यं च खो सो, भिक्खवे, दुस्सीलो पापधम्मो ...पे०... कसम्बुजातो खत्तियमहासालानं वा ब्राह्मणमहासालानं वा गहपति- [N.256, B.500] महासालानं वा सद्धादेय्यं विहारं परिभुञ्जति। तं हि तस्स, भिक्खवे, होति दीघरत्तं अहिताय दुक्खाय कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जति।''

९. ''तस्मातिह, भिक्खवे, एवं सिक्खितब्बं—'येसं च मयं परिभुञ्जाम चीवरपिण्डपातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारं तेसं ते कारा महप्फला भविस्सन्ति महानिसंसा, अम्हाकं चेवायं पब्बज्जा अवञ्झा भविस्सति सफला सउद्रया' ति। एवं हि वो, भिक्खवे, सिक्खितब्बं—'अत्तत्थं वा, भिक्खवे, सम्पस्समानेन अलमेव [R.135] अप्पमादेन सम्पादेतुं; परत्थं वा, भिक्खवे, सम्पस्समानेन अलमेव अप्पमादेन सम्पादेतुं; उभयत्थं वा, भिक्खवे, सम्पस्समानेन अलमेव अप्पमादेन सम्पादेतुं' '' ति।

१०. इदमवोच भगवा। इमस्मिं च पन वेय्याकरणस्मिं भञ्ञमाने सट्ठिमत्तानं भिक्खूनं उण्हं लोहितं मुखतो उग्गञ्छि। सट्ठिमत्ता भिक्खू सिक्खं पच्चक्खाय

---

''भन्ते! हमको तो यहाँ यही उचित लगता है कि वह उन क्षत्रिय... धनपतियों द्वारा श्रद्धाप्रदत्त विहार का ही आसेवन करे; क्योंकि उस तप्त लौह कटाह में डूबना और उतराना तो मृत्युदायी कष्ट है।''

''भिक्षुओ! मैं तुम्हे यहाँ यह बताना चाहता हूँ ...पूर्ववत्... नरकपात की ही सम्भावना बनी रहती है। (७)

९. ''अत: भिक्षुओ! तुमको यह सीखना चाहिये—'जिनके द्वारा दिये हुए चीवर, पिण्डपात, शयनासन, रोगों में हितकारी पथ्य एवं ओषधियों का हम उपभोग करते हैं, उनका वह दान अतिशय फलदायी तथा विशेष महत्त्वाधायक हो तथा हमारी यह प्रव्रज्या भी सफल एवं हमारे लिये उन्नतिकारक हो।' तथा भिक्षुओ! तुम्हें यह भी सीखना चाहिये—'भिक्षुओ! जिसमें हम आत्महित देखें वह कार्य हम अप्रमादपूर्वक सम्पादित करें, या जिस कार्य में हम परहित देखें, उसको भी हमें अप्रमादपूर्वक पूर्ण करना चाहिये। तथा जिसमें हम (स्व एवं पर) दोनों का हित देखें, उसको तो विशेष तन्मयता से अप्रमादपूर्वक पूर्ण करना चाहिये॥''

१०. भगवान् ने यह उपदेश किया। इस उपदेश के किये जाते समय साठ भिक्षुओं ने अपने

हीनायावत्तिंसु—''सुदुक्करं भगवा, सुदुक्करं भगवा'' ति। सट्ठिमत्तानं भिक्खूनं अनुपादाय आसवेहि चित्तानि विमुच्चिंसू ति॥ ●

९. **सुनेत्तसुत्तं :** १. ''भूतपुब्बं, भिक्खवे, सुनेत्तो नाम सत्था अहोसि तित्थकरो कामेसु वीतरागो। सुनेत्तस्स खो पन, भिक्खवे, सत्थुनो अनेकानि सावकसतानि अहेसुं। सुनेत्तो सत्था सावकानं ब्रह्मलोकसहब्यताय धम्मं देसेसि। ये खो पन, भिक्खवे, सुनेत्तस्स सत्थुनो ब्रह्मलोकसहब्यताय धम्मं देसेन्तस्स चित्तानि नप्पसादेसुं, ते कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जिसु। ये खो पन, भिक्खवे, सुनेत्तस्स सत्थुनो ब्रह्मलोकसहब्यताय धम्मं देसेन्तस्स चित्तानि पसादेसुं, ते कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जिसु।

२. ''भूतपुब्बं, भिक्खवे, मूगपक्खो नाम सत्था अहोसि ...पे०... अरनेमि नाम सत्था अहोसि ...पे०... कुद्दालको नाम सत्था अहोसि ...पे०... हत्थिपालो नाम सत्था [N.257, B.501] अहोसि ...पे०... जोतिपालो नाम सत्था अहोसि ...पे०... अरको नाम सत्था अहोसि तित्थकरो कामेसु वीतरागो। अरकस्स खो पन, भिक्खवे, सत्थुनो अनेकानि सावकसतानि अहेसुं। अरको नाम सत्था सावकानं ब्रह्मलोकसहब्यताय धम्मं देसेसि। ये खो [R.136] पन, भिक्खवे, अरकस्स सत्थुनो ब्रह्मलोकसहब्यताय धम्मं देसेन्तस्स चित्तानि नप्पसादेसुं, ते कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपज्जिसु। ये खो पन, भिक्खवे, अरकस्स सत्थुनो ब्रह्मलोकसहब्यताय धम्मं देसेन्तस्स चित्तानि पसादेसुं, ते कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जिसु।

३. ''तं किं मञ्ञथ, भिक्खवे, यो इमे सत्त सत्थारे तित्थकरे कामेसु वीतरागे

---

मुख से उष्ण रक्त फेंक दिया। अन्य साठ भिक्षु यह कहते हुए भगवान् के सामने से उठकर चल दिये—''भन्ते! हमारे लिये आपके इस उपदेश का पालन करना बहुत कठिन है।'' तथा अन्य साठ भिक्षुओं का चित्त, इस उपदेश के प्रभाव से, आश्रवों से विमुक्त हो गया॥ ●

**९. सुनेत्रसूत्र** : :

१. ''पहले कभी, भिक्षुओ! **सुनेत्र** नामक एक शास्ता हुए थे, जो एक नये धर्म के साक्षात्कर्ता एवं कामभोगों के प्रति पूर्णत: नि:स्पृह थे। भिक्षुओ! उस शास्ता सुनेत्र के अनेक सौ शिष्य थे। वे सुनेत्र शास्ता अपने शिष्यों को ब्रह्मलोक से मैत्री धर्म का उपदेश करते थे। भिक्षुओ! जिन शिष्यों ने सुनेत्र शास्ता द्वारा ब्रह्मलोक मैत्री-धर्म के उपदेश पर विश्वास (श्रद्धा) नहीं किया, वे मरणानन्तर नरक में जा गिरे; परन्तु जिन शिष्यों ने उस शास्ता के धर्मोपदेश पर विश्वास किया वे मरणानन्तर सुगतिमय स्वर्गलोक में उत्पन्न हुए।

२. पहले कभी **मूकपक्ष** नामक शास्ता हुए... **अरनेमि** नामक शास्ता हुए... **कुद्दालक** ...**हस्तिपाल... ज्योतिष्पाल** नामक शास्ता हुए... **अरक** नामक शास्ता हुए, जो एक नये धर्म के साक्षात्कर्ता थे तथा कामभोगों के प्रति पूर्णत: निस्पृह थे। ...पूर्ववत्... स्वर्ग लोक में उत्पन्न हुए।

३. ''तो क्या मानते हो, भिक्षुओ! जो इन कामभोगों में नि:स्पृह सात तीर्थङ्कर, सैंकड़ों

अनेकसतपरिवारे ससावकसङ्घे पदुट्ठचित्तो अक्कोसेय्य परिभासेय्य, बहुं सो अपुञ्ञं पसवेय्या" ति? "एवं, भन्ते"।

"यो, भिक्खवे, इमे सत्त सत्थारे तित्थकरे कामेसु वीतरागे अनेकसतपरिवारे ससावकसङ्घे पदुट्ठचित्तो अक्कोसेय्य परिभासेय्य, बहुं सो अपुञ्ञं पसवेय्य। यो एवं दिट्ठिसम्पन्नं पुग्गलं पदुट्ठचित्तो अक्कोसति परिभासति, अयं ततो बहुतरं अपुञ्ञं पसवति। तं किस्स हेतु? नाहं, भिक्खवे, इतो बहिद्धा एवरूपिं खन्तिं वदामि यथा मं सब्रह्मचारीसु।

"तस्मातिह, भिक्खवे, एवं सिक्खितब्बं—'न नो सब्रह्मचारीसु चित्तानि पदुट्ठानि भविस्सन्ती' ति। एवं हि वो, भिक्खवे, सिक्खितब्बं" ति॥ ●

**१०. अरकसुत्तं** : १. "भूतपुब्बं, भिक्खवे, अरको नाम सत्था अहोसि तित्थकरो कामेसु वीतरागो। अरकस्स खो पन, भिक्खवे, सत्थुनो अनेकानि सावकसतानि अहेसुं। अरको सत्था सावकानं एवं धम्मं देसेसि—'अप्पकं, ब्राह्मण, जीवितं मनुस्सानं परित्तं लहुकं बहुदुक्खं बहुपायासं मन्तायं बोद्धब्बं, कत्तब्बं कुसलं, चरितब्बं ब्रह्मचरियं, नत्थि [R.137] जातस्स अमरणं।

'सेय्यथापि, ब्राह्मण, तिणग्गे उस्सावबिन्दु सुरिये उग्गच्छन्ते [N.258, B.502] खिप्पंयेव पटिविगच्छति, न चिरट्ठितिकं होति; एवमेव खो, ब्राह्मण, उस्सावबिन्दूपमं जीवितं मनुस्सानं परित्तं लहुकं बहुदुक्खं बहुपायासं मन्तायं बोद्धब्बं, कत्तब्बं कुसलं, चरितब्बं ब्रह्मचरियं, नत्थि जातस्स अमरणं।

'सेय्यथापि, ब्राह्मण, थुल्लफुसितके देवे वस्सन्ते उदकबुब्बुळं खिप्पंयेव

---

श्रावकों वाले शास्ताओं के प्रति द्वेषभाव रखता है, उनकी निन्दा करता है, उनका अपमान करता है, क्या वह अपने लिये अतिशय पापराशि का संग्रह नहीं करता?" "अवश्य, भन्ते!"

"जो एक दृष्टिसम्पन्न पुद्गल के प्रति द्वेष, उसकी निन्दा या अपमान करता है वह जितनी पापराशि का संग्रह करता है उससे अधिक श्रावकसङ्घसहित इन सात शास्ताओं के प्रति द्वेष उनकी निन्दा तथा अपमान कर सञ्चय कर लेता है। वह किसलिये? क्योंकि, भिक्षुओ! मैं अपने साथियों के अतिरिक्त किसी में भी ऐसी सहनशीलता नहीं पाता।

"इसलिये, भिक्षुओ! तुम लोगों को यह सीखना चाहिये—'हम अपने साथियों से कभी द्वेष नहीं करेंगे।' भिक्षुओ! तुम्हें ऐसी ही शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये॥" ●

**१०. अरकसूत्र** : :

१. पहले कभी, भिक्षुओ! एक **अरक** नामक शास्ता भी हुए थे, जो तीर्थङ्कर एवं कामभोगों के प्रति निःस्पृह थे। इस अरक शास्ता के भी सैंकड़ों शिष्य थे। ये अपने शिष्यों को ऐसा उपदेश करते थे—"ब्राह्मण! मनुष्यों के जीवन की सीमा बहुत अल्प, छोटी और वह भी अनेक दुःखों तथा चिन्ता से भरी हुई—ऐसा अपनी प्रज्ञा (मन्ता) से समझ लेना चाहिये। अतः कुशल कर्म करो, धर्मसाधना करो; क्योंकि यह निश्चित है कि जो जन्मा है वह एक न एक दिन मरेगा भी।

"जैसे, ब्राह्मण! तृण के अग्रभाग पर पड़ी हुई औस की एक बिन्दु सूर्योदय होने पर शीघ्र ही

पटिविगच्छति, न चिरट्ठितिकं होति; एवमेव खो, ब्राह्मण, उदकबुब्बुळूपमं जीवितं मनुस्सानं परित्तं लहुकं बहुदुक्खं बहुपायासं मन्तायं बोद्धब्बं, कत्तब्बं कुसलं, चरितब्बं ब्रह्मचरियं, नत्थि जातस्स अमरणं।

'सेय्यथापि, ब्राह्मण, उदके दण्डराजि खिप्पंयेव पटिविगच्छति, न चिरट्ठितिका होति; एवमेव खो, ब्राह्मण, उदके दण्डराजूपमं जीवितं मनुस्सानं परित्तं ...पे०... नत्थि जातस्स अमरणं।

'सेय्यथापि, ब्राह्मण, नदी पब्बतेय्या दूरङ्गमा सीघसोता हारहारिनी, नत्थि सो खणो वा लयो वा मुहुत्तो वा यं सा आवत्तति, अथ खो सा गच्छतेव वत्ततेव सन्दतेव; एवमेव खो, ब्राह्मण, नदीपब्बतेय्यूपमं जीवितं मनुस्सानं परित्तं लहुकं ...पे०... नत्थि जातस्स अमरणं।

'सेय्यथापि, ब्राह्मण, बलवा पुरिसो जिव्हग्गे खेळपिण्डं संयूहित्वा अकसिरेनेव वमेय्य; एवमेव खो, ब्राह्मण, खेळपिण्डूपमं जीवितं मनुस्सानं परित्तं ...पे०... नत्थि जातस्स अमरणं।

[R.138] 'सेय्यथापि, ब्राह्मण, दिवसंसन्तत्ते अयोकटाहे मंसपेसि पक्खित्ता खिप्पंयेव पटिविगच्छति, न चिरट्ठितिका होति; एवमेव खो, ब्राह्मण, मंसपेसूपमं जीवितं मनुस्सानं परित्तं ...पे०... नत्थि जातस्स अमरणं।

'सेय्यथापि, ब्राह्मण, गावी वज्झा आघातनं नीयमाना यं यदेव पादं उद्धरति, सन्तिकेव होति वधस्स सन्तिकेव मरणस्स; एवमेव खो, ब्राह्मण, गोवज्झूपमं जीवितं

---

नष्ट हो जाती है; उसी प्रकार मनुष्यों का जीवन भी औस की बिन्दु के समान अल्पक्षण स्थायी है ...पूर्ववत्... एक न एक दिन मरेगा ही। (१)

"जैसे, ब्राह्मण! घनघोर वर्षा के कारण उठे जल के बुलबुले शीघ्र ही नष्ट हो ...पूर्ववत्...। (२)

"जैसे, ब्राह्मण! जल में किसी दण्ड से खींची हुई रेखा शीघ्र ही नष्ट हो जाती है ...पूर्ववत्...। (३)

"जैसे, ब्राह्मण! कोई नदी किसी पर्वत से निकली हो, उसका प्रवाह वेगवान् हो, दूर तक जानेवाली हो, हरहराकर बहने वाली हो, वह पुन: पीछे लौटेगी—यह सम्भव नहीं है, वह तो बहती ही रहेगी, आगे बढती ही रहेगी; उसी प्रकार, ब्राह्मण! इस नदी के समान मनुष्यों का जीवन भी बहने वाला है, एक स्थान पर टिकने वाला नहीं है ...पूर्ववत्...। (४)

"जैसे, ब्राह्मण! कोई बलवान् पुरुष अपने कफ को जिह्वा के अग्रभाग पर एकत्र कर दूर फेंक देता है; इसी प्रकार तुम अपने जीवन को उस कफ के समान ही समझो ...पूर्ववत्...। (५)

"जैसे, ब्राह्मण! दिन भर धूप में तपे हुए किसी लौहकटाह में मांस का कोई छोटा टुकड़ा डाल देने पर वह शीघ्र ही जल भुन जाता है, वह वहाँ चिरस्थायी नहीं होता; इसी प्रकार, ब्राह्मण! मनुष्य जीवन भी इस मांस-खण्ड के समान अल्पस्थायी ही होता है ...पूर्ववत्...। (६)

जैसे, ब्राह्मण! वध के लिये ले जायी जाने वाली कोई गौ वधस्थल की ओर ज्यो ज्यों अपना

मनुस्सानं परित्तं लहुकं बहुदुक्खं बहुपायासं मन्तायं बोद्धब्बं, कत्तब्बं [B.503,N.259] कुसलं, चरितब्बं ब्रह्मचरियं, नत्थि जातस्स अमरणं' ति।

२. "तेन खो पन, भिक्खवे, समयेन मनुस्सानं सट्ठिवस्ससहस्सानि आयुप्पमाणं अहोसि, पञ्चवस्ससतिका कुमारिका अलंपतेय्या अहोसि। तेन खो पन, भिक्खवे, समयेन मनुस्सानं छळेव आबाधा अहेसुं—सीतं, उण्हं, जिघच्छा, पिपासा, उच्चारो, पस्सावो। सो हि नाम, भिक्खवे, अरको सत्था एवं दीघायुकेसु मनुस्सेसु एवं चिरट्ठितिकेसु एवं अप्पाबाधेसु सावकानं एवं धम्मं देसेस्सति—'अप्पकं, ब्राह्मण, जीवितं मनुस्सानं परित्तं लहुकं बहुदुक्खं बहुपायासं मन्तायं बोद्धब्बं, कत्तब्बं कुसलं, चरितब्बं ब्रह्मचरियं, नत्थि जातस्स अमरणं' ति।

३. "एतरहि तं, भिक्खवे, सम्मा वदमानो वदेय्य—'अप्पकं जीवितं मनुस्सानं परित्तं लहुकं बहुदुक्खं बहुपायासं मन्तायं बोद्धब्बं, कत्तब्बं कुसलं, चरितब्बं ब्रह्मचरियं, नत्थि जातस्स अमरणं' ति। एतरहि, भिक्खवे, यो चिरं जीवति सो वस्ससतं अप्पं वा भिय्यो। वस्ससतं खो पन, भिक्खवे जीवन्तो तीणियेव उतुसतानि जीवति—उतुसतं हेमन्तानं, उतुसतं गिम्हानं, उतसुतं वस्सानं। तीणि खो पन, भिक्खवे, उतुसतानि जीवन्तो द्वादसयेव माससतानि जीवति—चत्तारि माससतानि हेमन्तानं, चत्तारि माससतानि [R.139] गिम्हानं, चत्तारि माससतानि वस्सानं। द्वादस खो पन, भिक्खवे, माससतानि जीवन्तो चतुवीसतियेव अद्धमाससतानि जीवति—अट्ठद्धमासतानि हेमन्तानं, अट्ठद्धमाससतानि गिम्हानं, अट्ठद्धमासतानि वस्सानं। चतुवीसति खो पन, भिक्खवे, अद्धमाससतानि जीवन्तो

---

एक एक पैर बढ़ाती है, त्यों त्यों उसका वध, उसका मरण समीप आता जाता है; इसी प्रकार, ब्राह्मण! मनुष्य का जीवन वधस्थल पर ले जायी जाती हुई गौ के समान है—ऐसा जानना चाहिये, धर्मसाधना करनी चाहिये। जन्मे हुए प्राणी की मृत्यु न हो—यह सम्भव नहीं है। (७)

२. "उस समय, भिक्षुओ! मनुष्यों की आयु साठ हजार वर्ष होती थी। कन्या के पाँच सौ वर्ष की होने पर वह पति से विवाह के योग्य होती थी। उस समय मनुष्यों को छह ही रोग हेते थे—शीत, उष्ण, भूख, प्यास, मल एवं मूत्र का उत्सर्जन। इतना होने पर भी जब, भिक्षुओ! वह अरक नामक शास्ता, मनुष्यों के इतना दीर्घायु होने पर भी, अपने शिष्यों को यही उपदेश करता था—'ब्राह्मण! मनुष्यों का जीवन बहुत अल्प है ...पूर्ववत्... जन्मे हुए प्राणी की मृत्यु न हो!'

३. "भिक्षुओ! उस शास्ता के उस उपदेश को वास्तव में आज के समय उचित में कहा जा सकता है ...पूर्ववत्...। क्योंकि, भिक्षुओ! आज साधारणत: कोई मनुष्य बहुत जीवित रहता है तो सौ वर्ष तक ही जीवित रहता है या इससे भी कम। इस प्रकार, भिक्षुओ! सौ वर्ष जीते हुए को तीन सौ ऋतुएँ ही देखनी होती हैं—एक सौ हेमन्त ऋतु, एक सौ ग्रीष्म ऋतु एवं एक सौ वर्षा ऋतु। भिक्षुओ! ऐसा प्राणी तीन सौ ऋतुओं तक जीता हुआ बारह सौ मास जीवित रहता है। उनमें चार सौ मास हेमन्त ऋतु के, चार सौ मास ग्रीष्म ऋतु के तथा चार सौ मास वर्षा ऋतु के। इस प्रकार भिक्षुओ! वह बारह सौ मास जीता हुआ चौबीस सौ अर्धमास (पक्ष) जीवित रहता है—आठ सौ

छत्तिंसंयेव रत्तिसहस्सानि जीवति—द्वादस रत्तिसहस्सानि हेमन्तानं, द्वादस रत्तिसहस्सानि गिम्हानं, द्वादस रत्तिसहस्सानि वस्सानं। छत्तिंसं खो पन, भिक्खवे, रत्तिसहस्सानि जीवन्तो द्वेसत्ततियेव भत्तसहस्सानि भुञ्जति—चतुवीसति भत्तसहस्सानि हेमन्तानं, चतुवीसति भत्तसहस्सानि गिम्हानं, चतुवीसति भत्तसहस्सानि वस्सानं सद्धिं मातुथञ्ञाय सद्धिं भत्तन्तरायेन।

४. ''तत्रिमे भत्तन्तराया—कुपितो पि भत्तं न भुञ्जति, दुक्खितो पि भत्तं न [N.260, B.504] भुञ्जति, ब्याधितो पि भत्तं न भुञ्जति, उपोसथिको पि भत्तं न भुञ्जति, अलाभकेन पि भत्तं न भुञ्जति। इति खो, भिक्खवे, मया वस्ससतायुकस्स मनुस्सस्स आयु पि सङ्खातो, आयुप्पमाणं पि सङ्खातं, उतू पि सङ्खाता, संवच्छरा पि सङ्खाता, मासा पि सङ्खाता, अद्धमासा पि सङ्खाता, रत्ति पि सङ्खाता, दिवा पि सङ्खाता, भत्ता पि सङ्खाता, भत्तन्तराया पि सङ्खाता। यं, भिक्खवे, सत्थारा करणीयं सावकानं हितेसिना अनुकम्पकेन अनुकम्पं उपादाय; कतं वो तं मया। एतानि, भिक्खवे, रुक्खमूलानि एतानि सुञ्ञागारानि। झायथ, भिक्खवे, मा पमादत्थ; मा पच्छा विप्पटिसारिनो अहुवत्थ। अयं वो अम्हाकं अनुसासनी'' ति॥ ●

**महावग्गो सत्तमो॥**

### तस्सुद्दानं

[R.140] हिरीसुरियं उपमा, धम्मञ्ञू पारिछत्तकं।
सक्कच्चं भावना अग्गि, सुनेत्तअरकेन चा ति॥ ●

---

अर्धमास हेमन्त के, आठ सौ अर्धमास ग्रीष्म के तथा आठ सौ अर्धमास वर्षा के। भिक्षुओ! चौबीस सौ अर्धमास जीता हुआ वह मनुष्य छत्तीस हजार रात्रि पर्यन्त जीवित रहता है—बारह हजार रात्रि हेमन्त ऋतु की, बारह हजार रात्रि ग्रीष्म ऋतु की, तथा बारह हजार रात्रि वर्षा ऋतु की। छत्तीस हजार रात्रि तक जीवित रहता हुआ, भिक्षुओ! वह बहत्तर हजार बार भोजन करता है, माता का स्तन्यपान-काल एवं रोग आदि का समय इस भोजनकाल का अन्तराय (विघ्न=अभाव) समझो।

४. वहाँ ये अन्तराय होते हैं—आलस्य (या क्रोध) होने पर भोजन नहीं किया जाता, किसी कारण दुःख से ग्रस्त होने पर; रुग्णावस्था में, धार्मिक उपवास (उपोसथ) के समय, या भोजन न मिलने पर भोजन नहीं किया जाता। इस प्रकार, भिक्षुओ! मैने शतवर्षजीवी मनुष्य की आयु भी तुमको बता दी, आयुप्रमाण भी बता दिया, (प्रसङ्गवश) ऋतुएँ भी बता दीं, संवत्सर भी गिना दिये, मास भी... अर्धमास भी... रात्रि भी... दिन भी... भोजनकाल भी... तथा भोजनकाल के अन्तराय भी गिना दिये। भिक्षुओ! शिष्यहितकारी दयालु शास्ता द्वारा शिष्यों के लिये जो करना था, वह सब मैंने कर दिया। भिक्षुओ! ये वृक्षमूल हैं, ये शून्य आगार हैं, यहाँ मन लगाकर ध्यानभावना करो। इसमें प्रमाद न करना, अन्यथा तुम को बाद में पश्चाताप करना पड़ेगा। यही हमारा तुमको उपदेश है, यही अनुशासन है॥'' ●

**महावर्ग सप्तम पूर्ण॥**

# ८. विनयवग्गो

**१. पठमविनयधरसुत्तं :** १. "सत्तहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु विनयधरो होति। कतमेहि सत्तहि? आपत्तिं जानाति, अनापत्तिं जानाति, लहुकं आपत्तिं जानाति, गरुकं आपत्तिं जानाति, सीलवा होति पातिमोक्खसंवरसंवुतो विहरति आचारगोचरसम्पन्नो अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्सावी समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु, चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु विनयधरो होती" ति॥

**२. दुतियविनयधरसुत्तं :** १. "सत्तहि, भिक्खवे, धम्मेहि [N.261, B.505] समन्नागतो भिक्खु विनयधरो होति। कतमेहि सत्तहि? आपत्तिं जानाति, अनापत्तिं जानाति, लहुकं आपत्तिं जानाति, गरुकं आपत्तिं जानाति, उभयानि खो पनस्स पातिमोक्खानि वित्थारेन स्वागतानि होन्ति सुविभत्तानि सुप्पवत्तीनि सुविनिच्छतानि सुत्तसो अनुब्यञ्जनसो, चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी

---

**इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची**

१. ह्री-अवत्राप्यसूत्र, २. सप्तसूर्यसूत्र, ३. नगरोपमसूत्र, ४. धर्मज्ञसूत्र, ५. पारिजातकसूत्र, ६. सत्कृत्यसूत्र, ७. भावनासूत्र, ८. अग्निस्कन्धोपमसूत्र, ९. सुनेत्रसूत्र, एवं १०. अरकसूत्र॥ ●

## ८. विनयवर्ग

**१. प्रथम विनयधरसूत्र : : विनयधर के लिये सात धर्म**

१. "भिक्षुओ! विनयधर भिक्षु को सात धर्मों से युक्त होना चाहिये। कौन से सात धर्म? जो १. आपत्ति (दोष) को जानता है, २. अनापत्ति को जानता है, ३. लघु आपत्ति को जानता है, ४. गुरु आपत्ति को जानता है, ५. सीलवान् रहते हुए प्रातिमोक्ष संवर से संवृत होकर आचार एवं गोचर से युक्त साधना करता है, सूक्ष्म से सूक्ष्म त्याज्य धर्मों में भय मानने वाला शिक्षापदों में साधना करता है, ६. आध्यात्मिक चार ध्यानों का, जो ऐहिक धर्मसुख की साधना वाले हैं, पूर्णतः लाभी हो, ७. आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति को इसी जन्म में प्राप्त कर स्वयं जानकर, साक्षात् कर साधना करता है।

"भिक्षुओ! इन सात धर्मों से युक्त भिक्षु **विनयधर** कहलाता है॥" ●

**२. द्वितीय विनयधरसूत्र : : विनयधर के लिये ग्राह्य सात धर्म**

१. "भिक्षुओ! इन सात धर्मों से युक्त भिक्षु ही 'विनयधर' कहलाता है। कौन सात धर्म? जो १. आपत्ति को, २. अनापत्ति को, ३. छोटी (लघ्वी) आपत्ति को, ४. बड़ी आपत्ति को, ५. दोनों ही प्रातिमोक्ष (भिक्षुप्रातिमोक्ष एवं भिक्षुणीप्रातिमोक्ष) विस्तार एवं विभाजन के साथ सूत्र और अर्थ के

[R.141] अकसिरलाभी, आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु विनयधरो होती'' ति॥ ●

**३. ततियविनयधरसुत्तं** : १. ''सत्तहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु विनयधरो होति। कतमेहि सत्तहि? आपत्तिं जानाति, अनापत्तिं जानाति, लहुकं आपत्तिं जानाति, गरुकं आपत्तिं जानाति, विनये खो पन ठितो होति असंहीरो, चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु विनयधरो होती'' ति॥ ●

**४. चतुत्थविनयधरसुत्तं** : १. ''सत्तहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु विनयधरो होति। कतमेहि सत्तहि? आपत्तिं जानाति, अनापत्तिं जानाति, लहुकं आपत्तिं जानाति, गरुकं आपत्तिं जानाति, अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, सेय्यथीदं—एकं पि जातिं द्वे पि जातियो ...पे०... इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति, आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज [B.506] विहरति। इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु विनयधरो होती'' ति॥ ●

**५. पठमविनयधरसोभनसुत्तं** : १. ''सत्तहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो

---

रूप से जिसको सुबोध एवं सुनिश्चित हो चुके हैं, ६. आध्यात्मिक चारों ध्यानों का, जो ऐहिक धर्मसुख की साधना के लिये हैं, पूर्णत: प्रापक हो, एवं ७. आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति को प्रज्ञाविमुक्ति को स्वयं जानकर साक्षात् कर साधना करता है। भिक्षुओ! इन सात धर्मों से युक्त भिक्षु ही 'विनयधर' कहलाता है॥'' ●

**३. तृतीय विनयधरसूत्र : : विनयधर के सात अन्य धर्म**

१. ''सात धर्मों से युक्त भिक्षु ही विनयधर कहलाता है। कौन सात धर्म? (१) जो आपत्ति को..., (२) अनापत्ति को..., (३) छोटी आपत्ति को..., (४) बड़ी आपत्ति को जानता हो, (५) जो विनय में अविचल रूप से स्थिर हो, (६) चार आध्यात्मिक एवं ऐहलौकिक साधना के उपयोगी ध्यानों का सर्वांशत लाभी हो, (७) आश्रवों के क्षय से ...पूर्ववत्... साक्षात् कर साधना करता हो। भिक्षुओ! इन सात धर्मों से युक्त भिक्षु ही विनयधर कहलाता है।'' ●

**४. चतुर्थ विनयधरसूत्र : : विनयधर भिक्षु के सात धर्म**

१. ''सात धर्मों से युक्त भिक्षु ...पूर्ववत्... (४) गुरु आपत्ति को जानता है, (५) अपने अनेक पूर्वजन्मों को जानता है, जैसे—एक जन्म को भी, दो जन्मों को भी ...पूर्ववत्... इस प्रकार आकृति एवं उद्देश (संकेत) पूर्वक अनेक पूर्वजन्मों को जानता है, (६) विशुद्ध एवं मानवदुर्लभ

विनयधरो सोभति। कतमेहि सत्तहि? आपत्तिं जानाति, अनापत्तिं जानाति, [N.262, R.142] लहुकं आपत्तिं जानाति, गरुकं आपत्तिं जानाति, सीलवा होति ...पे०... समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु, चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि धम्मेहि समन्नागतो विनयधरो सोभती'' ति॥ ●

६. **दुतियविनयधरसोभनसुत्तं** : १. ''सत्तहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो विनयधरो सोभति। कतमेहि सत्तहि? आपत्तिं जानाति, अनापत्तिं जानाति, लहुकं आपत्तिं जानाति, गरुकं आपत्तिं जानाति, उभयानि खो पनस्स पातिमोक्खानि वित्थारेन स्वागतानि होन्ति सुविभत्तानि सुप्पवत्तीनि सुविनिच्छितानि सुत्तसो अनुब्यञ्जनसो, चतुन्नं झानानं ...पे०... अकसिरलाभी, आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि धम्मेहि समन्नागतो विनयधरो सोभती'' ति॥ ●

७. **ततियविनयधरसोभनसुत्तं** : १. ''सत्तहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो विनयधरो सोभति। कतमेहि सत्तहि? आपत्तिं जानाति, अनापत्तिं जानाति, लहुकं आपत्तिं जानाति, गरुकं आपत्तिं जानाति, विनये खो पन ठितो होति असंहीरो, चतुन्नं झानानं ...पे०... अकसिरलाभी, आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। इमेहि [R.143] खो, भिक्खवे, सत्तहि धम्मेहि समन्नागतो विनयधरो सोभती'' ति॥ ●

८. **चतुत्थविनयधरसोभनसुत्तं** : १. ''सत्तहि, भिक्खवे, धम्मेहि [B.507] समन्नागतो विनयधरो सोभति। कतमेहि सत्तहि? आपत्तिं जानाति, अनापत्तिं जानाति, लहुकं आपत्तिं जानाति, गरुकं आपत्तिं जानाति, अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, सेय्यथीदं—

---

दिव्यचक्षु से कर्मानुसार उत्पन्न प्राणियों को जानता है, (७) आश्रवों के क्षय से ...पूर्ववत्... साधना करता है। इस प्रकार, भिक्षुओ! सात धर्मों से युक्त भिक्षु ही 'विनयधर' कहलाता है॥'' ●

**५. प्रथम विनयधरशोभनसूत्र : : सात धर्मों से शोभित विनयधर भिक्षु**

१. ''विनयधर भिक्षु इन सात धर्मों से शोभित होता है। किन सात धर्मों से? (१) आपत्ति ...पूर्ववत्... ॥'' *(प्रथम विनयधर सूत्रवत् विस्तार कर लें।)* ●

**६. द्वितीय विनयधरशोभनसूत्र : : सात धर्मों से शोभित विनयधर भिक्षु**

१. ''विनयधर भिक्षु इन सात धर्मों से शोभित होता है। किन सात धर्मों से? (१) आपत्ति ...पूर्ववत्... ॥'' *(द्वितीय विनयधरसूत्रवत् विस्तार कर लें।)* ●

**७. तृतीय विनयधरशोभनसूत्र : : सात धर्मों से शोभित विनयधर**

१. ''भिक्षुओ! सात धर्मों से युक्त विनयधर भिक्षु ही शोभित होता है। किन सात धर्मों से? (१) आपत्ति को ...पूर्ववत्... ॥'' *(तृतीय विनयधरसूत्रवत् विस्तार कर लें।)* ●

**८. चतुर्थ विनयधरशोभनसूत्र : : सात धर्मों से शोभित विनयधर**

१. भिक्षुओ! विनयधर भिक्षु इन सात धर्मों से ही शोभित होता है। किन सात धर्मों से? (१) आपत्ति को ...पूर्ववत्... ॥'' *(चतुर्थ विनयधरसूत्रवत् विस्तार करें।)* ●

[N.263] एकं पि जातिं द्वे पि जातियो ...पे०... इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन ...पे०... आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि धम्मेहि समन्नागतो विनयधरो सोभती'' ति॥

**९. सत्थुसासनसुत्तं :** १. अथ खो आयस्मा उपालि येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा उपालि भगवन्तं एतदवोच—

२. ''साधु मे, भन्ते, भगवा सङ्खित्तेन धम्मं देसेतु, यमहं भगवतो धम्मं सुत्वा एको वूपकट्ठो अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरेय्यं'' ति।

''ये खो त्वं, उपालि, धम्मे जानेय्यासि—'इमे धम्मा न एकन्तनिब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तन्ती' ति; एकंसेन, उपालि, धारेय्यासि—'नेसो धम्मो नेसो विनयो नेतं सत्थुसासनं' ति। ये च खो त्वं, उपालि, धम्मे जानेय्यासि—'इमे धम्मा एकन्तनिब्बिदाय विरागाय निरोधाय उपसमाय अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बानाय संवत्तन्ती' ति; एकंसेन, उपालि, धारेय्यासि—'एसो धम्मो एसो विनयो एतं सत्थुसासनं' '' ति॥

**१०. अधिकरणसमथसुत्तं :** १. ''सत्तिमे, भिक्खवे, अधिकरणसमथा धम्मा [R.144] उप्पन्नुप्पन्नानं अधिकरणानं समथाय वूपसमाय। कतमे सत्त? सम्मुखाविनयो [B.508] दातब्बो, सतिविनयो दातब्बो, अमूळ्हविनयो दातब्बो, पटिञ्ञातकरणं दातब्बं,

---

**९. शास्तृशासनशोभनसूत्र : : सात धर्मों से शोभित शास्ता का शासन**

१. तब आयुष्मान् उपालि भगवान् के सम्मुख आये। आकर उनको प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे उपालि ने भगवान् से यह जिज्ञासा की—

२. ''अच्छा हो, भन्ते! भगवान् मुझको अपने धर्म का इस प्रकार संक्षेप से उपदेश दें कि उसे सुनकर मैं एकाकी रूप से एकान्त में बैठकर सावधानीपूर्वक उद्योग करता हुआ आत्मसंयम के साथ साधना कर सकूँ।''

''उपालि! जिन धर्मों के विषय में तुम यह समझ लो कि ये धर्म संसार के प्रति ग्लानि, वैराग्य, इन्द्रियनिरोध, मन:शान्ति, अभिज्ञान, सम्बोधि एवं निर्वाण के लिये उपयोगी नहीं है, तो उपालि! उन धर्मों को समझ लो कि ये धर्म न वास्तविक धर्म है, न विनय और न शास्ता द्वारा कृत अनुशासन है। तथा, उपालि! जिन धर्मों के विषय में यह समझो कि ये धर्म संसार के प्रति ग्लानि, वैराग्य, निरोध, शान्ति, अभिज्ञान, सम्बोधि एवं निर्वाण के लिये उपयोगी हैं, तो उपालि! समझ लो कि ये धर्म ही वास्तविक धर्म हैं, यही विनय है तथा यही शास्ता के अनुशासन हैं॥''

**१०. अधिकरणशमथसूत्र : : सात कलहशामक धर्म**

१. ''भिक्षुओ! समय समय पर उठे विवादों की शान्ति तथा निवृत्ति के लिये ये सात विवादशामक उपाय ( धर्म) हैं। कौन से सात? (१) उस विवादकारी को **सम्मुखविनय** (सामने

येभुय्यसिका दातब्बा, तस्सपापियसिका दातब्बा, तिणवत्थारको दातब्बो। इमे खो, भिक्खवे, सत्त अधिकरणसमथा धम्मा उप्पन्नुप्पन्नानं अधिकरणानं समथाय वूपसमाया'' ति॥ ●

**विनयवग्गो अट्ठमो॥**

**तस्सुद्दानं**

चतुरो विनयधरा, चतुरो चेव सोभना। [N.264]
सासनं अधिकरण - समथेनट्ठमे दसा ति॥ ●

## ९. समणवग्गो

**१. भिक्खुसुत्तं :** ''सत्तन्नं, भिक्खवे, धम्मानं भिन्नत्ता भिक्खु होति। कतमेसं सत्तन्नं? सक्कायदिट्ठि भिन्ना होति, विचिकिच्छा भिन्ना होति, सीलब्बतपरामासो भिन्नो होति, रागो भिन्नो होति, दोसो भिन्नो होति, मोहो भिन्नो होति, मानो भिन्नो होति—इमेसं खो, भिक्खवे, सत्तन्नं धम्मानं भिन्नता भिक्खु होती'' ति॥ ●

---

बैठाकर विचार करना) देना चाहिये। (२) **स्मृतिविनय** (स्मरण दिलाना) देना चाहिये। (३) **अमूढविनय** (मतिमन्दता की सुविधा) देना चाहिये। (४) आगे ऐसा न होगा—ऐसी **प्रतिज्ञा** कराना चाहिये। (५) **यद्भूयसिक** (समीप के आवास वाले भिक्षुओं से मिलकर बहुमत से निर्णय) देना चाहिये। (६) **तत्पापीयसिक** (अपना अपराध स्वीकार करने के लिये उस पर नैतिक तथा आध्यात्मिक दबाव डालना) देना चाहिये। या (७) **तृणावस्तारक** (तृणों से ढाँकने जैसा व्यवहार) देना चाहिये। भिक्षुओ! ये सात अधिकरणशमथ धर्म हैं जो समय समय पर उत्पन्न विवादों के शमन तथा निवृत्ति के लिये प्रयुक्त होते हैं॥'' ●

**विनयवर्ग अष्टम पूर्ण॥**

**इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची**

१, २, ३, ४. विनयधरसूत्र; ५, ६, ७, ८. विनयधरशोभनसूत्र, ९. शास्तृशासनशोभनसूत्र, एवं १०. अधिकरणशमथसूत्र—ये अष्टम वर्ग में व्याख्यात दश सूत्र हैं॥ ●

## ९. श्रमणवर्ग

**१. भिक्षुसूत्र : : सात धर्मों का नाश ( भिन्नता )**

''भिक्षुओ! सात धर्मों का भेदन (नाश) करने के कारण (कोई प्रव्रजित) 'भिक्षु' कहलाता है। कौन से सात धर्म? (१) सत्कायदृष्टि, (२) विचिकित्सा, (३) शीलव्रतपरामर्श, (४) राग, (५) द्वेष, (६) मोह एवं (७) मान—इन सात धर्मों के भेदन के कारण 'भिक्षु' होता है॥'' ●

**२. समणसुत्तं :** १. सत्तन्नं, भिक्खवे, धम्मानं समितत्ता समणो होति ...पे०... ॥

**३. ब्राह्मणसुत्तं :** १. बाहितत्ता ब्राह्मणो होति ...पे०... ।

**४. सोत्तियसुत्तं :** १. निस्सुतत्ता सोत्तियो होति ...पे०... ॥

[B.509] **५. न्हातकसुत्तं :** १. न्हातत्ता न्हातको होति ...पे०... ॥

[N.265, R.145] **६. वेदगूसुत्तं :** १. विदितत्ता वेदगू होति ...पे०... ॥

**७. अरियसुत्तं :** १. आरकत्ता अरियो होति ...पे०... ॥

**८. अरहासुत्तं :** १. "आरकत्ता अरहा होति। कतमेसं सत्तन्नं? सक्कायदिट्ठि आरका होति, विचिकिच्छा आरका होति, सीलब्बतपरामासो आरको होति, रागो आरको होति, दोसो आरको होति, मोहो आरको होति, मानो आरको होति—इमेसं खो, भिक्खवे, सत्तन्नं धम्मानं आरकत्ता अरहा होति" ति॥

**९. असद्धम्मसुत्तं :** १. "सत्तिमे, भिक्खवे, असद्धम्मा। कतमे सत्त? अस्सद्धो होति, अहिरिको होति, अनोत्तप्पी होति, अप्पस्सुतो होति, कुसीतो होति, मुट्ठस्सति होति, दुप्पञ्ञो होति—इमे खो, भिक्खवे, सत्त असद्धम्मा" ति॥

---

**२. श्रमणसूत्र : : सात धर्मों का शामक 'श्रमण'**

१. "भिक्षुओ! इन सात धर्मों के शमन के कारण 'श्रमण' होता है ...पूर्ववत्... ॥

**३. ब्राह्मणसूत्र : :**

"भिक्षुओ! इन सात धर्मों के दूर कर देने के कारण ब्राह्मण होता है ...पूर्ववत्... ॥

**४. श्रोत्रियसूत्र : : सात धर्मों का नाशक 'श्रोत्रिय'**

"भिक्षुओ! इन सात धर्मों को बाहर निकाल देने के कारण 'श्रोत्रिय' कहलाता है ...पूर्ववत्... ॥

**५. स्नातकसूत्र : : स्नान किये जाने से 'स्नातक'**

"भिक्षुओ! इन सात धर्मों को स्नान (शास्त्राध्ययन) द्वारा दूर कर दिये जाने के कारण 'स्नातक' कहलाता है ...पूर्ववत्... ॥

**६. वेदज्ञसूत्र : : सात धर्मों के ज्ञान के कारण 'वेदज्ञ'**

"भिक्षुओ! सात धर्मों को जानने के कारण कोई 'वेदज्ञ' कहलाता है ...पूर्ववत्... ॥

**७. आर्यसूत्र : : दूर हटा देने के कारण 'आर्य'**

"भिक्षुओ! इन सात धर्मों को दूर हटा देने के कारण कोई 'आर्य' कहलाता है ...पूर्ववत्... ॥

**८. अर्हत्सूत्र : : सात धर्मों से दूर रहने के कारण 'अर्हत्'**

"भिक्षुओ! इन सात धर्मों से दूर रहने के कारण कोई 'अर्हत्' कहलाता है। किन सात धर्मों से? सत्कायदृष्टि से, विचिकित्सा से, शीलव्रतपरामर्श से, राग से, द्वेष से, मोह से एवं मान से दूर होता है। इन सात धर्मों से दूर रहने के कारण वह 'अर्हत्' कहलाता है॥"

**९. असद्धर्मसूत्र : : सात असद्धर्म**

"भिक्षुओ! सात असद्धर्म होते हैं। कौन से सात? यहाँ कोई रत्नत्रय के प्रति अश्रद्धालु होता

**१०. सद्धम्मसुत्तं :** १. "सत्तिमे, भिक्खवे, सद्धम्मा। कतमे सत्त? सद्धो होति, हिरीमा होति, ओत्तप्पी होति, बहुस्सुतो होति, आरद्धविरियो होति, सतिमा होति, पञ्ञवा होति। इमे खो, भिक्खवे, सत्त सद्धम्मा" ति॥ ●

समणवग्गो नवमो॥

### तस्सुद्दानं

भिक्खु समणो ब्राह्मणो, सोत्तियो चेव न्हातको। [B.510]
वेदगू अरियो अरहा, असद्धम्मा च सद्धम्मा ति॥ ●

## १०. आहुनेय्यवग्गो

१. "सत्तिमे, भिक्खवे, पुग्गला आहुनेय्या ...पे०... दक्खिणेय्या अञ्जलि-[N.266] करणीया अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमे सत्त? इध, भिक्खवे, एकच्चो पुग्गलो चक्खुस्मिं अनिच्चानुपस्सी विहरति अनिच्चसञ्ञी अनिच्चपटिसंवेदी सततं समितं अब्बोकिण्णं चेतसा अधिमुच्चमानो पञ्ञाय परियोगाहमानो। सो आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज [R.146]

---

है, निर्लज्ज होता है, पापभीरु नहीं होता, अल्पश्रुत होता है, (दान में) कञ्जूस होता है, भ्रष्टस्मृति (भुलक्कड़, विस्मरणशील) एवं दुष्प्रज्ञ होता है। भिक्षुओ! ये सात 'असद्धर्म' कहलाते हैं॥ ●

**१०. सद्धर्मसूत्र : : सात सद्धर्म**

"भिक्षुओ! ये सात सद्धर्म होते हैं। कौन से सात? श्रद्धालु होता है, लज्जालु होता है, पापभीरु होता है, बहुश्रुत होता है, सतत उद्योगी रहता है, स्मृतिमान् होता है, तथा प्रज्ञावान् होता है। भिक्षुओ! ये सात सद्धर्म होते हैं॥" ●

श्रमण वर्ग नवम सम्पन्न॥

### इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची

१. भिक्षुसूत्र, २. श्रमणसूत्र, ३. ब्राह्मणसूत्र, ४. श्रोत्रियसूत्र, ५. स्नातकसूत्र, ६. वेदज्ञसूत्र, ७. आर्यसूत्र, ८. अर्हत्सूत्र, ९. असद्धर्मसूत्र, एवं १०. सद्धर्मसूत्र॥ ●

## १० आह्वनीयवर्ग

१. "भिक्षुओ! ये सात पुद्गल आह्वनीय (भेंट देने योग्य) ...पूर्ववत्... दक्षिणेय, प्रणाम करने योग्य हैं; क्योंकि ये लोक के लिये पुण्यस्थल माने जाते हैं। कौन से सात? यहाँ, भिक्षुओ! कोई पुद्गल चक्षु (के विषयों) में निरन्तर, सब तरफ से निर्विघ्न, मन से सुविचारित एवं प्रज्ञा से गम्भीरतया पर्यवेक्षित अनित्यानुपश्यी होता है, अनित्यसंज्ञी होता है, अनित्यप्रतिसंवेदी होता है। वह

विहरति। अयं खो, भिक्खवे, पठमो पुग्गलो आहुनेय्यो पाहुनेय्यो ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स।

"पुन च परं, भिक्खवे, इधेकच्चो पुग्गलो चक्खुस्मिं अनिच्चानुपस्सी विहरति अनिच्चसञ्ञी अनिच्चपटिसंवेदी सततं समितं अब्बोकिण्णं चेतसा अधिमुच्चमानो पञ्ञाय परियोगाहमानो। तस्स अपुब्बं अचरिमं आसवपरियादानं च होति जीवितपरियादानं च। अयं खो भिक्खवे, दुतियो पुग्गलो आहुनेय्यो ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स।

"पुन च परं, भिक्खवे, इधेकच्चो पुग्गलो चक्खुस्मिं अनिच्चानुपस्सी विहरति अनिच्चसञ्ञी अनिच्चपटिसंवेदी सततं समितं अब्बोकिण्णं चेतसा अधिमुच्चमानो पञ्ञाय परियोगाहमानो। सो पञ्चन्नं ओरम्भागियानं संयोजनानं परिक्खया अन्तरापरिनिब्बायी होति ...पे०... उपहच्चपरिनिब्बायी होति ...पे०... असङ्खारपरिनिब्बायी होति ...पे०... ससङ्खारपरिनिब्बायी होति ...पे०... उद्धंसोतो होति अकनिट्ठगामी। अयं भिक्खवे, सत्तमो पुग्गलो आहुनेय्यो ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। इमे खो, भिक्खवे, सत्त पुग्गला आहुनेय्या पाहुनेय्या दक्खिणेय्या अञ्जलिकरणीया अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा" ति॥ ●

[B.511] **२-८.** सत्तिमे, भिक्खवे, पुग्गला आहुनेय्या पाहुनेय्या ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमे सत्त? इध, भिक्खवे, एकच्चो पुग्गलो चक्खुस्मिं दुक्खानुपस्सी विहरति ...पे०... चक्खुस्मिं अनत्तानुपस्सी विहरति ...पे०... चक्खुस्मिं खयानुपस्सी विहरति ...पे०... चक्खुस्मिं वयानुपस्सी विहरति ...पे०... चक्खुस्मिं विरागानुपस्सी विहरति ...पे०, चक्खुस्मिं निरोधानुपस्सी विहरति ...पे०... चक्खुस्मिं पटिनिस्सग्गानुपस्सी विहरति ...पे०... ॥ ●

---

आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति एवं प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में स्वयं जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर साधना करता है। भिक्षुओ! यह प्रथम पुद्गल आहवनीय ...पूर्ववत्... लोक के लिये पुण्यक्षेत्र माना जाता है। (१)

"पुनः, भिक्षुओ! कोई पुद्गल चक्षु (के विषयों) में ...पूर्ववत्... अनित्यप्रतिसंवेदी होता है। उसको अपूर्व असीमित आश्रवों का क्षय तथा जीवन पर पूर्ण निग्रह प्राप्त होता है। भिक्षुओ! यह दूसरा पुद्गल... पुण्यक्षेत्र माना जाता है। (२)

"पुनः, भिक्षुओ! कोई पुद्गल चक्षु ...पूर्ववत्... अनित्यप्रतिसंवेदी होता है। वह पाँचों अवरभागीय संयोजनों के परिक्षय से अन्तरापरिनिर्वायी होता है... उपहत्यपरिनिर्वायी होता है... असंस्कारपरिनिर्वायी होता है... ससंस्कारपरिनिर्वायी होता है... ऊर्ध्वस्रोत अकनिष्ठगामी होता है। भिक्षुओ! यह सप्तम पुद्गल आहवनीय... लोक के लिये अनुपम 'पुण्यक्षेत्र' है॥ (३-७)

**२-८.** भिक्षुओ! ये सात पुद्गल आहवनीय, प्राहवनीय ...पूर्ववत्... लोक के लिये अद्वितीय पुण्यक्षेत्र हैं। कौन से सात? यहाँ, भिक्षुओ! कोई पुद्गल चक्षु में दुःखानुपश्यी... अनात्मानुपश्यी... क्षयानुपश्यी... व्ययानुपश्यी... विरागानुपश्यी... निरोधानुपश्यी... प्रतिनिसर्गानुपश्यी होकर साधना करता है॥

९-४८. सोतस्मिं ...पे०... घानस्मिं... जिव्हाय... कायस्मिं... मनस्मिं [N.267] ...पे०... ॥ ●

४९-९६. रूपेसु ...पे०... सद्देसु... गन्धेसु... रसेसु... फोट्ठब्बेसु... [R.147] धम्मेसु ...पे०... ॥ ●

९७-१४४. चक्खुविञ्ञाणे ...पे०... सोतविञ्ञाणे... घानविञ्ञाणे... जिव्हाविञ्ञाणे... कायविञ्ञाणे... मनोविञ्ञाणे ...पे०... ॥ ●

१४५-१९२. चक्खुसम्फस्से ...पे०... सोतसम्फस्से... घानसम्फस्से... जिव्हासम्फस्से... कायसम्फस्से... मनोसम्फस्से... पे०... ॥ ●

१९३-२४०. चक्खुसम्फस्सजाय वेदनाय ...पे०... सोतसम्फस्सजाय वेदनाय... घानसम्फस्सजाय वेदनाय... जिव्हासम्फस्सजाय वेदनाय... कायसम्फस्सजाय वेदनाय... मनोसम्फस्सजाय वेदनाय...पे०... ॥ ●

२४१-२८८. रूपसञ्ञाय ...पे०... सद्दसञ्ञाय... गन्धसञ्ञाय... रससञ्ञाय... फोट्ठब्बसञ्ञाय... धम्मसञ्ञाय ...पे०... ॥ ●

२८९-३३६. रूपसञ्चेतनाय ...पे०... सद्दसञ्चेतनाय... गन्धसञ्चेतनाय... रससञ्चेतनाय... फोट्ठब्बसञ्चेतनाय... धम्मसञ्चेतनाय ...पे०... ॥ ●

३३७-३८४. रूपतण्हाय ...पे०... सद्दतण्हाय... गन्धतण्हाय... रसतण्हाय... फोट्ठब्बतण्हाय... धम्मतण्हाय ...पे०... ॥ ●

---

९-४८. श्रोत्र में... घ्राण में... जिह्वा में... काय में... मन में ...पूर्ववत्... ॥

४९-९६. रूपों में ...पूर्ववत्... शब्दों में... गन्धों में... रसों में... स्प्रष्टव्यों में... धर्मों में ...पूर्ववत्... ॥

९७-१४४. चक्षुर्विज्ञान में... श्रोत्रविज्ञान में... घ्राणविज्ञान में... जिह्वाविज्ञान में... कायविज्ञान में... मनोविज्ञान में ...पूर्ववत्... ॥

१४५-१९२. चक्षुःसंस्पर्श में ...पूर्ववत्... श्रोत्रसंस्पर्श में... घ्राणसंस्पर्श में... जिह्वासंस्पर्श में... कायसंस्पर्श में... मनःसंस्पर्श में... ॥

१९३-२४०. चक्षुःसंस्पर्शज वेदना में... श्रोत्रसंस्पर्शज वेदना में... घ्राणसंस्पर्शज वेदना में... जिह्वासंस्पर्शज वेदना में... कायसंस्पर्शज वेदना में... मनःसंस्पर्शज वेदना में ...पूर्ववत् ॥

२४१-२८८. रूपसंज्ञा में... शब्दसंज्ञा में... गन्धसंज्ञा में... रससंज्ञा में... स्प्रष्टव्यसंज्ञा में... धर्मसंज्ञा में ...पूर्ववत्... ॥

२८९-३३६. रूपसञ्चेतना में... शब्दसञ्चेतना में... गन्धसञ्चेतना में... रससञ्चेतना में... स्पष्टव्यसञ्चेतना में... धर्मसञ्चेतना में ...पूर्ववत्... ॥

३३७-३८४. रूपतृष्णा में... शब्दतृष्णा में... गन्धतृष्णा में... रसतृष्णा में... स्प्रष्टव्यतृष्णा में... धर्मतृष्णा में ...पूर्ववत्... ॥

**३८५-४३२.** रूपवितक्के ...पे०... सद्दवितक्के... गन्धवितक्के... रसवितक्के... फोट्ठब्बवितक्के... धम्मवितक्के ...पे०... ॥ ●

**४३३-४८०.** रूपविचारे ...पे०... सद्दविचारे... गन्धविचारे... रसविचारे... फोट्ठब्बविचारे... धम्मविचारे ...पे०... ॥ ●

[B.512] **४८१-५२८.** ''पञ्चक्खन्धे ...पे०... रूपक्खन्धे... वेदनाक्खन्धे... सञ्ञाक्खन्धे... सङ्खारक्खन्धे... विञ्ञाणक्खन्धे अनिच्चानुपस्सी विहरति ...पे०... दुक्खानुपस्सी विहरति... अनत्तानुपस्सी विहरति... खयानुपस्सी विहरति... वयानुपस्सी विहरति... विरागानुपस्सी विहरति... निरोधानुपस्सी विहरति... पटिनिस्सग्गानुपस्सी विहरति ...पे०... लोकस्सा'' ति ॥

**आहुनेय्यवग्गो दसमो ॥** ●

### तस्सुद्दानं

[N.268] छद्वारारम्मणेस्वेत्थ, विञ्ञाणेसु च फस्सेसु।
वेदनासु च द्वारस्स, सुत्ता होन्ति विसुं अट्ठ॥
सञ्ञा सञ्चेतना तण्हा, वितक्केसु विचारे च।
गोचरस्स विसुं अट्ठ, पञ्चक्खन्धे च पच्चेके॥
सोळसस्वेत्थ मूलेसु, अनिच्चं दुक्खमनत्ता।
खया वया विरागा च, निरोधा पटिनिस्सग्गा॥
कमं अट्ठानुपस्सना, योजेत्वान विसुं विसुं।

---

**३८५-४३२.** रूपवितर्क में... शब्दवितर्क में... गन्धवितर्क में... रसवितर्क में... स्प्रष्टव्य वितर्क में... धर्मवितर्क में ...पूर्ववत् ॥

**४३३-४८०.** रूपविचार में... शब्दविचार में... गन्धविचार में... रसविचार में... स्प्रष्टव्यविचार में... धर्मविचार में ...पूर्ववत्... ॥

**४८१-५२८.** ''पञ्चस्कन्धों में ...पूर्ववत्... रूपस्कन्ध में... वेदनास्कन्ध में... संज्ञास्कन्ध में... संस्कारस्कन्ध में... विज्ञानस्कन्ध में अनित्यानुपश्यी होकर साधना करता है... दुःखानुपश्यी होकर साधना करता है... अनात्मानुपश्यी होकर साधना करता है... क्षयानुपश्यी होकर साधना करता है... व्ययानुपश्यी होकर साधना करता है... विरागानुपश्यी होकर साधना करता है... निरोधानुपश्यी होकर साधना करता है... प्रतिनिसर्गानुपश्यी होकर साधना करता है ...पूर्ववत्... लोक के लिये अद्वितीय पुण्यस्थल है ॥'' ●

**आह्वनीय वर्ग दशम सम्पन्न ॥**

### इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची

इस आहवनीय वर्ग में षड्द्वारालम्बनों में, विज्ञानों में, स्पर्शों में, वेदनाओं में द्वार के सूत्र पृथक् पृथक् आठ होते हैं ॥

संज्ञा, सञ्चेतना, तृष्णा, वितर्क, विचारों में, गोचर के तथा प्रत्येक पञ्चस्कन्ध में ॥

सम्पिण्डितेसु सब्बेसु, होन्ति पञ्च सतानि च।
अट्ठवीसति सुत्तानि, आहुनेय्यो च वग्गिके॥ ●

## ११. रागपेय्यालं

१. ''रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय सत्त धम्मा भावेतब्बा। कतमे सत्त? [R.148] सतिसम्बोज्झङ्गो ...पे०... उपेक्खासम्बोज्झङ्गो—रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय इमे सत्त धम्मा भावेतब्बा'' ति॥

२. ''रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय सत्त धम्मा भावेतब्बा। कतमे सत्त? अनिच्चसञ्ञा, अनत्तसञ्ञा, असुभसञ्ञा, आदीनवसञ्ञा, पहानसञ्ञा, विरागसञ्ञा, निरोधसञ्ञा—रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय इमे सत्त धम्मा भावेतब्बा'' ति॥

३. ''रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय सत्त धम्मा भावेतब्बा। कतमे सत्त? [B.513] असुभसञ्ञा, मरणसञ्ञा, आहारे पटिकूलसञ्ञा, सब्बलोके अनभिरतसञ्ञा, अनिच्चसञ्ञा, अनिच्चे दुक्खसञ्ञा, दुक्खे अनत्तसञ्ञा—रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय इमे सत्त धम्मा भावेतब्बा'' ति॥

४-३०. ''रागस्स, भिक्खवे, परिञ्ञाय ...पे०... परिक्खयाय... पहानाय...

---

सोलह मूलों में अनित्य, दु:ख, अनात्म, क्षय, व्यय, विराग, निरोध, प्रतिनिसर्ग क्रम से आठ अनुपश्यनाओं को पृथक् पृथक् संयुक्त कर, सबको मिलाकर ये पाँच सौ अट्ठाईस (५२८) सूत्र होते हैं॥ ●

## ११. रागपेय्याल

१. ''भिक्षुओ! राग के अभिज्ञान हेतु सात धर्मों की भावना करनी चाहिये। कौन से सात? स्मृतिसम्बोध्यङ्ग ...पूर्ववत्... उपेक्षासम्बोध्यङ्ग—भिक्षुओ! राग के इन सात धर्मों की भावना करनी चाहिये॥''

२. ''भिक्षुओ! राग के अभिज्ञान हेतु इन सात धर्मों की भावना करनी चाहिये। कौन से सात? अनित्यसंज्ञा, अनात्मसंज्ञा, अशुभसंज्ञा, आदीनवसंज्ञा, प्रहाणसंज्ञा, विरागसंज्ञा, निरोधसंज्ञा—राग के नाश हेतु, भिक्षुओ! इन सात धर्मों की भावना करनी चाहिये॥''

३. ''भिक्षुओ! राग के अभिज्ञान के लिये इन सात धर्मों की भावना करनी चाहिये। कौन से सात? अशुभसंज्ञा, मरणसंज्ञा, आहार में प्रतिकूलसंज्ञा, सर्वलोक में अनभिरतसंज्ञा, अनित्यसंज्ञा, अनित्य में दु:खसंज्ञा, दु:ख में अनात्मसंज्ञा—राग के अभिज्ञान के लिये इन सात धर्मों की भावना करनी चाहिये॥

खयाय... वयाय... विरागाय... निरोधाय... चागाय ...पे०... पटिनिस्सग्गाय इमे सत्त धम्मा भावेतब्बा'' ति॥

[N.269] **३१-५१०.** ''दोसस्स ...पे०... मोहस्स... कोधस्स... उपनाहस्स... मक्खस्स... पळासस्स... इस्साय... मच्छरियस्स... मायाय... साठेय्यस्स... थम्भस्स... सारम्भस्स... मानस्स... अतिमानस्स... मदस्स... पमादस्स... अभिञ्ञाय ...पे०... परिञ्ञाय... परिक्खयाय... पहानाय... खयाय... वयाय... विरागाय निरोधाय... चागाय... पटिनिस्सग्गाय ...पे०... इमे सत्त धम्मा भावेतब्बा'' ति॥

इदमवोच भगवा। अत्तमना ते भिक्खु भगवतो भासितं अभिनन्दुं ति॥ [R.149]

**रागपेय्यालं निट्ठितं॥**

**सत्तकनिपातपालि निट्ठिता॥**

---

**४-३०.** ''भिक्षुओ! राग के परिज्ञान के लिये ...पूर्ववत्... परिक्षय के लिये... प्रहाण के रिये... क्षय के लिये... व्यय के लिये... विराग के लिये... निरोध के लिये... त्याग के लिये... पूव4वत्... प्रतिनिसर्ग के लिये इन सात धर्मों की भावना करनी चाहिये।

**३१-५१०.** ''द्वेष के ...पूर्ववत्... मोह के... क्रोध के... उपनाह (वैर) के... म्रक्ष (दूसरे की उन्नति से चिढ़ना) के... प्रदाह (दूसरे की उन्नति से जलन) के... ईर्ष्या के... मात्सर्य के... माया के... शाठ्य (धूर्तता) के... स्तम्भ के... सारम्भ (कलह) के... मान के... अतिमान के... मद के... प्रमाद के अभिज्ञान के लिये... परिज्ञान के लिये... परिक्षय के लिये... प्रहाण के लिये... क्षय के लिये... व्यय के लिये... विराग के लिये... निरोध के लिये... त्याग के लिये... प्रतिनिसर्ग के लिये ...पूर्ववत्... इन सात धर्मों की भावना करनी चाहिये॥''

भगवान् ने यह कहा। सन्तुष्ट हुए भिक्षुओं ने भगवान् के भाषण का अभिनन्दन किया॥

**रागपेय्याल सम्पन्न॥**

**सप्तकनिपात पालि सम्पन्न॥**

# ८. अट्ठकनिपातो

## १. मेत्तावग्गो

### पठमो पण्णासको

**१. मेत्तासुत्तं :** १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा [N.270,B.vol.III,1,R.150] सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि— ''भिक्खवो'' ति। ''भदन्ते'' ति ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

२. ''मेत्ताय, भिक्खवे, चेतोविमुत्तिया आसेविताय भाविताय बहुलीकताय यानी-कताय वत्थुकताय अनुट्ठिताय परिचिताय सुसमारद्धाय अट्ठानिसंसा पाटिकङ्खा। कतमे अट्ठ? सुखं सुपति, सुखं पटिबुज्झति, न पापकं सुपिनं पस्सति, मनुस्सानं पियो होति, अमनुस्सानं पियो होति, देवता रक्खन्ति, नास्स अग्गि वा विसं वा सत्थं वा कमति, उत्तरिं अप्पटिविज्झन्तो ब्रह्मलोकूपगो होति। मेत्ताय, भिक्खवे, चेतोविमुत्तिया आसेविताय भाविताय बहुलीकताय यानीकताय वत्थुकताय अनुट्ठिताय परिचिताय सुसमारद्धाय इमे अट्ठानिसंसा पाटिकङ्खा ति।

''यो च मेत्तं भावयति, अप्पमाणं पटिस्सतो। [B.2]
तनू संयोजना होन्ति, पस्सतो उपधिक्खयं॥
''एकं पि चे पाणमदुट्ठचित्तो, मेत्तायति कुसली तेन होति। [R.151]

---

# अष्टक निपात

## १. मैत्रीवर्ग

### प्रथम पञ्चाशत्क

**१. मैत्रीसूत्र : : मैत्री के लिये आठ धर्मों का अभ्यास**

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक द्वारा निर्मापित जेतवनाराम में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को ''भिक्षुओ'' सम्बोधन से बुलाया। भिक्षु आज्ञा शिरोधार्य कर उनके सम्मुख आये। भगवान् ने यह उपदेश किया—

२. ''भिक्षुओ! मैत्रीयुक्त चेतोविमुक्ति की आसेवना से, भावना से, अभ्यास से, मार्गस्थ करने से, वास्तविकता लाने से, स्थिर करने से, परिचित होने से, भली भाँति आरम्भ से आठ अच्छाइयाँ देखने को मिलती है। कौन सी आठ? वह मैत्री भावना करने वाला (१) सुख से सोता है, (२) सुख से जागता है, (३) सोने पर दुःस्वप्न नहीं देखता, (४) मनुष्यों को प्रिय लगता है, (५) अमनुष्यों का भी प्रिय होता है, (६) देवता उसकी रक्षा करते हैं, (७) अग्नि, शस्त्र एवं विष का उस पर कोई प्रभाव नहीं होता, (८) यदि वह इस साधना के बल पर निर्वाण तक न पहुँच सके तो भी ब्रह्मलोक में अवश्य पहुँच जाता है। भिक्षुओ! मैत्रीयुक्त चेतोविमुक्ति के आसेवन से... पूर्ववत् आठ अच्छाइयाँ देखने को मिलती हैं।

''जो स्मृतिपूर्वक अप्रमाण मैत्रीचेतोविमुक्ति की भावना करता है, वह अपने आध्यात्मिक विकारों का क्षय करते हुए संयोजनों में बहुत अधिक कमी कर लेता है॥

सब्बे च पाणे मनसानुकम्पी, पहूतमरियो पकरोति पुञ्ञं॥
''ये सत्तसण्डं पथविं विजेत्वा, राजिसयो यजमाना अनुपरियगा।
सस्समेधं पुरिसमेधं, सम्मापासं वाजपेय्यं निरग्गळं॥
[N.271] मेत्तस्स चित्तस्स सुभावितस्स, कलं पि ते नानुभवन्ति सोळसिं।
चन्दप्पभा तारगणा व सब्बे, यथा न अग्घन्ति कलं पि सोळसिं॥
''यो न हन्ति न घातेति, न जिनाति न जापये।
मेत्तंसो सब्बभूतानं, वेरं तस्स न केनची'' ति॥ ●

**२. पञ्ञासुत्तं :** १. ''अट्ठिमे, भिक्खवे, हेतू अट्ठ पच्चया आदिब्रह्मचरियिकाय पञ्ञाय अप्पटिलद्धाय पटिलाभाय, पटिलद्धाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया संवत्तन्ति। कतमे अट्ठ? इध, भिक्खवे, भिक्खु सत्थारं उपनिस्साय विहरति अञ्ञतरं वा गरुट्ठानियं सब्रह्मचारिं, यत्थस्स तिब्बं हिरोत्तप्पं पच्चुपट्ठितं होति पेमं च गारवो च। अयं, भिक्खवे, पठमो हेतु पठमो पच्चयो आदिब्रह्मचरियिकाय पञ्ञाय अप्पटिलद्धाय पटिलाभाय, पटिलद्धाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया संवत्तति।

२. ''सो तं सत्थारं उपनिस्साय विहरन्तो अञ्ञतरं वा गरुट्ठानियं सब्रह्मचारिं, [R.152, B.3] ] यत्थस्स तिब्बं हिरोत्तप्पं पच्चुपट्ठितं होति पेमं च गारवो च, ते कालेन कालं

---

''यदि कोई किसी एक प्राणी के प्रति भी स्वचित्त में द्वेष न रखकर मैत्री भावना रखता है तो उससे उसका कुशल ही समझो। सब प्राणियों पर हार्दिक अनुकम्पा करने वाला आर्य पुरुष अपने लिये बहुत पुण्य का संग्रह कर लेता है॥

''जिन प्राचीन राजर्षियों ने अश्वमेध, पुरुषमेध, सम्यक्पाश तथा निर्बन्ध वाजपेय आदि विविध यज्ञ कर, उनके प्रभाव से सप्त द्वीपा पृथ्वी पर विजय प्राप्त की थी, वे इस सुभावित मैत्रीचित्त के सोलहवें अंश की भी समानता नहीं करते। इसी प्रकार समस्त तारासमूह के साथ मिलकर चन्द्रमा भी इस मैत्री-भावना के प्रभाव की समानता नहीं कर सकता॥

''जो न किसी की हत्या करता है, न किसी की हत्या के लिये किसी को प्रेरित करता है, न किसी को जीतता है, न किसी को जीतने के लिये प्रेरित करता है वह सब प्राणियों का मित्र बना हुआ किसी के प्रति वैर की कल्पना भी नहीं करता॥'' ●

**२. प्रज्ञासूत्र : : प्रज्ञावर्धक आठ प्रत्यय**

१. ''भिक्षुओ! धर्मसाधना की मूलभूत अप्राप्त प्रज्ञा की प्राप्ति में तथा प्राप्त प्रज्ञा की साधना, अभ्यास, वृद्धि, आधिक्य एवं पूर्ति बढ़ाने में ये आठ प्रत्यय होते हैं। कौन से आठ? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु शास्ता अथवा किसी गुरुस्थानीय धर्मसहचर का, जहाँ यह लज्जा एवं पापभीरुता, प्रेम एवं सम्मान का तीव्र भाव रखता हो, आश्रयण कर साधना करे। भिक्षुओ! यह वैसी प्रज्ञा की प्राप्ति में प्रथम हेतु या प्रत्यय है, जिससे वह प्रज्ञा यदि अप्राप्त है तो प्राप्त हो जायगी, और यदि प्राप्त है तो अभ्यास द्वारा उसमें वृद्धि, उन्नति एवं आधिक्य होने लगेगा। (१)

२. ''वह वहाँ शास्ता ...पूर्ववत्... साधना करता हुआ उनसे समय समय पर धर्मविषयक

उपसङ्कमित्वा परिपुच्छति परिपञ्हति—'इदं, भन्ते, कथं? इमस्स को अत्थो' ति? तस्स ते आयस्मन्तो अविवटं चेव विवरन्ति, अनुत्तानीकतं च उत्तानीकरोन्ति, अनेकविहितेसु च कङ्खाठानियेसु धम्मेसु कङ्खं पटिविनोदेन्ति। अयं, भिक्खवे, दुतियो हेतु दुतियो पच्चयो आदिब्रह्मचरियिकाय पञ्ञाय अप्पटिलद्धाय पटिलाभाय, पटिलद्धाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया संवत्तति।

३. "सो तं धम्मं सुत्वा द्वयेन वूपकासेन सम्पादेति—कायवूपकासेन च चित्तवूपकासेन च। अयं, भिक्खवे, ततियो हेतु ततियो पच्चयो आदिब्रह्मचरियिकाय पञ्ञाय अप्पटिलद्धाय पटिलाभाय, पटिलद्धाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया संवत्तति।

४. "सीलवा होति, पातिमोक्खसंवरसंवुतो विहरति आचारगोचरसम्पन्नो [N.272] अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्सावी, समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु। अयं, भिक्खवे, चतुत्थो हेतु चतुत्थो पच्चयो आदिब्रह्मचरियिकाय पञ्ञाय अप्पटिलद्धाय पटिलाभाय, पटिलद्धाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया संवत्तति।

५. "बहुस्सुतो होति सुतधरो सुतसन्निचयो। ये ते धम्मा आदिकल्याणा मज्झेकल्याणा परियोसानकल्याणा सात्थं सब्यञ्जनं केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं अभिवदन्ति, तथारूपास्स धम्मा बहुस्सुता होन्ति धाता वचसा परिचिता मनसानुपेक्खिता दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा। अयं, भिक्खवे, पञ्चमो हेतु पञ्चमो पच्चयो आदिब्रह्मचरियिकाय पञ्ञाय अप्पटिलद्धाय पटिलाभाय, पटिलद्धाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया संवत्तति।

६. "आरद्धविरियो विहरति अकुसलानं धम्मानं पहानाय, कुसलानं [R.153]

---

यह प्रश्न करे—'भन्ते! यह कैसे हैं? और इसका क्या अर्थ है?' वे उस अस्पष्ट को स्पष्ट करेंगे, संक्षिप्त का विस्तार करेंगे तथा अगम्य को सुगम कर देंगे। इस प्रकार वे उसकी धर्मविषयक सभी शङ्काओं का समाधान करेंगे। भिक्षुओ! यह उस प्रज्ञा की प्राप्ति का दूसरा प्रत्यय है ...पूर्ववत्...। (२)

३. "वह उनसे उस धर्म का श्रवण कर उस पर दो प्रकार से आचरण करता है—काया से भी, चित्त से भी। भिक्षुओ! यह तीसरा प्रत्यय है उस प्रज्ञा की प्राप्ति का ...पूर्ववत्...। (३)

४. "वह शीलवान् एवं प्रातिमोक्ष संवर से संवृत होता है ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यह चतुर्थ प्रत्यय है उस प्रज्ञा की प्राप्ति का ...पूर्ववत्...।

५. "वह बहुश्रुत, श्रुतधर एवं श्रुत का संग्रह करने वाला होता है। वे धर्म जो आदिकल्याण ...पूर्ववत्...। भिक्षुओ! यह पञ्चम प्रत्यय है जो उस प्रज्ञा की पूर्ति का ...पूर्ववत्...। (५)

६. "वह उन अकुशल धर्मों के प्रहाण के लिये... कुशल धर्मों की प्राप्ति के लिये श्रम करता है...। यह षष्ठ हेतु तथा प्रत्यय है जो उस प्रज्ञा की पूर्ति का ...पूर्ववत्...। (६)

धम्मानं उपसम्पदाय, थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु। अयं, भिक्खवे, छट्ठो हेतु छट्ठो पच्चयो आदिब्रह्मचरियिकाय पञ्ञाय अप्पटिलद्धाय पटिलाभाय, पटिलद्धाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया संवत्तति।

[B.4] ७. "सङ्घगतो खो पन अनानाकथिको होति अतिरच्छानकथिको। सामं वा धम्मं भासति परं वा अज्झेसति अरियं वा तुण्हीभावं नातिमञ्ञति। अयं, भिक्खवे, सत्तमो हेतु सत्तमो पच्चयो आदिब्रह्मचरियिकाय पञ्ञाय अप्पटिलद्धाय पटिलाभाय, पटिलद्धाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया संवत्तति।

८. "पञ्चसु खो पन उपादानक्खन्धेसु उदयब्बयानुपस्सी विहरति—'इति रूपं, इति, रूपस्स समुदयो, इति रूपस्स अत्थङ्गमो; इति वेदना, इति वेदनाय समुदयो, इति वेदनाय अत्थङ्गमो; इति सञ्ञा ...पे०... इति सङ्खारा... इति विञ्ञाणं, इति विञ्ञाणस्स समुदयो, इति विञ्ञाणस्स अत्थङ्गमो' ति। अयं, भिक्खवे, अट्ठमो हेतु अट्ठमो पच्चयो आदिब्रह्मचरियिकाय पञ्ञाय अपटिलद्धाय पटिलाभाय, पटिलद्धाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया संवत्तति।

[N.273] ९. "तमेनं सब्रह्मचारी एवं सम्भावेन्ति—'अयं खो आयस्मा सत्थारं उपनिस्साय विहरति अञ्ञतरं वा गरुट्ठानियं सब्रह्मचारिं, यत्थस्स तिब्बं हिरोत्तप्पं पच्चुपट्ठितं होति पेमं च गारवो च। अद्धा अयमायस्मा जानं जानाति पस्सं पस्सती' ति! अयं पि धम्मो पियत्ताय गरुत्ताय भावनाय सामञ्ञाय एकीभावाय संवत्तति।

१०. "'तं खो पनायमायस्मा सत्थारं उपनिस्साय विहरन्तो अञ्ञतरं वा गरुट्ठानियं सब्रह्मचारिं, यत्थस्स तिब्बं हिरोत्तप्पं पच्चुपट्ठितं होति पेमं च गारवो च, ते कालेन कालं

---

७. "सङ्घ में बैठकर वह न लौकिक कथा आरम्भ करता है और न पशु-पक्षी या भूत-प्रेतों की बातें आरम्भ करता है। वह उस समय या तो स्वयं धर्मविषयक बातें करता है, या दूसरों से कहते हुए सुनता है या फिर चुप बैठा रहता है। भिक्षुओ! यह सप्तम हेतु या प्रत्यय है जो उस प्रज्ञा की प्राप्ति का ...पूर्ववत्...। (७)

८. "वह पाँचों उपादानस्कन्धों की उत्पत्ति एवं विनाश का ज्ञाता होता है—'यह रूप है... यह वेदना है... यह संज्ञा है... यह संस्कार है... यह विज्ञान है... यह विज्ञान का उत्पाद एवं विनाश है'। यह भिक्षुओ! अष्टम हेतु या प्रत्यय है जो उस प्रज्ञा की प्राप्ति का ...पूर्ववत्...। (८) (क)

९. "इस प्रकार उसके साधनाक्रम को देखकर उसके साथी उसके विषय में सोचते हैं—'यह आयुष्मान् शास्ता या उसके समान उसके किसी अन्य शिष्य के आश्रय से जानने योग्य को जानता है, साक्षात्करणीय को साक्षात् करता है।' यह बात भी उसके सर्वप्रिय एवं सबसे सम्मानित होने के कारण उसकी साधना, उसके श्रामण्य तथा उसकी धर्म के साथ एकता में वृद्धि ही करती है। (१)

१०. "इस प्रकार उसको अपने शास्ता से धर्मविषयक जिज्ञासा करते देखकर उसके साथी उसके विषय में यही सोचते हैं कि यह आयुष्मान् ...पूर्ववत्...। यह बात भी...। (२)

उपसङ्कमित्वा परिपुच्छति परिपञ्हति—इदं, भन्ते, कथं? इमस्स को अत्थो ति? [R.154] तस्स ते आयस्मन्तो अविवटं चेव विवरन्ति, अनुत्तानीकतं च उत्तानीकरोन्ति, अनेकविहितेसु च कङ्खाठानियेसु धम्मेसु कङ्खं पटिविनोदेन्ति। अद्धा अयमायस्मा जानं जानाति पस्सं पस्सती' ति! अयं पि धम्मो पियत्ताय गरुत्ताय भावनाय सामञ्ञाय एकीभावाय संवत्तति।

११. '''तं खो पनायमायस्मा धम्मं सुत्वा द्वयेन वूपकायेन सम्पादेति—कायवूपकासेन च चित्तवूपकासेन च। अद्धा अयमायस्मा जानं जानाति पस्सं पस्सती' ति! अयं पि धम्मो पियत्ताय गरुत्ताय भावनाय सामञ्ञाय एकीभावाय संवत्तति।

१२. '''सीलवा खो पनायमायस्मा पातिमोक्खसंवरसंवुतो विहरति [B.5] आचारगोचरसम्पन्नो अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्सावी, समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु। अद्धा अयमायस्मा जानं जानाति पस्सं पस्सती' ति! अयं पि धम्मो पियत्ताय गरुत्ताय भावनाय सामञ्ञाय एकीभावाय संवत्तति।

१३. '''बहुस्सुतो खो पनायमायस्मा सुतधरो सुतसन्निचयो। ये ते धम्मा आदिकल्याणा मज्झेकल्याणा परियोसानकल्याणा सात्थं सब्यञ्जनं केवलपरिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं अभिवदन्ति, तथारूपास्स धम्मा बहुस्सुता होन्ति धाता वचसा परिचिता मनसानुपेक्खिता दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा। अद्धा अयमायस्मा जानं जानाति पस्सं पस्सती' ति! अयं पि धम्मो पियत्ताय गरुत्ताय भावनाय सामञ्ञाय एकीभावाय संवत्तति।

१४. '''आरद्धविरियो खो पनायमायस्मा विहरति अकुसलानं धम्मानं [N.274] पहानाय, कुसलानं धम्मानं उपसम्पदाय, थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु। अद्धा अयमायस्मा जानं जानाति पस्सं पस्सती' ति! अयं पि धम्मो पियत्ताय गरुत्ताय भावनाय सामञ्ञाय एकीभावाय संवत्तति।

१५. '''सङ्गतो खो पनायमायस्मा अनानाकथिको होति अतिरच्छान- [R.155] कथिको। सामं वा धम्मं भासति परं वा अज्झेसति अरियं वा तुण्हीभावं नातिमञ्ञति। अद्धा

---

११. ''इस प्रकार उसको, धर्मश्रवण के बाद उसके द्वारा काय एवं चित्त से उस पर आचरण करते देखकर उसके विषय में यही सोचते हैं कि यह आयुष्मान् ...पूर्ववत्...। यह बात भी...। (३)

१२. ''वह जब शीलवान् होकर प्रातिमोक्षसंवर से संवृत होकर साधना करता है... तब इसके साथी इसे ऐसी साधना में रत देखकर इसके विषय में सोचने लगते हैं—यह आयुष्मान् ...पूर्ववत्...। यह बात भी ...पूर्ववत्...। (४)

१३. ''वह जब बहुश्रुत, श्रुतधर एवं श्रुत का संग्रह करने वाला होता है। जो धर्म ...पूर्ववत्...। यह बात भी ...पूर्ववत्...। (५)

१४. ''वह जब साधनारत होकर अकुशल धर्मों के प्रहाण एवं कुशल धर्मों के संग्रह के लिये ...पूर्ववत्...। यह बात भी ...पूर्ववत्...। (६)

१५. ''वह जब सङ्घ में बैठकर अन्य संसारकथा या पशु-पक्षियों की बातें न कर या तो स्वयं

अयमायस्मा जानं जानाति पस्सं पस्सती' ति! अयं पि धम्मो पियत्ताय गरुत्ताय भावनाय सामञ्ञाय एकीभावाय संवत्तति।

१६. '''पञ्चसु खो पनायमायस्मा उपादानक्खन्धेसु उदयब्बयानुपस्सी विहरति— इति रूपं, इति रूपस्स समुदयो, इति रूपस्स अत्थङ्गमो; इति वेदना ...पे०... इति सञ्ञा... इति सङ्खारा... इति विञ्ञाणं, इति विञ्ञाणस्स समुदयो, इति विञ्ञाणस्स अत्थङ्गमो ति। अद्धा अयमायस्मा जानं जानाति पस्सं पस्सती' ति! अयं पि धम्मो पियत्ताय गरुत्ताय भावनाय सामञ्ञाय एकीभावाय संवत्तति।

१७. ''इमे खो, भिक्खवे, अट्ठ हेतू अट्ठ पच्चया आदिब्रह्मचरियिकाय पञ्ञाय अप्पटिलद्धाय पटिलाभाय, पटिलद्धाय भिय्योभावाय वेपुल्लाय भावनाय पारिपूरिया संवत्तन्ती'' ति॥ ●

[B.6] **३. पठमअप्पियसुत्तं** : १. ''अट्ठहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु सब्रह्मचारीनं अप्पियो च होति अमनापो च अगरु च अभावनीयो च। कतमेहि अट्ठहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु अप्पियपसंसी च होति, पियगरही च, लाभकामो च, सक्कारकामो, च अहिरिको च, अनोत्तप्पी, च पापिच्छो च, मिच्छादिट्ठि च। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु सब्रह्मचारीनं अप्पियो च होति अमनापो च अगरु च अभावनीयो च।

२. ''अट्ठहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु सब्रह्मचारीनं पियो च होति [N.275,R.156] मनापो च गरु च भावनीयो च। कतमेहि अट्ठहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु न

---

धर्मकथा करता है या दूसरों द्वारा धर्मकथा कहते हुए सुनता है ...पूर्ववत्...। यह बात भी ...पूर्ववत्...। (७)

१६. ''जब वह पाँचों उपादानस्कन्धों में उत्पाद एवं विनाश को समझ लेता है—यह रूप है ...पूर्ववत्...। यह बात भी उसके सबका प्रिय एवं सम्मानित होने के कारण उसकी साधना, श्रामण्य एवं एकता की कारक होगी। (८) (ख)

१७. ''भिक्षुओ! ये आठ हेतु या आठ प्रत्यय उस धर्मसाधना की आदिभूत अप्राप्त प्रज्ञा की प्राप्ति एवं प्राप्त प्रज्ञा की अधिकता, विपुलता एवं साधना की पूर्ति में सहायक होते हैं॥'' ●

**३. प्रथम अप्रियसूत्र : : साथियों से सम्मानप्राप्ति में आठ बाधक**

१. भिक्षुओ! इन आठ धर्मों से युक्त भिक्षु अपने साथियों में अप्रिय, उनके प्रतिकूल, तथा उनका असम्मान पाने लगता है। किन आठ धर्मों से? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु अपने साथियों के अप्रिय की प्रशंसा करने लगता है, प्रिय की निन्दा करता है, अपना ही लाभ चाहता है, अपना ही सत्कार चाहता है, निर्लज्ज होता है, पापभीरु नहीं होता, पापकर्म की इच्छा करता है तथा मिथ्यादृष्टि होता है। भिक्षुओ! इन आठ धर्मों से युक्त भिक्षु अपने साथियों का अप्रिय एवं उनसे अपमान ही प्राप्त करता है। (क)

२. (परन्तु) ''भिक्षुओ! इन आठ धर्मों से युक्त भिक्षु अपने साथियों का प्रेम एवं सम्मान प्राप्त

अप्पियपसंसी च होति, न पियगरही च, न लाभकामो च, न सक्कारकामो च, हिरीमा च होति, ओत्तप्पी च, अप्पिच्छो च, सम्मादिट्ठि च। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु सब्रह्मचारीनं पियो च होति मनापो च गरु च भावनीयो चा'' ति॥ ●

**४. दुतियअप्पियसुत्तं :** १. ''अट्ठहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु सब्रह्मचारीनं अप्पियो च होति अमनापो च अगरु च अभावनियो च। कतमेहि अट्ठहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु लाभकामो च होति, सक्कारकामो च, अनवञ्ञत्तिकामो च, अकालञ्ञू च, अमत्तञ्ञू च, असुचि च, बहुभाणी च, अक्कोसकपरिभासको च सब्रह्मचारीनं। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु सब्रह्मचारीनं अप्पियो च होति अमनापो च अगरु च अभावनीयो च।

२. ''अट्ठहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु सब्रह्मचारीनं पियो च होति मनापो च गरु च भावनियो च। कतमेहि अट्ठहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु न लाभकामो च होति, सक्कारकामो च, न अनवञ्ञत्तिकामो च, कालञ्ञू च, मत्तञ्ञू च, सुचि च, न बहुभाणी च, अक्कोसकपरिभासको च सब्रह्मचारीनं। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु सब्रह्मचारीनं पियो च होति मनापो च गरु च भावनीयो चा'' ति॥ ●

**५. पठमलोकधम्मसुत्तं :** १. ''अट्ठिमे, भिक्खवे, लोकधम्मा लोकं अनुपरि-

---

करता है, गौरव एवं श्रद्धा प्राप्त करता है। किन आठ धर्मों से? भिक्षुओ! जो भिक्षु अपने साथियों के अप्रिय की प्रशंसा नहीं करता, प्रिय की निन्दा नहीं करता, न स्वयं के लिये ही लाभ चाहता है, न स्वयं के लिये ही सत्कार चाहता है, लज्जालु एवं पापभीरु होता है, अल्पेच्छ (सन्तोषी) होता है तथा सम्यग्दृष्टि होता है। भिक्षुओ! इन आठ धर्मों से युक्त भिक्षु अपने साथियों में प्रेम, मनोनुकूलता, गौरव एवं श्रद्धा प्राप्त करता है॥'' (ख) ●

**४. द्वितीय अप्रियसूत्र : : साथियों के प्रेम में आठ धर्म बाधक, साधक**

१. ''भिक्षुओ! आठ धर्मों से युक्त भिक्षु अपने साथियों में अप्रिय ...पूर्ववत्...। किन आठ धर्मों से? जो भिक्षु अपना ही लाभ चाहता है, अपना ही सत्कार चाहता है, दूसरों की अवज्ञा (उपेक्षा) करता है, न समय को पहचानता है, न मात्रा को जानता है, काय वाक् मन से अपवित्र रहता है, व्यर्थ बहुत बोलता है, साथियों की निन्दा तथा उनको अपशब्द बोलता है। भिक्षुओ! इन आठ धर्मों से युक्त भिक्षु साथियों का अप्रिय, प्रतिकूल, श्रद्धा एवं सम्मान का अपात्र होता है। (क)

२. (परन्तु) भिक्षुओ! इन आठ धर्मों से युक्त भिक्षु अपने साथियों में प्रिय ...पूर्ववत्...। किन आठ धर्मों से? जो भिक्षु न अपना ही लाभ चाहता है, न अपना ही सत्कार, न किसी की अवज्ञा करता है, समय पहचान कर बात करता है, मात्रा को भी जानता है, काय वाक् मन से पवित्र रहता है, मितभाषी होता है, साथियों की निन्दा या उनको कटु शब्द नहीं बोलता। इन आठ धर्मों से युक्त भिक्षु साथियों का प्रिय, अनुकूल, श्रद्धेय एवं माननीय होता है॥'' (ख) ●

**५. प्रथम लोकधर्मसूत्र : : आठ लोकधर्म**

१. भिक्षुओ! ये आठ लोकधर्म लोगों को अपनी ओर खींचते रहते हैं तथा लोग भी इन

[B.7] वत्तन्ति, लोको च अट्ठ लोकधम्मे अनुपरिवत्तति। कतमे अट्ठ? लाभो च, अलाभो [R.157] च, यसो च, अयसो च, निन्दा च, पसंसा च, सुखं च, दुक्खं च—इमे खो, भिक्खवे, अट्ठ लोकधम्मा लोकं अनुपरिवत्तन्ति, लोको च इमे अट्ठ लोकधम्मे अनुपरिवत्तती ति।

"लाभो अलाभो च यसायसो च, निन्दा पसंसा च सुखं दुखं च।
एते अनिच्चा मनुजेसु धम्मा, असस्सता विपरिणामधम्मा॥
[N.276] "एते च ञत्वा सतिमा सुमेधो, अवेक्खति विपरिणामधम्मे।
इट्ठस्स धम्मा न मथेन्ति चित्तं, अनिट्ठतो नो पटिघातमेति॥
"तस्सानुरोधा अथवा विरोधा, विधूपिता अत्थङ्गता न सन्ति।
पदं च ञत्वा विरजं असोकं, सम्मप्पजानाति भवस्स पारगू" ति॥

६. **दुतियलोकधम्मसुत्तं** : १. "अट्ठिमे, भिक्खवे, लोकधम्मा लोकं अनुपरिवत्तन्ति, लोको च अट्ठ लोकधम्मे अनुपरिवत्तति। कतमे अट्ठ? लाभो च, अलाभो च, यसो च, अयसो च, निन्दा च, पसंसा च, सुखं च, दुक्खं च—इमे खो, भिक्खवे, अट्ठ लोकधम्मा लोकं अनुपरिवत्तन्ति, लोको च इमे अट्ठ लोकधम्मे अनुपरिवत्तति।

२. "अस्सुतवतो, भिक्खवे, पुथुज्जनस्स उप्पज्जति लाभो पि अलाभो पि यसो पि अयसो पि निन्दा पि पसंसा पि सुखं पि दुक्खं पि; सुतवतो पि, भिक्खवे, अरियसावकस्स

---

आठ धर्मों के पीछे खिंचे चले जाते हैं। कौन से आठ? लाभ एवं हानि, यश एवं अपयश, निन्दा एवं स्तुति (प्रशंसा), सुख एवं दुःख—भिक्षुओ! ये आठ लोकधर्म लोगों को अपनी ओर खींचते रहते हैं तथा लोग भी इन आठ धर्मों की ओर खिंचे चले जाते हैं।

"लाभ हानि, यश अपयश, निन्दा प्रशंसा, एवं सुख दुःख—मनुष्यों में ये धर्म अनित्य हैं, अशाश्वत एवं विनाशधर्म को प्राप्त होने वाले हैं॥

"कोई स्मृतिमान् एवं मेधावी पुरुष इनको जानकर इनके नाशधर्मा होने पर विचार करता है। तब इनमें कोई धर्म इसको इष्ट (प्रिय) हो तो वह इसके चित्त को विचलित नहीं करता; तथा यदि कोई अनिष्ट (प्रतिकूल) हो तो वह उससे व्यथित नहीं होता॥

"उसके अनुरोध या विरोध से विकीर्ण (बिखरे हुए) ये धर्म नष्ट हो जाते हैं, उनकी सत्ता नहीं रहती तथा वह साधक निर्मल एवं वीतशोक धर्म (निर्वाण) को जान (साक्षात्) कर भवसागर पार कर जाता है॥"

**६. द्वितीय लोकधर्मसूत्र : : आठ लोक धर्म**

१. "भिक्षुओ! ये आठ लोकधर्म ...पूर्ववत्... तथा लोग इन आठ धर्मों के पीछे खिंचे चले आते हैं।

२. "भिक्षुओ! जिनने धर्मश्रवण नहीं किया है उनको भी लाभ अलाभ, यश अपयश, निन्दा प्रशंसा एवं सुख दुःख का अनुभव होता है; तथा जो श्रुतवान् हैं उनको भी इन धर्मों का अनुभव होता

उप्पज्जति लाभो पि अलाभो पि यसो पि अयसो पि निन्दा पि पसंसा पि सुखं पि [R.158] दुक्खं पि। तत्र, भिक्खवे, को विसेसो को अधिप्पयासो किं नानाकरणं सुतवतो अरियसावकस्स अस्सुतवता पुथुज्जनेना'' ति?

''भगवम्मूलका नो, भन्ते, धम्मा भगवन्नेत्तिका भगवम्पटिसरणा। साधु वत, [B.8] भन्ते, भगवन्तंयेव पटिभातु एतस्स भासितस्स अत्थो। भगवतो सुत्वा भिक्खू धारेस्सन्ती'' ति।

३. ''तेन हि, भिक्खवे, सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—''अस्सुतवतो, भिक्खवे, पुथुज्जनस्स उप्पज्जति लाभो। सो न इति पटिसञ्चिक्खति—'उप्पन्नो खो मे अयं लाभो; सो च खो अनिच्चो दुक्खो विपरिणामधम्मो' ति यथाभूतं नप्पजानाति। उप्पज्जति [N.277] अलाभो ...पे०... उप्पज्जति यसो... उप्पज्जति अयसो... उप्पज्जति निन्दा... उप्पज्जति पसंसा... उप्पज्जति सुखं... उप्पज्जति दुक्खं। सो न इति पटिसञ्चिक्खति—'उप्पन्नं खो मे इदं दुक्खं; तं च खो अनिच्चं दुक्खं विपरिणामधम्मं' ति यथाभूतं नप्पजानाति।

४. ''तस्स लाभो पि चित्तं परियादाय तिट्ठति, अलाभो पि चित्तं परियादाय तिट्ठति, यसो पि चित्तं परियादाय तिट्ठति, अयसो पि चित्तं परियादाय तिट्ठति, निन्दा पि चित्तं परियादाय तिट्ठति, पसंसा पि चित्तं परियादाय तिट्ठति, सुखं पि चित्तं परियादाय तिट्ठति, दुक्खं पि चित्तं परियादाय तिट्ठति। सो उप्पन्नं लाभं अनुरुज्झति, अलाभे पटिविरुज्झति; उप्पन्नं यसं अनुरुज्झति, अयसे पटिविरुज्झति; उप्पन्नं पसंसं अनुरुज्झति, निन्दाय पटि-विरुज्झति; उप्पन्नं सुखं अनुरुज्झति, दुक्खे पटिविरुज्झति। सो एवं अनुरोधविरोधसमापन्नो न

---

है, तब, भिक्षुओ! अश्रुतवान् एवं श्रुतवान्—इन दोनों में क्या विशेषता है, क्या अन्तर है, क्या भेद है?''

''भन्ते! धर्मनिर्णय में तो आप ही हमारे मूल हैं, आप ही हमारे मार्गदर्शक हैं, हम आपके शरणागत हैं। अच्छा हो, भन्ते! कि आपको यह उचित लगे कि आप हमें इसका भेद बतावें। आपसे सुनकर हम भिक्षु भी उसको अपने मन में बैठा लेंगे।''

३. ''तो, भिक्षुओ! सुनो, ठीक से मन में बैठा लो। मैं बताता हूँ।''

भिक्षुओं ने भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य की। भगवान् यह बोले—''भिक्षुओ! वह अश्रुतवान् यह विचार नहीं करता—'मुझको यह लाभ मिला है' और न वह यही बात ठीक से जानता है कि यह लाभ अनित्य, दु:खमय एवं विनाशी है। यही स्थिति अलाभ, यश, अपयश, निन्दा, प्रशंसा, सुख एवं दु:ख के विषय में भी होती है। वह इनके विषय में भी ठीक से नहीं जानता।

४. ''उसका वह लाभ उसके चित्त को पूर्णत: वश में कर बैठता है, अलाभ भी... यश भी... अपयश भी... निन्दा भी... प्रशंसा भी... सुख भी... दु:ख भी चित्त को पूर्णत: वश में कर लेता है। वह उत्पन्न लाभ का अनुरोध करता है, अलाभ का विरोध करता है; उत्पन्न यश का अनुरोध करता है, अपयश का विरोध करता है; उत्पन्न प्रशंसा का अनुरोध करता है, निन्दा का विरोध करता है; उत्पन्न सुख का अनुरोध करता है तथा दु:ख का विरोध करता है। इस प्रकार वह अनुरोध एवं विरोध

परिमुच्चति जातिया जराय मरणेन सोकेहि परिदेवेहि दुक्खेहि दोमनस्सेहि उपायासेहि। 'न परिमुच्चति दुक्खस्मा' ति वदामि।

५. ''सुतवतो च खो, भिक्खवे, अरियसावकस्स उप्पज्जति लाभो। सो इति पटिसञ्चिक्खति—'उप्पन्नो खो मे अयं लाभो; सो च खो अनिच्चो दुक्खो विपरिणाम- [R.159] धम्मो' ति यथाभूतं पजानाति। उप्पज्जति अलाभो ...पे०.. उप्पज्जति यसो... उप्पज्जति अयसो... उपज्जति निन्दा... उप्पज्जति पसंसा... उप्पज्जति सुखं... उप्पज्जति दुक्खं। सो इति पटिसञ्चिक्खति—'उप्पन्नं खो मे इदं दुक्खं; तं च खो अनिच्चं दुक्खं विपरिणामधम्मं' ति यथाभूतं पजानाति।

६. ''तस्स लाभो पि चित्तं न परियादाय तिट्ठति, अलाभो पि चित्तं न परियादाय [B.9] तिट्ठति, यसो पि चित्तं न परियादाय तिट्ठति, अयसो पि चित्तं न परियादाय तिट्ठति, निन्दा पि चित्तं न परियादाय तिट्ठति, पसंसा पि चित्तं न परियादाय तिट्ठति, सुखं पि चित्तं न परियादाय तिट्ठति, दुक्खं पि चित्तं न परियादाय तिट्ठति। सो उप्पन्नं लाभं नानुरुज्झति, अलाभे नप्पटिविरुज्झति; उप्पन्नं यसं नानुरुज्झति, अयसे नप्पटिविरुज्झति; उप्पन्नं पसंसं नानुरुज्झति, निन्दाय नप्पटिविरुज्झति; उप्पन्नं सुखं नानुरुज्झति, दुक्खे नप्पटिविरुज्झति। सो एवं अनुरोधविरोधविप्पहीनो परिमुच्चति जातिया जराय मरणेन सोकेहि परिदेवेहि दुक्खेहि [N.278] दोमनस्सेहि उपायासेहि। 'परिमुच्चति दुक्खस्मा' ति वदामि। अयं, खो, भिक्खवे, विसेसो अयं अधिप्पयासो इदं नानाकरणं सुतवतो अरियसावकस्स अस्सुतवता पुथुज्जनेना ति।

''लाभो अलाभो च यसायसो च, निन्दा पसंसा च सुखं दुखं च।

---

करता हुआ जन्म, जरा, मरण, शोक, परिदेव, दुःख आदि से छुटकारा नहीं पाता। संक्षेप में, 'वह दुःख से नहीं छूटता'—ऐसा मेरा मानना है।

५. (इसके विपरीत) ''जब श्रुतवान् आर्यश्रावक को कोई लाभ मिलता है तो वह उस लाभ के विषय में विचार करता है—'मुझे यह लाभ हुआ है।' तथा वह उसके विषय में यह भी जानता है कि यह अनित्य दुःखमय एवं विनाशधर्म वाला है। इसी प्रकार अलाभ... यश... अपयश... निन्दा... प्रशंसा... सुख... दुःख के विषय में भी यही सोचता है और यह भी यथार्थतः जानता है कि यह अनित्य दुःखमय एवं विनाश धर्म वाला है।

६. ''उसका वह लाभ भी उसके चित्त को पूर्णतः वश में नहीं कर पाता; अलाभ भी.. यश भी... अपयश भी..., नित्य भी.... प्रशंसा भी..., सुख भी... दुःख भी...। वह न उत्पन्न लाभ का अनुरोध करता है, न अलाभ का विरोध ही, न उत्पन्न यश का अनुरोध ही करता है, न अपयश का विरोध ही; न उत्पन्न प्रशंसा का अनुरोध करता है, न निन्दा का विरोध ही; न उत्पन्न सुख का अनुरोध करता है, न उत्पन्न दुःख का विरोध ही करता है। इस प्रकार वह इन अनुरोध-विरोधों से रहित होकर जाति, जरा, मरण... दुःख एवं पश्चात्ताप से छुटकारा पा जाता है। संक्षेप में—'वह दुःख से मुक्त हो गया'—ऐसा मैं कहता हूँ।

एते अनिच्चा मनुजेसु धम्मा, असस्सता विपरिणामधम्मा॥
''एते च ञत्वा सतिमा सुमेधो, अवेक्खति विपरिणामधम्मे।
इट्ठस्स धम्मा न मथेन्ति चित्तं, अनिट्ठतो नो पटिघातमेति॥
''तस्सानुरोधा अथ वा विरोधा, विधूपिता अत्थङ्गता न सन्ति। [R.160]
पदं च ञत्वा विरजं असोकं, सम्मप्पजानाति भवस्स पारगू'' ति॥

**७. देवदत्तविपत्तिसुत्तं :** १. ''एकं समयं भगवा राजगहे विहरति गिज्झकूटे पब्बते अचिरपक्कन्ते देवदत्ते। तत्र भगवा देवदत्तं आरब्भ भिक्खू आमन्तेसि—''साधु, भिक्खवे, भिक्खु कालेन कालं अत्तविपत्तिं पच्चवेक्खिता होति। साधु, भिक्खवे, भिक्खु कालेन कालं परविपत्तिं पच्चवेक्खिता होति। साधु, भिक्खवे, भिक्खु कालेन कालं अत्तसम्पत्तिं पच्चवेक्खिता होति। साधु, भिक्खवे, भिक्खु कालेन कालं परसम्पत्तिं [B.10] पच्चवेक्खिता होति। अट्ठहि, भिक्खवे, असद्धम्मेहि अभिभूतो परियादिन्नचित्तो देवदत्तो आपायिको नेरयिको कप्पट्ठो अतेकिच्छो।

२. ''कतमेहि अट्ठहि? लाभेन हि, भिक्खवे, अभिभूतो परियादिन्नचित्तो देवदत्तो आपायिको नेरयिको कप्पट्ठो अतेकिच्छो। अलाभेन, भिक्खवे, ...पे०... यसेन... अयसेन... सक्कारेन... असक्कारेन... पापिच्छताय... पापमित्तताय, भिक्खवे, अभिभूतो परियादिन्नचित्तो देवदत्तो आपायिको नेरयिको कप्पट्ठो अतेकिच्छो। इमेहि खो, भिक्खुवे, अट्ठहि असद्धम्मेहि अभिभूतो परियादिन्नचित्तो देवदत्तो आपायिको नेरयिको कप्पट्ठो [N.279] अतेकिच्छो।

---

''भिक्षुओ! इन श्रुतवान् एवं अश्रुतवान्—दोनों में यही विशेषता है, यही अन्तर है, यही भेद है॥

''लाभ अलाभ, यश अपयश ...पूर्ववत्... भवसागर को पार कर जाता है॥''

**७. देवदत्तविपत्तिसूत्र : : आठ धर्म विपत्तिदायक**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) राजगृह के गृध्रकूट पर्वत पर साधनाहेतु विराजमान थे। जबकि देवदत्त वहाँ से कुछ ही समय पहले गया था। भगवान् ने भिक्षुओं को बुलाकर यह उपदेश किया—''अच्छा हो, भिक्षुओ! कोई भिक्षु समय समय पर आत्मविपत्ति का प्रत्यवेक्षण करे।... परविपत्ति का...। ...आत्मसम्पत्ति का... परसम्पत्ति का प्रत्यवेक्षण करे। भिक्षुओ! आठ असद्धर्मों के वश में होकर, उसका चित्त उनसे घिरा हुआ होने के कारण, देवदत्त अपायभूत दुर्गतिमय नरक में कल्प पर्यन्त के लिये जा गिरेगा। इसकी अब कोई चिकित्सा (निवृत्ति का उपाय) नहीं है।

२. ''किन आठ धर्मों से? भिक्षुओ! लाभ के वश होकर, उसमें अपने चित्त को सर्वथा लगाकर देवदत्त... अलाभ के वश होकर... यश के वश होकर... अपयश के वश होकर... सत्कार के वश होकर... असत्कार के वश होकर... पाप करने की इच्छा के वश होकर... पापमित्रों के वश होकर, उनमें ही अपना चित्त लगाकर देवदत्त अपायभूत नरकगामी होने की तय्यारी कर रहा है।

३. "साधु, भिक्खवे, भिक्खु उप्पन्नं लाभं अभिभुय्य अभिभुय्य विहरेय्य, उप्पन्नं [R.161] अलाभं ...पे०... उप्पन्नं यसं... उप्पन्नं अयसं... उप्पन्नं सक्कारं... उप्पन्नं असक्कारं... उप्पन्नं पापिच्छतं... उप्पन्नं पापमित्ततं अभिभुय्य अभिभुय्य विहरेय्य।

४. "किञ्च, भिक्खवे, भिक्खु अत्थवसं पटिच्च उप्पन्नं लाभं अभिभुय्य अभिभुय्य विहरेय्य? उप्पन्नं अलाभं ...पे०... उप्पन्नं यसं... उप्पन्नं अयसं... उप्पन्नं सक्कारं... उप्पन्नं असक्कारं... उप्पन्नं पापिच्छतं... उप्पन्नं पापमित्ततं अभिभुय्य अभिभुय्य विहरेय्य?

५. "यं हिस्स, भिक्खवे, उप्पन्नं लाभं अनभिभुय्य विहरतो उप्पज्जेय्युं आसवा विघातपरिळाहा, उप्पन्नं लाभं अभिभुय्य विहरतो एवंस ते आसवा विघातपरिळाहा न होन्ति। यं हिस्स, भिक्खवे, उप्पन्नं अलाभं ...पे०... उप्पन्नं यसं... उप्पन्नं अयसं... उप्पन्नं सक्कारं... उप्पन्नं असक्कारं... उप्पन्नं पापिच्छतं... उप्पन्नं पापमित्ततं अनभिभुय्य विहरतो उप्पज्जेय्युं आसवा विघातपरिळाहा, उप्पन्नं पापमित्ततं अभिभुय्य विहरतो एवंस ते आसवा विघातपरिळाहा न होन्ति। इदं खो, भिक्खवे, भिक्खु अत्थवसं पटिच्च उप्पन्नं लाभं अभिभुय्य अभिभुय्य विहरेय्य, उप्पन्नं अलाभं ...पे०... उप्पन्नं यसं... उप्पन्नं अयसं उप्पन्नं सक्कारं... उप्पन्नं असक्कारं... उप्पन्नं पापिच्छतं... उप्पन्नं पापमित्ततं अभिभुय्य अभिभुय्य विहरेय्य।

[B.11] ६. "तस्मातिह, भिक्खवे, एवं सिक्खितब्बं—'उप्पन्नं लाभं अभिभुय्य अभिभुय्य विहरिस्साम, उप्पन्नं अलाभं ...पे०... उप्पन्नं यसं... उप्पन्नं अयसं... उप्पन्नं सक्कारं... उप्पन्नं असक्कारं... उप्पन्नं पापिच्छतं... उप्पन्नं पापमित्ततं अभिभुय्य अभिभुय्य विहरिस्सामा' ति। एवं हि वो, भिक्खवे, सिक्खितब्बं" ति॥ ●

**८. उत्तरविपत्तिसुत्तं** : १. एकं समयं आयस्मा उत्तरो महिसवत्थुस्मिं विहरति

---

इसकी कोई चिकित्सा नहीं है। भिक्षुओ! इन आठ धर्मों से युक्त देवदत्त कल्पपर्यन्त नरक जाने की तय्यारी कर रहा है।

३. "अच्छा हो, भिक्षुओ! कोई भिक्षु उत्पन्न लाभ को... अलाभ को... यश को... अपयश को... सत्कार को... असत्कार को... पापेच्छा को... पापमित्रों को दूर रखता हुआ साधना करे।

४. "भिक्षुओ! किस कारण से भिक्षु लाभ को... पापमित्रों को दूर रखकर साधना करे?

५. "भिक्षुओ! लाभ को दूर न रखकर साधना करते समय उसको जो कष्टप्रद चित्तविकार उत्पन्न होने लगते हैं वे लाभ को दूर रखकर साधना करने से उत्पन्न नहीं होंगे। अलाभ... पापमित्रों को... दूर रखकर साधना करने से उत्पन्न नहीं होंगे।

६. "अत:, भिक्षुओ! तुमको यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये—'उत्पन्न लाभ को... अलाभ को... यश को... अपयश को... सत्कार को... असत्कार को... पापेच्छा को... पापमित्रों को दूर रखकर ही हम साधना करेंगे।' भिक्षुओ! तुमको यह सीखना चाहिये॥" ●

सङ्खेय्यके पब्बते वटजालिकाय। तत्र खो आयस्मा उत्तरो भिक्खू आमन्तेसि—[R.162] ''साधावुसो, भिक्खवे, कालेन कालं अत्तविपत्तिं पच्चवेक्खिता होति। साधावुसो, [N.280] भिक्खु, कालेन कालं परविपत्तिं पच्चवेक्खिता होति। साधावुसो, भिक्खु कालेन कालं अत्तसम्पत्तिं पच्चवेक्खिता होति। साधावुसो, भिक्खु कालेन कालं परसम्पत्तिं पच्चवेक्खिता होती'' ति।

२. तेन खो पन समयेन वेस्सवणो महाराजा उत्तराय दिसाय दक्खिणं दिसं गच्छति केनचिदेव करणीयेन। अस्सोसि खो वेस्सवणो महाराजा आयस्मतो उत्तरस्स महिस-वत्थुस्मिं सङ्खेय्यके पब्बते वटजालिकायं भिक्खूनं एवं धम्मं देसेन्तस्स—''साधावुसो, भिक्खु कालेन कालं अत्तविपत्तिं पच्चवेक्खिता होति। साधावुसो, भिक्खु कालेन कालं परविपत्तिं पच्चवेक्खिता होति। साधावुसो, भिक्खु कालेन कालं अत्तसम्पत्तिं पच्चवेक्खिता होति। साधावुसो, भिक्खु कालेन कालं परसम्पत्तिं पच्चवेक्खिता होती'' ति।

३. अथ खो वेस्सवण्णो महाराजा—सेय्यथापि नाम बलवा पुरिसो सम्मिञ्जितं वा बाहं पसारेय्य, पसारितं वा बाहं सम्मिञ्जेय्य, एवमेव—महिसवत्थुस्मिं सङ्खेय्यके पब्बते वटजालिकायं अन्तरहितो देवेसु तावतिंसेसु पातुरहोसि। अथ खो वेस्सवणो महाराजा येन सक्को देवानमिन्दो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा सक्कं देवानमिन्दं एतदवोच—[R.163] ''यग्घे मारिस, जानेय्यासि! एसो आयस्मा उत्तरो महिसवत्थुस्मिं सङ्खेय्यके पब्बते वटजालिकायं भिक्खूनं एवं धम्मं देसेति—'साधावुसो, भिक्खु कालेन कालं [B.12] अत्तविपत्तिं पच्चवेक्खिता होति। साधावुसो, भिक्खु कालेन कालं परविपत्तिं ...पे०... अत्तसम्पत्तिं... परसम्पत्तिं पच्चवेक्खिता होती''' ति।

४. अथ खो सक्को देवानमिन्दो—सेय्यथापि नाम बलवा पुरिसो सम्मिञ्जितं वा

---

**८. उत्तरविपत्तिसूत्र : : आठ धर्मों का यथासमय प्रत्यवेक्षण**

१. एक समय आयुष्मान् उत्तर महिषवस्तु के सङ्खेयक पर्वत पर वटजालिका में साधना कर रहे थे। वहाँ आयुष्मान् उत्तर ने भिक्षुओं को यह बताया—''अच्छा हो, आयुष्मानो! कोई भिक्षु समय समय पर आत्मविपत्ति का प्रत्यवेक्षण करता रहे; परविपत्ति की प्रत्यवेक्षण करता रहे।... आत्मसम्पत्ति का... परसम्पत्ति को प्रत्यवेक्षण करता रहे।''

२. उस समय वैश्रवण महाराज उत्तर दिशा से दक्षिण दिशा की ओर किसी कार्यवश जा रहे थे। उसी समय वैश्रवण महाराज ने आयुष्मान् उत्तर द्वारा भिक्षुओं को महिषवस्तु के ...पूर्ववत्... वटजालिका में यह उपदेश करते हुए सुना।

३. तथा वैश्रवण महाराज, जैसे कोई बलवान् पुरुष... पूर्ववत्... वहाँ अन्तर्हित होकर त्रायस्त्रिंश लोक में प्रकट हुआ। वहाँ वह देवराज शक्र के पास गया। जाकर उनसे यों बोला— ''मार्ष जानते हो! यह आयुष्मान् उत्तर महिषवस्तु के सङ्खेयक पर्वत की वटजालिका में भिक्षुओं को यह उपदेश कर रहा है—'अच्छा हो, आयुष्मानो! भिक्षु समय समय पर आत्मविपत्ति... परविपत्ति... आत्मसम्पत्ति... परसम्पत्ति का प्रत्यवेक्षण करता रहे।' ''

बाहं पसारेय्य, पसारितं वा बाहं सम्मिञ्जेय्य, एवमेव—देवेसु तावतिंसेसु अन्तरहितो महिसवत्थुस्मिं सङ्खेय्यके पब्बते वटजालिकायं आयस्मतो उत्तरस्स सम्मुखे पातुरहोसि। अथ खो सक्को देवानमिन्दो येनायस्मा उत्तरो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं उत्तरं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठितो खो सक्को देवानमिन्दो आयस्मन्तं उत्तरं एतदवोच—

[N.281] ५. "सच्चं किर, भन्ते, आयस्मा उत्तरो भिक्खूनं एवं धम्मं देसेसि—'साधावुसो, भिक्खु कालेन कालं अत्तविपत्तिं पच्चवेक्खिता होति, साधावुसो, भिक्खु कालेन कालं परविपत्तिं ...पे०... अत्तसम्पत्तिं... परसम्पत्तिं पच्चवेक्खिता होती''' ति?

"एवं, देवानमिन्दा" ति।

"किं पनिदं, भन्ते, आयस्मतो उत्तरस्स सकं पटिभानं, उदाहु तस्स भगवतो वचनं अरहतो सम्मासम्बुद्धस्सा" ति?

तेन हि, देवानमिन्द, उपमं ते करिस्सामि। उपमाय मिधेकच्चे विञ्ञू पुरिसा भासितस्स अत्थं आजानन्ति।

६. "सेय्यथापि, देवानमिन्द, गामस्स वा निगमस्स वा अविदूरे महाधञ्ञरासि। ततो महाजनकायो धञ्ञं आहरेय्य—काजेहि पि पिटकेहि पि उच्छङ्गेहि पि अञ्जलीहि [R.164] पि। यो नु खो, देवानमिन्द, तं महाजनकायं उपसङ्कमित्वा एवं पुच्छेय्य—'कुतो इमं धञ्ञं आहरथा' ति, कथं ब्याकरमानो नु खो, देवामिन्द, सो महाजनकायो सम्मा ब्याकरमानो ब्याकरेय्या" ति?

---

४. तब वह देवेन्द्र शक्र, जैसे कोई बलवान् पुरुष ...पूर्ववत्... त्रायस्त्रिंश लोक में अन्तर्हित होकर महिषवस्तु में... आयुष्मान् उत्तर के सम्मुख प्रकट हुआ। वहाँ वह आयुष्मान् उत्तर को प्रणाम कर, एक ओर खड़ा होकर आयुष्मान् उत्तर से यों पूछने लगा—

'भन्ते! आयुष्मन् उत्तर! क्या आप वस्तुतः भिक्षुओं को यह उपदेश कर रहे थे—'अच्छा हो, आयुष्मानो! कोई भिक्षु आत्मविपत्ति... परविपत्ति... आत्मसम्पत्ति... परसम्पत्ति का समय समय पर प्रत्यवेक्षण करता रहे?' "

"हाँ, देवेन्द्र!"

"तो, भन्ते आयुष्मन्! यह आपका निजी ज्ञान था, या उन भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध का?"

"तो, देवेन्द्र! मैं इस प्रसङ्ग में एक दृष्टान्त सुनाता हूँ; क्योंकि कभी कभी बुद्धिमान् लोगों को दृष्टान्त से भी विषय शीघ्र समझ में आ जाता है।

६. "देवेन्द्र! जैसे किसी ग्राम या निगम के समीप ही कोई विशाल धान्यराशि एकत्र हो। वहाँ के निवासियों को जितने धान्य की आवश्यकता हो, वे उसे बहँगी में, छाबड़ी में, गोद में या अञ्जलि में भरकर ले आवें। उनसे कोई पूछे—'यह धान्य तुम कहाँ से ला रहे हो?' तो वह, देवेन्द्र! धान्य लाने वाला सत्य बोलता हुआ क्या उत्तर देगा?"

"'अमुम्हा महाधञ्ञरासिम्हा आहरामा' ति खो, भन्ते, सो महाजनकायो सम्मा ब्याकरमानो ब्याकरेय्या" ति।

"एवमेव खो, देवानमिन्द, यं किञ्चि सुभासितं सब्बं तं तस्स भगवतो वचनं अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स। ततो उपादायुपादाय मयं चञ्ञे च भणामा" ति।

"अच्छरियं, भन्ते, अब्भुतं भन्ते! याव सुभासितं चिदं आयस्मता उत्तरेन—'यं किञ्चि सुभासितं सब्बं तं तस्स भगवतो वचनं अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स। ततो उपादायुपादाय मयं चञ्ञे च भणामा' ति। एकमिदं, भन्ते उत्तर, समयं भगवा राजगहे [B.13] विहरति गिज्झकूटे पब्बते अचिरपक्कन्ते देवदत्ते। तत्र खो भगवा देवदत्तं आरब्भ भिक्खू आमन्तेसि—

७. 'साधु, भिक्खवे, भिक्खु कालेन कालं अत्तविपत्तिं पच्चवेक्खिता होति। साधु, भिक्खवे, भिक्खु कालेन कालं परविपत्तिं ...पे०... अत्तसम्पत्तिं... परसम्पत्तिं [N.282] पच्चवेक्खिता होति। अट्ठहि, भिक्खवे, असद्धम्मेहि अभिभूतो परियादिन्नचित्तो देवदत्तो आपायिको नेरयिको कप्पट्ठो अतेकिच्छो। कतमेहि अट्ठहि? *लाभेन हि, भिक्खवे, अभिभूतो* परियादिन्नचित्तो देवदत्तो आपायिको नेरयिको कप्पट्ठो अतेकिच्छो; अलाभेन ...पे०... यसेन... अयसेन... सक्कारेन... असक्कारेन... पापिच्छताय... पापमित्तताय, [R.163] भिक्खवे, अभिभूतो परियादिन्नचित्तो देवदत्तो आपायिको नेरयिको कप्पट्ठो अतेकिच्छो। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहि असद्धम्मेहि अभिभूतो परियादिन्नचित्तो देवदत्तो आपायिको नेरयिको कप्पट्ठो अतेकिच्छो।

८. 'साधु, भिक्खवे, भिक्खु उप्पन्नं लाभं अभिभुय्य अभिभुय्य विहरेय्य; उप्पन्नं अलाभं ...पे०... उप्पन्नं यसं... उप्पन्नं अयसं... उप्पन्नं सक्कारं... उप्पन्नं असक्कारं... उप्पन्नं पापिच्छतं... उप्पन्नं पापमित्ततं अभिभुय्य अभिभुय्य विहरेय्य।

९. 'किञ्च, भिक्खवे, भिक्खु अत्थवसं पटिच्च उप्पन्नं लाभं अभिभुय्य अभिभुय्य

---

" 'उक्त धान्यराशि से ला रहे हैं'—यही उत्तर देगा।"

"इसी प्रकार, देवेन्द्र! जो कुछ भी सदुपदेश है, वह सब कुछ उन भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध के श्रीमुख से ही निःसृत है। वहीं से ग्रहणकर मैं या अन्य भिक्षु उस उपदेश को अपनी भाषा में कहते हैं।"

"आश्चर्य है, भन्ते! अद्भुत है, भन्ते! आपने बहुत ही स्पष्ट कह दिया कि जो कुछ भी सुभाषित (सदुपदेश) है वह सब भगवान् के श्रीमुख से ही निःसृत है। वहीं से ले लेकर (सुनसुन कर) मैं या दूसरे भिक्षु बोलते हैं। एक समय, आयुष्मान् उत्तर! भगवान् राजगृह के गृध्रकूट पर्वत पर साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय देवदत्त कुछ ही समय पूर्व वहाँ से गया था कि भगवान् ने भिक्षुओं को यह उपदेश किया—

७. 'अच्छा हो, भिक्षुओ! कोई भिक्ष समयसमय पर आत्मविपत्ति का प्रत्यवेक्षण करे।...

विहरेय्य ? उप्पन्नं अलाभं ...पे०... उप्पन्नं यसं... उप्पन्नं अयसं... उप्पन्नं सक्कारं... उप्पन्नं असक्कारं... उप्पन्नं पापिच्छतं... उप्पन्नं पापमित्ततं अभिभुय्य अभिभुय्य विहरेय्य ?

१०. 'यं हिस्स, भिक्खवे, उप्पन्नं लाभं अनभिभुय्य विहरतो उप्पज्जेय्युं आसवा विघातपरिळाहा, उप्पन्नं लाभं अभिभुय्य विहरतो एवंस ते आसवा विघातपरिळाहा न होन्ति। यं हिस्स, भिक्खवे, उप्पन्नं अलाभं ...पे०... उप्पन्नं यसं... उप्पन्नं अयसं... उप्पन्नं सक्कारं... उप्पन्नं असक्कारं... उप्पन्नं पापिच्छतं... उप्पन्नं पापमित्ततं अनभिभुय्य विहरतो उप्पज्जेय्युं आसवा विघातपरिळाहा, उप्पन्नं पापमित्ततं अनभिभुय्य विहरतो एवंस ते आसवा [B.14] विघातपरिळाहा न होन्ति। इदं खो, भिक्खवे, भिक्खु अत्थवसं पटिच्च उप्पन्नं लाभं अभिभुय्य अभिभुय्य विहरेय्य; उप्पन्नं अलाभं ...पे०... उप्पन्नं यसं... उप्पन्नं अयसं... उप्पन्नं सक्कारं... उप्पन्नं असक्कारं... उप्पन्नं पापिच्छतं... उप्पन्नं पापमित्ततं अभिभुय्य अभिभुय्य विहरेय्य।

[R.166] ११. 'तस्मातिह, भिक्खवे, एवं सिक्खितब्बं—उप्पन्नं लाभं अभिभुय्य अभिभुय्य विहरिस्साम, उप्पन्नं अलाभं ...पे०... उप्पन्नं यसं... उप्पन्नं अयसं... उप्पन्नं सक्कारं... [N.283] उप्पन्नं असक्कारं... उप्पन्नं पापिच्छतं... उप्पन्नं पापमित्ततं अभिभुय्य अभिभुय्य विहरिस्सामा ति। एवं हि वो, भिक्खवे, सिक्खितब्बं' ति।

१२. ''एत्तावता, भन्ते उत्तर, मनुस्सेसु चतस्सो परिसा—भिक्खू, भिक्खुनियो, उपासका, उपासिकायो। नायं धम्मपरियायो किस्मिञ्चि उपट्ठितो। उग्गण्हतु, भन्ते, आयस्मा उत्तरो इमं धम्मपरियायं। परियापुणातु, भन्ते, आयस्मा उत्तरो इमं धम्मपरियायं। धारेतु, भन्ते, आयस्मा उत्तरो इमं धम्मपरियायं। अत्थसंहितो अयं, भन्ते, धम्मपरियायो आदिब्रह्मचरियको'' ति॥ ●

**९. नन्दसुत्तं** : १. '''कुलपुत्तो' ति, भिक्खवे, नन्दं सम्मा वदमानो वदेय्य। 'बलवा' ति, भिक्खवे, नन्दं सम्मा वदमानो वदेय्य। 'पासादिको' ति, भिक्खवे, नन्दं सम्मा वदमानो वदेय्य। 'तिब्बरागो' ति, भिक्खवे, नन्दं सम्मा वदमानो वदेय्य। किमञ्ञत्र,

---

परविपत्ति का ...पूर्ववत्... *(इन ७, ८, ९, १०, ११ उपबन्धों का पूर्वसूत्र—***देवदत्तविपत्तिसूत्र** *के समान ही अविकल अनुवाद है, वहाँ देखें।)* भिक्षुओ! तुम्हें ऐसा सीखना चाहिये।'

१२. ''भन्ते उत्तर! मनुष्यों चार परिषद् हैं—भिक्षु, भिक्षुणी, उपासक एवं उपासिका। यह धर्मपर्याय किसी एक के लिये नहीं है। आयुष्मन् उत्तर! आप भी इसे ग्रहण कर सकते हैं। आप इसे ग्रहण कर साधना द्वारा इसे सम्पन्न करें। ...धारण करें; क्योंकि यह धर्मपर्याय सार्थक है तथा इस धर्मसाधना का यह आदिभूत (मूल) है॥'' ●

**९. नन्दसूत्र** : : **नन्द में उपस्थित धर्म**

१. ''भिक्षुओ! नन्द के विषय में कोई उचित कहना चाहे तो वह उसको 'कुलपुत्र' ही कहेगा, ... 'बलवान्' ही... 'श्रद्धालु' या 'प्रियङ्कर' (=प्रासादिक) ही कहेगा, ... 'तीव्रराग'

भिक्खवे, नन्दो इन्द्रियेसु गुत्तद्वारो, भोजने मत्तञ्ञू, जागरियं अनुयुत्तो, सतिसम्पजञ्ञेन समन्नागतो, येहि नन्दो सक्कोति परिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं चरितुं! तत्र इदं, भिक्खवे, नन्दस्स इन्द्रियेसु गुत्तद्वारताय होति। सचे, भिक्खवे, नन्दस्स पुरित्थमा दिसा [R.167] आलोकेतब्बा होति, सब्बं चेतसा समन्नाहरित्वा नन्दो पुरत्थिमं दिसं आलोकेति—'एवं मे पुरत्थिमं दिसं आलोकयतो नाभिज्झादोमनस्सा पापका अकुसला धम्मा अन्वास्सविस्सन्ती' ति। इति ह तत्थ सम्पजानो होति।

२. ''सचे, भिक्खवे, नन्दस्स पच्छिमा दिसा आलोकेतब्बा होति ...पे०... [B.15] उत्तरा दिसा आलोकेतब्बा होति... दक्खिणा दिसा आलोकेतब्बा होति... उद्धं उल्लोकेतब्बा होति... अधो ओलोकेतब्बा होति... अनुदिसा अनुविलोकेतब्बा होति, सब्बं चेतसा समन्नाहरित्वा नन्दो अनुदिसं अनुविलोकेति—'एवं मे अनुदिसं अनुविलोकयतो नाभिज्झादोमनस्सा पापका अकुसला धम्मा अन्वास्सविस्सन्ती' ति। इति ह तत्थ सम्पजानो होति। इदं खो, भिक्खवे, नन्दस्स इन्द्रियेसु गुत्तद्वारताय होति।

३. ''तत्र इदं, भिक्खवे, नन्दस्स भोजने मत्तञ्ञुताय होति। इध, भिक्खवे, [N.284] नन्दो पटिसङ्खा योनिसो आहारं आहारेति—'नेव दवाय न मदाय न मण्डनाय न विभूसनाय, यावदेव इमस्स कायस्स ठितिया यापनाय विहिंसूपरतिया ब्रह्मचरियानुग्गहाय इति पुराणं च वेदनं पटिहङ्खामि, नवं च वेदनं न उप्पादेस्सामि, यात्रा च मे भविस्सति अनवज्जता च फासुविहारो चा' ति। इदं खो, भिक्खवे, नन्दस्स भोजने मत्तञ्ञुताय होति।

४. ''तत्रिदं, भिक्खवे, नन्दस्स जागरियानुयोगस्मिं होति। इध, भिक्खवे, नन्दो

---

(धर्मसाधना के प्रति) ही कहेगा। अधिक क्या कहा जाय, यह नन्द अपनी इन्द्रियों के प्रति 'संयत' है, 'भोजन में मात्राज्ञ है', यह 'स्मृतिसम्प्रजन्य से युक्त' है, जिनसे सम्पन्न यह नन्द अपनी धर्मसाधना को पूर्ण करने में सर्वथा समर्थ है। वहाँ, भिक्षुओ! नन्द की इन्द्रियों की गुप्तद्वारता यों सिद्ध की जा सकती है—यदि भिक्षुओ! नन्द पूर्व दिशा की ओर देखता है तो वह सब कुछ चित्त में संग्रह कर ही उस पूर्व दिशा की ओर देखता है कि इस प्रकार उसके द्वारा पूर्व दिशा में देखने से अभिध्या, दौर्मनस्य आदि पापमय अकुशल धर्म उसके चित्त को विकृत नहीं कर सकेंगे।

२. ''यदि उसको पश्चिम दिशा को देखना होता है ...पूर्ववत्... उत्तर दिशा को... दक्षिण दिशा को... चित्त को विकृत नहीं कर सकेंगे। इस तरह वह वहाँ स्मृति से सावधान रहता है। यह नन्द की इन्द्रियों में गुप्तद्वारता की विशेषता है।

३. ''भिक्षुओ! नन्द की भोजन में मात्राज्ञता यह है—भिक्षुओ! नन्द अपना भोजन यह सूक्ष्म विचार कर के ही ग्रहण करता है कि मेरा यह भोजन मेरे दव, मद, मण्डन के लिये नहीं है, अपितु इस शरीर की स्थिति रहे, तब तक इस को चलाने के लिये, हिंसा के दूर रहने के लिये धर्म-साधना की वृद्धि के लिये, और पुरानी वेदनाओं को दबाने के लिये तथा नयी वेदनाओं को न उत्पन्न होने देने के लिये है। उससे मेरी जीवनयात्रा भी चलती रहेगी, मेरी निर्दोषता भी बनी रहेगी और साधना में भी सरलता रहेगी। भिक्षुओ! यह है नन्द की भोजन में मात्राज्ञता।

[R.168] दिवसं चङ्कमेन निसज्जाय आवरणीयेहि धम्मेहि चित्तं परिसोधेति; रत्तिया पठमं यामं चङ्कमेन निसज्जाय आवरणीयेहि धम्मेहि चित्तं परिसोचेति; रत्तिया मज्झिमं यामं दक्खिणेन पस्सेन सीहसेय्यं कप्पेति पादे पादं अच्चाधाय सतो सम्पजानो उट्ठानसञ्ञं मनसि करित्वा; रत्तिया पच्छिमं यामं पच्चुट्ठाय चङ्कमेन निसज्जाय आवरणीयेहि धम्मेहि चित्तं परिसोधेति। इदं खे, भिक्खवे, नन्दस्स जागरियानुयोगस्मिं होति।

५. ''तत्रिदं, भिक्खवे, नन्दस्य सतिसम्पजञ्ञस्मिं होति। इध, भिक्खवे, नन्दस्स विदिता वेदना उप्पज्जन्ति, विदिता उपट्ठहन्ति, विदिता अब्भत्थं गच्छन्ति; विदिता सञ्ञा ...पे०... विदिता वितक्का ...पे०... अब्भत्थं गच्छन्ति। इदं खो, भिक्खवे, नन्दस्स सतिसम्पजञ्ञस्मिं होति।

६. ''किमञ्ञत्र, भिक्खवे, नन्दो इन्द्रियेसु गुत्तद्वारो, भोजने मत्तञ्ञू, जागरियं अनुयुत्तो, सतिसम्पजञ्ञेन समन्नागतो, येहि नन्दो सक्कोति परिपुण्णं परिसुद्धं ब्रह्मचरियं चरितुं'' ति!॥

[B.16] **१०. कारण्डवसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा चम्पायं विहरति गग्गराय पोक्खरणिया तीरे। तेन खो पन समयेन भिक्खू भिक्खुं आपत्तिया चोदेन्ति। सो भिक्खु भिक्खूहि आपत्तिया चोदियमानो अञ्ञेनाञ्ञं पटिचरति, बहिद्धा कथं अपनामेति, कोपं च दोसं च अप्पच्चयं पातुकरोति।

[N.285,R.169] २. अथ खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—''निद्धमथेतं, भिक्खवे पुग्गलं,

---

४. ''भिक्षुओ! नन्द की जागरण-साधना की यह विशेषता है—यहाँ, भिक्षुओ! नन्द समस्त दिन चंक्रमण या बैठकर अपने चित्त को आच्छादित करने वाले धर्मों के विषय में चिन्तन करता रहता है। रात्रि का प्रथम प्रहर भी इसी विधि से साधना करता हुआ व्यतीत करता है। रात्रि का मध्यम प्रहर भी वह दक्षिण पार्श्व से सिंहशय्या आसन लगाकर पैर पर पैर रखकर स्मृतिसम्प्रजन्य-पूर्वक उत्थान संज्ञा को मन में धारण करता हुआ बिताता है। तथा रात्रि के अन्तिम प्रहर में चंक्रमण एवं निषद्या (बैठ) कर चित्त को आच्छादित करने वाले धर्मों का शोधन करता रहता है। भिक्षुओ! नन्द की यह जागरण-साधना है।''

५. ''भिक्षुओ! नन्द के स्मृतिसम्प्रजन्य के विषय में यह कथनीय है—यहाँ, भिक्षुओ! नन्द के द्वारा जानी हुई वेदनाएँ उत्पन्न होती है, स्थित रहती हैं या नष्ट होती हैं।... संज्ञाएँ... वितर्क... नष्ट होते हैं। यह, भिक्षुओ! नन्द का स्मृतिसम्प्रजन्य है।''

६. ''भिक्षुओ! नन्द की अन्य उपलब्धियों को क्या कहा जाय। इसका तो इन्द्रियों का गुप्तद्वारत्व, भोजन में मात्रा का जानना तथा इसका स्मृतिसम्प्रजन्य ही इतना वृद्धिङ्गत है कि यह नन्द इन के ही सहारे अपनी धर्मसाधना पूर्ण कर सकता है॥''

**१०. कारण्डवसूत्र** : :

१. एक समय चम्पा देश की गग्गरा पुष्करिणी के तट पर साधना हेतु विराजमान थे। उस समय कुछ भिक्षु किसी भिक्षु को आपत्तिग्रस्त कह रहे थे। वह कभी प्रसङ्ग को इधर से उधर बदलने

निद्धमथेतं, भिक्खवे, पुग्गलं। अपनेय्येसो, भिक्खवे, पुग्गलो। किं वो तेन परपुट्ठेन विसोधितेन! इध, भिक्खवे, एकच्चस्स पुग्गलस्स तादिसंयेव होति अभिक्कन्तं पटिक्कन्तं आलोकितं विलोकितं सम्मिञ्जितं पसारितं सङ्घाटिपत्तचीवरधारणं, सेय्यथापि अञ्ञेसं भद्दकानं भिक्खूनं—यावस्स भिक्खू आपत्तिं न पस्सन्ति। यतो च ख्वास्स भिक्खू आपत्तिं पस्सन्ति, तमेनं एवं जानन्ति—'समणदूसीवायं समणपलापो समणकारण्डवो' ति। तमेनं इति विदित्वा बहिद्धा नासेन्ति। तं किस्स हेतु? मा अञ्ञे भद्दके भिक्खू दूसेसी ति!

३. ''सेय्याथापि, भिक्खवे, सम्पन्ने यवकरणे यवदूसी जायेथ यवपलापो यवकारण्डवो ति। तस्स तादिसंयेव मूलं होति, सेय्यथापि अञ्ञेसं भद्दकानं यवानं; तादिसंयेव नाळं होति, सेय्यथापि अञ्ञेसं भद्दकानं यवानं; तादिसंयेव पत्तं होति, सेय्यथापि अञ्ञेसं भद्दकानं यवानं—यावस्स सीसं न निब्बत्तति। यतो च ख्वास्स सीसं निब्बत्तति, तमेनं एवं जानन्ति—'यवदूसीवायं यवपलापो यवकारण्डवो' ति। तमेनं इति [R.170] विदित्वा समूलं उप्पाटेत्वा बहिद्धा यवकरणस्स छड्डेन्ति। तं किस्स हेतु? मा अञ्ञे भद्दके यवे दूसेसी ति!

४. ''एवमेव खो, भिक्खवे, इधेकच्चस्स पुग्गलस्स तादिसंयेव होति अभिक्कन्तं पटिक्कन्तं आलोकितं विलोकितं सम्मिञ्जितं पसारितं सङ्घाटिपत्तचीवरधारणं, सेय्यथापि अञ्ञेसं भद्दकानं भिक्खूनं—यावस्स भिक्खू आपत्तिं न पस्सन्ति। यतो च ख्वास्स [B.17] भिक्खू आपत्तिं पस्सन्ति, तमेनं एवं जानन्ति—'समणदूसीवीयं समणपलापो समण-

---

की चेष्टा कर रहा था, कभी बात को अन्यथा बताता था या कभी उनके प्रति क्रोध द्वेष एवं अविश्वास प्रकट करता था।

२. तब भगवान् ने भिक्षुओं को आदेश दिया—''इस भिक्षु को बाहर निकाल दो! भिक्षुओ! यह पुद्गल बाहर निकाल देने योग्य है। इस परपुत्र (कौए) को स्नान कराने से क्या लाभ मिलेगा! यहाँ, भिक्षुओ! किसी भिक्षु का दिखावटी चाल चलन या साधनाक्रम, प्रसार एवं सङ्कोच, संघाटी एवं पात्रचीवर का धारण करना वैसा ही शुद्ध दिखायी देता है, जैसा अन्य भिक्षुओं का; जब तक भिक्षु उसके मलिन आचरण को स्पष्टतः नहीं पकड़ते। जब भिक्षु उस को अपराधी समझ लेते हैं, तब वे जान जाते हैं कि यह श्रमणों को मलिन करने वाला, श्रामण्य को बदनाम करने वाला है, तथा श्रमणों में कूड़ा कर्कट के समान है। इसको यहाँ से भगाना इस लिये आवश्यक है कि कहीं यह दूसरे श्रमणों को भी पथभ्रष्ट न कर दे!''

३. ''जैसे, भिक्षुओ! किसी जौ के क्षेत्र में कोई जौ के समान घास पैदा हो जाय, जो जौ कहलाता हो परन्तु वस्तुतः जौ का कूड़ा कर्कट हो। उसका मूल, उसके स्कन्ध और पत्ते दीखने में वैसे ही होते हैं जैसे किसी शुद्ध जौ के। जब तक कि उसमें यवधान्य की फली न लगे। उस फली के आने पर ज्ञात होता है कि यह तो यवदूषक, यव के समान सा दिखायी देता है, परन्तु यह वस्तुतः इस जौ के खेत का नाशक है। तब लोग उसकी वास्तविकता जान कर उसे खेत से उखाड़ कर बाहर फेंक देते हैं। वह किसलिये? कि कहीं वह खेत के वास्तविक धान्य को भी नष्ट न कर दे।''

कारण्डवो' ति। तमेनं इति विदित्वा बहिद्धा नासेन्ति। तं किस्स हेतु? मा अञ्ञे भद्दके भिक्खू दूसेसी ति!

५. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, महतो धञ्ञरासिस्स फुणमानस्स तत्थ यानि तानि [N.286] धञ्ञानि दळ्हानि सारवन्तानि तानि एकमन्तं पुञ्जं होति, यानि पन तानि धञ्ञानि दुब्बलानि पलापानि तानि वातो एकमन्तं अपवहति। तमेनं सामिका सम्मज्जनिं गहेत्वा भिय्योसोमत्ताय अपसम्मज्जन्ति। तं किस्स हेतु? मा अञ्ञे भद्दके धञ्ञे दूसेसी ति! एवमेव खो, भिक्खवे, इधेकच्चस्स पुग्गलस्स तादिसंयेव होति अभिक्कन्तं पटिक्कन्तं आलोकितं [R.171] विलोकितं सम्मिञ्जितं पसारितं सङ्घाटिपत्तचीवरधारणं, सेय्यथापि अञ्ञेसं भद्दकानं भिक्खूनं—यावस्स भिक्खू आपत्तिं न पस्सन्ति। यतो च ख्वास्स भिक्खू आपत्तिं पस्सन्ति, तमेनं एवं जानन्ति—'समणदूसीवायं समणपलापो समणकारण्डवो' ति। तमेनं इति विदित्वा बहिद्धा नासेन्ति। तं किस्स हेतु? मा अञ्ञे भद्दके भिक्खू दूसेसी ति!

६. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, पुरिसे उदपानपनालियत्थिको तिण्हं कुठारिं आदाय वनं पविसेय्य। सो यं यदेव रुक्खं कुठारिपासेन आकोटेय्य तत्थ यानि तानि रुक्खानि दळ्हानि सारवन्तानि तानि कुठारिपासेन आकोटितानि कक्खळं पटिनदन्ति; यानि पन तानि रुक्खानि अन्तोपूतीनि अवस्सुतानि कसम्बुजातानि तानि कुठारिपासेन आकोटितानि दद्दरं पटिनदन्ति। तमेनं मूले छिन्दति, मूले छिन्दित्वा अग्गे छिन्दति, अग्गे छिन्दित्वा अन्तो सुविसोधितं विसोधेति, अन्तो सुविसोधितं विसोधेत्वा उदपानपनाळिं योजेति। एवमेव खो, भिक्खवे, इधेकच्चस्स पुग्गलस्स तादिसंयेव होति अभिक्कन्तं पटिक्कन्तं आलोकितं विलोकितं सम्मिञ्जितं पसारितं सङ्घाटिपत्तचीवरधारणं, सेय्यथापि अञ्ञेसं भद्दकानं भिक्खूनं—यावस्स

---

४. इसी प्रकार, भिक्षुओ! किसी भिक्षु का दिखावटी चालचलन ...पूर्ववत्... कहीं यह दूसरे श्रमणों को मार्गभ्रष्ट न कर दे।

५. ''जैसे, भिक्षुओ! किसी विशाल धान के क्षेत्र के वृद्धिङ्गत होने पर, उस में जो सारवान् धान के पौधे हैं उनका समूह एक ओर खड़ा रहता है; परन्तु दुर्बल पौधे हैं वे वायु के प्रबल झोंकों से खेत में फैल जाते हैं। उनको खेत का स्वामी झाड़ू से एक ओर एकत्र कर देते हैं कि इन से कहीं पूरा खेत न नष्ट हो जाय। इसी प्रकार, भिक्षुओ! किसी भिक्षु का ...पूर्ववत्... दूसरे भिक्षुओं का भी मार्गभ्रष्ट न कर दे।''

६. जैसे भिक्षुओ! कोई किसान अपने खेत में जल सींचने के लिये काष्ठ की एक प्रणाली बनाने हेतु किसी वृक्ष की खोखली लकड़ी लाने के लिये कुठार लेकर जङ्गल में जाय। वहाँ वह जिस-जिस वृक्ष से कुठार को टकराये उस से जिन में दृढ़ताबोधक खट-खट शब्द सुनायी दे उसको छोड़ देता है तथा जिस में थोथा शब्द सुनायी दे उसको काट लेता है। उसको वह पहले मूल से काटता है, पुन: अग्रभाग को काटता है, अग्रभाग को काट कर उसके बीच से थोथे भाग को निकाल लेता है, तब वह उस को जल प्रणाली के रूप में काम में लेता है। इसी प्रकार, भिक्षुओ! किसी भिक्षु का ...पूर्ववत्... दूसरे भिक्षुओं को पथभ्रष्ट न कर दे।

भिक्खू आपत्तिं न पस्सन्ति। यतो च ख्वास्स भिक्खू आपत्तिं पस्सन्ति, तमेनं एवं [B.18] जानन्ति—'समणदूसीवायं समणपलापो समणकारण्डवो' ति। तमेनं इति विदित्वा बहिद्धा नासेन्ति। तं किस्स हेतु? मा अञ्ञे भद्दके भिक्खू दूसेसी ति!

"संवासायं विजानाथ, पापिच्छो कोधनो इति। [R.172]
मक्खी थम्भी पलासी च, इस्सुकी मच्छरी सठो॥
"सन्तवाचो जनवति, समणो विय भासति।
रहो करोति करणं, पापदिट्ठि अनादरो॥
"संसप्पी च मुसावादी, तं विदित्वा यथातथं। [N.287]
सब्बे समग्गा हुत्वान, अभिनिब्बज्जयाथ नं॥
"कारण्डवं निद्धमथ, कसम्बुं अपकस्सथ।
ततो पलापे वाहेथ, अस्समणे समणमानिने॥
"निद्धमित्वान पापिच्छे, पापआचारगोचरे।
सुद्धासुद्धेहि संवासं, कप्पयव्हो पतिस्सता।
ततो समग्गा निपका, दुक्खस्सन्तं करिस्सथा" ति॥ ●

**मेत्तावग्गो पठमो॥**

## तस्सुद्दानं

मेत्तं पञ्ञा च द्वे पिया, द्वे लोका द्वे विपत्तियो।
देवदत्तो च उत्तरो, नन्दो कारण्डवेन चा ति॥ ●

---

"ऐसा भिक्षु जो पापकर्मनिरत, क्रोधी, म्रक्ष एवं स्तम्भ युक्त, प्रदाशी, ईर्ष्यालु, मत्सरी, शठ हो, साथ रहने पर पहचान में आ जाता है।

"जो जनसमूह में अपनी चेष्टाओं से श्रमण के समान दिखायी दे, परन्तु एकान्त में असम्मानयोग्य पापकर्म करता हो॥

"जो व्यर्थ उधर-उधर घूमता हो, असत्यभाषी हो, उसको ऐसा जान कर सब भिक्षु मिलकर अपने से दूर भगा दे॥'

"ऐसे कूड़े कर्कट के सदृश (कारण्डव) पुरुष को अपने पास से दूर हटा दो, भगा दो; क्योंकि वह दीखने में श्रमण अवश्य दीखता है परन्तु उसके क्रिया-कर्म अश्रमण के ही है॥

"ऐसे पापी, पापमय आचार-गोचर से सम्पन्न पुरुष के शुद्धाशुद्ध चरित्र का विचार कर, उसे बुद्धिमान् जनों द्वारा अपने से दूर हटा देना चाहिये, तभी तुम लोग एकत्र होकर कुशलता के साथ साधनारत रह सकोगे तथा अपने दुःखों का अन्त कर सकोगे!॥" **मैत्रीवर्ग प्रथम सम्पन्न॥** ●

### इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची

१. मैत्रीसूत्र, २. प्रज्ञासूत्र, ३. प्रथम अप्रियसूत्र, ४. द्वितीय अप्रियसूत्र, ५. प्रथम लोकधर्मसूत्र, ६. द्वितीय लोकधर्मसूत्र, ७. देवदत्तविपत्तिसूत्र, ८. उत्तरविपत्तिसूत्र, ९. नन्दसूत्र, एवं १०. कारण्डवसूत्र॥ ●

## २. महावग्गो

**१. वेरञ्जसुत्तं :** १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा वेरञ्जायं विहरति नळेरुपुचि-[R.173] मन्दमूले। अथ खो वेरञ्जो ब्राह्मणो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं [B.19] निसिन्नो खो वेरञ्जो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—

२. "सुतं मेतं, भो गोतम—'न समणो गोतमो ब्राह्मणे जिण्णे बुद्धे महल्लके अद्धगते वयोअनुपत्ते अभिवादेति वा पच्चुट्ठेति वा आसनेन वा निमन्तेती' ति। तयिदं, भो गोतम, तथेव। न हि भवं गोतमो ब्राह्मणे जिण्णे बुद्धे महल्लके अद्धगते वयोअनुप्पत्ते अभिवादेति वा पच्चट्ठेति वा आसनेन वा निमन्तेति। तयिदं, भो गोतम, न सम्पन्नमेवा" ति।

[N.288] "नाहं तं, ब्रह्मण, पस्सामि सदेवके लोके समारके सब्रह्मके सस्समणब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय यमहं अभिवादेय्यं वा पच्चुट्ठेय्यं वा आसनेन वा निमन्तेय्यं। यं हि, ब्राह्मण, तथागतो अभिवादेय्य वा पच्चुट्ठेय वा आसनेन वा निमन्तेय्य, मुद्धा पि तस्स विपतेय्या" ति।

३. "अरसरूपो भवं गोतमो" ति!

"अत्थि ख्वेस, ब्राह्मण, परियायो येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'अरसरूपो समणो गोतमो' ति। ये ते, ब्राह्मण, रूपरसा सद्दरसा गन्धरसा रसरसा

---

## २. महावर्ग

**१. वेरञ्जसूत्र : : लोक में बुद्ध की ज्येष्ठता**

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) वेरञ्जा के नलेरुपुचिमन्द वृक्ष की छाया में साधना हेतु विराजमान थे। उस समय कोई वेरञ्जावासी ब्राह्मण भगवान् के सम्मुख आया तथा उनसे कुशल मङ्गलप्रश्नान्तर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे उस वेरञ्जावासी ब्राह्मण ने भगवान् से यह पूछा—

२. "भो गौतम! मैने सुना है कि आप श्रमण गौतम जीर्ण, वृद्ध, आयुःप्राप्त, जीवन के किनारे पहुँचे हुए, पूर्ण आयु तक पहुँचे हुए ब्राह्मणों के आने पर न तो उनका अभिवादन करते हैं, न उनको बैठने के लिये आसन ही देते हैं। भो गौतम! यह तो उचित नहीं है!"

"ब्राह्मण! मैं देव, मार ब्रह्मासहित इस समस्त लोक में तथा देव मनुष्यों सहित इस श्रमण ब्राह्मणयुक्त प्रजा में किसी को भी इस योग्य नहीं देखता जिसको मैं प्रणाम करूँ, प्रत्युत्थान करूँ, बैठने के लिये आसन दूँ। ब्राह्मण! ऐसी स्थिति में यदि तथागत किसी का अभिवादन या प्रत्युत्थान करें, आसन के लिये निमन्त्रित करें तो उसका शिर भी (शरीर से पृथक् होकर) गिर सकता है।"

३."आप गौतम तो बहुत अरसरूप (रूखे) दिखायी देते हैं।"

"हाँ ब्राह्मण! यह बात हो सकती है, जिसके कारण मेरा उचित विश्लेषण करते हुए मुझे 'अरसरूप' कहा जा सकता है। ब्राह्मण! ये जो रूपरस (= रूप का स्वाद), शब्दरस, गन्धरस,

फोट्ठब्बरसा, ते तथागतस्स पहीना उच्छिन्नमूला तालावत्थुकता अनभावङ्कता आयतिं अनुप्पादधम्मा। अयं खो, ब्राह्मण, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य— 'अरसरूपो समणो गोतमो' ति, नो च खो यं त्वं सन्धाय वदेसी'' ति।

४. ''निब्भोगो भवं गोतमो'' ति! [R.174]

''अत्थि ख्वेस, ब्राह्मण, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य— 'निब्भोगो समणो गोतमो' ति। ये ते, ब्राह्मण, रूपभोगा सद्दभोगा गन्धभोगा रसभोगा फोट्ठब्बभोगा, ते तथागतस्स पहीना उच्छिन्नमूला तालावत्थुकता अनभावङ्कता आयतिं अनुप्पादधम्मा। अयं खो, ब्राह्मण, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य— 'निब्भोगो समणो गोतमो' ति, नो च खो ये त्वं सन्धाय वदेसी'' ति।

५. ''अकिरियवादो भवं गोतमो'' ति! [B.20]

''अत्थि ख्वेस, ब्राह्मण, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य— 'अकिरियवादो समणो गोतमो' ति। अहं हि, ब्राह्मण, अकिरियं वदामि कायदुच्चरितस्स वचीदुच्चरितस्स मनोदुच्चरितस्स; अनेकविहितानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं अकिरियं वदामि। अयं खो, ब्राह्मण, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'अकिरियवादो समणो गोतमो' ति, नो च खो यं त्वं सन्धाय वदेसी'' ति।

६. ''उच्छेदवादो भवं गोतमो'' ति!

''अत्थि ख्वेस, ब्राह्मण, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—

---

रसरस, स्प्रष्टव्यरस हैं वे सभी तथागत के प्रहीण हो चुके हैं, मूलत: उच्छिन्न हो चुके हैं, भविष्य में कभी उत्पन्न न होंगे। ब्राह्मण! यह कारण है जिससे मुझ को उचित रूप से 'अरसरूप' कहा जा सकता है; परन्तु उस कारण से नहीं जिस आशय से तुम कह रहे हो।'' (१)

४.''आप भो गौतम! निर्भोग हैं।''

''हाँ, ब्राह्मण! यह बात भी हो सकती है, जिसके कारण मेरा उचित विश्लेषण करते हुए मुझे 'निर्भोग' कहा जा सकता है। ब्राह्मण! ये जो रसभोग, शब्दभोग, गन्धभोग, रसभोग एवं स्प्रष्टव्यभोग हैं वे सब तथागत के ...पूर्ववत्... 'निर्भोग' कहा जा सकता है; परन्तु उस कारण से नहीं, जिस आशय से तुम कह रहे हो।'' (२)

५. ''आप भो गौतम! अक्रियावादी हैं।''

''हाँ, ब्राह्मण! यह बात भी हो सकती है, जिसके कारण मेरा उचित विश्लेषण करते हुए मुझे 'अक्रियावादी' कहा जा सकता है। ब्राह्मण! मैं काया के दुराचार (प्राणिहिंसा, चौरी, व्यभिचार), वाणी के दुराचार (असत्य भाषण, चुगली, कटुवचन, प्रलाप), मन के दुराचार (लोभ, मोह, मिथ्यादृष्टि) को मैं 'अक्रिया' कहता हूँ। विविध अकुशल पापधर्मों को मैं 'अक्रिया' कहता हूँ। यह कारण है, ब्राह्मण! मुझे 'अक्रियवादी' कहा जा सकता है; परन्तु उस कारण से नहीं, जिस आशय से तुम कह रहे हो।'' (३)

६. ''भो गौतम! आप उच्छेदवादी हैं।''

'उच्छेदवादो समणो गोतमो' ति। अहं हि, ब्राह्मण, उच्छेदं वदामि रागस्स दोसस्स [N.289] मोहस्स; अनेकविहितानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं उच्छेदं वदामि। अयं खो, ब्राह्मण, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'उच्छेदवादो समणो गोतमो' ति, नो च खो यं त्वं सन्धाय वदेसी'' ति।

७. ''जेगुच्छी भवं गोतमो'' ति!

''अत्थि ख्वेस, ब्राह्मण, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'जेगुच्छी समणो गोतमो' ति। अहं हि, ब्राह्मण, जिगुच्छामि कायदुच्चरितेन वचीदुच्चरितेन मनोदुच्चरितेन; जिगुच्छामि अनेकविहितानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं समापत्तिया। अयं [R.175] खो, ब्राह्मण, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'जेगुच्छी समणो गोतमो' ति, नो च खो यं त्वं सन्धाय वदेसी'' ति।

८. ''वेनयिको भवं गोतमो'' ति!

''अत्थि ख्वेस, ब्राह्मण, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'वेनयिको समणो गोतमो' ति। अहं हि, ब्राह्मण, विनयाय धम्मं देसेमि रागस्स दोसस्स मोहस्स; अनेकविहितानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं विनयाय धम्मं देसेमि। अयं खो, ब्राह्मण, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'वेनयिको समणो गोतमो' ति, नो च खो यं त्वं सन्धाय वदेसी'' ति।

९. ''तपस्सी भवं गोतमो'' ति!

[B.21] ''अत्थि ख्वेस, ब्राह्मण, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'तपस्सी समणो गोतमो' ति। तपनीयाहं, ब्राह्मण, पापके अकुसले धम्मे वदामि कायदुच्चरितं वचीदुच्चरितं मनोदुच्चरितं। यस्स खो, ब्राह्मण, तपनीया पापका अकुसला

---

''हाँ, ब्राह्मण ...पूर्ववत्... कोई मुझे 'उच्छेदवादी' भी कहा सकता है। ब्राह्मण! मैं 'राग, द्वेष, मोह का उच्छेद करना चाहिये'—ऐसा कहता हूँ। साथ ही विविध पापमय अकुशल धर्मों का उच्छेद कहता हूँ। ...पूर्ववत्... ।'' (४)

७.''भो गौतम! आप जुगुप्सु (घृणा करने वाले) हैं।''

''... मैं कायिक, वाचिक एवं मानसिक दुश्चरितों से घृणा करता हूँ। साथ ही विविध पापमय अकुशल धर्मों से भी घृणा करता हूँ। ...पूर्ववत्... ।'' (५)

८. ''आप,भो गौतम! वैनयिक (हटाने वाले) हैं।''

''... ब्राह्मण! मैं राग, द्वेष एवं मोह के विनयन (हटाने) के लिये उपदेश करता हूँ। साथ ही विविध पापमय अकुशल धर्मों के हटाने की भी देशना करता रहता हूँ। ...पूर्ववत्... ।'' (६)

९. ''भो गौतम! आप तपस्वी हैं।''

''...ब्राह्मण! मैं पापमय अकुशल धर्मो को, काय वाक् एवं मन के दुराचारों को तपाने का उपदेश करता हूँ। ब्राह्मण! जिसके ये तपनीय पापमय अकुशल धर्म नहीं रह गये, उच्छिन्नमूल हो गये... उसको मैं 'तपस्वी' कहता हूँ। ब्राह्मण! तथागत के भी ये पापमय धर्म नहीं रह गये,

धम्मा पहीना उच्छिन्नमूला तालावत्थुकता अनभावङ्कता आयतिं अनुप्पादधम्मा, तमहं 'तपस्सी' ति वदामि। तथागतस्स खो, ब्राह्मण, तपनीया पापका अकुसला धम्मा पहीना उच्छिन्नमूला तालावत्थुकता अनभावङ्कता आयतिं अनुप्पादधम्मा। अयं खो, ब्राह्मण, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'तपस्सी समणो गोतमो' ति, नो च खो यं त्वं सन्धाय वदेसी'' ति।

१०. ''अपगब्भो भवं गोतमो'' ति!

''अत्थि ख्वेस, ब्राह्मण, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'अपगब्भो समणो गोतमो ति'। यस्स खो, ब्राह्मण, आयतिं गब्भसेय्या पुनब्भवाभिनिब्बत्ति पहीना उच्छिन्नमूला तालावत्थुकता अनभावङ्कता आयतिं अनुप्पादधम्मा, तमहं [N.290] 'अपगब्भो' ति वदामि। तथागतस्स खो, ब्राह्मण, आयतिं गब्भसेय्या पुनब्भवाभि-[R.176] निब्बत्ति पहीना उच्छिन्नमूला तालावत्थुकता अनभावङ्कता आयतिं अनुप्पादधम्मा। अयं खो, ब्राह्मण, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'अपगब्भो समणो गोतमो' ति, नो च खो यं त्वं सन्धाय वदेसि।

११. ''सेय्यथापि, ब्राह्मण, कुक्कुटिया अण्डानि अट्ठ वा दस वा द्वादस वा। तानस्सु कुक्कुटिया सम्मा अधिसयितानि सम्मा परिसेदितानि सम्मा परिभावितानि। यो नु खो तेसं कुक्कुटच्छापकानं पठमतरं पादनखसिखाय वा मुखतुण्डकेन वा अण्डकोसं पदालेत्वा सोत्थिना अभिनिब्भिज्जेय्य, किन्ति स्वास्स वचनीयो—'जेट्ठो वा कनिट्ठो वा'' ति?

''जेट्ठो तिस्स, भो गोतम, वचनीयो। सो हि नेसं, भो गोतम, जेट्ठो होती'' ति।

१२. ''एवमेव खो अहं, ब्राह्मण, अविज्जागताय पजाय अण्डभूताय परियोनद्धाय अविज्जण्डकोसं पदालेत्वा एको व लोके अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुद्धो। अहं हि,

---

उच्छिन्नमूल हो गये... अत: मैं भी 'तपस्वी' कहला सकता हूँ। परन्तु उस कारण से नहीं, जिस आशय से तुम मुझको कह रहे हो।'' (७)

१०. ''भो गौतम! आप अपगर्भ (अप्रगल्भ = अकुशल) हैं।''

''...ब्राह्मण! जिसका भविष्य में गर्भ में आना सदा के लिये रुक गया है, नष्ट हो गया है... उसको मैं 'अपगर्भ' (पुनर्जन्म न होना) मानता हूँ। यह मेरा सदा के लिये ...पूर्ववत्... जिस आशय से तुम मुझे कह रहे हो। (८) (क)''

११. ''जैसे, ब्राह्मण! किसी मुर्गी के आठ दश अण्डे हो, वे उस मुर्गी द्वारा अच्छी तरह सेवित, परिभावित हों जब मुर्गी के उन बच्चों में जो सबसे पहले पैरों के नखों के अग्र भाग से या चौंच से अण्डे को तोड़कर बाहर निकले उसको क्या कहोगे—ज्येष्ठ या कनिष्ठ?''

''ज्येष्ठ कहेंगे, भो गौतम! क्योंकि, भो गौतम! वही उनमें ज्येष्ठ (प्रथम उत्पन्न) होता है।''

१२. ''इसी प्रकार, ब्राह्मण! अविद्यारूप अण्डे से जकड़ी हुई इस प्रजा में मैं अकेला ही अविद्यारूप अण्डे का खोल फोड़कर सर्वप्रथम सम्यक्सम्बोधि (बुद्धत्व) का ज्ञाता हुआ हूँ। मैं

ब्राह्मण, जेट्ठो सेट्ठो लोकस्स। आरद्धं खो पन मे, ब्राह्मण, विरियं अहोसि असल्लीनं, उपट्ठिता [B.22] सति असम्मुट्ठा, पस्सद्धो कायो असारद्धो, समाहितं चित्तं एकग्गं। सो खो अहं, ब्राह्मण, विविच्चेव कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेहि सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरामि; वितक्कविचारानं वूपसमा अज्झत्तं सम्पसादनं [R.177] चेतसो एकोदिभावं अवितक्कं अविचारं समाधिजं पीतिसुखं दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरामि; पीतिया च विरागा उपेक्खको च विहरामि सतो च सम्पजानो सुखं च कायेन पटिसंवेदेमि यं तं अरिया आचिक्खन्ति—'उपेक्खको सतिमा सुखविहारी' ति ततियं झानं उपसम्पज्ज विहरामि; सुखस्स च पहाना दुक्खस्स च पहाना पुब्बेव सोमनस्सदोमनस्सानं अत्थङ्गमा अदुक्खमसुखं उपेक्खासतिपारिसुद्धिं चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरामि।

[N.291] १३. "सो एवं समाहिते चित्ते परिसुद्धे परियोदाते अनङ्गणे विगतूपक्किलेसे मुदुभूते कम्मनिये ठिते आनेञ्जप्पत्ते पुब्बेनिवासानुस्सतिञाणाय चित्तं अभिनिन्नामेसिं। सो अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरामि, सेय्यथीदं—एकं पि जातिं द्वे पि जातियो तिस्सो पि जातियो चतस्सो पि जातियो चत्तालीसं पि जातियो पञ्ञासं पि जातियो जातिसतं पि जातिसहस्सं पि जातिसतसहस्सं पि अनेके पि संवट्टकप्पे अनेके पि विवट्टकप्पे अनेके पि संवट्टविवट्टकप्पे—'अमुत्रासिं एवंनामो एवंगोत्तो एवंवण्णो एवमाहारो एवंसुख-दुक्खप्पटिसंवेदी एवमायुपरियन्तो, सो ततो चुतो इधूपपन्नो' ति। इति साकारं सउद्देसं

---

ही, ब्राह्मण! लोक में ज्येष्ठ हूँ, श्रेष्ठ हूँ। मैने ही, ब्राह्मण! लोक में न दीखने वाला वीर्य आरम्भ किया। विस्मरणरहित स्मृति भी मेरे सम्मुख थी। अतः, मेरा शरीर स्थिर एवं शान्त था। चित्त भी एकाग्र एवं समाहित था। अतः ब्राह्मण! कामभोग एवं अकुशल कर्मों से दूर रहकर वितर्क विचार सहित, प्रीति से उत्पन्न प्रथम ध्यान को प्राप्त कर साधना करने लगा। वितर्क एवं विचारों के शान्त हो जाने पर, आध्यात्मिक शान्ति, चित्त की एकाग्रता, अवितर्क, अविचार समाधि से उत्पन्न प्रीतिसुखमय द्वितीय ध्यान को प्राप्त कर साधना करने लगा। प्रीति से भी विरक्त और उपेक्षक हो कर साधना करता हुआ, स्मृतिमान् सम्प्रजन्य (अनुभव) युक्त हो कर काया से सुख को भी अनुभव करता हुआ, जिसको कि आर्यजन उपेक्षक, स्मृतिमान् एवं सुखविहारी कहते हैं ऐसे तृतीय ध्यान को प्राप्त कर सुख-दुःख के प्रहाण से, सौमनस्य (चित्तोल्लास) एवं दौर्मनस्य (चित्तसन्ताप) के पहले ही शान्त हो जाने से, अदुःख, असुख, उपेक्षा, स्मृतिपरिशुद्धि रूप चतुर्थ ध्यान को प्राप्त कर साधना करता हूँ।

१३. "इस प्रकार, चित्त के समाहित, परिशुद्ध, पर्यवदात, अङ्गण (चित्तमल) रहित, उपक्लेशरहित, मृदुभूत, कर्मयोग्य, स्थिर तथा अचलताप्राप्त (समाहित) हो जाने पर पूर्व जन्मों की स्मृति के ज्ञान के लिये उस चित्त को झुकाया। फिर मैं अपने अनेक पूर्वजन्मों को स्मरण करने लगा; जैसे— एक जन्म भी, दो जन्म भी... हजार जन्म भी, अनेक संवर्त, अनेक विवर्त, अनेक संवर्त विवर्त— जहाँ मैं इस नाम का, इस गोत्र का, इस वर्ण का, ऐसा आहार करने वाला, ऐसे सुख दुःख का अनुभव करने वाला तथा इतनी आयु वाला था। वह मैं वहाँ से च्युत होकर यहाँ उत्पन्न हुआ हूँ। वह मैं आकार एवं उद्देश्य सहित धारण किये हुए अपने अनेक पूर्वजन्मों का स्मरण करने लगा।

अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरामि। अयं खो मे, ब्राह्मण, रत्तिया पठमे यामे पठमा विज्जा अधिगता; अविज्जा विहता विज्जा उप्पन्ना; तमो विहतो आलोको उप्पन्नो, यथा तं अप्पमत्तस्स आतापिनो पहितत्तस्स विहरतो। अयं खो मे, ब्राह्मण, पठमा अभिनिब्भिदा अहोसि कुक्कुटच्छापकस्सेव अण्डकोसम्हा।

१४. ''सो एवं समाहिते चित्ते परिसुद्धे परियोदाते अनङ्गणे विगतूपक्किलेसे [R.178] मुदुभूते कम्मनिये ठिते आनेञ्जप्पत्ते सत्तानं चुतूपपातञाणाय चित्तं अभिनिन्नामेसिं। सो दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन सत्ते पस्सामि चवमाने उपपज्जमाने हीने [B.23] पणीते सुवण्णे दुब्बण्णे, सुगते दुग्गते यथाकम्मूपगे सत्ते पजानामि—'इमे वत भोन्तो सत्ता कायदुच्चरितेन समन्नागता वचीदुच्चरितेन समन्नागता मनोदुच्चरितेन समन्नागता अरियानं उपवादका मिच्छादिट्ठिका मिच्छादिट्ठिकम्मसमादाना; ते कायस्स भेदा परं मरणा अपायं दुग्गतिं विनिपातं निरयं उपपन्ना ति। इमे वा पन भोन्तो सत्ता कायसुचरितेन समन्नागता वचीसुचरितेन समन्नागता मनोसुचरितेन समन्नागता अरियानं अनुपवादका सम्मादिट्ठिका सम्मादिट्ठिकम्मसमादाना; ते कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपन्ना' ति। इति दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन सत्ते पस्सामि चवमाने उपपज्जमाने हीने पणीते सुवण्णे दुब्बण्णे, सुगते दुग्गते यथाकम्मूपगे सत्ते पजानामि। अयं खो मे, [N.292] ब्राह्मण, रत्तिया मज्झिमे यामे दुतिया विज्जा अधिगता; अविज्जा विहता विज्जा उप्पन्ना; तमो विहतो आलोको उप्पन्नो, यथा ते अप्पमत्तस्स आतापिनो पहितत्तस्स विहरतो। अयं खो मे, ब्राह्मण, दुतिया अभिनिब्भिदा अहोसि कुक्कुटच्छापकस्सेव अण्डकोसम्हा।

---

ब्राह्मण! इस प्रकार प्रमादरहित, तत्पर, आत्मसंयमयुक्त साधना करते हुए मुझको रात्रि के प्रथम प्रहर में पहली विद्या प्राप्त हुई। अविद्या नष्ट हुई, विद्या आयी। अन्धकार नष्ट हुआ, प्रकाश उत्पन्न हुआ। ब्राह्मण! उस अण्डे से निकले मुर्गी के बच्चे के समान फूटकर यह मेरा पहला बाहर निकलना हुआ।

१४. ''इस प्रकार मैने चित्त के परिशुद्ध, पर्यवदात ...पूर्ववत्... हो जाने पर प्राणियों के जन्म-मरण के ज्ञान के लिये अपने चित्त को झुकाया। मनुष्यदुर्लभ दिव्य विशुद्ध नेत्र से अच्छे बुरे, सुवर्ण दुर्वर्ण, सुगत दुर्गत (सद्गति एवं दुर्गति प्राप्त) प्राणियों को कर्मानुसार मरते जन्मते देखने लगा। उनमें से कुछ प्राणी कायदुश्चरित, वाग्दुश्चरित एवं मनोदुश्चरित से युक्त होते हुए आर्यों के निन्दक एवं मिथ्या दृष्टि वाले थे। वे देहपात के बाद, अपायमय दुर्गतिभूत निरय (नरक) लोक में उत्पन्न हुए। और कुछ कायसुचरित, वाक्सुचरित एवं मनःसुचरित से युक्त थे, वे आर्यों के प्रशंसक, सम्यग्दृष्टि एवं सम्यग्दृष्टि कर्मों से सम्पन्न थे। वे देहपातानन्तर सुगतिमय स्वर्गलोक में उत्पन्न हुए। इस प्रकार मैने मानव-दुर्लभ दिव्य नेत्रों से. ...पूर्ववत्... कर्मानुसार उत्पन्न एवं मृत प्राणियों को देखा। इस प्रकार, ब्राह्मण! प्रमादरहित, तत्पर एवं आत्मसंयत मुझको रात्रि के द्वितीय प्रहर में यह द्वितीय विद्या अधिगत हुई। अविद्या नष्ट हो गयी, विद्या प्राप्त हुई; अन्धकार नष्ट हो गया, प्रकाश उद्भूत हुआ। ब्राह्मण! अण्डे से निकले मुर्गी के बच्चे के समान मेरा यह दूसरा बाहर निकलना हुआ।

१५. ''सो एवं समाहिते चित्ते परिसुद्धे परियोदाते अनङ्गणे विगतूपक्किलेसे मुदुभूते कम्मनिये ठिते आनेञ्जप्पत्ते आसवानं खयञाणाय चित्तं अभिनिन्नामेसिं। सो 'इदं दुक्खं' ति यथाभूतं अब्भञ्ञासिं, 'अयं दुक्खसमुदयो' ति यथाभूतं अब्भञ्ञासिं, 'अयं दुक्खनिरोधो' [R.179] ति यथाभूतं अब्भञ्ञासिं, 'अयं दुक्खनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं अब्भञ्ञासिं; 'इमे आसवा' ति यथाभूतं अब्भञ्ञासिं, 'अयं आसवसमुदयो' ति यथाभूतं अब्भञ्ञासिं, 'अयं आसवनिरोधो' ति यथाभूतं अब्भञ्ञासिं, 'अयं आसवनिरोधगामिनी पटिपदा' ति यथाभूतं अब्भञ्ञासिं। तस्स मे एवं जानतो एवं पस्सतो कामासवा पि चित्तं विमुच्चित्थ, भवासवा पि चित्तं विमुच्चित्थ, अविज्जासवा पि चित्तं विमुच्चित्थ। विमुत्तस्मिं विमुत्तमिति ञाणं अहोसि। 'खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया' ति अब्भञ्ञासिं। अयं खो मे, ब्राह्मण, रत्तिया पच्छिमे यामे ततिया विज्जा अधिगता; [B.24] अविज्जा विहता विज्जा उप्पन्ना; तमो विहतो आलोको उप्पन्नो, यथा तं अप्पमत्तस्स आतापिनो पहितत्तस्स विहरतो। अयं खो मे, ब्राह्मण, ततिया अभिनिब्भिदा अहोसि कुक्कुटच्छापकस्सेव अण्डकोसम्हा'' ति।

१६. एवं वुत्ते वेरञ्जो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—''जेट्ठो भवं गोतमो, सेट्ठो भवं गोतमो। अभिक्कन्तं, भो गोतम, अभिक्कन्तं, भो गोतम! सेय्यथापि, भो गोतम, निक्कुज्जितं वा उक्कुज्जेय्य, पटिच्छन्नं वा विवरेय्य, मूळ्हस्स वा मग्गं आचिक्खेय्य, अन्धकारे वा तेलपज्जोतं धारेय्य—चक्खुमन्तो रूपानि दक्खन्ती ति, एवमेव भोता गोतमेन अनेकपरियायेन धम्मो पकासितो। एसाहं भवन्तं गोतमं सरणं गच्छामि धम्मं च भिक्खुसङ्घं च। उपासकं मं भवं गोतमो धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं'' ति॥ ●

---

१५. ''इस प्रकार चित्त के परिशुद्ध ...पूर्ववत्... मैंने अपने चित्त को आश्रवक्षयज्ञान के लिये झुकाया। तब मैंने 'यह दुःख है'—यह भली भाँति जान लिया, 'यह दुःखसमुदय है'... 'यह दुःखनिरोध है'... 'यह दुःखनिरोधगामी मार्ग है'—यह भली भाँति जान लिया। 'ये आश्रव हैं'... 'यह आश्रवसमुदय है'... 'यह आश्रवनिरोध है'... 'यह आश्रवनिरोधगामी मार्ग है'—यह भली भाँति जान लिया। इस प्रकार जानते, समझते हुए मेरा चित्त कामाश्रवों से मुक्त हो गया, भवाश्रवों से... अविद्याश्रवों से भी मुक्त हो गया। उसके मुक्त होने पर 'मैं मुक्त हो चुका'—ऐसा मुझको ज्ञात हो गया। 'मेरी जन्म मरण परम्परा क्षीण हो गयी, धर्मसाधना पूर्ण हुई, जो करना था वह कर लिया, अब यहाँ कोई कर्तव्य शेष नहीं है'—ऐसा मैंने जान लिया। ब्राह्मण! रात्रि के तीसरे प्रहर में प्रमादरहित तत्पर, एवं आत्मसंयत मुझको यह तृतीय विद्या अधिगत हुई। अविद्या नष्ट हो गयी, विद्या प्राप्त हुई; अन्धकार नष्ट हो गया, आलोक उद्भूत हुआ। ब्राह्मण! अण्डे से निकले मुर्गी के बच्चे के समान मेरा यह तीसरा फूट कर बाहर निकलना हुआ।

१६. (भगवान् द्वारा) ऐसा कहे जाने पर, वह वेरञ्ज ब्राह्मण भगवान् से यों निवेदन करने लगा—'आप गौतम ही ज्येष्ठ हैं, आप गौतम ही श्रेष्ठ हैं। भो गौतम! आपने अति सुन्दर कहा। भो गौतम! जैसे कोई ओंधे पात्र को सीधा कर दे ...पूर्ववत्... उपासक मानें॥' ●

**२. सीहसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा वेसालियं विहरति महावने कूटागार- [N.293] सालायं। तेन खो पन समयेन सम्बहुला अभिञ्ञाता अभिञ्ञाता लिच्छवी सन्थागारे सन्निसिन्ना सन्निपतिता अनेकपरियायेन बुद्धस्स वण्णं भासन्ति, धम्मस्स वण्णं भासन्ति, सङ्घस्स वण्णं भासन्ति।

२. तेन खो पन समयेन सीहो सेनापति निगण्ठसावको तस्सं परिसायं [R.180] निसिन्नो होति। अथ खो सीहस्स सेनापतिस्स एतदहोसि—"निस्संसयं खो सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो भविस्सति, तथा हिमे सम्बहुला अभिञ्ञाता अभिञ्ञाता लिच्छवी सन्थागारे सन्निसिन्ना सन्निपतिता अनेकपरियायेन बुद्धस्स वण्णं भासन्ति, धम्मस्स वण्णं भासन्ति, सङ्घस्स वण्णं भासन्ति। यन्नूनाहं तं भगवन्तं दस्सनाय उपसङ्कमेय्यं अरहन्तं सम्मासम्बुद्धं" ति।

३. अथ खो सीहो सेनापति येन निगण्ठो नाटपुत्तो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा निगण्ठं नाटपुत्तं एतदवोच—"इच्छामहं, भन्ते, समणं गोतमं दस्सनाय उपसङ्कमितुं" ति। "किं पन त्वं, सीह, किरियवादो समानो अकिरियवादं समणं गोतमं दस्सनाय [B.25] उपसङ्कमिस्ससि? समणो हि, सीह, गोतमो अकिरियवादो, अकिरियाय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती" ति।

अथ खो सीहस्स सेनापतिस्स यो अहोसि गमियाभिसङ्खारो भगवन्तं दस्सनाय, सो पटिप्पस्सम्भि।

---

**२. सिंहसूत्र** : :

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) वैशाली के महावन की कूटागारशाला में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय सभाभवन में एकत्र हुए बैठे बहुत से प्रतिष्ठित लिच्छवि (भगवान्) बुद्ध का यशोगान कर रहे थे, धर्म का... सङ्घ का यशोगान कर रहे थे।

२. उस समय, निगण्ठशिष्य सिंह सेनापति भी उस सभा में बैठा था। तब सिंह सेनापति के मन में यह विचार हुआ—"अवश्य ही वे भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध होंगे, तभी तो यहाँ एकत्र होकर बैठे ये प्रतिष्ठित लिच्छवि भी उनका, धर्म का तथा सङ्घ का यह यशोगान कर रहे हैं। तो क्यों न मैं भी उन भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध के दर्शन कर आऊँ।"

३. तब वह सिंह सेनापति निर्ग्रन्थ ज्ञातिपुत्र के पास गया। वहाँ जाकर उनसे यों बोला—"भन्ते! मैं श्रमण गौतम के दर्शनहेतु जाना चाहता हूँ।"

"अरे सिंह! क्या तूँ, क्रियावादी होता हुआ भी, उस अक्रियावादी श्रमण गौतम के पास जायगा! सिंह! श्रमण गौतम अक्रियावाद का उपदेश करता है, अपने शिष्यों को भी उस अक्रियावाद की साधनाहेतु प्रेरित करता है।"

यह सुनकर सिंह सेनापति का भगवान् के दर्शनहेतु जाने का मानसिक विचार वहीं का वहीं दब गया।

४. दुतियं पि खो सम्बहुला अभिञ्ञाता अभिञ्ञाता लिच्छवी सन्थागारे सन्निसिन्ना सन्निपतिता अनेकपरियायेन बुद्धस्स ...पे०... धम्मस्स ...पे०... सङ्घस्स वण्णं भासन्ति। दुतियं पि खो सीहस्स सेनापतिस्स एतदहोसि—"निस्संसयं खो सो भगवा अरहं सम्मा-सम्बुद्धो भविस्सति, तथा हिमे सम्बहुला अभिञ्ञाता अभिञ्ञाता लिच्छवी सन्थागारे सन्निसिन्ना सन्निपतिता अनेकपरियायेन बुद्धस्स वण्णं भासन्ति, धम्मस्स ...पे०.. सङ्घस्स [R.181] वण्णं भासन्ति। यन्नूनाहं तं भगवन्तं दस्सनाय उपसङ्कमेय्यं अरहन्तं सम्मासम्बुद्धं" ति।

५. अथ खो सीहो सेनापति येन निगण्ठो नाटपुत्तो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा [N.294] निगण्ठं नाटपुत्तं एतदवोच—"इच्छामहं, भन्ते, समणं गोतमं दस्सनाय उपसङ्कमितुं" ति।

"किं पन त्वं, सीह, किरियवादो समानो अकिरियवादं समणं गोतमं दस्सनाय उपसङ्कमिस्ससि? समणो हि, सीह, गोतमो अकिरियवादो अकिरियाय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती" ति।

दुतियं पि खो सीहस्स सेनापतिस्स यो अहोसि गमियाभिसङ्खारो भगवन्तं दस्सनाय, सो पटिप्पस्सम्भि।

६. ततियं पि खो सम्बहुला अभिञ्ञाता अभिञ्ञाता लिच्छवी सन्थागारे सन्निसिन्ना सन्निपतिता अनेकपरियायेन बुद्धस्स ...पे०... धम्मस्स ...पे०... सङ्घस्स वण्णं भासन्ति। ततियं पि खो सीहस्स सेनापतिस्स एतदहोसि—"निस्संसयं खो सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो भविस्सति, तथा हिमे सम्बहुला अभिञ्ञाता अभिञ्ञाता लिच्छवी सन्थागारे सन्निसिन्ना सन्निपतिता अनेकपरियायेन बुद्धस्स वण्णं भासन्ति, धम्मस्स वण्णं भासन्ति, सङ्घस्स वण्णं भासन्ति। किं हिमे करिस्सन्ति निगण्ठा अपलोकिता वा अनपलोकिता वा! [B.26] यन्नूनाहं अनपलोकेत्वा व निगण्ठे तं भगवन्तं दस्सनाय उपसङ्कमेय्यं अरहन्तं सम्मासम्बुद्धं" ति।

७. अथ खो सीहो सेनापति पञ्चमत्तेहि रथसतेहि दिवादिवस्स वेसालिया निय्यासि

---

४. दूसरी बार भी बहुत से प्रतिष्ठित लिच्छवि संस्थागार में ...पूर्ववत्... क्यों न मैं भी भगवान् का दर्शन कर आऊँ।

५. तब वह सिंह सेनापति निर्ग्रन्थ ज्ञातिपुत्र के पास गया ...पूर्ववत्... क्यों न मैं भी भगवान् के दर्शन कर आऊँ।...

६. जब तीसरी बार सिंह सेनापति ने लिच्छवियों के मुख से भगवान् बुद्ध की यशोगाथा सुनी तो उसने विचार किया कि निर्ग्रन्थ ज्ञातिपुत्र से आदेश लेकर क्या होगा! वे मेरी क्या हानि कर देंगे! अत: मैं तो उनसे पूछे विना ही अब भगवान् के दर्शन करने जाऊँगा।

७. तब सिंह सेनापति वैशाली से पाँच सौ रथों के साथ दिन दिन में (दोपहर में) ही भगवान्

भगवन्तं दस्सनाय। यावतिका यानस्स भूमि, यानेन गन्त्वा याना पच्चोरोहित्वा पत्तिको व अगमासि। अथ खो सीहो सेनापति येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सीहो सेनापति भगवन्तं एतदवोच—

८. "सुतं मेतं, भन्ते—'अकिरियवादो समणो गोतमो, अकिरियाय धम्मं [R.182] देसेति, तेन च सावके विनेती' ति। ये ते, भन्ते, एवमाहंसु—'अकिरियवादो समणो गोतमो, अकिरियाय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति, कच्चि ते, भन्ते, भगवतो वुत्तवादिनो न च भगवन्तं अभूतेन अब्भाचिक्खन्ति धम्मस्स चानुधम्मं व्याकरोन्ति न च कोचि सहधम्मिको वादानुवादो गारय्हं ठानं आगच्छति? अनब्भक्खातुकामा हि मयं, भन्ते, भगवन्तं" ति।

९. "अत्थि, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—[N.295] 'अकिरियवादो समणो गोतमो, अकिरियाय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति।

१०. "अत्थि, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य— 'किरियवादो समणो गोतमो, अकिरियाय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति।

११. "अत्थि, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य— 'उच्छेदवादो समणो गोतमो, उच्छेदाय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति।

१२. "अत्थि, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'जेगुच्छी समणो गोतमो, जेगुच्छिताय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति।

१३. "अत्थि, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—[B.27] 'वेनयिको समणो गोतमो, विनयाय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति।

---

के दर्शनहेतु निकला। जितने मार्ग पर यान से जाया जा सकता था, यान से गया। तदनन्तर यान से उतरकर पैदल चलकर वह विहार में भगवान् के सम्मुख पहुँचा। पहुँचकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठा हुआ वह सिंह सेनापति भगवान् से यों बोला—

८. "भन्ते! मैंने सुना है—'श्रमण गौतम अक्रियावादी हैं। अक्रिया के लिये धर्मोपदेश करते हैं, तथा शिष्यों को भी इसके लिये प्रेरित करते हैं।' भन्ते! जो ऐसा कहता है, क्या वह भगवान् के विषय में सत्य कहता है, असत् तो नहीं कहता, धर्मानुसार ही धर्म का व्याख्यान करता है? कोई सहधर्मिक वादानुवाद तो इससे निन्दित नहीं होता? भन्ते! हम भगवान् की निन्दा नहीं करना चाहते।"

९. "सिंह! एक कारण है, जिस कारण से मेरा उचित विश्लेषण करता हुआ, कोई यह कहे—'श्रमण गौतम अक्रियवादी है, अक्रियवाद का उपदेश करता है, अपने शिष्यों को भी उसकी साधना के लिये प्रेरित करता है।' (१)

१०. ... 'श्रमण गौतम क्रियावादी है, क्रियावाद का उपदेश करता है ...पूर्ववत्...। (२)

११. ... 'श्रमण गौतम उच्छेदवादी हैं, उच्छेदवाद का उपदेश करता है ...पूर्ववत्...। (३)

१२. ... 'श्रमण गौतम जुगुप्सु है, जुगुप्सा का उपदेश करता है ...पूर्ववत्...। (४)

१४. ''अत्थि, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'तपस्सी समणो गोतमो, तपस्सिताय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति।

१५. ''अत्थि, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'अपगब्भो समणो गोतमो, अपगब्भताय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति।

१६. ''अत्थि, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'अस्सासको समणो गोतमो, अस्सासाय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति।

[R.183] १७. ''कतमो च, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'अकिरियवादो समणो गोतमो, अकिरियाय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति? अहं हि, सीह, अकिरियं वदामि कायदुच्चरितस्स वचीदुच्चरितस्स मनोदुच्चरितस्स; अनेकविहितानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं अकिरियं वदामि। अयं खो, सीह, परियायो, [N.296] येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'अकिरियवादो समणो गोतमो, अकिरियाय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति।

१८. ''कतमो च, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'किरियवादो समणो गोतमो, अकिरियाय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति? अहं हि, सीह, किरियं वदामि कायसुचरितस्स वचीसुचरितस्स मनोदुच्चरितस्स; अनेकविहितानं कुसलानं धम्मानं किरियं वदामि। अयं खो, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'किरियवादो समणो गोतमो, किरियाय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति।

१९. ''कतमो च, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—[B.28] 'उच्छेदवादो समणो गोतमो, उच्छेदाय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति? अहं हि, सीह, उच्छेदं वदामि रागस्स दोसस्स मोहस्स; अनेकविहितानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं उच्छेदं वदामि। अयं खो, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'उच्छेदवादो समणो गोतमो, उच्छेदाय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति।

२०. ''कतमो च, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—

---

१३. ... 'श्रमण गौतम वैनयिक है, विनय का उपदेश ...पूर्ववत्...। (५)

१४. ... 'श्रमण गौतम तपस्वी है, तपस्या का उपदेश करता है ...पूर्ववत्...। (६)

१५. ... 'श्रमण गौतम अपगर्भ है, अपगर्भता का उपदेश करता है ...पूर्ववत्...। (७)

१६. ... 'श्रमण गौतम आश्वासक है, आश्वास का उपदेश ...पूर्ववत्...। (८)

१७. ''सिंह! वह कौन सा कारण है, जिस कारण से, मेरा उचित विश्लेषण करता हुआ कोई यह कहे कि श्रमण गौतम अक्रियावादी है... पूर्ववत्[१]...। (१)

१८. ''सिंह... कोई यह कहे कि श्रमण गौतम क्रियावादी है... पूर्ववत्[२]...। (२)

१९. ''सिंह... कोई यह कहे कि श्रमण गौतम उच्छेदवादी है... पूर्ववत्[३]...। (३)

---

१. २. ३. की विस्तृत व्याख्या के लिये अनुपद में वर्णित पूर्व **वेरञ्जसूत्र** देखें।

'जेगुच्छी समणो गोतमो, जेगुच्छिताय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति? अहं हि, सीह, जिगुच्छामि कायदुच्चरितेन वचीदुच्चरितेन मनोदुच्चरितेन; जिगुच्छामि अनेकविहितानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं समापत्तिया। अयं खो, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'जेगुच्छी समणो गोतमो, जेगुच्छिताय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति।

२१. "कतमो च, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य— 'वेनयिको समणो गोतमो, विनयाय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति? अहं हि, सीह, विनयाय धम्मं देसेमि रागस्स दोसस्स मोहस्स; अनेकविहितानं पापकानं [R.184] अकुसलानं धम्मानं विनयाय धम्मं देसेमि। अयं खो, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'वेनयिको समणो गोतमो, विनयाय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति।

२२. "कतमो च, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य— 'तपस्सी समणो गोतमो, तपस्सिताय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति? तपनीयाहं, सीह, पापके अकुसले धम्मे वदामि कायदुच्चरितं वचीदुच्चरितं मनोदुच्चरितं। यस्स [N.297] खो, सीह, तपनीया पापका अकुसला धम्मा पहीना उच्छिन्नमूला तालावत्थुकता अनभावङ्कता आयतिं अनुप्पादधम्मा, तमहं 'तपस्सी' ति वदामि। तथागतस्स खो, सीह, तपनीया पापका अकुसला धम्मा पहीना उच्छिन्नमूला तालावत्थुकता अनभावङ्कता आयतिं अनुप्पादधम्मा। अयं खो, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य— 'तपस्सी समणो गोतमो, तपस्सिताय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति।

२३. "कतमो च, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—[B.29] 'अपगब्भो समणो गोतमो, अपगब्भताय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति? यस्स खो, सीह, आयतिं गब्भसेय्या पुनब्भवाभिनिब्बत्ति पहीना उच्छिन्नमूला तालावत्थुकता अनभावङ्कता आयतिं अनुप्पादधम्मा, तमहं 'अपगब्भो' ति वदामि। तथागतस्स खो, सीह, आयतिं गब्भसेय्या पुनब्भवाभिनिब्बत्ति पहीना उच्छिन्नमूला तालावत्थुकता अनभावङ्कता आयतिं अनुप्पादधम्मा। अयं खो, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'अपगब्भो समणो गोतमो, अपगब्भताय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति।

---

२०. "सिंह... कोई यह कहे कि श्रमण गौतम जुगुप्सु है... पूर्ववत्[१]...। (४)

२१. "सिंह... कोई यह कहे कि श्रमण गौतम वैनयिक है... पूर्ववत्[२]...। (५)

२२. "सिंह... कोई यह कहे कि श्रमण गौतम तपस्वी है... पूर्ववत्[३]...। (६)

२३. "सिंह... कोई यह कहे कि श्रमण गौतम अपगर्भ है... पूर्ववत्[४]...। (७)

---

१. २. ३. ४. की विस्तृत व्याख्या के लिये अनुपद में वर्णित पूर्व **वेरञ्जसूत्र** देखें।

२४. ''कतमो च, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'अस्सासको समणो गोतमो, अस्सासाय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती' ति? अहं [R.185] हि, सीह, अस्सासको परमेन अस्सासेन, अस्सासाय धम्मं देसेमि, तेन च सावके विनेमि। अयं खो, सीह, परियायो, येन मं परियायेन सम्मा वदमानो वदेय्य—'अस्सासको समणो गोतमो, अस्सासाय धम्मं देसेति, तेन च सावके विनेती''' ति।

२५. एवं वुत्ते सीहो सेनापति भगवन्तं एतदवोच—''अभिक्कन्तं, भन्ते, अभिक्कन्तं, भन्ते ...पे०... उपासकं मं, भन्ते, भगवा धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं'' ति।

२६. ''अनुविच्चकारं खो, सीह, करोहि। अनुविच्चकारो तुम्हादिसानं ञातमनुस्सानं साधु होती'' ति।

''इमिनापाहं, भन्ते, भगवतो भिय्योसोमत्ताय अत्तमनो अभिरद्धो, यं मं भगवा एवमाह—'अनुविच्चकारं खो, सीह, करोहि। अनुविच्चकारो तुम्हादिसानं ञातमनुस्सानं [N.298] साधु होती' ति। मं हि, भन्ते, अञ्ञतित्थिया सावकं लभित्वा केवलकप्पं वेसालिं पटाकं परिहरेय्युं—'सीहो अम्हाकं सेनापति सावकत्तं उपगतो' ति। अथ च पन भगवा एवमाह—'अनुविच्चकारं, सीह, करोहि। अनुविच्चकारो तुम्हादिसानं ञातमनुस्सानं साधु होती' ति। एसाहं, भन्ते, दुतियं पि भगवन्तं सरणं गच्छामि धम्मं च भिक्खुसङ्घं च। उपासकं मं भगवा धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं'' ति।

[B.30] २७. ''दीघरत्तं खो ते, सीह, निगण्ठानं ओपानभूतं कुलं, येन नेसं उपगतानं पिण्डकं दातब्बं मञ्ञेय्यासी'' ति।

''इमिनापाहं, भन्ते, भगवतो भिय्योसोमत्ताय अत्तमनो अभिरद्धो, यं मं भगवा

---

२४. ''सिंह! क्या कारण है कि जिससे मेरा उचित विश्लेषण करने वाला मुझको यह कहे कि श्रमण गौतम आश्वासक (आश्वासन=धैर्य देने वाला) है, आश्वासन के लिये धर्मदेशना करता है, उसी की साधना के लिये अपने शिष्यों को प्रेरित करता है, क्योंकि सिंह! मैं परम आश्वासन से धैर्य बँधाता हूँ, उसी के लिये मैं अपने शिष्यों को प्रेरित करता हूँ। यह कारण है जिससे ...।'' (८)

२५. (भगवान् द्वारा ऐसी देशना किये जानेपर) सिंह सेनापति ने भगवान् से निवेदन किया—''अति सुन्दर कहा, भन्ते! आपने, बहुत उचित कहा। ...पूर्ववत्... आज से आप भगवान् मुझे जीवनपर्यन्त अपना शरणागत उपासक समझें।''

२६. ''सिंह! जो करना हो सोच समझकर करो। तुम्हारे जैसे समाज में प्रख्यात पुरुषों के लिये सोच विचार कर कार्य करना ही उचित होगा।''

''भन्ते! मैं आपके इस... उपदेश से और भी अधिक सन्तुष्ट हुआ। भन्ते! दूसरे तैर्थिक मुझको श्रावक पाकर वैशाली में पताकाएँ उडाते कि सिंह सेनापति हमारा श्रावक हो गया! परन्तु आप अब भी मुझको यही उपदेश कर रहे हैं कि सोच समझ कार्य करो...। भन्ते! आपके इस उपदेश से और भी अधिक प्रसन्नमन एवं सन्तुष्ट हूँ। अतः मैं पुनः दूसरी बार आप की शरण में धर्म और सङ्घ की शरण में जाता हूँ।''

एवमाह—'दीघरत्तं खो ते, सीह, निगण्ठानं ओपानभूतं कुलं, येन नेसं उपगतानं पिण्डकं दातब्बं मञ्ञेय्यासी' ति। सुतं मेतं, भन्ते—'समणो गोतमो एवमाह—मय्हमेव दानं [R.186] दातब्बं, न अञ्ञेसं दिन्नं महप्फलं; मय्हमेव सावकानं दिन्नं महप्फलं, न अञ्ञेसं सावकानं दिन्नं महप्फलं ति, अथ च पन मं भगवा निगण्ठेसु पि दाने समादपेति। अपि च, भन्ते, मयमेत्थ कालं जानिस्साम। एसाहं, भन्ते, ततियं पि भगवन्तं सरणं गच्छामि धम्मं च भिक्खुसङ्घं च। उपासकं मं भगवा धारेतु अज्जतग्गे पाणुपेतं सरणं गतं'' ति।

२८. अथ खो भगवा सीहस्स सेनापतिस्स अनुपुब्बिं कथं कथेसि, सेय्यथीदं—दानकथं सीलकथं सग्गकथं, कामानं आदीनवं ओकारं सङ्किलेसं नेक्खम्मे आनिसंसं पकासेसि। यदा भगवा अञ्ञासि सीहं सेनापतिं कल्लचित्तं मुदुचित्तं विनीवरणचित्तं उदग्गचित्तं पसन्नचित्तं, अथ या बुद्धानं सामुक्कंसिका धम्मदेसना तं पकासेसि—दुक्खं समुदयं निरोधं मग्गं। सेय्यथापि नाम सुद्धं वत्थं अपगतकाळकं सम्मदेव रजनं पटिग्गण्हेय्य; एवमेव सीहस्स सेनापतिस्स तस्मिंयेव आसने विरजं वीतमलं धम्मचक्खुं उदपादि—''यं किञ्चि समुदयधम्मं, सब्बं तं निरोधधम्मं'' ति।

२९. अथ खो सीहो सेनापति दिट्ठधम्मो पत्तधम्मो विदितधम्मो परि- [N.299] योगाळ्हधम्मो तिण्णविचिकिच्छो विगतकथङ्कथो वेसारज्जप्पत्तो अपरप्पच्चयो सत्थुसासने

---

२७. ''सिंह! बहुत समय से तुम्हारा कुल निगण्ठों के लिये प्याऊ के समान रहा है। तुम्हारे द्वारा पर उनके आने पर भिक्षा न देने की बात न सोचना।''

''भन्ते! मैं आपके इस उपदेश से और भी अधिक ...पूर्ववत्... भिक्षा न देने की बात न सोचना। भन्ते! मैंने तो सुना था कि श्रमण गौतम यह कहते हैं कि मुझे ही दान दो, अन्य किसी को दान न दो; क्योंकि मुझको दिया हुआ दान ही फलप्रद होता है, अन्य किसी को दिया हुआ नहीं। जबकि आप मुझे अब भी निगण्ठों को दान का उपदेश कर रहे हैं। यह सुनकर तो मैं और भी अधिक सन्तुष्ट हुआ। अतः मैं तीसरी बार आपकी तथा धर्म एवं सङ्घ की शरण में जाता हूँ।''

२८. तब भगवान् ने सिंह सेनापति को **आनुपूर्वी कथा** कहना आरम्भ किया; जैसे—सर्वप्रथम दान का माहात्म्य, पुनः सदाचार का माहात्म्य, पुनः सुगतिमय स्वर्गलोक का माहात्म्या, पुनः उसको कामभोगों के दोष समझाये, उनसे होने वाले अपराध एवं उनके फलस्वरूप मिलने वाले दण्ड समझाये। उससे प्राप्त होनेवाले कष्ट को समझाया और साथ ही निष्काम कर्म का महत्त्व भी समझाया। अन्त में जब भगवान् ने जान लिया कि सिंह सेनापति का चित्त, अरोग (स्वस्थ), मृदु, दोषों से अनाच्छन्न, उत्साहसम्पन्न, प्रसन्न (श्रद्धालु) हो चुका है तब उनने सिंह सेनापति को बुद्धों की स्वयं समुत्कृष्ट होने वाली आर्यसत्यचतुष्टय की यह धर्मदेशना बताना आरम्भ किया; जैसे—दुःख, दुःखसमुदय, दुःखनिरोध एवं दुःखनिरोधगामी मार्ग। जैसे कोई निर्मल स्वच्छ वस्त्र शीघ्र ही यथेच्छ रंग पकड़ लेता है, वैसे ही उस सिंह सेनापति भगवान् का यह उपदेश सुनते ही यह दिव्य ज्ञान हो गया—''जो कुछ उत्पत्ति धर्म वाला पदार्थ है वह सब निरोधधर्म वाला है।''

२९. तब सिंह सेनापति यह धर्मोपदेश सुन कर, प्राप्त कर, जानकर, उसकी गहराई तक

भगवन्तं एतदवोच—''अधिवासेतु मे, भन्ते, भगवा स्वातनाय भत्तं सद्धिं भिक्खुसङ्घेना'' [R.187] ति। अधिवासेसि भगवा तुण्हीभावेन।

३०. अथ खो सीहो सेनापति भगवतो अधिवासनं विदित्वा उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कामि। अथ खो सीहो सेनापति अञ्ञतरं पुरिसं आमन्तेसि—''गच्छ त्वं, अम्भो पुरिस, पवत्तमंसं जानाही'' ति। अथ खो सीहो सेनापति [B.31] तस्सा रत्तिया अच्चयेन सके निवेसने पणीतं खादनीयं भोजनीयं पटियादापेत्वा भगवतो कालं आरोचापेसि—''कालो, भन्ते! निट्ठितं भत्तं'' ति।

३१. अथ खो भगवा पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय येन सीहस्स सेनापतिस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि सद्धिं भिक्खुसङ्घेन। तेन खो पन समयेन सम्बहुला निगण्ठा वेसालियं रथिकाय रथिकं सिङ्घाटकेन सिङ्घाटकं बाहा पग्गय्ह कन्दति—''अज्ज सीहेन सेनापतिना थूलं पसुं वधित्वा समणस्स गोतमस्स भत्तं कतं? तं समणो गोतमो जानं उद्दिस्सकतं मंसं परिभुञ्जति पटिच्चकम्मं'' ति।

३२. अथ खो अञ्ञतरो पुरिसो येन सीहो सनापति तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा सीहस्स सेनापतिस्स उपकण्णके आरोचेसि—''यग्घे, भन्ते, जानेय्यासि! एते सम्बहुला निगण्ठा वेसालियं रथिकाय रथिकं सिङ्घाटकेन सिङ्घाटकं बाहा पग्गय्ह कन्दन्ति—'अज्ज सीहेन सेनापतिना थूलं पसुं वधित्वा समणस्स गोतमस्स भत्तं कतं। तं समणो गोतमो [R.188] जानं उद्दिस्सकतं मंसं परिभुञ्जति पटिच्चकम्मं' ति। अलं अय्यो, दीघरत्तं हि ते

---

पहुँचकर सन्देहरहित, विवादरहित, कौशल के साथ शास्ता के शासन में पूर्ण विश्वास करता हुआ भगवान् से यों निवेदन करने लगा—''आप भिक्षुसङ्घ के साथ कल का भोजन मेरे घर पर स्वीकार करें।'' भगवान् ने मौनभाव से सिंह सेनापति का यह निमन्त्रण स्वीकार कर लिया।

३०. एतदनन्तर, सिंह सेनापति भगवान् की मौन स्वीकृति जानकर, उनको प्रणाम प्रदक्षिणा कर अपने घर चला आया। वहाँ सिंह सेनापति ने अपने किसी अनुचर से कहा—''जाओ! देखो, क्या बाजार में तैयार मांस है?''। तब सिंह सेनापति ने रात्रि व्यतीत होने पर अपने घर पर ही स्वादिष्ठ एवं रुचिकर व्यञ्जन बनवाये। तथा भगवान् के पास भोजन तय्यार होने का सन्देश भेजा।

३१. तब भगवान् पूर्वाह्ण में वस्त्र व्यवस्थित कर, पात्र चीवर लेकर भिक्षुसङ्घ के साथ सिंह सेनापति के घर आये तथा प्रज्ञप्त आसन पर विराजे। उस समय निर्ग्रन्थ नाथपुत्र के अनुयायी (जैनसाधु) वैशाली की गलियों में घूम-घूमकर यह दुष्प्रचार कर रहे थे—''आज सिंह सेनापति ने एक मोटा पशु मारकर श्रमण गौतम के लिये भोजन बनवाया है। श्रमण गौतम, उसके लिये ही बनाया जानकर भी, उसे खा रहा है।''

३२. तब किसी पुरुष ने सिंह सेनापति के कान में जाकर कहा—''माननीय! आप जानते हैं कि नहीं! ये निर्ग्रन्थ नाथपुत्र के शिष्य वैशाली की गलियों में घूम घूमकर चिल्ला रहे हैं—...पूर्ववत्...। परन्तु आप कोई विचार न करें; क्योंकि ये जैन साधु तो बहुत समय से भगवान् की, इनके धर्म तथा सङ्घ की इसी तरह निन्दा करते हुए इनके विरुद्ध मिथ्या प्रचार करते आ रहे हैं। ये

आयस्मन्तो अवण्णकामा बुद्धस्स अवण्णकामा धम्मस्स अवण्णकामा सङ्घस्स। न च पनेते आयस्मन्तो जिरिदन्ति तं भगवन्तं असता तुच्छा मुसा अभूतेन अब्भाचिक्खितुं; न च मयं जीवितहेतु पि सञ्चिच्च पाणं जीविता वोरोपेय्यामा'' ति।

३३. अथ खो सीहो सेनापति बुद्धप्पमुखं भिक्खुसङ्घं पणीतेन खादनीयेन भोजनीयेन सहत्था सन्तप्पेसि सम्पवारेसि। अथ खो सीहो सेनापति भगवन्तं भुत्ताविं [N.300] ओनीतपत्तपाणिं एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो सीहं सेनापतिं भगवा धम्मिया कथाय सन्दस्सेत्वा समादपेत्वा समुत्तेजेत्वा सम्पहंसेत्वा उट्ठायासना पक्कामी ति॥

**३. अस्साजानीयसुत्तं :** १. ''अट्ठहि, भिक्खवे, अङ्गेहि समन्नागतो रञ्ञो [B.32] भद्दो अस्साजानीयो राजारहो होति राजभोग्गो, रञ्ञो अङ्गन्तेव सङ्खं गच्छति। कतमेहि अट्ठहि? इध, भिक्खवे, रञ्ञो भद्दो अस्साजानीयो उभतो सुजातो होति—मातितो च पितितो च। यस्सं दिसायं अञ्ञे पि भद्दा अस्साजानीया जायन्ति तस्सं दिसायं जातो होति। यं खो पनस्स भोजनं देन्ति—अल्लं वा सुक्खं वा—तं सक्कच्चंयेव परिभुञ्जति अविकिरन्तो। जेगुच्छी होति उच्चारं वा पस्सावं वा अभिनिसीदितुं वा अभिनिपज्जितुं वा। सोरतो [R.189] होति सुखसंवासो, न च अञ्ञे अस्से उब्बेजेता। यानि खो पनस्स तानि होन्ति साठेय्यानि कूटेय्यानि जिम्हेय्यानि वङ्केय्यानि, तानि यथाभूतं सारथिस्स आविकत्ता होति। तेसमस्स सारथि अभिनिम्मदनाय वायमति। वाही खो पन होति। 'कामञ्ञे अस्सा वहन्तु वा मा वा, अहमेत्थ वहिस्सामी' ति चित्तं उप्पादेति। गच्छन्तो खो पन उजुमग्गेनेव गच्छति। थामवा

---

भगवान् की इस तरह निन्दा करते हुए कुछ लज्जा एवं संकोच भी नहीं करते। हम तो अपनी प्राणरक्षा के लिये भी किसी प्राणी की हत्या नहीं करेंगे।''

३३. तब सिंह सेनापति ने बुद्धसहित भिक्षुसङ्घ को अपने हाथ से स्वादिष्ट एवं रुचिकर भोजन परोस कर तृप्त एवं सन्तुष्ट किया। सिंह सेनापति पात्र से हाथ हटाने के बाद, भगवान् को तृप्त जानकर, एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए सिंह सेनापति को भगवान् ने धार्मिक कथाएँ सुनाकर सन्तुष्ट, समुत्तेजित एवं सम्प्रहृष्ट किया। तदनन्तर वे आसन से उठकर विहार में आ गये॥●

**३. अश्वाजानेयसूत्र : : आजानेय अश्व के आठ धर्म**

१. भिक्षुओ! आठ अङ्गों से युक्त कोई श्रेष्ठ जाति का घोड़ा राजा के ही भोगने (सवारी) योग्य होता है तथा वह राजा का ही अङ्ग कहलाता है। किन आठ अङ्गों से? यहाँ १. भिक्षुओ! राजा का कोई अश्व दोनों पक्षों से श्रेष्ठ होता है—मातृपक्ष से भी, पितृपक्ष से भी। जिस दिशा में इस जाति के घोड़े पैदा होते हैं वहीं वह भी पैदा होता है। २. जो कुछ भी उसको खाने को दिया जाता है—सूखा या गीला, उसको वह सम्मान के साथ खाता है, विना इधर उधर विखेरते हुए। ३. वह जहाँ तहाँ मलमूत्रोत्सर्जन में बैठने या लौटने में घृणा मानता है। ४. वह शान्त एवं सुखपूर्वक खड़ा रहता है, चञ्चलता नहीं दिखाता, और पास खड़े दूसरे घोड़ों को उद्विग्न (परेशान) भी नहीं करता। ५. जो इसमें धूर्तता, टेढ़ापन आदि थोड़े बहुत दोष होते हैं उन्हें अश्वशिक्षक दूर कर देता है, या दूर करने का प्रयास करता है। ६. यह अधिक से अधिक भार ढोने में समर्थ है। अपितु जब उसके साथी

होति याव जीवितमरणपरियादाना थामं उपदंसेता। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहि अङ्गेहि समन्नागतो रञ्ञो भद्दो अस्साजानीयो राजारहो होति राजभोग्गो, रञ्ञो अङ्गन्तेव सङ्ख्यं गच्छति।

२. "एवमेव खो, भिक्खवे, अट्ठहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमेहि अट्ठहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु सीलवा होति, पातिमोक्खसंवरसंवुतो विहरति आचारगोचरसम्पन्नो अणुमत्तेसु वज्जेसु भयदस्सावी, समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु। यं खो पनस्स भोजनं देन्ति—लूखं वा पणीतं वा—तं सक्कच्चंयेव परिभुञ्जति अविहञ्ञमानो। जेगुच्छी अनेकविहितानं पापकानं अकुसलानं धम्मानं समापत्तिया। सोरतो होति सुखसंवासो, न अञ्ञे भिक्खू उब्बेजेता। यानि खो [N.301] पनस्स होन्ति साठेय्यानि कूटेय्यानि जिम्हेय्यानि वङ्केय्यानि तानि यथाभूतं [R.190] आविकत्ता होति सत्थरि वा विञ्ञूसु वा सब्रह्मचारीसु। तेसमस्स सत्था वा विञ्ञू वा सब्रह्मचारी अभिनिम्मदनाय वायमति। सिक्खिता खो पन होति। 'कामञ्ञे भिक्खू [B.33] सिक्खन्तु वा मा वा, अहमेत्थ सिक्खिस्सामी' ति चित्तं उप्पादेति। गच्छन्तो खो पन उजुमग्गेनेव गच्छति; तत्रायं उजुमग्गो, सेय्यथीदं—सम्मादिट्ठि ...पे०... सम्मासमाधि। आरद्धविरियो विहरति—'कामं तचो च न्हारु च अट्ठि च अवसिस्सतु, सरीरे उपसुस्सतु मंसलोहितं; यं तं पुरिसथामेन पुरिसविरियेन पुरिसपरक्कमेन पत्तब्बं, न तं अपापुणित्वा

---

आलस्य करते हैं तब वह उसे अकेला ही ढोने का मन बना लेता है। ७. चलता हुआ सरलता से चलता है। ८. दृढ़ शक्तिसम्पन्न होता है तथा वह अपनी यह सामर्थ्य दिखाने के लिये जीना-मरना एक कर देता है। भिक्षुओ! इन आठ अङ्गों से युक्त कोई अश्व राजा का ही अङ्ग कहलाता है।

२. इसी प्रकार, भिक्षुओ! आठ धर्मों से युक्त भिक्षु भेंट देने योग्य ...पूर्ववत्... लोक के लिये अद्वितीय पुण्यस्थल है। किन आठ धर्मों से? (१) यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु प्रातिमोक्षसंयम से संयत होकर शीलवान्, आचार (मन) एवं गोचर (कर्म) से सम्पन्न रहता है तथा छोटे छोटे निषिद्ध कर्मों में भी पाप मानने वाला होता है। वह सम्यक्तया शिक्षापदों का ग्रहण कर उनका अभ्यास करता है। (२) उसको जो कुछ भी गृहस्थों द्वारा भोजन दिया जाता है, उसे वह सत्कारपूर्वक तथा निन्दा किये विना खा लेता है। (३) काय वाक् एवं मन के दुराचारों से घृणा करता है। अनेक प्रकार के पापकर्मों से घृणा करता है। (४) वह जहाँ कहीं भी रहता है सुखपूर्वक रहता है, अन्य किसी भिक्षु को उद्विग्न भी नहीं करता। (५) उसके चरित्र में उसको जो शठता, कूटता, बाँकापन या टेढ़ापन दिखायी देता है उनको वह अपने शास्ता, विज्ञ साथियों को बताता रहता है। उनको उसके शास्ता एवं विज्ञ साथी हटाने का प्रयास करते हैं। (६) तथा वह यह सोचता है कि दूसरे भिक्षु यह शिक्षा ग्रहण करें या न करें मैं यह शिक्षा ग्रहण करता रहूँगा। (७) साधना की ओर बढ़ता हुआ वह सरल मार्ग से ही बढ़ता है; वह सरल मार्ग है—सम्यग्दृष्टि ...पूर्ववत्... सम्यक्समाधि। (८) वह ऐसे सङ्कल्प के साथ उद्योग आरम्भ करता है—'भले ही मेरी त्वचा स्नायु एवं अस्थियाँ शेष रह जायँ, मांस एवं रक्त भी सूख जाय; परन्तु मैं पुरुषबल, पुरुष-उद्योग एवं पराक्रम से उस लक्ष्य (अर्हत्त्व)

विरियस्स सण्ठानं भविस्सती' ति। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा'' ति॥ ●

**४. अस्सखळुङ्कसुत्तं :** १. ''अट्ठ च, भिक्खवे, अस्सखळुङ्के देसेस्सामि अट्ठ च अस्स दोसे, अट्ठ च पुरिसखळुङ्के अट्ठ च पुरिसदोसे। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

२. ''कतमे च, भिक्खवे, अट्ठ अस्सखळुङ्का अट्ठ च अस्सदोसा? इध, भिक्खवे, एकच्चो अस्सखळुङ्को 'पेही' ति वुत्तो, विद्धो समानो चोदितो सारथिना पच्छतो [R.191] पटिक्कमति, पिट्ठितो रथं पवत्तेति। एवरूपो पि, भिक्खवे, इधेकच्चो अस्सखळुङ्को होति। अयं, भिक्खवे, पठमो अस्सदोसो।

३. ''पुन च परं, भिक्खवे, इधेकच्चो अस्सखळुङ्को 'पेही' ति वुत्तो, विद्धो समानो चोदितो सारथिना पच्छा लङ्घति, कुब्बरं हनति, तिदण्डं भञ्जति। एवरूपो पि, भिक्खवे, इधेकच्चो अस्सखळुङ्को होति। अयं, भिक्खवे, दुतियो अस्सदोसो।

४. ''पुन च परं, भिक्खवे, इधेकच्चो अस्सखळुङ्को 'पेही' ति वुत्तो, विद्धो [N.302] समानो चोदितो सारथिना रथीसाय सत्थि उस्सज्जित्वा रथीसंयेव अज्झोमद्दति। एवरूपो पि, भिक्खवे, इधेकच्चो अस्सखळुङ्को होति। अयं, भिक्खवे, ततियो अस्सदोसो।

---

को प्राप्त किये विना यह उद्योग नहीं छोड़ूँगा।' भिक्षुओ! इन आठ धर्मों से युक्त भिक्षु आह्वनीय ...पूर्ववत्... अद्वितीय पुण्यस्थल हैं॥'' ●

**४. अस्सखळुङ्कसूत्र : : दुष्ट अश्व के आठ दोष**

१. ''भिक्षुओ! अब मैं तुम्हें ऐसे दुष्ट अश्वों का, जिनमें आठ दोष होते हैं, तथा ऐसे दुष्ट पुरुषों का भी, जिनमें आठ दोष होते हैं, वर्णन करूँगा। उसको तुम सुनो और अपने मन में बैठा लो। मैं बताता हूँ।'' ''अच्छा, भन्ते!'' कहकर भिक्षुओं ने भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य की। भगवान् यह बोले—

२. ''भिक्षुओ! दुष्ट अश्व (हीन जाति का घोड़ा) एवं उसके आठ दोष कौन से होते हैं? भिक्षुओ! यहाँ किसी दुष्ट अश्व को सारथि द्वारा 'चलो' कहने पर चाबुक मारने पर भी, पीछे ही कदम बढ़ाता है, रथ को भी पीछे ढकेलता है। भिक्षुओ! ऐसा अश्व 'दुष्ट अश्व' कहलाता है। भिक्षुओ! उस हीनजाति के अश्व का यह प्रथम दोष है। (१)

३. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई ऐसा अश्व 'चलो' कहने पर सारथि को ही उलट देता है, रथ की धुरी पर दुलत्ती मारता है, रथ के त्रिदण्ड को तोड़ने का प्रयास करता है। भिक्षुओ! ऐसे हीनजाति के अश्व का यह द्वितीय दोष है। (२)

४. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई ऐसा अश्व सारथि द्वारा 'चलो' कहने पर, चाबुक मारने पर भी रथ की ईषा को लात मार कर तोड़ने का प्रयास करता है, या कभी उसको तोड़ देता है। भिक्षुओ! ऐसे हीनजाति के अश्व का यह तृतीय दोष है। (३)

५. ''पुन च परं, भिक्खवे, इधेकच्चो अस्सखळुङ्को 'पेही' ति वुत्तो, विद्धो समानो चोदितो सारथिना उम्मग्गं गण्हति, उब्बटुमं रथं करोति। एवरूपो पि, भिक्खवे, इधेकच्चो [B.34] अस्सखळुङ्को होति। अयं, भिक्खवे, चतुत्थो अस्सदोसो।

६. ''पुन च परं, भिक्खवे, इधेकच्चो अस्सखळुङ्को 'पेही' ति वुत्तो, विद्धो समानो चोदितो सारथिना लङ्घति पुरिमकायं पग्गण्हति पुरिमे पादे। एवरूपो पि, भिक्खवे, इधेकच्चो अस्सखळुङ्को होति। अयं, भिक्खवे, पञ्चमो अस्सदोसो।

७. ''पुन च परं, भिक्खवे, इधेकच्चो अस्सखळुङ्को 'पेही' ति वुत्तो, विद्धो समानो [R.192] चोदितो सारथिना अनादियित्वा सारथिं अनादियित्वा पतोदलट्ठिं दन्तेहि मुखाधानं विधंसित्वा येन कामं पक्कमति। एवरूपो पि, भिक्खवे, इधेकच्चो अस्सखळुङ्को होति। अयं, भिक्खवे, छट्ठो अरस्सदोसो।

८. ''पुन च परं, भिक्खवे, इधेकच्चो अस्सखळुङ्को 'पेही' ति वुत्तो, विद्धो समानो चोदितो सारथिना नेव अभिक्कमति नो पटिक्कमति तत्थेव खीलट्ठायी ठितो होति। एवरूपो पि, भिक्खवे, इधेकच्चो अस्सखळुङ्को होति। अयं, भिक्खवे, सत्तमो अस्सदोसो।

९. ''पुन च परं, भिक्खवे, इधेकच्चो अस्सखळुङ्को 'पेही' ति वुत्तो, विद्धो समानो चोदितो सारथिना पुरिमे च पादे संहरित्वा पच्छिमे च पादे संहरित्वा तत्थेव चत्तारो पादे अभिनिसीदति। एवरूपो पि, भिक्खवे, इधेकच्चो अस्सखळुङ्को होति। अयं, भिक्खवे, अट्ठमो अस्सदोसो। इमे खो, भिक्खवे, अट्ठ अस्सखळुङ्का अट्ठ च अस्सदोसा।

---

५. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई अश्व सारथि द्वारा 'चलो' कहने पर, चाबुक मारने पर, रथ को कुमार्ग पर डाल देता है या उसको उलट देता है। ऐसे हीनजाति के अश्व का यह चतुर्थ दोष है। (४)

६. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई अश्व 'चलो' कहने पर तथा सारथि द्वारा चाबुक मारने पर, अपने शरीर के अग्रभाग को उठा लेता है या अपने अगले पैर उठाकर पिछले पैरों पर खड़ा हो जाता है। ऐसे हीनजाति के अश्व का यह पञ्चम दोष है। (५)

७. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई अश्व 'चलो' कहने पर सारथि द्वारा चाबुक मारने पर सारथि तथा चाबुक की उपेक्षा करता हुआ लगाम को मुख से निकालकर जिधर चाहे उधर भाग जाता है। भिक्षुओ! ऐसे हीनजाति के अश्व का यह षष्ठ दोष है। (६)

८. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई अश्व 'चलो' कहने पर तथा सारथि द्वारा चाबुक मारने पर भी न आगे बढ़ता है, न पीछे हटता है, अपितु यथास्थान, गड़े हुए कील के समान, खड़ा रहता है। भिक्षुओ! हीनजाति के अश्व का यह सप्तम दोष है। (७)

९. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई अश्व 'चलो' कहने पर तथा सारथि द्वारा चाबुक मारने पर अपने चारों पैरों को सिकोड़कर बैठ जाता है—ऐसा भी एक अश्व होता है। भिक्षुओ! हीनजाति के अश्वों में यह अष्टम दोष पाया जाता है। (८)

''भिक्षुओ! ये उन आठ हीनजाति के अश्व तथा उनमें पाये जाने वाले आठ दोष हैं॥

१०. ''कतमे च, भिक्खवे, अट्ठ पुरिसखळुङ्का अट्ठ च पुरिसदोसा? इध, भिक्खवे, भिक्खू भिक्खुं आपत्तिया चोदेन्ति। सो भिक्खु भिक्खूहि आपत्तिया चोदियमानो 'न सरामी' ति असतिया निब्बेठेति। सेय्यथापि सो, भिक्खवे, अस्सखळुङ्को 'पेही' ति [N.303] वुत्तो, विद्धो समानो चोदितो सारथिना पच्छतो पटिक्कमति, पिट्ठितो रथं वत्तेति; तथूपमाहं, भिक्खवे, इमं पुग्गलं वदामि। एवरूपो पि, भिक्खवे, इधेकच्चो पुरिसखळुङ्को होति। अयं, भिक्खवे, पठमो पुरिसदोसो।

११. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खू भिक्खुं आपत्तिया चोदेन्ति। सो भिक्खु भिक्खूहि आपत्तिया चोदियमानो चोदकंयेव पटिप्फरति—'किं नु खो तुय्हं [B.35] बालस्स अब्यत्तस्स भणितेन! त्वं पि नाम भणितब्बं मञ्ञसी' ति! सेय्यथापि सो, [R.193] भिक्खवे, अस्सखळुङ्को 'पेही' ति वुत्तो, विद्धो समानो चोदितो सारथिना पच्छा लङ्घति, कुब्बरं हनति, तिदण्डं भञ्जति; तथूपमाहं, भिक्खवे, इमं पुग्गलं वदामि। एवरूपो पि, भिक्खवे, इधेकच्चो पुरिसखळुङ्को होति। अयं, भिक्खवे, दुतियो पुरिसदोसो।

१२. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खू भिक्खुं आपत्तिया चोदेन्ति। सो भिक्खु भिक्खूहि आपत्तिया चोदियमानो चोदकस्सेव पच्चारोपेति—'त्वं खोसि इत्थन्नामं आपत्तिं आपन्नो, त्वं ताव पठमं पटिकरोही' ति। सेय्यथापि सो, भिक्खवे, अस्सखळुङ्को 'पेही' ति वुत्तो, विद्धो समानो चोदितो सारथिना रथीसाय सत्थिं उस्सज्जित्वा रथीसंयेव अज्झोमद्दति; तथूपमाहं, भिक्खवे, इमं पुग्गलं वदामि। एवरूपो पि, भिक्खवे, इधेकच्चो पुरिसखळुङ्को होति। अयं, भिक्खवे, ततियो पुरिसदोसो।

---

१०. ''और, भिक्षुओ! ये हीनजाति के पुरुष कौन से होते हैं? तथा उनमें पाये जाने वाले आठ दोष कौन से होते हैं? यहाँ, भिक्षुओ! बहुत से भिक्षु किसी भिक्षु को उसकी आपत्ति (अपराध) बताते हैं। वह भिक्षु उन भिक्षुओं की बात सुनकर कहता है कि मुझको स्मरण नहीं है, और उनके कथन को अस्वीकार कर देता है। जैसे भिक्षुओ! हीनजाति का प्रथम अश्व ...पूर्ववत्... ऐसा ही यह हीनजाति का पुरुष होता है। यह प्रथम पुरुष दोष है। (१)

११. ''पुनः, भिक्षुओ! कुछ भिक्षु किसी भिक्षु को उसकी आपत्ति बताते हैं। वह भिक्षु आपत्ति सुनकर, उलटे, आपत्ति लगाने वाले भिक्षु को ही धमकाता है कि 'तुम्हारे जैसे मूर्ख एवं अकुशल व्यक्ति के कहने से क्या होता है? अब तूँ भी अपने को निर्देष्टा मान रहा है।' जैसे, भिक्षुओ! वह द्वितीय हीनजाति का अश्व होता है ...पूर्ववत्... वैसा ही इस पुद्गल को भी समझो। भिक्षुओ! ऐसा भी कोई हीनकृत्य पुद्गल होता है। यह द्वितीय पुरुषदोष है। (२)

१२. ''पुनः, भिक्षुओ! कुछ भिक्षु किसी भिक्षु को अपराधी घोषित करते हैं। तब वह भिक्षु उन भिक्षुओं में किसी एक को प्रत्युत्तर देता है—'तूँ भी तो इस आपत्ति से ग्रस्त है, पहले अपनी आपत्ति का परिमार्जन कर, तब मुझ पर आरोप लगाना!' भिक्षुओ! यह भिक्षु उस तृतीय हीनजाति के अश्व के समान है जो ...पूर्ववत्... वैसा ही इस पुद्गल को मेरे कथनानुसार समझो। भिक्षुओ! यह तृतीय पुरुषदोष है। (३)

१३. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खू भिक्खुं आपत्तिया चोदेन्ति। सो भिक्खु भिक्खूहि आपत्तिया चोदियमानो अञ्ञेनाञ्ञं पटिचरति, बहिद्धा कथं अपनामेति, कोपं च दोसं च अप्पच्चयं च पातुकरोति। सेय्यथापि सो, भिक्खवे, अस्सखळुङ्को 'पेही' ति वुत्तो, विद्धो समानो चोदितो सारथिना उम्मग्गं गण्हति, उब्बटुमं रथं करोति; तथूपमाहं, भिक्खवे, इमं पुग्गलं वदामि। एवरूपो पि, भिक्खवे, इधेकच्चो पुरिसखळुङ्को होति। अयं, भिक्खवे, चतुत्थो पुरिसदोसो।

१४. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खू भिक्खुं आपत्तिया चोदेन्ति। सो भिक्खु भिक्खूहि आपत्तिया सङ्घमज्झे बाहुविक्खेपं करोति। सेय्यथापि सो, भिक्खवे, [N.304, R.194] अस्सखलुङ्को 'पेही' ति वुत्तो, विद्धो समानो चोदितो सारथिना लङ्घति, पुरिमकायं पग्गण्हति पुरिमे पादे; तथूपमाहं, भिक्खवे, इमं पुग्गलं वदामि। एवरूपो पि, भिक्खवे, इधेकच्चो पुरिसखळुङ्को होति। अयं, भिक्खवे, पञ्चमो पुरिसदोसो।

[B.36] १५. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खू भिक्खुं आपत्तिया चोदेन्ति। सो भिक्खु भिक्खूहि आपत्तिया चोदियमानो अनादियित्वा सङ्घं अनादियित्वा चोदकं सापत्तिको व येन कामं पक्कमति। सेय्यथापि सो, भिक्खवे, अस्सखळुङ्को 'पेही' ति वुत्तो, विद्धो समानो चोदितो सारथिना अनादियित्वा सारथिं अनादियित्वा पतोदलट्ठिं दन्तेहि मुखाधानं विधंसित्वा येन कामं पक्कमति; तथूपमाहं, भिक्खवे, इमं पुग्गलं वदामि। एवरूपो पि, भिक्खवे, इधेकच्चो पुरिसखळुङ्को होति। अयं, भिक्खवे, छट्ठो पुरिसदोसो।

१६. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खू भिक्खुं आपत्तिया चोदेन्ति। सो भिक्खु भिक्खूहि आपत्तिया चोदियमानो 'नेवाहं आपन्नोम्हि, न पनाहं आपन्नोम्ही' ति सो

---

१३. "पुनः, भिक्षुओ! कुछ भिक्षु किसी भिक्षु को किसी आपत्ति से आरोपित करते हैं, तब वह या तो इधर से उधर बात को घुमाता है, या दूसरा बाहरी प्रसङ्ग उठा देता है, या वह आरोपकों पर क्रोध, द्वेष एवं अविश्वास प्रकट करता है। जैसे भिक्षुओ! चतुर्थ हीन जाति का अश्व ...पूर्ववत्... वैसा ही यह पुद्गल है—ऐसा मैं मानता हूँ। भिक्षुओ! यह चतुर्थ पुरुषदोष हैं। (४)

१४. "पुनः, भिक्षुओ! कुछ भिक्षु किसी भिक्षु को किसी आपत्ति से आरोपित करते हैं। तब वह भिक्षु सङ्घ के बीच में बाहुविक्षेप (भुजाप्रसारण) करता है। जैसे, भिक्षुओ! पञ्चम हीनजाति का अश्व ...पूर्र्ववत्... वैसा ही यह पुद्गल है—ऐसा मैं मानता हूँ। भिक्षुओ! ऐसा यह पञ्चम पुरुषदोष है। (५)

१५. "पुनः, भिक्षुओ! कुछ भिक्षु किसी भिक्षु को किसी आपत्ति से आरोपित करते हैं। आरोप सुनकर वह भिक्षु उन भिक्षुओं की तथा सङ्घ की उपेक्षा करता हुआ वहाँ से उठकर चल देता है। जैसे, भिक्षुओ! वह षष्ठ हीनजाति का अश्व ...पूर्ववत्... वैसा ही यह पुद्गल है—'ऐसा मैं मानता हूँ।' भिक्षुओ! यह षष्ठ पुरुषदोष है। (६)

१६. "पुनः, भिक्षुओ! कुछ भिक्षु किसी भिक्षु को किसी आपत्ति से आरोपित करते हैं। आरोप सुनकर वह भिक्षु कहता है—'नहीं, मैं किसी आपत्ति से आपन्न नहीं हूँ। नहीं, नहीं, मैं किसी

तुण्हीभावेन सङ्घं विहेठेति। सेय्यथापि सो, भिक्खवे, अस्सखळुङ्को 'पेही' ति वुत्तो, विद्धो समानो चोदितो सारथिना नेव अभिक्कमति नो पटिकम्मति तत्थेव खीलट्ठायी ठितो होति; तथूपमाहं, भिक्खवे, इमं पुग्गलं वदामि। एवरूपो पि, भिक्खवे, इधेकच्चो पुरिसखळुङ्को होति। अयं, भिक्खवे, सत्तमो पुरिसदोसो।

१७. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खू भिक्खुं आपत्तिया चोदेन्ति। सो [R.195] भिक्खु भिक्खूहि आपत्तिया चोदियमानो एवमाह—'किं नु खो तुम्हे आयस्मन्तो अतिबाळ्हं मयि ब्यावटा याव इदानाहं सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तिस्सामी' ति। सो सिक्खं पच्चक्खाय हीनायावत्तित्वा एवमाह—'इदानि खो तुम्हे आयस्मन्तो अत्तमना होथा' ति! सेय्यथापि सो, भिक्खवे, अस्सखळुङ्को 'पेही' ति वुत्तो, विद्धो समानो चोदितो सारथिना पुरिमे च पादे संहरित्वा पच्छिमे च पादे संहरित्वा तत्थेव चत्तारो पादे अभिनिसीदति; तथूपमाहं, भिक्खवे, इमं पुग्गलं वदामि। एवरूपो पि, भिक्खवे, इधेकच्चो पुरिसखळुङ्को होति। अयं, भिक्खवे, अट्ठमो पुरिसदोसो। इमे खो, भिक्खवे, अट्ठ पुरिसखळुङ्का [N.305] अट्ठ च पुरिसदोसा" ति॥ ●

**५. मलसुत्तं** : १. "अट्ठिमानि, भिक्खवे, मलानि। कतमानि अट्ठ? [B.37] असज्झायमला, भिक्खवे, मन्ता; अनुट्ठानमला, भिक्खवे, घरा; मलं, भिक्खवे, वण्णस्स कोसज्जं; पमादो, भिक्खवे, रक्खतो मलं; मलं, भिक्खवे, इत्थिया दुच्चरितं; मच्छेरं,

---

आपत्ति से आपन्न नहीं हूँ।' यह कहकर वह चुप होकर सङ्घ को कष्ट में डाल देता है। जैसे भिक्षुओ! वह सप्तम हीनजाति का अश्व ...पूर्ववत्... मैं पुद्गल को मानता हूँ। भिक्षुओ! यह सप्तम पुरुष दोष है। (७)

१७. "पुनः, भिक्षुओ! कुछ भिक्षु किसी भिक्षु को किसी आपत्ति से आरोपित करते हैं। तब वह भिक्षु उन भिक्षुओं से कहता है—'आप लोग मुझको क्यों व्यर्थ घेरे हुए हैं। यदि मैं आप लोगों की दृष्टि में आपत्तिग्रस्त हूँ तो लीजिये, मैं शासन छोड़कर पुनः गृहस्थ में जा मिलता हूँ।' और वह ऐसा कर भिक्षुओं को चिढ़ाता है—'अब तो आप लोग प्रसन्न हैं!' जैसे, भिक्षुओ! वह अष्टम हीनजाति का अश्व ...पूर्ववत्... वैसा ही मैं इस पुद्गल को मानता हूँ। भिक्षुओ! ऐसा भी एक दोषी पुरुष होता है। यह, भिक्षुओ! अष्टम पुरुषदोष है। (८)

भिक्षुओ! इस प्रकार ये आठ दोषी पुरुष एवं आठ पुरुष दोष होते हैं॥" ●

**५. मलसूत्र : : आठ मल**

१. "भिक्षुओ! मल (विकार) आठ होते हैं। कौन से आठ?

(१) अस्वाध्याय मन्त्रों का मल होता है।

(२) अक्रियाशीलता घरों का मल होती है।

(३) आलस्य वर्ण का मल होता है।

(४) प्रमाद रक्षक का मल होता है।

(५) दुश्चारित्र्य स्त्री का मल होता है।

भिक्खवे, ददतो मलं; मला, भिक्खवे, पापका अकुसला धम्मा अस्मिं लोके परम्हि च; ततो, भिक्खवे, मला मलतरं अविज्जा परमं मलं। इमानि खो, भिक्खवे, अट्ठ मलानी ति॥

''असज्झायमला मन्ता, अनुट्ठानमला घरा।
मलं वण्णस्स कोसज्जं, पमादो रक्खतो मलं॥
''मलित्थिया दुच्चरितं, मच्छेरं ददतो मलं।
मला वे पापका धम्मा, अस्मिं लोके परम्हि च।
ततो मला मलतरं, अविज्जा परमं मलं'' ति॥

[R.196] **९. दूतेय्यसुत्तं :** १. ''अट्ठहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु दूतेय्यं गन्तुमरहति। कतमेहि अट्ठहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु सोता च होति, सावेता च, उग्गहेता च, धारेता च, विञ्ञाता च, विञ्ञापेता च, कुसलो च सहितासहितस्स, नो च कलहकारको—इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु दूतेय्यं गन्तुमरहति। कतमेहि अट्ठहि? इध, भिक्खवे, सारिपुत्तो सोता च होति, सावेता च, उग्गहेता च, धारेता च, विञ्ञाता च, विञ्ञापेता च, कुसलो च सहितासहितस्स, नो च कलहकारको। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहि धम्मेहि समन्नागतो सारिपुत्तो दूतेय्यं गन्तुमरहती ति।

[N.306] ''यो वे न ब्यथति पत्वा, परिसं उग्गवादिनिं।
न च हापेति वचनं, न च छादेति सासनं॥

---

(६) मात्सर्य (गर्व) दानी का मल होता है।

(७) इहलोक तथा परलोक में पापकर्म ही मल (विघ्न) स्वरूप होते हैं।

(८) इन सब मलों से भी बड़ा अविद्या मल माना जाता है।

''भिक्षुओ! ये आठ मल होते हैं।

*(इसी प्रसङ्ग को गाथाओं के माध्यम से भी कहा गया है— )*

...पूर्ववत्... ॥

**९. दौत्यसूत्र : : अष्टविध दूतकर्म**

१. ''भिक्षुओ! आठ धर्मों (गुणों) से युक्त भिक्षु दूत-कर्म करने में समर्थ है। कौन से आठ? (१) यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु (धर्म का) श्रोता भी हो, (२) सुनानेवाला भी हो, (३) उद्ग्रहीता (पढ़ने वाला), (४) धारण करने वाला, (५) विज्ञाता (जानने वाला), (६) विज्ञापयिता (जनाने वाला), (७) सहन करने योग्य एवं सहन न करने योग्य में कुशल तथा (८) जो कलह न करने वाला हो—भिक्षुओ! इन आठ धर्मों से युक्त भिक्षु दूत बनने योग्य होता है। भिक्षुओ! इन आठ धर्मों से युक्त सारिपुत्र (धर्म-) दूत बनने योग्य है। किन आठ धर्मों से? क्योंकि, भिक्षुओ! सारिपुत्र श्रोता भी है ...पूर्ववत्... कलह न करनेवाला है, अतः, भिक्षुओ! इन आठ धर्मों से युक्त सारिपुत्र (धर्म-) दूत के कार्य पर जाने योग्य है।

''जो (भिक्षु) उग्रवादी परिषद् का सामना होने पर भी व्यथित नहीं होता, जो वचन की उपेक्षा नहीं करता, जो शासन को ढकता नहीं है॥

"असन्दिद्धं च भणति, पुच्छितो न च कुप्पति। [B.38]
स वे तादिसको भिक्खु, दूतेय्यं गन्तुमरहती" ति॥ ●

**७. पठमबन्धनसुत्तं :** १. "अट्ठहि, भिक्खवे, आकारेहि इत्थी पुरिसं बन्धति। कतमेहि अट्ठहि? रुण्णेन, भिक्खवे, इत्थी पुरिसं बन्धति; हसितेन, भिक्खवे, इत्थी पुरिसं बन्धति; भणितेन, भिक्खवे, इत्थी पुरिसं बन्धति; आकप्पेन, भिक्खवे, इत्थी पुरिसं [R.197] बन्धति; वनभङ्गेन, भिक्खवे, इत्थी पुरिसं बन्धति; गन्धेन, भिक्खवे, इत्थी पुरिसं बन्धति; रसेन, भिक्खवे, इत्थी पुरिसं बन्धति; फस्सेन, भिक्खवे, इत्थी पुरिसं बन्धति। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहाकारेहि इत्थी पुरिसं बन्धति। ते, भिक्खवे सत्ता सुबद्धा ये फस्सेन बद्धा" ति॥ ●

**८. दुतियबन्धनसुत्तं :** १. "अट्ठहि, भिक्खवे, आकारेहि पुरिसो इत्थिं बन्धति। कतमेहि अट्ठहि? रुण्णेन, भिक्खवे, पुरिसो इत्थिं बन्धति; हसितेन, भिक्खवे, पुरिसो इत्थिं बन्धति; भणितेन, भिक्खवे, पुरिसो इत्थिं बन्धति; आकप्पेन, भिक्खवे, पुरिसो इत्थिं बन्धति; वनभङ्गेन, भिक्खवे, पुरिसो इत्थिं बन्धति; गन्धेन, भिक्खवे, पुरिसो इत्थिं बन्धति; रसेन, भिक्खवे, पुरिसो इत्थिं बन्धति; फस्सेन, भिक्खवे, पुरिसो इत्थिं बन्धति। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहाकारेहि पुरिसो इत्थिं बन्धति। ते, भिक्खवे सत्ता सुबद्धा ये फस्सेन बद्धा" ति॥ ●

**९. पहारादसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा वेरञ्जायं विहरति नळेरुपुचिमन्दमूले। अथ

---

"जो असन्दिग्ध (संशयरहित) बोलता है, तथा प्रश्न करने पर क्रुद्ध नहीं होता—ऐसा भिक्षु दूतकर्म के लिये उपयुक्त होता है॥" ●

**७. प्रथम बन्धनसूत्र : : स्त्री द्वारा पुरुष के बन्धन के आठ प्रकार**

१. भिक्षुओ! आठ आकारों से कोई स्त्री पुरुष को बाँध (अपनी ओर आकृष्ट कर) सकती है। किन आठ आकारों से? (१) रुदन से, (२) हंसने से, (३) वचन से, (४) शारीरिक चेष्टाओं से, (५) वनभङ्ग (पुष्पमाला) से, (६) गन्ध से, (७) रस से, (८) स्पर्श से कोई स्त्री पुरुष को अपनी ओर आकृष्ट कर सकती है। भिक्षुओ! इन आठ आकारों से कोई स्त्री किसी पुरुष को अपनी ओर आकृष्ट कर सकती है। इन बन्धनों (आकर्षणों) में स्पर्श से बन्धन सबसे बढ़कर है॥" ●

**८. द्वितीय बन्धनसूत्र : : पुरुष द्वारा स्त्री के बन्धन के आठ प्रकार**

१. भिक्षुओ! आठ आकारों से कोई पुरुष स्त्री को बाँध (आकृष्ट कर) सकता है। कौन से आठ आकार? (१) रुदन से, (२) हास्य से, (३) वचन से, (४) शारीरिक चेष्टाओं से, (५) वनभङ्ग (पुष्पमाला) से, (६) गन्ध से, (७) रस से एवं (८) स्पर्श से कोई पुरुष स्त्री को अपनी ओर आकृष्ट करता है। इन बन्धनों में स्पर्श से बन्धन (आकर्षण) सबसे बढ़कर है॥" ●

**९. प्रह्लादसूत्र : : महासमुद्र में आठ आश्चर्यमय धर्म**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) वेरञ्जा के नडेरुपुचिमन्दवृक्ष की छाया में विराजमान थे। तब

खो पहारादो असुरिन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा [N.307] एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठितं खो पहारादं असुरिन्दं भगवा एतदवोच—[B.39,R.198] ''अपि पन, पहाराद, असुरा महासमुद्दे अभिरमन्ती'' ति?

''अभिरमन्ति, भन्ते, असुरा महासमुद्दे'' ति।

''कति पन, पहाराद, महासमुद्दे अच्छरिया अब्भुता धम्मा, ये दिस्वा दिस्वा असुरा महासमुद्दे अभिरमन्ती'' ति?

२. ''अट्ठ, भन्ते, महासमुद्दे अच्छरिया अब्भुता धम्मा, ये दिस्वा दिस्वा असुरा महासमुद्दे अभिरमन्ति। कतमे अट्ठ? महासमुद्दो, भन्ते, अनुपुब्बनिन्नो अनुपुब्बपोणो अनुपुब्बपब्भारो, न आयतकेनेव पपातो। यं पि, भन्ते, महासमुद्दो अनुपुब्बनिन्नो अनुपुब्बपोणो अनुपुब्बपब्भारो, न आयतकेनेव पपातो; अयं, भन्ते, महासमुद्दे पठमो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो, यं दिस्वा दिस्वा असुरा महासमुद्दे अभिरमन्ति।

३. ''पुन च परं, भन्ते, महासमुद्दो ठितधम्मो वेलं नातिवत्तति। यं पि, भन्ते, महासमुद्दो ठितधम्मो वेलं नातिवत्तति; अयं, भन्ते, महासमुद्दे दुतियो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो यं दिस्वा दिस्वा असुरा महासमुद्दे अभिरमन्ति।

४. ''पुन च परं, भन्ते, महासमुद्दो न मतेन कुणपेन संवसति। यं होति महासमुद्दे मतं कुणपं, तं खिप्पमेव तीरं वाहेति, थलं उस्सारेति। यं पि, भन्ते, महासमुद्दो न मतेन कुणपेन संवसति, यं होति महासमुद्दे मतं कुणपं, तं खिप्पमेव तीरं वाहेति, थलं उस्सारेति; अयं, भन्ते, महासमुद्दे ततियो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो, यं दिस्वा दिस्वा असुरा महासमुद्दे अभिरमन्ति।

---

असुरराज प्रह्लाद, जहाँ भगवान् विराजमान थे वहाँ पहुँचा, तथा उनको अभिवादन कर एक ओर खड़ा हो गया। असुरराज प्रह्लाद से भगवान् से पूछा—

''महाराज! क्या असुर महासमुद्र में सुख से वास करते हैं?''

''हाँ, भन्ते! असुर महासमुद्र में ही सुख से वास करते हैं।''

''महाराज! उस महासमुद्र में कितने अद्भुत एवं आश्चर्यमय धर्म हैं, जिनसे प्रभावित होकर असुर महासमुद्र में ऐसा सुखावास करते हैं?''

२. ''भन्ते! महासमुद्र में आठ आश्चर्यमय अद्भुत धर्म होते हैं, जिनको देखकर, जिनसे प्रभावित होकर असुर महासमुद्र में सुखावास करते हैं। कौन से आठ? भन्ते! महासमुद्र की निचाई, गहराई तथा उसका उभार क्रमपूर्वक है, केवल उसकी लम्बाई-चौड़ाई ही क्रमपूर्वक हो—ऐसी बात नहीं है। भन्ते! महासमुद्र में यह पहला अद्भुत आश्चर्यमय धर्म है, जिससे प्रभावित होकर असुर उस महासमुद्र में सुखावास करते हैं। (१)

३. ''पुनः, भन्ते! महासमुद्र स्थिर रहता है, कभी अपने तट का अतिक्रमण नहीं करता। भन्ते! महासमुद्र में यह द्वितीय ...पूर्ववत्... करते हैं। (२)

४. ''पुनः, भन्ते! महासमुद्र में मृत जीवजन्तु नहीं रह पाते; क्योंकि जो भी जीवजन्तु समुद्र

५. ''पुन च परं, भन्ते, या काचि महानदियो, सेय्यथीदं—गङ्गा यमुना अचिरवती सरभू मही, ता महासमुद्दं पत्वा जहन्ति पुरिमानि नामगोत्तानि, 'महासमुद्दो' त्वेव सङ्खं गच्छन्ति। यं पि, भन्ते, या काचि महानदियो, सेय्यथीदं — गङ्गा यमुना अचिरवती [R.199] सरभू मही, ता महासमुद्दं पत्वा जहन्ति पुरिमानि नामगोत्तानि, 'महासमुद्दो' त्वेव सङ्खं गच्छन्ति; अयं, भन्ते, महासमुद्दे चतुत्थो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो, यं दिस्वा दिस्वा असुरा महासमुद्दे अभिरमन्ति।

६. ''पुन च परं, भन्ते, या च लोके सवन्तियो महासमुद्दं अप्पेन्ति या [N.308,B.40] च अन्तलिक्खा धारा पपतन्ति, न तेन महासमुद्दस्स ऊनत्तं वा पूरत्तं वा पञ्ञायति। यं पि, भन्ते, या च लोके सवन्तियो महासमुद्दं अप्पेन्ति या च अन्तलिक्खा धारा पपतन्ति, न तेन महासमुद्दस्स ऊनत्तं वा पूरत्तं वा पञ्ञायति; अयं, भन्ते, महासमुद्दे पञ्चमो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो, यं दिस्वा दिस्वा असुरा महासमुद्दे अभिरमन्ति।

७. ''पुन च परं, भन्ते, महासमुद्दो एकरसो लोणरसो। यं पि, भन्ते, महासमुद्दो एकरसो लोणरसो; अयं, भन्ते, महासमुद्दे छट्ठो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो, यं दिस्वा दिस्वा असुरा महासमुद्दे अभिरमन्ति।

८. ''पुन च परं, भन्ते, महासमुद्दो बहुरतनो अनेकरतनो। तत्रिमानि रतनानि, सेय्यथीदं—मुत्ता मणि वेळुरियो सङ्खो सिला पवाळं रजतं जातरूपं लोहितको मसारगल्लं। यं पि, भन्ते, महासमुद्दो बहुरतनो अनेकरतनो; तत्रिमानि रतनानि, सेय्यथीदं—मुत्ता मणि वेळुरियो सङ्खो सिला पवाळं रजतं जातरूपं लोहितको मसारगल्लं; अयं, भन्ते, [R.200] महासमुद्दे सत्तमो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो, यं दिस्वा दिस्वा असुरा महासमुद्दे अभिरमन्ति।

---

में मर जाता है, समुद्र उसके शव को अपनी उत्ताल तरङ्गों से किनारे पर फेंक देता है, वह भूमि पर आ गिरता है। भन्ते! समुद्र में यह तृतीय ...पूर्ववत्...। (३)

५. ''पुनः, भन्ते! इस पृथ्वी पर जितनी भी महानदियाँ हैं, जैसे—गङ्गा, यमुना, अचिरवती, सरयू, मही (गण्डक) आदि; ये सब महानदियाँ अन्त में, अपना नामगोत्र भूलकर, समुद्र में ही आ मिलती हैं। उनके मिल जाने पर उनका जल 'समुद्र का जल' ही कहलाता है, महानदियों का नाम भी कोई नहीं लेता। भन्ते! इस महासमुद्र का यह चतुर्थ ...पूर्ववत्...। (४)

६. ''पुनः, भन्ते! इन नदियों के इतने जल से तथा प्रबलतम वर्षा होने पर भी महासमुद्र न कभी घटता है, न बढ़ता ही है; अपितु इतना होने पर भी सदा स्थिर ही रहता है। भन्ते! इस महासमुद्र का यह पञ्चम ...पूर्ववत्... करते हैं। (५)

७. ''पुनः, भन्ते! महासमुद्र (का जल) एक रस वाला ही है। उसमें केवल लवण रस (नमकीन) ही है। भन्ते! महासमुद्र का यह षष्ठ ...पूर्ववत्...। (६)

८. ''पुनः, भन्ते! यह महासमुद्र विविध रत्नों से भरा पड़ा है, इसमें स्थान स्थान पर रत्नों का खजाना भरा पड़ा है; जैसे—मोती, मणि, वैदूर्य (हीरा), शङ्ख, मनःशिला, मूँगा, चाँदी, सुवर्ण एवं

९. "पुन च परं, भन्ते, महासमुद्दो महतं भूतानं आवासो। तत्रिमे भूता—तिमि तिमिङ्गलो तिमिरपिङ्गलो असुरा नागा गन्धब्बा। सन्ति महासमुद्दे योजनसतिका पि अत्तभावा, चतुयोजनसतिका पि अत्तभावा, पञ्चयोजनसतिका पि अत्तभावा। यं पि, भन्ते, महासमुद्दो महतं भूतानं आवासो; तत्रिमे भूता—तिमि तिमिङ्गलो तिमिरपिङ्गलो असुरा नागा गन्धब्बा; सन्ति महासमुद्दे योजनसतिका पि अत्तभावा ...पे०... द्वियोजन... तियोजन... चतुयोजन... पञ्चयोजनसतिका पि अत्तभावा; अयं, भन्ते, महासमुद्दे अट्ठमो [B.41] अच्छरियो अब्भुतो धम्मो, यं दिस्वा दिस्वा असुरा महासमुद्दे अभिरमन्ति।

"इमे खो, भन्ते, महासमुद्दे अट्ठ अच्छरिया अब्भुता धम्मा, ये दिस्वा दिस्वा असुरा महासमुद्दे अभिरमन्ती ति।

[N.309] १०. "अपि पन, भन्ते, भिक्खु इमस्मिं धम्मविनये अभिरमन्ती" ति?

"अभिरमन्ति, पहाराद, भिक्खू इमस्मिं धम्मविनये" ति।

"कति पन, भन्ते, इमस्मिं धम्मविनये अच्छरिया अब्भुता धम्मा, ये दिस्वा दिस्वा भिक्खू इमस्मिं धम्मविनये अभिरमन्ती" ति?

११. "अट्ठ, पहाराद, इमस्मिं धम्म विनये अच्छरिया अब्भुता धम्मा, ये दिस्वा दिस्वा भिक्खू इमस्मिा धम्मविनये अभिरमन्ति। कतमे अट्ठ? सेय्यथापि, पहाराद, महासमुद्दो अनुपुब्बनिन्नो अनुपुब्बपोणो अनुपुब्बपब्भारो, न आयतकेनेव पपातो; एवमेव [R.201] खो, पहाराद, इमस्मिं धम्मविनये अनुपुब्बसिक्खा अनुपुब्बकिरिया अनुपुब्ब-

---

मसारगल्ल (कवरमणि)। इन रत्नों का वहाँ बहुलता से होना भी, भन्ते! इस महासमुद्र का सप्तम आश्चर्य ...पूर्ववत्... करते हैं। (७)

९. "पुनः, भन्ते! यह महासमुद्र वृहदाकार प्राणियों का वासस्थान है। जैसे—तिमि, तिमिङ्गल, तिमिरपिङ्गल, असुर, नाग, गन्धर्व। इस महासमुद्र में सौ योजन लम्बे, दो सौ योजन लम्बे आकार वाले भी प्राणी हैं, तीन सौ योजन, चार सौ योजन, पाँच सौ योजन वाले भी प्राणी है, जिस कारण यह महासमुद्र वृहदाकार वाले प्राणियों का आवास कहलाता है, इस कारण भी, भन्ते!...।

महासमुद्र के ये आठ आश्चर्य हैं, जिनसे प्रभावित होकर असुर, इस समुद्र में वास करते हैं। (८)

१०. "क्या, भन्ते! आपके इस धर्मविनय में भी (ऐसे ही आश्चर्यमय धर्मों से प्रभावित होकर) भिक्षु सुखपूर्वक साधना करते हैं?"

हाँ, प्रह्लाद! इस धर्मविनय में भी आठ आश्चर्यमय अद्भुत धर्म हैं जिनसे प्रभावित होकर, जिनको देख देखकर, भिक्षुगण सुखपूर्वक धर्मसाधना करते हैं।"

"भन्ते! वे कौन से आठ धर्म हैं ...पूर्ववत्... साधना करते हैं?"

११. "प्रह्लाद! इस धर्मविनय में ये आठ अद्भुत आश्चर्यमय धर्म...। कौन से आठ? जैसे, प्रह्लाद! महासमुद्र की निचाई, गहराई, ऊँचाई तथा लम्बाई भी क्रमशः होती है; उसी प्रकार, प्रह्लाद!

पटिपदा, न आयतकेनेव अञ्ञापटिवेधो। यं पि, पहाराद, इमस्मिं धम्मविनये अनुपुब्बसिक्खा अनुपुब्बकिरिया अनुपुब्बपटिपदा, न आयतकेनेव अञ्ञापटिवेधो; अयं, पहाराद, इमस्मिं धम्मविनये पठमो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो, यं दिस्वा दिस्वा भिक्खू इमस्मिं धम्मविनये अभिरमन्ति।

१२. "सेय्यथापि, पहाराद, महासमुद्दो ठितधम्मो वेलं नातिवत्तति; एवमेव खो, पहाराद, यं मया सावकानं सिक्खापदं पञ्ञत्तं तं मम सावका जीवितहेतु पि नातिक्कमन्ति। यं पि, पहाराद, मया सावकानं सिक्खापदं पञ्ञत्तं तं मम सावका जीवितहेतु पि नातिक्कमन्ति; अयं, पहाराद, इमस्मिं धम्मविनये दुतियो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो, यं दिस्वा दिस्वा भिक्खू इमस्मिं धम्मविनये अभिरमन्ति।

१३. "सेय्यथापि, पहाराद, महासमुद्दो न मतेन कुणपेन संवसति। यं होति महासमुद्दे मतं कुणपं, तं खिप्पमेव तीरं वाहेति थलं उस्सारेति; एवमेव खो, पहाराद, यो सो पुग्गलो दुस्सीलो पापधम्मो असुचि सङ्कस्सरसमाचारो पटिच्छन्नकम्मन्तो अस्समणो समणपटिञ्ञो अब्रह्मचारी ब्रह्मचारिपटिञ्ञो अन्तोपूति अवस्सुतो कसम्बुजातो, न तेन सङ्घो संवसति; खिप्पमेव नं सन्निपतित्वा उक्खिपति। किञ्चा पि सो होति मज्झे भिक्खुसङ्घस्स सन्निसिन्नो, अथ खो सो आरका व सङ्घम्हा सङ्घो च तेन। यं पि, पहाराद, यो सो पुग्गलो [B.42] दुस्सीलो पापधम्मो असुचिसङ्कस्सरसमाचारो पटिच्छन्नकम्मन्तो अस्समणो समणपटिञ्ञो अब्रह्मचारी ब्रह्मचारिपटिञ्ञो अन्तोपूति अवस्सुतो कसम्बुजातो, न तेन [N.310, R.202] सङ्घो संवसति; खिप्पमेव नं सन्निपतित्वा उक्खिपति; किञ्चा पि सो होति मज्झे भिक्खुसङ्घस्स सन्निसिन्नो, अथ खो सो आरका व सङ्घम्हा सङ्घो च तेन; अयं, पहाराद, इमस्मिं धम्मविनये ततियो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो, यं दिस्वा दिस्वा भिक्खू इमस्मिं धम्मविनये अभिरमन्ति।

---

हमारे धर्मविनय में भी शिक्षा, क्रिया एवं उपाय—तीनों ही क्रमश: होते हैं, न कि सीधे ज्ञान ही हो जाता है। प्रह्लाद! हमारे धर्मविनय का यह प्रथम आश्चर्यमय धर्म है, जिससे प्रभावित होकर भिक्षुगण इसकी साधना करते हैं। (१)

१२. "जैसे, प्रह्लाद! तुम्हारा महासमुद्र स्थिर रहता है, तट का अतिक्रमण नहीं करता; इसी तरह, प्रह्लाद! मैं श्रावकों को जिस शिक्षापद की देशना करता हूँ मेरे श्रावक, प्राणसङ्कट आने पर भी उसका उल्लङ्घन नहीं करते। प्रह्लाद! हमारे धर्मविनय का यह दूसरा ...पूर्ववत्...। (२)

१३. "प्रह्लाद! जैसे तुम्हारा महासमुद्र मृत शव को अपने अन्दर नहीं रहने देता... उसी प्रकार कोई दुश्चरित, पापकर्मा, अपवित्र आचरण वाला, अपने दुर्गुणों को छिपाने वाला, धर्मसाधना का अभिनय करने वाला, पाप वासना वाला, निन्दित, कूड़े कर्कट के समान जो भिक्षु है उसको सङ्घ अपने में नहीं रहने देता, अपितु सब भिक्षु मिलकर उसे शीघ्र ही सङ्घ से निकाल देते हैं। या फिर किसी कारणवश वह सङ्घ में रह भी जाय तो सङ्घ उससे दूर ही रहता है तथा उसको सङ्घ से दूर रखा जाता है। ... प्रह्लाद! हमारे धर्मविनय का यह तीसरा ...पूर्ववत्...। (३)

१४. ''सेय्यथापि, पहाराद, या काचि महानदियो, सेय्यथीदं—गङ्गा यमुना अचिरवती सरभू मही, ता महासमुद्दं पत्वा जहन्ति पुरिमानि नामगोत्तानि, 'महासमुद्दो' त्वेव सङ्खं गच्छन्ति; एवमेव खो, पहाराद, चत्तारो मे वण्णा—खत्तिया ब्राह्मणा वेस्सा सुद्दा, ते तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बजित्वा जहन्ति पुरिमानि नामगोत्तानि, 'समणा सक्यपुत्तिया' त्वेव सङ्खं गच्छन्ति। यं पि, पहाराद, चत्तारोमे वण्णा—खत्तिया ब्राह्मणा वेस्सा सुद्दा, ते तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बजित्वा जहन्ति पुरिमानि नाम गोत्तानि, 'समणा सक्यपुत्तिया' त्वेव सङ्खं गच्छन्ति; अयं, पहाराद, इमस्मिं धम्मविनये चतुत्थो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो, यं दिस्वा दिस्वा भिक्खू इमस्मिं धम्मविनये अभिरमन्ति।

१५. ''सेय्यथापि, पहाराद, या च लोके सवन्तियो महासमुद्दं अप्पेन्ति या च अन्तलिक्खा धारा पपतन्ति, न तेन महासमुद्दस्स ऊनत्तं वा पूरत्तं वा पञ्ञायति; एवमेव खो, [R.203] पहाराद, बहू चे पि भिक्खू अनुपादिसेसाय निब्बानधातुया परिनिब्बायन्ति, न तेन निब्बानधातुया ऊनत्तं वा पूरत्तं वा पञ्ञायति। यं पि, पहाराद, बहू चे पि भिक्खू अनुपादिसेसाय निब्बानधातुया परिनिब्बायन्ति, न तेन निब्बानधातुया ऊनत्तं वा पूरत्तं वा पञ्ञायति; अयं, पहाराद, इमस्मिं धम्मविनये पञ्चमो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो, यं दिस्वा दिस्वा भिक्खू इमस्मिं धम्मविनये अभिरमन्ति।

१६. ''सेय्यथापि, पहाराद, महासमुद्दो एकरसो लोणरसो; एवमेव खो, पहाराद, [B.43] अयं धम्मविनयो एकरसो विमुत्तिरसो। यं पि पहाराद, अयं धम्मविनयो एकरसो विमुत्तिरसो; अयं, पहाराद, इमस्मिं धम्मविनये एकरसो विमुत्तिरसो; अयं, पहाराद, इमस्मिं धम्मविनये छट्ठो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो, यं दिस्वा दिस्वा भिक्खू इमस्मिं धम्मविनये अभिरमन्ति।

---

१४. ''जैसे, प्रह्लाद! गङ्गा, यमुना आदि महानदियाँ अपना नाम गोत्र छोड़कर महासमुद्र में जा मिलती है तथा वे 'महासमुद्र' ही कहलाती है; इसी तरह, प्रह्लाद! वे चारों वर्ण—क्षत्रिय, ब्राह्मण, वैश्य एवं शूद्र—ये तथागत द्वारा प्रोक्त धर्मविनय में, घर तथा अपना पुराना नाम गोत्र छोड़कर, प्रव्रजित हो जाते हैं तो उस समय से ये सब 'शाक्यपुत्रीय श्रमण' ही कहलाते हैं। प्रह्लाद! हमारे धर्मविनय का यह चतुर्थ ...पूर्ववत्...। (४)

१५. ''जैसे, प्रह्लाद! सभी महानदियाँ समुद्र में जा मिलती हैं, वर्षा भी होती रहती है फिर भी इस कारण महासमुद्र में न कोई न्यूनता आती है, न अधिकता; उसी प्रकार, प्रह्लाद! जब बहुत से भिक्षु भी अनुपधिशेष निर्वाण धातु से परिनिर्वृत होते हैं, परन्तु उससे परिनिर्वाण धातु में न कोई न्यूनता आती है, न अधिकता।... प्रह्लाद! हमारे धर्मविनय का यह पञ्चम ...पूर्ववत्...। (५)

१६. ''जैसे, प्रह्लाद! महासमुद्र एकरस—लवण रस वाला ही होता है उसी प्रकार हमारा यह धर्मविनय भी एकरस—विमुक्तिरस वाला ही होता है। इस प्रकार प्रह्लाद! हमारे धर्मविनय का यह षष्ठ ...पूर्ववत्...। (६)

१७. ''सेय्यथापि, पहाराद, महासमुद्दो बहुरतनो अनेकरतनो; तत्रिमानि [N.311] रतनानि, सेय्यथीदं—मुत्ता मणि वेळुरियो सङ्खो सिला पवाळं रजतं जातरूपं लोहितको मसारगल्लं; एवमेव खो, पहाराद, अयं धम्मविनयो बहुरतनो अनेकरतनो। तत्रिमानि रतनानि, सेय्यथीदं—चत्तारो सतिपट्ठाना, चत्तारो सम्मप्पधाना, चत्तारो इद्धिपादा, पञ्चिन्द्रियानि, पञ्च बलानि, सत्त बोज्झङ्गा, अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो। यं पि, पहाराद, अयं धम्मविनयो बहुरतनो अनेकरतनो; तत्रिमानि रतनानि, सेय्यथीदं—चत्तारो सतिपट्ठाना, चत्तारो सम्मप्पधाना, चत्तारो इद्धिपादा, पञ्चिन्द्रियानि, पञ्च बलानि, सत्त बोज्झङ्गा, अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो; अयं, पहाराद, इमस्मिं धम्मविनये सत्तमो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो, यं दिस्वा दिस्वा भिक्खू इमस्मिं धम्मविनये अभिरमन्ति।

१८. ''सेय्यथापि, पहाराद, महासमुद्दो महतं भूतानं आवासो; तत्रिमे भूता—तिमि तिमिङ्गलो तिमिरपिङ्गलो असुरा नागा गन्धब्बा; सन्ति महासमुद्दे योजनसतिका पि [R.204] अत्तभावा द्वियोजनसतिका पि अत्तभावा तियोजनसतिका पि अत्तभावा चतुयोजनसतिका पि अत्तभावा पञ्चयोजनसतिका पि अत्तभावा; एवमेव खो, पहाराद, अयं धम्मविनयो महत्तं भूतानं आवासो; तत्रिमे भूता—सोतापन्नो सोतापत्तिफलसच्छिकिरियाय पटिपन्नो सकदागामी सकदागामिफलसच्छिकिरियाय पटिपन्नो अनागामी अनागामिफलसच्छिकिरियाय पटिपन्नो अरहा अरहत्ताय पटिपन्नो। यं पि, पहाराद, अयं धम्मविनयो महतं भूतानं आवासो; तत्रिमे भूता—सोतापन्नो सोतापत्तिफलसच्छिकिरियाय पटिपन्नो सकदागामी सकदागामिफल-सच्छिकिरियाय पटिपन्नो अनागामी अनागामिफलसच्छिकिरियाय पटिपन्नो अरहा अरहत्ताय पटिपन्नो; अयं, पहाराद, इमस्मिं धम्मविनये अट्ठमो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो, यं दिस्वा दिस्वा भिक्खू इमस्मिं धम्मविनये अभिरमन्ति। इमे खो, पहाराद, इमस्मिं धम्मविनये [B.44] अट्ठ अच्छरिया अब्भुता धम्मा, ये दिस्वा दिस्वा भिक्खू इमस्मिं धम्मविनये अभिरमन्ती'' ति॥

---

१७. ''जैसे, प्रह्लाद! महासमुद्र विविध रत्नों का आगार होता है ...पूर्ववत्... उसी तरह हमारा यह धर्मविनय भी (साधना के) विविध रत्नों का आगार है; जैसे—चार स्मृतिप्रस्थान, चार सम्यक्प्रधान, चार ऋद्धिपाद, पाँच इन्द्रियाँ, पाँच बल, सात बोध्यङ्ग एवं आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग। प्रह्लाद! हमारे इस धर्मविनय में यह सप्तम ...पूर्ववत्...। (७)

१८. ''जैसे, प्रह्लाद! तुम्हारा महासमुद्र विशाल प्राणियों का आवास है, जैसे—तिमि, तिमिङ्गल ...पूर्ववत्...; उसी तरह, प्रह्लाद! हमारा यह धर्मविनय भी महान् प्राणियों का आवास है; जैसे—१. स्रोतआपन्न, स्रोतआपत्तिफलसाक्षात्कार के लिये मार्गारूढ, २. सकृदागामी, सकृदागामिफलसाक्षात्कार के लिये मार्गारूढ ३. अनागामी, अनागामिफलसाक्षात्कार के लिये मार्गारूढ एवं ४. अर्हत्, अर्हत्त्व के लिये मार्गारूढ।... प्रह्लाद! हमारे धर्मविनय में यह अष्टम आश्चर्यमय अद्भुत धर्म है, जिसे देखकर जिससे प्रभावित होकर अन्य भिक्षु इस धर्मविनय में धर्मसाधना में संलग्न रहते हैं॥'' (८)

[N.312] **१०. उपोसथसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति पुब्बारामे मिगारमातुपासादे। तेन खो पन समयेन भगवा तदहुपोसथे भिक्खुसङ्घपरिवुत्तो निसिन्नो होति। अथ खो आयस्मा आनन्दो अभिक्कन्ताय रत्तिया, निक्खन्ते पठमे यामे, उट्ठायासना एकंसं उत्तरासङ्गं करित्वा येन भगवा तेनञ्जलिं पणामेत्वा भगवन्तं एतदवोच—"अभिक्कन्ता, भन्ते, रत्ति, निक्खन्तो पठमो यामो, चिरनिसिन्नो भिक्खुसङ्घो। उद्दिसतु, भन्ते, भगवा भिक्खूनं पातिमोक्खं" ति।

[R.205] २. एवं वुत्ते भगवा तुण्ही अहोसि। दुतियं पि खो आयस्मा आनन्दो अभिक्कन्ताय रत्तिया, निक्खन्ते मज्झिमे यामे, उट्ठायासना एकंसं उत्तरासङ्गं करित्वा येन भगवा तेनञ्जलिं पणामेत्वा भगवन्तं एतदवोच—"अभिकन्ता, भन्ते, रत्ति, निक्खन्तो मज्झिमो यामो, चिरनिसिन्नो भिक्खुसङ्घो। उद्दिसतु, भन्ते, भगवा भिक्खूनं पातिमोक्खं" ति। दुतियं पि खो भगवा तुण्ही अहोसि। ततियं पि खो आयस्मा आनन्दो अभिक्कन्ताय रत्तिया, निक्खन्ते पच्छिमे यामे, उद्धस्ते अरुणे, नन्दिमुखिया रत्तिया उट्ठायासना एकंसं उत्तरासङ्गं करित्वा येन भगवा तेनञ्जलिं पणामेत्वा भगवन्तं एतदवोच—"अभिक्कन्ता, भन्ते, रत्ति, निक्खन्तो पच्छिमो यामो, उद्धस्तं अरुणं, नन्दिमुखी रत्ति; चिरनिसिन्नो भिक्खुसङ्घो। उद्दिसतु, भन्ते, भगवा भिक्खूनं पातिमोक्खं" ति।

"अपरिसुद्धा, आनन्द, परिसा" ति।

[B.45] ३. अथ खो आयस्मतो महामोग्गल्लानस्स एतदहोसि—"कं नु खो भगवा पुग्गलं सन्धाय एवमाह—'अपरिसुद्धा, आनन्द, परिसा' ति? अथ खो आयस्मा महामोग्गल्लानो सब्बावन्तं भिक्खुसङ्घं चेतसा चेतो परिच्च मनसाकासि। अद्दसा खो आयस्मा महामोग्गल्लानो

---

**१०. उपोसथसूत्र : : आठ अद्भुत धर्म**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के पूर्वारामस्थित मृगारमातृप्रासाद में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय भगवान् उसी उपोसथ के दिन रात्रि में भिक्षुसङ्घ से परिवृत थे। तब आयुष्मान् आनन्द ने उस चाँदनी रात्रि में प्रथम प्रहर व्यतीत होने के बाद, आसन से उठकर भगवान् को प्रणाम करते हुए यह निवेदन किया—"भन्ते! इस समय चाँदनी रात है, प्रथम प्रहर बीत चुका है, भिक्षुसङ्घ भी बहुत देर से बैठा हुआ है। भन्ते! भगवान् भिक्षुसङ्घ को प्रातिमोक्ष का उद्देश (संक्षिप्त व्याख्यान) करने का कष्ट करें।"

२. ऐसा निवेदन किये जाने पर भी भगवान् मौन ही रहे। दूसरी बार भी आयुष्मान् आनन्द ने ...पूर्ववत्... तीसरी बार भी आयुष्मान् आनन्द ने निवेदन किया ...पूर्ववत्...।

"आनन्द! परिषद् अशुद्ध है।"

३. तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायन को यह विचार हुआ—'किस को लक्ष्य कर भगवान् ने यह कहा—'आनन्द! परिषद् अशुद्ध है'! तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायन स्वचित्त से सभी भिक्षुओं के चित्त को परखने लगे। तब उनको एक दुःशील, पापधर्मा ...पूर्ववत्... भिक्षुसङ्घ में बैठा हुआ

तं पुग्गलं दुस्सीलं पापधम्मं असुचिं सङ्कस्सरसमाचारं पटिच्छन्नकम्मन्तं अस्समणं समणपटिञ्ञं अब्रह्मचारि ब्रह्मचारिपटिञ्ञं अन्तोपूतिं अवस्सुतं कसम्बुजातं मज्झे भिक्खुसङ्घस्स निसिन्नं; दिस्वान उट्ठायासना येन सो पुग्गलो तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा तं पुग्गलं एतदवोच—"उट्ठेहावुसो, दिट्ठोसि भगवता। नत्थि ते भिक्खूहि सद्धिं संवासो" ति।

४. एवं वुत्ते सो पुग्गलो तुण्ही अहोसि। दुतियं पि खो आयस्मा [N.313] महामोग्गल्लानो तं पुग्गलं एतदवोच—"उट्ठेहावुसो, दिट्ठोसि भगवता। नत्थि ते भिक्खूहि सद्धिं संवासो" ति। दुतियं पि खो सो पुग्गलो तुण्ही अहोसि। ततियं पि खो [R.206] आयस्मा महामोग्गल्लानो तं पुग्गलं एतदवोच—"उट्ठेहावुसो, दिट्ठोसि भगवता। नत्थि ते भिक्खूहि सद्धिं संवासो" ति। ततियं पि खो सो पुग्गलो तुण्ही अहोसि।

५. अथ खो आयस्मा महामोग्गल्लानो तं पुग्गलं बाहायं गहेत्वा बहिद्वारकोट्ठका निक्खामेत्वा सूचिघटिकं दत्वा येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं एतदवोच—"निक्खामितो सो, भन्ते, पुग्गलो मया। परिसुद्धा परिसा। उद्दिसतु, भन्ते, भगवा भिक्खूनं पातिमोक्खं" ति।

"अच्छरियं, मोग्गल्लान, अब्भुतं, मोग्गल्लान! याव बाहा गहणा पि नाम सो मोघपुरिसो आगमिस्सती" ति!

६. अथ खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"तुम्हेव दानि, भिक्खवे, उपोसथं करेय्याथ, पातिमोक्खं उद्दिसेय्याथ। न दानाहं, भिक्खवे, अज्जतग्गे उपोसथं करिस्सामि, पातिमोक्खं उद्दिसिस्सामि। अट्ठानमेतं, भिक्खवे, अनवकासो यं तथागतो अपरिसुद्धाय परिसाय पातिमोक्खं उद्दिसेय्य।

---

भिक्षु दिखायी दिया। वे उसके पास जाकर बोले—'आयुष्मान्! उठो। भगवान् तुमको पहचान गये हैं। तुमको भिक्षुओं के साथ नहीं बैठे रहना है।'

४. ऐसा कहे जाने पर भी वह भिक्षु चुप ही रहा। दूसरी बार भी आयुष्मान् महामौद्गल्यायन ने उसको वही कहा... तीसरी बार भी... पुनरपि वह भिक्षु चुप ही रहा।

५. तब आयुष्मान् महामौद्गल्यायन ने उस भिक्षु को बाहु पकड़कर विहार के मुख्य द्वार से बाहर ढकेलकर, द्वार पर कुण्डी (अर्गला=सूचिघटिका) लगाकर, वे भगवान् के सम्मुख आकर निवेदन करने लगे—"भन्ते! वह पापकर्मा भिक्षु निकाल दिया, अब परिषद् शुद्ध है, आप भिक्षुओं को प्रातिमोक्ष का उपदेश करें।"

"आश्चर्य है, मौद्गल्यायन! कि वह मूर्ख भुजा पकड़कर उठाने तक प्रतीक्षा करता रहा!"

६. तब भगवान् ने भिक्षुओं को आदेश दिया—"भिक्षुओ! आज से यह उपोसथक्रिया तुम लोग ही पूर्ण किया करो। मैं अब आगे प्रातिमोक्ष का उद्देश नहीं करूँगा; क्योंकि; भिक्षुओ! यह शोभास्पद नहीं लगता, और न उचित ही है कि तथागत अपरिशुद्ध परिषद् को प्रातिमोक्ष का उद्देश करें।"

७. ''अट्ठिमे, भिक्खवे, महासमुद्दे अच्छरिया अब्भुता धम्मा ये दिस्वा दिस्वा असुरा महासमुद्दे अभिरमन्ति। कतमे अट्ठ? महासमुद्दो, भिक्खवे, अनुपुब्बनिन्नो अनुपुब्बपोणो अनुपुब्बपब्भारो, नं आयतकेनेव पपातो। यं पि, भिक्खवे, महासमुद्दो अनुपुब्बनिन्नो अनुपुब्बपोणो अनुपुब्बपब्भारो, न आयतकेनेव पपातो; अयं, भिक्खवे, महासमुद्दे पठमो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो, यं दिस्वा दिस्वा असुरा महासमुद्दे अभिरमन्ति ...पे०... *(यथा पुरिमे तथा वित्थारतब्बो)*।

८. ''पुन च परं, भिक्खवे, महासमुद्दो महत्तं भूतानं आवासो। तत्रिमे भूता— [R.207, B.46] तिमि तिमिङ्गलो तिमिरपिङ्गलो असुरा नागा गन्धब्बा। वसन्ति महासमुद्दे योजनसतिका पि अत्तभावा ...पे०... पञ्चयोजनसतिका पि अत्तभावा। यं पि, भिक्खवे, महासमुद्दो महतं भूतानं आवासो; तत्रिमे भूता—तिमि तिमिङ्गलो तिमिरपिङ्गलो असुरा [N.314] नागा गन्धब्बा; वसन्ति महासमुद्दे योजनसतिका पि अत्तभावा ...पे०... पञ्चयोजनसतिका पि अत्तभावा; अयं, भिक्खवे, महासमुद्दे अट्ठमो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो, यं दिस्वा दिस्वा असुरा महासमुद्दे अभिरमन्ति। इमे खो, भिक्खवे, महासमुद्दे अट्ठ अच्छरिया अब्भुता धम्मा, ये दिस्वा दिस्वा असुरा महासमुद्दे अभिरमन्ति।

९. ''एवमेव खो, भिक्खवे, अट्ठ इमस्मिं धम्मविनये अच्छरिया अब्भुता धम्मा, ये दिस्वा दिस्वा भिक्खू इमस्मिं धम्मविनये अभिरमन्ति। कतमे अट्ठ? सेय्यथापि, भिक्खवे, महासमुद्दो अनुपुब्बनिन्नो अनुपुब्बपोणो अनुपुब्बपब्भारो, न आयतकेनेव पपातो; एवमेव खो, भिक्खवे, इमस्मिं धम्मविनये अनुपुब्बसिक्खा अनुपुब्बकिरिया अनुपुब्बपटिपदा, न आयतकेनेव अञ्ञापटिवेधो। यं पि, भिक्खवे, इमस्मिं धम्मविनये अनुपुब्बसिक्खा अनुपुब्बकिरिया अनुपुब्बपटिपदा, न आयतकेनेव अञ्ञापटिवेधो; अयं, भिक्खवे, इमस्मिं धम्मविनये पठमो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो, यं दिस्वा दिस्वा भिक्खू इमस्मिं धम्मविनये अभिरमन्ति ...पे०...। सेय्यथापि, भिक्खवे, महासमुद्दो महतं भूतानं आवासो; तत्रिमे भूता—तिमि तिमिङ्गलो तिमिरपिङ्गलो असुरा नागा गन्धब्बा, वसन्ति महासमुद्दे योजन- [R.208] सतिका पि अत्तभावा ...पे०... पञ्चयोजनसतिका पि अत्तभावा; एवमेव खो, भिक्खवे, अयं धम्मविनयो महतं भूतानं आवासो। तत्रिमे भूता—सोतापन्नो सोतापत्तिफलसच्छिकिरियाय पटिपन्नो ...पे०... अरहा अरहत्ताय पटिपन्नो। यं पि, भिक्खवे, अयं धम्मविनयो महतं भूतानं आवासो; तत्रिमे भूता—सोतापन्नो सोतापत्तिफलसच्छिकिरियाय

---

७. ''भिक्षुओ! महासमुद्र में ये आठ आश्चर्यमय अद्भुत धर्म होते हैं जिनको देखकर, जिन से प्रभावित होकर उसमें असुर गण रहते हैं ...पूर्ववत्...।''

*(इसी वर्ग के प्रह्लादसूत्र के सम्बद्ध पाठ का यहाँ भी विस्तार कर लें।)*

''भिक्षु इस धर्मविनय में सुखपूर्वक साधना करते हैं॥''

**महावर्ग सम्पन्न॥**

पटिपन्नो ...पे०... अरहा अरहत्ताय पटिपन्नो; अयं, भिक्खवे, इमस्मिं धम्मविनये अट्ठमो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो, यं दिस्वा दिस्वा भिक्खू इमस्मिं धम्मविनये अभिरमन्ति। इमे खो, भिक्खवे, इमस्मिं धम्मविनये अट्ठ अच्छरिया अब्भुता धम्मा, ये दिस्वा दिस्वा भिक्खू इमस्मिं धम्मविनये अभिरमन्ती'' ति॥ ●

महावग्गो दुतियो॥

### तस्सुद्दानं

वेरञ्जो सीहो आजञ्ञं, खळुङ्केन मलानि च। [N.315, B.47]
दूतेय्यं द्वे च बन्धना, पहारादो उपोसथो ति॥ ●

## ३. गहपतिवग्गो

**१. पठमउग्गसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा वेसालियं विहरति महावने कूटागारसालायं। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि ...पे०... एतदवोच—"अट्ठहि, भिक्खवे, अच्छरियेहि अब्भुतेहि धम्मेहि समन्नागतं उग्गं गहपतिं वेसालिकं धारेथा'' ति। इदमवोच भगवा। इदं वत्थान सुगतो उट्ठायासना विहारं पाविसि। [R.209]

२. अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय येन उग्गस्स गहपतिनो वेसालिकस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। अथ खो उग्गो गहपति वेसालिको येन सो भिक्खु तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा तं भिक्खुं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो उग्गं गहपति वेसालिकं सो भिक्खु एतदवोच—

---

**इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची**

१. वेरञ्जसूत्र, २. सिंहसूत्र, ३. अश्वाजानेयसूत्र, ४. अश्वखळुङ्कसूत्र, ५. मलसूत्र, ६. दौत्यसूत्र, ७. प्रथम बन्धनसूत्र, ८. द्वितीय बन्धनसूत्र, ९. प्रह्लादसूत्र, १०. उपोसथसूत्र॥ ●

## ३. गृहपतिवर्ग

**प्रथम उग्रसूत्र : : आठ अद्भुत धर्मों से युक्त उग्र गृहपति**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) वैशाली के महावन की कूटागारशाला में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को बुलाया, ...पूर्ववत्... यह कहा—"भिक्षुओ! वैशालीवासी उग्र गृहपति को आठ आश्चर्यमय एवं अद्भुत धर्मों से युक्त समझो।'' भगवान् ने यह कहा। ऐसा कहकर सुगत आसन से उठकर अपने साधनास्थल पर चले गये।

२. तब कोई भिक्षु पूर्वाह्ण में वस्त्र सुव्यवस्थित कर, पात्र चीवर लेकर, वैशालीवासी उग्र

"अट्ठहि खो त्वं, गहपति, अच्छरियेहि अब्भुतेहि धम्मेहि समन्नागतो भगवता व्याकतो। कतमे ते, गहपति, अट्ठ अच्छरिया अब्भुता धम्मा, येहि त्वं समन्नागतो भगवता व्याकतो" ति?

३. "न खो अहं, भन्ते, जानामि—कतमेहि अट्ठहि अच्छरियेहि अब्भुतेहि धम्मेहि समन्नागतो भगवता ब्याकतो ति। अपि च, भन्ते, येमे अट्ठ अच्छरिया अब्भुता धम्मा संविज्जन्ति, ते सुणाहि, साधुकं मनसि करोहि; भासिस्सामी" ति। "एवं, गहपती" ति खो सो भिक्खु उग्गस्स गहपतिनो वेसालिकस्स पच्चस्सोसि। उग्गो गहपति वेसालिको एतदवोच—"यदाहं, भन्ते, भगवन्तं पठमं दूरतो व अद्दसं; सह दस्सनेनेव मे, भन्ते, [N.316, B.48] भगवतो चित्तं पसीदि। अयं खो मे, भन्ते, पठमो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो संविज्जति।

४. "सो खो अहं, भन्ते, पसन्नचित्तो भगवन्तं पयिरुपासिं। तस्स मे भगवा अनुपुब्बिं कथं कथेसि, सेय्यथीदं—दानकथं सीलकथं सग्गकथं; कामानं आदीनवं ओकारं सङ्किलेसं, [R.210] नेक्खम्मे आनिसंसं पकासेसि। यदा मं भगवा अञ्ञासि कल्लचित्तं मुदुचित्तं विनीवरणचित्तं उदग्गचित्तं पसन्नचित्तं, अथ या बुद्धानं सामुक्कंसिका धम्मदेसना तं पकासेसि—दुक्खं समुदयं निरोधं मग्गं। सेय्यथापि नाम सुद्धं वत्थं अपगतकाळकं सम्मदेव रजनं पटिग्गण्हेय्य; एवमेव खो मे तस्मिंयेव आसने विरजं वीतमलं धम्मचक्खुं उदपादि—'यं किञ्चि समुदयधम्मं, सब्बं तं निरोधधम्मं' ति। सो खो अहं, भन्ते, दिट्ठधम्मो पत्तधम्मो विदितधम्मो परियोगाळ्हधम्मो तिण्णविचिकित्छो विगतकथङ्कथो वेसारज्जप्पत्तो अपरप्पच्चयो सत्थुसासने तत्थेव बुद्धं च धम्मं च सङ्घं च सरणं अगमासिं, ब्रह्मचरिय-

---

गृहपति के घर गया। जाकर वह प्रज्ञप्त आसन पर बैठ गया। तब उग्र गृहपति भी वहाँ आया तथा उस भिक्षु को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे उग्र गृहपति से उस भिक्षु ने पूछा—

"गृहपति! भगवान् ने तुम में आठ अद्भुत आश्चर्यमय धर्म बताये हैं। गृहपति! वे आठ अद्भुत धर्म तुम में कौन से हैं?"

३. "भन्ते! भगवान् ने मुझ में कौन से आठ धर्म बताये हैं—यह मैं नहीं जानता; परन्तु मुझ को स्वयं में जो आठ धर्म अनुभूत होते हैं उनको बताता हूँ। आप ध्यानपूर्वक सुन लें तथा अपने मन में बैठा लें।"

"अच्छा, गृहपति!"—भिक्षु ने उत्तर दिया। तब वैशालीवासी वह उग्र गृहपति बोला—

"भन्ते! जब मैने प्रथम दिन भगवान् को आते हुए दूर से देखा तो उनके दर्शन के साथ ही, भन्ते! भगवान् के प्रति मेरा चित्त श्रद्धालु हो गया। भन्ते! मुझको यह प्रथम आश्चर्यमय धर्म स्वयं में अनुभूत होता है।"

४. "भन्ते! श्रद्धाचित्त होकर मैने भगवान् की पूजा-वन्दना की। तब भगवान् ने मुझ को क्रमशः (आनुपूर्वी) कथा कहीं; जैसे—दानकथा, शीलकथा ...पूर्ववत्... *(पूर्वोक्त **सिंहसूत्र** में*

पञ्चमानि च सिक्खापदानि समादियिं। एवं खो मे, भन्ते, दुतियो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो संविज्जति।

५. "तस्स मय्हं, भन्ते, चतस्सो कोमारियो पजापतियो अहेसुं। अथ ख्वाहं, भन्ते, येन ता पजापतियो तेनुपसङ्कमिं; उपसङ्कमित्वा ता पजापतियो एतदवचं—'मया खो, भगिनियो, ब्रह्मचरियपञ्चमानि सिक्खापदानि समादिन्नानि। या इच्छति सा इधेव भोगे च भुञ्जतु पुञ्ञानि च करोतु, सकानि वा ञातिकुलानि गच्छतु। होति वा पन पुरिसाधिप्पायो, कस्स वो दम्मी' ति? एवं वुत्ते सा, भन्ते, जेट्ठा पजापति मं एतदवोच—'इत्थन्नामस्स मं, अय्यपुत्त, पुरिसस्स देही' ति। अथ खो अहं, भन्ते, तं पुरिसं पक्कोसापेत्वा वामेन हत्थेन पजापतिं गहेत्वा दक्खिणेन हत्थेन भिङ्गारं गहेत्वा तस्स पुरिसस्स ओणोजेसिं। कोमारिं खो पनाहं, भन्ते, दारं परिच्चजन्तो नाभिजानामि चित्तस्स अञ्ञथत्तं। अयं खो मे, भन्ते, ततियो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो संविज्जति।

६. "संविज्जन्ति खो पन मे, भन्ते, कुले भोगा। ते च खो अप्पटि- [N.317, R.211] विभत्ता सीलवन्तेहि कल्याणधम्मेहि। अयं खो मे, भन्ते, चतुत्थो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो संविज्जति।

७. "यं खो पनाहं, भन्ते, भिक्खुं पयिरुपासामि; सक्कच्चंयेव पयिरुपासामि, [B.49] नो असक्कच्चं। अयं खो मे, भन्ते, पञ्चमो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो संविज्जति।

८. "सो चे, भन्ते, मे आयस्मा धम्मं देसेति; सक्कच्चंयेव सुणोमि, नो असक्कच्चं। नो

---

*आगत सम्बद्ध पाठ का यहाँ भी विस्तार कर लें।)* ब्रह्मचर्यसहित पाँच शिक्षापदों को ग्रहण किया। भन्ते! मुझ को यह द्वितीय आश्चर्यमय धर्म स्वयं में अनुभूत होता है।"

५. "उस समय मेरी चार युवावस्थासम्पन्न स्त्रियाँ थी। भगवान् का धर्मोपदेश सुनने के बाद मैने अपनी उन चारों पत्नियों को बुलाकर यह कहा—देवियो! मैने भगवान् से ब्रह्मचर्यसहित पाँच शिक्षापद (पञ्चशील) ग्रहण कर लिये हैं। अतः आपमें से जो चाहें वे यहाँ रहती हुई लौकिक ऐश्वर्य का उपभोगकर पुण्यकर्म करती रहें; अथवा जो ऐसा न चाहें वे अपने पितृगृह लौट सकती हैं। या आप लोग किसी अन्य पुरुष का वरण करना चाहें तो बता दें, मैं आप लोगों को उसी के लिये दे दूँगा। भन्ते। ऐसा कहे जाने पर मेरी ज्येष्ठ पत्नी ने कहा—'आर्यपुत्र! मुझे अमुक नाम के पुरुष को दे दें।' तब मैंने, भन्ते! उस पुरुष को बुलाकर बायें हाथ से पत्नी को पकड़कर तथा दाहिने हाथ में जलपात्र लेकर उस पुरुष के हाथ में जल डालते हुए उस पुरुष को अपनी स्त्री समर्पित कर दी। उस समय, भन्ते! अपनी युवा पत्नी को दूसरे के हाथ सौंपते हुए मुझे कोई चित्तविकार उत्पन्न नहीं हुआ। भन्ते! यह तीसरा अद्भुत धर्म ...पूर्ववत्...। (३)

६. "भन्ते! मेरे परिवार में सर्वविध भोगैश्वर्य की सुखसुविधा है। वे भोगैश्वर्य शीलवान् एवं कल्याणधर्मा व्यक्तियों में अविभक्त है। भन्ते! यह चतुर्थ अद्भुत ...पूर्ववत्...। (४)

७. "भन्ते! मैं जिस भिक्षु की सेवा करता हूँ वह सर्वथा एवं सर्वदा सम्मानपूर्वक करता हूँ, असम्मानपूर्वक नहीं। भन्ते! यह पञ्चम अद्भुत धर्म... पूर्ववत्...। (५)

चे मे सो आयस्मा धम्मं देसेति, अहमस्स धम्मं देसेमि। अयं खो मे, भन्ते छट्ठो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो संविज्जति।

९. ''अनच्छरियं खो पन मं, भन्ते, देवता उपसङ्कमित्वा आरोचेन्ति—'स्वाक्खातो, गहपति, भगवता धम्मो' ति। एवं वुत्ते अहं, भन्ते, ता देवता एवं वदामि—'वदेय्याथ वा एवं खो तुम्हे देवता नो वा वदेय्याथ, अथ खो स्वाक्खातो भगवता धम्मो' ति। न खो पनाहं, भन्ते, अभिजानामि ततोनिदानं चित्तस्स उण्णतिं—'मं वा देवता उपसङ्कमित्वा, अहं वा देवताहि सद्धिं सल्लपामी' ति। अयं खो मे, भन्ते, सत्तमो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो संविज्जति।

१०. ''यानिमानि, भन्ते, भगवता देसितानि पञ्चोरम्भागियानि संयोजनानि, नाहं तेसं किञ्चि अत्तनि अप्पहीनं समनुपस्सामि। अयं खो मे, भन्ते, अट्ठमो अच्छरियो अब्भुतो [R.212] धम्मो संविज्जति। इमे खो मे, भन्ते, अट्ठ अच्छरिया अब्भुता धम्मा संविज्जन्ति। न च खो अहं जानामि—कतमेहि चाहं अट्ठहि अच्छरियेहि अब्भुतेहि धम्मेहि समन्नागतो भगवता ब्याकतो'' ति।

११. अथ खो सो भिक्खु उग्गस्स गहपतिनो वेसालिकस्स निवेसने पिण्डपातं गहेत्वा उट्ठायासना पक्कामि। अथ खो सो भिक्खु पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सो भिक्खु यावतको अहोसि उग्गेन गहपतिना वेसालिकेन सद्धिं कथासल्लापो, तं सब्बं भगवतो आरोचेसि।

[N.318] १२. ''साधु साधु, भिक्खु! यथा तं उग्गो गहपति वेसालिको सम्मा ब्याकरमानो

---

८. ''भन्ते! मैं जिस भिक्षु से धर्मश्रवण या धर्मचिन्तन करता हूँ वह सम्मानपूर्वक ही करता हूँ। भन्ते! यह षष्ठ अद्भुत धर्म ...पूर्ववत्...। (६)

९. ''इस में कोई आश्चर्य नहीं, भन्ते! कि कभी कोई देवता मुझको आकर कहते हैं—'भगवान् बहुत अच्छा उपदेश करते हैं'। उनको मेरा उत्तर होता है— 'आप समर्थन करें या न करें, भगवान् तो अच्छा उपदेश करते ही हैं'। इस कारण से भी भन्ते! मुझको कोई अभिमान नहीं होता कि मैं ऐसा ऋद्धिसम्पन्न हूँ कि देवता भी आकर मुझसे संवाद करते हैं। भन्ते! यह सप्तम अद्भुत धर्म ...पूर्ववत्...। (७)

१०. भन्ते! भगवान् ने जो अवरभागीय संयोजन बताये हैं उनमें से मेरा कोई भी प्रहीण नहीं हुआ—ऐसा मैं नहीं मानता। भन्ते! यह अष्टम अद्भुत धर्म है जिसे मैं अनुभव करता हूँ। परन्तु मैं यह नहीं जानता कि भगवान् ने मुझमें कौन आठ अद्भुत धर्म बताये हैं।'' (८)

११. तब वह भिक्षु वैशालीवासी उस उग्र गृहपति के आवास में भिक्षा कर वहाँ से चला दिया और भोजनकर्म से निवृत्त होकर भगवान् के सम्मुख आया। आकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठे हुए उसने वैशालीवासी उग्र गृहपति के साथ उसका जो संवाद हुआ था वह सब भगवान् को सुनाया।

ब्याकरेय्य, इमेहेव खो, भिक्खु, अट्ठहि अच्छरियेहि अब्भुतेहि धम्मेहि समन्नागतो उग्गो गहपति वेसालिको मया ब्याकतो। इमेहि च पन, भिक्खु, अट्ठहि अच्छरियेहि [B.50] अब्भुतेहि धम्मेहि समन्नागतं उग्गं गहपतिं वेसालिकं धारेही'' ति॥

**२. दुतियउग्गसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा वज्जीसु विहरति हत्थिगामे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—''अट्ठहि, भिक्खवे, अच्छरियेहि अब्भुतेहि धम्मेहि समन्नागतं उग्गं गहपतिं हत्थिगामकं धारेथा'' ति। इदमवोच भगवा। इदं वत्वान सुगतो उट्ठायासना विहारं पाविसि।

२. अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय येन उग्गस्स गहपतिनो हत्थिगामकस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। अथ खो उग्गो गहपति हत्थिगामको येन सो भिक्खु तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा तं भिक्खुं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो उग्गं गहपतिं हत्थिगामकं सो भिक्खु एतदवोच—''अट्ठहि खो त्वं, गहपति, अच्छरियेहि अब्भुतेहि धम्मेहि [R.213] समन्नागतो भगवता ब्याकतो। कतमे ते, गहपति, अट्ठ अच्छरिया अब्भुता धम्मा, येहि त्वं समन्नागतो भगवता ब्याकतो'' ति?

३. ''न खो अहं, भन्ते, जानामि—कतमेहि अट्ठहि अच्छरियेहि अब्भुतेहि धम्मेहि समन्नागतो भगवता ब्याकतो ति। अपि च, भन्ते ये मे अट्ठ अच्छरिया अब्भुता धम्मा संविज्जन्ति, ते सुणाहि, साधुकं मनसि करोहि; भासिस्सामी'' ति। ''एवं, गहपती'' ति खो सो भिक्खु उग्गस्स गहपतिनो हत्थिगामकस्स पच्चस्सोसि। उग्गो गहपति हत्थिगामको एतदवोच—''यदाहं, भन्ते, नागवने परिचरन्तो भगवन्तं पठमं दूरतो व अद्दसं; सह दस्सनेनेव मं, भन्ते, भगवतो चित्तं पसीदि, सुरामदो च पहीयि। अयं खो मे, भन्ते, पठमो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो संविज्जति।

[N.319] ४. ''सो खो अहं, भन्ते, पसन्नचित्तो भगवन्तं पयिरुपासिं। तस्स मे भगवा अनुपुब्बिं कथं कथेसि, सेय्यथीदं—दानकथं सीलकथं सग्गकथं; कामानं आदीनवं ओकारं सङ्किलेसं,

---

१२. (भगवान् ने कहा—) ''साधु भिक्षु! साधु। जैसा उस वैशालीवासी उग्र गृहपति ने अपने विषय में तुझसे कहा है, उनही आठ धर्मों को मैंने उसमें बताया था। तुम भी उस उग्र गृहपति को इन आठ अद्भुत धर्मों से युक्त जानो॥''

●

**२. द्वितीय उग्रसूत्र : : हस्तिग्रामवासी उग्र गृहपति में आठ धर्म**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) वज्जिप्रदेश के हस्तिग्राम में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को बताया—''भिक्षुओ! हस्तिग्रामवासी उग्र गृहपति को आठ अद्भुत आश्चर्यमय धर्मों से युक्त समझो।'' यह संक्षिप्त उपदेश कर भगवान् आसन से उठकर साधनास्थल में चले गये।

२. तब कोई भिक्षु पूर्वाह्न में... हस्तिग्रामवासी उग्र गृहपति के घर गया ...पूर्ववत्...।

नेक्खम्मे आनिसंसं पकासेसि। यदा मं भगवा अञ्ञासि कल्लचित्तं मुदुचित्तं विनीवरणचित्तं [B.51] उदग्गचित्तं पसन्नचित्तं, अथ या बुद्धानं सामुक्कंसिका धम्मदेसना तं पकासेसि—दुक्खं समुदयं निरोधं मग्गं। सेय्यथापि नाम सुद्धं वत्थं अपगतकाळकं सम्मदेव रजनं पटिग्गण्हेय्य; एवमेव खो मे तस्मिंयेव आसने विरजं वीतमलं धम्मचक्खुं उदपादि—'यं किञ्चि समुदयधम्मं, सब्बं तं निरोधधम्मं' ति। सो खो अहं, भन्ते, दिट्ठधम्मो पत्तधम्मो विदितधम्मो परियोगाळ्हधम्मो तिण्णविचिकिच्छो विगतकथङ्कथो वेसारज्जपत्तो अपरप्पच्चयो [R.214] सत्थुसासने तत्थेव बुद्धं च धम्मं च सङ्घं च सरणं अगमासिं, ब्रह्मचरियपञ्चमानि च सिक्खापदानि समादियिं। अयं खो मे, भन्ते, दुतियो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो संविज्जति।

५. ''तस्स मय्हं, भन्ते, चतस्सो कोमारियो, पजापतियो अहेसुं। अथ ख्वाहं, भन्ते, येन ता पजापतियो तेनुपसङ्कमिं; उपसङ्कमित्वा ता पजापतियो एतदवचं—'मया खो, भगिनियो, ब्रह्मचरियपञ्चमानि सिक्खापदानि समादिन्नानि। या इच्छति सा इधेव भोगे च भुञ्जतु पुञ्ञानि च करोतु, सकानि वा ञातिकुलानि गच्छतु। होति वा पन पुरिसाधिप्पायो, कस्स वो दम्मी' ति? एवं वुत्ते सा, भन्ते, जेट्ठा पजापति मं एतदवोच—'इत्थन्नामस्स मं, अय्यपुत्त, पुरिसस्स देही' ति। अथ खो अहं, भन्ते, तं पुरिसं पक्कोसापेत्वा वामेन हत्थेन पजापतिं गहेत्वा दक्खिणेन हत्थेन भिङ्गारं गहेत्वा तस्स पुरिसस्स ओणोजेसिं। कोमारिं खो पनाहं, भन्ते, दारं परिच्चजन्तो नाभिजानामि चित्तस्स अञ्ञथत्तं। अयं खो मे, भन्ते, ततियो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो संविज्जति।

६. ''संविज्जन्ति खो पन मे, भन्ते, कुले भोगा। ते च खो अप्पटिविभत्ता सीलवन्तेहि कल्याणधम्मेहि। अयं खो मे, भन्ते, चतुत्थो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो संविज्जति।

[R.215] ७. ''यं खो पनाहं, भन्ते, भिक्खुं पयिरुपासामि; सक्कच्चंयेव पयिरुपासामि, नो [N.320] असक्कच्चं। सो चे मे आयस्मा धम्मं देसेति; सक्कच्चंयेव सुणामि, नो असक्कच्चं। नो चे मे सो आयस्मा धम्मं देसेति, अहमस्स धम्मं देसेमि। अयं खो मे, भन्ते, पञ्चमो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो संविज्जति।

[B.52] ८. ''अनच्छरियं खो पन, भन्ते, सङ्घे निमन्तिते देवता उपसङ्कमित्वा आरोचेन्ति—'असुको, गहपति, भिक्खु उभतोभागविमुत्तो असुको पञ्ञाविमुत्तो असुको कायसक्खी असुको दिट्ठिपत्तो असुको सद्धाविमुत्तो असुको धम्मानुसारी असुको सद्धानुसारी असुको सीलवा कल्याणधम्मो असुको दुस्सीलो पापधम्मो' ति। सङ्घं खो पनाहं, भन्ते, परिविसन्तो नाभिजानामि एवं चित्तं उप्पादेन्तो—'इमस्स वा थोकं देमि इमस्स वा बहुकं' ति। अथ ख्वाहं, भन्ते, समचित्तो व देमि। अयं खो मे, भन्ते, छट्ठो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो संविज्जति।

९. ''अनच्छरियं खो पनं मं, भन्ते, देवता उपसङ्कमित्वा आरोचेन्ति—'स्वाक्खातो,

---

*(अनुपद वर्णित प्रथम उग्रसूत्र के समान ही विस्तार कर लें।)*

गहपति, भगवता धम्मो' ति। एवं वुत्ते अहं, भन्ते, ता देवता एवं वदेमि—'वदेय्याथ वा एवं खो तुम्हे देवता नो वा वदेय्याथ, अथ खो स्वाक्खातो भगवता धम्मो' ति। न खो पनाहं, भन्ते, अभिजानामि ततोनिदानं चित्तस्स उण्णतिं—'मं ता देवता उपसङ्कमन्ति, अहं वा देवताहि सद्धिं सल्लपामी' ति। अयं खो मे, भन्ते, सत्तमो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो संविज्जति।

१०. "सचे खो पनाहं, भन्ते, भगवतो पठमतरं कालं करेय्यं, अनच्छरियं [R.216] खो पनेतं यं मं भगवा एवं ब्याकरेय्य—'नत्थि तं संयोजनं येन संयुत्तो उग्गो गहपति हत्थिगामको पुन इमं लोकं आगच्छेय्या' ति। अयं खो मे, भन्ते, अट्ठमो अच्छरियो अब्भुतो धम्मो संविज्जति। इमे खो मे, भन्ते, अट्ठ अच्छरिया अब्भुता धम्मा संविज्जन्ति। न च खो अहं जानामि—कतमेहि चाहं अट्ठहि अच्छरियेहि अब्भुतेहि धम्मेहि समन्नागतो भगवता ब्याकतो" ति।

११. "अथ खो सो भिक्खु उग्गस्स गहपतिनो हत्थिगामकस्स निवेसने पिण्डपातं गहेत्वा उट्ठायासना पक्कामि। अथ खो सो भिक्खु पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सो भिक्खु यावतको अहोसि उग्गेन गहपतिना हत्थिगामकेन सद्धिं कथासल्लापो, तं [N.321] सब्बं भगवतो आरोचेसि।

१२. "साधु साधु, भिक्खु! यथा तं उग्गो गहपति हत्थिगामको सम्मा [B.55] ब्याकरमानो ब्याकरेय्य, इमेहेव खो भिक्खु, अट्ठहि अच्छरियेहि अब्भुतेहि धम्मेहि समन्नागतो उग्गो गहपति हत्थिगामको मया ब्याकतो। इमेहि च पन, भिक्खु, अट्ठहि अच्छरियेहि अब्भुतेहि धम्मेहि समन्नागतं उग्गं गहपतिं हत्थिगामकं धारेही" ति॥ ●

**३. पठमहत्थकसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा आळवियं विहरति अग्गाळवे चेतिये। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"सत्तहि, भिक्खवे, अच्छरियेहि अब्भुतेहि [R.217] धम्मेहि समन्नागतं हत्थकं आळवकं धारेथ। कतमेहि सत्तहि? सद्धो हि, भिक्खवे, हत्थको

---

१०. "भन्ते! यदि भगवान् से पहले मेरा देहपात हो जाय तो कोई आश्चर्य नहीं, भन्ते! मेरे विषय में भगवान् यह कहें—'ऐसा कोई संयोजन नहीं है, जिससे सम्पृक्त होकर यह हस्तिग्रामवासी उग्र गृहपति पुनः इस लोक में आवे।' भन्ते! यह अष्टम अद्भुत धर्म... मुझे अनुभूत होता है; परन्तु मैं नहीं जानता कि भगवान् ने मुझमें कौन आठ अद्भुत धर्म बताये हैं!"

११. तब वह भिक्षु हस्तिग्रामवासी उग्रगृहपति के घर भिक्षाकर्म कर ...पूर्ववत्...।

१२. साधु, भिक्षु! साधु! ...पूर्ववत्... उग्र गृहपति को समझो॥" ●

**३. प्रथम हस्तकसूत्र : : आठ अद्भुत धर्म से युक्त हस्तक**

१. एक समय भगवान् आड़वी के अग्राड़व चैत्य में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को यह उपदेश किया—

"भिक्षुओ! हस्तक आड़वक को सात आश्चर्यमय अद्भुत धर्मों से युक्त समझो। किन सात

आळवको; सीलवा, भिक्खवे, हत्थको आळवको; हिरीमा, भिक्खवे, हत्थको आळवको; ओत्तप्पी, भिक्खवे, हत्थको आळवको; बहुस्सुतो, भिक्खवे, हत्थको आळवको; चागवा, भिक्खवे, हत्थको आळवको, पञ्ञवा, भिक्खवे, हत्थको आळवको—इमेहि खो, भिक्खवे, सत्तहि अच्छरियेहि अब्भुतेहि धम्मेहि समन्नागतं हत्थकं आळवकं धारेथा'' ति।

२. इदमवोच भगवा। इदं वत्वान सुगतो उट्ठायासना विहारं पाविसि। अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय येन हत्थकस्स आळवकस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदि। अथ खो हत्थको आळवको येन सो भिक्खु तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा तं भिक्खुं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो हत्थकं आळवकं सो भिक्खु एतदवोच—

३. ''सत्तहि खो त्वं, आवुसो, अच्छरियेहि अब्भुतेहि धम्मेहि समन्नागतो भगवता ब्याकतो। कतमेहि सत्तहि? 'सद्धो, भिक्खवे, हत्थको आळवको; सीलवा ...पे०... हिरीमा... ओत्तप्पी... बहुस्सुतो... चागवा... पञ्ञवा, भिक्खवे, हत्थको आळवको' [N.322] ति। इमेहि खो त्वं, आवुसो, सत्तहि अच्छरियेहि अब्भुतेहि धम्मेहि समन्नागतो भगवता ब्याकतो'' ति।

''कच्चित्थ, भन्ते, न कोचि गिही अहोसि ओदातवसनो'' ति?

''न हेत्थ, आवुसो, कोचि गिही अहोसि ओदातवसनो'' ति।

''साधु, भन्ते यदेत्थ न कोचि गिही अहोसि ओदातवसनो'' ति।

[B.54] ४. अथ खो सो भिक्खु हत्थकस्स आळवकस्स निवेसने पिण्डपातं गहेत्वा उट्ठायासना पक्कामि। अथ खो सो भिक्खु पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तो येन भगवा [R.218] तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो सो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—

---

से? भिक्षुओ! हस्तक आळवक श्रद्धालु है; वह शीलवान् है; वह लज्जालु है; वह पापभीरु है; वह बहुश्रुत है; वह त्यागवान् है; तथा वह प्रज्ञावान् है। तुम इन सात आश्चर्यमय एवं अद्भुत धर्मों से युक्त उस हस्तक आड़वक को समझो।''

२. भगवान् ने यह कहा। यह कहकर भगवान् आसन से उठकर साधनास्थल में पधार गये। तब कोई भिक्षु पूर्वाह्ण में ...पूर्ववत्... हस्तक आड़वक के घर गया... यों पूछा—

३. ''आयुष्मन्! तुमको भगवान् ने सात आश्चर्यमय धर्मों से युक्त बताया है ...पूर्ववत्...।''

''भन्ते! क्या कोई अन्य श्वेतवस्त्रधारी भी इन सात धर्मों से युक्त बैठा था?''

''नहीं, आयुष्मन्! ऐसा श्वेतवस्त्रधारी तो अन्य कोई नहीं बैठा था।''

''भन्ते! आप उचित ही कह रहे हैं... अन्य कोई नहीं बैठा था।''

४. तब वह भिक्षु हस्तक आळवक के घर में भिक्षाकर्म कर ...पूर्ववत्... भगवान् से यह निवेदन करने लगा—

५. ''इधाहं, भन्ते, पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय येन हत्थकस्स आळवकस्स निवेसनं तेनुपसङ्कमिं; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने निसीदिं। अथ खो, भन्ते, हत्थको आळवको येनाहं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा मं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो अहं, भन्ते, हत्थकं आळवकं एतदवचं—'सत्तहि खो त्वं, आवुसो, अच्छरियेहि अब्भुतेहि धम्मेहि समन्नागतो भगवता ब्याकतो। कतमेहि सत्तहि? सद्धो, भिक्खवे, हत्थको आळवको; सीलवा ...पे०... हिरीमा... ओत्तप्पी... बहुस्सुतो... चागवा... पञ्ञवा, भिक्खवे, हत्थको आळवको ति। इमेहि खो त्वं, आवुसो, सत्तहि अच्छरियेहि अब्भुतेहि धम्मेहि समन्नागतो भगवता ब्याकतो' ति।

६. ''एवं वुत्ते, भन्ते, हत्थको मं एतदवोच—'कच्चित्थ, भन्ते, न कोचि गिही अहोसि ओदातवसनो' ति?

'न हेत्थ, आवुसो, कोचि गिही अहोसि ओदातवसनो' ति।

'साधु, भन्ते, यदेत्थ न कोचि गिही अहोसि ओदातवसनो'' ति।

७. ''साधु साधु, भिक्खु! अप्पिच्छो सो, भिक्खु, कुलपुत्तो। सन्तेयेव अत्तनि कुसलधम्मे न इच्छति परेहि ञायमाने। तेन हि त्वं, भिक्खु, इमिना पि अट्ठमेन अच्छरियेन अब्भुतेन धम्मेन समन्नागतं हत्थकं आळवकं धारेहि, यदिदं अप्पिच्छताया'' ति॥ ●

४. **दुतियहत्थकसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा आळवियं विहरति [N.323] अग्गाळवे चेतिये। अथ खो हत्थको आळवको पञ्चमत्तेहि उपासकसतेहि परिवुतो [R.219] येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो हत्थकं आळवकं भगवा एतदवोच— [B.55]

२. ''महती खो त्यायं, हत्थक, परिसा। कथं पन त्वं, हत्थक, इमं महतिं परिसं सङ्गण्हासी'' ति?

---

५. ''आज, भन्ते! मैं पूर्वाह्ण में... सात धर्मों से युक्त बताया है।''

६. ''...भन्ते! क्या कोई अन्य श्वेतवस्त्र ...पूर्ववत्... नहीं बैठा था।''

७. ''साधु, भिक्षु! साधु! वह कुलपुत्र वस्तुतः बहुत सन्तोषी है कि अपने में ऐसे कुशल धर्म होते हुए भी वह नहीं चाहता कि दूसरे लोग उसके गुणों को जानकर उसकी प्रशंसा करें। भिक्षु! तुम उसको इस अष्टम आश्चर्यमय अद्भुत धर्म (अल्पेच्छता) से भी युक्त समझो॥'' ●

**४. द्वितीय हस्तकसूत्र : : आठ अद्भुत धर्मों से युक्त हस्तक**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) आड़वी के अग्राळव चैत्य में साधनाहेतु विराजमान थे। तब हस्तक आड़वक अपने पाँच सौ उपासकों से घिरा हुआ, भगवान् के दर्शनहेतु आया। आकर भगवान् को प्रणाम एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे हुए हस्तक आड़वक से भगवान् ने पूछा—

२. ''हस्तक! तुम्हारे साथ तो बहुत बड़ी परिषद् है; इतनी विशाल परिषद् को तुम कैसे सँभालते हो?''

"यानिमानि, भन्ते, भगवता देसितानि चत्तारि सङ्गहवत्थूनि, तेहाहं इमं महतिं परिसं सङ्गण्हामि। अहं, भन्ते, यं जानामि—'अयं दानेन सङ्गहेतब्बो' ति, तं दानेन सङ्गण्हामि; यं जानामि—'अयं पेय्यवज्जेन सङ्गहेतब्बो' ति. तं पेय्यवज्जेन सङ्गण्हामि; यं जानामि—'अयं अत्थचरियाय सङ्गहेतब्बो' ति, तं अत्थचरियाय सङ्गण्हामि; यं जानामि—'अयं समानत्तताय सङ्गहेतब्बो' ति, तं समानत्तताय सङ्गण्हामि। संविज्जन्ति खो पन मे, भन्ते, कुले भोगा। दलिद्दस्स खो नो तथा सोतब्बं मञ्ञन्ती" ति।

३. "साधु साधु, हत्थक! योनि खो त्यायं, हत्थक महतिं परिसं सङ्गहेतुं। ये हि केचि, हत्थक, अतीतमद्धानं महति परिसं सङ्गहेसुं, सब्बे ते इमेहेव चतूहि सङ्गहवत्थूहि महतिं परिसं सङ्गहेसुं। ये पि हि केचि, हत्थक, अनागतमद्धानं महतिं परिसं सङ्गण्हिस्सन्ति, सब्बे ते इमेहेव चतूहि सङ्गहवत्थूहि महतिं परिसं सङ्गण्हिस्सन्ति। ये पि हि केचि, हत्थक, एतरहि महतिं परिसं सङ्गण्हन्ति, सब्बे ते इमेहेव चतूहि सङ्गहवत्थूहि महतिं परिसं सङ्गण्हन्ती" ति।

४. अथ खो हत्थको आळवको भगवता धम्मिया कथाय सन्दस्सितो समादपितो समुत्तेजितो सम्पहंसितो उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कामि। अथ [R.220] खो भगवा अचिरपक्कन्ते हत्थके आळवके भिक्खू आमन्तेसि—"अट्ठहि, भिक्खवे, अच्छरियेहि अब्भुतेहि धम्मेहि समन्नागतं हत्थकं आळवकं धारेथ। कतमेहि अट्ठहि? सद्धो, भिक्खवे, हत्थको आळवको; सीलवा, भिक्खवे ...पे०... हिरीमा... ओत्तप्पी... बहुस्सुतो... चागवा... पञ्ञवा, भिक्खवे, हत्थको आळवको; अप्पिच्छो,

---

"भन्ते! आपने जिन चार संग्रह वस्तुओं का उपदेश किया है उन्हीं के सहारे इतनी विशाल परिषद् की संभालता हूँ। भन्ते! मैं जिसको ऐसा समझता हूँ कि यह (अन्न-) दान से संगृहीत किया जा सकता है, उसको दान देकर सँभालता हूँ। जिसको मैं समझता हूँ कि यह प्रियवचनों से सँभाला जा सकता है उसको प्रियवचन बोलकर सँभालता हूँ। जिसको मैं समझता हूँ कि यह अर्थचर्या (उपकार) से संगृहीत किया जा सकता है उसका मैं कोई न कोई उपकार कर उसे संभालता हूँ। तथा जिसको मैं समझता हूँ कि यह समान व्यवहार का इच्छुक है उसके साथ मैं समान व्यवहार करता हुआ उसका संग्रह करता हूँ। भन्ते! मेरे घर में सम्पत्ति की कोई कमी नहीं है। निर्धन का तो वहाँ कोई नाम भी नहीं सुनना चाहता।

३. "साधु, साधु हस्तक! इतनी बड़ी परिषद् को सँभालने की यही कुञ्जी है। हस्तक! भूतकाल में भी जिनने इतनी बड़ी परिषदों का संग्रह किया है, उनने भी इन ही चार संग्रहवस्तुओं से उनका संग्रह किया था। जो भविष्य में ऐसा संग्रह करना चाहेंगे वे भी इन ही चार वस्तुओं से संग्रह कर सकेंगे। तथा हस्तक! जो वर्तमान में इतनी बड़ी परिषदों का संग्रह किये हुए हैं उनने भी इसी उपाय का अवलम्बन किया है।"

४. तदनन्तर भगवान् की धार्मिक कथा सुनकर उससे सन्तुष्ट, समुत्तेजित एवं सम्प्रहृष्ट होकर हस्तक आळवक अपने घर चला गया। उसके चले जाने के कुछ समय बाद, भगवान् ने भिक्षुओं

भिक्खवे, हत्थको आळवको। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहि अच्छरियेहि अब्भुतेहि [N.324] धम्मेहि समन्नागतं हत्थकं आळवकं धारेथा'' ति॥

५. **महानामसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा सक्केसु विहरति कपिलवत्थुस्मिं निग्रोधारामे। अथ खो महानामो सक्को येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो महानामो सक्को भगवन्तं [B.56] एतदवोच—

२. ''कित्तावता नु खो, भन्ते, उपासको होती'' ति?

''यतो खो, महानाम, बुद्धं सरणं गतो होति, धम्मं सरणं गतो होति, सङ्घं सरणं गतो होति; एत्तावता खो, महानाम, उपासको होती'' ति।

३. ''कित्तावता पन, भन्ते, उपासको सीलवा होती'' ति?

''यतो खो, महानाम, उपासको पाणातिपाता पटिविरतो होति, अदिन्नादाना पटिविरतो होति, कामेसुमिच्छाचारा पटिविरतो होति, मुसावादा पटिविरतो होति, सुरामेरय-मज्जपमादट्ठाना पटिविरतो होति; एत्तावता खो, महानाम, उपासको सीलवा होती'' ति।

४. ''कित्तावता पन, भन्ते, उपासको अत्तहिताय पटिपन्नो होति, नो परहिताया'' ति?

''यतो खो, महानाम, उपासको अत्तना व सद्धासम्पन्नो होति, नो परं [R.221] सद्धासम्पदाय समादपेति; अत्तना व सीलसम्पन्नो होति, नो परं सीलसम्पदाय समादपेति;

---

को समझाया—''भिक्षुओ! तुम इस हस्तक आड़वक को आठ अद्भुत एवं आश्चर्यमय धर्मों से युक्त मानो। ...पूर्ववत्... ॥''

**५. महानामसूत्र : : आठ धर्मों से युक्त उपासक**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) शाक्य प्रदेश की राजधानी कपिलवस्तु नगरी के न्यग्रोधाराम में साधनाहेतु विराजमान थे। किसी समय महानाम शाक्य भगवान् के सम्मुख आया। आकर, भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठा हुआ महानाम शाक्य भगवान् से बोला—

२. ''भन्ते! किन विशेषताओं के कारण कोई 'उपासक' कहलाता है?''

''महानाम! जो बुद्ध, धर्म एवं सङ्घ की शरण में आ जाता है, इस कारण वह उपासक कहलाता है।''

३. ''भन्ते! कैसे कोई उपासक 'शीलवान्' कहलाता है?''

''उपासक! जो प्राणातिपात से, अदत्तादान से, व्यभिचार से, असत्यभाषण से तथा सुरामैरेय आदि के पान से विरत रहता है, ऐसा उपासक 'शीलवान्' कहलाता है।

४. ''किस प्रकार कोई उपासक आत्महित में लगा हुआ कहलाता है, परहित में लगा हुआ नहीं?''

''महानाम! जो उपासक स्वयं तो रत्नत्रय के प्रति श्रद्धालु होता है; परन्तु दूसरों को एतदर्थ

अत्तना व चागसम्पन्नो होति, नो परं चागसम्पदाय समादपेति; अत्तना व भिक्खूनं दस्सनकामो होति, नो परं भिक्खूनं दस्सने समादपेति; अत्तना व सद्धम्मं सोतुकामो होति, नो परं सद्धम्मस्सवने समादपेति; अत्तना व सुतानं धम्मानं धारणजातिको होति, नो परं धम्मधारणाय समादपेति; अत्तना व सुतानं धम्मानं अत्थूपपरिक्खिता होति, नो परं अत्थूपपरिक्खाय समादपेति; अत्तना व अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो [N.325] होति, नो परं धम्मानुधम्मप्पटिपत्तिया समादपेति। एत्तावता खो, महानाम, उपासको अत्तहिताय पटिपन्नो होति, नो परहिताया'' ति।

५. ''कित्तावता पन, भन्ते, उपासको अत्तहिताय च पटिपन्नो होति परहिताय चा'' ति?

''यतो खो, महानाम, उपासको अत्तना च सद्धासम्पन्नो होति, परं च सद्धासम्पदाय समादपेति; अत्तना च सीलसम्पन्नो होति, परं च सीलसम्पदाय समादपेति; अत्तना च चागसम्पन्नो होति, परं च चागसम्पदाय समादपेति; अत्तना च भिक्खूनं दस्सनकामो होति, परं च भिक्खूनं दस्सने समादपेति; अत्तना च सद्धम्मं सोतुकामो होति, परं च सद्धम्मस्सवने [B.57] समादपेति; अत्तना च सुतानं धम्मानं धारणजातिको होति, परं च धम्मधारणाय समादपेति; अत्तना च सुतानं धम्मानं अत्थूपपरिक्खिता होति, परं च अत्थूपपरिक्खाय समादपेति, अत्तना च अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो होति, परं च [R.222] धम्मानुधम्मप्पटिपत्तिया समादपेति। एत्तावता खो, महानाम, उपासको अत्तहिताय च पटिपन्नो होति परहिताय चा'' ति॥ ●

**६. जीवकसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा राजगहे विहरति जीवकम्बवने। अथ खो

---

प्रोत्साहित नहीं करता; स्वयं शीलवान् होता है, परन्तु दूसरों को शीलसम्पदा के लिये प्रोत्साहित नहीं करता; स्वयं भिक्षुओं के दर्शन करना चाहता है, परन्तु दूसरों को इसके लिये प्रोत्साहित नहीं करता; स्वयं धर्मश्रवण करना चाहता है; परन्तु दूसरों को इसके लिये प्रोत्साहित नहीं करता; श्रुत धर्मों को स्वयं तो धारण करता है, परन्तु दूसरों को इसके लिये प्रोत्साहित नहीं करता; स्वयं श्रुतधर्म का चिन्तन मनन करता है, परन्तु दूसरों को प्रोत्साहित नहीं करता; उसके अर्थ का चिन्तन मनन कर तदनुसार स्वयं आचरण करता है, परन्तु दूसरों को प्रोत्साहित नहीं करता। इस प्रकार, महानाम! कोई उपासक 'आत्महित में लगा हुआ होने पर भी परहित में न लगा हुआ' कहलाता है।

५. ''कैसे, भन्ते! कोई उपासक आत्महित एवं परहित—दोनों में लगा हुआ कहलाता है?

''महानाम! जो उपासक स्वयं श्रद्धालु होता है, दूसरों को भी उसके लिये प्रेरणा देता है; स्वयं शीलवान् ...पूर्ववत्... त्यागसम्पन्न... भिक्षुओं का दर्शनेच्छु... सद्धर्मश्रवणेच्छु... सद्धर्मधारक... सद्धर्म के अर्थ का ज्ञाता... स्वयं अर्थज्ञान कर तदनुसार आचरण करता हुआ दूसरों को भी उसके लिये प्रेरणा देता है; महानाम! ऐसा उपासक आत्महित एवं परहित—दोनों में लगा हुआ कहलाता है॥'' ●

जीवको कोमारभच्चो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो जीवको कोमारभच्चो भगवन्तं एतदवोच—

२. "कित्तावता नु खो, भन्ते, उपासको होती" ति?

"यतो खो, जीवक, बुद्धं सरणं गतो होति, धम्मं सरणं गतो होति, सङ्घं सरणं गतो होति; एत्तावता खो जीवक, उपासको होती" ति?

३. "कित्तावता पन, भन्ते, उपासको सीलवा होती" ति?

"यतो खो, जीवक, उपासको पाणातिपाता पटिविरतो होति ...पे०... सुरामेरय-मज्जपमादट्ठाना पटिविरतो होति; एत्तावता खो जीवक, उपासको सीलवा होती" ति।

४. "कित्तावता पन, भन्ते, उपासको अत्तहिताय पटिपन्नो होति, नो परहिताया" ति?

"यतो खो, जीवक, उपासको अत्तना व सद्धासम्पन्नो होति, नो परं सद्धा- [N.326] सम्पदाय समादपेति ...पे०... अत्तना व अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो होति, नो परं धम्मानुधम्मप्पटिपत्तिया समादपेति। एत्तावता खो, जीवक, उपासको अत्तहिताय पटिपन्नो होति, नो परहिताया" ति।

५. "कित्तावता पन, भन्ते, उपासको अत्तहिताय च पटिपन्नो होति परहिताय चा" ति?

"यतो खो, जीवक, उपासको अत्तना च सद्धासम्पन्नो होति, परं च सद्धा- [R.223] सम्पदाय समादपेति; अत्तना च सीलसम्पन्नो होति, परं च सीलसम्पदाय समादपेति; [B.58] अत्तना च चागसम्पन्नो होति, परं च चागसम्पदाय समादपेति; अत्तना च भिक्खूनं दस्सनकामो होति, परं च भिक्खूनं दस्सने समादपेति; अत्तना च सद्धम्मं सोतुकामो होति, परं च सद्धम्मस्सवने समादपेति; अत्तना च सुतानं धम्मानं धारणजातिको होति, परं च धम्मधारणाय समादपेति; अत्तना च सुतानं धम्मानं अत्थूपपरिक्खिता होति, परं च अत्थूप-परिक्खाय समादपेति; अत्तना च अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो होति, परं च धम्मानुधम्मप्पटिपत्तिया समादपेति। एत्तावता खो, जीवक, उपासको अत्तहिताय च पटिपन्नो होति परहिताय चा" ति॥ ●

**७. पठमबलसुत्तं :** १. "अट्ठिमानि, भिक्खवे, बलानि। कतमानि अट्ठ? रुण्णबला,

---

**६. जीवकसूत्र : : आठ धर्मों से युक्त उपासक**

१. एक समय भगवान् राजगृह के जीविकाम्रवन में साधनाहेतु विराजमान थे। तब (वैद्य) जीवक कौमारभृत्य भगवान् के पास आये। आकर ...पूर्ववत्...। भगवान् से यह निवेदन किया—

"भन्ते! किन गुणों से उपासक कहलाता है?"

"जीवक! जो उपासक बुद्ध के शरण में आ जाता है ...पूर्वसूत्रवत्...। इस प्रकार, जीवक! कोई उपासक आत्महित एवं परहित दोनों लगा हुआ कहलाता है॥" ●

भिक्खवे, दारका, कोधबला मातुगामा, आवुधबला चोरा, इस्सरियबला राजानो, उज्झत्तिबला बाला, निज्झत्तिबला पण्डिता, पटिसङ्खानबला बहुस्सुता, खन्तिबला समणब्राह्मणा— इमानि खो, भिक्खवे, अट्ठ बलानी'' ति॥

**८. दुतियबलसुत्तं** : १. अथ खो आयस्मा सारिपुत्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो आयस्मन्तं [N.327,R.224] सारिपुत्तं भगवा एतदवोच—''कति नु खो, सारिपुत्त, खीणासवस्स भिक्खुनो बलानि, येहि बलेहि समन्नागतो खीणासवो भिक्खु आसवानं खयं पटिजानाति— 'खीणा मे आसवा' ति?

''अट्ठ, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो बलानि, येहि बलेहि समन्नागतो खीणासवो भिक्खु आसवानं खयं पटिजानाति—'खीणा मे आसवा' ति। कतमानि अट्ठ? इध, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो अनिच्चतो सब्बे सङ्खारा यथाभूतं सम्मप्पञ्ञाय सुदिट्ठा होन्ति। यं पि, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो अनिच्चतो सब्बे सङ्खारा यथाभूतं सम्मप्पञ्ञाय सुदिट्ठा होन्ति, इदं पि, भन्ते खीणासवस्स भिक्खुनो बलं होति, यं बलं आगम्म खीणासवो भिक्खु आसवानं खयं पटिजानाति—'खीणा मे आसवा' ति।

[B.59] २. ''पुन च परं, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो अङ्गारकासूपमा कामा यथाभूतं सम्मप्पञ्ञाय सुदिट्ठा होन्ति। यं पि, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो अङ्गारकासूपमा कामा यथाभूतं सम्मप्पञ्ञाय सुदिट्ठा होन्ति, इदं पि, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो बलं होति, यं बलं आगम्म खीणासवो भिक्खु आसवानं खयं पटिजानाति—'खीणा मे आसवा' ति।

---

**७. प्रथम बलसूत्र : : आठ बल**

१. ''भिक्षुओ! ये आठ बल होते हैं। कौन आठ? भिक्षुओ! रुदन शिशुओं बल होता है; क्रोध स्त्रियों का बल होता है, चौरों का बल शस्त्र होता है; राजाओं का बल ऐश्वर्य होता है; आरोप या उपालम्भ मूर्खों का बल होता है, दर्शन (समीक्षा) बुद्धिमानों का बल होता है। विद्वानों का विचार ही बल होता है तथा श्रमण ब्राह्मणों का क्षमा बल होता है। भिक्षुओ! ये आठ बल होते हैं॥''

●

**८. द्वितीय बलसूत्र : : आठ बल**

१. कभी आयुष्मान् सारिपुत्र भगवान् के सम्मुख आये। आकर, भगवान् को... भगवान् ने यह प्रश्न किया—''सारिपुत्र! क्षीणाश्रव भिक्षु के कितने बल होते हैं, जिनके आश्रय से वह क्षीणाश्रव अपने आश्रवों के विषय में जान लेता है—'मेरे ये आश्रव क्षीण हो गये'?

''भन्ते! क्षीणाश्रव भिक्षु के आठ बल होते हैं ...पूर्ववत्...। कौन से आठ? यहाँ, भिक्षुओ! क्षीणाश्रव भिक्षु के सभी संस्कार अनित्य होने के कारण भली भाँति समीक्षा कर लेने से सुदृष्ट (स्पष्ट) हो जाते हैं। इस (अनित्यता) बल के आश्रय से वह क्षीणाश्रव भिक्षु जान लेता है कि मेरे आश्रव क्षीण हो गये। (१)

२. ''पुनः, भन्ते! क्षीणाश्रव भिक्षु की प्रज्वलित अंगारों के समान कामवासना भली भाँति

३. "पुन च परं, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो विवेकनिन्नं चित्तं होति विवेकपोणं विवेकपब्भारं विवेकट्ठं नेक्खम्माभिरतं ब्यन्तीभूतं सब्बसो आसवट्ठानियेहि धम्मेहि। यं पि, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो विवेकनिन्नं चित्तं होति विवेकपोणं विवेकपब्भारं विवेकट्ठं नेक्खम्माभिरतं ब्यन्तीभूतं सब्बसो आसवट्ठानियेहि धम्मेहि, इदं पि, भन्ते खीणासवस्स भिक्खुनो बलं होति, यं बलं आगम्म खीणासवो भिक्खु आसवानं खयं पटिजानाति—'खीणा मे आसवा' ति।

४. "पुन च परं, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो चत्तारो सतिपट्ठाना भाविता होन्ति सुभाविता। यं पि, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो चत्तारो सतिपट्ठाना भाविता होन्ति [R.225] सुभाविता, इदं पि, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो बलं होति, यं बलं आगम्म खीणासवो भिक्खु आसवानं खयं पटिजानाति—'खीणा मे आसवा' ति।

५. "पुन च परं, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो चत्तारो इद्धिपादा भाविता होन्ति सुभाविता ...पे०... पञ्चिन्द्रियानि भावितानि होन्ति सुभावितानि ...पे०... सत्त बोज्झङ्गा भाविता होन्ति सुभाविता ...पे०... अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावितो होति सुभावितो। यं पि, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो अरियो अट्ठङ्गिको मग्गो भावितो होति सुभावितो, [N.328] इदं पि, भन्ते, खीणासवस्स भिक्खुनो बलं होति, यं बलं आगम्म खीणासवो भिक्खु आसवानं खयं पटिजानाति—'खीणा मे आसवा' ति।

६. "इमानि खो, भन्ते, अट्ठ खीणासवस्स भिक्खुनो बलानि, येहि बलेहि समन्नागतो खीणासवो भिक्खु आसवानं खयं पटिजानाति—'खीणा मे आसवा''' ति॥●

---

समीक्षा कर लेने से शान्त हो जाती है। भन्ते! इस प्रकार उस क्षीणाश्रव भिक्षु की उस प्रज्वलित कामवासना का शान्त होना भी उसका एक बल है। (२)

३. "पुनः भन्ते! क्षीणाश्रव भिक्षु का चित्त आश्रवस्थानीय धर्मों से सर्वथा हटकर विवेक की ओर झुकने लगता है, बढ़ने लगता है, निष्काम साधना में सुख मानने लगता है, वहाँ रुकने लगता है; भन्ते! उसके चित्त का विवेक की ओर झुकना, बढ़ना, सुख मानना तथा रुकना भी उस क्षीणाश्रव का एक बल है जिसके सहारे से वह जान लेता है कि मेरे आश्रव क्षीण हो गये। (३)

४. "पुनः भन्ते! उस क्षीणाश्रव भिक्षु के चारों स्मृतिप्रस्थान साधना एवं अभ्यास द्वारा सुपुष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार उसके इन स्मृतिप्रस्थानों का अभ्यस्त एवं सुपुष्ट हो जाना भी उसका एक बल है जिसके सहारे से वह जान लेता है कि मेरे आश्रव क्षीण हो गये। (४)

५. "पुनः, भन्ते! उस क्षीणाश्रव भिक्षु के चारों ऋद्धिपाद ...पूर्ववत्... मेरे आश्रव क्षीण हो गये। (५)

...पूर्ववत्... पाँचों इन्द्रियाँ... ॥ (६)

...पूर्ववत्... सात बोध्यङ्ग... ॥ (७)

...पूर्ववत्... आर्य अष्टाङ्गिक मार्ग... मेरे आश्रव क्षीण हो गये। (८)

[B.60] **९. अक्खणसुत्तं :** १. '''खणकिच्चो लोको, खणकिच्चो लोको' ति, भिक्खवे, अस्सुतवा पुथुज्जनो भासति, नो च खो सो जानाति खणं वा अक्खणं वा। अट्ठिमे, भिक्खवे, अक्खणा असमया ब्रह्मचरियवासाय। कतमे अट्ठ? इध, भिक्खवे, तथागतो च लोके उप्पन्नो होति अरहं सम्मासम्बुद्धो विज्जाचरणसम्पन्नो सुगतो लोकविदू अनुत्तरो पुरिसदम्मसारथि सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा, धम्मो च देसियति ओपसमिको परिनिब्बानिको सम्बोधगामी सुगतप्पवेदितो; अयं च पुग्गलो निरयं उपपन्नो होति। अयं, भिक्खवे, पठमो अक्खणो असमयो ब्रह्मचरियवासाय।

[R.226] २. ''पुन च परं, भिक्खवे, तथागतो च लोके उप्पन्नो होति ...पे०... सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा, धम्मो च देसियति ओपसमिको परिनिब्बानिको सम्बोधगामी सुगतप्पवेदितो; अयं च पुग्गलो तिरच्छानयोनिं उपपन्नो होति ...पे०... दुतियो अक्खणो असमयो ब्रह्मचरियवासाय।

३. ''पुन च परं, भिक्खवे ...पे०... अयं च पुग्गलो पेत्तिविसयं उपपन्नो होति ...पे०... ततियो अक्खणो असमयो ब्रह्मचरियवासाय।

४. ''पुन च परं, भिक्खवे ...पे०... अयं च पुग्गलो अञ्ञतरं दीघायुकं देवनिकायं उपपन्नो होति ...पे०... चतुत्थो अक्खणो असमयो ब्रह्मचरियवासाय।

[N.329] ५. ''पुन च परं, भिक्खवे, ...पे०... अयं च पुग्गलो पच्चन्तिमेसु जनपदेसु पच्चाजातो होति, सो च होति अविञ्ञातारेसु मिलक्खेसु, यत्थ नत्थि गति भिक्खूनं भिक्खुनीनं उपासकानं उपासिकानं ...पे०... पञ्चमो अक्खणो असमयो ब्रह्मचरियवासाय।

---

६. ''भन्ते! क्षीणाश्रव भिक्षु के ये आठ बल होते हैं, जिनके सहारे से वह जान लेता है कि मेरे आश्रव क्षीण हो गये॥'' ●

**९. अक्षणसूत्र : : आठ अक्षण**

१. ''भिक्षुओ! ये अश्रुतवान् पृथग्जन यदा कदा कहते रहते हैं—'समय (क्षण) आने पर ही कार्य होगा'; परन्तु वे नहीं जानते कि यह 'क्षण' या 'अक्षण' क्या होता है? भिक्षुओ! धर्मसाधना के आठ अक्षण (अनवसर) होते हैं। कौन से आठ? यहाँ भिक्षुओ! जब तथागत लोक में अवतरित होते हैं... वे सुप्रवेदित एवं निर्वाणगामी धर्म का उपदेश देते रहते हैं, उस समय जो प्राणी प्रारब्धवश नरक भोग रहा है, ऐसे प्राणी के लिये धर्मसाधनाहेतु प्रथम अक्षण है। (१)

२. ''पुनः, भिक्षुओ! जब तथागत लोक में अवतरित होते हैं... वे सुप्रवेदित एवं निर्वाणगामी धर्म का उपदेश करते रहते हैं उस समय जो प्राणी तिरश्चीन (पशु) योनि में उत्पन्न हुआ रहता है, ऐसे प्राणी के लिये धर्मसाधनाहेतु द्वितीय अक्षण है। (२)

३. ''पुनः, भिक्षुओ! जब तथागत ...पूर्ववत्... उस समय जो प्राणी प्रेतलोक में उत्पन्न हुआ रहता है, ऐसे प्राणी के लिये धर्मसाधनाहेतु तृतीय अक्षण है। (३)

४. ''पुनः, भिक्षुओ! जब तथागत ...पूर्ववत्... उस समय जो प्राणी किसी दीर्घायुवाले देवलोक में उत्पन्न हुआ रहता है, ऐसे प्राणी के लिये धर्मसाधनाहेतु चतुर्थ अक्षण है। (४)

६. ''पुन च परं, भिक्खवे ...पे०... अयं च पुग्गलो मज्झिमेसु जनपदेसु पच्चाजातो होति, सो च होति मिच्छादिट्ठिको विपरीतदस्सनो—'नत्थि दिन्नं, नत्थि यिट्ठं, नत्थि हुतं, नत्थि सुकतदुक्कटानं कम्मानं फलं विपाको, नत्थि अयं लोको, नत्थि परो लोको, नत्थि माता, नत्थि पिता, नत्थि सत्ता ओपपातिका, नत्थि लोके समणब्राह्मणा सम्मग्गता सम्मापटिपन्ना ये इमं च लोकं परं च लोकं सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा पवेदेन्ती' ति ...पे०... छट्ठो अक्खणो असमयो ब्रह्मचरियवासाय।

७. ''पुन च परं, भिक्खवे ...पे०... अयं च पुग्गलो मज्झिमेसु जनपदेसु [B.61] पच्चाजातो होति, सो च होति दुप्पञ्ञो जळो एळमूगो अप्पटिबलो सुभासितदुब्भासितस्स अत्थमञ्ञातुं। अयं, भिक्खवे, सत्तमो अक्खणो असमयो ब्रह्मचरियवासाय।

८. ''पुन च परं, भिक्खवे, तथागतो च लोके अनुप्पन्नो होति अरहं सम्मासम्बुद्धो ...पे०... सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा, धम्मो च न देसियति ओपसमिको परिनिब्बानिको सम्बोधगामी सुगतप्पवेदितो, अयं च पुग्गलो मज्झिमेसु जनपदेसु [R.227] पच्चाजातो होति, सो च होति पञ्ञवा अजळो अनेळमूगो पटिबलो सुभासितदुब्भासितस्स अत्थमञ्ञातुं। अयं, भिक्खवे, अट्ठमो अक्खणो असमयो ब्रह्मचरियवासाय।

'इमे खो, भिक्खवे, अट्ठ अक्खणा असमया ब्रह्मचरियवासाय।

९. ''एको व खो, भिक्खवे, खणो च समयो च ब्रह्मचरियवासाय। कतमो एको? इध, भिक्खवे, तथागतो च लोके उप्पन्नो होति अरहं सम्मासम्बुद्धो विज्जाचरणसम्पन्नो सुगतो लोकविदू अनुत्तरो पुरिसदम्मसारथि सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा, धम्मो च देसियति ओपसमिको परिनिब्बानिको सम्बोधगामी सुगतप्पवेदितो, अयं च पुग्गलो

---

५. ''पुनः, भिक्षुओ! जब तथागत... पूर्ववत्... उस समय जो प्राणी सीमान्त प्रदेश में उत्पन्न होता हुआ, वहाँ वह अज्ञात म्लेच्छ जाति में उत्पन्न हो गया हो जहाँ भिक्षु गृहिणी उपासक उपासिकाओं की पहुँच नहीं होती, ऐसे प्राणी के लिये धर्मसाधना हेतु पञ्चम अक्षण है। (५)

६. ''फिर, भिक्षुओ! जब तथागत ...पूर्ववत्... उस समय जो प्राणी मध्यदेश में उत्पन्न होकर भी मिथ्यादृष्टि हो ...पूर्ववत्... ऐसे प्राणी के लिये धर्मसाधना हेतु षष्ठ अक्षण है। (६)

७. ''फिर, भिक्षुओ! जब तथागत ...पूर्ववत्... उस समय जो प्राणी मध्यदेश में उत्पन्न होता है; परन्तु वह जड़ हो ...पूर्ववत्... ऐसे प्राणी के लिये धर्मसाधना हेतु सप्तम अक्षण है। (७)

८. ''फिर, भिक्षुओ! जब तथागत अनुत्पन्न ...पूर्ववत्... उस समय जो प्राणी मध्यदेश में उत्पन्न हो गया है; परन्तु वह ...पूर्ववत्... ऐसे प्राणी के लिये धर्मसाधना हेतु अष्टम अक्षण है। (८)

''भिक्षुओ! ये आठ अक्षण धर्मसाधनाहेतु अनवसर हैं। (क)

९. भिक्षुओ! धर्मसाधना का एक ही क्षण (अवसर) है। वह कौन सा? यहाँ, भिक्षुओ! तथागत लोक में उत्पन्न हुए हों ...पूर्ववत्... और वे चित्त को शान्त करने वाला निर्वाणगामी सम्बोधिगामी सुगतप्रवेदित धर्म का उपदेश कर रहे हों, तथा यह (धर्मसाधनेच्छु) पुद्गल मध्य देश

मज्झिमेसु जनपदेसु पच्चाजातो होति, सो च होति पञ्ञवा अजळो अनेळमूगो पटिबलो सुभासितदुब्भासितस्स अत्थमञ्ञातुं। अयं, भिक्खवे, एको व खणो च समयो च ब्रह्मचरियवासाया ति।

[N.330] ''मनुस्सलाभं लद्धान, सद्धम्मे सुप्पवेदिते।
ये खणं नाधिगच्छन्ति, अतिनामेन्ति ते खणं॥
''बहू हि अक्खणा वुत्ता, मग्गस्स अन्तरायिका।
कदाचि करहचि लोके, उप्पज्जन्ति तथागता॥
''तयिदं सम्मुखीभूतं, यं लोकस्मिं सुदुल्लभं।
मनुस्सपटिलाभो च, सद्धम्मस्स च देसना॥
''अलं वायमितुं तत्थ, अत्तकामेन जन्तुना।
कथं विजञ्ञा सद्धम्मं, खणो वे मा उपच्चगा॥
[B.62, R.228] ''खणातीता हि सोचन्ति, निरयम्हि समप्पिता।
इध चे न विराधेति, सद्धम्मस्स नियामतं॥
''वाणिजो व अतीतत्थो, चिरत्तं अनुतपिस्सति।
अविज्जानिवुतो पोसो, सद्धम्मं अपराधिको॥
''जातिमरणसंसारं, चिरं पच्चनुभोस्सति।

---

में उत्पन्न हुआ हो, तथा वह प्रज्ञावान्, जड़ता (मन्दता) रहित, सभी इन्द्रियों से सावधान, सुभाषित एवं दुर्भाषित धर्म का अर्थ जानने में समर्थ हो—भिक्षुओ! यही एक अवसर, यही एक क्षण धर्मसाधनाहेतु उपयुक्त माना जाता है।

''मनुष्य जन्म पाकर भी, जबकि शास्ता द्वारा धर्मोपदेश किया जा रहा हो, जो लोग धर्मसाधना का अवसर नहीं निकाल पाते, वह इस सुअवसर को व्यर्थ ही खो देते हैं॥

''धर्मसाधना के विघ्नभूत अनेक अनवसर (अक्षण) बताये गये हैं। तथागत कभी किसी विशेष अवसर पर ही लोक में अवतरित होते हैं॥

''वह सुअवसर आज हमारे सम्मुख उपस्थित है, जो कि लोक में दुर्लभ माना जाता है। आज हमें मनुष्यजन्म भी प्राप्त हो चुका है, सद्धर्म की देशना भी हो रही है॥

''अपना हित चाहने वाले पुरुष को इसके लिये प्रयत्न करना चाहिये कि वह कैसे धर्मसाधना करे कि यह अवसर हाथ से न निकल जाय!॥

''अवसर बीतने के बाद सद्धर्म की नियमित साधना में चूक करने वाले लोग नरक में जा गिरते हैं॥

''जैसे कोई व्यापारी अपने व्यापार में घाटा सहने के बाद पछताता है, वैसे ही अविद्यासंयुक्त पुरुष तथा सद्धर्मसाधना में अपराधी मनुष्य जन्म मरण एवं संसार में पुनः पुनः आना जाना चिरकाल तक भोगता रहेगा॥

''जिन पुरुषों ने धर्मोपदेशकाल में मनुष्यत्व पाया है, जो शास्ता के धर्मपालन-विषयक

ये च लद्धा मनुस्सत्तं, सद्धम्मे सुप्पवेदिते॥
"अकंसु सत्थु वचनं, करिस्सन्ति करोन्ति वा।
खणं पच्चविदुं लोके, ब्रह्मचरियं अनुत्तरं॥
"ये मग्गं पटिपज्जिंसु, तथागतप्पवेदितं।
ये संवरा चक्खुमता, देसितादिच्चबन्धुना॥
"तेसु गुत्तो सदा सतो, विहरे अनवस्सुतो।
सब्बे अनुसये छेत्वा, मारधेय्यपरानुगे।
ते वे पारङ्गता लोके, ये पत्ता आसवक्खयं" ति॥ ●

**१०. अनुरुद्धमहावितक्कसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा भग्गेसु विहरति सुंसुमारगिरे भेसकळावने मिगदाये। तेन खो पन समयेन आयस्मा अनुरुद्धो चेतीसु विहरति पाचीनवंसदाये। अथ खो आयस्मतो अनुरुद्धस्स रहोगतस्स पटिसल्लीनस्स एवं [N.331] चेतसो परिवितक्को उदपादि—"अप्पिच्छस्सायं धम्मो, नायं धम्मो महिच्छस्स; सन्तुट्ठस्सायं धम्मो, नायं धम्मो असन्तुट्ठस्स; पविवित्तस्सायं धम्मो, नायं धम्मो सङ्गणि- [R.229] कारामस्स; आरद्धविरियस्सायं धम्मो, नायं धम्मो कुसीतस्स; उपट्ठितस्सतिस्सायं धम्मो, नायं धम्मो मुट्ठस्सतिस्स; समाहितस्सायं धम्मो, नायं धम्मो असमाहितस्स; पञ्ञवतो अयं धम्मो, नायं धम्मो दुप्पञ्ञस्सा" ति।

---

उपदेशवचनों को मानेंगे या मानते हैं, वे अवसर को पहचान कर अद्वितीय धर्मसाधना में लग जायेंगे॥

"जिन साधकों ने तथागतोपदिष्ट मार्ग स्वीकार कर लिया है, जो इन्द्रिय-संयमी बनकर स्मृतिसम्प्रजन्यपूर्वक आदित्यबन्धु तथागत द्वारा प्रवेदित साधना में लग गये हैं॥

"जिनने उस उपदेश से अपनी इन्द्रियों तथा मन को तृष्णारहित सुरक्षित कर अपने सभी मार की ओर ले जाने वाले अनुशयों (चित्तप्रवृत्तियों) को नष्ट कर लिया है वे लोक में अपने आश्रवों का क्षय कर निर्वाण-पथ पर अग्रसर हो चुके हैं॥" ●

**१०. अनुरुद्धमहावितर्कसूत्र : : आठ महापुरुष वितर्क**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) भर्गप्रदेश के शिशुमारगिरि स्थित भेषकड़ावन के मृगदाव में साधनाहेतु विराजे हुए थे। उस समय आयुष्मान् अनुरुद्ध चेतिप्रदेश के प्राचीन वंशदाव में साधना कर रहे थे। उस समय आयुष्मान् अनुरुद्ध के मन में यह परिवितर्क (विचार) उत्पन्न हुआ—"यह (तथागत-प्रवेदित) धर्म अल्पेच्छ के लिये ही उपयोगी है, महेच्छ के लिये नहीं; सन्तुष्ट के लिये ही उपयोगी है, असन्तुष्ट के लिये नहीं; एकान्तसाधक के लिये ही उपयोगी है, जन-समूह में रुचि रखने वाले के लिये नहीं; उद्योगी के लिये ही सहायक हैं, आलसी के नहीं; स्मृतिमान् के लिये ही उपयोगी हैं, भ्रष्टस्मृति के लिये नहीं, समाहित के लिये ही उपयोगी है, असमाहित के लिये नहीं; प्रज्ञावान् के लिये ही उपयोगी है, दुष्प्रज्ञ के लिये नहीं।"

[B.63] २. अथ खो भगवा आयस्मतो अनुरुद्धस्स चेतसा चेतोपरिवितक्कमञ्ञाय— सेय्यथापि नाम बलवा पुरिसो सम्मिञ्जितं वा बाहं पसारेय्य, पसारितं वा बाहं सम्मिञ्जेय्य, एवमेव—भग्गेसु सुंसुमारगिरे भेसकळावने मिगदाये अन्तरहितो चेतीसु पाचीनवंसदाये आयस्मतो अनुरुद्धस्स सम्मुखे पातुरहोसि। निसीदि भगवा पञ्ञत्ते आसने। अयस्मा पि खो अनुरुद्धो भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो आयस्मन्तं अनुरुद्धं भगवा एतदवोच—

३. ''साधु, साधु, अनुरुद्ध! साधु खो त्वं, अनुरुद्ध, यं तं महापुरिसवितक्कं वितक्केसि—'अप्पिच्छस्सायं धम्मो, नायं धम्मो महिच्छस्स; सन्तुट्ठस्यायं धम्मो, नायं धम्मो असन्तुट्ठस्स; पविवित्तस्सायं धम्मो, नायं धम्मो सङ्गणिकारामस्स; आरद्धविरियस्सायं धम्मो, नायं धम्मो कुसीतस्स; उपट्ठितस्सतिस्सायं धम्मो, नायं धम्मो मुट्ठस्सतिस्स; समाहितस्सायं धम्मो, नायं धम्मो असमाहितस्स; पञ्ञवतो अयं धम्मो, नायं धम्मो दुप्पञ्ञस्सा' ति। तेन हि त्वं, अनुरुद्ध, इमं पि अट्ठमं महापुरिसवितक्कं वितक्केहि—'निप्पपञ्चारामस्यायं धम्मो निप्पपञ्चरतिनो, नायं धम्मो पपञ्चारामस्स पपञ्चरतिनो' ति।

४. ''यतो खो त्वं, अनुरुद्ध, इमे अट्ठ महापुरिसवितक्के वितक्केस्ससि, ततो त्वं, अनुरुद्ध, यावदेव आकङ्खिस्ससि, विविच्चेव कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेहि [R.230] सवितक्कं सविचारं विवेकजं पीतिसुखं पठमं झानं उपसम्पज्ज विहरिस्ससि।

५. ''यतो खो त्वं, अनुरुद्ध, इमे अट्ठ महापुरिसवितक्के वितक्केस्ससि, ततो त्वं, अनुरुद्ध, यावदेव आकङ्खिस्ससि, वितक्कविचारानं वूपसमा अज्झत्तं सम्पसादनं चेतसो [N.332] एकोदिभावं अवितक्कं अविचारं समाधिजं पीतिसुखं दुतियं झानं उपसम्पज्ज विहरिस्ससि।

---

२. तब भगवान् ने स्वचित्त से आयुष्मान् अनुरुद्ध के इस चित्तवितर्क को जानकर, जैसे कोई बलवान् पुरुष ...पूर्ववत्... आयुष्मान् अनुरुद्ध के सम्मुख प्रकट हुए। ... आयुष्मान् अनुरुद्ध से यह कहा—

३. ''साधु, अनुरुद्ध! साधु! तुमने इन पुरुष-वितर्कों के विषय में उचित ही चिन्तन किया है कि ...पूर्ववत्...। तुम इन सात वितर्कों के साथ यह अष्टम वितर्क भी सम्पृक्त कर लो—'निष्प्रपञ्च साधक के लिये ही यह धर्म उपयोगी है, प्रपञ्चवाले के लिये नहीं।'

४. ''अनुरुद्ध! जब तक तुम इन आठ महापुरुषवितर्कों पर चिन्तन-मनन करते रहोगे, तब तक तुम कामभोगों से तथा अकुशल (पापमय) वितर्कों से दूर रहते हुए सवितर्क, सविचार, प्रीतिसुखमय प्रथम ध्यान में लगे रहोगे।

५. ''अनुरुद्ध! जब तक ...पूर्ववत्... वितर्क-विचारों के शान्त होने पर आध्यात्मिक आनन्द, चित्त की एकाग्रता तथा अवितर्क-अविचारयुक्त समाधिजन्य प्रीतिसुखमय द्वितीय ध्यान में लगे रहोगे।

६. ''यतो खो त्वं, अनुरुद्ध, इमे अट्ठ महापुरिसवितक्के वितक्केस्ससि, ततो त्वं, अनुरुद्ध, यावदेव आकङ्खिस्ससि, पीतिया च विरागा उपेक्खको च विहरिस्ससि सतो च सम्पजानो सुखं च कायेन पटिसंवेदिस्ससि यं तं अरिया आचिक्खन्ति—'उपेक्खको [B.64] सतिमा सुखविहारी' ति ततियं झानं उपसम्पज्ज विहरिस्ससि।

७. ''यतो खो त्वं, अनुरुद्ध, इमे अट्ठ महापुरिससवितक्के वितक्केस्ससि, ततो त्वं, अनुरुद्ध, यावदेव आकङ्खिस्ससि, सुखस्स च पहाना दुक्खस्स च पहाना पुब्बेन सोमनस्स-दोमनस्सानं अत्थङ्गमा अदुक्खमसुखं उपेक्खासतिपारिसुद्धिं चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरिस्ससि।

८. ''यतो खो त्वं, अनुरुद्ध, इमे च अट्ठ महापुरिसवितक्के वितक्केस्ससि, इमेसं च चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी भविस्ससि अकिच्छ-लाभी अकसिरलाभी, ततो तुय्हं, अनुरुद्ध, सेय्यथापि नाम गहपतिस्स वा गहपतिपुत्तस्स वा नानारत्तानं दुस्सानं दुस्सकरण्डको पूरो; एवमेव ते पंसुकूलचीवरं खायिस्सति सन्तुट्ठस्स विहरतो रतिया अपरितस्साय फासुविहाराय ओक्कमनाय निब्बानस्स।

९. ''यतो खो त्वं, अनुरुद्ध, इमे च अट्ठ महापुरिसवितक्के वितक्केस्ससि, [R.231] इमेसं च चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी भविस्ससि अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, ततो तुय्हं, अनुरुद्ध, सेय्यथापि नाम गहपतिस्स वा गहपतिपुत्तस्स वा सालीनं ओदनो विचितकाळको अनेकसूपो अनेकव्यञ्जनो; एवमेव ते पिण्डियालोपभोजनं खायिस्सति सन्तुट्ठस्स विहरतो रतिया अपरितस्साय फासुविहाराय ओक्कमनाय निब्बानस्स।

---

६. ''अनुरुद्ध! जब तक ...पूर्ववत्... प्रीति से विरक्त होकर उपेक्षापूर्वक तथा स्मृति-सम्प्रजन्ययुक्त, तथा काया में सुखप्रति संवेदन करते रहोगे, जिसके विषय में आर्यजन कहा करते हैं—'यह उपेक्षक, स्मृतिमान् सुखसाधक है', इस प्रकार तृतीय ध्यान में लगे रहोगे।

७. ''अनुरुद्ध! जब तक ...पूर्ववत्... सुख दुःख के प्रहाण से, इससे पूर्व ही सौमनस्य एवं दौर्मनस्य के अस्त हो जाने से अदुःख असुखयुक्त उपेक्षास्मृतिपरिशुद्धिमय चतुर्थ ध्यान में लगे रहोगे।

८. ''अनुरुद्ध! जब तक इन आठ महापुरुषवितर्कों का चिन्तन-मनन करते रहोगे तथा इन चारों ध्यानों में सर्वांशतः लगे रहोगे; तब तक, अनुरुद्ध! तुम पांशुकूल चीवर के न होने पर भी उतने से ही सन्तुष्ट रहोगे जैसे कोई गृहपति अपने घर में मञ्जूषाओं में भरे हुए विविध वस्त्रों को देखकर सुखी एवं सन्तुष्ट रहता है वैसे ही सन्तुष्ट रहते हुए, प्रेमपूर्वक, विना किसी उत्तेजना के साधना में लगे रहकर निर्वाण की ओर बढ़ते रहोगे।

९. ''अनुरुद्ध! जब तक... तब तक तुम पिण्डपात न मिलने पर भी उसी तरह सन्तुष्ट रहते हुए जैसे किसी गृहपति के सम्मुख दाल-भात आदि विविध व्यञ्जनों से पूर्ण थाल रखा हो, प्रेमपूर्वक ...पूर्ववत्... निर्वाण की ओर बढ़ते रहोगे।

१०. ''यतो खो त्वं, अनुरुद्ध, इमे च अट्ठ महापुरिसवितक्के वितक्केस्ससि, इमेसं च चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी भविस्ससि अकिच्छ-लाभी अकसिरलाभी, ततो तुय्हं, अनुरुद्ध, सेय्यथापि नाम गहपतिस्स वा गहपतिपुत्तस्स वा [N.333] कूटागारं उल्लित्तावलित्तं निवातं फुसितग्गळं पिहितवातपानं; एवमेव ते रुक्खमूल-सेनासनं खायिस्सति सन्तुट्ठस्स विहरतो रतिया अपरितस्साय फासुविहाराय ओक्कमनाय निब्बानस्स।

११. ''यतो खो त्वं, अनुरुद्ध, इमे च अट्ठ महापुरिसवितक्के वितक्केस्ससि, इमेसं च चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी भविस्ससि अकिच्छ-लाभी अकसिरलाभी, ततो तुय्हं, अनुरुद्ध, सेय्यथापि नाम, गहपतिस्स वा गहपतिपुत्तस्स वा [B.65] पल्लङ्को गोनकत्थतो पटिकत्थतो पटलिकत्थतो कदलिमिगपवरपच्चत्थरणो सउत्तरच्छदो उभतोलोहितकूपधानो; एवमेव ते तिणसन्थारकसयनासनं खायिस्सति सन्तुट्ठस्स विहरतो रतिया अपरितस्साय फासुविहाराय ओक्कमनाय निब्बानस्स।

[R.232] १२. ''यतो खो त्वं, अनुरुद्ध, इमे च अट्ठ महापुरिसवितक्के वितक्केस्ससि, इमेसं च चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी भविस्ससि अकिच्छ-लाभी अकसिरलाभी, ततो तुय्हं, अनुरुद्ध, सेय्यथापि नाम गहपतिस्स वा गहपतिपुत्तस्स वा नानाभेसज्जानि, सेय्यथीदं—सप्पि नवनीतं तेलं मधु फाणितं; एवमेव ते पूतिमुत्तभेसज्जं खायिस्सति सन्तुट्ठस्स विहरतो रतिया अपरितस्साय फासुविहाराय ओक्कमनाय निब्बानस्स। तेन हि त्वं, अनुरुद्ध, आयतिकं पि वस्सावासं इधेव चेतीसु पाचीनवंसदाये विहरेय्यासी'' ति।

''एवं, भन्ते'' ति खो आयस्मा अनुरुद्धो भगवतो पच्चस्सोसि।

---

१०. ''अनुरुद्ध! जब तक... तब तक तुम किसी वृक्ष के नीचे लेटे हुए भी उतने ही सन्तुष्ट रहोगे जैसे कोई धनाढ्य गृहपति अपने सर्वसुविधासम्पन्न सतमञ्जले प्रासाद में बैठा हुआ सन्तुष्ट रहता है, और तुम प्रेमपूर्वक... निर्वाण मार्ग पर आगे बढ़ते रहोगे।

११. ''अनुरुद्ध! जब तक... तब तक तुम घास पर लेटकर भी उसी आनन्द का अनुभव करोगे जो एक विशिष्ट धनपति महार्घ गद्दे और रजाई का उपयोग करते हुए अनुभव करता है, और तुम प्रेमपूर्वक निर्वाण मार्ग पर आगे बढ़ते रहोगे।

१२. ''अनुरुद्ध! जब तक... तब तक तुम रोग में पथ्य के रूप में पूतिमूत्र भैषज्य का उपयोग करके उतने ही आनन्दित रहोगे जितना कोई प्रसिद्ध धनपति घी, दूध, तैल आदि का उपयोग कर अपने को सुखी अनुभव करता है, और तुम प्रेमपूर्वक निर्वाणमार्ग पर आगे बढ़ते रहोगे। अत:, अनुरुद्ध! तुम आगामी वर्षावास में भी इस चेदिप्रदेश के प्राचीन वंशदाव में ही साधना करते रहना।''

''अच्छा, भन्ते!'' कहकर आयुष्मान् अनुरुद्ध ने भगवान् की आज्ञा मान ली।

१३. अथ खो भगवा आयस्मन्तं अनुरुद्धं इमिना ओवादेन ओवदित्वा—सेय्यथापि नाम बलवा पुरिसो सम्मिञ्जितं वा बाहं पसारेय्य, पसारितं वा बाहं सम्मिञ्जेय्य, एवमेव—चेतीसु पाचीनवंसदाये अन्तरहितो भग्गेसु सुंसुमारगिरे भेसकळावने मिगदाये पातुरहोसी ति। निसीदि भगवा पञ्ञत्ते आसने। निसज्ज खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—''अट्ठ खो, भिक्खवे, महापुरिसवितक्का देसेस्सामि, तं सुणाथ ...पे०... कतमे च, भिक्खवे, अट्ठ महापुरिसवितक्का? अप्पिच्छस्सायं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो महिच्छस्स; सन्तुट्ठस्सायं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो असन्तुट्ठस्स; पविवित्तस्सायं, भिक्खवे, धम्मो, नायं [N.334] धम्मो सङ्गणिकारामस्स; आरद्धविरियस्सायं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो कुसीतस्स; उपट्ठितस्सतिस्सायं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो मुट्ठस्सतिस्स; समाहितस्सायं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो असमाहितस्स; पञ्ञवतो अयं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो [R.233] दुप्पञ्ञस्स; निप्पपञ्चारामस्सायं, भिक्खवे, धम्मो निप्पपञ्चरतिनो, नायं धम्मो पपञ्चारामस्स पपञ्चरतिनो।

१४. '''अप्पिच्छस्सायं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो महिच्छस्सा' ति, इति [B.66] खो पनेतं वुत्तं, किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? इध, भिक्खवे, भिक्खु अप्पिच्छो समानो 'अप्पिच्छो ति मं जानेय्युं' ति न इच्छति, सन्तुट्ठो समानो 'सन्तुट्ठो ति मं जानेय्युं' ति न इच्छति, पविवित्तो समानो 'पविवित्तो ति मं जानेय्युं' ति न इच्छति, आरद्धविरियो समानो 'आरद्धविरियो ति मं जानेय्युं' ति न इच्छति, उपट्ठितस्सति समानो 'उपट्ठितस्सती ति मं जानेय्युं' ति न इच्छति,

---

१३. तब भगवान् आयुष्मान् अनुरुद्ध को उपर्युक्त उपदेश देकर, जैसे कोई बलवान् पुरुष ...पूर्ववत्...चेदि के प्राचीन वंशदाव में अन्तर्हित होकर... भेषकड़ावन में प्रकट हुए। वहाँ भगवान् ने प्रज्ञप्त आसन पर विराजमान होकर भिक्षुओं को अपने सम्मुख बुलाया तथा यह देशना की—

''भिक्षुओ! मैं तुम्हें आठ महापुरुषवितर्कों के विषय में बताऊँगा, उसे सुनो और मन में बैठा लो। भिक्षुओ! ये आठ महापुरुषवितर्क कौन से हैं? (१) यह धर्म, भिक्षुओ! अल्पेच्छ (सन्तोषी) के लिये है, महेच्छ (लोभी) के लिये नहीं; (२) यह धर्म सन्तुष्टों के लिये है, असन्तुष्टों के लिये नहीं; (३) एकान्तवासी के लिये है, समूह में रहना चाहने वाले के लिये नहीं; (४) यह धर्म उद्योगी प्रकृति के साधकों के लिये हैं, आलसियों के लिये नहीं; (५) स्मृतिमान् के लिये है, भ्रष्टस्मृति के लिये नहीं; (६) समाहित के लिये है, असमाहित के लिये नहीं; (७) प्रज्ञावान् के लिये हैं, दुष्प्रज्ञ के लिये नहीं; (८) निष्प्रपञ्च साधक के लिये हैं, प्रपञ्च के प्रेमी या उसमें सुख मानने वाले के लिये नहीं।

१४. ''भिक्षुओ! 'यह धर्म अल्पेच्छ के लिये है, महेच्छ के लिये नहीं'—यह जो कहा, यह किसलिये कहा? यहाँ, भिक्षुओ! कोई साधक अल्पेच्छ रहता हुआ भी यह नहीं चाहता कि कोई उसको 'अल्पेच्छ' के रूप में जाने; सन्तुष्ट रहता हुआ भी यह नहीं चाहता कि कोई उसको 'सन्तुष्ट' रूप में जाने; धर्म के लिये उद्योग करता हुआ भी यह नहीं चाहता कि कोई उसको 'उद्योगी' के रूप में जाने; स्मृतिमान् रहता हुआ भी वह यह नहीं चाहता कि कोई उसको 'स्मृतिमान्' के रूप में

समाहितो समानो 'समाहितो ति मं जानेय्युं' ति न इच्छति, पञ्ञवा समानो 'पञ्ञवा ति मं जानेय्युं' ति न इच्छति, निप्पपञ्चारामो समानो 'निप्पपञ्चारामो ति मं जानेय्युं' ति न इच्छति। 'अपिच्छस्सायं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो महिच्छस्सा' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

१५. '''सन्तुट्ठस्सायं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो असन्तुट्ठस्सा' ति, इति खो पनेतं वुत्तं, किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? इध, भिक्खवे, भिक्खु सन्तुट्ठो होति इतरीतरचीवरपिण्ड-पातसेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारेन। 'सन्तुट्ठस्सायं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो असन्तुट्ठस्सा' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

१६. '''पविवित्तस्सायं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो सङ्गणिकारामस्स' ति, इति खो पनेतं वुत्तं, किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? इध, भिक्खवे, भिक्खुनो पविवित्तस्स विहरतो भवन्ति उपसङ्कमितारो भिक्खू भिक्खुनियो उपासका उपासिकायो राजानो राजमहामत्ता तित्थिया तित्थियसावका। तत्र भिक्खु विवेकनिन्नेन चित्तेन विवेकपोणेन विवेकपब्भारेन विवेकट्ठेन [R.234] नेक्खम्माभिरतेन अञ्ञदत्थु उय्योजनिकपटिसंयुत्तंयेव कथं कत्ता होति। 'पविवित्तस्सायं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो सङ्गणिकारामस्सा' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

[N.335] १७. '''आरद्धविरियस्सायं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो कुसीतस्सा' ति, इति खो पनेतं वुत्तं, किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? इध, भिक्खवे, भिक्खु आरद्धविरियो विहरति अकुसलानं

---

जाने; समाहित होता हुआ भी यह नहीं चाहता कि कोई उसको 'समाहित' रूप में जानें; प्रज्ञावान् होता हुआ यह नहीं चाहता कि उसको कोई 'प्रज्ञावान्' रूप में जानें; वह निष्प्रपञ्च रूप में साधना करता हुआ भी यह नहीं चाहता कि कोई उसको 'निष्प्रपञ्च' रूप में जाने। भिक्षुओ! मैंने जो यह कहा है—'अल्पेच्छ के लिये यह धर्म है, महेच्छ के लिये नहीं', यह वाक्य उपर्युक्त अभिप्राय से ही कहा है।

१५. "भिक्षुओ! 'सन्तुष्ट के लिये ही यह धर्म है, असन्तुष्ट के लिये नहीं'—यह जो कहा, वह किस अभिप्राय से कहा? यहाँ भिक्षुओ! कोई साधक जैसे तैसे मिले चीवर, पिण्डपात, शयनासन तथा पथ्य के लिये प्राप्त औषध से सन्तुष्ट रहता है—इसी अभिप्राय से... यह वाक्य कहा गया है।

१६. "भिक्षुओ! 'एकान्तसेवी के लिये ही यह धर्म है, समूह में रुचि रखने वाले के लिये नहीं'—यह जो कहा, किस अभिप्राय से कहा? भिक्षुओ! इस एकान्तसाधक भिक्षु के पास धर्म की जिज्ञासा से अनेक भिक्षु, भिक्षुणी, उपासक, उपासिका, राजा, राजमहामात्य अन्य सम्प्रदाय के श्रमण या उनके शिष्य आते हैं। वह उनको विवेक की ओर झुकने वाला, विवेक की ओर बढ़ने वाला मार्ग बताता है, विवेक के अभ्यास का उपाय बताता है, इसी अभिप्राय से उक्त वाक्य कहा।

१७. "भिक्षुओ! 'यह धर्म उद्योगी प्रकृति के साधकों के लिये ही है, आलसियों के लिये नहीं'—यह जो कहा था, यह किसलिये कहा था? क्योंकि, भिक्षुओ! उद्योगी प्रकृति का पुरुष

धम्मानं पहानाय कुसलानं धम्मानं उपसम्पदाय थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो [B.67] कुसलेसु धम्मेसु। 'आरद्धविरियस्सायं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो कुसीतस्सा' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

१८. "'उपट्ठितस्सतिस्सायं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो मुट्ठस्सतिस्सा' ति, इति खो पनेतं वुत्तं, किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? इध, भिक्खवे, भिक्खु सतिमा होति परमेन सतिनेपक्केन समन्नागतो, चिरकतं पि चिरभासितं पि सरिता अनुस्सरिता। 'उपट्ठितस्सतिस्सायं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो, मुट्ठस्सतिस्सा' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

१९. "'समाहितस्सायं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो असमाहितस्सा' ति, इति खो पनेतं वुत्तं, किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? इध, भिक्खवे, भिक्खु विविच्चेव कामेहि ...पे०... चतुत्थं झानं उपसम्पज्ज विहरति। 'समाहितस्सायं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो असमाहितस्सा' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

२०. "'पञ्ञवतो अयं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो दुप्पञ्ञस्सा' ति, इति खो पनेतं वुत्तं, किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? इध, भिक्खवे, भिक्खु पञ्ञवा होति उदयत्थगामिनिया पञ्ञाय समन्नागतो अरियाय निब्बेधिकाय सम्मा दुक्खक्खयगामिनिया। 'पञ्ञवतो अयं, भिक्खवे, धम्मो, नायं धम्मो दुप्पञ्ञस्सा' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं।

२१. "'निप्पपञ्चारामस्सायं, भिक्खवे, धम्मो निप्पपञ्चरतिनो, नायं धम्मो [R.235] पपञ्चारामस्स पपञ्चरतिनो' ति, इति खो पनेतं वुत्तं, किञ्चेतं पटिच्च वुत्तं? इध, भिक्खवे,

---

अकुशल धर्मों के नाश तथा कुशल धर्मों के उत्पादहेतु शक्ति लगाता है, पराक्रम करता है, इसीलिये कहा था कि उद्योगी प्रकृति के ...पूर्ववत्...।

१८. "भिक्षुओ! 'स्मृतिमान् साधक के लिये यह धर्म है, भ्रष्टस्मृति के लिये नहीं'—यह जो कहा, वह किस अभिप्राय से कहा? यह भिक्षु स्मृतिमान् होता है, उत्तम स्मृतिकौशल से युक्त होता है, अत: चिरकाल पहले किये गये कार्यों को तथा कहे गये वचन को स्मरण रखता है—इसी बात को ध्यान में रखकर कहा गया है कि स्मृतिमान् ...पूर्ववत्...।

१९. "भिक्षुओ! 'समाहित साधक के लिये ही यह धर्म है, असमाहित के लिये नहीं'—यह जो कहा, यह किस अभिप्राय से कहा? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु कामभोगों से दूर रहकर ...पूर्ववत्... चतुर्थ ध्यान तक पहुँचकर साधना करता है—इसी अभिप्राय से यह पूर्वोक्त वाक्य कहा गया है।

२०. "भिक्षुओ! 'प्रज्ञावान् के लिये ही यह धर्म है, दुष्प्रज्ञ के लिये नहीं'—यह जो कहा था, किस अभिप्राय से कहा था? भिक्षुओ! यह प्रज्ञावान् भिक्षु धर्मों के उत्पाद एवं विनाश को जानने वाली, आर्य एवं अन्त:प्रवेशी प्रज्ञा से युक्त रहता है जो कि इसको दु:खक्षय तक पहुँचाने वाली है— इसी अभिप्राय से उपर्युक्त वाक्य कहा गया है।

२१. "भिक्षुओ! 'प्रपञ्चरहित साधक के लिये ही यह धर्म है, जगत्प्रपञ्च में आबद्ध के लिये यह धर्म नहीं'—यह जो कहा था, यह किस अभिप्राय से कहा था? यहाँ, भिक्षुओ! भिक्षु द्वारा

भिक्खुनो पपञ्चनिरोधे चित्तं पक्खन्दति पसीदति सन्तिट्ठति विमुच्चति। 'निप्पपञ्चारामस्सायं, भिक्खवे, धम्मो, निप्पपञ्चरतिनो, नायं धम्मो पपञ्चारामस्स पपञ्चरतिनो' ति, इति यं तं वुत्तं इदमेतं पटिच्च वुत्तं'' ति।

[N.336] २२. अथ खो आयस्मा अनुरुद्धो आयतिकं पि वस्सावासं तत्थेव चेतीसु पाचीनवंसदाये विहासि। अथ खो आयस्मा अनुरुद्धो एको वूपकट्ठो अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरन्तो नचिरस्सेव—यस्सत्थाय कुलपुत्ता सम्मदेव अगारस्मा अनगारियं पब्बजन्ति, तदनुत्तरं—ब्रह्मचरियपरियोसानं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहासि। ''खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया'' [B.68] ति अब्भञ्ञासि। अञ्ञतरो च पनायस्मा अनुरुद्धो अरहतं अहोसी ति।

२३. अथ खो आयस्मा अनुरुद्धो अरहत्तप्पत्तो तायं वेलायं इमा गाथायो अभासि—

''मम सङ्कप्पमञ्ञाय, सत्था लोके अनुत्तरो।<br>
मनोमयेन कायेन, इद्धिया उपसङ्कमि॥<br>
''यथा मे अहु सङ्कप्पो, ततो उत्तरि देसयि।<br>
निप्पपञ्चरतो बुद्धो, निप्पपञ्चं अदेसयि॥<br>
''तस्साहं धम्ममञ्ञाय, विहासिं सासने रतो।<br>
तिस्सो विज्जा अनुप्पत्ता, कतं बुद्धस्स सासनं'' ति॥

**गहपतिवग्गो ततियो॥**

---

जगत्प्रपञ्च (अविद्या) का निराकरण कर दिये जाने पर उसका चित्त उदार हो जाता है, धर्म में स्थायी रूप से श्रद्धालु हो जाता है, मुक्त हो जाता है। अत: इसी अभिप्राय को लेकर उक्त वाक्य कहा गया है।''

२२. तदनन्तर, आयुष्मान् अनुरुद्ध ने आगामी वर्षावास भी उसी चेदिदेश के वंशदाव में ही सम्पन्न किया। तब आयुष्मान् अनुरुद्ध एकाकी, सबसे पृथक् रहता हुआ (व्यपकृष्ट), अप्रमत्त, उद्योगरत, प्रहितात्मा होकर विहार करता हुआ शीघ्र ही—जिसके लिये कुलपुत्र पूर्णत: घर से अभिनिष्क्रमण कर प्रव्रज्या लिया करते हैं, उसी अनुपम धर्मसाधना के अन्त तक पहुँचकर इसी जीवन में स्वयं जानकर साक्षात् कर, प्राप्त कर साधना करता रहा। अन्त में वह जान गया—'मेरी जन्म-परम्परा क्षीण हो चुकी है, धर्मसाधना पूर्ण हो चुकी है, मैं अपने सभी कर्तव्य कार्य पूर्ण कर चुका, अब मेरा कोई कर्तव्य शेष नहीं है'। इस प्रकार एक दिन इस आयुष्मान् अनुरुद्ध की गणना श्रेष्ठ अर्हतों में होने लगी।

२३. उस समय, आयुष्मान् अनुरुद्ध ने अर्हत्त्व प्राप्त करने के बाद ये गाथाएँ कहीं—

''लोक में अद्वितीय शास्ता मेरे मन का सङ्कल्प (चिन्तन) जानकर स्वकीय मनोमय शरीर (निर्माणकाय) से ऋद्धि द्वारा मेरे सम्मुख प्रकट हुए॥

''तब उनने, जैसा मेरा चिन्तन था, उससे आगे का भी धर्मोपदेश किया। क्योंकि वे स्वयं निष्प्रपञ्च हैं अत: उनने मुझको भी निष्प्रपञ्च रहने का ही उपदेश किया।

तस्सुद्दानं

द्वे उग्गा द्वे च हत्थका, महानामेन जीवको।
द्वे बला अक्खणा वुत्ता, अनुरुद्धेन ते दसा ति॥ ●

## ४. दानवग्गो

**१. पठमदानसुत्तं** : १. "अट्ठिमानि, भिक्खवे, दानानि। कतमानि अट्ठ? [R.236] आसज्ज दानं देति, भया दानं देति, 'अदासि मे' ति दानं देति, 'दस्सति मे' ति दानं देति, 'साहु दानं' ति दानं देति, 'अहं पचामि, इमे न पचन्ति; नारहामि पचन्तो अपचन्तानं दानं अदातुं' ति दानं देति, 'इमं मे दानं ददत्तो कल्याणो कित्तिसद्दो अब्भुग्गच्छती' ति [N.337] दानं देति, चित्तालङ्कारचित्तपरिक्खारत्थं दानं देति। इमानि खो, भिक्खवे, अट्ठ दानानी" ति॥

**२. दुतियदानसुत्तं** :

१. "सद्धा हिरियं कुसलं च दानं, धम्मा एते सप्पुरिसानुयाता।
एतं हि मग्गं दिवियं वदन्ति, एतेन हि गच्छति देवलोकं" ति॥ ●

---

"उनके द्वारा उपदिष्ट धर्म को जानकर, उनके अनुशासन में रहकर मैंने धर्मसाधना आरम्भ की। उसके फलस्वरूप मैंने तीनों विद्याओं का अधिग्रहण कर लिया। इस प्रकार मैंने बुद्ध द्वारा उपदिष्ट धर्म की साधना पूर्ण की॥" **गृहपतिवर्ग तृतीय सम्पन्न॥** ●

**इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची**

१. प्रथम उग्रसूत्र, २. द्वितीय उग्रसूत्र, ३. प्रथम हस्तकसूत्र, ४. द्वितीय हस्तकसूत्र, ५. महानामसूत्र, ६. जीवकसूत्र, ७. प्रथम बलसूत्र, ८. द्वितीय बलसूत्र, ९. अक्षणसूत्र एवं १०. अनुरुद्धमहावितर्कसूत्र॥ ●

## ४. दानवर्ग

**१. प्रथम दानसूत्र** : : **अष्टविध दान**

१. "भिक्षुओ! दान अष्टविध होते हैं। कौन से आठ? (१) आसक्तिपूर्वक दान किया जाता है, (२) भयपूर्वक दान किया जाता है, (३) 'इसने मुझको दान किया था' या (४) 'यह भी कभी मुझे दान करेगा'—इस अपेक्षा से... (५) दान करना अच्छा होता है—इस दृष्टि से दान करता है, (६) 'मेरे घर में भोजन बना है, इनके घर में नहीं; अब यह उचित नहीं होगा कि जिनके घर में भोजन न बना हो वे भोजन ही न कर सकें'—यह सोचकर दान करता है, (७) 'मेरे द्वारा ऐसा दान करने से मेरा यश फैलेगा'—यह सोचकर दान करता है, (८) अपने मन को सन्तोष एवं प्रसन्नता प्रदान करने हेतु दान करता है। इस प्रकार, भिक्षुओ! ये आठ प्रकार के दान होते हैं"॥ ●

[B.69] **३. दानवत्थुसुत्तं :** १. "अट्ठिमानि, भिक्खवे, दानवत्थूनि। कतमानि अट्ठ? छन्दा दानं देति, दोसा दानं देति, मोहा दानं देति, भया दानं देति, 'दिन्नपुब्बं कतपुब्बं पितुपितामहेहि, नारहामि पोराणं कुलवंसं हापेतुं' ति दानं देति, 'इमाहं दानं दत्वा कायस्स भेदा परं मरणा सुगतिं सग्गं लोकं उपपज्जिस्सामी' ति दानं देति, 'इमं मे दानं ददतो चित्तं [R.237] पसीदति, अत्तमनता सोमनस्सं उपजायती' ति दानं देति, चित्तालङ्कारचित्त-परिक्खारत्थं दानं देति। इमानि खो, भिक्खवे, अट्ठ दानवत्थूनी" ति॥ ●

**४. खेत्तसुत्तं :** १. "अट्ठङ्गसमन्नागते, भिक्खवे, खेत्ते बीजं वुत्तं न महप्फलं होति न महस्सादं न फातिसेय्यं। कथं अट्ठङ्गसमन्नागते? इध, भिक्खवे, खेत्तं उन्नामनिन्नामि च होति, पासाणसक्खरिकं च होति, ऊसरं च होति, न च गम्भीरसितं होति, न आयसम्पन्नं होति, न अपायसम्पन्नं होति, न मातिकासम्पन्नं होति, न मरियादसम्पन्नं होति। एवं अट्ठङ्गसमन्नागते, भिक्खवे, खेत्ते बीजं वुत्तं न महप्फलं होति न महस्सादं न फातिसेय्यं।

२. "एवमेव खो, भिक्खवे, अट्ठङ्गसमन्नागतेसु समणब्राह्मणेसु दानं दिन्नं न महप्फलं

---

**२. द्वितीय दानसूत्र : : दान की विधि**

१. "श्रद्धापूर्वक, लज्जापूर्वक एवं कुशलतापूर्वक ही दान करना चाहिये। इस प्रकार किये दानधर्म सत्सङ्गति की ओर बढ़ाते हैं। इस दानमार्ग को (विद्वान् लोग) स्वर्ग की ओर ले जाने वाला बताते हैं। इनके करनेवाले का, देहपात के बाद, निश्चय ही स्वर्गलोक में गमन होता है॥" ●

**३. दानवस्तुसूत्र : : अष्टविध दान**

१. "भिक्षुओ! ये आठ दानवस्तुएँ (दान-कारण) होती हैं। कौन सी आठ? (१) कोई स्वेच्छा से दान करता है, (२) कोई द्वेष से दान करता है, (३) कोई मोह से दान करता है, (४) कोई भय से दान करता है, (५) कोई इसलिये दान करता है कि उसके पिता और पितामह आदि भी ऐसा करते आये हैं, इसलिये इस परम्परा को तोड़ना ठीक नहीं; (६) कोई इसलिये दान करता है कि इसके करने से मेरा मरणानन्तर सुगतिमय स्वर्गलोक में जन्म होगा, (७) कोई इसलिये दान करता कि उसके करने से उसका चित्त प्रसन्न होता है, उसको सन्तोष होता है, तथा उसमें सौमनस्य (सुख) अनुभव होता है, (८) तथा कोई अपने चित्त की शुद्धि एवं परिष्कार के लिये दान करता है। भिक्षुओ! ये आठ दान के कारण होते हैं॥" ●

**४. क्षेत्रसूत्र : : खेत की उपमा से अष्टविध दान का वर्णन**

१. "भिक्षुओ! इन आठ अङ्गों से युक्त किसी खेत में बोया हुआ बीज, अधिक फलदायी या स्वादयुक्त एवं स्वास्थ्यप्रद नहीं होता। किन आठ अङ्गों से युक्त खेत में? यहाँ भिक्षुओ! किसी खेत की भूमि ऊँची नीची हो, उसमें कंकर पत्थर अधिक हों, जो खेत ऊसर (क्षारयुक्त) हो, गहरी सिंचाई न हो, जिसमें गहरी सीता (हलाई) न हुई हो, जिसमें न जल आने का मार्ग हो, न जल निकलने का, न उसमें जल जाने के लिये नालियाँ बनी हों, न उसके मेंड़ ही भली भाँति लगायी गयी हो। भिक्षुओ! ऐसे आठ अङ्गों से युक्त खेत...

२. "इसी प्रकार, भिक्षुओ! इन आठ अङ्गों से युक्त श्रमण ब्राह्मणों को किया हुआ दान

होति न महानिसंसं न महाजुतिकं न महाविप्फारं। कथं अट्ठङ्गसमन्नागतेसु? इध, [N.338] भिक्खवे, समणब्राह्मणा मिच्छादिट्ठिका होन्ति, मिच्छासङ्कप्पा, मिच्छावाचा, मिच्छाकम्मन्ता, मिच्छाआजीवा, मिच्छावायामा, मिच्छासतिनो, मिच्छासमाधिनो। एवं अट्ठङ्गसमन्नागतेसु, भिक्खवे, समणब्राह्मणेसु दानं दिन्नं न महप्फलं होति न महानिसंसं न महाजुतिकं न महाविप्फारं।

३. ''अट्ठङ्गसमन्नागते, भिक्खवे, खेत्ते बीजं वुत्तं महप्फलं होति महस्सादं फातिसेय्यं। कथं अट्ठङ्गसमन्नागते? इध, भिक्खवे, खेत्तं अनुन्नामानिन्नामि च होति, अपासाणसक्खरिकं च होति, अनूसरं च होति, गम्भीरसितं होति, आयसम्पन्नं [R.238] होति, अपायसम्पन्नं होति, मातिकासम्पन्नं होति, मरियादसम्पन्नं होति। एवं [B.70] अट्ठङ्गसमन्नागते, भिक्खवे, खेत्ते बीजं वुत्तं महप्फलं होति महस्सादं फातिसेय्यं।

४. ''एवमेव खो, भिक्खवे, अट्ठङ्गसमन्नागतेसु समणब्राह्मणेसु दानं दिन्नं महप्फलं होति महानिसंसं महाजुतिकं महाविप्फारं। कथं अट्ठङ्गसमन्नागतेसु? इध, भिक्खवे, समणब्राह्मणा सम्मादिट्ठिका होन्ति...सम्मासतिनो, सम्मासमाधिनो। एवं अट्ठङ्गसमन्नागतेसु, भिक्खवे, समणब्राह्मणेसु दानं दिन्नं महप्फलं होति महानिसंसं महाजुतिकं महाविप्फारं ति।

''यथा पि खेत्ते सम्पन्ने, पवुत्ता बीजसम्पदा।
देवे सम्पादयन्तम्हि, होति धञ्ञस्स सम्पदा॥
''अनीतिसम्पदा होति, विरूळ्ही भवति सम्पदा।

---

अधिक फलदायी, प्रशंसात्मक, आलोक एवं कीर्ति फैलाने वाला नहीं होता। कौन से आठ अङ्गों से युक्त? यहाँ, भिक्षुओ! जो श्रमणब्राह्मण मिथ्यादृष्टि, मिथ्यासङ्कल्प, मिथ्यावाणी, मिथ्याकर्म, मिथ्या आजीविका, मिथ्याव्यायाम, मिथ्यास्मृति एवं मिथ्यासमाधिवाले हों। भिक्षुओ! इन आठ अङ्गों से युक्त श्रमण-ब्राह्मणों को किया हुआ दान अधिक फलदायी ...पूर्ववत्... नहीं होता। (क)

३. (परन्तु) भिक्षुओ! इन आठ अङ्गों से युक्त किसी खेत में बोया हुआ बीज अधिक फलदायी स्वादयुक्त एवं स्वास्थ्यप्रद होता है। कैसे आठ अङ्गों से युक्त? जिस खेत की भूमि ऊँची नीची न होकर समतल होती है, उसमें कंकर पत्थर न हों, जो ऊसर न हों, जिसमें गहरी हलाई हुई हो, जिसमें जल आने और जल निकलने का भी मार्ग हो, जिसमें नालियाँ बनी हो, तथा जिसके चारों ओर मेंड़ भी बनी हो—ऐसे आठ अङ्गों से युक्त ...पूर्ववत्... स्वास्थ्यवर्धक होता है।

४. इसी प्रकार, भिक्षुओ! इन आठ अङ्गों से युक्त श्रमण-ब्राह्मणों को किया हुआ दान अधिक फलदायी, अधिक माहात्म्यवाला एवं अधिक आलोक तथा यश देने वाला होता है। किन आठ अङ्गों से युक्त? जो श्रमण-ब्राह्मण सम्यग्दृष्टि, सम्यक्सङ्कल्प, सम्यक्कर्म, सम्यक् आजीविका, सम्यग्व्यायाम, सम्यक्स्मृति एवं सम्यक्समाधि वाले हैं—ऐसे अष्टाङ्गसमन्वित श्रमण-ब्राह्मणों को दान करना अतिशय फलदायी ...पूर्ववत्... देने वाला होता है। (ख)

''जैसे अच्छे खेत में बोयी हई **बीजसम्पदा** से, उचित वर्षा होने पर प्रभूत **धान्यसम्पदा** होती है॥

वेपुल्लसम्पदा होति, फलं वे होति सम्पदा॥
"एवं सम्पन्नसीलेसु, दिन्ना भोजनसम्पदा।
सम्पदानं उपनेति, सम्पन्नं हिस्स तं कतं॥
"तस्मा सम्पदमाकङ्खी, सम्पन्नत्थूधपुग्गलो।
सम्पन्नपञ्ञे सेवेथ, एवं इज्झन्ति सम्पदा॥
"विज्जाचरणसम्पन्ने, लद्धा चित्तस्स सम्पदं।
करोति कम्मसम्पदं, लभति चत्थसम्पदं॥
[N.339] "लोकं ञत्वा यथाभूतं, पप्पुय्य दिट्ठिसम्पदं।
मग्गसम्पदमागम्म, याति सम्पन्नमानसो॥
[R.239] "ओधुनित्वा मलं सब्बं, पत्वा निब्बानसम्पदं।
मुच्चति सब्बदुक्खेहि, सा होति सब्बसम्पदा" ति॥

**५. दानूपपत्तिसुत्तं :** १. "अट्ठिमा, भिक्खवे, दानूपपत्तियो। कतमा अट्ठ? इध, भिक्खवे, एकच्चो दानं देति समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा अन्नं पानं वत्थं यानं मालागन्ध-
[B.71] विलेपनं सेय्यावसथपदीपेय्यं। सो यं देति तं पच्चासीसति। सो पस्सति खत्तिय-
महासाले वा ब्राह्मणमहासाले वा गहपतिमहासाले वा पञ्चहि कामगुणेहि समप्पिते

---

"वहाँ विना किसी **ईतिसम्पदा** (ईति=हानि) के वह धान की खेती लहलहा उठती है। उससे किसान को दो सम्पदाएँ प्राप्त होती है—१. **वैपुल्यसम्पदा** (धान की अधिकता), एवं २. **फलसम्पदा** (धन की विशाल राशि)॥

"इसी शीलसम्पन्न पुद्गलों को दी गयी **भोजनसम्पदा** से उसके दान के फल में वृद्धि होती है जो उसका किया हुआ होता है॥

"अत: विपुल सम्पत्ति के इच्छुक गृहस्थ को चाहिये कि सम्पत्ति (धन) का अर्जन करने के बाद **प्रज्ञासम्पदायुक्त** पुद्गलों की सेवा करे, जिससे उसकी सम्पत्ति में वृद्धि हो॥

"विद्याचरणसम्पन्न पुद्गलों की सेवा से **चित्तसम्पदा** (शुद्ध चित्त) को प्राप्त कर अपनी **कर्मसम्पदा** को बढ़ाता रहे जिससे उसकी **अर्थसम्पदा** में वृद्धि हो॥

"**दृष्टिसम्पदा** (सम्यग्दृष्टि) के सहारे इस संसार की यथार्थता जानकर **मार्गसम्पदा** प्राप्त कर (मार्गारूढ़ होकर) वह समाहितचित्त होकर एक दिन निर्वाण को अधिगत कर लेता है॥

अपने समस्त चित्तमल को धोकर, **निर्वाणसम्पदा** को प्राप्त कर जब साधक सभी दु:खों से मुक्त हो जाता है तब वह **सर्वसम्पदा** वाला कहलाता है॥

**५. दानोपपत्तिसूत्र : : दान के कारण अष्टविध जन्म**

१. "भिक्षुओ! दान के फलस्वरूप होनेवाले जन्म आठ प्रकार के होते हैं। कौन से आठ?

"यहाँ, भिक्षुओ! कोई पुरुष श्रमण या ब्राह्मण को अन्न, पान, वस्त्र, यान, माला, गन्ध-विलेपन, शय्या, चादर बिछौने या प्रकाशसहित घर का दान करता है। वह इस दान के फल की आशा करता है। जब वह बड़े बड़े क्षत्रियधनपतियों को ब्राह्मणधनपतियों को या गृहपतिधनपतियों

समङ्गीभूते परिचारयमाने। तस्स एवं होति—'अहो वताहं कायस्स भेदा परं मरणा खत्तिय-महासालानं वा ब्राह्मणमहासालानं वा गहपतिमहासालानं वा सहब्यतं उपपज्जेय्यं' ति! सो तं चित्तं दहति, तं चित्तं अधिट्ठाति, तं चित्तं भावेति। तस्स तं चित्तं हीने विमुत्तं, उत्तरि अभावितं, तत्रूपपत्तिया संवत्तति। कायस्स भेदा परं मरणा खत्तियमहासालानं वा ब्राह्मणमहासालानं वा गहपतिमहासालानं वा सहब्यतं उपपज्जति। तं च खो सीलवतो वदामि, नो दुस्सीलस्स। इज्झति, भिक्खवे, सीलवतो चेतोपणिधि विसुद्धत्ता।

२. "इध पन, भिक्खवे, एकच्चो दानं देति समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा अन्नं पानं वत्थं यानं मालागन्धविलेपनं सेय्यावसथपदीपेय्यं। सो यं देति तं पच्चासीसति। तस्स सुतं होति—'चातुमहाराजिका देवा दीघायुका वण्णवन्तो सुखबहुला' ति। तस्स एवं होति—'अहो वताहं कायस्स भेदा परं मरणा चातुमहाराजिकानं देवानं सहब्यतं उपपज्जेय्यं' [R.240] ति। सो तं चित्तं दहति, तं चित्तं अधिट्ठाति, तं चित्तं भावेति। तस्स तं चित्तं हीने विमुत्तं, उत्तरि अभावितं, तत्रूपपत्तिया संवत्तति। कायस्स भेदा परं मरणा चातुमहाराजिकानं देवानं सहब्यतं उपपज्जति। तं च खो सीलवतो वदामि, नो दुस्सीलस्स। इज्झति, भिक्खवे, [N.340] सीलवतो चेतोपणिधि विसुद्धता।

३. "इध पन, भिक्खवे, एकच्चो दानं देति समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा अन्नं पानं वत्थं यानं मालागन्धविलेपनं सेय्यावसथपदीपेय्यं। सो यं देति तं पच्चासीसति। तस्स सुतं

---

को विविध ऐश्वर्योपभोग करते हुए देखता है, तब उसको यह विचार होता है— 'क्या ही अच्छा होता कि मैं भी मरणानन्तर आगामी जन्म में इसी प्रकार का कोई क्षत्रियधनपति, ब्राह्मणधनपति या गृहपतिधनपति बन कर ऐसे ही विविध ऐश्वर्योपभोग कर पाता'। तब उसका चित्त उनसे ईर्ष्या करने लगता है, वैसा ही बनने का सङ्कल्प करता है, वैसी साधना करता है। हीनयोनियों की ओर से उसका चित्त हट जाता है, परन्तु इस लोक के आगे के सुख की वह कल्पना नहीं कर पाता। बस! वह यहीं धनिक वर्ग में उत्पन्न होने की इच्छा के साथ मरणभाव को प्राप्त हो जाता है। तब वह मरणानन्तर किसी क्षत्रियधनपति, ब्राह्मणधनपति या गृहपतिधनपति के घर में पैदा होता है। परन्तु, भिक्षुओ! मैं यह बात शीलवान् पुरुष के विषय में ही कह रहा हूँ, दुःशील के विषय में नहीं; क्योंकि, भिक्षुओ! शीलवान् का चित्त ही, विशुद्ध होने के कारण, एक लक्ष्य पर स्थिर हो सकता है। (१)

२. "पुनः, भिक्षुओ! यहाँ कोई पुरुष श्रमण या ब्राह्मण को ...पूर्ववत्... आशा करता है। वह कहीं सुन लेता है—'चातुर्महाराजिक देव दीर्घायु, रूपवान् एवं सुखमय जीवन बिताते हैं।' तब उस को यह विचार होता है—'क्यों न मैं भी चातुर्महाराजिक देवों के लोक में उत्पन्न होऊँ। तब उसका चित्त... चातुर्महाराजिक देवों के लोक में उत्पन्न होता है। परन्तु ...पूर्ववत्... स्थिर हो सकता है।' (२)

३. "पुनः, भिक्षुओ! यहाँ कोई पुरुष श्रमण या ब्राह्मण को ...पूर्ववत्... आशा करता है। वह कहीं सुन लेता है—त्रायस्त्रिंश देव ...पूर्ववत्... यामदेव... तुसित देव... निर्माणरतिदेव... पर-

होति—तावतिंसा देवा ...पे०... यामा देवा... तुसिता देवा... निम्मानरती देवा... परनिम्मित-वसवत्ती देवा दीघायुका वण्णवन्तो सुखबहुला ति। तस्स एवं होति—'अहो वताहं कायस्स [B.72] भेदा परं मरणा परनिम्मितवसवत्तीनं देवानं सहब्यतं उपपज्जेय्यं' ति। सो तं चित्तं दहति, तं चित्तं अधिट्ठाति, तं चित्तं भावेति। तस्स तं चित्तं हीने विमुत्तं, उत्तरि अभावितं, तत्रूपपत्तिया संवत्तति। कायस्स भेदा परं मरणा परनिम्मितवसवत्तीनं देवानं सहब्यतं उपपज्जति। तं च खो सीलवतो वदामि, नो दुस्सीलस्स। इज्झति, भिक्खवे, सीलवतो चेतोपणिधि विसुद्धत्ता।

४. ''इध पन, भिक्खवे, एकच्चो दानं देति समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा अन्नं पानं वत्थं यानं मालागन्धविलेपनं सेय्यावसथपदीपेय्यं। सो यं देति तं पच्चासीसति। तस्स सुतं होति—'ब्रह्मकायिका देवा दीघायुका वण्णवन्तो सुखबहुला' ति। तस्स एवं होति—'अहो [R.241] वताहं कायस्स भेदा परं मरणा ब्रह्मकायिकानं देवानं सहब्यतं उपपज्जेय्यं' ति। सो तं चित्तं दहति, तं चित्तं अधिट्ठाति, तं चित्तं भावेति। तस्स तं चित्तं हीने विमुत्तं, उत्तरि अभावितं, तत्रूपपत्तिया संवत्तति। कायस्स भेदा परं मरणा ब्रह्मकायिकानं देवानं सहब्यतं उपपज्जति। तं च खो सीलवतो वदामि, नो दुस्सीलस्स; वीतरागस्स, नो सरागस्स। इज्झति, भिक्खवे, सीलवतो चेतोपणिधि वीतरागत्ता। इमाा खो, भिक्खवे, अट्ठ दानूपपत्तियो'' ति॥

**६. पुञ्ञकिरियवत्थुसुत्तं** : १. ''तीणिमानि, भिक्खवे, पुञ्ञकिरियवत्थूनि। कतमानि तीणि? दानमयं पुञ्ञकिरियवत्थु, सीलमयं पुञ्ञकिरियवत्थु, भावनामयं पुञ्ञकिरियवत्थु। इध, भिक्खवे, एकच्चस्स दानमयं पुञ्ञकिरियवत्थु परित्तं कतं होति, सीलमयं पुञ्ञकिरियवत्थु परित्तं कतं होति, भावनामयं पुञ्ञकिरियवत्थुं नाभिसम्भोति। सो कायस्स भेदा परं मरणा मनुस्सदोभग्यं उपपज्जति।

---

निर्मित वशवर्ती देव दीर्घायु, रूपवान् एवं सुखमय जीवन बिताते हैं।' तब उसको यह विचार होता है ...पूर्ववत्... परनिर्मितवशवर्ती देवों के लोक में उत्पन्न होता है। ...पूर्ववत्... स्थिर हो सकता है। (३, ४, ५, ६, ७)

४. ''पुनः, भिक्षुओ! यहाँ कोई पुरुष श्रमण या ब्राह्मण को ...पूर्ववत्... 'ब्रह्मकायिक देव दीर्घायु, रूपवान् एवं सुखमय जीवन बिताते हैं। ...पूर्ववत्... ब्रह्मकायिक देवों के लोक में उत्पन्न होता है। परन्तु, भिक्षुओ! मैं यह बात शीलवान् पुरुषों के लिये कह रहा हूँ, दुःशीलों के लिये नहीं; वीतरागों के लिये कह रहा हूँ, रागवालों के नहीं; क्योंकि शीलवान् का ही चित्त, वीतराग होने के कारण, स्थिर होता है। (८)

''भिक्षुओं! ये आठ दान के कारण होने वाले जन्म हैं॥'' ●

**६. पुण्यक्रियवस्तुसूत्र : पुण्यक्रिया-वस्तु**

१. ''भिक्षुओ! ये तीन पुण्यक्रियावस्तुएँ होती हैं। कौन सी तीन? (१) दानमय पुण्यक्रिया-वस्तु, (२) शीलमय पुण्यक्रियावस्तु एवं (३) भावनामय पुण्यक्रियावस्तु। यहाँ, भिक्षुओ! किसी ने दानक्रियावस्तु एवं शीलक्रियावस्तु तो थोड़ी बहुत की भी हैं, परन्तु भावनाक्रियावस्तु उसने कुछ

२. "इध पन, भिक्खवे, एकच्चस्स दानमयं पुञ्ञकिरियवत्थु मत्तसो कतं होति, सीलमयं पुञ्ञकिरियवत्थु मत्तसो कतं होति, भावनामयं पुञ्ञकिरियवत्थुं नाभिसम्भोति। सो कायस्स भेदा परं मरणा मनुस्ससोभग्यं उपपज्जति।

३. "इध पन, भिक्खवे, एकच्चस्स दानमयं पुञ्ञकिरियवत्थु अधिमत्तं कतं [B.73] होति, सीलमयं पुञ्ञकिरियवत्थु अधिमत्तं कतं होति, भावनामयं पुञ्ञकिरियवत्थुं [R.242] नाभिसम्भोति। सो कायस्स भेदा परं मरणा चातुमहाराजिकानं देवानं सहब्यतं उपपज्जति। तत्र, भिक्खवे, चत्तारो महाराजानो दानमयं पुञ्ञकिरियवत्थुं अतिरेकं करित्वा, सीलमयं पुञ्ञकिरियवत्थुं अतिरेकं करित्वा, चातुमहाराजिके देवे दसहि ठानेहि अधिगण्हन्ति— दिब्बेन आयुना, दिब्बेन वण्णेन, दिब्बेन सुखेन, दिब्बेन यसेन, दिब्बेन आधिपतेय्येन, दिब्बेहि रूपेहि, दिब्बेहि सद्देहि दिब्बेहि, गन्धेहि, दिब्बेहि रसेहि, दिब्बेहि फोट्ठब्बेहि।

४ . "इध पन, भिक्खवे, एकच्चस्स दानमयं पुञ्ञकिरियवत्थु अधिमत्तं कतं होति, सीलमयं पुञ्ञकिरियवत्थु अधिमत्तं कतं होति. भावनामयं पुञ्ञकिरियवत्थुं नाभिसम्भोति। सो कायस्स भेदा परं मरणा तावतिंसानं देवानं सहब्यतं उपपज्जति। तत्र, भिक्खवे, सक्को देवानमिन्दो दानमयं पुञ्ञकिरियवत्थुं अतिरेकं करित्वा सीलमयं पुञ्ञकिरियवत्थुं अतिरेकं करित्वा तावतिंसे देवे दसहि ठानेहि अधिगण्हाति—दिब्बेन आयुना ...पे०... दिब्बेहि फोट्ठब्बेहि।

५. "इध पन, भिक्खवे, एकच्चस्स दानमयं पुञ्ञकिरियवत्थु अधिमत्तं कतं होति, सीलमयं पुञ्ञकिरियवत्थु अधिमत्तं कतं होति, भावनामयं पुञ्ञकिरियवत्थुं नाभिसम्भोति।

---

भी नहीं की है—ऐसा पुरुष इस देहपात के बाद मनुष्यदौर्भाग्य (दरिद्र एवं हीन) योनि में उत्पन्न होता है। (१)

२. "पुनः, भिक्षुओ! कोई पुरुष दानक्रिया एवं शीलक्रिया तो अधिक मात्रा में किये रहता है, परन्तु उसने भावनाक्रिया कुछ भी नहीं की हो—ऐसा पुरुष इस देहपात के बाद मनुष्य सौभाग्य (धनवान् एवं उच्च) योनि में उत्पन्न होता है। (२)

३. "पुनः, भिक्षुओ! कोई पुरुष दानक्रिया कुछ मात्रा में एवं शीलक्रिया तो बहुत अधिक किये रहता है, परन्तु भावनाक्रिया कुछ भी नहीं किये रहता—ऐसा पुरुष इस देहपात के बाद चातुर्महाराजिक देवों के लोक में उत्पन्न होता है। वहाँ, भिक्षुओ! ये चातुर्महाराजिक देव दानक्रिया एवं शीलक्रिया को अधिकता से पूर्ण कर उस लोक में दश बातों में अधिकता प्राप्त कर लेते हैं— १. दिव्य आयु में, २. दिव्य वर्ण में, ३. दिव्य सुख में, ४. दिव्य यश में, ५. दिव्य ऐश्वर्य में, ६. दिव्य रूपों में, ७. दिव्य शब्दों में, ८. दिव्य गन्धों में, ९. दिव्य रसों में एवं १०. दिव्य स्प्रष्टव्य विषयों में।

४. यहाँ, भिक्षुओ! कोई पुरुष दानक्रिया एवं पुण्यक्रिया तो बहुत अधिक किये रहता है; परन्तु भावनाक्रिया कुछ भी नहीं किये रहता। वह इस देहपात के बाद त्रायस्त्रिंश देवलोक में उत्पन्न होता है। वहाँ, भिक्षुओ! देवराज शक्र दानमय एवं शीलमय क्रिया की अधिकता के फलस्वरूप इन देवों में दश बातों में अधिक होता है— १.दिव्य आयु में ...पूर्ववत्... १०. दिव्य स्प्रष्टव्य विषयों में।

सो कायस्स भेदा परं मरणा यामानं देवानं सहब्यतं उपपज्जति। तत्र, भिक्खवे, सुयामो देवपुत्तो दानमयं पुञ्ञकिरियवत्थुं अतिरेकं करित्वा, सीलमयं पुञ्ञकिरियवत्थुं अतिरेकं करित्वा, यामे देवे दसहि ठानेहि अधिगण्हाति—दिब्बेन आयुना ...पे०... फोट्ठब्बेहि।

[N.342] ६. ''इध पन, भिक्खवे, एकच्चस्स दानमयं पुञ्ञकिरियवत्थु अधिमत्तं कतं होति, [R.243] सीलमयं पुञ्ञकिरियवत्थु अधिमत्तं कतं होति, भावनामयं पुञ्ञकिरियवत्थुं नाभिसम्भोति। सो कायस्स भेदा परं मरणा तुसितानं देवानं सहब्यतं उपपज्जति। तत्र, भिक्खवे, देवपुत्तो दानमयं पुञ्ञकिरियवत्थुं अतिरेकं करित्वा, सीलमयं पुञ्ञकिरियवत्थुं अतिरेकं करित्वा, तुसिते देवे दसहि ठानेहि अधिगण्हाति—दिब्बेन आयुना ...पे०... दिब्बेहि फोट्ठब्बेहि।

[B.74] ७. ''इध पन, भिक्खवे, एकच्चस्स दानमयं पुञ्ञकिरियवत्थु अधिमत्तं कतं होति, सीलमयं पुञ्ञकिरियवत्थु अधिमत्तं कतं होति, भावनामयं पुञ्ञकिरियवत्थुं नाभिसम्भोति। सो कायस्स भेदा परं मरणा निम्मानरतीनं देवानं सहब्यतं उपपज्जति। तत्र, भिक्खवे, सुनिम्मितो देवपुत्तो दानमयं पुञ्ञकिरियवत्थुं अतिरेकं करित्वा, सीलमयं पुञ्ञकिरियवत्थुं अतिरेकं करित्वा, निम्मानरती देवे दसहि ठानेहि अधिगण्हाति—दिब्बेन आयुना ...पे०... दिब्बेहि फोट्ठब्बेहि।

८. ''इध पन, भिक्खवे, एकच्चस्स दानमयं पुञ्ञकिरियवत्थु अधिमत्तं कतं होति, सीलमयं पुञ्ञकिरियवत्थु अधिमत्तं कतं होति, भावनामयं पुञ्ञकिरियवत्थुं नाभिसम्भोति। सो कायस्स भेदा परं मरणा परनिम्मितवसवत्तीनं देवानं सहब्यतं उपपज्जति। तत्र, भिक्खवे, वसवत्ती देवपुत्तो दानमयं पुञ्ञकिरियवत्थुं अतिरेकं करित्वा, सीलमयं पुञ्ञकिरियवत्थुं अतिरेकं करित्वा, परनिम्मितवसवत्ती देवे दसहि ठानेहि अधिगण्हाति—दिब्बेन आयुना, दिब्बेन वण्णेन, दिब्बेन सुखेन, दिब्बेन यसेन, दिब्बेन आधिपतेय्येन, दिब्बेहि रूपेहि, दिब्बेहि सद्देहि, दिब्बेहि गन्धेहि, दिब्बेहि रसेहि, दिब्बेहि फोट्ठब्बेहि। इमानि खो, भिक्खवे, तीणि पुञ्ञकिरियवत्थूनी'' ति॥ ●

---

५. ''पुनः, भिक्षुओ! यहाँ कोई पुरुष ...पूर्ववत्... सुयाम देवों के साथ उत्पन्न होता है। वह ...पूर्ववत्... दिव्य स्प्रष्टव्य विषयों में।

६. ''पुनः, भिक्षुओ! यहाँ कोई पुरुष ...पूर्ववत्... तुषित देवों के साथ उत्पन्न होता है। वह ...पूर्ववत्... दिव्य स्प्रष्टव्य विषयों में।

७. ''पुनः, भिक्षुओ! यहाँ कोई पुरुष ...पूर्ववत्... निर्माणरति देवों के साथ उत्पन्न होता है। वह ...पूर्ववत्... दिव्य स्प्रष्टव्य विषयों में।

८. ''पुनः, भिक्षुओ! यहाँ कोई पुरुष ...पूर्ववत्... परनिर्मितवशवर्ती देवों के साथ उत्पन्न होता है। वहाँ वह वशवर्ती देवपुत्र उन देवों से दश स्थानों में अधिकता प्राप्त कर लेता है— १. दिव्य आयु में ...पूर्ववत्... दिव्य स्प्रष्टव्य विषयों में। भिक्षुओ! इस प्रकार ये तीन पुण्य क्रिया वस्तुएँ हैं॥''

**७. सप्पुरिसदानसुत्तं** : १. "अट्ठिमानि, भिक्खवे, सप्पुरिसदानानि। कतमानि अट्ठ? सुचिं देति, पणीतं देति, कालेन देति, कप्पियं देति, विचेय्य देति, अभिण्हं [R.244] देति, ददं चित्तं पसादेति, दत्वा अत्तमनो होति। इमानि खो, भिक्खवे, अट्ठ सप्पुरिसदानानी ति।

"सुचिं पणीतं कालेन, कप्पियं पानभोजनं। [N.343]
अभिण्हं ददाति दानं, सुखेत्तेसु ब्रह्मचारिसु॥
"नेव विप्पटिसारिस्स, चजित्वा आमिसं बहुं।
एवं दिन्नानि दानानि, वण्णयन्ति विपस्सिनो॥
"एवं यजित्वा मेधावी, सद्धो मुत्तेन चेतसा।
अब्यापज्झं सुखं लोकं, पण्डितो उपपज्जती" ति॥ ●

**८. सप्पुरिससुत्तं** : १. "सप्पुरिसो, भिक्खवे, कुले जायमानो बहुनो जनस्स [B.75] अत्थाय हिताय सुखाय होति—मातापितूनं अत्थाय हिताय सुखाय होति, पुत्तदारस्स अत्थाय हिताय सुखाय होति, दासकम्मकरपोरिसस्स अत्थाय हिताय सुखाय होति, मित्तामच्चानं अत्थाय हिताय सुखाय होति, पुब्बपेतानं अत्थाय हिताय सुखाय होति, रञ्ञो अत्थाय हिताय सुखाय होति, देवतानं अत्थाय हिताय सुखाय होति, समणब्राह्मणानं अत्थाय हिताय सुखाय होति।

---

**७. सत्पुरुषदानसूत्र : : सत्पुरुषदान की आठ विशेषताएँ**

१.भिक्षुओं! ये आठ सत्पुरुषदान कहलाते हैं। कौन से आठ? (१) (सत्पुरुष) शुद्ध दान करता है, (२) श्रेष्ठ दान करता है, (३) समय से दान करता है, (४) उचित दान करता है, (५) विचार कर दान करता है, (६) अधिक मात्रा में दान करता है, (७) दान करते हुए उसका चित्त प्रसन्न होता है तथा (८) दान कर वह सन्तुष्ट होता है। भिक्षुओ! ये आठ 'सत्पुरुषदान' कहलाते हैं॥

"शुद्ध, श्रेष्ठ, समय से, उचित, अधिक मात्रा में, उपयुक्त पात्रभूत धर्माराधकों में, न कि पश्चात्ताप के साथ, बहुत सी व्यर्थ भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति न करता हुआ जो दान किया जाता है ऐसा दान ही विद्वानों द्वारा प्रशस्त माना गया है॥

"मुक्त चित्त (खुले दिल) से दानयज्ञ करता हुआ बुद्धिमान्, श्रद्धालु एवं ज्ञानी पुरुष ही हानिरहित, सुखमय स्वर्गलोक में उत्पन्न होता है॥" ●

**८. सत्पुरुषसूत्र : : सत्पुरुष अष्टविधजनों के लिये हितकारी**

१. सत्कुल में उत्पन्न पुरुष बहुत से लोगों का अर्थकारी, हितकारी एवं सुखकारी होता है। जैसे—(१) अपने माता पिता का, (२) पुत्रों और पत्नियों का, (३) अधीनस्थ दास, कर्मकर (नौकर-चाकर) का, (४) अपने मित्र एवं साथियों का, (५) अपने कुटुम्ब के पूर्वजों का, (६) राजा का, (७) देवताओं का एवं (८) श्रमण ब्राह्मणों का नाना प्रकार से अर्थकारी, हितकारी एवं सुखकारी होता है।

२. "सेय्यथापि, भिक्खवे, महामेघो सब्बसस्सानि सम्पादेन्तो बहुनो जनस्स अत्थाय हिताय सुखाय होति; एवमेव खो, भिक्खवे, सप्पुरिसो कुले जायमानो बहुनो जनस्स अत्थाय हिताय सुखाय होति—मातापितूनं अत्थाय हिताय सुखाय होति, पुत्तदारस्स अत्थाय हिताय सुखाय होति, दासकम्मकरपोरिसस्स अत्थाय हिताय सुखाय होति, [R.245] मित्तामच्चानं अत्थाय हिताय सुखाय होति, पुब्बेतानं अत्थाय हिताय सुखाय होति, रञ्ञो अत्थाय हिताय सुखाय होति, देवतानं अत्थाय हिताय सुखाय होति, समणब्राह्मणानं अत्थाय हिताय सुखाय होती ति।

"बहूनं वत अत्थाय, सप्पञ्ञो घरमावसं।
मातरं पितरं पुब्बे, रत्तिन्दिवमतन्दितो॥
"पूजेति सहधम्मेन, पुब्बेकतमनुस्सरं।
अनागारे पब्बजिते, अपचे ब्रह्मचारयो॥
[N.344] "निविट्ठसद्धो पूजेति, ञत्वा धम्मे च पेसलो।
रञ्ञो हितो देवहितो, ञातीनं सखिनं हितो॥
"सब्बेसं सो हितो होति, सद्धम्मे सुप्पतिट्ठितो।
विनेय्य मच्छेरमलं स लोकं भजते सिवं" ति॥

[B.76] **९. अभिसन्दसुत्तं** : १. "अट्ठिमे, भिक्खवे, पुञ्ञाभिसन्दा कुसलाभिसन्दा सुखस्साहारा सोवग्गिका सुखविपाका सग्गसंवत्तनिका, इट्ठाय कन्ताय मनापाय हिताय सुखाय संवत्तन्ति। कतमे अट्ठ? इध, भिक्खवे, अरियसावको बुद्धं सरणं गतो होति। अयं,

---

२. "जैसे, भिक्षुओ! महामेघ विविध धान्यों का उत्पादन करता हुआ बहुत से लोगों का अर्थकारी, हितकारी एवं सुखकारी होता है; वैसे ही सत्कुल में उत्पन्न हुआ पुरुष ...पूर्ववत्... एवं सुखकारी होता है।

"यदि कोई बुद्धिमान् पुरुष गृहस्थ धर्म में है तो वह दिन रात, सावधानीपूर्वक, अपने पूर्वजों—माता पिता की, कुल-परम्परा का निर्वाह करता हुआ, सेवा करता है॥

("तथा) यदि वह घर छोड़कर प्रव्रजित हो गया है तो वह श्रद्धा के साथ अपने गुरु तथा ज्येष्ठ गुरुभाइयों की पूजा एवं सत्कार करता हुआ बुद्धिमत्ता (चतुरता) से अपनी धर्मसाधना में लगा रहता है॥

"साथ ही वह अपना धर्मपालन करता हुआ अपने राजा का, देवताओं का तथा अपने इष्ट मित्रों के हित, सुख का भी ध्यान रखता है॥

"वह सद्धर्म की साधनां करता हुआ सभी के लिये हितकर सिद्ध होता है। तथा निरभिमान एवं निर्मल रहता हुआ वह लोक की मङ्गलकामना ही करता है॥"

**९. अभिष्यन्दसूत्र : : पुण्याभिष्यन्दक आठ धर्म**

१. भिक्षुओ! ये आठ पुण्याभिष्यन्द (पुण्यफल) कुशल परिणाम देने वाले सुख के प्रदाता, स्वर्ग (सुखमय) लोक में पहुँचाने वाले, सुखमय परिणाम देने वाले, स्वर्ग की ओर ले जाने वाले

भिक्खवे, पठमो पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो सोवग्गिको सुखविपाको सग्गसंवत्तनिको, इट्ठाय कन्ताय मनापाय हिताय सुखाय संवत्तति।

२. पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको धम्मं सरणं गतो होति। अयं, भिक्खवे, दुतियो पुञ्ञाभिसन्दो ...पे०... संवत्तति।

३. "पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको सङ्घं सरणं गतो होति। अयं, भिक्खवे, ततियो पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो सोवग्गिको सुखविपाको सग्गसंवत्तनिको, इट्ठाय कन्ताय मनापाय हिताय सुखाय संवत्तति।

४. "पञ्चिमानि, भिक्खवे, दानानि महादानानि अग्गञ्ञानि रत्तञ्ञानि [R.246] वंसञ्ञानि पोराणानि असङ्किण्णानि असङ्किण्णपुब्बानि, न सङ्कियन्ति न सङ्कियिस्सन्ति, अप्पटिकुट्ठानि समणेहि ब्राह्मणेहि विञ्ञूहि। कतमानि पञ्च? इध, भिक्खवे, अरियसावको पाणातिपातं पहाय पाणातिपाता पटिविरतो होति। पाणातिपाता पटिविरतो, भिक्खवे, अरियसावको अपरिमाणानं सत्तानं अभयं देति, अवेरं देति, अब्यापज्झं देति। अपरिमाणानं सत्तानं अभयं दत्वा अवेरं दत्वा अब्यापज्झं दत्वा अपरिमाणस्स अभयस्स अवेरस्स अब्यापज्झस्स भागी होति। इदं, भिक्खवे, पठमं दानं महादानं अग्गञ्ञं रत्तञ्ञं वंसञ्ञं पोराणं असङ्किण्णं असङ्किण्णपुब्बं, न सङ्कियति न सङ्कियिस्सति, अप्पटिकुट्ठं समणेहि ब्राह्मणेहि विञ्ञूहि। अयं, भिक्खवे, चतुत्थो पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो सोवग्गिको सुखविपाको सग्गसंवत्तनिको, इट्ठाय कन्ताय मनापाय हिताय सुखाय [N.345] संवत्तति।

५. "पुन च परं, भिक्खवे, अरियसावको अदिन्नादानं पहाय अदिन्नादाना पटिविरतो

---

होते हैं। कौन से आठ? जो आर्यश्रावक बुद्ध की शरण में चला जाता है—इस प्रथम शरणगमन का पुण्याभिष्यन्द ...पूर्ववत्... स्वर्ग की ओर ले जानेवाला होता है। तथा यह उसके लिये इष्ट, प्रिय, मनोनुकूल, हित एवं सुख का उत्पादक होता है। (१)

२. "पुनः, भिक्षुओ! जो आर्यश्रावक (बुद्धोपदिष्ट) धर्म की शरण में चला जाता है—इस द्वितीय ...पूर्ववत्... सुख का उत्पादक होता है। (२)

३. "पुनः, भिक्षुओ! जो आर्यश्रावक सङ्घ की शरण में चला जाता है—...पूर्ववत्...। (३)

४. "भिक्षुओ! ये पाँच दान महादान हैं। ये अग्र (निर्वाण) तक पहुँचाने वाले, दीर्घकाल से वंशपरम्परा से चले आ रहे, प्राचीन, सङ्कीर्णतारहित हैं। न कभी पहले इनमें सङ्कीर्णता (सङ्कोच) आयी है, न आगे आयगी। तथा ये श्रमण ब्राह्मणों द्वारा भी निन्दित नहीं, अपितु प्रशंसनीय ही रहे हैं। कौन से पाँच? यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक प्राणातिपात (हिंसा) का त्याग कर उससे दूर रहता है। उससे दूर रहता हुआ, भिक्षुओ! आर्यश्रावक असङ्ख्य प्राणियों के अभय, निर्वैरता एवं हानिरहितता का भागी होता है। भिक्षुओ! यह प्रथम दान महादान निर्वाण तक पहुँचाने वाला ...पूर्ववत्... श्रमण ब्राह्मणों द्वारा भी प्रशंसनीय रहा है। भिक्षुओ! यह चतुर्थ पुण्याभिष्यन्द ...पूर्ववत्... सुखोत्पादक होता है। (४)

[B.77] होति ...पे०... कामेसुमिच्छाचारं पहाय कामेसुमिच्छाचारा पटिविरतो होति ...पे०... मुसावाद पहायं मुसावादा पटिविरतो होति ...पे०... सुरामेरयमज्जपमादट्ठानं पहाय सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना पटिविरतो होति। सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना पटिविरतो, भिक्खवे, अरियसावको अपरिमाणानं सत्तानं अभयं देति अवेरं देति अब्यापज्झं देति। अपरिमाणानं सत्तानं अभयं दत्वा अवेरं दत्वा अब्यापज्झं दत्वा, अपरिमाणस्स अभयस्स अवेरस्स अब्यापज्झस्स भागी होति। इदं, भिक्खवे, पञ्चमं दानं महादानं अग्गञ्ञं रत्तञ्ञं वंसञ्ञं पोराणं असङ्किण्णं असङ्किण्णपुब्बं, न सङ्कियति न सङ्कियिस्सति, अप्पटिकुट्ठं समणेहि ब्राह्मणेहि विञ्ञूहि। अयं खो, भिक्खवे, अट्ठमो पुञ्ञाभिसन्दो कुसलाभिसन्दो सुखस्साहारो [R.247] सोवग्गिको सुखविपाको सग्गसंवत्तनिको, इट्ठाय कन्ताय मनापाय हिताय सुखाय संवत्तति। इमे खो, भिक्खवे, अट्ठ पुञ्ञाभिसन्दा कुसलाभिसन्दा सुखस्साहारा सोवग्गिका सुखविपाका सग्गसंवत्तनिका, इट्ठाय कन्ताय मनापाय हिताय सुखाय संवत्तन्ती'' ति॥ ●

**१०. दुच्चरितविपाकसुत्तं :** १. ''पाणातिपातो, भिक्खवे, आसेवितो भावितो बहुलीकतो निरयसंवत्तनिको तिरच्छानयोनिसंवत्तनिको पेत्तिविसयसंवत्तनिको। यो सब्बलहुसो पाणातिपातस्स विपाको, मनुस्सभूतस्स अप्पायुकसंवत्तनिको होति।

२. ''अदिन्नादानं, भिक्खवे, आसेवितं भावितं बहुलीकतं निरयसंवत्तनिकं तिरच्छानयोनिसंवत्तनिकं पेत्तिविसयसंवत्तनिकं। यो सब्बलहुसो अदिन्नादानस्स विपाको, मनुस्सभूतस्स भोगब्यसनसंवत्तनिको होति।

३. ''कामेसुमिच्छाचारो, भिक्खवे, आसेवितो भावितो बहुलीकतो निरय-

---

५. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक अदत्तादान (चौरी) का त्याग कर उससे दूर रहता है ...पूर्ववत्... कामभोगों में मिथ्याचार (व्यभिचार) का त्याग कर उससे दूर रहता है ...पूर्ववत्... मृषावाद (असत्य) का त्याग कर उससे दूर रहता है ...पूर्ववत्... सुरा, मैरेय, मद्य आदि प्रमादस्थान का त्याग कर उससे दूर रहता है। उससे दूर रहता हुआ ...पूर्ववत्... यह पञ्चम महादान... भिक्षुओ! यह अष्टम पुण्याभिष्यन्द ...पूर्ववत्... सुखोत्पादक होता है। (५-८)

''भिक्षुओ! ये आठ पुण्याभिष्यन्द निर्वाण की ओर ले जाने वाले... सुखोत्पादक होते हैं॥''

**१०. दुश्चरितविपाकसूत्र** : :

१. ''भिक्षुओ! प्राणातिपात (हिंसा) करना, उसका अभ्यास या बार-बार दुहराना नरक, पशु-पक्षियोनि एवं प्रेतयोनि में डालने वाला होता है। इस प्राणातिपात का सबसे छोटा परिणाम (फल) भी उस मनुष्य की आयु को क्षीण करने वाला तो होता ही है।

२. ''भिक्षुओ! अदत्तादान (चौरी) करना, उसका अभ्यास या बार बार दुहराना नरक, पशु-पक्षियोनि या प्रेतयोनि में डालने वाला होता है। इस अदत्तादान का सबसे अल्प परिणाम भी उस मनुष्य के कामभोगों को क्षीण करने वाला तो होता ही है।

३. ''भिक्षुओ! कामभोगों में मिथ्याचार (व्यभिचार) करना, उसका अभ्यास ...पूर्ववत्...। इस व्यभिचार का कम से कम फल भी उसके साथ समाज का वैर बढ़ाने वाला तो होगा ही।

संवत्तनिको तिरच्छानयोनिसंवत्तनिको पेत्तिविसयसंवत्तनिको। यो सब्बलहुसो [N.346] कामेसुमिच्छाचारस्स विपाको, मनुस्सभूतस्स सपत्तवेरसंवत्तनिको होति।

४. ''मुसावादो, भिक्खवे, आसेवितो भावितो बहुलीकतो निरय- [B.78] संवत्तनिको तिरच्छानयोनिसंवत्तनिको पेत्तिविसयसंवत्तनिको। यो सब्बलहुसो मुसावादस्स विपाको, मनुस्सभूतस्स अभूतब्भक्खानसंवत्तनिको होति।

५. ''पिसुणा, भिक्खवे, वाचा आसेविता भाविता बहुलीकता निरयसंवत्तनिका तिरच्छानयोनिसंवत्तनिका पेत्तिविसयसंवत्तनिका। यो सब्बलहुसो फरुसाय वाचाय विपाको, मनुस्सभूतस्स मित्तेहि भेदनसंवत्तनिको होति।

६. ''फरुसा, भिक्खवे, वाचा आसेविता भाविता बहुलीकता निरय- [R.248] संवत्तनिका तिरच्छानयोनिसंवत्तनिका पेत्तिविसयसंवत्तनिका। यो सब्बलहुसो फरुसाय वाचाय विपाको, मनुस्सभूतस्स अमनापसद्दसंवत्तनिको होति।

७. ''सम्फप्पलापो, भिक्खवे, आसेवितो भावितो बहुलीकतो निरयसंवत्तनिको तिरच्छानयोनिसंवत्तनिको पेत्तिविसयसंवत्तनिको। यो सब्बलहुसो सम्फप्पलापस्स विपाको, मनुस्सभूतस्स अनादेय्यवाचासंवत्तनिको होति।

८. ''सुरामेरयपानं, भिक्खवे, आसेवितं भावितं बहुलीकतं निरयसंवत्तनिकं तिरच्छानयोनिसंवत्तनिकं पेत्तिविसयसंवत्तनिकं। यो सब्बलहुसो सुरामेरयपानस्स विपाको, मनुस्सभूतस्स उम्मत्तकसंवत्तनिको होती'' ति॥ ●

दानवग्गो चतुत्थो॥

---

४. ''भिक्षुओ! मृषावाद (असत्य) का अभ्यास या उसका अधिकता से उपयोग करना ...पूर्ववत्...। उसके छोटे से छोटे से परिणाम के होने पर भी लोक में उसकी निन्दा तो फैल ही जायगी।

५. ''भिक्षुओ! दूसरों की चुगली करने का अभ्यास या इस कर्म को बार बार दुहराना ...पूर्ववत्...। इसका छोटे से छोटा परिणाम भी इसको मित्रों से तो दूर कर ही देगा।

६. ''भिक्षुओ! कठोर वचन बोलना, उसका अभ्यास तथा उसको बार बार दुहराना ...पूर्ववत्...। इसका छोटे से छोटा परिणाम भी उसे समाज में मन के प्रतिकूल शब्द सुनने को तो बाध्य करेगा ही।

७. भिक्षुओ! सम्प्रलाप (बकवाद=व्यर्थ बोलना) का अभ्यास या उसको बार बार दुहराना ...पूर्ववत्...। इसका छोटे से छोटा दुष्परिणाम भी मनुष्य को अस्वीकार्य वचन सुनने को बाध्य होना पड़ता है।

८. सुरा, मैरेय आदि मद्य का पान, उसका अभ्यास या उसको बार बार दुहराना...। इसका छोटे से छोटा परिणाम भी मनुष्य को उन्मत्त (पागल) तो बना ही देगा॥ ●



दानवर्ग चतुर्थ सम्पन्न॥

**तस्सुद्दानं**

द्वे दानानि वत्थुं च, खेत्तं दानूपपत्तियो।
किरियं द्वे सप्पुरिसा, अभिसन्दो विपाको चा ति॥

## ५. उपोसथवग्गो

[N.347,B.79] **१. सङ्खित्तुपोसथसुत्तं** : १. एवं मे सुतं। एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि— ''भिक्खवो'' ति। ''भदन्ते'' ति ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—

२. ''अट्ठङ्गसमन्नागतो, भिक्खवे, उपोसथो उपवुत्थो महप्फलो होति महानिसंसो महाजुतिको महाविप्फारो। कथं उपवुत्थो च, भिक्खवे, अट्ठङ्गसमन्नागतो उपोसथो महप्फलो होति महानिसंसो महाजुतिको महाविप्फारो? इध, भिक्खवे, अरियसावको इति [R.249] पटिसञ्चिक्खति—'यावजीवं अरहन्तो पाणातिपातं पहाय पाणातिपाता पटिविरता निहितदण्डा निहितसत्था लज्जी दयापन्ना, सब्बपाणभूतहितानुकम्पिनो विहरन्ति। अहं पज्ज इमं च रत्तिं इमं च दिवसं पाणातिपातं पहाय पाणातिपाता पटिविरतो निहितदण्डो निहित-

---

**इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची**

१. प्रथम दानसूत्र, २. द्वितीय दानसूत्र, ३. दानवस्तुसूत्र, ४. क्षेत्रसूत्र, ५. दानोपपत्तिसूत्र, ६. पुण्यक्रियावस्तुसूत्र, ७. सत्पुरुषदानसूत्र, ८. सत्पुरुषसूत्र, ९. अभिष्यन्दसूत्र, १०. दुश्चरित-विपाकसूत्र॥

## ५. उपोसथवर्ग

**१. संक्षिप्त उपोसथसूत्र : : उपोसथ के आठ अङ्ग**

१. ऐसा मैंने सुना है (कि) एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवनाराम में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने भिक्षुओं को ...पूर्ववत्... यह उपदेश किया—

२. ''भिक्षुओ! आठ अङ्गों से युक्त उपोसथ व्रत का पालन अतिशय फलदायी, अतिशय माहात्म्य वाला, महान् आलोक एवं महान् उत्तेजनाप्रद होता है। भिक्षुओ! यह कैसे... होता है? यहाँ, भिक्षुओ! कोई आर्यश्रावक यह सोचता है—'ये अर्हत् जन जीवनपर्यन्त प्राणातिपात का त्याग कर, उससे दूर रहकर, शस्त्र और दण्ड को छोड़कर, लज्जा (समाजभय) एवं दया से पूर्ण रहकर सब प्राणियों पर अनुकम्पा करते हुए साधनारत रहते हैं, तो क्यों न मैं भी आज इस रात्रि एवं इस दिन से प्राणातिपात का त्याग कर शस्त्र एवं दण्ड रहित होकर सब प्राणियों पर अनुकम्पा करते हुए

सत्थो लज्जी दयापन्नो, सब्बपाणभूतहितानुकम्पी विहरामि। इमिनापङ्गेन अरहतं अनुकरोमि, उपोसथो च मे उपवुत्थो भविस्सती' ति। इमिना पठमेन अङ्गेन समन्नागतो होति।

३. 'यावजीवं अरहन्तो अदिन्नादानं पहाय अदिन्नादाना पटिविरता दिन्नादायी दिन्नपाटिकङ्खी, अथेनेन सुचिभूतेन अत्तना विहरन्ति। अहं पज्ज इमं च रत्तिं इमं च दिवसं अदिन्नादानं पहाय अदिन्नादाना पटिविरतो दिन्नादायी दिन्नपाटिकङ्खी, अथेनेन सुचिभूतेन अत्तना विहरामि। इमिनापङ्गेन अरहतं अनुकरोमि, उपोसथो च मे उपवुत्थो भविस्सती' ति। इमिना दुतियेन अङ्गेन समन्नागतो होति।

४. 'यावजीवं अरहन्तो अब्रह्मचरियं पहाय ब्रह्मचारिनो आराचारिनो विरता मेथुना गामधम्मा। अहं पज्ज इमं च रत्तिं इमं च दिवसं अब्रह्मचरियं पहाय ब्रह्मचारी आराचारी विरतो मेथुना गामधम्मा। इमिनापङ्गेन अरहतं अनुकरोमि, उपोसथो च मे उपवुत्थो भविस्सती' ति। इमिना ततियेन अङ्गेन समन्नागतो होति।

५. 'यावजीवं अरहन्तो मुसावादं पहाय मुसावादा पटिविरता [N.348, B.80] सच्चवादिनो सच्चसन्धा थेता पच्चयिका अविसंवादका लोकस्स। अहं पज्ज इमं च [R.250] रत्तिं इमं च दिवसं मुसावादं पहाय मुसावादा पटिविरतो सच्चवादी सच्चसन्धो थेतो पच्चयिको अविसंवादको लोकस्स। इमिनापङ्गेन अरहतं अनुकरोमि, उपोसथो च मे उपवुत्थो भविस्सती' ति। इमिना चतुत्थेन अङ्गेन समन्नागतो होति।

६. 'यावजीवं अरहन्तो सुरामेरयमज्जपमादट्ठानं पहाय सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना

---

साधना करूँ। इस पद्धति से मैं अर्हतों का अनुकरण भी कर सकूँगा, तथा मेरा उपोसथ भी विधिपूर्वक सम्पन्न हो जायगा।' और वह इस प्रथम अङ्ग से समन्वित होता है। (१)

३. ...'ये अर्हत् जन जीवनपर्यन्त अदत्तादान (चौरी) का त्याग कर, उससे दूर रहकर दिया हुआ ही लेते हैं, दिये हुए की ही इच्छा करते हैं, तथा उस शुद्ध सङ्कल्प के साथ साधनारत रहते हैं, तो क्यों न मैं भी आज इस रात्रि एवं दिन से अदत्तादान का त्याग कर उससे दूर रहकर, दिया हुआ ही लूँ और दिये हुए की ही इच्छा करूँ! इस पद्धति से मैं अर्हतों का अनुकरण भी कर सकूँगा तथा मेरा उपोसथ भी विधिपूर्वक सम्पन्न हो जायगा।' और वह इस द्वितीय अङ्ग से समन्वित होता है। (२)

४. ... 'ये अर्हत् जन जीवनपर्यन्त कामभोगों में व्यभिचार का त्याग कर ब्रह्मचर्यपूर्वक रहते हुए मैथुन (ग्राम्यधर्म) से दूर रहते हैं, क्यों न मैं भी आज इस रात्रि एवं दिन से व्यभिचार का त्याग कर ...पूर्ववत्...। वह इस तृतीय अङ्ग से समन्वित होता है। (३)

५. ... 'ये अर्हत् जन जीवनपर्यन्त असत्य भाषण का त्यागकर सत्यवादी, सत्यसन्ध, विश्वसनीय तथा लोगों में असन्दिग्ध स्थिति में रहते हैं, क्यों न मैं भी आज इस ...पूर्ववत्...। वह इस चतुर्थ अङ्ग से समन्वित होता है। (४)

६. ... 'ये अर्हत् जन जीवनपर्यन्त सुरा, मैरेय आदि मद्यपान छोड़कर उससे दूर रहते हैं, क्यों न मैं भी आज ...पूर्ववत्...। इस पञ्चम अङ्ग से समन्वित होता है। (५)

पटिविरता। अहं पज्ज इमं च रत्तिं इमं च दिवसं सुरामेरयमज्जपमादट्ठानं पहाय सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना पटिविरतो। इमिनापङ्गेन अरहतं अनुकरोमि, उपोसथो च मे उपवुत्थो भविस्सती' ति। इमिना पञ्चमेन अङ्गेन समन्नागतो होति।

७. 'यावजीवं अरहन्तो एकभत्तिका रत्तूपरता विरता विकालभोजना। अहं पज्ज इमं च रत्तिं इमं च दिवसं एकभत्तिको रत्तूपरतो विरतो विकालभोजना। इमिनापङ्गेन अरहतं अनुकरोमि, उपोसथो च मे उपवुत्थो भविस्सती' ति। इमिना छट्ठेन अङ्गेन समन्नागतो होति।

८. 'यावजीवं अरहन्तो नच्चगीतवादितविसूकदस्सनमालागन्धविलेपनधारण-मण्डनविभूसनट्ठानं पहाय नच्चगीतवादितविसूकदस्सनमालागन्धविलेपनधारणमण्डन-विभूसनट्ठाना पटिविरता। अहं पज्ज इमं च रत्तिं इमं च दिवसं नच्चगीतवादित-विसूकदस्सनमालागन्धविलेपनधारणमण्डनविभूसनट्ठानं पहाय नच्चगीतवादितविसूक-दस्सनमालागन्धविलेपनधारणमण्डनविभूसनट्ठाना पटिविरतो। इमिनापङ्गेन अरहतं अनु-करोमि, उपोसथो च मे उपवुत्थो भविस्सती' ति। इमिना सत्तमेन अङ्गेन समन्नागतो होति।

९. 'यावजीवं अरहन्तो उच्चासयनमहासयनं पहाय उच्चासयनमहासयना पटिविरता नीचसेय्यं कप्पेन्ति—मञ्चके वा तिणसन्थारके वा। अहं पज्ज इमं च रत्तिं इमं च दिवसं उच्चासयनमहासयनं पहाय उच्चासयनमहासयना पटिविरतो नीचसेय्यं कप्पेमि—मञ्चके वा [N.349, R.251] तिणसन्थारके वा। इमिनापङ्गेन अरहतं अनुकरोमि, उपोसथो च मे [B.81] उपवुत्थो भविस्सती' ति। इमिना अट्ठमेन अङ्गेन समन्नागतो होति। एवं उपवुत्थो खो, भिक्खवे, अट्ठङ्गसमन्नागतो उपोसथो महप्फलो होति महानिसंसो महाजुतिको महा-विप्फारो'' ति॥ ●

**२. वित्थतूपोसथसुत्तं :** १. ''अट्ठङ्गसमन्नागतो, भिक्खवे, उपोसथो उपवुत्थो महप्फलो होति महानिसंसो महाजुतिको महाविप्फारो। कथं उपवुत्थो च, भिक्खवे,

---

७. ... 'ये अर्हत् जन जीवनपर्यन्त एक ही समय भोजन करते हुए, रात्रि में न करते हुए, विकाल भोजन से दूर रहते हैं, तो क्यों न मैं भी आज ...पूर्ववत्...। इस षष्ठ अङ्ग से समन्वित होता है। (६)

८. ... 'ये अर्हत् जन जीवनपर्यन्त नृत्य, गीत, वादित्र, नाटक देखना, माला-गन्ध-विलेपन-मण्डन-विभूषण आदि से दूर रहते हैं, तो क्यों न मैं भी आज ...पूर्ववत्...। इस षष्ठ अङ्ग से समन्वित होता है। (७)

९. ... 'ये अर्हत् जन जीवनपर्यन्त उच्च शयन, महाशयन का उपयोग त्याग कर उनसे दूर रहते हुए नीचे शयनासनों (तृणपुञ्ज आदि) पर ही सोते उठते बैठते हैं, क्यों न मैं भी आज ...पूर्ववत्...। इस आठवें अङ्ग से समन्वित होता है। (८)

''भिक्षुओ! इस प्रकार आठ अङ्गों से युक्त उपोसथ अतिशय फलप्रद, अतिशय माहात्म्य वाला तथा अतिशय उत्तेजक होता है।'' ●

अट्ठङ्गसमन्नागतो उपोसथो महप्फलो होति महानिसंसो महाजुतिको महाविप्फारो? इध, भिक्खवे, अरियसावको इति पटिसञ्चिक्खति—'यावजीवं अरहन्तो पाणातिपातं पहाय पाणातिपाता पटिविरता निहितदण्डा निहितसत्था लज्जी दयापन्ना, सब्बपाणभूतहितानुकम्पिनो विहरन्ति। अहं पज्ज इमं च रत्तिं इमं च दिवसं पाणातिपातं पहाय पाणातिपाता पटिविरतो निहितदण्डो निहितसत्थो लज्जी दयापन्नो, सब्बपाणभूतहितानुकम्पी विहरामि। इमिनापङ्गेन अरहतं अनुकरोमि, उपोसथो च मे उपवुत्थो भविस्सती' ति। इमिना पठमेन अङ्गेन समन्नागतो होति ...पे०...।'यावजीवं अरहन्तो उच्चासयनमहासयनं पहाय उच्चासयनमहासयना पटिविरता नीचसेय्यं कप्पेन्ति—मञ्चके वा तिणसन्थारके वा। अहं पज्ज इमं च रत्तिं इमं च दिवसं उच्चासयनमहासयनं पहाय उच्चासयनमहासयना पटिविरतो नीचसेय्यं कप्पेमि—मञ्चके वा तिणसन्थारके वा। इमिनापङ्गेन अरहतं अनुकरोमि, उपोसथो च मे उपवुत्थो भविस्सती' ति। इमिना अट्ठमेन अङ्गेन समन्नागतो होति। एवं उपवुत्थो खो, भिक्खवे, अट्ठङ्गसमन्नागतो उपोसथो महप्फलो होति महानिसंसो महाजुतिको [R.252] महाविप्फारो।

२. ''कीवमहप्फलो होति कीवमहानिसंसो कीवमहाजुतिको कीवमहाविप्फारो? सेय्यथापि, भिक्खवे, यो इमेसं सोळसन्नं महाजनपदानं पहूतरत्तरतनानं इस्सरियाधिपच्चं रज्जं कारेय्य, सेय्यथीदं—अङ्गानं मगधानं कासीनं कोसलानं वज्जीनं मल्लानं चेतीनं वङ्गानं कुरूनं पञ्चालानं मच्छानं सूरसेनानं अस्सकानं अवन्तीनं गन्धारानं कम्बोजानं, [N.350, B.82] अट्ठङ्गसमन्नागतस्स उपोसथस्स एतं कलं नाग्घति सोळसिं। तं किस्स हेतु? कपणं, भिक्खवे, मानुसकं रज्जं दिब्बं सुखं उपनिधाय।

३. ''यानि, भिक्खवे, मानुसकानि पञ्ञासवस्सानि, चातुमहाराजिकानं देवानं एसो एको रत्तिन्दिवो। ताय रत्तिया तिंसरत्तियो मासो। तेन मासेन द्वादसमासियो संवच्छरो। तेन

---

**२. विस्तृत उपोसथसूत्र : : अष्टाङ्गयुक्त उपोसथ**

१. ''आठ अङ्गों से युक्त, भिक्षुओ! उपोसथ ...पूर्ववत्... महान् उत्तेजनाप्रद होता है। *(पूर्वसूत्र का अविकल विस्तार)*।

२. ''भिक्षुओ! यह उपोसथ कितना फलदायी, कितने माहात्म्य वाला तथा कितने विस्तारवाला है? जैसे भिक्षुओ! प्रभूत महार्घ रत्नों से युक्त सोलह जनपदों पर ऐश्वर्यभोग सहित राज्य भी; जैसे—१. अङ्ग, २. मगध, ३. काशी, ४. कौसल, ५. वज्जी, ६. मल्ल, ७. चेदि, ८. वङ्ग, ९. कुरु, १०. पञ्चाल, ११. मत्स्य, १२. सूरसेन, १३. अश्वक, १४. अवन्ति, १५. गान्धार, एवं १६. कम्बोज, उस अष्टाङ्ग उपोसथ के महत्त्व की सोलहवीं कला की समानता नहीं करता। वह किस कारण? वह इसलिये कि दिव्य सुख की तुलना में मानव सुख तो कृपण (अकिञ्चन) होता है।

३. ''भिक्षुओ! मनुष्यों के पचास वर्ष चातुर्महाराजिक देवों का एक रात दिन होता है। उस रात्रि से तीस रात-दिन का एक 'मास' होता है। उस मास से बारह मास का एक वर्ष होता है। उस

संवच्छरेन दिब्बानि पञ्च वस्ससतानि चातुमहाराजिकानं देवानं आयुप्पमाणं। ठानं खो पनेतं, भिक्खवे, विज्जति यं इधेकच्चो इत्थी वा पुरिसो वा अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसित्वा कायस्स भेदा परं मरणा चातुमहाराजिकानं देवानं सहब्यतं उपपज्जेय्य। इदं खो पनेतं, भिक्खवे, सन्धाय भासितं—'कपणं मानुसकं रज्जं दिब्बं सुखं उपनिधाय'।

४. ''यं, भिक्खवे, मानुसकं वस्ससतं, तावतिंसानं देवानं एसो एको रत्तिन्दिवो। ताय [R.253] रत्तिया तिंसरत्तियो मासो। तेन मासेन द्वादसमासियो संवच्छरो। तेन संवच्छरेन दिब्बं वस्ससहस्सं तावतिंसानं देवानं आयुप्पमाणं। ठानं खो पनेतं, भिक्खवे, विज्जति यं इधेकच्चो इत्थी वा पुरिसो वा अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसित्वा कायस्स भेदा परं मरणा तावतिंसानं देवानं सहब्यतं उपपज्जेय्य। इदं खो पनेतं, भिक्खवे, सन्धाय भासितं— 'कपणं मानुसकं रज्जं दिब्बं सुखं उपनिधाय'।

५. ''यानि, भिक्खवे, मानुसकानि द्वे वस्ससतानि, यामानं देवानं एसो एको रत्तिन्दिवो। ताय रत्तिया तिंसरत्तियो मासो। तेन मासेन द्वादसमासियो संवच्छरो। तेन संवच्छरेन दिब्बानि द्वे वस्ससहस्सानि यामानं देवानं आयुप्पमाणं। ठानं खो पनेतं, भिक्खवे, विज्जति यं इधेकच्चो इत्थी वा पुरिसो वा अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसित्वा कायस्स भेदा परं मरणा यामानं देवानं सहब्यतं उपपज्जेय्य। इदं खो पनेतं, भिक्खवे, सन्धाय भासितं— 'कपणं मानुसकं रज्जं दिब्बं सुखं उपनिधाय'।

६. ''यानि, भिक्खवे, मानुसकानि चत्तारि वस्ससतानि, तुसितानं देवानं एसो एको रत्तिन्दिवो। ताय रत्तिया तिंसरत्तियो मासो। तेन मासेन द्वादसमासियो संवच्छरो। तेन

---

वर्ष से **दिव्य पाँच सौ वर्ष उन चातुर्महाराजिक देवों का आयुःप्रमाण** होता है। भिक्षुओ! यह सम्भव हो सकता है कि कोई स्त्री या पुरुष अष्टाङ्गसमन्वित उपोसथ व्रत पूर्ण करता हुआ उसके पुण्यफल से, देहपात के बाद, मरणानन्तर, चातुर्महाराजिक देवों में उत्पन्न हो जाय। इसी अभिप्राय से कहा था—'अष्टाङ्गसमन्वित उपोसथ व्रत की अपेक्षा किसी मानव राज्य का ऐश्वर्य भोग अकिञ्चन (कृपण) है।'

४. (इसी प्रकार) ''भिक्षुओ! मनुष्यों के सौ वर्ष का काल त्रायस्त्रिंश देवों के एक रात दिन के बराबर होता है। उस रात्रिप्रमाण से तीस रात्रि का उनका एक 'मास' होता है। उस एक मास से बारह मास का एक 'संवत्सर' (वर्ष) होता है। ऐसे संवत्सरों को मिलाकर दिव्य **एक हजार वर्ष त्रायस्त्रिंश देवों का आयुःप्रमाण** होता है। भिक्षुओ! हो सकता है, कभी कोई स्त्री या पुरुष अष्टाङ्ग उपोसथव्रत के फलस्वरूप, इस देहपात के बाद, मरणानन्तर त्रायस्त्रिंश देवलोक में उत्पन्न हो जाय। इसी अभिप्राय से कहा था—...पूर्ववत्...।

५. ''भिक्षुओ! मनुष्यों के दो सौ वर्ष याम देवों के एक रात-दिन के बराबर होते हैं। उस रात्रि से तीस रात्रि का एक मास... बारह मास का एक संवत्सर... उस संवत्सर से **दिव्य दो हजार वर्ष याम देवों का आयुःप्रमाण** होता है। भिक्षुओ! कभी कोई स्त्री या पुरुष ...पूर्ववत्...।

६. ''भिक्षुओ! मनुष्यों के चार सौ वर्ष तुषित देवों का एक रात-दिन होता है। उस रात्रि से

संवच्छरेन दिब्बानि चत्तारि वस्ससहस्सानि तुसितानं देवानं आयुप्पमाणं। ठानं खो [B.83] पनेतं, भिक्खवे, विज्जति यं इधेकच्चो इत्थी वा पुरिसो वा अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसित्वा कायस्स भेदा परं मरणा तुसितानं देवानं सहब्यतं उपपज्जेय्य। इदं खो [N.351] पनेतं, भिक्खवे, सन्धाय भासितं—'कपणं मानुसकं रज्जं दिब्बं सुखं उपनिधाय'।

७. "यानि, भिक्खवे, मानुसकानि अट्ठ वस्ससतानि, निम्मानरतीनं देवानं एसो एको रत्तिन्दिवो। ताय रत्तिया तिंसरत्तियो मासो। तेन मासेन द्वादसमासियो संवच्छरो। तेन संवच्छरेन दिब्बानि अट्ठ वस्ससहस्सानि निम्मानरतीनं देवानं आयुप्पमाणं। ठानं खो पनेतं, भिक्खवे, विज्जति यं इधेकच्चो इत्थी वा पुरिसो वा अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसित्वा कायस्स भेदा परं मरणा निम्मानरतीनं देवानं सहब्यतं उपपज्जेय्य। इदं खो पनेतं, [R.254] भिक्खवे, सन्धाय भासितं—'कपणं मानुसकं रज्जं दिब्बं सुखं उपनिधाय'।

८. "यानि, भिक्खवे, मानुसकानि सोळस वस्ससतानि, परनिम्मितवसवत्तीनं देवानं एसो एको रत्तिन्दिवो। ताय रत्तिया तिंसरत्तियो मासो। तेन मासेन द्वादसमासियो संवच्छरो। तेन संवच्छरेन दिब्बानि सोळस वस्ससहस्सानि परनिम्मितवसवत्तीनं देवानं आयुप्पमाणं। ठानं खो पनेतं, भिक्खवे, विज्जति यं इधेकच्चो इत्थी वा पुरिसो वा अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसित्वा कायस्स भेदा परं मरणा परनिम्मितवसवत्तीनं देवानं सहब्यतं उपपज्जेय्य। इदं खो पनेतं, भिक्खवे, सन्धाय भासितं—'कपणं मानुसकं रज्जं दिब्बं सुखं उपनिधाया' ति।

"पाणं न हञ्ञे न चदिन्नमादिये, मुसा न भासे न च मज्जपो सिया।
अब्रह्मचरिया विरमेय्य मेथुना, रत्तिं न भुञ्जेय्य विकालभोजनं॥
"मालं न धारे न च गन्धमाचरे, मञ्चे छमायं व सयेथ सन्थते।

---

तीस रात्रि का एक मास... बारह मास का एक संवत्सर तथा उस संवत्सर से **चार हजार दिव्य वर्ष तुषित देवों का आयुःप्रमाण** होता है। हो सकता है, भिक्षुओ! कभी कोई स्त्री या पुरुष ...पूर्ववत्...।

७. "भिक्षुओ! मनुष्यों के आठ सौ वर्ष निर्माणरतिदेवों का एक रात-दिन होता है। उस रात्रि से तीस रात्रि का एक मास... बारह मासका एक संवत्सर तथा उस संवत्सर.. प्रमाण से **दिव्य आठ हजार वर्ष निर्माणरति देवों का आयुःप्रमाण** होता है। हो सकता है, भिक्षुओ! कभी कोई स्त्री या पुरुष ...पूर्ववत्...।

८. "भिक्षुओ! मनुष्यों के सोलह सौ वर्ष परनिर्मितवशवर्ती देवों का एक रात्रि-दिन होता है। उस रात्रि से तीस रात्रि का एक मास... बारह मास का एक संवत्सर तथा उस संवत्सर के प्रमाण से **दिव्य सोलह सौ वर्ष परनिर्मितवशवर्ती देवों का आयुःप्रमाण** होता है। हो सकता है, भिक्षुओ! कोई स्त्री या पुरुष ...पूर्ववत्...।

१. "प्राणिहिंसा नहीं करना चाहिये; २. चौरी नहीं करना चाहिये, ३. असत्यभाषण नहीं करना चाहिये, ४. मद्यपान नहीं करना चाहिये, ५. व्यभिचारपूर्वक मैथुन (परदारसेवन) से दूर रहना चाहिये, तथा ६. रात्रि में एवं विकाल भोजन नहीं करना चाहिये॥

एतं हि अट्ठङ्गिकमाहुपोसथं, बुद्धेन दुक्खन्तगुना पकासितं॥

[N.352] "चन्दो च सुरियो च उभो सुदस्सना, ओभासयं अनुपरियन्ति यावता।
[B.84] तमोनुदा ते पन अन्तलिक्खगा, नभे पभासन्ति दिसाविरोचना॥

[R.255] "एतस्मिं यं विज्जति अन्तरे धनं, मुत्ता मणि वेळुरियं च भद्दकं।
सिङ्गी सुवण्णं अथ वा पि कञ्चनं, यं जातरूपं हटकं ति वुच्चति॥

"अट्ठङ्गुपेतस्स उपोसथस्स, कलं पि ते नानुभवन्ति सोळसिं।
चन्दप्पभा तारगणा च सब्बे॥

"तस्मा हि नारी च नरो च सीलवा, अट्ठङ्गुपेतं उपवस्सुपोसथं।
पुञ्ञानि कत्वान सुखुद्रयानि, अनिन्दिता सग्गमुपेन्ति ठानं" ति॥ ●

३. **विसाखासुत्तं** : १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति पुब्बारामे मिगारमातुपासादे। अथ खो विसाखा मिगारमाता येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो विसाखं मिगारमातरं भगवा एतदवोच—"अट्ठङ्गसमन्नागतो खो, विसाखे, उपोसथो उपवुत्थो महप्फलो होति महानिसंसो महाजुतिको महाविप्फारो। कथं उपवुत्थो च, विसाखे, अट्ठङ्गसमन्नागतो

---

७. "माला धारण एवं गन्ध-विलेपन नहीं करना चाहिये। ८. काठ के तख्त या भूमि पर ही कुछ बिछा कर सोना चाहिये। यह अष्टाङ्गिक उपोसथ दुःखों के अन्त का उपाय बताने वाले भगवान् बुद्ध ने कहा है॥

"चन्द्रमा एवं सूर्य—दोनों ही देखने में अच्छे लगते हैं, वे अपने समीप के प्रदेश को सुप्रकाशित रखते हैं। परन्तु वे आकाश में स्थित हैं, अतः वे वहीं अधिक से अधिक चारों ओर अपना प्रकाश फैलाते हैं॥

इसी प्रकार इस पृथ्वी पर भी जो धन है; जैसे—मोती, मणिरत्न, वैदूर्य, शृङ्गी सुवर्ण, काञ्चन, हाटक आदि वह सब सुवर्ण ही कहलाता है॥

ये सब, तथा चन्द्रमा एवं तारागण का सम्मिलित प्रकाश भी इस अष्टाङ्गयुक्त उपोसथ के सोलहवें अंश की भी समानता नहीं करते॥

अतः सदाचारसम्पन्न स्त्री या पुरुष को अष्टाङ्गयुक्त उपोसथ व्रत का ही पालन करना चाहिये। तथा सुखवर्धक अन्य पुण्यकर्म भी करते रहना चाहिये। तब वे वहाँ (इस लोक में) समाज की प्रशंसा प्राप्त करते हुए देहपातानन्तर स्वर्ग या स्वर्गतुल्य दिव्य सुखसुविधासम्पन्न स्थान में पहुँच जाते हैं॥" ●

**३. विशाखासूत्र** : :

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्तीस्थित पूर्वाराम के मृगारमातृप्रासाद में साधनाहेतु विराजमान थे। तब कभी विशाखा मृगारमाता भगवान् के दर्शनहेतु वहाँ आयी। आकर, भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गयी। एक ओर बैठी हुई विशाखा मृगारमाता को भगवान् ने यह उपदेश किया—"विशाखे! अष्टाङ्गसमन्वित उपोसथ व्रत का पालन बहुत फलदायी एवं अतिशय माहात्म्य

उपोसथो महप्फलो होति महानिसंसो महाजुतिको महाविप्फारो? इध, विसाखे, अरियसावको इति पटिसञ्चिक्खति—'यावजीवं अरहन्तो पाणातिपातं पहाय पाणातिपाता पटिविरता निहितदण्डा निहितसत्था लज्जी दयापन्ना, सब्बपाणभूतहितानुकम्पिनो विहरन्ति। अहं पज्ज इमं च रत्तिं इमं च दिवसं पाणातिपातं पहाय पाणातिपाता पटिविरतो निहितदण्डो निहितसत्थो लज्जी दयापन्नो, सब्बपाणभूतहितानुकम्पी विहरामि। इमिनापङ्गेन [N.353] अरहतं अनुकरोमि, उपोसथो च मे उपवुत्थो भविस्सती' ति। इमिना पठमेन [B.85, R.256] अङ्गेन समन्नागतो होति ...पे०...। 'यावजीवं अरहन्तो उच्चासयनमहासयनं पहाय उच्चासयनमहासयना पटिविरता नीचसेय्यं कप्पेन्ति—मञ्चके वा तिणसन्थारके वा। अहं पज्ज इमं च रत्तिं इमं च दिवसं उच्चासयनमहासयनं पहाय उच्चासयनमहासयना पटिविरतो नीचसेय्यं कप्पेमि—मञ्चके वा तिणसन्थारके वा। इमिनापङ्गेन अरहत्तं अनुकरोमि, उपोसथो च मे उपवुत्थो भविस्सती' ति। इमिना अट्ठमेन अङ्गेन समन्नागतो होति। एवं उपवुत्थो खो, विसाखे, अट्ठङ्गसमन्नागतो उपोसथो महप्फलो होति महानिसंसो महाजुतिको महाविप्फारो।

२. ''कीवमहप्फलो होति कीवमहानिसंसो कीवमहाजुतिको कीवमहाविप्फारो? सेय्यथापि, विसाखे, यो इमेसं सोळसन्नं महाजनपदानं पहूतरत्तरतनानं इस्सरियाधिपच्चं रज्जं कारेय्य, सेय्यथीदं—अङ्गानं मगधानं कासीनं कोसलानं वज्जीनं मल्लानं चेतीनं वङ्गानं कुरूनं पञ्चालानं मच्छानं सूरसेनानं अस्सकानं अवन्तीनं गन्धारानं कम्बोजानं, अट्ठङ्गसमन्नागतस्स उपोसथस्स एतं कलं नाग्घति सोळसिं। तं किस्स हेतु? कपणं, विसाखे, मानुसकं रज्जं दिब्बं सुखं उपनिधाय।

३. ''यानि, विसाखे, मानुसकानि पञ्ञासवस्सानि, चातुमहाराजिकानं देवानं एसो एको रत्तिन्दिवो। ताय रत्तिया तिंसरत्तियो मासो। तेन मासेन द्वादसमासियो संवच्छरो। तेन संवच्छरेन दिब्बानि पञ्च वस्ससतानि चातुमहाराजिकानं देवानं आयुप्पमाणं। ठानं खो पनेतं, विसाखे, विज्जति यं इधेकच्चो इत्थी वा पुरिसो वा अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसित्वा कायस्स भेदा परं मरणा चातुमहाराजिकानं देवानं सहब्यतं उपपज्जेय्य। इदं खो [R.257] पनेतं, विसाखे, सन्धाय भासितं—'कपणं मानुसकं रज्जं दिब्बं सुखं उपनिधाय'।

४. ''यं, विसाखे, मानुसकं वस्ससतं, तावतिंसानं देवानं एसो एको रत्तिन्दिवो। ताय रत्तिया तिंसरत्तियो मासो। तेन मासेन द्वादसमासियो संवच्छरो। तेन संवच्छरेन

---

वाला, विशेष प्रकाशक एवं उत्तेजक होता है। वह कैसे? यहाँ, विशाखे! कोई आर्यश्रावक यों सोचता है—'ये अर्हत् जन जीवनपर्यन्त प्राणातिपात का त्याग कर ...पूर्ववत्...। इस प्रथम अङ्ग से युक्त होता है। ...पूर्ववत्... 'ये अर्हत् जन जीवनपर्यन्त उच्च शयन एवं महाशयन का त्याग कर ...पूर्ववत्... इस अष्टम अङ्ग से युक्त होता है। इस प्रकार, विशाखे! सम्पन्न हुआ यह उपोसथ व्रत बहुत फलदायी, अतिशय माहात्म्य युक्त एवं अधिक उत्तेजक होता है।

२. यह उपोसथ व्रत कितना फलदायी, कितने माहात्म्य एवं कितने विस्तार वाला होता है?

[N.354, B.86] वस्ससहस्सं तावतिंसानं देवानं आयुप्पमाणं। ठानं खो पनेतं, विसाखे, विज्जति यं इधेकच्चो इत्थी वा पुरिसो वा अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसित्वा कायस्स भेदा परं मरणा तावतिंसानं देवानं सहब्यतं उपपज्जेय्य। इदं खो पनेतं, विसाखे, सन्धाय भासितं— 'कपणं मानुसकं रज्जं दिब्बं सुखं उपनिधाय'

५. ''यानि, विसाखे, मानुसकानि द्वे वस्ससतानि ...पे०... चत्तारि वस्ससतानि ...पे०... अट्ठ वस्ससतानि ...पे०... सोळस वस्ससतानि परनिम्मितवसवत्तीनं देवानं एसो एको रत्तिन्दिवो। ताय रत्तिया तिंसरत्तियो मासो। तेन मासेन द्वादसमासियो संवच्छरो। तेन संवच्छरेन दिब्बानि सोळस वस्ससहस्सानि परनिम्मितवसवत्तीनं देवानं आयुप्पमाणं। ठानं खो पनेतं, विसाखे, विज्जति यं इधेकच्चो इत्थी वा पुरिसो वा अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसित्वा कायस्स भेदा परं मरणा परनिम्मितवसवत्तीनं देवानं सहब्यतं उपपज्जेय्य। इदं खो पनेतं, विसाखे, सन्धाय भासितं—'कपणं मानुसकं रज्जं दिब्बं सुखं उपनिधाया' ति।

''पाणं न हञ्ञे न चदिन्नमादिये, मुसा न भासे न च मज्जपो सिया।
अब्रह्मचरिया विरमेय्य मेथुना, रत्तिं न भुञ्जेय्य विकालभोजनं॥
[R.258] ''मालं न धारे न च गन्धमाचरे, मञ्चे छमायं व सयेथ सन्थते।
एतं हि अट्ठङ्गिकमाहुपोसथं, बुद्धेन दुक्खन्तगुना पकासितं॥
''चन्दो च सुरियो च उभो सुदस्सना, ओभासयं अनुपरियन्ति यावता।
तमोनुदा ते पन अन्तलिक्खगा, नभे पभासन्ति दिसाविरोचना॥
''एतस्मिं यं विज्जति अन्तरे धनं, मुत्ता मणि वेळुरियं च भद्दकं।
सिङ्गी सुवण्णं अथ वा पि कञ्चनं, यं जातरूपं हटकं ति वुच्चति॥
[N.355] ''अट्ठङ्गुपेतस्स उपोसथस्स, कलं पि ते नानुभवन्ति सोळसिं।
चन्दप्पभा तारगणा च सब्बे॥
[B.87] ''तस्मा हि नारी च नरो च सीलवा, अट्ठङ्गुपेतं उपवस्सुपोसथं।
पुञ्ञानि कत्वान सुखुद्रयानि, अनिन्दिता सग्गमुपेन्ति ठानं'' ति॥ ●

**४. वासेट्ठसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा वेसालियं विहरति महावने कूटागारसालायं। अथ खो वासेट्ठो उपासको येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो वासेट्ठं उपासकं भगवा एतदवोच— ''अट्ठङ्गसमन्नागतो, वासेट्ठ, उपोसथो उपवुत्थो महप्फलो होति ...पे०... अनिन्दिता सग्गमुपेन्ति ठानं'' ति।

---

जैसे इन सोलह महाजनपदों का विपुल ऐश्वर्याधिपत्य... पूर्वसूत्रवत्... ॥ *(विस्तृत उपोसथ सूत्रका अविकल विस्तार कर लें।)* ●

**४. वासिष्ठसूत्र : : अष्टाङ्गसम्पन्न उपोसथ सबके लिये हितकर**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) वैशाली के महावन की कूटागारशाला में साधनाहेतु

२. एवं वुत्ते वासेट्ठो उपासको भगवन्तं एतदवोच—"पिया मे, भन्ते, [R.259] ञातिसालोहिता अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसेय्युं, पियानं पि मे अस्स ञातिसालोहितानं दीघरत्तं हिताय सुखाय। सब्बे चे पि, भन्ते, खत्तिया अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसेय्युं, सब्बेसं पिस्स खत्तियानं दीघरत्तं हिताय सुखाय। सब्बे चे पि, भन्ते, ब्राह्मणा... पे०... वेस्सा... सुद्दा अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसेय्युं, सब्बेसं पिस्स सुद्दानं दीघरत्तं हिताय सुखाया" ति।

३. "एवमेतं, वासेट्ठ, एवमेतं, वासेट्ठ! सब्बे चे पि, वासेट्ठ, खत्तिया अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसेय्युं, सब्बेसं पिस्स खत्तियानं दीघरत्तं हिताय सुखाय। सब्बे चे पि, वासेट्ठ, ब्राह्मणा ...पे०... वेस्सा... सुद्दा अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसेय्युं, सब्बेसं पिस्स सुद्दानं दीघरत्तं हिताय सुखाय। सदेवको चे पि, वासेट्ठ, लोको समारको सब्रह्मको सस्समणब्राह्मणी पजा सदेवमनुस्सा अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसेय्युं, सदेवकस्स पिस्स लोकस्स [B.88] समारकस्स सब्रह्मकस्स सस्समणब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय दीघरत्तं हिताय [N.356] सुखाय। इमे चे पि, वासेट्ठ, महासाला अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसेय्युं, इमेसं पिस्स महासालानं दीघरत्तं हिताय सुखाय। सचे चेतेय्युं, को पन वादो मनुस्सभूतस्सा" ति!॥ ●

**५. बोज्झसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति जेतवने अनाथपिण्डिकस्स आरामे। अथ खो बोज्झा उपासिका येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा

---

विराजमान थे। तब कोई वासिष्ठ नामक उपासक भगवान् के पास आया, तथा भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गया। एक ओर बैठे वासिष्ठ उपासक से भगवान् ने यह कहा—"वासिष्ठ! उपोसथ व्रत का पालन अतीव फलदायी ...पूर्ववत्...। सुखसुविधासम्पन्न स्थान में पहुँच जाते हैं।

*(विस्तृत उपोसथ सूत्र का विस्तार कर लें।)*

२. भगवान् के ऐसा कहे जाने पर वासिष्ठ उपासक ने कहा—"भन्ते! मैं चाहता हूँ कि मेरे प्रिय ज्ञाति एवं रक्तसम्बद्ध जन उपोसथ व्रत का सतत पालन करें। यह शुभकृत्य मेरे उन प्रियजनों के लिये दीर्घकाल तक सुखकर, हितकर ही होगा। सभी क्षत्रिय ...पूर्ववत्... सभी ब्राह्मण... सभी वैश्य... सभी शूद्र... यह व्रत उन शूद्रों के लिये चिरकाल तक सुखकर एवं हितकर होगा।

३. "यही बात है, वासिष्ठ! यही बात है। यदि सभी क्षत्रिय इस उपोसथ व्रत का पालन करें तो यह उन सभी क्षत्रियों के लिये चिरकाल तक हितकर एवं सुखकर होगा। वासिष्ठ! सभी ब्राह्मण... सभी वैश्य... सभी शूद्र इस अष्टाङ्गयुक्त उपोसथ व्रत का पालन करें तो यह उनके लिये हितकर एवं सुखकर होगा। देवता, मार, ब्रह्मा आदि के सभी लोक, श्रमण ब्राह्मणी प्रजासहित सभी देवता एवं मनुष्य इस अष्टाङ्गयुक्त उपोसथव्रत का पालन करे तो यह उन सबके लिये दीर्घकाल तक हितकर सुखकर ही होगा। वासिष्ठ! यदि ये उच्चवर्ग के धनपति जन भी इस उपोसथव्रत का पालन करें तो यह उनके लिये भी चिरकाल तक हितकर एवं सुखकर ही होगा॥" ●

**५. बोध्यसूत्र : : अष्टाङ्गयुक्त उपोसथ**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के अनाथपिण्डिक श्रेष्ठी द्वारा निर्मापित जेतवन

भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नं खो बोज्झं उपासिकं भगवा एतदवोच—

२. ''अट्ठङ्गसमन्नागतो, बोज्झे, उपोसथो उपवुत्थो महप्फलो होति महानिसंसो [R.260] महाजुतिको महाविप्फारो। कथं उपवुत्थो च, बोज्झे, अट्ठङ्गसमन्नागतो उपोसथो महप्फलो होति महानिसंसो महाजुतिको महाविप्फारो? इध, बोज्झे, अरियसावको इति पटिसञ्चिक्खति—'यावजीवं अरहन्तो पाणातिपातं पहाय पाणातिपाता पटिविरता निहित-दण्डा निहितसत्था लज्जी दयापन्ना, सब्बपाणभूतहितानुकम्पिनो विहरन्ति। अहं पज्ज इमं च रत्तिं इमं च दिवसं पाणातिपातं पहाय पाणातिपाता पटिविरतो निहितदण्डो निहितसत्थो लज्जी दयापन्नो, सब्बपाणभूतहितानुकम्पी विहरामि। इमिनापङ्गेन अरहतं अनुकरोमि, उपोसथो च मे उपवुत्थो भविस्सती' ति। इमिना पठमेन अङ्गेन समन्नागतो होति ...पे०...। 'यावजीवं अरहन्तो उच्चासयनमहासयनं पहाय उच्चासयनमहासयना पटिविरता नीचसेय्यं कप्पेन्ति—मञ्चके वा तिणसन्थारके वा। अहं पज्ज इमं च रत्तिं इमं च दिवसं उच्चासयन-महासयनं पहाय उच्चासयनमहासयना पटिविरतो नीचसेय्यं कप्पेमि—मञ्चके वा तिणसन्थारके वा। इमिनापङ्गेन अरहतं अनुकरोमि, उपोसथो च मे उपवुत्थो भविस्सती' ति। इमिना अट्ठमेन अङ्गेन समन्नागतो होति। एवं उपवुत्थो, खो, बोज्झे, अट्ठङ्गसमन्नागतो उपोसथो महप्फलो होति महानिसंसो महाजुतिको महाविप्फारो।

[R.89] ३. ''कीवमहप्फलो होति कीवमहानिसंसो कीवमहाजुतिको कीवमहाविप्फारो? सेय्यथापि, बोज्झे, यो इमेसं सोळसन्नं महाजनपदानं पहूतरत्तरतनानं इस्सरियाधिपच्चं रज्जं [N.357] कारेय्य, सेय्यथीदं—अङ्गानं मगधानं कासीनं कोसलानं वज्जीनं मल्लानं चेतीनं [R.261] वङ्गानं कुरूनं पञ्चालानं मच्छानं सूरसेनानं अस्सकानं अवन्तीनं गन्धारानं कम्बोजानं, अट्ठङ्गसमन्नागतस्स उपोसथस्स एतं कलं नाग्घति सोळसिं। तं किस्स हेतु? कपणं, बोज्झे, मानुसकं रज्जं दिब्बं सुखं उपनिधाय।

४. ''यानि, बोज्झे, मानुसकानि पञ्ञासवस्सानि, चातुमहाराजिकानं देवानं एसो एको रत्तिन्दिवो। ताय रत्तिया तिंसरत्तियो मासो। तेन मासेन द्वादसमासियो संवच्छरो। तेन संवच्छरेन दिब्बानि पञ्च वस्ससतानि चातुमहाराजिकानं देवानं आयुप्पमाणं। ठानं खो पनेतं, बोज्झे, विज्जति यं इधेकच्चो इत्थी वा पुरिसो वा अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसित्वा

---

महाविहार में साधनाहेतु विराजमान थे। तब बोध्या नामक उपासिका भगवान् के सम्मुख आकर उनको प्रणाम कर एक ओर बैठ गयी। एक ओर बैठी उस बोध्या उपासिका को भगवान् ने यह उपदेश किया—

''बोध्ये! अष्टाङ्गसमन्वित उपोसथ व्रत का पालन किये जाने पर वह अतिशय फलदायी होता है, विशेष माहात्म्य और अत्यधिक विस्तार एवं आलोक वाला होता है! ...पूर्ववत्... ॥

*(पूर्ववर्णित विस्तृत उपोसथसूत्र का अविकल विस्तार कर लें।)*

●

कायस्स भेदा परं मरणा चातुमहाराजिकानं देवानं सहब्यतं उपपज्जेय्य। इदं खो पनेतं, बोज्झे, सन्धाय भासितं—'कपणं मानुसकं रज्जं दिब्बं सुखं उपनिधाय'।

५. ''यं, बोज्झे, मानुसकं वस्सतं ...पे०... यानि, बोज्झे, मानुसकानि द्वे वस्ससतानि ...पे०... चत्तारि वस्ससतानि ...पे०... अट्ठ वस्ससतानि ...पे०... सोळस वस्ससतानि परनिम्मितवसवत्तीनं देवानं एसो एको रत्तिन्दिवो। ताय रत्तिया तिंसरत्तियो मासो। तेन मासेन द्वादसमासियो संवच्छरो। ताय रत्तिया तिंसरत्तियो मासो। तेन मासेन द्वादसमासियो संवच्छरो। तेन संवच्छरेन दिब्बानि सोळस वस्ससहस्सानि परनिम्मितवसवत्तीनं देवानं आयुप्पमाणं। ठानं खो पनेतं, बोज्झे, विज्जति यं इधेकच्चो इत्थी वा पुरिसो वा अट्ठङ्गसमन्नागतं उपोसथं उपवसित्वा कायस्स भेदा परं मरणा परनिम्मितवसवत्तीनं देवानं सहब्यतं उपपज्जेय्य। इदं खो पनेतं, बोज्झे, सन्धाय भासितं—'कपणं मानुसकं रज्जं दिब्बं सुखं उपनिधाया' ति।

''पाणं न हञ्ञे न चदिन्नमादिये, मुसा न भासे न च मज्जपो सिया।
अब्रह्मचरिया विरमेय्य मेथुना, रत्तिं न भुञ्जेय्य विकालभोजनं॥ [R.262]
''मालं न धारे न च गन्धमाचरे, मञ्चे छमायं व सयेथ सन्थते। [B.90]
एतं हि अट्ठङ्गिकमाहुपोसथं, बुद्धेन दुक्खन्तगुना पकासितं॥
''चन्दो च सुरियो च उभो सुदस्सना, ओभासयं अनुपरियन्ति यावता। [N.358]
तमोनुदा ते पन अन्तलिक्खगा, नभे पभासन्ति दिसाविरोचना॥
''एतस्मिं यं विज्जति अन्तरे धनं, मुत्ता मणी वेळुरियं च भद्दकं।
सिङ्गी सुवण्णं अथ वा पि कञ्चनं, यं जातरूपं हटकं ति वुच्चति॥
''अट्ठङ्गुपेतस्स उपोसथस्स, कलं पि ते नानुभवन्ति सोळसिं।
चन्दप्पभा तारगणा च सब्बे॥
''तस्मा हि नारी च नरो च सीलवा, अट्ठङ्गुपेतं उपवस्सुपोसथं।
पुञ्ञानि कत्वान सुखुद्रयानि, अनिन्दिता सग्गमुपेन्ति ठानं'' ति॥ ●

**६. अनुरुद्धसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा कोसम्बियं विहरति घोसितारामे। तेन खो पन समयेन आयस्मा अनुरुद्धो दिवाविहारं गतो होति पटिसल्लीनो। अथ खो सम्बहुला मनापकायिका देवता येनायस्मा अनुरुद्धो तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा आयस्मन्तं अनुरुद्धं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठंसु। एकमन्तं ठिता खो ता देवता आयस्मन्तं अनुरुद्धं एतदवोचुं—

---

**६. अनुरुद्धसूत्र** : :

१. एक समय भगवान् बुद्ध कौशाम्बी के घोषिताराम में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय आयुष्मान् अनुरुद्ध दिवाविहार (दिन का विश्राम) करते हुए एकान्तसाधना में लीन थे। तब बहुत से मनापकायिक (मनोनुकूल शरीर धारण करने वाले) देवता आयुष्मान् अनुरुद्ध के पास आये। आकर आयुष्मान् अनुरुद्ध को प्रणाम कर एक ओर खड़े हो गये। एक ओर खड़े हुए वे देवता

[R.263] ''मयं, भन्ते अनुरुद्ध, मनापकायिका नाम देवता तीसु ठानेसु इस्सरियं कारेम वसं वत्तेम। मयं, भन्ते अनुरुद्ध, यादिसकं वण्णं आकङ्खाम तादिसकं वण्णं ठानसो पटिलभाम; [B.91] यादिसकं सरं आकङ्खाम तादिसकं सरं ठानसो पटिलभाम; यादिसकं सुखं आकङ्खाम तादिसकं सुखं ठानसो पटिलभाम—मयं, भन्ते अनुरुद्ध, मनापकायिका नाम देवता इमेसु तीसु ठानेसु इस्सरियं कारेम वसं वत्तेमा'' ति।

२. अथ खो आयस्मतो अनुरुद्धस्स एतदहोसि—''अहो वतिमा देवता सब्बा व नीला अस्सु नीलवण्णा नीलवत्था नीलालङ्कारा'' ति। अथ खो ता देवता आयस्मतो [N.359] अनुरुद्धस्स चित्तमञ्ञाय सब्बा व नीला अहेसुं नीलवण्णा नीलवत्था नीलालङ्कारा।

३. अथ खो आयस्मतो अनुरुद्धस्स एतदहोसि—''अहो वतिमा देवता सब्बा व पीता अस्सु ...पे०... सब्बा व लोहितका अस्सु... सब्बा व ओदाता अस्सु ओदातवण्णा ओदातवत्था ओदातालङ्कारा'' ति। अथ खो ता देवता आयस्मतो अनुरुद्धस्स चित्तमञ्ञाय सब्बा व ओदाता अहेसुं ओदातवण्णा ओदातवत्था ओदातालङ्कारा।

४. अथ खो ता देवता एका च गायि एका च नच्चि एका च अच्छरं वादेसि। सेय्यथापि नाम पञ्चङ्गिकस्स तूरियस्स सुविनीतस्स सुप्पटिपताळितस्स कुसलेहि सुसमन्नाहतस्स सद्दो होति वग्गु च रजनीयो च कमनीयो च पेमनीयो च मदनीयो च; [R.264] एवमेव तासं देवतानं अलङ्कारानं सद्दो होति वग्गु च रजनीयो च कमनीयो च पेमनीयो च मदनीयो च। अथ खो आयस्मा अनुरुद्धो इन्द्रियानि ओक्खिपि।

५. अथ खो ता देवता ''न खव्यो अनुरुद्धो सादियती'' ति तत्थेवन्तरधायिंसु। अथ

---

आयुष्मान् अनुरुद्ध से यों बोले—''भन्ते अनुरुद्ध! हम मनापकायिक देवता इन तीन बातों पर अपना अधिकार रखते हैं—१. हम जब और जैसा जाहे अपना रूप बदल सकते हैं, २. हम जब और जैसा चाहे अपना स्वर परिवर्तित कर सकते हैं; तथा ३. हम जब और जैसा चाहें, अपने लिये सुखोपभोग एकत्र कर सकते हैं। इस प्रकार, भन्ते! हम मनापकायिक देवता इन तीन बातों पर अपना अधिकार रखते हैं, इनको अपने वश में रखते हैं।''

२. तब आयुष्मान् अनुरुद्ध को यह विचार हुआ—''अच्छा होता कि ये सब देवता नीले हो जाते, इनका वर्ण तथा अलङ्कार भी नीले हो जाते।'' तब वे सभी देवता आयुष्मान् अनुरुद्ध के चित्त का भाव जानकर स्वयं ही नील, नीलवर्ण एवं नील अलङ्कार वाले हो गये।

३. तब आयुष्मान् अनुरुद्ध को यह विचार हुआ—''अच्छा होता कि ये सब देवता पीतवर्ण वाले हो जायँ... रक्तवर्ण वाले हो जायँ... सभी श्वेतवर्ण वाले हो जायँ, श्वेत वस्त्र एवं श्वेत अलङ्कार वाले हो जायँ।'' तब वे देवता आयुष्मान् अनुरुद्ध के मन के भाव जानकर श्वेतवर्ण, श्वेत वस्त्र एवं श्वेत अलङ्कार वाले हो गये।

४. तब उन देवताओं में से एक गाने लगा, एक नाचने लगा तथा एक चुटकी (या ताली) बजाने लगा। जैसे कुशल लोगों द्वारा भली प्रकार से बजाये गये पञ्चाङ्गिक वाद्यों से कर्णमधुर, उन्मादक, प्रिय, मनोमुग्धकारी स्वर निकलता है; इसी प्रकार उन देवताओं के अलङ्कारों से वैसा ही

खो आयस्मा अनुरुद्धो सायन्हसमयं पटिसल्लाना वुट्ठितो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा अनुरुद्धो भगवन्तं एतदवोच—

६. ''इधाहं, भन्ते, दिवाविहारं गतो होमि पटिसल्लीनो। अथ खो, भन्ते, सम्बहुला मनापकायिका देवता येनाहं तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा मं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठंसु। एकमन्तं ठिता खो, भन्ते, ता देवता मं एतदवोचुं—'मयं, भन्ते अनुरुद्ध, [B.92] मनापकायिका नाम देवता तीसु ठानेसु इस्सरियं कारेम वसं वत्तेम। मयं, भन्ते अनुरुद्ध, यादिसकं वण्णं आकङ्खाम तादिसकं वण्णं ठानसो पटिलभाम; यादिसकं सरं आकङ्खाम तादिसकं सरं ठानसो पटिलभाम; यादिसकं सुखं आकङ्खाम तादिसकं सुखं ठानसो पटिलभाम—मयं, भन्ते अनुरुद्ध, मनापकायिका नाम देवता इमेसु तीसु ठानेसु इस्सरियं कारेम वसं वत्तेमा' ति। तस्स मय्हं, भन्ते, एतदहोसि—'अहो वतिमा देवता सब्बा [N.360] व नीला अस्सु नीलवण्णा नीलवत्था नीलालङ्कारा'। अथ खो, भन्ते, ता देवता मम चित्तमञ्ञाय सब्बा व नीला अहेसुं नीलवण्णा नीलवत्था नीलालङ्कारा।

७. ''तस्स मय्हं, भन्ते, एतदहोसि—'अहो वतिमा देवता सब्बा व पीता अस्सु ...पे०... सब्बा व लोहितका अस्सु ...पे०... सब्बा व ओदाता अस्सु ओदातवण्णा [R.265] ओदातवत्था ओदातालङ्कारा' ति। अथ खो, भन्ते, ता देवता मम चित्तमञ्ञाय सब्बा व ओदाता अहेसुं ओदातवण्णा ओदातवत्था ओदातालङ्कारा।

८. ''अथ खो, भन्ते, ता देवता एका च गायि एका च नच्चि एका च अच्छरं वादेसि। सेय्यथापि नाम पञ्चङ्गिकस्स तूरियस्स सुविनीतस्स सुप्पटिपताळितस्स कुसलेहि सुसमन्नाहतस्स सद्दो होति वग्गु च रजनीयो च कमनीयो च पेमनीयो च मदनीयो च; एवमेव तासं देवतानं अलङ्कारानं सद्दो होति वग्गु च रजनीयो च कमनीयो च पेमनीयो च मदनीयो च। अथ ख्वाहं, भन्ते, इन्द्रियानि ओक्खिपिं।

९. ''अथ खो, भन्ते, ता देवता 'न ख्वय्यो अनुरुद्धो सादियती' ति तत्थे-

---

मनोमोहक एवं श्रुतिमधुर शब्द निकलने लगा। तब आयुष्मान् अनुरुद्ध ने अपनी सभी इन्द्रियों को नीचा (संयत) कर लिया।

५. तब वे देवता—''आयुष्मान् अनुरुद्ध को यह सब स्वीकार नहीं है''—यह जानकर वहीं अन्तर्हित हो गये। तब आयुष्मान् अनुरुद्ध एकान्तसाधना से उठकर भगवान् के सम्मुख आये, तथा उनको प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठकर आयुष्मान् अनुरुद्ध ने भगवान् से यह निवेदन किया—

६-९. ''यहाँ, भन्ते! मैं दैनिक एकान्त साधना में बैठा था। उस समय बहुत से मनापकायिक देवता ...पूर्ववत्... 'आयुष्मान् अनुरुद्ध को यह सब स्वीकार नहीं है'—यह सोचकर वहीं अन्तर्हित हो गये। भन्ते! किन धर्मों समन्वित कोई स्त्री मनापकायिक देवताओं के साथ उत्पन्न होती है?''

वन्तरधायिंसु। कतिहि नु खो, भन्ते, धम्मेहि समन्नागतो मातुगामो कायस्स भेदा परं मरणा मनापकायिकानं देवानं सहब्यतं उपपज्जती'' ति?

१०. ''अट्ठहि खो, अनुरुद्ध, धम्मेहि समन्नागतो मातुगामो कायस्स भेदा परं मरणा मनापकायिकानं देवानं सहब्यतं उपपज्जति। कतमेहि अट्ठहि? इध, अनुरुद्ध, मातुगामो [B.93] यस्स मातापितरो भत्तुनो देन्ति अत्थकामा हितेसिनो अनुकम्पका अनुकम्पं उपादाय तस्स होति पुब्बुट्ठायिनी पच्छानिपातिनी किङ्कारपटिस्साविनी मनापचारिनी पियवादिनी।

११. ''ये ते भत्तु गरुनो होन्ति—माता ति वा पिता ति वा समणब्राह्मणा ति वा—ते सक्करोति गरुं करोति मानेति पूजेति अब्भागते च आसनोदकेन पटिपूजेति।

१२. ''ये ते भत्तु अब्भन्तरा कम्मन्ता—उण्णा ति वा कप्पासा ति वा — तत्थ दक्खा होति अनलसा तत्रुपायास वीमंसाय समन्नागता अलं कातुं अलं संविधातुं।

[N.361, R.266] १३. ''यो सो भत्तु अब्भन्तरो अन्तोजनो—दासा ति वा पेस्सा ति वा कम्मकरा ति वा — तेसं कतं च कततो जानाति अकतं च अकततो जानाति, गिलानकानं च बलाबलं जानाति खादनीयं भोजनीयं चस्स पच्चंसेन संविभजति।

१४. ''यं भत्ता आहरति धनं वा धञ्ञं वा जातरूपं वा तं आरक्खेन गुत्तिया सम्पादेति, तत्थ च होति अधुत्ती अथेनी असोण्डी अविनासिका।

---

१०. ''अनुरुद्ध! आठ धर्मों से युक्त कोई स्त्री, इस देहपात के बाद, मरणानन्तर मनापकायिक (चित्ताकर्षक शरीर वाले) देवों के साथ उत्पन्न हो सकती है। किन आठ धर्मों से? यहाँ, अनुरुद्ध! कोई स्त्री, जिसे उसके माता-पिता उसका हित सोचते हुए, उसपर अनुकम्पा कर उसके पति को सौंप देते हैं, वह (पतिगृह में जाकर) उससे पहले उठती है, बाद में सोती है, 'क्या आज्ञा है?'—इस भावना से उसकी ओर कान लगाये रहती है, उसके अनुकूल आचरण करती है, सदा प्रिय बोलती है। (१)

११. ''जो उसके पति के गुरुस्थानीय हैं; जैसे—माता, पिता, श्रमण, ब्राह्मण—उन सबका सत्कार करती है, उनका गौरव मानती है, सम्मान एवं पूजा करती है तथा किसी अभ्यागत (अतिथि) के आने पर उसका अर्घ्य एवं आसनदान से स्वागत करती है। (२)

१२. ''जो उसके पति के आभ्यन्तर कर्म हैं, फिर भले ही वे कपास सम्बन्धी हों, या ऊन सम्बन्धी; उन सबको पूर्ण करने में कुशल होती है, उनको पूर्ण करने में आलस्य नहीं करती, उनकी पूर्णता के लिये विचार करती हुई वह उनके पूर्ण करने में समर्थ होती है। (३)

१३. ''जो उसके पति के घरेलू नौकर चाकर हैं, दूत हैं, उन सबके विषय में, वे जो करते हैं या नहीं करते हैं—इस विषय में सब कुछ जानती रहती है। उनके रोगी होने पर, उनके कार्य का बलाबल जानती रहती है तथा उनको पूर्ण भोजन, वस्त्र आदि मिले—इसका सदा ध्यान रखती है। (४)

१४. ''उसका पति बाहर से जो कुछ भी धन या धान्य, सोना या चाँदी लाता है उसको सुरक्षित एवं सुव्यवस्थित रखती है। उसकी रक्षा में कोई धूर्तता, चौरी या चालबाजी नहीं करती, न उसको नष्ट होने देती है। (५)

१५. ''उपासिका खो पन होति बुद्धं सरणं गता धम्मं सरणं गता सङ्घं सरणं गता।

१६. ''सीलवती खो पन होति — पाणातिपाता पटिविरता, अदिन्नादाना पटिविरता, कामेसुमिच्छाचारा पटिविरता, मुसावादा पटिविरता, सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना पटिविरता।

१७. ''चागवती खो पन होति। विगतमलमच्छेरेन चेतसा अगारं अज्झावसति मुत्तचागा पयतपाणिनी वोस्सग्गरता याचयोगा दानसंविभागरता।

१८. ''इमेहि खो, अनुरुद्ध, अट्ठहि धम्मेहि समन्नागतो मातुगामो कायस्स भेदा परं मरणा मनापकायिकानं देवानं सहब्यतं उपपज्जती ति।

''यो नं भरति सब्बदा, निच्चं आतापि उस्सुको। [B.94]
तं सब्बकामदं पोसं, भत्तारं नातिमञ्ञति॥
''न चा पि सोत्थि भत्तारं, इस्सावादेन रोसये।
भत्तु च गरुनो सब्बे, पटिपूजेति पण्डिता॥
''उट्ठाहिका अनलसा, सङ्गहीतपरिज्जना।
भत्तु मनापं चरति, सम्भतं अनुरक्खति॥
''या एवं वत्तति नारी, भत्तु छन्दवसानुगा।
मनापा नाम ते देवा, यत्थ सा उपपज्जती'' ति॥ ●

---

१५. ''इन सब कुशल कर्मों के साथ साथ वह बुद्ध, धर्म एवं सङ्घ की शरणागत रहती है। (६)

१६. ''साथ ही, वह पञ्चशील का पालन करती है; जैसे—१. प्राणातिपात, २. चौरी, ३. व्यभिचार, ४. असत्यभाषण एवं ५. मद्यपान से दूर रहती है। (७)

१७. ''इन सब गुणों के साथ वह त्यागभावना रखती है। वह निरभिमान एवं निर्विकार भाव से गृहकार्य में तत्पर रहती है, त्यागपूर्वक मुक्तहस्त से दान कर याचकों को सन्तुष्ट रखती है। (८)

१८. ''अनुरुद्ध! इन आठ धर्मों से युक्त कोई भी स्त्री, देहपात के बाद, मरणानन्तर मनापकायिक देवों में जन्म लेती है।

''जो सतत श्रम एवं उत्सुकता के साथ इसका भरण-पोषण करता हुआ इसकी सभी कामनाओं को पूर्ण करता रहता है, ऐसे पति का वह स्त्री कभी अपमान नहीं करती॥

''ऐसे मङ्गलकामी पति से ईर्ष्यापूर्ण व्यवहार कर उसको कभी रुष्ट नहीं करती। तथा पति के पूज्य सभी विद्वज्जनों का वह भी सम्मान करती है॥

''पति से पूर्व सोकर उठने वाली, आलस्यविहीन एवं परिवार के सदस्यों को एक साथ मेल जोड़ से रखती हुई वह पति के अनुकूल आचरण करती है तथा घर की सम्पत्ति की रक्षा करती रहती है॥

''जो नारी ऐसा आचरण करती हुई, पति के अनुकूल आचरण करती है, ऐसी नारी ही मनापकायिक देवों में उत्पन्न होती है॥ ●

[N.362, R.267] **७. दुतियविसाखासुत्तं** : १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति पुब्बारामे मिगारमातुपासादे। अथ खो विसाखा मिगारमाता ...पे०... एकमन्तं निसिन्नं खो विसाखं मिगारमातरं भगवा एतदवोच—

२. ''अट्ठहि खो, विसाखे, धम्मेहि समन्नागतो मातुगामो कायस्स भेदा परं मरणा मनापकायिकानं देवानं सहब्यतं उपपज्जति। कतमेहि अट्ठहि ? इध, विसाखे, मातुगामो यस्स मातापितरो भत्तुनो देन्ति अत्थकामा हितेसिनो अनुकम्पका अनुकम्पं उपादाय तस्स होति पुब्बुट्ठायिनी पच्छानिपातिनी किङ्कारपटिस्साविनी मनापचारिनी पियवादिनी ...पे०... ।

३. ''चागवती खो पन होति। विगतमलमच्छेरेन चेतसा अगारं अज्झावसति मुत्तचागा पयतपाणिनी वोस्सग्गरता याचयोगा दानसंविभागरता।

४. इमेहि खो, विसाखे, अट्ठहि धम्मेहि समन्नागतो मातुगामो कायस्स भेदा परं मरणा मनापकायिकानं देवानं सहब्यतं उपपज्जती ति।

''यो नं भरति सब्बदा, निच्चं आतापि उस्सुको।
तं सब्बकामदं पोसं, भत्तारं नातिमञ्ञति॥
[B.95] ''न चा पि सोत्थि भत्तारं, इस्सावादेन रोसये।
भत्तु च गरुनो सब्बे, पटिपूजेति पण्डिता॥
''उट्ठाहिका अनलसा, सङ्गहीतपरिज्जना।
भत्तु मनापं चरति, सम्भतं अनुरक्खति॥
''या एवं वत्तति नारी, भत्तु छन्दवसानुगा।
मनापा नाम ते देवा, यत्थ सा उपपज्जती'' ति॥ ●

[R.268] **८. नकुलमातासुत्तं** : १. एकं समयं भगवा भग्गेसु विहरति सुंसुमारगिरे भेसकळावने मिगदाये। अथ खो नकुलमाता गहपतानी येन भगवा तेनुपसङ्कमि; [N.363] उपसङ्कमित्वा ...पे०... एकमन्तं निसिन्नं खो नकुलमातरं गहपतानिं भगवा एतदवोच—

---

**७. द्वितीय विशाखासूत्र : : आठ धर्मों से युक्त नारी की मनापकायिक देवों में उत्पत्ति**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्तीस्थित पूर्वाराम विहार के मृगारमातृप्रासाद में साधनाहेतु विराजमान थे। तब विशाखा मृगारमाता ...पूर्ववत्... भगवान् यों बोले—

२. ''आठ धर्मों से युक्त, विशाखे! कोई स्त्री, देहपात के बाद मरणानन्तर, मनापकायिक देवों के लोक में उत्पन्न होती है। कौन से आठ धर्मों से ? ...पूर्ववत्... ऐसी नारी मनापकायिक देवलोक में उत्पन्न होती है॥'' ●

*(पूर्ववर्णित अनुरुद्धसूत्र के समान ही इस सूत्र का भी विस्तार कर लें।)*

**८. नकुलमातासूत्र : : आठ धर्मों से युक्त नारी की मनापकायिक देवलोक में उत्पत्ति**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) भर्ग प्रदेश स्थित सुंसुमारगिरि (चुनार) के भेषकड़ा मृगदाव

२. "अट्ठहि खो, नकुलमाते, धम्मेहि समन्नागतो मातुगामो कायस्स भेदा परं मरणा मनापकायिकानं देवानं सहब्यतं उपपज्जति। कतमेहि अट्ठहि? इध, नकुलमाते, मातुगामो यस्स मातापितरो भत्तुनो देन्ति अत्थकामा हितेसिनो अनुकम्पका अनुकम्पं उपादाय तस्स होति पुब्बुट्ठायिनी पच्छानिपातिनी किङ्कारपटिस्साविनी मनापचारिनी पियवादिनी।

३. "ये ते भत्तु गरुनो होन्ति—माता ति वा पिता ति वा समणब्राह्मणा ति वा—ते सक्करोति गरुं करोति मानेति पूजेति, अब्भागते च आसनोदकेन पटिपूजेति।

४. "ये ते भत्तु अब्भन्तरा कम्मन्ता—उण्णा ति वा कप्पासा ति वा—तत्थ दक्खा होति अनलसा तत्रुपायाय वीमंसाय समन्नागता अलं कातुं अलं संविधातुं।

५. "यो सो भत्तु अब्भन्तरो अन्तोजनो—दासा ति वा पेस्सा ति वा कम्मकरा ति वा—तेसं कतं च कततो जानाति अकतं च अकततो जानाति, गिलानकानं च बलाबलं जानाति खादनीयं भोजनीयं चस्स पच्चंसेन संविभजति।

६. "यं भत्ता आहरति धनं वा धञ्ञं वा रजतं वा जातरूपं वा तं आरक्खेन [B.96] गुत्तिया सम्पादेति, तत्थ च होति अधुत्ती अथेनी असोण्डी अविनासिनी।

७. "उपासिका खो पन होति बुद्धं सरणं गता धम्मं सरणं गता सङ्घं सरणं गता।

८. "सीलवती खो पन होति—पाणातिपाता पटिविरता ...पे०... सुरामेरय-मज्जपमादट्ठाना पटिविरता।

९. "चागवती खो पन होति। विगतमलमच्छेरेन चेतसा अगारं [R.269] अज्झावसति मुत्तचागा पयतपाणिनी वोस्सग्गरता याचयोगा दान संविभागरता।

१०. "इमेहि खो, नकुलमाते, अट्ठहि धम्मेहि समन्नागतो मातुगामो कायस्स भेदा परं मरणा मनापकायिकानं देवानं सहब्यतं उपपज्जती ति।

"यो नं भरति सब्बदा, निच्चं आतापि उस्सुको। [N.364]
तं सब्बकामदं पोसं, भत्तारं नातिमञ्ञति॥
"न चा पि सोत्थि भत्तारं, इस्सावादेन रोसये।
भत्तु च गरुनो सब्बे, पटिपूजेति पण्डिता॥
"उट्ठाहिका अनलसा, सङ्गहीतपरिज्जना।
भत्तु मनापं चरति, सम्भतं अनुरक्खति।
"या एवं वत्तति नारी, भत्तु छन्दवसानुगा।
मनापा नाम ते देवा, यत्थ सा उपपज्जती" ति॥ ●

---

में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय नकुलमाता गृहपत्नी भगवान् के सम्मुख आयी... भगवान् यों बोले—...पूर्ववत्... ऐसी नारी मनायकायिक देवलोक में उत्पन्न होती है॥" ●

*(पूर्ववर्णित अनुरुद्धसूत्र के समान ही इस सूत्र का भी विस्तार कर लें।)*

**९. पठमइधलोकिकसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति पुब्बारामे मिगारमातुपासादे। अथ खो विसाखा मिगारमाता येन भगवा तेनुपसङ्कमि ...पे०... एकमन्तं निसिन्नं खो विसाखं मिगारमातरं भगवा एतदवोच—

[B.97] २. "चतूहि खो, विसाखे, धम्मेहि समन्नागतो मातुगामो इधलोकविजयाय पटिपन्नो होति, अयं लोको आरद्धो होति। कतमेहि चतूहि? इध, विसाखे, मातुगामो सुसंविहितकम्मन्तो होति, सङ्गहितपरिजनो, भत्तु मनापं चरति, सम्भतं अनुरक्खति।

३. "कथं च, विसाखे, मातुगामो सुसंविहितकम्मन्तो होति? इध, विसाखे, मातुगामो ये ते भत्तु अब्भन्तरा कम्मन्ता—उण्णा ति वा कप्पासा ति वा — तत्थ दक्खा होति अनलसा तत्रुपायाय वीमंसाय समन्नागता अलं कातुं अलं संविधातुं। एवं खो, [R.270] विसाखे, मातुगामो सुसंविहितकम्मन्तो होति।

४. "कथं च, विसाखे, मातुगामो सङ्गहितपरिजनो होति? इध, विसाखे, मातुगामो यो सो भत्तु अब्भन्तरो अन्तोजनो—दासा ति वा पेस्सा ति वा कम्मकरा ति वा—तेसं कतं च कततो जानाति अकतं च अकततो जानाति, गिलानकानं च बलाबलं जानाति खादनीयं भोजनीयं चस्स पच्चंसेन संविभजति। एवं खो, विसाखे, मातुगामो सङ्गहितपरिजनो होति।

[N.365] ५. "कथं च, विसाखे, मातुगामो भत्तु मनापं चरति? इध, विसाखे, मातुगामो यं भत्तु अमनापसङ्खातं तं जीवितहेतु पि न अज्झाचरति। एवं खो, विसाखे, मातुगामो भत्तु मनापं चरति।

---

**९. प्रथम ऐहलौकिकसूत्र : : आठ धर्मों से युक्त नारी दोनों लोकों पर विजयी**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) श्रावस्ती के पूर्वाराम स्थित मृगारमातृप्रासाद में साधनाहेतु विराजमान थे। तब विशाखा मृगारमाता ...पूर्ववत्... भगवान् ने यह कहा—

२. "विशाखे! चार धर्मों से युक्त कोई स्त्री इस लोक की विजय के लिये सन्नद्ध होती है। कौन चार धर्म? विशाखे! यहाँ कोई १. घर के सभी कार्य यथाविधि करती है, २. पति के अनुकूल आचरण करती है, ३. परिवार के सब लोगों को एकताबद्ध रखती है, तथा घर में आयी हुई सम्पत्ति को सुरक्षित रखती है।

३. विशाखे! वह घर के कार्य यथाविधि कैसे करती है? विशाखे! उस स्त्री के भर्ता के जो घर के आन्तरिक कार्य हैं, फिर भले ही वे ऊन से सम्बद्ध हों या कपास से, उन सबको कुशलता के साथ, आलस्य के विना, उपायों पर विचार एवं समीक्षा करते हुए पूर्ण करती है। यह उस स्त्री का घर के सभी कार्य यथाविधि करना कहलाता है। (१)

४. "विशाखे! वह स्त्री परिवार को कैसे एकताबद्ध रखती है? विशाखे! वह स्त्री भर्ता के घरेलू कर्मचारियों को, भले ही वे दास हों, दूत हों या कर्मकर हों; उनके किये हुए कार्य को किये हुए से परखती है, न किये हुए को न किये हुए से परखती है, उनके रोगी होने पर उनके बलाबल का ध्यान रखती है, उनके खाने पीने की व्यवस्था, उनकी स्थिति के अनुरूप करती रहती है। इस तरह वह नारी परिवार के सभी सदस्यों को एकताबद्ध रखती हुई सन्तुष्ट रखती है। (२)

६. "कथं च, विसाखे, मातुगामो सम्भतं अनुरक्खति? इध, विसाखे, मातुगामो यं भत्ता आहरति धनं वा धञ्ञं वा रजनं वा जातरूपं वा तं आरक्खेन गुत्तिया सम्पादेति, तत्थ च होति अधुत्ती अथेनी असोण्डी अविनासिका। एवं खो, विसाखे, मातुगामो सम्भतं अनुरक्खति। इमेहि खो, विसाखे, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो मातुगामो इधलोकविजयाय पटिपन्नो होति, अयं लोको आरद्धो होति।

७. "चतूहि खो, विसाखे, धम्मेहि समन्नागतो मातुगामो परलोकविजयाय पटिपन्नो होति, परलोको आरद्धो होति। कतमेहि चतूहि? इध, विसाखे, मातुगामो सद्धासम्पन्नो होति, सीलसम्पन्नो होति, चागसम्पन्नो होति, पञ्ञासम्पन्नो होति।

८. "कथं च, विसाखे, मातुगामो सद्धासम्पन्नो होति? इध, विसाखे, [B.98] मातुगामो सद्धो होति, सद्दहति तथागतस्स बोधिं—'इति पि सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो विज्जाचरणसम्पन्नो सुगतो लोकविदू अनुत्तरो पुरिसदम्मसारथि सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। एवं खो, विसाखे, मातुगामो सद्धासम्पन्नो होति।

९. "कथं च, विसाखे, मातुगामो सीलसम्पन्नो होति? इध, विसाखे, [R.271] मातुगामो पाणातिपाता पटिविरतो होति ...पे०... सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना पटिविरतो होति। एवं खो, विसाखे, मातुगामो सीलसम्पन्नो होति।

---

५. "विशाखे! कैसे वह नारी पति के अनुकूल आचरण करती है? विशाखे! वह नारी जो उसके पति के प्रतिकूल हो उसको करने के लिये, अपने प्राणों पर सङ्कट पड़ने पर भी, नहीं सोचती। इस तरह, विशाखे! वह अपने पति के अनुकूल आचरण करती है। (३)

६. "विशाखे! कैसे वह नारी घर में आयी सम्पत्ति की रक्षा करती है? यहाँ, विशाखे! उसका पति जो कुछ भी सम्पत्ति घर में लाता है, जैसे—नकद धन, धान्य, चाँदी या सोना—इन सबको वह सुरक्षित एवं सुव्यवस्थित रखती है। उसके लिये न वह कोई धूर्तता करती है, न उसमें कोई चौरी करती है और न उस विषय में कोई चालबाजी ही करती है, न नष्ट होने देती हैं। (४)

इस प्रकार, विशाखे! इन चार धर्मों से युक्त वह नारी इहलोक के विजयहेतु सन्नद्ध होती है। इस लोक में (ससम्मान) जीवनयापन करती है। (क)

७. "विशाखे! चार धर्मों से युक्त कोई नारी कैसे परलोकविजय के लिये सन्नद्ध होती है? विशाखे! यहाँ कोई स्त्री (१) श्रद्धालु होती है, (२) शील का पालन करती है, (३) त्यागसम्पन्न होती है, तथा (४) प्रज्ञासम्पन्न होती है।

८. "विशाखे! कैसे कोई नारी श्रद्धालु होती है? वह तथागत के ज्ञान के प्रति दृढ़ श्रद्धा रखती है। 'वे भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध... देवमनुष्यों के शास्ता हैं'—विशाखे! इस प्रकार वह 'श्रद्धालु' कहलाती है। (१)

९. "विशाखे! कैसे वह स्त्री शीलसम्पन्न कहलाती है? विशाखे! वह स्त्री प्राणातिपात से विरत रहती है ...पूर्ववत्... सुरामैरेय आदि मद्यपान से विरत रहती है। इस प्रकार, विशाखे! वह नारी शीलसम्पन्न कहलाती है। (२)

१०. ''कथं च, विसाखे, मातुगामो चागसम्पन्नो होति? इध, विसाखे, मातुगामो विगतमलमच्छेरेन चेतसा अगारं अज्झावसति मुत्तचागा पयतपाणिनी वोस्सग्गरता याचयोगा दानसंविभागरता। एवं खो, विसाखे, मातुगामो चागसम्पन्नो होति।

११. ''कथं च, विसाखे, मातुगामो पञ्ञासम्पन्नो होति? इध, विसाखे मातुगामो पञ्ञवा होति ...पे०... एवं खो, विसाखे, मातुगामो पञ्ञासम्पन्नो होति। इमेहि खो, विसाखे, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो मातुगामो परलोकविजयाय पटिपन्नो होति, परलोको [N.366] आरद्धो होती ति।

''सुसंविहितकम्मन्ता, सङ्गहीतपरिज्जना।
भत्तु मनापं चरति, सम्भतं अनुरक्खति॥
''सद्धासीलेन सम्पन्ना, वदञ्ञू वीतमच्छरा।
निच्चं मग्गं विसोधेति, सोत्थानं सम्परायिकं॥
''इच्चेते अट्ठ धम्मा च, यस्सा विज्जन्ति नारिया।
तं पि सीलवतिं आहु, धम्मट्ठं सच्चवादिनिं॥
''सोळसाकारसम्पन्ना, अट्ठङ्गसुसमागता।
तादिसी सीलवती उपासिका,
उपपज्जति देवलोकं मनापं'' ति॥

[B.99] **१०. दुतियइधलोकिकसुत्तं** : १. ''चतूहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो मातुगामो इधलोकविजयाय पटिपन्नो होति, अयं लोको आरद्धो होति। कतमेहि चतूहि?

---

१०. ''विशाखे! वह नारी त्यागसम्पन्न कैसे कहलाती है? यहाँ, विशाखे! वह नारी निरभिमान एवं निर्मल चित्त से घर चलाती है, और वह मुक्तहस्त होकर उदार त्याग की भावना से याचकों को दान देती है। यों वह, विशाखे! वह नारी त्यागसम्पन्न कहलाती हैं। (३)

११. विशाखे! कैसे वह नारी प्रज्ञासम्पन्न कहलाती हैं? यहाँ, विशाखे! वह नारी प्रज्ञावान् होती है ...पूर्ववत्... इस प्रकार, विशाखे! वह प्रज्ञासम्पन्न कहलाती है। (४)

''विशाखे! इस प्रकार इन चार धर्मों से युक्त नारी परलोक विजयहेतु सन्नद्ध होती है। (ख)

''जो नारी घर के सभी कार्य यथाविधि सम्पन्न करती है, परिवार के सब लोगों को एकताबद्ध रखती है, पति के अनुकूल आचरण करती है, तथा घर में आयी हुई सम्पत्ति को सुरक्षित सँभाल कर रखती है॥

''जो श्रद्धा एवं शील से सम्पन्न है, त्यागसम्पन्न है, निरभिमान है वह साम्परायिक (मरणोत्तर) मार्ग का प्रज्ञापूर्वक शोधन करती रहती है॥

''ये आठ धर्म जिस नारी में विद्यमान हैं, उसे ही शीलवती, धर्माचरण करने वाली एवं सत्यवादिनी कहते हैं॥

''इस प्रकार, सोलह आकारों से सम्पन्न तथा आठ अङ्गों से युक्त नारी ही शीलवती उपासिका कही जाती है। वही मनापकायिक देवलोक में उत्पन्न होने योग्य होती है॥''

इध, भिक्खवे, मातुगामो सुसंविहितकम्मन्तो होति, सङ्गहितपरिजनो, भत्तु मनापं [R.272] चरति, सम्भतं अनुरक्खति।

२. ''कथं च, भिक्खवे, मातुगामो सुसंविहितकम्मन्तो होति? इध, भिक्खवे, मातुगामो ये ते भत्तु अब्भन्तरा कम्मन्ता ...पे०... एवं खो, भिक्खवे, मातुगामो सुसंविहितकम्मन्तो होति।

३. ''कथं च, भिक्खवे, मातुगामो सङ्गहितपरिजनो होति? इध, भिक्खवे, मातुगामो यो सो भत्तु अब्भन्तरो अन्तोजनो ...पे०... एवं खो, भिक्खवे, मातुगामो सङ्गहितपरिजनो होति।

४. ''कथं च, भिक्खवे, मातुगामो भत्तु मनापं चरति? इध, भिक्खवे, मातुगामो यं भत्तु अमनापसङ्खातं तं जीवितहेतु पि न अज्झाचरति। एवं खो भिक्खवे, मातुगामो भत्तु मनापं चरति।

५. ''कथं च, भिक्खवे, मातुगामो सम्भतं अनुरक्खति? इध, भिक्खवे, मातुगामो यं भत्ता आहरति ...पे०... एवं खो, भिक्खवे, मातुगामो सम्भतं अनुरक्खति। इमेहि खो, भिक्खवे, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो मातुगामो इधलोकविजयाय पटिपन्नो होति, [N.367] अयं लोको आरद्धो होति।

६. ''चतूहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो मातुगामो परलोकविजयाय पटिपन्नो होति, परलोको आरद्धो होति। कतमेहि चतूहि? इध, भिक्खवे, मातुगामो सद्धासम्पन्नो होति, सीलसम्पन्नो होति, चागसम्पन्नो होति, पञ्ञासम्पन्नो होति।

७. ''कथं च, भिक्खवे, मातुगामो सद्धासम्पन्नो होति? इध, भिक्खवे, मातुगामो सद्धो होति ...पे०... एवं खो, भिक्खवे, मातुगामो सद्धासम्पन्नो होति। [R.273]

८. ''कथं च, भिक्खवे, मातुगामो सीलसम्पन्नो होति? इध, भिक्खवे, [B.100] मातुगामो पाणातिपाता पटिविरतो होति ...पे०... सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना पटिविरतो होति। एवं खो, भिक्खवे, मातुगामो सीलसम्पन्नो होति।

९. ''कथं च, भिक्खवे, मातुगामो चागसम्पन्नो होति? इध, भिक्खवे, मातुगामो विगतमलमच्छेरेन चेतसा अगारं अज्झावसति ...पे०... एवं खो, भिक्खवे, मातुगामो चागसम्पन्नो होति।

१०. ''कथं च, भिक्खवे, मातुगामो पञ्ञासम्पन्नो होति? इध, भिक्खवे, मातुगामो

---

**१०. द्वितीय ऐहलौकिकसूत्र : : अष्टाङ्गयुक्त नारी ही उभयलोक विजय के योग्य**

१. ''भिक्षुओ! इन चार धर्मों से युक्त नारी ही इहलोक विजय के योग्य होती है। कौन से चार धर्म? ...पूर्ववत्...। ...देवलोक में उत्पन्न होने योग्य होती है॥'' ●

*(अनुपद पठित पूर्वसूत्र का यहाँ भी अविकल विस्तार कर लें।)*

**उपोसथवर्ग पञ्चम सम्पन्न॥**

पञ्ञवा होति ...पे०... एवं खो, भिक्खवे, मातुगामो पञ्ञासम्पन्नो होति। इमेहि खो, भिक्खवे, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो मातुगामो परलोकविजयाय पटिपन्नो होति, परलोको आरद्धो होती ति।

''सुसंविहितकम्मन्ता, सङ्गहीतपरिज्जना।
भत्तु मनापं चरति, सम्भतं अनुरक्खति॥
''सद्धासीलेन सम्पन्ना, वदञ्ञू वीतमच्छरा।
निच्चं मग्गं विसोधेति, सोत्थानं सम्परायिकं॥
''इच्चेते अट्ठ धम्मा च, यस्सा विज्जन्ति नारिया।
तं पि सीलवतिं आहु, धम्मट्ठं सच्चवादिनिं॥
''सोळसाकारसम्पन्ना, अट्ठङ्गसुसमागता।
तादिसी सीलवती उपासिका,
उपपज्जति देवलोकं मनापं'' ति॥

**उपोसथवग्गो पञ्चमो॥**

**तस्सुद्दानं**

[N.368] सङ्खित्ते वित्थते विसाखे, वासेट्ठो बोज्झाय पञ्चमं।
अनुरुद्धं पुन विसाखे, नकुला इधलोकिका द्वे ति॥

**पठमो पण्णासको समत्तो॥**

## ६. गोतमीवग्गो

### दुतियो पण्णासको

[B.101,R.274] **१. गोतमीसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा सक्केसु विहरति कपिलवत्थुस्मिं

---

**इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची**

१. संक्षिप्त उपोसथसूत्र, २. विस्तृत उपोसथसूत्र, ३. विशाखासूत्र, ४. वासिष्ठसूत्र, ५. बोध्यसूत्र, ६. अनुरुद्धसूत्र, ७-८. नकुलमातासूत्र, ९. प्रथम ऐहलौकिकसूत्र, १०. द्वितीय ऐहलौकिकसूत्र॥ **प्रथम पञ्चाशत्क सम्पन्न॥**

## ६. गौतमीवर्ग

### द्वितीय पञ्चाशत्क

**१. गौतमीसूत्र : : भिक्षुणियों के आठ पालनीय धर्म**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) शाक्य प्रदेश के कपिलवस्तु स्थित न्यग्रोधाराम में साधनाहेतु

निग्रोधारामे। अथ खो महापजापती गोतमी येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठिता खो महापजापती गोतमी भगवन्तं एतदवोच—"साधु, भन्ते, लभेय्य मातुगामो तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जं" ति।

"अलं, गोतमि! मा ते रुच्चि मातुगामस्स तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जा" ति।

२. दुतियं पि खो महापजापती गोतमी भगवन्तं एतदवोच—"साधु, भन्ते, लभेय्य मातुगामो तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जं" ति।

"अलं, गोतमि! मा ते रुच्चि मातुगामस्स तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जा" ति।

३. "ततियं पि खो महापजापती गोतमी भगवन्तं एतदवोच—"साधु भन्ते, लभेय्य मातुगामो तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जं" ति।

"अलं, गोतमि! मा ते रुच्चि मातुगामस्स तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जा" ति।

४. अथ खो महापजापति गोतमी "न भगवा अनुजानाति मातुगामस्स तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जं" ति दुक्खी दुम्मना अस्सुमुखी रुदमाना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कामि। [N.369]

५. अथ खो भगवा कपिलवत्थुस्मिं यथाभिरन्तं विहरित्वा येन वेसाली तेन चारिकं पक्कामि। अनुपुब्बेन चारिकं चरमानो येन वेसाली तदवसरि। तत्र सुदं भगवा वेसालियं

---

विराजमान थे। तब महाप्रजापती गौतमी भगवान् के सम्मुख आयी। आकर भगवान् को प्रणाम कर एक ओर बैठ गयी। एक ओर बैठी महाप्रजापती गौतमी ने भगवान् से यह निवेदन किया—"अच्छा हो, भन्ते! कि नारियाँ भी तथागतप्रवेदित धर्म में घर से बेघर होकर प्रव्रज्या पा सकें"।

"गौतमि! नारियाँ तथागतप्रवेदित धर्मविनय में प्रव्रज्या न चाहें तो अच्छा हो।"

२. दूसरी बार भी महाप्रजापती गौतमी ने भगवान् से वही निवेदन किया...।

भगवान् ने भी वही उत्तर दिया...।

३. तीसरी बार भी महाप्रजापती गौतमी ने पुनः वही निवेदन किया...।

भगवान् ने पुनः वही उत्तर दिया।

४. तब महाप्रजापती गौतमी ने समझ लिया कि भगवान् तथागतप्रवेदित धर्मविनय में नारियों को प्रव्रज्या देना नहीं चाहते। तब वह दुःखी एवं व्यथित होकर भगवान् को प्रणाम-प्रदक्षिणा कर वहाँ से उठकर चली गयी।

५. तदनन्तर, भगवान् कपिलवस्तु में यथानुकूल समय तक साधना कर वहाँ से क्रमशः चारिका करते हुए वैशाली में पधारे। वहाँ भगवान् महावन की कूटागारशाला में साधनाहेतु विराजे।

[B.102] विहरति महावने कूटागारसालायं। अथ खो महापजापती गोतमी केसे छेदापेत्वा [R.275] कासायानि वत्थानि अच्छादेत्वा सम्बहुलाहि साकियानीहि सद्धिं येन वेसाली तेन पक्कामि। अनुपुब्बेन येन वेसाली महावनं कूटागारसाला तेनुपसङ्कमि। अथ खो महापजापती गोतमी सूनेहि पादेहि रजोकिण्णेन गत्तेन दुक्खी दुम्मना अस्सुमुखी रुदमाना बहिद्वारकोट्ठके अट्ठासि।

६. अद्दसा खो आयस्मा आनन्दो महापजापतिं गोतमिं सूनेहि पादेहि रजोकिण्णेन गत्तेन दुक्खिं दुम्मनं अस्सुमुखिं रुदमानं बहिद्वारकोट्ठके ठितं। दिस्वान महापजापतिं गोतमिं एतदवोच—''किं नु त्वं, गोतमि, सूनेहि पादेहि रजोकिण्णेन गत्तेन दुक्खी दुम्मना अस्सुमुखी रुदमाना बहिद्वारकोट्ठके ठिता'' ति?

''तथा हि पन, भन्ते आनन्द, न भगवा अनुजानाति मातुगामस्स तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जं'' ति।

''तेन हि त्वं, गोतमि, मुहुत्तं इधेव ताव होहि, यावाहं भगवन्तं याचामि मातुगामस्स तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जं'' ति।

७. अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—''एसा, भन्ते, महापजापती गोतमी सूनेहि पादेहि रजोकिण्णेन गत्तेन दुक्खी

---

तब महाप्रजापती गौतमी भी अपने केश मुँड़वाकर, काषाय वस्त्र पहनकर बहुत सी शाक्य नारियों के साथ वैशाली में आयी। और क्रमशः महावन की कूटागारशाला के बहिर्द्वार पर आकर खड़ी हो गयी। उस समय महाप्रजापती गौतमी के पैर, लम्बी यात्रा के कारण, सूजे हुए थे। शरीर धूल से भरा हुआ था, वह चित्त से दुःखी और चिन्तित एवं व्यथित लग रही थी। उसकी आँखों से आँसू बह रहे थे।

६. वहाँ आयुष्मान् आनन्द ने बहिर्द्वार पर खड़ी हुई महाप्रजापती गौतमी को इस व्यथित अवस्था में देखा तो उसने दुःखी मन से उनसे पूछा—''आप गौतमी जी! इस दुरवस्था में कैसे पहुँच गयी कि आपके पैर सूजे हुए हैं, शरीर धूल से भरा हुआ है, आँखों में आँसू भरे हैं, और आप किसी स्वामित्वविहीन (लावारिस) के समान यहाँ बाहर द्वार पर खड़ी हैं?''

''भन्ते आनन्द! भगवान् हम नारियों को अपने धर्म में प्रव्रज्या लेने की अनुमति नहीं दे रहे हैं।''

''तो आप गौतमि! मुहूर्तमात्र यहीं ठहरें। मैं भी भगवान् से नारियों को इस धर्म में प्रव्रज्या की अनुमति देने का निवेदन करूँगा।''

७. तब आयुष्मान् आनन्द भगवान् के सम्मुख आये... तथा यह निवेदन किया—''भन्ते! ये महाप्रजापती गौतमी सूजे पैरों से, आँसू भरी आँखों से, धूल भरे शरीर से दुःखद स्थिति में बाहर द्वार पर खड़ी हुई कह रही हैं—'भगवान् हम नारियों को धर्म में प्रव्रजित होने की अनुमति नहीं दे रहे

दुम्मना अस्सुमुखी रुदमाना बहिद्वारकोट्ठके ठिता—'न भगवा अनुजानाति मातुगामस्स तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जं' ति। साधु, भन्ते, लभेय्य मातुगामो तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जं'' ति।

''अलं, आनन्द! मा ते रुच्चि मातुगामस्स तथागतप्पवेदिते धम्मविनये [N.370] अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जा'' ति।

८. दुतियं पि खो ...पे०... ततियं पि खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच— ''साधु, भन्ते, लभेय्य मातुगामो तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जं'' ति।

''अलं, आनन्द! मा ते रुच्चि मातुगामस्स तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जा'' ति।

९. अथ खो आयस्मतो आनन्दस्स एतदहोसि—''न भगवा [B.103,R.276] अनुजानाति मातुगामस्स तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जं। यन्नूनाहं अञ्ञेन पि परियायेन भगवन्तं याचेय्यं मातुगामस्स तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जं'' ति। अथ खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—''भब्बो नु खो, भन्ते, मातुगामो तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बजित्वा सोतापत्तिफलं वा सकदागामिफलं वा अनागामिफलं वा अरहत्तफलं वा सच्छिकातुं'' ति?

''भब्बो, आनन्द, मातुगामो तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बजित्वा सोतापत्तिफलं पि सकदागामिफलं पि अनागामिफलं पि अरहत्तफलं पि सच्छिकातुं'' ति।

१०. ''सचे, भन्ते, भब्बो मातुगामो तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा

---

हैं।' अच्छा हो, भन्ते! नारियाँ भी इस तथागतप्रवेदित धर्मविनय में प्रव्रज्या प्राप्त करने की अधिकारिणी हो जायँ।''

''यही अच्छा होगा, आनन्द कि तूँ नारियों को इस धर्मविनय में प्रव्रजित होने में रुचि न दिखाये।''

८. दूसरी बार भी... आनन्द ने भगवान् से निवेदन किया। भगवान् ने दूसरी बार भी वही उत्तर दिया।

९. तब आयुष्मान् आनन्द को यह विचार हुआ— भगवान् इस धर्मविनय में प्रव्रज्या की अनुमति नहीं दे रहे हैं! क्यों न मैं दूसरी विधि से भगवान् से नारी-प्रव्रज्या की अनुमति लेने का प्रयास करूँ। ऐसा विचार कर आयुष्मान् आनन्द ने भगवान् से यह निवेदन किया—''क्या, भन्ते! ये नारियाँ तथागतप्रवेदित धर्मविनय में प्रव्रजित होकर स्रोतआपत्तिफल, सकृदागामिफल, अनागामिफल एवं अर्हत् फल का साक्षात्कार करने योग्य नहीं हैं?''

''हाँ, आनन्द! स्त्रियाँ भी इस धर्मविनय में प्रव्रजित होकर ...पूर्ववत्... अर्हत्फल का साक्षात्कार करने योग्य हैं।''

अनगारियं पब्बजित्वा सोतापत्तिफलं पि ...पे०... अरहत्तफलं पि सच्छिकातुं, बहुकारा, भन्ते, महापजापती गोतमी भगवतो मातुच्छा आपादिका पोसिका खीरस्स दायिका; भगवन्तं जनेत्तिया कालङ्कताय थञ्ञं पायेसि। साधु, भन्ते, लभेय्य मातुगामो तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जं'' ति।

११. ''सचे, आनन्द, महापजापती गोतमी अट्ठ गरुधम्मे पटिग्गण्हाति, सावस्सा होतु उपसम्पदा—

''वस्ससतूपसम्पन्नाय भिक्खुनिया तदहूपसम्पन्नस्स भिक्खुनो अभिवादनं पच्चुट्ठानं अञ्जलिकम्मं सामीचिकम्मं कत्तब्बं। अयं पि धम्मो सक्कत्वा गरुं कत्वा मानेत्वा पूजेत्वा यावजीवं अनतिक्कमनीयो।

[N.371] १२. ''न भिक्खुनिया अभिक्खुके आवासे वस्सं उपगन्तब्बं। अयं पि धम्मो सक्कत्वा गरुं कत्वा मानेत्वा पूजेत्वा यावजीवं अनतिक्कमनीयो।

१३. ''अन्वड्ढमासं भिक्खुनिया भिक्खुसङ्घतो द्वे धम्मा पच्चासीसितब्बा— [R.277] उपोसथपुच्छकं च, ओवादूपसङ्कमनं च। अयं पि धम्मो सक्कत्वा गरुं कत्वा मानेत्वा पूजेत्वा यावजीवं अनतिक्कमनीयो।

१४. ''वस्संवुट्ठाय भिक्खुनिया उभतोसङ्घे तीहि ठानेहि पवारेतब्बं—दिट्ठेन वा सुतेन वा परिसङ्काय वा। अयं पि धम्मो सक्कत्वा गरुं कत्वा मानेत्वा पूजेत्वा यावजीवं अनतिक्कमनीयो।

---

१०. ''यदि, भन्ते! नारियाँ भी ...पूर्ववत्... अर्हत्फल का साक्षात्कार करने योग्य हैं तो भन्ते! महाप्रजापती गौतमी तो आपकी बहुत उपकारिका रही हैं। ये आपकी मौसी हैं, धात्री (आपादिका) हैं, आपको ये दूध पिलाने वाली हैं (आपकी माता के देहपात के बाद इनने ही आपको अपने स्तनों से दूध पिलाया है)। अच्छा होता, भन्ते! ऐसी उपकारिणी नारियों को भी आपके इस धर्मविनय में प्रव्रज्या मिल जाती।''

११. ''यदि, आनन्द! यह महाप्रजापति गौतमी इन आठ गुरुधर्मों का पालन करती रहे तो यही इसकी उपसम्पदा होगी—

'सौ वर्ष पूर्व उपसम्पन्न हुई भिक्षुणी को भी आज ही उपसम्पन्न हुए भिक्षु को (सम्मुख आने पर) अभिवादन, प्रत्युत्थान, अञ्जलिकर्म (हाथ जोड़ना) या सम्मानित व्यवहार करना होगा। इस धर्म का सत्कार, गौरव, मान एवं पूजा उसको जीवनपर्यन्त करनी होगी। इसका कभी उल्लङ्घन न हो। (१)

१२. 'भिक्षुणी को ऐसे आवास में वर्षावास नहीं करना होगा, जिसमें भिक्षु न रहते हों। इस धर्म का सत्कार, गौरव, मान एवं पूजा उसको जीवनपर्यन्त करना होगा, इसका उल्लङ्घन न हो। (२)

१३. 'प्रत्येक अर्धमास में भिक्षुणी को भिक्षु से दो पर्येषणा (खोज) के लिये आना चाहिये— (क) 'भिक्षु के सम्मुख धर्मश्रवणार्थ आगमन, तथा (ख) उपोसथ के विषय में पिपृच्छाहेतु आगमन। इस धर्म का भी ...पूर्ववत्... कभी उल्लङ्घन न हो। (३)

१५. "गरुधम्मं अज्झापन्नाय भिक्खुनिया उभतोसङ्घे पक्खमानत्तं [B.104] चरितब्बं। अयं पि धम्मो सक्कत्वा गरुं कत्वा मानेत्वा पूजेत्वा यावजीवं अनतिक्कमनीयो।

१६. "द्वे वस्सानि छसु धम्मेसु सिक्खितसिक्खाय सिक्खमानाय उभतोसङ्घे उपसम्पदा परियेसितब्बा। अयं पि धम्मो सक्कत्वा गरुं कत्वा मानेत्वा पूजेत्वा यावजीवं अनतिक्कमनीयो।

१७. "न केनचि परियायेन भिक्खुनिया भिक्खु अक्कोसितब्बो परिभासितब्बो। अयं पि धम्मो सक्कत्वा गरुं कत्वा मानेत्वा पूजेत्वा यावजीवं अनतिक्कमनीयो।

१८. "अज्जतग्गे ओवटो भिक्खुनीनं भिक्खूसु वचनपथो, अनोवटो भिक्खूनं भिक्खुनीसु वचनपथो। अयं पि धम्मो सक्कत्वा गरुं कत्वा मानेत्वा पूजेत्वा यावजीवं अनतिक्कमनीयो।

१९. "सचे, आनन्द, महापजापती गोतमी इमे अट्ठ गरुधम्मे पटिग्गण्हाति, सावस्सा होतु उपसम्पदा" ति।

२०. अथ खो आयस्मा आनन्दो भगवतो सन्तिके इमे अट्ठ गरुधम्मे उग्गहेत्वा येन महापजापती गोतमी तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा महापजापतिं गोतमिं एतदवोच—

२१. "सचे खो त्वं, गोतमि, अट्ठ गरुधम्मे पटिग्गण्हेय्यासि, साव ते भविस्सति उपसम्पदा—'वस्ससतूपसम्पन्नाय भिक्खुनिया तदहूपसम्पन्नस्स भिक्खुनो अभिवादनं पच्चुट्ठानं अञ्जलिकम्मं सामीचिकम्मं कत्तब्बं। अयं पि धम्मो सक्कत्वा गरुं कत्वा [N.372]

---

१४. 'वर्षावास कर चुकने के बाद भिक्षुणी को दोनों सङ्घों में अपने दृष्ट, श्रुत एवं परिशङ्कित की प्रवारणा करनी होगी। इस धर्म का भी ...पूर्ववत्... कभी उल्लङ्घन न हो। (४)

१५. 'गुरु धर्म स्वीकार करने वाली भिक्षुणी को दोनों सङ्घों में पक्षमानता करनी चाहिये। इस धर्म का भी ...पूर्ववत्... कभी उल्लङ्घन न हो। (५)

१६. 'दो वर्षों तक छह धर्मों में शिक्षाप्राप्त एवं शिक्ष्यमाणा भिक्षुणी को दोनों सङ्घों में उपसम्पदा की पर्येषणा करनी चाहिये। इस धर्म का ...पूर्ववत्... कभी उल्लङ्घन न हो। (६)

१७. 'कैसा भी कारण उपस्थित होने पर भी, भिक्षुणी को किसी भिक्षु का अपमान नहीं करना चाहिये। इस धर्म का ...पूर्ववत्... कभी उल्लङ्घन न हो। (७)

१८. 'आज से भिक्षुणियों का भिक्षुओं से कुछ कहना पूर्णतः निषिद्ध किया जाता है, हाँ, भिक्षुणियों द्वारा कोई प्रमाद होने पर भिक्षु उनको कुछ कह सकते हैं।' इस धर्म का ...पूर्ववत्... कभी उल्लङ्घन न हो'। (८)

१९. "यदि, आनन्द! महाप्रजापती गौतमी इन आठ गुरु धर्मों को स्वीकार करे तो यही उसकी उपसम्पदा मान ली जाय।"

२०. तदनन्तर, आयुष्मान् आनन्द भगवान् से ये आठ गुरु धर्म ग्रहण कर महाप्रजापती गौतमी के पास गये, तथा उनको यों बोले—

२१. "यदि आप, गौतमि! ये आठ गुरु धर्म स्वीकार करें तो यही आपकी उपसम्पदा मान

मानेत्वा पूजेत्वा यावजीवं अनतिक्कमनीयो ...पे०...। अज्जतग्गे ओवटो भिक्खुनीनं [R.278] भिक्खूसु वचनपथो, अनोवटो भिक्खूनं भिक्खुनीसु वचनपथो। अयं पि धम्मो सक्कत्वा गरुं कत्वा मानेत्वा पूजेत्वा यावजीवं अनतिक्कमनीयो। सचे खो त्वं, गोतमि, इमे अट्ठ गरुधम्मे पटिग्गण्हेय्यासि, साव ते भविस्सति उपसम्पदा'' ति।

[B.105] २२. ''सेय्यथापि, भन्ते आनन्द, इत्थी वा पुरिसो वा दहरो युवा मण्डनकजातिको सीसंन्हातो उप्पलमालं वा वस्सिकमालं वा अधिमुत्तकमालं वा लभित्वा उभोहि हत्थेहि पटिग्गहेत्वा उत्तमङ्गे सिरस्मिं पतिट्ठापेय्य; एवमेव खो अहं, भन्ते आनन्द, इमे अट्ठ गरुधम्मे पटिग्गण्हामि यावजीवं अनतिक्कमनीये'' ति।

२३. अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—''पटिग्गहिता, भन्ते, महापजापतिया गोतमिया अट्ठ गरुधम्मा यावजीवं अनतिक्कमनीया'' ति।

२४. ''सचे, आनन्द, नालभिस्स मातुगामो तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जं, चिरट्ठितिकं, आनन्द, ब्रह्मचरियं अभविस्स, वस्ससहस्समेव सद्धम्मो तिट्ठेय्य। यतो च खो, आनन्द, मातुगामो तथागतप्पवेदिते धम्मविनये अगारस्मा अनगारियं पब्बजितो, न दानि, आनन्द, ब्रह्मचरियं चिरट्ठितिकं भविस्सति। पञ्चेव दानि, आनन्द, वस्ससतानि सद्धम्मो ठस्सति।

२५. ''सेय्यथापि, आनन्द, यानि कानिचि कुलानि बहुत्थिकानि अप्पपुरिसकानि, तानि सुप्पधंसियानि होन्ति चोरेहि कुम्भत्थेनकेहि; एवमेव खो, आनन्द, यस्मिं धम्मविनये लभति मातुगामो अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जं, न तं ब्रह्मचरियं चिरट्ठितिकं होति।

---

ली जायगी; जैसे—'सौ वर्ष पूर्व उपसम्पन्न हुई भिक्षुणी को भी ...पूर्ववत्... भिक्षुणियों द्वारा कोई प्रमाद होने पर भिक्षु उनको कुछ कह सकते हैं'॥''

२२. ''जैसे, भन्ते! कोई रसिक स्त्री या युवक पुरुष पूर्ण स्नान करने के बाद कहीं से नीलकमल की माला, जूही की माला या मोतिया की माला पा जाय तो उसको दोनों हाथों में लेकर शिर पर धारण कर ले; इसी प्रकार मैं भी, भन्ते आनन्द! इन आठ गुरुधर्मों को स्वीकार करती हूँ। मेरे द्वारा जीवनपर्यन्त इनका कभी उल्लङ्घन न होगा।''

२३. तब आयुष्मान् आनन्द जहाँ भगवान् थे वहाँ गये। जाकर ...पूर्ववत्... यह निवेदन किया—''भन्ते! महाप्रजापती गौतमी ने (आपके द्वारा आदिष्ट) आठों गुरु धर्म, जीवनपर्यन्त अनुल्लङ्घनीय के रूप में स्वीकार कर लिये हैं।''

२४. ''आनन्द! यदि तथागतप्रवेदित धर्मविनय में नारियाँ प्रव्रज्या न पातीं तो यह ब्रह्मचर्य (धर्मविनय) चिरस्थायी होता; यह हजारों वर्ष भी ठहर सकता था। क्योंकि, आनन्द! अब इस धर्मविनय में स्त्रियाँ भी प्रव्रजित होने लगेंगी, अत:, आनन्द! यह धर्मविनय चिरस्थायी नहीं रहेगा। केवल पाँच सौ वर्ष तक ही यह धर्म स्थिर रह सकेगा।

२६. "सेय्यथापि, आनन्द, सम्पन्ने सालिक्खेत्ते सेतट्ठिका नाम रोग-[N.373,R.279] जाति निपतति, एवं तं सालिक्खेत्तं न चिरट्ठितिकं होति; एवमेव खो, आनन्द, यस्मिं धम्मविनये लभति मातुगामो अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जं, न तं ब्रह्मचरियं चिरट्ठितिकं होति।

२७. "सेय्यथापि, आनन्द, सम्पन्ने उच्छुक्खेत्ते मञ्जिट्ठिका नाम रोगजाति निपतति, एवं तं उच्छुक्खेत्तं न चिरट्ठितिकं होति; एवमेव खो, आनन्द, यस्मिं धम्मविनये लभति मातुगामो अगारस्मा अनगारियं पब्बज्जं, न तं ब्रह्मचरियं चिरट्ठितिकं होति।

२८. "सेय्यथापि, आनन्द, पुरिसो महतो तळाकस्स पटिकच्चेव आळिं [B.106] बन्धेय्य यावदेव उदकस्स अनतिक्कमनाय; एवमेव खो, आनन्द, मया पटिकच्चेव भिक्खुनीनं अट्ठ गरुधम्मा पञ्ञत्ता यावजीवं अनतिक्कमनीया" ति॥ ●

**२. ओवादसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा वेसालियं विहरति महावने कूटागार-सालायं। अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—"कतिहि नु खो, भन्ते, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु भिक्खुनोवादको सम्मन्नितब्बो" ति?

२. "अट्ठहि खो, आनन्द, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु भिक्खुनोवादको सम्मन्नि-

---

२५. "आनन्द! जिस घर में अधिक स्त्रियाँ हों तथा पुरुष कम हों वह घर चौरों द्वारा या भाँड चुराने वालों द्वारा सरलता से चौरी करने योग्य होता है; इसी प्रकार, आनन्द! जिस धर्मविनय में स्त्रियाँ प्रव्रज्या का अधिकार पा जाती है वह धर्मविनय चिरकालिक स्थिति वाला नहीं होता।

२६. "और जैसे, आनन्द! किसी लहलहाते धान के खेत में श्वेतास्थिका (सफेदा) नामक रोग लग जाता है तो वह खेत चिरस्थायी नहीं होता; इसी प्रकार, आनन्द! ...पूर्ववत्... धर्मविनय चिरस्थायी नहीं रह पाता।

२७. "और जिस प्रकार, आनन्द! किसी सम्पन्न (लहलहाते) ईख के खेत में माञ्जेष्ठिका (लाल रोग) लग जाय तो वह ईख का खेत चिरस्थायी नहीं रह जाता; इसी प्रकार, आनन्द! ...पूर्ववत्... वह धर्मविनय चिरस्थायी नहीं रह पाता।

२८. "जैसे, आनन्द! किसी बड़े सरोवर के जल की स्थायिता के लिये उसके चारों ओर पक्की मेंड़ (आडि=मर्यादा) बना दी जाती है तो उस सरोवर में जल चिरस्थायी रह पाता है, उसी प्रकार, आनन्द! मैंने इस धर्मविनय की स्थायिता के लिये इन आठ गुरु धर्मों का आदेश कर दिया है, जिनका भिक्षुणियों द्वारा जीवनपर्यन्त उल्लङ्घन न करना परम कर्तव्य है॥" ●

**२. अववादसूत्र : : भिक्षुणियों का उपदेशक आठ धर्मों से युक्त हो**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) वैशाली के महावन की कूटागारशाला में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय आयुष्मान् आनन्द भगवान् के सम्मुख ... जाकर यों पूछने लगे—"भन्ते! किन धर्मों से युक्त भिक्षु को भिक्षुणियों के लिये धर्मोपदेशहेतु नियुक्त किया जाना चाहिये?"

२. "आनन्द! इन आठ धर्मों से युक्त भिक्षु को भिक्षुणियों के लिये धर्मोपदेश नियुक्त किया

तब्बो। कतमेहि अट्ठहि? इधानन्द, भिक्खु सीलवा होति ...पे०... समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु; बहुस्सुतो होति ...पे०... दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा; उभयानि खो पनस्स पातिमोक्खानि वित्थारेन स्वागतानि होन्ति सुविभत्तानि सुप्पवत्तीनि सुविनिच्छितानि सुत्तसो अनुब्यञ्जनसो; कल्याणवाचो होति कल्याणवाक्करणो, पोरिया वाचाय समन्नागतो विस्सट्ठाय [R.280] अनेलगळाय अत्थस्स विञ्ञापनिया; पटिबलो होति भिक्खुनिसङ्घस्स धम्मिया कथाय सन्दस्सेतुं समादपेतुं समुत्तेजेतुं सम्पहंसेतुं; येभुय्येन भिक्खुनीनं पियो होति मनापो; न [N.374] खो पनेतं भगवन्तं उद्दिस्स पब्बजिताय कासायवत्थनिवसनाय गरुधम्मं अज्झापन्नपुब्बो होति; वीसतिवस्सो वा होति अतिरेकवीसतिवस्सो वा। इमेहि खो, आनन्द, अट्ठहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु भिक्खुनोवादको सम्मन्नितब्बो'' ति॥ ●

**३. सङ्खित्तसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा वेसालियं विहरति महावने कूटागारसालायं। अथ खो महापजापती गोतमी येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं अट्ठासि। एकमन्तं ठिता खो सा महापजापती गोतमी भगवन्तं एतदवोच—

[B.107] २. ''साधु मे, भन्ते, भगवा सङ्खित्तेन धम्मं देसेतु, यमहं भगवतो धम्मं सुत्वा एका वूपकट्ठा अप्पमत्ता आतापिनी पहितत्ता विहरेय्यं'' ति।

''ये खो त्वं, गोतमि, धम्मे जानेय्यासि—'इमे धम्मा सरागाय संवत्तन्ति, नो विरागाय; संयोगाय संवत्तन्ति, नो विसंयोगाय; आचयाय संवत्तन्ति, नो अपचयाय; महिच्छताय संवत्तन्ति, नो अप्पिच्छताय; असन्तुट्ठिया संवत्तन्ति, नो सन्तुट्ठिया; सङ्गणिकाय

---

जाना चाहिये। कौन से आठ धर्म? (१) यहाँ, आनन्द जो भिक्षु शीलवान् होता है... शिक्षापदों को सीखता है; (२) बहुश्रुत होता है...; (३) दोनों प्रातिमोक्ष विस्तार से जिसको अभ्यस्त हों; (४) कल्याणमय वाणी बोलने वाला हो...; (५) जो भिक्षुणीसङ्घ को धार्मिक कथा कहने में समर्थ हो...; (६) प्राय: सभी भिक्षुणियों को प्रिय हो...; (७) जो न केवल भगवान् का उद्देश्य कर प्रव्रजित काषायवस्त्रधारिणी के गुरु धर्मों का अपराधी रहा हो; (८) तथा जो बीस वर्ष या उससे अधिक की आयुवाला (प्रव्रज्याप्राप्त) हो। आनन्द! इन आठ धर्मों से युक्त भिक्षु को ही भिक्षुणियों के लिये धर्मोपदेशक नियुक्त करना चाहिये।'' ●

**३. संक्षिप्तसूत्र : : महाप्रजापती गौतमी को आठ धर्मों का उपदेश**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) वैशाली के महावन की कूटागारशाला में साधनाहेतु विराजमान थे। तब महाप्रजापती गौतमी भगवान् के ...पूर्ववत्...। एक ओर खड़ी महाप्रजापती गौतमी ने भगवान् से यह पूछा—

२. ''भन्ते! अच्छा हो, यदि आप मुझे ऐसा संक्षिप्त धर्मोपदेश करें, जिसे आपसे सुनकर मैं एकाकी एवं प्रमादरहित होकर आत्मसंयमपूर्वक धर्मसाधना कर सकूँ।''

''गौतमि! जिन धर्मों के विषय में तूँ यह जाने—'ये धर्म सराग के लिये हैं, विराग के लिये नहीं; संसार से संयोग (सम्बन्ध) के लिये हैं, वियोग के लिये नहीं; संसार से सम्पर्कवृद्धि (आचय) करने वाले हैं, अपचय (हानि) करनेवाले नहीं; ये लोभ (-महेच्छता) वृद्धि में ही

संवत्तन्ति, नो पविवेकाय; कोसज्जाय संवत्तन्ति, नो विरियारम्भाय; दुब्भरताय संवत्तन्ति, नो सुभरताया' ति, एकंसेन, गोतमि, धारेय्यासि—'नेसो धम्मो, नेसो विनयो, नेतं सत्थुसासनं' ति।

३. ''ये च खो त्वं, गोतमि, धम्मे जानेय्यासि—'इमे धम्मा विरागाय संवत्तन्ति, नो सरागाय; विसंयोगाय संवत्तन्ति, नो संयोगाय; अपचयाय संवत्तन्ति, नो आचयाय; अप्पिच्छताय संवत्तन्ति, नो महिच्छताय; सन्तुट्ठिया संवत्तन्ति, नो असन्तुट्ठिया; पविवेकाय संवत्तन्ति, नो सङ्गणिकाय; विरियारम्भाय संवत्तन्ति, नो कोसज्जाय; सुभरताय [R.281] संवत्तन्ति, नो दुब्भरताया' ति, एकंसेन, गोतमि धारेय्यासि—'एसो धम्मो, एसो विनयो, एतं सत्थुसासनं''' ति॥ ●

**४. दीघजाणुसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा कोळियेसु विहरति कक्करपत्तं [N.375] नाम कोळियानं निगमो। अथ खो दीघजाणु कोळियपुत्तो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो दीघजाणु कोळियपुत्तो भगवन्तं एतदवोच—''मयं भन्ते, गिही कामभोगिनो पुत्तसम्बाधसयनं अज्झावसाम, कासिकचन्दनं पच्चनुभोम, मालागन्धविलेपनं धारयाम, जातरूपरजतं

---

सहायक होंगे, अल्पेच्छता (सन्तोष) के लिये नहीं; असन्तोष के ही वर्धक हैं, सन्तोष के नहीं; ये जनसमूह को ही एकत्र करनेवाले हैं, एकान्तसाधना के उपयुक्त नहीं; आलस्य की ही वृद्धि करने वाले हैं, साधना में उद्योग करने हेतु प्रेरित करने वाले नहीं; ये तेरे सामने जीवनयात्रा या साधना में कठिनाई ही पैदा करने वाले हैं, सरलता नहीं'। और इस विषय में सर्वांशतः विश्वास हो जाय तो समझ ले कि ये धर्म शास्ता के अनुकूल नहीं हैं, न ये धर्मविनय हैं, न शास्ता ने इनका उपदेश ही किया है।

३. ''तथा, गौतमि! जिन धर्मों के विषय में तूँ यह जान ले—'ये धर्म विराग के लिये हैं, सराग के लिये नहीं; वियोग के लिये हैं, संयोग के लिये नहीं; अपचय के लिये हैं, आचय के लिये नहीं; अल्पेच्छा के लिये ही हैं, महेच्छता के लिये नहीं; एकान्त साधना की ओर प्रेरित करने के लिये हैं, जनसमूह की ओर नहीं; उद्योग के लिये हैं, आलस्य के लिये नहीं; साधना में सरलता लाने वाले हैं, कठिनाई नहीं।' इनके विषय में गौतमि! जब तुझको सर्वांशतः विश्वास हो जाय तो समझ ले कि ये धर्म शास्ता के अनुकूल हैं, धर्मविनय के अन्तर्गत हैं, शास्ता ने उनका उपदेश भी किया है॥'' ●

**४. दीर्घजानुसूत्र : : आठ धर्म गृहस्थ के लिये हितकर**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) कोलिय प्रदेश के कर्करपत्र नामक कोलियों के एक निगम में साधनाहेतु विराजमान थे। उस अवसर पर, दीर्घजानु नामक कोई कोलियपुत्र भगवान् के सम्मुख आया... तथा यह बोला—''भन्ते! हम गृहस्थ जन कामभोगों में लिप्त रहने वाले, पुत्र पौत्रों की भीड़ में अपनी जीवनयात्रा करते रहते हैं। माला, गन्ध विलेपन करना, काशी के चन्दन का शरीर पर लेप, और चाँदी सोने का संग्रह करना ही हमारा जीवन लक्ष्य बन गया है। हम जैसे लोगों के लिये

सादयाम। तेसं नो, भन्ते, भगवा अम्हाकं तथा धम्मं देसेतु ये अम्हाकं अस्सु धम्मा दिट्ठधम्महिताय दिट्ठधम्मसुखाय, सम्परायहिताय सम्परायसुखाया'' ति।

२. ''चत्तारोमे, ब्यग्घपज्ज, धम्मा कुलपुत्तस्स दिट्ठधम्महिताय संवत्तन्ति दिट्ठ-धम्मसुखाय। कतमे चत्तारो? उट्ठानसम्पदा, आरक्खसम्पदा, कल्याणमित्तता, समजीविता। [B.108] कतमा च, ब्यग्घपज्ज, उट्ठानसम्पदा? इघ, ब्यग्घपज्ज, कुलपुत्तो येन कम्मट्ठानेन जीविकं कप्पेति—यदि कसिया यदि वणिज्जाय यदि गोरक्खेन यदि इस्सत्तेन यदि राजपोरिसेन यदि सिप्पञ्ञतरेन—तत्थ दक्खो होति अनलसो, तत्रुपायाय वीमंसाय समन्नागतो, अलं कातुं अलं संविधातुं। अयं वुच्चति, ब्यग्घपज्ज, उट्ठानसम्पदा।

३. ''कतमा च, ब्यग्घपज्ज, आरक्खसम्पदा? इध, ब्यग्घपज्ज, कुलपुत्तस्स भोगा [R.282] होन्ति उट्ठानविरियाधिगता बाहाबलपरिचिता सेदावक्खित्ता धम्मिका धम्मलद्धा। ते आरक्खेन गुत्तिया सम्पादेति—'किन्ति मे इमे भोगे नेव राजानो हरेय्युं, न चोरा हरेय्युं, न अग्गि डहेय्य, न उदकं वहेय्य, न अप्पिया दायादा हरेय्युं' ति! अयं वुच्चति, ब्यग्घपज्ज, आरक्खसम्पदा।

४. ''कतमा च, ब्यग्घपज्ज, कल्याणमित्तता? इध, ब्यग्घपज्ज, कुलपुत्तो यस्मिं गामे वा निगमे वा पटिवसति, तत्थ ये ते होन्ति—गहपती वा गहपतिपुत्ता वा दहरा वा वुद्धसीलिनो वुद्धा वा वुद्धसीलिनो सद्धासम्पन्ना सीलसम्पन्ना चागसम्पन्ना पञ्ञासम्पन्ना—

---

भी, भन्ते! आप ऐसे धर्म का उपदेश करें कि जिसका आचरण हम लोगों के लिये इस जन्म में भी और परलोक में भी सुखदायी हो सके।

२. ''वैयाघ्रपाद! ये चार धर्म किसी भी कुलपुत्र के लिये, आचरण करने पर, इस जन्म में हितकर एवं सुखकर हो सकते हैं। कौन से चार? (१) उत्थानसम्पदा, (२) आरक्षसम्पदा, (३) कल्याणमित्रता, एवं (४) समजीविता। वैयाघ्रपाद इनमें **उत्थानसम्पदा** क्या है? यहाँ, वैयाघ्रपाद! कोई अपनी जीविका किसी भी प्रकार से चलाता हो—भले ही कृषि से, या व्यापार से, या गोरक्षा से, या धनुर्विद्या से, या राजसेवा से या किसी अन्य शिल्प से; वहाँ उसको, उसके करते समय, आलस्य त्याग कर उद्योगी रहना चाहिये, उसमें चतुर होना चाहिये, उसकी वृद्धिहेतु सतत चिन्तन मनन करते रहना चाहिये। इसे कहते हैं, वैयाघ्रपाद! उत्थानसम्पदा। (१)

३. ''और, वैयाघ्रपाद! यह **आरक्षसम्पदा** क्या कहलाती है? यहाँ, वैयाघ्रपाद! कुछ कुलपुत्रों के भोगैश्वर्य (धन) उद्योग के अधीन होते हैं, हाथ पैरों से श्रम के अधीन होते हैं, पसीना बहाकर अधिगत किये जाते हैं, धर्मपूर्वक एवं धर्माचरण से प्राप्त किये जाते हैं। अत: वे अर्जित धन की रक्षा-व्यवस्था करते हैं; जिससे राजा लोग उनसे वह धन बलात् न छीन लें, चौर न चुरा लें, अग्नि से भस्म न हो जाय, जल में न बह जाय, न विरोधी सम्बन्धिजन (रिश्तेदार) हठात् स्वायत्त न कर लें। यह कहलाती हैं वैयाघ्रपाद! आरक्षसम्पदा। (२)

४. ''और, वैयाघ्रपाद! **कल्याणमित्रता** क्या होती है? यहाँ, वैयाघ्रपाद! वह कुलपुत्र जिस ग्राम या निगम में रहता है, उसमें जो गृहपति या गृहपतिपुत्र, युवक या वृद्ध श्रद्धालु, शीलवान्,

तेहि सद्धिं सन्तिट्ठति सल्लपति साकच्छं समापज्जति; यथारूपानं सद्धासम्पन्नानं [N.376] सद्धासम्पदं अनुसिक्खति... यथारूपानं सीलसम्पन्नानं सीलसम्पदं अनुसिक्खति... यथा-रूपानं चागसम्पन्नानं चागसम्पदं अनुसिक्खति... यथारूपानं पञ्ञासम्पन्नानं पञ्ञासम्पदं अनुसिक्खति, तेहि सद्धिं सन्तिट्ठति सल्लपति साकच्छं समापज्जति। अयं वुच्चति, ब्यग्घपज्ज, कल्याणमित्तता।

५. ''कतमा च, ब्यग्घपज्ज, समजीविता? इध, ब्यग्घपज्ज, कुलपुत्तो आयं च भोगानं विदित्वा, वयं च भोगानं विदित्वा, समं जीविकं कप्पेति नाच्चोगाळ्हं नातिहीनं—'एवं मे आयो वयं परियादाय ठस्सति, न च मे वयो आयं परियादाय ठस्सती' ति। सेय्यथापि, ब्यग्घपज्ज, तुलाधारो वा तुलाधारन्तेवासी वा तुलं पग्गहेत्वा जानाति—'एत्तकेन वा ओनतं, एत्तकेन वा उन्नतं' ति; एवमेव खो, ब्यग्घपज्ज, कुलपुत्तो आयं च भोगानं विदित्वा, वयं च भोगानं विदित्वा, समं जीविकं कप्पेति नाच्चोगाळ्हं नातिहीनं—'एवं मे आयो वयं परियादाय ठस्सति, न च मे वयो आयं परियादाय ठस्सती' ति। सचायं, [R.283] ब्यग्घपज्ज, कुलपुत्तो अप्पायो समानो उळारं जीविकं कप्पेति, तस्स भवन्ति वत्तारो—'उदुम्बरखादीवायं कुलपुत्तो भोगे खादती' ति। सचे पनायं, ब्यग्घपज्ज, कुलपुत्तो [B.109] महायो समानो कसिरं जीविकं कप्पेति, तस्स भवन्ति वत्तारो—'अजेट्ठमरणं वायं कुलपुत्तो

---

त्यागमय जीवन वाले तथा प्रज्ञावान् हों; उनके साथ बैठता है, संवाद करता है, साक्षात्कार करता है; उनमें श्रद्धालुओं से श्रद्धा करना सीखता है, शीलवानों से शीलसम्पदा, त्यागियों से त्यागसम्पदा, प्रज्ञावानों से प्रज्ञासम्पदा का शिक्षण ग्रहण करता है, उनके साथ बैठता है, संवाद करता है, साक्षात्कार करता है—यह कहलाती है, वैयाघ्रपाद! कल्याणमित्रता। (३)

५. ''और, वैयाघ्रपाद! यह **समजीविता** क्या कहलाती है? यहाँ, वैयाघ्रपाद! कोई कुलपुत्र अपनी सम्पत्ति के आय एवं व्यय—दोनों भागों को जानकर अपनी जीवन-शैली को इस प्रकार व्यवस्थित कर ले कि न वह इतनी उच्च स्थिति में पहुँच जाय (कि आय से अधिक व्यय होने लगे) या न इतनी हीन स्थिति में हो जाय (कि लोभ के कारण कुछ दानपुण्य भी न कर सके) कि जिसकी आय व्यय को सम्हाल सके या व्यय आय से अधिक न होने पाये। (क) जैसे, वैयाघ्रपाद! कोई तुलाधार (व्यापारी) या तुलाधार का सहायक तुला पकड़कर जान लेता है—'इतना रखने से तराजू का पलड़ा नीचे झुक जायगा, ... ऊपर उठ जायगा'; इसी प्रकार इस कुलपुत्र को भी अपने आय-व्यय का तोलनात्मक समीक्षण करते रहना चाहिये। इस तरह वह अपने आय एवं व्यय का तोलनात्मक समीक्षण करता हुआ अपने इस आय एवं व्यय को ऐसी समस्थिति में रखें कि उसकी जीवनशैली न तो बहुत उच्च स्थिति में ही पहुँच जाय और न बहुत नीच स्थिति में पहुँच कर समाज में उसको उपहास का पात्र बना दे। वैयाघ्रपाद! यदि वह कुलपुत्र अल्प आय वाला होकर भी बहुत उदारता से अपनी जीवनयात्रा चलाता है तो लोग उसका परिहास करते हुए कहते हैं—'यह तो अपनी आय को गूलर के फल की तरह भोग रहा है!' और यदि वैयाघ्रपाद! किसी कुलपुत्र की आय अधिक होती है और व्यय कम तो उसके विषय में लोग कहते हैं—'यह समझ रहा है कि

मरिस्सती' ति। यतो च खोयं, ब्यग्घपज्ज, कुलपुत्तो आयं च भोगानं विदित्वा, वयं च भोगानं विदित्वा, समं जविकं कप्पेति नाच्चोगाळ्हं नातिहीनं—'एवं मे आयो वयं परियादाय ठस्सति, न च मे वयो आयं परियादाय ठस्सती' ति। अयं वुच्चति, ब्यग्घपज्ज, समजीविता।

६. ''एवं समुप्पन्नानं, ब्यग्घपज्ज, भोगानं चत्तारि अपायमुखानि होन्ति—इत्थिधुत्तो, सुराधुत्तो, अक्खधुत्तो, पापमित्तो पापसहायो पापसम्पवङ्को। सेय्यथापि, ब्यग्घपज्ज, महतो तळाकस्स चत्तारि चेव आयमुखानि चत्तारि च अपायमुखानि। तस्स पुरिसो यानि चेव आयमुखानि तानि पिदहेय्य, यानि च अपायमुखानि तानि विवरेय्य; देवो च न सम्मा [N.377] धारं अनुप्पवेच्छेय्य। एवं हि तस्स, ब्यग्घपज्ज, महतो तळाकस्स परिहानियेव पाटिकङ्खा, नो वुद्धि; एवमेव, ब्यग्घपज्ज, एवं समुप्पन्नानं भोगानं चत्तारि अपायमुखानि होन्ति—इत्थिधुत्तो, सुराधुत्तो, अक्खधुत्तो, पापमित्तो पापसहायो पापसम्पवङ्को।

७. ''एवं समुप्पन्नानं, ब्यग्घपज्ज, भोगानं चत्तारि आयमुखानि होन्ति—न [R.284] इत्थिधुत्तो, न सुराधुत्तो, न अक्खधुत्तो; कल्याणमित्तो कल्याणसहायो कल्याण-सम्पवङ्को। सेय्यथापि, ब्यग्घपज्ज, महतो तळाकस्स चत्तारि चेव आयमुखानि चत्तारि च अपायमुखानि। तस्स पुरिसो यानि चेव आयमुखानि तानि विवरेय्य, यानि च अपायमुखानि तानि पिदहेय्य; देवो च सम्मा धारं अनुप्पवेच्छेय्य। एवं हि तस्स, ब्यग्घपज्ज, महतो [B.110] तळाकस्स वुद्धियेव पाटिकङ्खा, नो परिहानि; एवमेव खो, ब्यग्घपज्ज, एवं समुप्पन्नानं भोगानं चत्तारि आयमुखानि होन्ति—न इत्थिधुत्तो, न सुराधुत्तो, न अक्खधुत्तो,

---

इसका मरण सबसे अन्त में होगा, तभी तो यह अपनी आय का इतना कम उपयोग कर रहा है!' परन्तु जब वैयाघ्रपाद! कोई कुलपुत्र अपने आय एवं व्यय का तोलनात्मक समीक्षण करता हुआ अपनी जीवनशैली में समस्थिति रखता है तो वह यह समझता है कि मेरे आय एवं व्यय की इस उपाय से ही समता बनी रह सकती है। यह कहलाती है, वैयाघ्रपाद! समजीविता। (४)

६. ''वैयाघ्रपाद! इस प्रकार उस अर्जित धन का नाश करने में ये चार प्रकार के धूर्त प्रमुख होते हैं—१. स्त्रीधूर्त, २. मद्यधूर्त, ३. द्यूतधूर्त एवं ४. पापमित्रधूर्त। जैसे, वैयाघ्रपाद! किसी विशाल सरोवर में जल आने के चार मार्ग होते हैं तथा जल निकलने के भी चार मार्ग (मुख) होते हैं। कोई पुरुष उस सरोवर के जल आने के मार्गों को रोक दे, तथा जल निकलने के मार्गों को खोल दे तो, वैयाघ्रपाद! उस सरोवर की हानि की ही आशा करनी चाहिये, वृद्धि की नहीं; इसी प्रकार उस कुलपुत्र के अर्जित धन के भी ये चार धूर्तनाशक हैं।

७. इस प्रकार, वैयाघ्रपाद! उत्पन्न हुई सम्पत्ति के आयमुख भी चार ही होते हैं—स्त्रीधूर्त, मद्यधूर्त एवं द्यूतधूर्त का अभाव एवं कल्याणमित्र। जैसे, वैयाघ्रपाद! किसी बड़े सरोवर के चार आयमुख और चार अपायमुख हों। कोई पुरुष उसके चार आयमुखों को खोल दे तथा चार अपायमुखों को बन्द कर दे, तथा वर्षा भी अच्छी बरसे। इस प्रकार, वैयाघ्रपाद! उस सरोवर की जलवृद्धि ही होगी, हानि नहीं। इसी प्रकार, वैयाघ्रपाद! उक्त प्रकार से एकत्र हुई सम्पत्ति के भी चार

कल्याणमित्तो कल्याणसहायो कल्याणसम्पवङ्को। इमे खो, ब्यग्घपज्ज, चत्तारो धम्मा कुलपुत्तस्स दिट्ठधम्महिताय संवत्तन्ति दिट्ठधम्मसुखाय।

८. ''चत्तारोमे, ब्यग्घपज्ज, धम्मा कुलपुत्तस्स सम्परायहिताय संवत्तन्ति सम्परायसुखाय। कतमे चत्तारो? सद्धासम्पदा, सीलसम्पदा, चागसम्पदा, पञ्ञासम्पदा। कतमा च, ब्यग्घपज्ज, सद्धासम्पदा? इध, ब्यग्घपज्ज, कुलपुत्तो सद्धो होति, सद्दहति तथागतस्स बोधिं—'इति पि सो भगवा ...पे०... सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। अयं वुच्चति, ब्यग्घपज्ज, सद्धासम्पदा।

९. ''कतमा च, ब्यग्घपज्ज, सीलसम्पदा? इध, ब्यग्घपज्ज, कुलपुत्तो पाणातिपाता पटिविरतो होति ...पे०... सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना पटिविरतो होति। अयं वुच्चति, ब्यग्घपज्ज, सीलसम्पदा।

१०. ''कतमा च, ब्यग्घपज्ज, चागसम्पदा? इध, ब्यग्घपज्ज, कुलपुत्तो विगत-मलमच्छेरेन चेतसा अगारं अज्झावसति मुत्तचागो पयतपाणि वोस्सग्गरतो याचयोगो दानसंविभागरतो। अयं वुच्चति, ब्यग्घपज्ज, चागसम्पदा।

११. ''कतमा च, ब्यग्घपज्ज, पञ्ञासम्पदा? इध, ब्यग्घपज्ज, [N.378, R.285] कुलपुत्तो पञ्ञवा होति, उदयत्थगामिनिया पञ्ञाय समन्नागतो अरियाय निब्बेधिकाय सम्मा दुक्खक्खयगामिनिया। अयं वुच्चति, ब्यग्घपज्ज, पञ्ञासम्पदा। इमे खो, ब्यग्घपज्ज, चत्तारो धम्मा कुलपुत्तस्स सम्परायहिताय संवत्तन्ति सम्परायसुखाया ति।

''उट्ठाता कम्मधेय्येसु, अप्पमत्तो विधानवा।

---

आयमुख ...पूर्ववत्...। वैयाघ्रपाद! ये चार धर्म किसी भी कुलपुत्र के लौकिक जीवन में हितकर एवं सुखकर ही होंगे। (क)

८. ''वैयाघ्रपाद! ये चार धर्म किसी कुलपुत्र के पारलौकिक जीवन में हितकर एवं सुखकर ही होंगे। कौन से चार? (१) श्रद्धासम्पदा, (२) शीलसम्पदा, (३) त्यागसम्पदा एवं (४) प्रज्ञा-सम्पदा। वैयाघ्रपाद! यहाँ **श्रद्धासम्पदा** कौन सी है? यहाँ कोई कुलपुत्र तथागत एवं तथागत की बोधि के प्रति श्रद्धा रखता है ...पूर्ववत्...। यह, वैयाघ्रपाद! 'श्रद्धासम्पदा' कहलाती है। (१)

९. ''वैयाघ्रपाद! यह **शीलसम्पदा** क्या कहलाती है? यहाँ, वैयाघ्रपाद! कोई कुलपुत्र प्राणातिपात से ...पूर्ववत्... सुरा मैरेय मद्यपान से विरत होता है। वैयाघ्रपाद! वह 'शीलसम्पदा' कहलाती है। (२)

१०. वैयाघ्रपाद! **त्यागसम्पदा** क्या कहलाती है? यहाँ, वैयाघ्रपाद! कोई कुलपुत्र! निरभिमान एवं निर्विकार चित्त से गृहकार्य चलाता है, मुक्तहस्त, उत्साहसम्पन्न एवं त्यागभावना रखता हुआ याचकों को सतत दान करता रहता है। यह 'त्यागसम्पदा' कहलाती है। (३)

११. ''और, वैयाघ्रपाद! **प्रज्ञासम्पदा** क्या कहलाती है? यहाँ, व्याघ्रपाद! कोई कुलपुत्र! प्रज्ञावान् होता है, धर्मों के उत्पाद एवं विनाश को जाननेवाली आर्यनिर्वेधिक प्रज्ञा से समन्वित होत है, जो कि दुःखक्षय की सीमा तक पहुँचाने वाली होती है। यह कहलाती है प्रज्ञासम्पदा। (४)

समं कप्पेति जीविकं, सम्भतं अनुरक्खति॥
"सद्धो सीलेन सम्पन्नो, वदञ्ञू वीतमच्छरो।
निच्चं मग्गं विसोधेति, सोत्थानं सम्परायिकं॥
"इच्चेते अट्ठ धम्मा च, सद्धस्स घरमेसिनो।
अक्खाता सच्चनामेन, उभयत्थ सुखावहा॥
"दिट्ठधम्महितत्थाय, सम्परायसुखाय च।
एवमेतं गहट्ठानं, चागो पुञ्ञं पवड्ढती" ति॥

[B.111] **५. उज्जयसुत्तं :** १. अथ खो उज्जयो ब्राह्मणो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवता सद्धिं सम्मोदि। सम्मोदनीयं कथं सारणीयं वीतिसारेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो उज्जयो ब्राह्मणो भगवन्तं एतदवोच—"मयं, भो गोतम, पवासं गन्तुकामा। तेसं नो भवं गोतमो अम्हाकं तथा धम्मे देसेतु—ये अम्हाकं अस्सु धम्मा दिट्ठधम्महिताय दिट्ठधम्मसुखाय सम्परायहिताय सम्परायसुखाया" ति।

[R.286] २. "चत्तारोमे, ब्राह्मण, धम्मा कुलपुत्तस्स दिट्ठधम्महिताय संवत्तन्ति दिट्ठधम्मसुखाय। कतमे चत्तारो? उट्ठानसम्पदा, आरक्खसम्पदा, कल्याणमित्तता, समजीविता। कतमा च, ब्राह्मण, उट्ठानसम्पदा? इध, ब्राह्मण, कुलपुत्तो येन कम्मट्ठानेन जीविकं कप्पेति—यदि कसिया यदि वणिज्जाय यदि गोरक्खेन यदि इस्सत्तेन यदि राजपोरिसेन यदि सिप्पञ्ञतरेन — तत्थ दक्खो होति अनलसो, तत्रुपायाय वीमंसाय समन्नागतो, अलं कातुं अलं संविधातुं। अयं वुच्चति, ब्राह्मण, उट्ठानसम्पदा।

[N.379] ३. "कतमा च, ब्राह्मण, आरक्खसम्पदा? इध, ब्राह्मण, कुलपुत्तस्स भोगा होन्ति

---

वैयाघ्रपाद! ये चार धर्म किसी भी कुलपुत्र के पारलौकिक जीवन के लिये हितकर एवं सुखकर होते हैं। (ख)

"जो अपने लौकिक कर्मों को सावधानी एवं विधिपूर्वक करता हुआ अपनी जीविका समता के साथ चलाता है, उसकी अर्जित सम्पत्ति सुरक्षित रहती है॥

"जो श्रद्धा एवं शील से सम्पन्न है, अभिमान छोड़कर त्यागभावना से कर्म करता हुआ अपने जीवनमार्ग को स्वच्छ बनाये रखता है, वही पारलौकिक उन्नति प्राप्त कर पाता है॥

"इस प्रकार. ये आठ धर्म श्रद्धालु कुलपुत्र के लिये **सत्यनाम** (भगवान् बुद्ध) ने बताये हैं, जो कि उसके दोनों ही लोकों को हितकर एवं सुखकर बनाने में सहायक हो सकते हैं॥

"इहलोक के लिये हितकर तथा परलोक में सुखकर इन धर्मों के गृहस्थों द्वारा पालन से त्याग एवं पुण्य में वृद्धि होती है॥"

**५. उज्जयसूत्र : : गृहस्थ के लिये आठ धर्म**

१. कोई उज्जय नामक ब्राह्मण भगवान् के सम्मुख आया... भगवान् से यह बोला—"भो गौतम! हम प्रवास (विदेशवास) में जाना चाहते हैं, आप हमें ऐसा धर्मोपदेश करें जो हमारे इहलोक तथा परलोक—दोनों के लिये हितकर एवं सुखकर हो।" ...पूर्ववत्... ॥

उट्ठानविरियाधिगता बाहाबलपरिचिता सेदावक्खित्ता धम्मिका धम्मलद्धा। ते आरक्खेन गुत्तिया सम्पादेति—'किन्ति मे इमे भोगे नेव राजानो हरेय्युं, न चोरा हरेय्युं, न अग्गि डहेय्य, न उदकं वहेय्य, न अप्पिया दायादा हरेय्युं' ति। अयं वुच्चति, ब्राह्मण, आरक्खसम्पदा।

४. ''कतमा च, ब्राह्मण, कल्याणमित्तता? इध, ब्राह्मण, कुलपुत्तो यस्मिं गामे वा निगमे वा पटिवसति तत्र ये ते होन्ति—गहपती वा गहपतिपुत्ता वा दहरा वा वुद्धसीलिनो वुद्धा वा वुद्धसीलिनो सद्धासम्पन्ना सीलसम्पन्ना चागसम्पन्ना पञ्ञासम्पन्ना—तेहि सद्धिं सन्तिट्ठति सल्लपति साकच्छं समापज्जति; यथारूपानं सद्धासम्पन्नानं सद्धासम्पदं अनुसिक्खति... यथारूपानं सीलसम्पन्नानं सीलसम्पदं अनुसिक्खति... यथारूपानं चाग-सम्पन्नानं चागसम्पदं अनुसिक्खति... यथारूपानं पञ्ञासम्पन्नानं पञ्ञासम्पदं अनुसिक्खति, तेहि सद्धिं सन्तिट्ठति सल्लपति साकच्छं समापज्जति। अयं वुच्चति, ब्राह्मण, कल्याणमित्तता।

५. ''कतमा च, ब्राह्मण, समजीविता? इध, ब्राह्मण, कुलपुत्तो आयं च [B.112] भोगानं विदित्वा वयं च भोगानं विदित्वा समं जीविकं कप्पेति नाच्चोगाळ्हं नातिहीनं—'एवं मे आयो वयं परियादाय ठस्सति, न च मे वयो आयं परियादाय ठस्सती' ति। [R.287] सेय्यथापि, ब्राह्मण, तुलाधारो वा तुलाधारन्तेवासी वा तुलं पग्गहेत्वा जानाति—'एत्तकेन वा ओनतं, एत्तकेन वा उन्नतं' ति; एवमेव खो, ब्राह्मण, कुलपुत्तो आयं च भोगानं वयं च भोगानं विदित्वा समं जीविकं कप्पेति नाच्चोगाळ्हं नातिहीनं—'एवं मे आयो वयं परियादाय ठस्सति, न च मे वयो आयं परियादाय ठस्सती' ति। सचायं, ब्राह्मण, कुलपुत्तो अप्पायो समानो उळारं जीविकं कप्पेति, तस्स भवन्ति वत्तारो—'उदुम्बरखादीवायं कुलपुत्तो भोगे खादती' ति। सचे पनायं, ब्राह्मण, कुलपुत्तो महायो समानो कसिरं जीविकं कप्पेति, तस्स भवन्ति वत्तारो—'अजेट्ठमरणं वायं कुलपुत्तो मरिस्सती' ति। यतो च खोयं, ब्राह्मण, कुलपुत्तो आयं च भोगानं विदित्वा वयं च भोगानं विदित्वा समं जीविकं कप्पेति नाच्चोगाळ्हं नातिहीनं—'एवं मे आयो वयं परियादाय ठस्सति, न च मे वयो आयं [N.380] परियादाय ठस्सती' ति, अयं वुच्चति, ब्राह्मण, समजीविता।

६. ''एवं समुप्पन्नानं, ब्राह्मण, भोगानं चत्तारि अपायमुखानि होन्ति—इत्थिधुत्तो, सुराधुत्तो, अक्खधुत्तो, पापमित्तो पापसहायो पापसम्पवङ्को। सेय्यथापि, ब्राह्मण, महतो तळाकस्स चत्तारि चेव आयमुखानि चत्तारि च अपायमुखानि। तस्स पुरिसो यानि चेव आयमुखानि तानि पिदहेय्य, यानि च अपायमुखानि तानि विवरेय्य; देवो च न सम्मा धारं अनुप्पवेच्छेय्य। एवं हि तस्स ब्राह्मण, महतो तळाकस्स परिहानियेव पाटिकङ्खा, नो [R.288] वुद्धि; एवमेव खो, ब्राह्मण, एवं समुप्पन्नानं भोगानं चत्तारि अपायमुखानि होन्ति—इत्थिधुत्तो, सुराधुत्तो, अक्खधुत्तो, पापमित्तो पापसहायो पापसम्पवङ्को।

७. ''एवं समुप्पन्नानं, ब्राह्मण, भोगानं चत्तारि आयमुखानि होन्ति—न इत्थिधुत्तो, न

---

*(अनुपदवर्णित दीर्घजानुसूत्र के पाठ का अविकल विस्तार कर लें।)*

सुराधुत्तो, न अक्खधुत्तो, कल्याणमित्तो कल्याणसहायो कल्याणसम्पवङ्को। सेय्यथापि, ब्राह्मण, महतो तळाकस्स चत्तारि चेव आयमुखानि चत्तारि च अपायमुखानि। तस्स पुरिसो [B.113] यानि चेव आयमुखानि तानि विवरेय्य, यानि च अपायमुखानि तानि पिदहेय्य; देवो च सम्मा धारं अनुप्पवेच्छेय्य। एवं हि तस्स, ब्राह्मण, महतो तळाकस्स वुद्धियेव पाटिकङ्खा, नो परिहानि; एवमेव खो, ब्राह्मण, एवं समुप्पन्नानं भोगानं चत्तारि आयमुखानि होन्ति—न इत्थिधुत्तो ...पे०... कल्याणसम्पवङ्को। इमे खो, ब्राह्मण, चत्तारो धम्मा कुलपुत्तस्स दिट्ठधम्महिताय संवत्तन्ति दिट्ठधम्मसुखाय।

८. ''चत्तारोमे, ब्राह्मण, कुलपुत्तस्स धम्मा सम्परायहिताय संवत्तन्ति सम्पराय-सुखाय। कतमे चत्तारो ? सद्धासम्पदा, सीलसम्पदा, चागसम्पदा, पञ्ञासम्पदा। कतमा च, ब्राह्मण, सद्धासम्पदा ? इध, ब्राह्मण, कुलपुत्तो सद्धो होति, सद्दहति तथागतस्स बोधिं—'इति पि सो भगवा ...पे०... सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। अयं वुच्चति, ब्राह्मण, सद्धासम्पदा।

९. ''कतमा च, ब्राह्मण, सीलसम्पदा ? इध, ब्राह्मण, कुलपुत्तो पाणातिपाता पटि-विरतो होति ...पे०... सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना पटिविरतो होति। अयं वुच्चति, ब्राह्मण, सीलसम्पदा।

[N.381,R.289] १०. ''कतमा च, ब्राह्मण, चागसम्पदा ? इध, ब्राह्मण, कुलपुत्तो विगतमलमच्छेरेन चेतसा अगारं अज्झावसति मुत्तचागो पयतपाणि वोस्सग्गरतो याचयोगो दानसंविभागरतो। अयं वुच्चति, ब्राह्मण, चागसम्पदा।

११. ''कतमा च, ब्राह्मण, पञ्ञासम्पदा ? इध, ब्राह्मण, कुलपुत्तो पञ्ञवा होति ...पे०... सम्मा दुक्खक्खयगामिनिया। अयं वुच्चति, ब्राह्मण, पञ्ञासम्पदा। इमे खो, ब्राह्मण, चत्तारो धम्मा कुलपुत्तस्स सम्परायहिताय संवत्तन्ति सम्परायसुखाया ति।

''उट्ठाता कम्मधेय्येसु, अप्पमत्तो विधानवा।
समं कप्पेति जीविकं, सम्भतं अनुरक्खति॥
''सद्धो सीलेन सम्पन्नो, वदञ्ञू वीतमच्छरो।
निच्चं मग्गं विसोधेति, सोत्थानं सम्परायिकं॥
''इच्चेते अट्ठ धम्मा च, सद्धस्स घरमेसिनो।
अक्खाता सच्चनामेन, उभयत्थ सुखावहा॥
''दिट्ठधम्महितत्थाय, सम्परायसुखाय च।
एवमेतं गहट्ठानं, चागो पुञ्ञं पवड्ढती'' ति॥ ●

[B.114] **६. भयसुत्तं** : १. '''भयं' ति, भिक्खवे, कामानमेतं अधिवचनं। 'दुक्खं' ति,

---

**६. भयसूत्र** : : **आठ धर्म उभय लोक साधक**

१. ''भिक्षुओ! १. 'भय', २. 'दुःख', ३. 'रोग', ४. 'गण्ड', ५. 'शल्य', ६. 'सङ्ग',

भिक्खवे, कामानमेतं अधिवचनं। 'रोगो' ति, भिक्खवे, कामानमेतं अधिवचनं। 'गण्डो' ति, भिक्खवे, कामानमेतं अधिवचनं। 'सल्लं' ति, भिक्खवे, कामानमेतं अधिवचनं। 'सङ्गो' ति, भिक्खवे, कामानमेतं अधिवचनं। 'पङ्को' ति, भिक्खवे, कामानमेतं अधिवचनं। 'गब्भो' ति, भिक्खवे, कामानमेतं अधिवचनं। कस्मा च, भिक्खवे, 'भयं' ति कामानमेतं अधिवचनं? यस्मा च कामरागरत्तायं, भिक्खवे, छन्दरागविनिबद्धो दिट्ठधम्मिका पि भया न [R.290] परिमुच्चति, सम्परायिका पि भया न परिमुच्चति, तस्मा 'भयं' ति कामानमेतं अधिवचनं। कस्मा च, भिक्खवे, 'दुक्खं' ति ...पे०... 'रोगो' ति... 'गण्डो' ति... 'सल्लं' ति... 'पङ्को' ति... 'गब्भो' ति कामानमेतं अधिवचनं? यस्मा च कामरागरत्तायं, भिक्खवे, छन्दराग-विनिबद्धो दिट्ठधम्मिका पि गब्भा न परिमुच्चति, सम्परायिका पि गब्भा न परि- [N.382] मुच्चति, तस्मा 'गब्भो' ति कामानमेतं अधिवचनं।

''भयं दुक्खं च रोगो च, गण्डो सल्लं च सङ्गो च।
''पङ्को गब्भो च उभयं, एते कामा पवुच्चन्ति॥
''यत्थ सत्तो पुथुज्जनो, ओतिण्णो सातरूपेन।
पुन गब्भाय गच्छति॥
''यतो च भिक्खु आतापी, सम्पजञ्ञं न रिच्चति।
सो इमं पलिपथं दुग्गं, अतिक्कम्म तथाविधो।
पजं जातिजरूपेतं, फन्दमानं अवेक्खती'' ति॥ ●

**७. पठमआहुनेय्यसुत्तं** : १. ''अट्ठहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु

---

७. 'पङ्क' एवं ८. 'गर्भ'—ये सभी शब्द कामभोग के पर्याय हैं। भिक्षुओ! 'भय' शब्द कामभोगों का पर्याय कैसे हैं? क्योंकि, भिक्षुओ! कामराग में अनुरक्त पुरुष छन्दराग में बँधा हुआ ऐहलौकिक भय से भी मुक्त नहीं हो पाता और न पारलौकिक भय से ही मुक्त हो पाता है। भिक्षुओ! 'दुःख'... 'रोग'... 'गण्ड'... 'शल्य'... 'सङ्ग'... 'पङ्क'... 'गर्भ' शब्द कामभोगों का पर्याय कैसे हैं? क्योंकि, भिक्षुओ! कामराग में अनुरक्त पुरुष छन्दराग में आबद्ध होकर इस लोक तथा परलोक—दोनों ही लोकों के भय से मुक्त नहीं होता, अतः वह गर्भ (जन्मपरम्परा) से भी मुक्त नहीं हो पाता। अतः 'गर्भ' शब्द भी कामभोगों का पर्याय (उसी अर्थ का बोधक) है।

''भय, दुःख, रोग, गण्ड, शल्य, सङ्ग, पङ्क एवं गर्भ—ये सभी शब्द 'काम' के ही पर्याय हैं॥

''जहाँ आसक्त हुआ मूर्ख पुरुष (सांसारिक) आसक्ति में फँसकर गर्भ (जन्म-मरण के चक्र) में पड़ा रहता है॥

''जब साधक भिक्षु साधना में उद्योगी होता हुआ स्मृति सम्प्रजन्यपूर्वक रहता है तब वह इस निर्वाण-विरोधी मार्ग का अतिक्रमण कर जन्म-मरण के चक्र में फँसी हुई जनता की वास्तविक स्थिति समझने लगता है॥'' ●

**७. प्रथम आहवनीयसूत्र : : आहवनीय भिक्षु के आठ धर्म**

१. ''भिक्षुओ! आठ धर्मों से युक्त आहवनीय, प्राहवणीय, दक्षिणेय, अञ्जलिकरणीय, तथा

आहुनय्यो होति पाहुनेय्यो दक्खिणेय्यो अञ्जलिकरणीयो अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमेहि अट्ठहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु सीलवा होति ...पे०... समादाय सिक्खति [B.115] सिक्खापदेसु; बहुस्सुतो होति ...पे०... दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा; कल्याणमित्तो होति [R.291] कल्याणसहायो कल्याणसम्पवङ्को; सम्मादिट्ठिको होति, सम्मादस्सनेन समन्नागतो; चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी; अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति, सेय्यथीदं—एकं पि जातिं द्वे पि जातियो ...पे०... इति साकारं सउद्देसं अनेकविहितं पुब्बेनिवासं अनुस्सरति; दिब्बेन चक्खुना विसुद्धेन अतिक्कन्तमानुसकेन ...पे०... यथाकम्मूपगे सत्ते पजानाति; आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा'' ति॥ ●

**८. दुतियआहुनेय्यसुत्तं** : १. ''अट्ठहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो होति ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमेहि अट्ठहि? इध, भिक्खवे, [N.383] भिक्खु सीलवा होति ...पे०... समादाय सिक्खति सिक्खापदेसु; बहुस्सुतो होति ...पे०... दिट्ठिया सुप्पटिविद्धा; आरद्धविरियो विहरति थामवा दळ्हपरक्कमो अनिक्खित्तधुरो कुसलेसु धम्मेसु; आरञ्ञिको होति पन्तसेनासनो; अरतिरतिसहो होति, उप्पन्नं अरतिं अभिभुय्य अभिभुय्य विहरति; भयभेरवसहो होति, उप्पन्नं भयभेरवं अभिभुय्य अभिभुय्य [R.292] विहरति; चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी; आसवानं खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु आहुनेय्यो ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा'' ति॥ ●

---

लोक के लिये अद्वितीय पुण्यस्थल है। किन आठ धर्मों से? (१) यहाँ, भिक्षुओ! जो कोई भिक्षु शीलवान् होता है..., पूर्ववत्..., (२) बहुश्रुत होता है...; (३) कल्याणमित्र होता है...; (४) सम्यग्दृष्टि होता है...; (५) आध्यात्मिक चारों ध्यानों का लाभी होता है...; (६) (अपने) अनेक पूर्वजन्मों का स्मरण करता है...; (७) मानवदुर्लभ दिव्य चक्षु से दूसरे प्राणियों के जन्मों के विषय में ज्ञान रखता है...; (८) आश्रवों के क्षय से... अनाश्रवा चेतोविमुक्ति... साक्षात्कार कर प्राप्त कर साधना करता है। भिक्षुओ! ऐसा भिक्षु आहवनीय ...पूर्ववत्... लोक के लिये पुण्यस्थल है॥''

**८. द्वितीय आहवनीयसूत्र : : आहवनीय भिक्षु के आठ धर्म**

१. ''भिक्षुओ! आठ धर्मों से युक्त पुद्गल ...पूर्ववत्...। कौन से आठ धर्मों से? यहाँ, भिक्षुओ! जो कोई भिक्षु (१) शीलवान् होता है...; (२) बहुश्रुत होता है...; (३) साधना में उद्योगरत होता है..., (४) अरण्य में एकान्तवासी होता है; (५) उत्पन्न अरति की उपेक्षा करता हुआ साधना में दत्तचित्त रहता है...; (६) विविध भय की भीषणता को सहन करने वाला होता है...; (७) आध्यात्मिक चार ध्यानों का लाभी होता है...; (८) आश्रवों के क्षय से... अनाश्रवा

**९. पठमपुग्गलसुत्तं** : १. "अट्ठिमे भिक्खवे, पुग्गला आहुनेय्या पाहुनेय्या दक्खिणेय्या अञ्जलिकरणीया अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स? कतमे अट्ठ? सोतापन्नो, सोतापत्तिफलसच्छिकिरियाय पटिपन्नो, सकदागामी, सकदागामिफलसच्छि-किरियाय पटिपन्नो, अनागामी, अनागामिफलसच्छिकिरियाय पटिपन्नो, अरहा, अरहत्ताय पटिपन्नो। इमे खो, भिक्खवे, अट्ठ पुग्गला आहुनेय्या ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा ति ॥

"चत्तारो च पटिपन्ना, चत्तारो च फले ठिता। [B.116]
एस सङ्घो उजुभूतो, पञ्ञासीलसमाहितो ॥
"यजमानानं मनुस्सानं, पुञ्ञपेक्खान पाणिनं।
करोतं ओपधिकं पुञ्ञं, सङ्घे दिन्नं महप्फलं" ति ॥ ●

**१०. दुतियपुग्गलसुत्तं** : १. "अट्ठिमे, भिक्खवे, पुग्गला आहुनेय्या ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्स। कतमे अट्ठ? सोतापन्नो, सोतापत्तिफलसच्छि- [R.293] किरियाय पटिपन्नो ...पे०... अरहा, अरहत्ताय पटिपन्नो। इमे खो, भिक्खवे, अट्ठ पुग्गला आहुनेय्या ...पे०... अनुत्तरं पुञ्ञक्खेत्तं लोकस्सा ति।

"चत्तारो च पटिपन्ना, चत्तारो च फले ठिता। [N.384]
एस सङ्घो समुक्कट्ठो, सत्तानं अट्ठ पुग्गला ॥
"यजमानानं मनुस्सानं, पुञ्ञपेक्खान पाणिनं।
करोतं ओपधिकं पुञ्ञं, एत्थ दिन्नं महप्फलं" ति ॥ ●

**गोतमीवग्गो छट्ठो ॥**

---

चेतोविमुक्ति... साक्षात्कार कर प्राप्त कर साधना करता है। भिक्षुओ! ऐसे आठ पुद्गल आहवनीय... लोक के लिये अद्वितीय पुण्यस्थल होते हैं॥" ●

**९. प्रथम पुद्गलसूत्र : : सङ्घ के उद्देश्य से किया दान अतिशय फलदायी**

१. भिक्षुओ! ये आठ पुद्गल आहवनीय ...पूर्ववत्...। कौन से आठ? (१) स्रोतआपन्न, (२) स्रोतआपत्तिफलसाक्षात्कारयुक्त, (३) सकृदागामी, (४) सकृदागामिफलसाक्षात्कारयुक्त, (५) अनागामी, (६) अनागामिफलसाक्षात्कारयुक्त, (७) अर्हत् एवं (८) अर्हत्त्वप्रतिपन्न। भिक्षुओ! ये आठ पुद्गल ...पूर्ववत्...।

"चार प्रतिपन्न एवं चार फलस्थित—इस प्रकार इन आठ पुद्गलों का समूह 'सङ्घ' कहलाता है। इसका क्रियाकलाप अन्य प्राणियों की अपेक्षा उत्कृष्ट है। इसने प्रज्ञा एवं शील से समन्वित होकर स्वयं को समाहित कर लिया है॥

"पुनर्जन्म को आधार मानकर किये जानेवाले पुण्यकर्म के कर्ता पुण्यापेक्ष प्राणी एवं दानी मनुष्यों द्वारा ऐसे सङ्घ को ही दान करना चाहिये; क्योंकि इसको किया हुआ दान अतिशय फलप्रद होता है॥" ●

**तस्सुद्दानं**

गोतमी ओवादं सङ्खित्तं, दीघजाणु च उज्जयो।
भया द्वे आहुनेय्या च, द्वे च अट्ठ पुग्गला ति॥ ●

## ७. भूमिचालवग्गो

**१. इच्छासुत्तं :** १. ''अट्ठिमे, भिक्खवे, पुग्गला सन्तो संविज्जमाना लोकस्मिं। कतमे अट्ठ? इध, भिक्खवे, भिक्खुनो पविवित्तस्स विहरतो निरायत्तवुत्तिनो इच्छा उप्पज्जति लाभाय। सो उट्ठहति घटति वायमति लाभाय। तस्स उट्ठहतो घटतो वायमतो लाभाय लाभो नुप्पज्जति। सो तेन अलाभेन सोचति किलमति परिदेवति, उरत्ताळिं कन्दति, सम्मोहं [B.117,R.294] आपज्जति। अयं वुच्चति, भिक्खवे—'भिक्खु इच्छो विहरति लाभाय, उट्ठहति घटति वायमति लाभाय, न च लाभी, सोची च परिदेवी च, चुतो च सद्धम्मा'।

---

**१०. द्वितीय पुद्गलसूत्र : : सङ्घ के उद्देश्य से कृत दान अतिशय फलप्रद**

१. भिक्षुओ! ये आठ पुद्गल ...पूर्ववत्...॥ ●

*(पूर्वपठित सूत्र के समान ही विस्तार कर लें।)*

**गौतमीवर्ग षष्ठ सम्पन्न॥**

**इस वर्ग ( में पठित सूत्रों ) की सूची**

१. गौतमीसूत्र, २. अववादसूत्र, ३. संक्षिप्तसूत्र, ४. दीर्घ जानुसूत्र, ५. उज्जयसूत्र, ६. भयसूत्र, ७. प्रथम आहवनीयसूत्र, ८. द्वितीय आहवनीयसूत्र, ९. प्रथम पुद्गलसूत्र, एवं १०. द्वितीय पुद्गलसूत्र॥

## ७. भूमिचालवर्ग

**१. इच्छासूत्र : : अष्टविध इच्छाएँ**

१. भिक्षुओ! लोक में आठ प्रकार के पुद्गल विद्यमान हैं। कौन से आठ? भिक्षुओ! यहाँ किसी वृत्तिविहीन भिक्षु को एकान्त में साधना करते समय कभी यह इच्छा उत्पन्न होती है कि मैं कोई लाभ देने वाला कार्य करूँ। तब वह (साधना छोड़कर उस) लाभप्राप्ति के लिये उठ खड़ा होता है... तदर्थ प्रयास करता है, वैसी चेष्टाएँ करता है। उसके यह सब करने पर भी जब लाभ से लाभ नहीं उत्पन्न होता तो वह उस अलाभ (हानि) के कारण शोक, एवं विलाप करता है, छाती पीटता हुआ रोता है, अन्त में वह (शोकाधिक्य से) मूर्च्छित हो जाता है। भिक्षुओ! ऐसा पुद्गल 'यह भिक्षु लाभ की इच्छा से साधना कर रहा है, उसी के लिये इसके सब प्रयास एवं चेष्टाएँ हुई हैं; परन्तु इसको लाभ नहीं मिला अत: यह अब शोक, विलाप मग्न हो कर छाती पीट रहा है तथा सद्धर्म से भी च्युत हो गया' कहलाता है। (१)

२. "इध पन, भिक्खवे, भिक्खुनो पविवित्तस्स विहरतो निरायत्तवुत्तिनो इच्छा उप्पज्जति लाभाय। सो उट्ठहति घटति वायमति लाभाय। तस्स उट्ठहतो घटतो वायमतो लाभाय लाभो उप्पज्जति। सो तेन लाभेन मज्जति पमज्जति पमादमापज्जति। अयं वुच्चति, भिक्खवे—'भिक्खु इच्छो विहरति लाभाय, उट्ठहति घटति वायमति लाभाय, लाभी च मदी च पमादी च, चुतो च सद्धम्मा'।

३. "इध पन, भिक्खवे, भिक्खुनो पविवित्तस्स विहरतो निरायत्तवुत्तिनो इच्छा उप्पज्जति लाभाय। सो न उट्ठहति न घटति न वायमति लाभाय। तस्स अनुट्ठहतो [N.385] अघटतो अवायमतो लाभाय लाभो नुप्पज्जति। सो तेन अलाभेन सोचति किलमति परिदेवति, उरत्ताळिं कन्दति, सम्मोहं आपज्जति। अयं वुच्चति, भिक्खवे—'भिक्खु इच्छो विहरति लाभाय, न उट्ठहति न घटति न वायमति लाभाय, न च लाभी, सोची च परिदेवी च, चुतो च सद्धम्मा'।

४. "इध पन, भिक्खवे, भिक्खुनो पविवित्तस्स विहरतो निरायत्तवुत्तिनो इच्छा उप्पज्जति लाभाय। सो न उट्ठहति न घटति न वायमति लाभाय। तस्स अनुट्ठहतो अघटतो अवायमतो लाभाय लाभो उप्पज्जति। सो तेन लाभेन मज्जति पमज्जति पमादमाज्जति। अयं वुच्चति, भिक्खवे—'भिक्खु इच्छो विहरति लाभाय, न उट्ठहति न घटति न वायमति लाभाय, लाभी च मदी च, पमादी च, चुतो च सद्धम्मा'।

---

२. "पुन: भिक्षुओ! यहाँ किसी अन्य एकान्तवासी भिक्षु को एकान्त में साधना करते समय कभी यह इच्छा उत्पन्न होती है कि मैं कोई लाभ देने वाला कार्य करूँ। तब वह (साधना छोड़कर उस) लाभ-प्राप्ति के लिये उठ खड़ा होता है, तदर्थ प्रयास करता है, वैसी चेष्टाएँ करता है। उसके यह सब करने पर जब उसको लाभ से लाभ उत्पन्न होता है तो वह उस लाभ के कारण हर्ष से उन्मत्त प्रमत्त हो जाता है। भिक्षुओ! यह भिक्षु ऐसा कहलाता है—'यह भिक्षु लाभ का इच्छुक था, तदर्थ प्रयास कर रहा था, अन्त में लाभ होने पर वह हर्षोन्मत्त हो उठा तथा यह सद्धर्म से भी च्युत हो गया।' (२)

३. "पुन:, भिक्षुओ! यहाँ किसी अन्य एकान्तवासी भिक्षु को एकान्त में साधना करते समय लाभ की इच्छा होती है। परन्तु वह उसके लिये न उत्साहसम्पन्न होता है, न उसकी प्राप्ति हेतु कोई प्रयास या चेष्टा ही करता है। उसके ऐसा करने से उसको लाभ से लाभ नहीं मिल पाता। वह उस लाभ के न मिलने से शोक परिदेव एवं छाती पीटता हुआ रोने लगता है, मूर्च्छित हो जाता है। भिक्षुओ! यह भिक्षु—'यह भिक्षु लाभ का इच्छुक था, परन्तु उसकी प्राप्ति के लिये इसने कोई श्रम या प्रयास नहीं किया। फिर भी यह उसकी प्राप्ति न होने से शोक, परिदेव एवं छाती पीटकर रुदन कर रहा है। यह सद्धर्म से भी च्युत हो गया'—ऐसा कहलाता है। (३)

४. "पुन:, भिक्षुओ! यहाँ किसी एकान्तवासी भिक्षु को एकान्त में धर्मसाधना करते समय लाभ की इच्छा होती है। परन्तु उसकी प्राप्तिहेतु वह कोई प्रयास, चेष्टा नहीं करता। ऐसा न करने पर भी उसको लाभ की प्राप्ति हो जाती है। उस प्राप्ति के हर्ष से वह उन्मत्त प्रमत्त हो उठता है। भिक्षुओ!

५. ''इध पन, भिक्खवे, भिक्खुनो पविवित्तस्स विहरतो निरायत्तवुत्तिनो इच्छा उप्पज्जति लाभाय। सो न उट्ठहति न घटति न वायमति लाभाय। तस्स उट्ठहतो घटतो [R.295] वायमतो लाभाय लाभो नुप्पज्जति। सो तेन अलाभेन न सोचति न किलमति न परिदेवति, न उरत्ताळिं कन्दति, न सम्मोहं आपज्जति। अयं वुच्चति, भिक्खवे—'भिक्खु इच्छो विहरति लाभाय, उट्ठहति घटति वायमति लाभाय, न च लाभी, न च सोची न च परिदेवी, अच्चुतो च सद्धम्मा'।

६. ''इध पन, भिक्खवे, भिक्खुनो पविवित्तस्स विहरतो निरायत्तवुत्तिनो इच्छा उप्पज्जति लाभाय। सो न उट्ठहति न घटति न वायमति लाभाय। तस्स उट्ठहतो घटतो [B.118] वायमतो लाभाय लाभो उप्पज्जति। सो तेन लाभेन न मज्जति न पमज्जति न पमादमापज्जति। अयं वुच्चति, भिक्खवे—'भिक्खु इच्छो विहरति लाभाय, उट्ठहति घटति वायमति लाभाय, लाभी च, न च मदी न च पमादी, अच्चुतो च सद्धम्मा'।

७. ''इध पन, भिक्खवे, भिक्खुनो पविवित्तस्स विहरतो निरायत्तवुत्तिनो इच्छा उप्पज्जति लाभाय। सो न उट्ठहति न घटति न वायमति लाभाय। तस्स अनुट्ठहतो अघटतो अवायमतो लाभाय लाभो नुप्पज्जति। सो तेन अलाभेन न सोचति न किलमति न [N.386] परिदेवति, न उरत्ताळिं कन्दति, न सम्मोहं आपज्जति। अयं वुच्चति, भिक्खवे—'भिक्खु इच्छो विहरति लाभाय, न उट्ठहति न घटति न वायमति लाभाय, न च लाभी, न च सोची न च परिदेवी, अच्चुतो च सद्धम्मा'।

८. ''इध पन, भिक्खवे, भिक्खुनो पविवित्तस्स विहरतो निरायत्तवुत्तिनो इच्छा उप्पज्जति लाभाय। सो न उट्ठहति न घटति न वायमति लाभाय। तस्स अनुट्ठहतो अघटतो अवायमतो लाभाय लाभो उप्पज्जति। सो तेन लाभेन न मज्जति न पमज्जति न

---

ऐसे भिक्षु के लिये कहा जाता है—'इस भिक्षु को लाभ की इच्छा हुई थी; परन्तु इसने उसकी प्राप्ति का कोई प्रयास या चेष्टा या श्रम नहीं किया। तो भी उसके प्राप्त हो जाने के कारण हुए हर्ष से यह उन्मत्त प्रमत्त हो उठा है तथा सद्धर्म से भी च्युत हो गया है।' (४) (क)

५. ''पुनः, भिक्षुओ! ...पूर्ववत्... जब लाभ से लाभ नहीं मिलता तो भी उस अलाभ के कारण शोक, परिदेव, छाती पीटकर रुदन आदि नहीं करता, न मूर्च्छित ही होता है। भिक्षुओ! ऐसे भिक्षु को कहा जाता है—'इस भिक्षु को लाभ की इच्छा हुई थी; परन्तु इसने उसके लिये कोई प्रयास आदि नहीं किया। इसको वह लाभ नहीं मिला, तो भी इसने उसके लिये शोक, परिदेव या रुदन आदि नहीं किया। और यह सद्धर्म से भी च्युत नहीं हुआ।' (५)

६. ''पुनः, भिक्षुओ!... जब लाभ से लाभ मिल जाता है तो भी वह तज्जन्य हर्ष से उन्मत्त प्रमत्त नहीं होता। ...पूर्ववत्...। (६)

७. ''पुनः, भिक्षुओ!... वह उसकी प्राप्ति के लिये कोई प्रयास नहीं करता, अतः उसको वह लाभ नहीं मिल पाता। परन्तु उसके न मिलने से उसको कोई शोक, परिदेव... मूर्च्छित नहीं होता। तथा धर्म से भी च्युत नहीं होता। (७)

पमादमापज्जति। अयं वुच्चति, भिक्खवे—'भिक्खु इच्छो विहरति लाभाय, न उट्ठहति न घटति न वायमति लाभाय, लाभी च, न च मदी न च पमादी, अच्चुतो च सद्धम्मा'। इमे खो, भिक्खवे, अट्ठ पुग्गला सन्तो संविज्जमाना लोकस्मिं'' ति॥ ●

२. अलंसुत्तं : १. ''छहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं [R.296] अत्तनो अलं परेसं। कतमेहि छहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु खिप्पनिसन्ति च होति कुसलेसु धम्मेसु; सुतानं च धम्मानं धारणजातिको होति; धातानं च धम्मानं अत्थूपपरिक्खिता होति; अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो च होति; कल्याणवाचो च होति कल्याण-वाक्करणो, पोरिया वाचाय समन्नागतो विस्सट्ठाय अनेलगळाय अत्थस्स विञ्ञा- [B.119] पनिया; सन्दस्सको च होति समादपको समुत्तेजको सम्पहंसको सब्रह्मचारीनं। इमेहि खो, भिक्खवे, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं अत्तनो अलं परेसं।

२. ''पञ्चहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं अत्तनो अलं परेसं। कतमेहि पञ्चहि? इध, भिक्खवे, भिक्खु न हेव खो खिप्पनिसन्ति च होति कुसलेसु धम्मेसु; सुतानं च धम्मानं धारणजातिको होति; धातानं च धम्मानं अत्थूपपरिक्खिता होति; अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो च होति; कल्याणवाचो च होति ...पे०... अत्थस्स विञ्ञापनिया; सन्दस्सको च होति समादपको समुत्तेजको सम्पहंसको सब्रह्मचारीनं। इमेहि खो, भिक्खवे, पञ्चहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं अत्तनो [N.387] अलं परेसं।

३. ''चतूहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं अत्तनो नालं परेसं। कतमेहि

---

८. पुनः, भिक्षुओ! पूर्ववत्... प्रयास न करने पर भी उसको लाभ मिल जाता है। तो भी उसके कारण वह न उन्मत्त होता है, न प्रमत्त और वह धर्म से भी च्युत नहीं होता। (८)

''भिक्षुओ! इस प्रकार लोक में ये आठ प्रकार के पुद्गल होते हैं॥'' ●

**२. अलंसूत्र : : स्व-परिहितसम्पादन में समर्थ भिक्षु**

१. ''भिक्षुओ! छह धर्मों से युक्त भिक्षु स्व तथा पर दोनों के हित सम्पादन के लिये समर्थ होता है। किन छह धर्मों से? भिक्षुओ! साधक भिक्षु कुशल धर्मों पर पूर्ण ध्यान देता है, श्रुत धर्मों को मन में बैठा लेता है, मन में बैठाये हुए धर्मों का अर्थपरीक्षण करता है, तथा अर्थपरीक्षण कर उनके अनुसार आचरण करता है, मङ्गलमय वाणी बोलता है, अपने साथियों को भी सभ्य वाणी से सार्थक बात ही बोलकर प्रोत्साहित करता है। इन छह धर्मों से युक्त भिक्षु स्व तथा पर—दोनों के हितसाधन में समर्थ होता है। (१)

२. ''भिक्षुओ! पाँच धर्मों से युक्त भिक्षु (भी) स्व तथा पर—दोनों के हितसाधन में समर्थ होता है। कौन पाँच धर्मों से? भिक्षुओ! यहाँ कोई भिक्षु कुशल धर्मों पर, भले ही, पूर्ण ध्यान न देता हो, परन्तु वह श्रुत धर्मों को धारण करता (मन में बैठा लेता) है, ...पूर्ववत्... प्रोत्साहित करता है। इन पाँच धर्मों से... समर्थ होता है। (२)

३. ''भिक्षुओ! चार धर्मों से युक्त भिक्षु अपना हित कर सकता है, दूसरों का नहीं। किन चार

[R.297] चतूहि ? इध, भिक्खवे, भिक्खु खिप्पनिसन्ति च होति कुसलेसु धम्मेसु; सुतानं च धम्मानं धारणजातिको होति; धातानं च धम्मानं अत्थूपपरिक्खिता होति; अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो च होति; नो च कल्याणवाचो होति कल्याणवाक्करणो, पोरिया वाचाय समन्नागतो विस्सट्ठाय अनेलगळाय अत्थस्स विञ्ञापनिया; नो च सन्दस्सको च होति समादपको समुत्तेजको सम्पहंसको सब्रह्मचारीनं। इमेहि खो, भिक्खवे, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं अत्तनो अलं परेसं।

४. ''चतूहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं परेसं, नालं अत्तनो। कतमेहि चतूहि ? इध, भिक्खवे, भिक्खु खिप्पनिसन्ति च होति कुसलेसु धम्मेसु; सुतानं च धम्मानं धारणजातिको होति; नो च धातानं धम्मानं अत्थूपपरिक्खिता होति; न च अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो होति; कल्याणवाचो च होति कल्याणवाक्करणो ...पे०... अत्थस्स विञ्ञापनिया; सन्दस्सको च होति ...पे०... सब्रह्मचारीनं। इमेहि खो, भिक्खवे, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं परेसं, नालं अत्तनो।

५. ''तीहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं अत्तनो, नालं परेसं। कतमेहि तीहि ? इध, भिक्खवे, भिक्खु न हेव खो खिप्पनिसन्ति च होति कुसलेसु धम्मेसु; सुतानं च [B.120] धम्मानं धारणजातिको होति; धातानं च धम्मानं अत्थूपपरिक्खिता होति; अत्थ- [R.298] मञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो च होति; नो च कल्याणवाचो होति कल्याणवाक्करणो, पोरिया वाचाय समन्नागतो विस्सट्ठाय अनेलगळाय अत्थस्स विञ्ञापनिया; नो च सन्दस्सको होति समादपको समुत्तेजको सम्पहंसको सब्रह्मचारीनं। इमेहि खो, भिक्खवे, तीहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं अत्तनो, नालं परेसं।

---

धर्मों से ? यहाँ भिक्षुओ ! कोई भिक्षु कुशल धर्मों पर पूर्ण ध्यान देता है, श्रुत धर्मों को मन में बैठा लेता है, ऐसे धर्मों का अर्थपरीक्षण करता है तथा ऐसे अर्थपरीक्षित धर्मों पर आचरण करता है, भले ही वह न मङ्गलमय वाणी बोलता हो और न सार्थक वाणी बोलकर साथियों को प्रोत्साहित ही करता हो। ऐसा चार धर्मों से युक्त भिक्षु स्वहितसम्पादन में समर्थ होता है, दूसरों के हितसम्पादन में नहीं। (३)

४. ''भिक्षुओ ! इन चार धर्मों से युक्त भिक्षु परहितसम्पादन में समर्थ होता है, स्वहित में नहीं। किन चार धर्मों से ? यहाँ, भिक्षुओ ! कोई भिक्षु कुशल धर्मों पर पूर्ण ध्यान देता है, सुने हुए धर्मों को मन में बैठा लेता है; परन्तु उन धर्मों का वह न अर्थपरीक्षण ही करता है और न उनको, अर्थपरीक्षण कर, अपने आचरण में ही सम्मिलित करता है। हाँ, वह मङ्गलमय वाणी बोलता है, और सार्थक वाणी बोलकर साथियों को भी प्रोत्साहित करता है। ऐसा चार धर्मों से युक्त भिक्षु परहितसम्पादन में ही समर्थ होता है, स्वहितसम्पादन में नहीं। (४)

५. ''भिक्षुओ ! तीन धर्मों से युक्त भिक्षु स्वहित ही सम्पादन कर सकता है, दूसरों का नहीं। कौन से तीन ? जो भिक्षु कुशल धर्मों पर पूर्ण ध्यान नहीं देता, परन्तु श्रुत धर्मों को मन में बैठा लेता है, तथा उन धर्मों का अर्थपरीक्षण भी करता है, अर्थपरीक्षण कर उन धर्मों पर आचरण भी करता है, परन्तु न

६. ''तीहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं परेसं, नालं अत्तनो। [N.388] कतमेहि तीहि ? इध, भिक्खवे, भिक्खु न हेव खो खिप्पनिसन्ति च होति कुसलेसु धम्मेसु; सुतानं च धम्मानं धारणजातिको होति; नो च धातानं धम्मानं अत्थूपपरिक्खिता होति; नो च अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो होति; कल्याणवाचो च होति ...पे०... अत्थस्स विञ्ञापनिया; सन्दस्सको च होति समादपको समुत्तेजको सम्पहंसको सब्रह्मचारीनं। इमेहि खो, भिक्खवे, तीहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं परेसं, नालं अत्तनो।

७. ''द्वीहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं अत्तनो, नालं परेसं। कतमेहि द्वीहि ? इध, भिक्खवे, भिक्खु न हेव खो खिप्पनिसन्ति च होति कुसलेसु धम्मेसु; नो च सुतानं धम्मानं धारणजातिको होति; धातानं च धम्मानं अत्थूपपरिक्खिता होति; अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो च होति; नो च कल्याणवाचो होति ...पे०... अत्थस्स विञ्ञापनिया; नो च सन्दस्सको होति ...पे०... सब्रह्मचारीनं। इमेहि खो, भिक्खवे, द्वीहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं अत्तनो, नालं परेसं।

८. ''द्वीहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं परेसं, नालं अत्तनो। कतमेहि द्वीहि ? इध, भिक्खवे, भिक्खु न हेव खो खिप्पनिसन्ति च होति कुसलेसु धम्मेसु; नो च सुतानं धम्मानं धारणजातिको होति; नो च धातानं धम्मानं अत्थूपपरिक्खिता होति; [R.299]

---

वह मङ्गलमय वाणी बोलता है और न सार्थक वाणी से साथियों को ही प्रोत्साहित करता है। भिक्षुओ! ऐसा तीन धर्मों से युक्त भिक्षु स्वहितसम्पादन में ही समर्थ होता है, परहित में नहीं। (५)

६. ''और, भिक्षुओ! इन तीन धर्मों से युक्त भिक्षु परहितसम्पादन में ही समर्थ होता है, स्वहित सम्पादन में नहीं। कौन से तीन ? भिक्षुओ! जो भिक्षु कुशल धर्मों पर पूर्ण ध्यान न देता हुआ भी श्रुत धर्मों को धारण करता है, परन्तु उनका अर्थ परीक्षण नहीं करता, और उनपर आचरण भी नहीं करता; कल्याणमय वाणी बोलता है, तथा साथियों को सार्थक बातों से धर्मपालन हेतु प्रोत्साहित करता है। इन तीन धर्मों से, भिक्षुओ! कोई भिक्षु परहितसम्पादन ही कर सकता है, स्वहित में समर्थ नहीं हो पाता। (६)

७. ''भिक्षुओ! इन दो धर्मों से युक्त भिक्षु स्वहितसम्पादन में ही समर्थ होता है, परहित में नहीं। कौन से दो धर्मों से ? जो कुशल धर्मों पर पूर्ण ध्यान नहीं रखता, न धर्मों को सुनकर उनको मन में बैठाता ही है, हाँ, वह धारण किये हुए धर्मों का अर्थपरीक्षण करता है, तथा उन पर आचरण भी करता है। परन्तु वह न कल्याणवाक् होता है और न साथियों को सार्थक बातें कह कर उनको प्रोत्साहित ही करता है। भिक्षुओ! इन दो धर्मों से युक्त भिक्षु स्वहित में ही समर्थ है, परन्तु परहित में समर्थ नहीं है। (७)

८. ''भिक्षुओ! इन दो धर्मों से युक्त भिक्षु परहितसम्पादन में ही समर्थ है, स्वहित के सम्पादन में नहीं। किन दो धर्मों से ? यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु न तो कुशल धर्मों पर पूर्ण ध्यान देता है, न श्रुत धर्मों को मन में बैठाता है, न उनका अर्थपरीक्षण करता है और न उनपर आचरण ही करता है,

नो च अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो होति; कल्याणवाचो च होति कल्याणवाक्करणो, पोरिया वाचाय समन्नागतो विस्सट्ठाय अनेलगळाय अत्थस्स विञ्ञा- [B.121] पनिया; सन्दस्सको च होति समादपको समुत्तेजको सम्पहंसको सब्रह्मचारीनं। इमेहि खो, भिक्खवे, द्वीहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं परेसं, नालं अत्तनो'' ति॥ ●

**३. सङ्खित्तसुत्तं** : १. अथ खो अञ्ञतरो भिक्खु येन भगवा तेनुपसङ्कमि ...पे०... एकमन्तं निसिन्नो खो सो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—''साधु मे, भन्ते, भगवा सङ्खित्तेन धम्मं देसेतु, यमहं भगवतो धम्मं सुत्वा एको वूपकट्ठो अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरेय्यं'' ति।

[N.389] ''एवमेव पनिधेकच्चे मोघपुरिसा ममञ्ञेव अज्झेसन्ति। धम्मे च भासिते ममञ्ञेव अनुबन्धितब्बं मञ्ञन्ती'' ति।

''देसेतु मे, भन्ते, भगवा सङ्खित्तेन धम्मं, देसेतु सुगतो सङ्खित्तेन धम्मं। अप्पेव नामाहं भगवतो भासितस्स अत्थं आजानेय्यं, अप्पेव नामाहं भगवतो भासितस्स दायादो अस्सं'' ति।

''तस्मातिह ते, भिक्खु एवं सिक्खितब्बं—'अज्झत्तं मे चित्तं ठितं भविस्सति सुसण्ठितं, न च उप्पन्ना पापका अकुसला धम्मा चित्तं परियादाय ठस्सन्ती' ति। एवं हि ते, भिक्खु, सिक्खितब्बं।

२. ''यतो खो ते, भिक्खु, अज्झत्तं चित्तं ठितं होति सुसण्ठितं, न च उप्पन्ना पापका अकुसला धम्मा चित्तं परियादाय तिट्ठन्ति, ततो ते, भिक्खु, एवं सिक्खितब्बं—'मेत्ता मे [R.300] चेतोविमुत्ति भाविता भविस्सति बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा' ति। एवं हि ते, भिक्खु, सिक्खितब्बं।

---

इतने पर भी वह मङ्गलमय वाणी बोलता है, तथा सार्थक बातों से अपने साथियों को धर्मसाधनाहेतु प्रोत्साहित करता रहता है। भिक्षुओ! इन दो धर्मों से युक्त भिक्षु परहितसम्पादन में ही समर्थ है, स्वहितसम्पादन में नहीं॥'' (८) ●

**३. संक्षिप्तसूत्र** : :

१. तब कोई भिक्षु भगवान् के पास आया ...पूर्ववत्... उसने भगवान् से यों निवेदन किया—''अच्छा हो, भन्ते! कि आप मुझे ऐसा संक्षिप्त धर्मोपदेश करें, जिसे सुनकर मैं एकाकी रहता हुआ एकान्त में, सावधानी से उद्योग करता हुआ सम्महित इन्द्रियों से साधना कर सकूँ।''

''इसी प्रकार कुछ मोघपुरुष मुझसे ही प्रार्थना करते रहते हैं। मेरे द्वारा इतना स्पष्ट उपदेश करने के बाद भी, मेरे ही पीछे लगे रहते हैं।''

''भन्ते! मुझे भी आप संक्षिप्त धर्मोपदेश करें। मैं भी आपके भाषण का मर्म समझ सकूँ। इस प्रकार आपके द्वारा प्रत्यक्ष उपदेश की श्रोतृपरम्परा में मेरा भी नाम हो जायगा।''

''तो, भिक्षु! तुम्हें यह सीखना चाहिये—'मेरा आध्यात्मिक चित्त इस तरह स्थिर हो जाय कि उसमें कोई भी अकुशल धर्म स्थिरता के लिये स्थान न पा सके।' (१)

३. "यतो खो ते, भिक्खु, अयं समाधि एवं भावितो होति बहुलीकतो, ततो त्वं, भिक्खु, इमं समाधिं सवितक्कसविचारं पि भावेय्यासि, अवितक्कविचारमत्तं पि भावेय्यासि, अवितक्कअविचारं पि भावेय्यासि, सप्पीतिकं पि भावेय्यासि, निप्पीतिकं पि भावेय्यासि, सातसहगतं पि भावेय्यासि, उपेक्खासहगतं पि भावेय्यासि।

४. "यतो खो, ते भिक्खु, अयं, समाधि एवं भावितो होति सुभावितो, ततो ते, भिक्खु, एवं सिक्खितब्बं—'करुणा मे चेतोविमुत्ति... मुदिता मे चेतोविमुत्ति... उपेक्खा मे चेतोविमुत्ति भाविता भविस्सति बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता [B.122] सुसमारद्धा' ति। एवं हि ते, भिक्खु, सिक्खितब्बं।

५. "यतो खो ते, भिक्खु, अयं समाधि एवं भावितो होति सुभावितो, ततो त्वं, भिक्खु, इमं समाधिं सवितक्कसविचारं पि भावेय्यासि, अवितक्कविचारमत्तं पि भावेय्यासि, अवितक्कअविचारं पि भावेय्यासि, सप्पीतिकं पि भावेय्यासि, निप्पीतिकं पि भावेय्यासि, सातसहगतं पि भावेय्यासि, उपेक्खासहगतं पि भावेय्यासि।

६. "यतो खो ते, भिक्खु, अयं समाधि एवं भावितो होति सुभावितो, ततो [N.390] ते, भिक्खु, एवं सिक्खितब्बं—'काये कायानुपस्सी विहरिस्सामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं' ति। एवं हि ते, भिक्खु, सिक्खितब्बं।

७. "यतो खो ते, भिक्खु, अयं समाधि एवं भावितो होति बहुलीकतो, ततो त्वं, भिक्खु, इमं समाधिं सवितक्कसविचारं पि भावेय्यासि, अवितक्कविचारमत्तं पि भावेय्यासि,

---

२. "और, भिक्षु! जब तुम्हारा चित्त इतना स्थिर हो जाय कि उसमें किसी अकुशल धर्म का ठहरना असम्भव हो जाय, तब तुमको यह सीखना चाहिये—'मेरी चित्तविमुक्ति मैत्रीभावना से भावित रहे, उस में अभ्यस्त रहे, उसमें स्थिरता बने।' भिक्षु! तुमको यह सीखना चाहिये। (२)

३. "भिक्षु! जब इस समाधि को तुम्हारे द्वारा इस प्रकार अभ्यस्त कर लिया जाय तब तुम, भिक्षु! इस समाधि को सवितर्क सविचार या अवितर्क अविचार रूप से भावित कर सकते हो, सप्रीतिक या निष्प्रीतिक भी भावित कर सकते हो, सुखसहगत या उपेक्षासहगत रूप से भी भावित कर सकते हो।

४. "जब, भिक्षु! तुमको यह समाधि इस प्रकार भावित एवं अभ्यस्त हो जाय, तब तुमको यह सीखना चाहिये—'मुझको करुणाचेतोविमुक्ति... मुदिताचेतोविमुक्ति... उपेक्षाचेतोविमुक्ति भावित एवं अभ्यस्त हो जायगी।' ऐसा तुम्हें सीखना चाहिये। (३-५)

५. जब, भिक्षु! तुमको यह समाधि इस प्रकार भावित एवं अभ्यस्त हो जाय तब, भिक्षु! तुम इस समाधि को सवितर्क सविचार या ...पूर्ववत्... उपेक्षासहगत को भी भावित कर सकते हो।

६. "जब, भिक्षु! तुमको यह समाधि इस प्रकार... तब तुमको यह सीखना चाहिये—'मैं काया में कायानुपश्यी होकर... साधना करूँगा।' भिक्षु! ऐसा तुमको सीखना चाहिये। (६)

७. "जब, भिक्षु! तुमको यह समाधि इस प्रकार भावित एवं अभ्यस्त हो जाय तब तुम इस समाधि को सवितर्क सविचार ...पूर्ववत्... उपेक्षासहगत को भी भावित कर सकते हो।

[R.301] अवितक्कअविचारं पि भावेय्यासि, सप्पीतिकं पि भावेय्यासि, निप्पीतिकं पि भावेय्यासि, सातसहगतं पि भावेय्यासि, उपेक्खासहगतं पि भावेय्यासि।

८. "यतो खो ते, भिक्खु, अयं समाधि एवं भावितो होति सुभावितो, ततो ते, भिक्खु, एवं सिक्खितब्बं—'वेदनासु... चित्ते... धम्मेसु धम्मानुपस्सी विहरिस्सामि आतापी सम्पजानो सतिमा, विनेय्य लोके अभिज्झादोमनस्सं' ति। एवं हि ते, भिक्खु, सिक्खितब्बं।

९. "यतो खो ते, भिक्खु, अयं समाधि एवं भावितो होति बहुलीकतो, ततो त्वं, भिक्खु, इमं समाधिं सवितक्कसविचारं पि भावेय्यासि, अवितक्कविचारमत्तं पि भावेय्यासि, अवितक्कअविचारं पि भावेय्यासि, सप्पीतिकं पि भावेय्यासि, निप्पीतिकं पि भावेय्यासि, सातसहगतं पि भावेय्यासि, उपेक्खासहगतं पि भावेय्यासि।

१०. "यतो खो ते, भिक्खु, अयं समाधि एवं भावितो होति सुभावितो, ततो त्वं, भिक्खु, येन येनेव गग्घसि फासुंयेव गग्घसि, यत्थ यत्थ ठस्ससि फासुंयेव ठस्ससि, यत्थ यत्थ निसीदिस्ससि फासुंयेव निसीदिस्ससि, यत्थ यत्थ सेय्यं कप्पेस्ससि फासुंयेव सेय्यं कप्पेस्ससी" ति।

[B.123] ११. अथ खो सो भिक्खु भगवता इमिना ओवादेन ओवदितो उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा पक्कामि। अथ खो सो भिक्खु एको वूपकट्ठो अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरन्तो नचिरस्सेव—यस्सत्थाय कुलपुत्ता सम्मदेव अगारस्मा अनगारियं [R.302] पब्बजन्ति, तदनुत्तरं—ब्रह्मचरियपरियोसानं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा [N.391] उपसम्पज्ज विहासि। "खीणा जाति, वुसितं ब्रह्मचरियं, कतं करणीयं, नापरं इत्थत्ताया" ति अब्भञ्ञासि। अञ्ञतरो च पन सो भिक्खु अरहतं अहोसी ति॥ ●

**४. गयासीससुत्तं :** १. एकं समयं भगवा गयायं विहरति गयासीसे। तत्र खो भगवा

---

८. जब, भिक्षु! तुमको वह समाधि इस प्रकार... तब तुमको यह सीखना चाहिये—'मैं वेदनाओं में वेदनानुपश्यी होकर... साधना करूँगा।' भिक्षु ऐसा तुमको सीखना चाहिये। (७-८)

९. जब, भिक्षु! तुम्हें यह समाधि इस प्रकार भावित एवं अभ्यस्त हो जायगी तब तुम, भिक्षु! इस समाधि को सवितर्क सविचार भी... उपेक्षासहगत को भी भावित एवं अभ्यस्त कर सकोगे।

१०. "भिक्षु! तुम्हारे द्वारा इस समाधि के इस प्रकार भावित एवं अभ्यस्त कर लिये जाने पर, तुम जहाँ भी जाओगे सुखपूर्वक ही जाओगे, जहाँ भी खड़े होओगे सुखपूर्वक ही खड़े होगे, जहाँ भी बैठोगे सुखपूर्वक ही बैठोगे, जहाँ भी सोओगे सुखपूर्वक ही सोओगे।"

११. तब वह भिक्षु भगवान् से यह उपदेश प्राप्त कर ...पूर्ववत्... आसन से उठकर चला गया। तब वह भिक्षु एकाकी रहकर एकान्त साधना करता हुआ उद्योगपूर्वक संयतेन्द्रिय होकर शीघ्र ही—जिसके लिये कुलपुत्र भलीभाँति घर छोड़कर प्रव्रजित होते हैं, उस अद्वितीय धर्मसाधना की सीमा तक इसी जन्म में पहुँच कर ज्ञान प्राप्त कर उसका साक्षात्कार कर साधना करने लगा। वह जान गया—'मेरी जन्ममरणपरम्परा क्षीण हो गयी, धर्मसाधना पूर्ण हो चुकी, मेरा करणीय कर्तव्य पूर्ण हो चुका, अब आगे कोई कर्तव्य शेष नहीं है'। अन्त में वह अर्हत् हो गया॥' ●

भिक्खू आमन्तेसि ...पे०... एतदवोच—"पुब्बाहं, भिक्खवे, सम्बोधा अनभिसम्बुद्धो बोधिसत्तो व समानो ओभासञ्ञेव खो सञ्जानामि, नो च रूपानि पस्सामि।

२. "तस्स मय्हं, भिक्खवे, एतदहोसि—'सचे खो अहं ओभासं चेव सञ्जानेय्यं रूपानि च पस्सेय्यं; एवं मे इदं ञाणदस्सनं परिसुद्धतरं अस्सा' ति।

"सो खो अहं, भिक्खवे, अपरेन समयेन अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरन्तो ओभासं चेव सञ्जानामि, रूपानि च पस्सामि; नो च खो ताहि देवताहि सद्धिं सन्तिट्ठामि सल्लपामि साकच्छं समापज्जामि।

३. "तस्स मय्हं, भिक्खवे, एतदहोसि—'सचे खो अहं ओभासं चेव सञ्जानेय्यं, रूपानि च पस्सेय्यं, ताहि च देवताहि सद्धिं सन्तिट्ठेय्यं सल्लपेय्यं साकच्छं समापज्जेय्यं; एवं मे इदं ञाणदस्सनं परिसुद्धतरं अस्सा' ति।

"सो खो अहं, भिक्खवे, अपरेन समयेन अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरन्तो ओभासं चेव सञ्जानामि, रूपानि च पस्सामि, ताहि च देवताहि सद्धिं सन्तिट्ठामि सल्लपामि साकच्छं समापज्जामि; नो च खो ता देवता जानामि—इमा देवता अमुकम्हा वा अमुकम्हा वा देवनिकाया ति।

४. "तस्स मय्हं, भिक्खवे, एतदहोसि—'सचे खो अहं ओभासं [B.124,R.303]

---

**४. गयाशीर्षसूत्र : :आठ परिवर्तन वाला भगवान् का ज्ञानदर्शन**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) गया के गयाशीर्ष पर्वत पर साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने कभी भिक्षुओं को बुलाया... और यह कहा—

"भिक्षुओ! पहले कभी, जब मैं अभिसम्बुद्ध नहीं था, मुझको प्रकाश का ही ज्ञान था, रूप का नहीं।

२. "तब, भिक्षुओ! मुझको यह विचार हुआ—'यदि मैं प्रकाश को भी जान लूँ और रूपों को भी देख लूँ। ऐसा ज्ञानदर्शन मेरे लिये अधिक अच्छा होता।'

"तब मैं, भिक्षुओ! कुछ समय बाद, कठोर साधना द्वारा प्रकाश को भी जान सका, रूपों को भी देख सका; परन्तु तब भी मैं देवताओं के साथ बैठने या उनके साथ बात करने की शक्ति नहीं प्राप्त कर सका था।

३. "तब मुझको यह विचार हुआ—'यदि मैं प्रकाश को जान लूँ, रूपों को देख लूँ, देवताओं के साथ बैठने-उठने एवं संवाद की शक्ति भी प्राप्त कर लूँ तो यह ज्ञानदर्शन मेरे लिये अधिक अच्छा हो।'

"तब मैं, भिक्षुओ! कठोर साधना द्वारा, कुछ समय बाद, प्रकाश को भी जान सका, रूपों को भी देख सका, देवताओं के साथ उठने बैठने एवं उनसे संवाद करने की स्थिति भी प्राप्त कर सका, परन्तु मुझमें वह शक्ति नहीं आ पायी कि जिससे मैं यह जान सकूँ कि अमुक देवता अमुक देवनिकाय का रहने वाला है।

४. "उस समय, भिक्षुओ! कभी मुझको यह विचार हुआ—'यदि मैं प्रकाश ...पूर्ववत्...

चेव सञ्जानेय्यं, रूपानि च पस्सेय्यं, ताहि च देवताहि सद्धिं सन्तिट्ठेय्यं सल्लपेय्यं साकच्छं समापज्जेय्यं, ता च देवता जानेय्यं—इमा देवता अमुकम्हा वा अमुकम्हा वा देवनिकाया' ति; एवं मे इदं ञाणदस्सनं परिसुद्धतरं अस्सा' ति।

[N.392] ''सो खो अहं, भिक्खवे, अपरेन समयेन अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो विहरन्तो ओभासं चेव सञ्जानामि, रूपानि च पस्सामि, ताहि च देवताहि सद्धिं सन्तिट्ठामि सल्लपामि साकच्छं समापज्जामि, ता च देवता जानामि—'इमा देवता अमुकम्हा वा अमुकम्हा वा देवनिकाया' ति; नो च खो ता देवता जानामि—'इमा देवता इमस्स कम्मस्स विपाकेन इतो चुता तत्थ उपपन्ना' ति ...पे०... ता च देवता जानामि—'इमा देवता इमस्स कम्मस्स विपाकेन इतो चुता तत्थ उपपन्ना' ति; नो च खो ता देवता जानामि—'इमा देवता इमस्स कम्मस्स विपाकेन एवमाहारा एवंसुखदुक्खप्पटिसंवेदिनियो' ति ...पे०... ता च देवता जानामि—'इमा देवता इमस्स कम्मस्स विपाकेन एवमाहारा एवंसुखदुक्खप्पटिसंवेदिनियो' ति; नो च खो ता देवता जानामि—'इमा देवता एवंदीघायुका एवंचिरट्ठितिका' ति ...पे०.. ता च देवता जानामि—'इमा देवता एवंदीघायुका एवंचिरट्ठितिका' ति; नो च खो ता देवता जानामि यदि वा मे इमाहि देवताहि सद्धिं सन्निवुत्थपुब्बं यदि वा न सन्निवुत्थपुब्बं ति।

५. ''तस्स मय्हं, भिक्खवे, एतदहोसि—'सचे खो अहं ओभासं चेव सञ्जानेय्यं, रूपानि च पस्सेय्यं, ताहि च देवताहि सद्धिं सन्तिट्ठेय्यं सल्लपेय्यं साकच्छं समापज्जेयं, [R.304] ता च देवता जानेय्यं—'इमा देवता अमुकम्हा वा अमुकम्हा वा देवनिकाया' ति, ता

---

प्रत्येक देवता के विषय में जान सकूँ कि यह देवता अमुक देवनिकाय का रहने वाला है—ऐसा ज्ञान मेरे लिये पूर्वापेक्षया अधिक अच्छा रहे।'

''भिक्षुओ! तब मैं कुछ समय बाद ही (साधना द्वारा) यह सामर्थ्य प्राप्त कर सका कि मैं प्रकाश... रूप... देवताओं के साथ संवाद... तथा उन देवताओं का वासस्थान जान सकूँ; परन्तु तब भी मुझमें यह सामर्थ्य नहीं था कि मैं यह जान सकूँ कि यह देवता अमुक कर्मविपाक से अमुक देवलोक में उत्पन्न हुआ है। ...पूर्ववत्...। उन देवताओं के विषय में यह भी जान गया कि अमुक देवता अमुक कर्मविपाक से अमुक्त देवलोक में उत्पन्न हुआ है; परन्तु तब भी मुझमें यह जानने की शक्ति नहीं थी कि अमुक देवता का यह आहार है और अमुक देवता ऐसे सुख-दुःख का अनुभव करता है। ...पूर्ववत्... उन देवताओं के आहार तथा सुख दुःख के अनुभव के विषय में तो जान गया; परन्तु यह जानने की शक्ति मुझमें अब भी नहीं थी कि वे देवता कितनी दीर्घ आयु वाले होते हैं, कितने दीर्घकाल तक उस देवलोक में रहते हैं। ...पूर्ववत्... उन देवताओं की आयु तथा देवलोक में स्थिति के विषय में तो जान गया; परन्तु मैं यह जानने की स्थिति में तब भी नहीं था कि मैं भी किन्हीं देवताओं के साथ कभी पहले (किसी जन्म में) रहा हूँ या नहीं।

५. ''तब, भिक्षुओ! मुझको यह विचार हुआ—'यदि मैं प्रकाश ...पूर्ववत्... मैं कभी अपने किसी पूर्वजन्म में इन देवताओं के साथ रहा हूँ या नहीं—मेरे लिये ऐसा ज्ञान पूर्वापेक्षया अधिक अच्छा होता।'

च देवता जानेय्यं—'इमा देवता इमस्स कम्मस्स विपाकेन इतो चुता तत्थ उपपन्ना' ति, ता च जानेय्यं—'इमा देवता एवमाहारा एवंसुखदुक्खप्पटिसंवेदिनियो' ति, ता च देवता जानेय्यं—'इमा देवता एवंदीघायुका एवंचिरट्ठितिका' ति, ता च देवता जानेय्यं यदि वा मे इमाहि देवताहि सद्धिं सन्निवुत्थपुब्बं यदि वा न सन्निवुत्थपुब्बं ति; एवं मे इदं ञाणदस्सनं परिसुद्धतरं अस्सा' ति।

"सो खो अहं, भिक्खवे, अपरेन समयेन अप्पमत्तो आतापी पहितत्तो [B.125] विहरन्तो ओभासं चेव सञ्जानामि, रूपानि च पस्सामि, ताहि च देवताहि सद्धिं सन्तिट्ठामि सल्लपामि साकच्छं समापज्जामि, ता च देवता जानामि—'इमा देवता अमुकम्हा वा अमुकम्हा वा देवनिकाया' ति, ता च देवता जानामि—'इमा देवता इमस्स कम्मस्स विपाकेन इतो चुता तत्थ उपपन्ना' ति, ता च देवता जानामि—'इमा देवता [N.393] एवमाहारा एवंसुखदुक्खप्पटिसंवेदिनियो' ति, ता च देवता जानामि—'इमा देवता एवंदीघायुका एवंचिरट्ठितिका' ति, ता च देवता जानामि यदि वा मे देवताहि सद्धिं सन्निवुत्थपुब्बं यदि वा न सन्निवुत्थपुब्बं ति।

६. "यावकीवञ्च मे, भिक्खवे, एवं अट्ठपरिवट्टं अधिदेवञाणदस्सनं न सुविसुद्धं अहोसि, नेव तावाहं, भिक्खवे, 'सदेवके लोके समारके सब्रह्मके सस्समणब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुद्धो' ति पच्चञ्ञासिं। यतो च खो मे, भिक्खवे, एवं अट्ठपरिवट्टं अधिदेवञाणदस्सनं सुविसुद्धं अहोसि, अथाहं, भिक्खवे, 'सदेवके लोके समारके सब्रह्मके सस्समणब्राह्मणिया पजाय सदेवमनुस्साय [R.305] अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुद्धो' ति पच्चञ्ञासिं; ञाणं च पन मे दस्सनं उदपादि; अकुप्पा मे चेतोविमुत्ति; अयमन्तिमा जाति नत्थि दानि पुनब्भवो" ति॥ ●

**५. अभिभायतनसुत्तं** : १. "अट्ठिमानि, भिक्खवे, अभिभायतनानि। कतमानि अट्ठ? अज्झत्तं रूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति परित्तानि सुवण्णदुब्बण्णानि। 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी' ति, एवंसञ्ञी होति। इदं पठमं अभिभायतनं।

---

"वह मैं, भिक्षुओ! कुछ समय बाद कठोर साधना से प्रकाश, रूप ...पूर्ववत्... मैं भी इन इन देवताओं के साथ पूर्वजन्म में रह चुका हूँ—यह जान गया।

६. "जब तक, भिक्षुओ! मुझको आठ परिवर्तन वाला यह प्रत्येक देवताविषयक सर्वविध विशुद्ध ज्ञान नहीं हुआ, तब तक, भिक्षुओ! मैंने देव, मार, ब्रह्मलोक सहित श्रमण एवं ब्राह्मण प्रजा और देव-मनुष्यों के सम्मुख यह कभी नहीं कहा कि मैंने अद्वितीय सम्यक्सम्बोधि प्राप्त कर ली है; परन्तु जब मुझको यह आठ परिवर्तवाला देवताविषयक सर्वविध सुविशुद्ध ज्ञान हो गया तभी, भिक्षुओ! मैंने देव, मार ...पूर्ववत्... कहा कि मैंने अद्वितीय सम्यक्सम्बोधि प्राप्त कर ली है, मुझे ज्ञान का साक्षात्कार हो गया है। अब मेरा चित्त स्थिर है। मेरा यह जन्म अन्तिम है। अब मेरा पुनर्जन्म नहीं होना है॥" ●

२. ''अज्झत्तं रूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति अप्पमाणानि सुवण्ण-दुब्बण्णानि। 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी' ति, एवंसञ्ञी होति। इदं दुतियं अभिभायतनं।

[B.126] ३. ''अज्झत्तं अरूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति परित्तानि सुवण्ण-दुब्बण्णानि। 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी' ति, एवंसञ्ञी होति। इदं ततियं अभिभायतनं।

४. ''अज्झत्तं अरूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति अप्पमाणानि सुवण्ण-दुब्बण्णानि। 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी' ति, एवंसञ्ञी होति। इदं चतुत्थं अभिभायतनं।

५. ''अज्झत्तं अरूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति नीलानि नीलवण्णानि [N.394] नीलनिदस्सनानि नीलनिभासानि। 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी' ति, एवंसञ्ञी होति। इदं पञ्चमं अभिभायतनं।

६. ''अज्झत्तं अरूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति पीतानि पीतवण्णानि

---

**५. अभिभ्वायतनसूत्र[१] : : आठ अभिभ्वायतन**

१. ''भिक्षुओ! ये आठ अभिभ्वायतन होते हैं। कौन से आठ? यहाँ, भिक्षुओ! कोई पुरुष अध्यात्म में रूपसंज्ञी (अपने अन्दर रूपसंज्ञा का ध्यान करने वाला) होकर बाहर कुछ सुवर्ण या दुर्वर्ण रूपों को देखता है। वह 'उनको अभिभूत (लुप्त) कर जानता हूँ, देखता हूँ'—ऐसी संज्ञा वाला होता है। यह प्रथम अभिभ्वायतन है। (१)

२. ''भिक्षुओ! कोई पुरुष अध्यात्म में रूपसंज्ञी होकर बाहर अप्रमाण (अत्यधिक) सुवर्ण एवं दुर्वर्ण रूपों को देखता है। वह 'उनको अभिभूत कर जानता हूँ, देखता हूँ'—ऐसी संज्ञा वाला होता है। यह द्वितीय अभिभ्वायतन है। (२)

३. ''कोई पुरुष अध्यात्म में अरूपसंज्ञी होकर बाहर कुछ सुवर्ण एवं दुर्वर्ण रूपों को देखता है। वह 'उनको अभिभूत (लुप्त) कर जानता हूँ, देखता हूँ—ऐसी संज्ञा वाला होता है। यह तृतीय अभिभ्वायतन है। (३)

४. ''कोई पुरुष अध्यात्म में अरूपसंज्ञी होकर बाहर अप्रमाण (अत्यधिक) सुवर्ण एवं दुर्वर्ण रूपों को देखता है। वह 'उनको अभिभूत कर जानता हूँ, देखता हूँ'—ऐसी संज्ञा वाला होता है। यह चतुर्थ अभिभ्वायतन है। (४)

५. ''कोई पुरुष अध्यात्म में अरूपसंज्ञी होकर बाहर नील, नीलवर्ण, नीलनिदर्शन एवं नीलनिर्भास रूपों को देखता है। वह 'उनको अभिभूत कर जानता हूँ, देखता हूँ'—ऐसी संज्ञा वाला होता है। यह पञ्चम अभिभ्वायतन है। (५)

६. ''कोई पुरुष अध्यात्म में अरूपसंज्ञी होकर बाहर पीत (पीला), पीतवर्ण, पीतनिदर्शन

---

१. इस सूत्र का व्याख्यान **दीघनिकाय** (तृतीय भाग) के **सङ्गीतिसूत्र** (पृ० ८०७, बौ०भा० ग्रन्थमाला-३६) में तथा **महापरिनिर्वाण सूत्र** में भी देख लें। —स०।

पीतनिदस्सनानि पीतनिभासानि। 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी' ति, एवंसञ्ञी होति। इदं छट्ठं अभिभायतनं।

७. ''अज्झत्तं अरूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति लोहितकानि [R.306] लोहितकवण्णानि लोहितकनिदस्सनानि लोहितकनिभासानि। 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी' ति, एवंसञ्ञी होति। इदं सत्तमं अभिभायतनं।

८. ''अज्झत्तं अरूपसञ्ञी एको बहिद्धा रूपानि पस्सति ओदातानि ओदातवण्णानि ओदातनिदस्सनानि ओदातनिभासानि। 'तानि अभिभुय्य जानामि पस्सामी' ति, एवंसञ्ञी होति। इदं अट्ठमं अभिभायतनं। इमानि खो, भिक्खवे, अट्ठ अभिभायतनानी'' ति॥ ●

६. **विमोक्खसुत्तं** : १. ''अट्ठिमे, भिक्खवे, विमोक्खा। कतमे अट्ठ? रूपी रूपानि पस्सति। अयं पठमो विमोक्खो।

२. ''अज्झत्तं अरूपसञ्ञी, बहिद्धा रूपानि पस्सति। अयं दुतियो विमोक्खो।

३. ''सुभं तेव अधिमुत्तो होति। अयं ततियो विमोक्खो।

४. ''सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा पटिघसञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्त- [B.127] सञ्ञानं अमनसिकारा 'अनन्तो आकासो' ति आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। अयं चतुत्थो विमोक्खो।

---

एवं पीतनिर्भास रूपों को देखता है। वह 'उनको अभिभूत कर जानता हूँ, देखता हूँ'—ऐसी संज्ञा वाला होता है। यह षष्ठ अभिभ्वायतन है। (६)

७. ''कोई पुरुष अध्यात्म में अरूपसंज्ञी होकर बाहर लोहित (लाल), लोहितवर्ण, लोहितकनिदर्शन एवं लोहितकनिर्भास रूपों को देखता है। वह 'उनको अभिभूत कर जानता हूँ, देखता हूँ'—ऐसी संज्ञा वाला होता है। यह सप्तम अभिभ्वायतन है। (७)

८. ''कोई पुरुष अध्यात्म में अरूपसंज्ञी होकर बाहर अवदात (श्वेत), श्वेतवर्ण, श्वेतनिदर्शन, श्वेतनिर्भास रूपों को देखता है। वह 'उनको अभिभूत कर जानता हूँ, देखता हूँ'—ऐसी संज्ञा वाला होता है। यह अष्टम अभिभ्वायतन है। (८)

''भिक्षुओ! ये आठ अभिभ्वायतन होते हैं॥'' ●

**६. विमोक्षसूत्र[1]** : : **आठ विमोक्ष**

१. ''भिक्षुओ! ये विमोक्ष आठ प्रकार के होते हैं। कौन से आठ?

''स्वयं रूपवान् होता हुआ रूपों को देखता है। यह प्रथम विमोक्ष है। (१)

''कोई अध्यात्म में अरूपसंज्ञी होकर बाहर रूपों को देखता है। यह द्वितीय विमोक्ष है। (२)

''कोई शुभ (शुभ्र=उज्ज्वल) ही से मुक्त (अधिमुक्त) हुआ होता है। यह तृतीय विमोक्ष कहलाता है। (३)

''कोई रूपसंज्ञाओं को सर्वथा अतिक्रान्त कर, प्रतिघसंज्ञा के अस्त हो जाने से, नानात्व

---

१. इसे भी दीघनिकाय के सङ्गीतिसूत्र में और महापरिनिर्वाणसूत्र में देखें—सं०।

५. ''सब्बसो आकासानञ्चायतनं समतिक्कमा 'अनन्तं विञ्ञाणं' ति विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति। अयं पञ्चमो विमोक्खो।

६. ''सब्बसो विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्म 'नत्थि किञ्ची' ति आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति। अयं छट्ठो विमोक्खो।

७. ''सब्बसो आकिञ्चञ्ञायतनं समतिक्कम्म नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति। अयं सत्तमो विमोक्खो।

[N.395] ८. ''सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरति। अयं अट्ठमो विमोक्खो। इमे खो, भिक्खवे, अट्ठ विमोक्खा'' ति॥ ●

[R.307] **७. अनरियवोहारसुत्तं :** १. ''अट्ठिमे, भिक्खवे, अनरियवोहारा। कतमे अट्ठ? अदिट्ठे दिट्ठवादिता, असुते सुतवादिता, अमुते मुतवादिता, अविञ्ञाते विञ्ञातवादिता, दिट्ठे अदिट्ठवादिता, सुते असुतवादिता, मुते अमुतवादिता, विञ्ञाते अविञ्ञातवादिता। इमे खो, भिक्खवे, अट्ठ अनरियवोहारा'' ति॥ ●

**८. अरियवोहारसुत्तं :** १. ''अट्ठिमे, भिक्खवे, अरियवोहारा। कतमे अट्ठ? अदिट्ठे अदिट्ठवादिता, असुते असुतवादिता, अमुते अमुतवादिता, अविञ्ञाते अविञ्ञातवादिता,

---

संज्ञाओं को मन में न करने से 'आकाश अनन्त है'—इस आकाशानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। यह चतुर्थ विमोक्ष है। (४)

''कोई इस आकाशानन्त्यायतन को भी सर्वथा अतिक्रान्त कर, 'विज्ञान अनन्त है'—इस विज्ञानानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। यह पञ्चम विमोक्ष है। (५)

''कोई इस विज्ञानानन्त्यायतन का भी सर्वथा अतिक्रमण कर, 'कुछ भी नहीं है'—इस आकिञ्चन्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। यह षष्ठ विमोक्ष है। (६)

''कोई इस आकिञ्चन्यायतन को भी सर्वथा अतिक्रान्त कर 'न संज्ञा है, न असंज्ञा'—इस नैवसंज्ञानासंज्ञायतन को प्राप्त कर साधना करता है। यह सप्तम विमोक्ष है। (७)

''तथा कोई इस नैवसंज्ञानासंज्ञायतन का भी सर्वथा अतिक्रमण कर 'जहाँ संज्ञा ही लुप्त हो जाती है'—इस संज्ञावेदयितनिरोध को प्राप्त कर साधना करता है। यह अष्टम विमोक्ष है। (८)

भिक्षुओ! ये आठ विमोक्ष होते हैं॥'' ●

**७. अनार्यव्यवहारसूत्र : : आठ अनार्य व्यवहार**

१. ''भिक्षुओ! ये आठ अनार्यव्यवहार हैं। कौन से आठ? (१) अदृष्ट के विषय में दृष्ट कहना, (२) अश्रुत के विषय में श्रुत कहना, (३) अस्मृत के विषय में स्मृत कहना, (४) अविज्ञात के विषय में ज्ञात कहना; (५) दृष्ट के विषय में अदृष्ट कहना, (६) श्रुत के विषय में अश्रुत कहना, (७) स्मृत के विषय में अस्मृत कहना, एवं (८) विज्ञात के विषय में अविज्ञात कहना। भिक्षुओ! ये आठ अनार्य व्यवहार होते हैं॥'' ●

**८. आर्यव्यवहारसूत्र : :**

१. ''भिक्षुओ! ये आठ आर्यव्यवहार हैं। कौन से आठ? (१) अदृष्ट के विषय में अदृष्ट

दिट्ठे दिट्ठवादिता, सुते सुतवादिता, मुते मुतवादिता, विञ्ञाते विञ्ञातवादिता। इमे खो, भिक्खवे, अट्ठ अरियवोहारा'' ति॥

**९. परिसासुत्तं** : १. ''अट्ठिमा, भिक्खवे, परिसा। कतमा अट्ठ? खत्तियपरिसा, ब्राह्मणपरिसा, गहपतिपरिसा, समणपरिसा, चातुमहाराजिकपरिसा, तावतिंसपरिसा, मार-परिसा, ब्रह्मपरिसा। अभिजानामि खो पनाहं, भिक्खवे, अनेकसतं खत्तियपरिसं उपसङ्कमिता। तत्र पि मया सन्निसिन्नपुब्बं चेव सल्लपितपुब्बं च साकच्छा च [B.128] समापन्नपुब्बा। तत्थ यादिसको तेसं वण्णो होति तादिसको मय्हं वण्णो होति, यादिसको तेसं सरो होति तादिसको मय्हं सरो होति। धम्मिया च कथाय सन्दस्सेमि समादपेमि समुत्तेजेमि सम्पहंसेमि। भासमानं च मं न जानन्ति—'को नु खो अयं भासति देवो वा मनुस्सो वा' ति। धम्मिया कथाय सन्दस्सेत्वा समादपेत्वा समुत्तेजेत्वा सम्पहंसेत्वा अन्तरधायामि। अन्तरहितं च मं न जानन्ति—'को नु खो अयं अन्तरहितो देवो वा मनुस्सो वा' ति। [N.396]

२. ''अभिजानामि खो पनाहं, भिक्खवे, अनेकसतं ब्राह्मणपरिसं ...पे०... [R.308] गहपतिपरिसं... समणपरिसं... चातुमहाराजिकपरिसं... तावतिंसपरिसं ...मारपरिसं... ब्रह्मपरिसं उपसङ्कमिता। तत्र पि मया सन्निसिन्नपुब्बं चेव सल्लपितपुब्बं च साकच्छा च

---

कहना, (२) अश्रुत के विषय में अश्रुत कहना, (३) अस्मृत के विषय में अस्मृत कहना; (४) अविज्ञात के विषय में अविज्ञात कहना; (५) दृष्ट के विषय में दृष्ट कहना, (६) श्रुत के विषय में श्रुत कहना, (७) स्मृत के विषय में स्मृत कहना, तथा (८) विज्ञात के विषय में विज्ञात कहना। भिक्षुओ! ये आठ आर्यव्यवहार कहलाते हैं॥''

**९. परिषत्सूत्र[1]** : : **आठ परिषदें**

१. भिक्षुओ! ये आठ परिषदें होती हैं। कौन सी आठ? (१) क्षत्रिय परिषद्, (२) ब्राह्मण परिषद्, (३) गृहपति परिषद्, (४) श्रमण परिषद्, (५) चातुर्महाराजिक परिषद्, (६) त्रायस्त्रिंश परिषद्, (७) मार परिषद्, एवं (८) ब्रह्म परिषद्। भिक्षुओ! मुझे स्मरण है कि मैं सैंकड़ों क्षत्रिय परिषदों में गया हूँ। वहाँ मुझको ऐसा लगता था कि मैं इन सभाओं में पहले भी बैठा हूँ, यहाँ मैंने पहले भी इनसे संवाद किया है, या पहले भी मैंने इनका सामना (साक्षात्कार) किया है। वहाँ जैसा उनका वर्ण होता था, वैसा ही मेरा भी होता था; जैसा उनका स्वर होता था, वैसा ही मेरा भी हो जाता था। मैं उनको धार्मिक कथाएँ सुनाकर सन्तुष्ट, सम्प्रहृष्ट एवं समुत्तेजित करता था। वे मुझको वहाँ बोलते हुए सुनकर भी यह नहीं निश्चय कर पाते थे कि यह कोई देवता बोल रहा है या मनुष्य! उनको मैं धार्मिक कथाएँ सुनाकर उससे सन्तुष्ट, सम्प्रहृष्ट एवं समुत्तेजित कर वहीं अन्तर्हित हो जाता था। अन्तर्हित होने पर भी वे वास्तविकता नहीं जान पाते थे कि यह अन्तर्हित होने वाला कोई देवता था या पुरुष।

२. ''भिक्षुओ! मुझे स्मरण है कि मैं सैकड़ों ब्राह्मणपरिषदों... गृहपतिपरिषदों... श्रमणपरिषदों में... चातुर्महाराजिकपरिषदों में... त्रायस्त्रिंश परिषदों में... मारपरिषदों में...

---

१. **दीघनिकाय** के महापरिनिर्वाणसूत्र में भी देखें।

समापन्नपुब्बा। तत्थ यादिसको तेसं वण्णो होति तादिसको मय्हं वण्णो होति। यादिसको तेसं सरो होति तादिसको मय्हं सरो होति। धम्मिया च कथाय सन्दस्सेमि समादपेमि समुत्तेजेमि सम्पहंसेमि। भासमानं च मं न जानन्ति—'को नु खो अयं भासति देवो वा मनुस्सो वा' ति। धम्मिया कथाय सन्दस्सेत्वा समादपेत्वा समुत्तेजेत्वा सम्पहंसेत्वा अन्तरधायामि। अन्तरहितं च मं न जानन्ति—'को नु खो अयं अन्तरहितो देवो वा मनुस्सो वा' ति। इमा खो, भिक्खवे, अट्ठ परिसा'' ति॥ ●

**१०. भूमिचालसुत्तं :** १. एकं समयं भगवा वेसालियं विहरति महावने कूटागारसालायं। अथ खो भगवा पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा पत्तचीवरमादाय वेसालिं पिण्डाय पाविसि। वेसालियं पिण्डाय चरित्वा पच्छाभत्तं पिण्डपातपटिक्कन्तो आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—''गण्हाहि, आनन्द, निसीदनं। येन चापालं चेतियं तेनुपसङ्कमिस्साम दिवाविहाराया'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पटिस्सुत्वा निसीदनं आदाय भगवन्तं पिट्ठितो पिट्ठितो अनुबन्धि।

[B.129] २. अथ खो भगवा येन चापालं चेतियं तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा पञ्ञत्ते आसने
[R.309] निसीदि। निसज्ज खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—''रमणीया, आनन्द
वेसाली, रमणीयं उदेनं चेतियं, रमणीयं गोतमकं चेतियं, रमणीयं बहुपुत्तकं चेतियं; रमणीयं
[N.397] सत्तम्बं चेतियं, रमणीयं सारन्ददं चेतियं, रमणीयं चापालं चेतियं। यस्स कस्सचि,
आनन्द, चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता

---

ब्राह्मपरिषदों में गया हूँ। वहाँ मुझको ऐसा लगता था कि ...पूर्ववत्... यह अन्तर्हित होने वाला कोई देवता था या पुरुष। भिक्षुओ! ये आठ परिषद् होती हैं॥'' ●

**१०. भूमिचालसूत्र**[१] : :

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) वैशाली के महावन की कूटागारशाला में साधनाहेतु विराजमान थे। उस समय भगवान् कभी पूर्वाह्ण में वस्त्र सुव्यवस्थित कर, पात्र चीवर लेकर, भिक्षाहेतु वैशाली में प्रविष्ट हुए। वैशाली में भिक्षाटन के बाद, भोजनकार्य से निवृत्त होकर भगवान् ने आनन्द से कहा—''आनन्द! आसन उठाओ। अब दैवसिक साधना हेतु चापाल चैत्य चलेंगे।'' ''अच्छा, भन्ते!'' कहते हुए आयुष्मान् आनन्द, आसन उठाकर, भगवान् के पीछे पीछे चलने लगे।

२. तब भगवान् चापाल चैत्य पहुँचे। पहुँचकर प्रज्ञप्त आसन पर विराजे। तथा एक ओर बैठे आनन्द से भगवान् यों बोले—''आनन्द! देखो, यह वैशाली नगरी कितनी रमणीय (मनमोहक) है, (इसके) उदयन चैत्य, गौतमक चैत्य, बहुपुत्रक चैत्य, सप्ताम्र चैत्य, सारन्दद चैत्य एवं चापालचैत्य भी कितने रमणीय हैं। आनन्द! जिस किसी भी साधक ने चारों ऋद्धिपादों की साधना कर ली हैं, इन्हें अपनी साधना से बढ़ा लिया है इनको उचित मार्ग पर लगा लिया है, अपने चित्त में भली भाँति

---

१. यह पाठ **दीघनिकाय** के **महापरिनिर्वाणसूत्र** में 'चापालचेतिये भगवा आयुसङ्खारं ओस्सजि' इस शीर्षक से अविकल पढ़ा गया है, अत: वहाँ भी देख लें।—सं०

सुसमारद्धा, आकङ्खमानो सो, आनन्द, कप्पं वा तिट्ठेय्य कप्पावसेसं वा। तथागतस्स खो, आनन्द, चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा। आकङ्खमानो, आनन्द, तथागतो कप्पं वा तिट्ठेय्य कप्पावसेसं वा'' ति।

३. एवं पि खो आयस्मा आनन्दो भगवता ओळारिके निमित्ते कयिरमाने ओळारिके ओभासे कयिरमाने नासक्खि पटिविज्झितुं; न भगवन्तं याचि—''तिट्ठतु, भन्ते, भगवा कप्पं, तिट्ठतु सुगतो कप्पं बहुजनहिताय बहुजनसुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानं'' ति, यथा तं मारेन परियुट्ठितचित्तो।

४. दुतियं पि खो भगवा ...पे०... ततियं पि खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—''रमणीया, आनन्द, वेसाली, रमणीयं उदेनं चेतियं, रमणीयं गोतमकं चेतियं, रमणीयं बहुपुत्तकं चेतियं, रमणीयं सत्तम्बं चेतियं, रमणीयं सारन्ददं चेतियं, रमणीयं चापालं चेतियं। यस्स कस्सचि, आनन्द, चत्तारो इद्धिपादा भाविता बहुलीकता यानीकता वत्थुकता अनुट्ठिता परिचिता सुसमारद्धा, आकङ्खमानो सो, आनन्द, कप्पं वा तिट्ठेय्य कप्पावसेसं वा। तथागतस्स खो, आनन्द, चत्तारो इद्धिपादा भाविता ...पे०... आकङ्खमानो, आनन्द तथागतो कप्पं वा तिट्ठेय्य कप्पावसेसं वा'' ति।

५. एवं पि खो आयस्मा आनन्दो भगवता ओळारिके निमित्ते कयिरमाने [R.310] ओळारिके ओभासे कयिरमाने नासक्खि पटिविज्झतुं; न भगवन्तं याचि—''तिट्ठतु, भन्ते, भगवा कप्पं, तिट्ठतु सुगतो कप्पं बहुजनहिताय बहुजनसुखाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानं'' ति, यथा तं मारेन परियुट्ठितचित्तो।

६. अथ खो भगवा आयस्मन्तं आनन्दं आमन्तेसि—''गच्छ त्वं, आनन्द, [B.130] यस्स दानि कालं मञ्ञसी'' ति। ''एवं, भन्ते'' ति खो आयस्मा आनन्दो भगवतो पटिस्सुत्वा

---

बैठा लिया है, स्थिर कर लिया है, उनसे पूर्ण परिचित हो चुका है, इनको सुसमारब्ध कर लिया है, आनन्द! यदि ऐसा साधक चाहे तो कल्पपर्यन्त भी यहाँ ठहर सकता है, या कल्प के अवशिष्ट भाग तक भी। क्योंकि, आनन्द! तथागत द्वारा ये चारों ऋद्धिपाद भावित... पे०... सुसमारद्ध किये जा चुके हैं, अतः, तथागत चाहें तो कल्पपर्यन्त या कल्प के अवशिष्ट भाग तक भी ठहर सकते हैं।''

३. भगवान् द्वारा ऐसा स्पष्ट सङ्केत किये जाने पर भी आयुष्मान् आनन्द भगवान् के सङ्केत को समझ नहीं पाये, अतः उनने भगवान् से यह प्रार्थना नहीं की—''भन्ते! बहुजनहित एवं बहुजनसुख के लिये, लोक पर अनुकम्पा हेतु तथा देव एवं मनुष्यों के हित, सुख एवं प्रयोजन की सिद्धि के आप कल्पपर्यन्त यहाँ ठहरें''; क्योंकि उस समय मार ने उनकी बुद्धि भ्रान्त कर दी थी।

५. दूसरी बार भी भगवान् ने ...पूर्ववत्... मार ने आयुष्मान् आनन्द की बुद्धि भ्रान्त कर दी थी। तीसरी बार भी भगवान् ने ...पूर्ववत्... मार ने आयुष्मान् आनन्द की बुद्धि भ्रान्त कर दी थी।

६. तब भगवान् ने आनन्द से कहा—''जाओ, आनन्द! अब तुम जैसा उचित समझो,

उट्ठायासना भगवन्तं अभिवादेत्वा पदक्खिणं कत्वा भगवतो अविदूरे अञ्ञतरस्मिं रुक्खमूले निसीदि। अथ खो मारो पापिमा अचिरपक्कन्ते आयस्मन्ते आनन्दे भगवन्तं एतदवोच--

[N.398] ७. ''परिनिब्बातु दानि, भन्ते, भगवा, परिनिब्बातु सुगतो। परिनिब्बानकालो दानि, भन्ते, भगवतो। भासिता खो पनेसा, भन्ते, भगवता वाचा—'न तावाहं, पापिम, परिनिब्बायिस्सामि याव मे भिक्खू न सावका भविस्सन्ति वियत्ता विनीता विसारदा पत्तयोगक्खेमा बहुस्सुता धम्मधरा धम्मानुधम्मप्पटिपन्ना सामीचिप्पटिपन्ना अनुधम्मचारिनो, सकं आचरियकं उग्गहेत्वा आचिक्खिस्सन्ति देसेस्सन्ति पञ्ञपेस्सन्ति पट्ठपेस्सन्ति विवरिस्सन्ति विभजिस्सन्ति उत्तानीकरिस्सन्ति, उप्पन्नं परप्पवादं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेत्वा सप्पाटिहारियं धम्मं देसेस्सन्ती' ति। एतरहि, भन्ते, भिक्खू भगवतो सावका वियत्ता विनीता विसारदा पत्तयोगक्खेमा बहुस्सुता धम्मधरा धम्मानुधम्मप्पटिपन्ना सामीचिप्पटिपन्ना अनुधम्मचारिनो, सकं आचरियकं उग्गहेत्वा आचिक्खन्ति देसेन्ति पञ्ञपेन्ति पट्ठपेन्ति विवरन्ति विभजन्ति उत्तानीकरोन्ति, उप्पन्नं परप्पवादं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेत्वा सप्पाटिहारियं धम्मं देसेन्ति। परिनिब्बातु दानि, भन्ते, भगवा, परिनिब्बातु सुगतो। परिनिब्बानकालो दानि, भन्ते, भगवतो। भासिता खो पनेसा, भन्ते, भगवता वाचा—'न तावाहं, पापिम, परिनिब्बायिस्सामि याव मे भिक्खुनियो न साविका [R.311] भविस्सन्ति ...पे०... याव मे उपासका न सावका भविस्सन्ति ...पे०... याव मे उपासिका न साविका भविस्सन्ति वियत्ता विनीता विसारदा पत्तयोगक्खेमा बहुस्सुता धम्मधरा धम्मानुधम्मप्पटिपन्ना सामीचिप्पटिपन्ना अनुधम्मचारिनियो, सकं आचरियकं

---

करो।'' ''अच्छा, भन्ते!'' कहते हुए आयुष्मान् आनन्द आसन से उठकर भगवान् को प्रणाम-प्रदक्षिणा कर, कुछ दूर स्थित एक वृक्ष के नीचे जाकर बैठ गये।

**मारयाच्ञा** : तब पापी मार, आयुष्मान् आनन्द के जाने के कुछ क्षण बाद ही वहाँ आकर भगवान् से यों बोला—

७. ''भन्ते! अब आप परिनिर्वाण प्राप्त कर लें। आप सुगत! परिनिर्वाण प्राप्त कर लें; क्योंकि, भन्ते! अब आपके परिनिर्वाण का समय आ गया है। आप कभी पहले यह बात मुझसे कह चुके हैं—'पापिन्! मैं तब तक परिनिर्वाण प्राप्त नहीं करूँगा जब तक मेरे शिष्य भिक्षु व्यक्त (पण्डित), विनयसम्पन्न, विशारद (साधनाकुशल), बहुश्रुत, धर्मधर, धर्मानुसार आचरण वाले, धर्ममार्ग पर आरूढ़, धर्मानुकूल आचरण न करने वाले न होंगे; अपने धर्म-सिद्धान्त (आचार्यक) सीखकर उनका उपदेश, प्रज्ञापन (दूसरों को समझाना), आख्यान, प्रतिष्ठापन, विवरण (विस्तार), विभाजन, सरलीकरण न करने लगेंगे; दूसरों के द्वारा लगया गये आरोपों (आक्षेपों) को धर्मानुसार खण्डित कर प्रातिहार्य (युक्ति) के साथ धर्मोपदेश न करने लगेंगे।' इस समय, भन्ते! आपके शिष्य व्यक्त ...पूर्ववत्... प्रातिहार्य के साथ धर्मोपदेश करने लगे हैं, अतः, भन्ते! भगवान् अब परिनिर्वाण प्राप्त करें। ...भन्ते! आपके परिनिर्वाण का समय आ गया है।

''भन्ते! आपने यह भी कहा था—'पापिन्! मैं तब तक परिनिर्वाण प्राप्त नहीं करूँगा जब

उग्गहेत्वा आचिक्खिस्सन्ति देसेस्सन्ति पञ्ञपेस्सन्ति पट्ठपेस्सन्ति विवरिस्सन्ति विभजिस्सन्ति उत्तानीकरिस्सन्ति, उप्पन्नं परप्पवादं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेत्वा सप्पाटिहारियं धम्मं देसेस्सन्ती' ति। एतरहि, भन्ते, उपासिका भगवतो साविका वियत्ता विनीता विसारदा पत्तयोगक्खेमा बहुस्सुता धम्मधरा धम्मानुधम्मप्पटिपन्ना सामीचिप्पटिपन्ना अनुधम्मचारिनियो, सकं आचरियकं उग्गहेत्वा आचिक्खन्ति देसेन्ति पञ्ञपेन्ति [B.131] पट्ठपेन्ति विवरन्ति विभजन्ति उत्तानीकरोन्ति, उप्पन्नं परप्पवादं सहधम्मेन सुनिग्गहितं निग्गहेत्वा सप्पाटिहारियं धम्मं देसेन्ति।

८. "परिनिब्बातु दानि, भन्ते, भगवा, परिनिब्बातु सुगतो। परिनिब्बानकालो दानि, भन्ते, भगवतो। भासिता खो पनेसा, भन्ते, भगवता वाचा—'न तावाहं, पापिम, [N.399] परिनिब्बायिस्सामि याव मे इदं ब्रह्मचरियं न इद्धं चेव भविस्सति फीतं च वित्थारिकं बाहुजञ्ञं पुथुभूतं, याव देवमनुस्सेहि सुप्पकासितं' ति। एतरहि, भन्ते, भगवतो ब्रह्मचरियं इद्धं चेव फीतं च वित्थारिकं बाहुजञ्ञं पुथुभूतं, याव देवमनुस्सेहि सुप्पकासितं।

९. "परिनिब्बातु दानि, भन्ते, भगवा, परिनिब्बातु सुगतो। परिनिब्बानकालो दानि, भन्ते, भगवतो" ति।

"अप्पोस्सुक्को त्वं, पापिम, होहि। नचिरं तथागतस्स परिनिब्बानं भविस्सति। इतो तिण्णं मासानं अच्चयेन तथागतो परिनिब्बायिस्सती" ति।

१०. अथ खो भगवा चापाले चेतिये सतो सम्पजानो आयुसङ्खारं ओस्सजि। ओस्सट्ठे च भगवता आयुसङ्खारे महाभूमिचालो अहोसि भिंसनको सलोमहंसो, देवदुन्दुभियो च फलिंसु। अथ खो भगवा एतमत्थं विदित्वा तायं वेलायं इमं उदानं उदानेसि—

---

तक मेरी भिक्षुणी श्राविकाएँ... उपासक... उपासिकाएँ व्यक्त ...पूर्ववत्... भन्ते! आपके परिनिर्वाण का समय आ गया है।'

८. "भन्ते! आपने यह भी कहा है—'पापिन्! मैं तब तक परिनिर्वाण प्राप्त नहीं करूँगा, जब तक मेरे द्वारा उपदिष्ट धर्म ऋद्ध (उन्नत), स्फीत (स्पष्ट), विस्तारित, बहुजनगृहीत एवं इतना विशाल कि देवता और मनुष्य—सभी इसे जानने समझने लगें।' भन्ते! आपके द्वारा उपदिष्ट यह धर्म अब ऋद्ध ...पूर्ववत्... जानने समझने लगे हैं।

९. भन्ते! अब आपके परिनिर्वाण के समय आ गया है। अत: अब आप परिनिर्वृत हो जायँ॥"

"पापि मार! तूँ चिन्ता न कर, शीघ्र ही तथागत का परिनिर्वाण होने वाला है। आज से तीन मास बाद तथागत का परिनिर्वाण हो जायगा।"

१०. तब भगवान् ने चापाल चैत्य में स्मृति सम्प्रजन्य के साथ आयु:संस्कार (प्राणशक्ति) का त्याग कर दिया। भगवान् द्वारा अपना आयु:संस्कार छोड़ते ही (उसी समय) भयङ्कर, रोमहर्षक

[R.312] "तुलमतुलं च सम्भवं, भवसङ्खारमवस्सजि मुनि।
अज्झत्तरतो समाहितो, अभिन्दि कवचमिवत्तसम्भवं" ति॥

११. अथ खो आयस्मतो आनन्दस्स एतदहोसि—"महा वतायं भूमिचालो; सुमहा वतायं भूमिचालो भिंसनको सलोमहंसो, देवदुन्दुभियो च फलिंसु। को नु खो हेतु, को पच्चयो महतो भूमिचालस्स पातुभावाया" ति?

१२. अथ खो आयस्मा आनन्दो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा आनन्दो भगवन्तं एतदवोच—"महा वतायं, भन्ते, भूमिचालो; सुमहा वतायं, भन्ते, भूमिचालो भिंसनको [B.132] सलोमहंसो, देवदुन्दुभियो च फलिंसु। को नु खो, भन्ते, हेतु, को पच्चयो महतो भूमिचालस्स पातुभावाया" ति?

[N.400] १३. "अट्ठिमे, आनन्द, हेतू, अट्ठ पच्चया महतो भूमिचालस्स पातुभावाय। कतमे अट्ठ? अयं, आनन्द, महापथवी उदके पतिट्ठिता; उदकं वाते पतिट्ठितं; वातो आकासट्ठो होति। सो, आनन्द, समयो यं महावाता वायन्ति; महावाता वायन्ता उदकं कम्पेन्ति; उदकं कम्पितं पथविं कम्पेति। अयं, आनन्द, पठमो हेतु, पठमो पच्चयो महतो भूमिचालस्स पातुभावाय।

१४. "पुन च परं, आनन्द, समणो वा ब्राह्मणो वा इद्धिमा चेतोवसिप्पत्तो देवता वा

---

भूचाल (भूकम्प) होने लगा तथा देवताओं ने दुन्दुभियाँ बजायीं। यह बात जानकर भगवान् के श्रीमुख से यह हृदयोद्गार (उदान) निकला—

"मुनि ने अतुल-तुल (अप्रमाण) उत्पन्न भवसंस्कार (जीवन-शक्ति) त्याग दिया।
अध्यात्मरत और एकाग्रचित्त होकर उनने अपने साथ उत्पन्न कवच को काट दिया॥"

११. तब आयुष्मान् आनन्द को यह विचार हुआ—यह तो बहुत उग्र भूकम्प आया है। यह भीषण एवं रोमाञ्चकारी है। देवों द्वारा दुन्दुभियाँ (ढोल) बजायी जा रही हैं। इस भीषण भूकम्प के होने का क्या कारण या प्रत्यय हो सकता है?"

१२. तब आयुष्मान् आनन्द भगवान् के पास आये। आकर, प्रणाम कर, एक ओर बैठ गये। एक ओर बैठे आनन्द ने भगवान् से यह जिज्ञासा प्रकट की—"भन्ते! यह उग्र एवं भीषण भूकम्प आने का क्या कारण हो सकता है? ये देवता भी दुन्दुभियाँ क्यों बजा रहे हैं?"

"आनन्द! ऐसे उग्र एवं भीषण भूकम्प के आठ ही कारण हुआ करते हैं। कौन से आठ?

१३. "आनन्द! यह महापृथ्वी जल पर प्रतिष्ठित है, तथा जल वायु पर प्रतिष्ठित है, वायु आकाश में प्रतिष्ठित है। आनन्द! एक समय ऐसा आता है कि जब महावात (तूफान=चक्रवात) चलने लगता है, यह महावात जल को कँपाता है, और वह काँपता हुआ जल पृथ्वी को कँपाये—यह स्वाभाविक है; क्योंकि यह पृथ्वी जल पर ही प्रतिष्ठित है। आनन्द! इस भीषण भूकम्प का यह प्रथम हेतु तथा प्रथम प्रत्यय है। (१)

१४. "पुनः, आनन्द! जब कोई श्रमण ब्राह्मण ऋद्धिमय चेतोवशित्व (योगबल) को प्राप्त

महिद्धिका महानुभावा। तस्स परित्ता पथवीसञ्ञा भाविता होति, अप्पमाणा आपोसञ्ञा। सो इमं पथविं कम्पेति सङ्कम्पेति सम्पकम्पेति सम्पवेधेति। अयं, आनन्द, दुतियो हेतु, दुतियो पच्चयो महतो भूमिचालस्स पातुभावाय।

१५. ''पुन च परं, आनन्द, यदा बोधिसत्तो तुसिता काया चवित्वा सतो [R.313] सम्पजानो मातुकुच्छिं ओक्कमति, तदायं पथवी कम्पति सङ्कम्पति सम्पकम्पति सम्पवेधति। अयं, आनन्द, ततियो हेतु, ततियो पच्चयो महतो भूमिचालस्स पातुभावाय।

१६. ''पुन च परं, आनन्द, यदा बोधिसत्तो सतो सम्पजानो मातुकुच्छिस्मा निक्खमति, तदायं पथवी कम्पति सङ्कम्पति सम्पकम्पति सम्पवेधति। अयं, आनन्द, चतुत्थो हेतु, चतुत्थो पच्चयो महतो भूमिचालस्स पातुभावाय।

१७. ''पुन च परं, आनन्द, यदा तथागतो अनुत्तरं सम्मासम्बोधिं अभिसम्बुज्झति, तदायं पथवी कम्पति सङ्कम्पति सम्पकम्पति सम्पवेधति। अयं, आनन्द, पञ्चमो हेतु, पञ्चमो पच्चयो महतो भूमिचालस्स पातुभावाय।

१८. ''पुन च परं, आनन्द, यदा तथागतो अनुत्तरं धम्मचक्कं पवत्तेति, तदायं पथवी कम्पति सङ्कम्पति सम्पकम्पति सम्पवेधति। अयं, आनन्द, छट्ठो हेतु, छट्ठो पच्चयो महतो भूमिचालस्स पातुभावाय।

१९. ''पुन च परं, आनन्द, यदा तथागतो सतो सम्पजानो आयुसङ्खारं [B.133] ओस्सज्जति, तदायं पथवी कम्पति सङ्कम्पति सम्पकम्पति सम्पवेधति। अयं, आनन्द, सत्तमो हेतु, सत्तमो पच्चयो महतो भूमिचालस्स पातुभावाय। [N.401]

---

हो; या कोई दिव्य बलधारी (महानुभाव) देवता हो, उसने पृथ्वीसंज्ञा की अल्प साधना कर रखी हो तथा जलसंज्ञा की अधिक, वह अपने योगबल से इस पृथ्वी को कम्पित, प्रकम्पित, सम्प्रकम्पित एवं सम्प्रवेधित करता है—आनन्द! यह इस भूकम्प का द्वितीय हेतु या प्रत्यय है। (२)

१५. ''पुनः, आनन्द! जब कोई बोधिसत्त्व तुषित लोक से च्युत होकर स्मृतिसम्प्रजन्य के साथ माता के गर्भ में अवतरित होता है, तब भी यह पृथ्वी काँपती है—आनन्द! यह इस भूकम्प का तीसरा कारण या प्रत्यय है। (३)

१६. ''पुनः, आनन्द! जब कोई बोधिसत्त्व माता के गर्भ से बाहर आता हो, तब भी यह पृथ्वी काँपती है—आनन्द! यह इस भूकम्प का चतुर्थ कारण है। (४)

१७. ''पुनः, आनन्द! जब तथागत अद्वितीय सम्यक्सम्बोधि प्राप्त करते हैं, तब भी यह पृथ्वी काँपती है—आनन्द! यह इस भूकम्प का पञ्चम कारण है। (५)

१८. ''पुनः, आनन्द! जब तथागत अपना धर्मचक्रप्रवर्तन (प्रथम धर्मोपदेश) करते हैं, तब भी यह पृथ्वी काँपती है—आनन्द! यह इस भूकम्प का षष्ठ कारण है। (६)

१९. ''पुनः, आनन्द! जब तथागत स्मृतिसम्प्रजन्यपूर्वक अपना आयुसंस्कार (जीवनशक्ति) त्यागते हैं, तब भी यह पृथ्वी काँपती है—आनन्द! यह भूकम्प का सप्तम कारण है। (७)

२०. "पुन च परं, आनन्द, यदा तथागतो अनुपादिसेसाय निब्बानधातुया परिनिब्बायति, तदायं पथवी कम्पति सङ्कम्पति सम्पकम्पति सम्पवेधति। अयं, आनन्द, अट्ठमो हेतु, अट्ठमो पच्चयो महतो भूमिचालस्स पातुभावाय। इमे खो, आनन्द, अट्ठ हेतू, अट्ठ पच्चया महतो भूमिचालस्स पातुभावाया" ति॥ ●

भूमिचालवग्गो सत्तमो॥

**तस्सुद्दानं**

[R.314] इच्छा अलं च सङ्खित्तं, गया अभिभुना सह।
विमोक्खो द्वे च वोहारा, परिसा भूमिचालेना ति॥ ●

## ८. यमकवग्गो

**१. पठमसद्धासुत्तं :** १. "सद्धो च, भिक्खवे, भिक्खु होति, नो च सीलवा। एवं सो तेनङ्गेन अपरिपूरो होति। तेन तं अङ्गं परिपूरेतब्बं—'किन्ताहं सद्धो च अस्सं सीलवा चा' ति। यतो च खो, भिक्खवे, भिक्खु सद्धो च होति सीलवा च, एवं सो तेनङ्गेन परिपूरो होति।

२. "सद्धो च, भिक्खवे, भिक्खु होति सीलवा च, नो च बहुस्सुतो। एवं सो तेनङ्गेन

---

२०. "पुन:, आनन्द! जब तथागत अनुपधिशेष (समग्र) परिनिर्वाण प्राप्त करते हैं, तब भी यह पृथ्वी काँपती है—आनन्द! ऐसे भूकम्प का यह अष्टम कारण या प्रत्यय है। (८)

"इस प्रकार, आनन्द! इस उग्र भूकम्प के उत्पाद के आठ हेतु या प्रत्यय होते हैं॥" ●

भूमिचालवर्ग सप्तम सम्पन्न॥

**इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची**

१. इच्छासूत्र, २. अलंसूत्र, ३. संक्षिप्तसूत्र, ४. गयाशीर्षसूत्र, ५. अभिभ्वायतनसूत्र, ६. विमोक्षसूत्र, ७. अनार्यव्यवहारसूत्र, ८. आर्यव्यवहारसूत्र, ९. परिषत्सूत्र, एवं १०. भूमिचालसूत्र॥ ●

## ८. यमकवर्ग

**१. प्रथम श्रद्धासूत्र : : भिक्षु के आठ पूर्ण धर्म**

१. "भिक्षुओ! कोई भिक्षु श्रद्धालु ही होता है, शीलवान् नहीं होता। वह (साधना के) इस एक अङ्ग से पूर्ण नहीं होता। तब उसे सोचना चाहिये कि क्यों न मैं साधना के इस अङ्ग को भी पूर्ण कर लूँ। अत: जब, भिक्षुओ! वह भिक्षु श्रद्धालु भी होता है और शीलवान् भी, तब वह दोनों अङ्गों से परिपूर्ण कहलाता है।

२. "भिक्षुओ! कोई भिक्षु श्रद्धालु एवं शीलवान् तो होता है, परन्तु बहुश्रुत नहीं होता, तब

अपरिपूरो होति। तेन तं अङ्गं परिपूरेतब्बं--'किन्ताहं सद्धो च अस्सं, सीलवा च, बहुस्सुतो चा' ति। यतो च खो, भिक्खवे, भिक्खु सद्धो च होति सीलवा च बहुस्सुतो च, एवं सो तेनङ्गेन परिपूरो होति।

३. ''सद्धो च, भिक्खवे, भिक्खु होति सीलवा च बहुस्सुतो च, नो च [B.134] धम्मकथिको ...पे०... धम्मकथिको च, नो च परिसावचरो ...पे०... परिसावचरो च, नो च विसारदो परिसाय धम्मं देसेति ...पे०... विसारदो च परिसाय धम्मं देसेति, नो च [N.402] चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी ...पे०... चतुन्नं झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, नो च आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति; एवं सो तेनङ्गेन अपरिपूरो होति। तेन तं अङ्गं परिपूरेतब्बं—'किन्ताहं सद्धो च अस्सं, सीलवा च, [R.315] बहुस्सुतो च, धम्मकथिको च, परिसावचरो च, विसारदो च परिसाय धम्मं देसेय्यं, चतुन्नं च झानानं आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी अस्सं अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, आसवानं च खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति।

४. ''यतो च खो, भिक्खवे, भिक्खु सद्धो च होति, सीलवा च, बहुस्सुतो च, धम्मकथिको च, परिसावचरो च, विसारदो च परिसाय धम्मं देसति, चतुन्नं च झानानं

---

वह इस एक अङ्ग से अपूर्ण होता है। उसे चिन्तन करना चाहिये—'क्यों न मैं श्रद्धा, शील एवं बहुश्रुतता—इन तीनों अङ्गों से परिपूर्ण हो जाऊँ'। जब वह श्रद्धाल, शीलवान् एवं बहुश्रुत होता है तो वह तीनों अङ्गों से पूर्ण कहलाता है।

३. ''भिक्षुओ! कोई भिक्षु श्रद्धालु, शीलवान् एवं बहुश्रुत तो होता है, परन्तु धर्मकथिक नहीं होता... पूर्ववत्।

''भिक्षुओ! कोई भिक्षु श्रद्धालु, शीलवान्, बहुश्रुत एवं धर्मकथिक तो होता है, परन्तु परिषदवचर (सभा में बोलने में चतुर) नहीं होता... पूर्ववत्।

''...पूर्ववत्... परिषदवचर भी होता है, परन्तु परिषद् में बैठकर धर्मकथा करने में चतुर नहीं होता ...पूर्ववत्...।

''...पूर्ववत्... धर्मकथा करने में भी चतुर होता है, परन्तु सुखमय साधना में उपयुक्त आध्यात्मिक चारों ध्यानों का लाभी नहीं होता ...पूर्ववत्...।

''...पूर्ववत्... आध्यात्मिक चारों ध्यानों का लाभी भी होता है, परन्तु आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति प्रज्ञाविमुक्ति को जानकर, साक्षात् कर प्राप्त कर साधना नहीं करता; इस तरह वह उस अङ्ग से पूर्ण नहीं होता। तब उसको चिन्तन करना चाहिये—'क्यों न मैं आश्रवों के क्षय से... भी साधना करूँ।'

४. जब, भिक्षुओ! वह भिक्षु श्रद्धालु भी होता है, शीलवान् भी होता है, बहुश्रुत भी होता है,

आभिचेतसिकानं दिट्ठधम्मसुखविहारानं निकामलाभी होति अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, आसवानं च खया आनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति; एवं सो तेनङ्गेन परिपूरो होति। इमेहि, खो, भिक्खवे, अट्ठहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु समन्तपासादिको च होति सब्बाकारपरिपूरो चा'' ति ॥ ●

**२. दुतियसद्धासुत्तं :** १. ''सद्धो च, भिक्खवे, भिक्खु होति, नो च सीलवा। एवं सो तेनङ्गेन अपरिपूरो होति। तेन तं अङ्गं परिपूरेतब्बं—'किन्ताहं सद्धो च अस्सं सीलवा चा' ति। यतो च खो, भिक्खवे, भिक्खु सद्धो च होति सीलवा च, एवं सो तेनङ्गेन परिपूरो होति।

२. ''सद्धो च, भिक्खवे, भिक्खु होति सीलवा च, नो च बहुस्सुतो ...पे०... बहुस्सुतो च, नो च धम्मकथिको ...पे०... धम्मकथिको च, नो च परिसावचरो ...पे०... [B.135, R.316] परिसावचरो च, नो च विसारदो परिसाय धम्मं देसेति ...पे०... विसारदो च [N.404] परिसाय धम्मं देसेति, नो च ये ते सन्ता विमोक्खा अतिक्कम्म रूपे आरुप्पा ते कायेन फुसित्वा विहरति ...पे०... ये ते सन्ता विमोक्खा अतिक्कम्म रूपे आरुप्पा ते कायेन फुसित्वा विहरति, नो च आसवानं खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति; एवं सो तेनङ्गेन अपरिपूरो होति। तेन तं अङ्गं परिपूरेतब्बं—'किन्ताहं सद्धो च अस्सं, सीलवा च, बहुस्सुतो च, धम्मकथिको च, परिसावचरो च, विसारदो च परिसाय धम्मं देसेय्यं, ये ते सन्ता विमोक्खा अतिक्कम्म रूपे

---

धर्मकथिक भी होता है, परिषदवचर भी होता है, धर्मसभा में बैठकर धर्मोपदेश में भी कुशल होता है, सुखमय साधना में उपयुक्त आध्यात्मिक चारों ध्यानों का लाभी भी होता है तथा आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में स्वयं जानकर साक्षात्कार कर, प्राप्त कर साधना भी करता है—इस प्रकार वह उस अङ्ग से भी पूर्ण होता है। भिक्षुओ! इन आठ धर्मों से युक्त भिक्षु सबको प्रसन्न रखने वाला तथा साधना के सभी अङ्गों को पूर्ण करने वाला होता है॥''

**२. द्वितीय श्रद्धासूत्र : : आठ अङ्गों से परिपूर्ण भिक्षु**

१. ''भिक्षुओ! कोई भिक्षु श्रद्धालु होता है, परन्तु शीलवान् नहीं होता। इस प्रकार वह एक अङ्ग से अपूर्ण होता है। इसलिये उसको यह सोचना चाहिये कि क्यों न मैं इस अङ्ग को पूर्ण कर लूँ और यह अङ्ग पूर्ण करना चाहिये। जब, भिक्षुओ! वह भिक्षु श्रद्धालु एवं शीलवान् दोनों होता है तब वह उस अङ्ग से परिपूर्ण कहलाता है।

२. ''भिक्षुओ! कोई भिक्षु श्रद्धालु एवं शीलवान् होता है, परन्तु बहुश्रुत नहीं होता ...पूर्ववत्... बहुश्रुत भी होता है, परन्तु धर्मकथिक नहीं होता ...पूर्ववत्... परिषदवचर भी होता है, परन्तु परिषद् में बैठकर धर्मकथा में कुशल नहीं होता ...पूर्ववत्... परिषद् में बैठकर कुशलतापूर्वक धर्मकथा भी करता है, परन्तु जो शान्त विमोक्ष हैं उनमें रूप में अरूप विषयों को काया से स्पर्श करते हुए साधना नहीं कर पाता ...पूर्ववत्... रूप में अरूप विषयों को काया से स्पर्श कर साधना करता हुआ भी आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति प्रज्ञाविमुक्ति को इसी धर्म में जानकर साक्षात् कर, प्राप्त कर साधना नहीं कर पाता। वह साधना के इस अङ्ग से अपूर्ण रह जाता है। तब

आरुप्पा ते कायेन फुसित्वा विहरेय्यं, आसवानं च खया अनासवं चेतोविमुत्तिं पञ्ञाविमुत्तिं दिट्ठेव धम्मे सयं अभिञ्ञा सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरेय्यं' ति।

३. "यतो च खो, भिक्खवे, भिक्खु सद्धो च होति, सीलवा च, बहुस्सुतो च, धम्मकथिको च, परिसावचरो च, विसारदो च परिसाय धम्मं देसेति, ये ते सन्ता विमोक्खा अतिक्कम्म रूपे आरुप्पा ते च कायेन फुसित्वा विहरति, आसवानं च खया ...पे०... सच्छिकत्वा उपसम्पज्ज विहरति; एवं सो तेनङ्गेन परिपूरो होति। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु समन्तपासादिको च होति सब्बाकारपरिपूरो चा" ति॥ ●

**३. पठममरणस्सतिसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा नातिके विहरति गिञ्जकावसथे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि—"भिक्खवो" ति। "भदन्ते" ति ते भिक्खू [R.317] भगवतो मच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—"मरणस्सति, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना। भावेथ नो तुम्हे, भिक्खवे, मरणस्सतिं" ति।

२. एवं वुत्ते अञ्ञतरो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—"अहं खो, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं" ति।

"यथा कथं पन त्वं, भिक्खु, भावेसि मरणस्सतिं" ति?

"इध मय्हं, भन्ते, एवं होति—'अहो वताहं रत्तिन्दिवं जीवेय्यं, भगवतो [B.136]

---

उसको सोचना चाहिये कि जब मैं श्रद्धालु भी हूँ, शीलवान् भी हूँ... तो क्यों न मैं आश्रवों के क्षय से... प्राप्त कर साधना करूँ।

३. "जब वह, भिक्षुओ! भिक्षु श्रद्धालु भी होता है... पूर्ववत्... आश्रवों के क्षय से अनाश्रवा चेतोविमुक्ति, प्रज्ञाविमुक्ति को इसी जन्म में जानकर, साक्षात् कर, प्राप्त कर साधना करता है, तब वह साधना के सभी अङ्गों से परिपूर्ण कहलाता है। भिक्षुओ! इन आठ अङ्गों से परिपूर्ण भिक्षु सबकी श्रद्धा प्राप्त करने वाला तथा सभी अङ्गों से परिपूर्ण साधना वाला कहलाता है॥" ●

**३. प्रथम मरणस्मृतिसूत्र : : आठ अङ्गों से युक्त मरणस्मृति भावना**

१. एक समय भगवान् नादिका के गृञ्जकावसथ (ईंटों के बने घर) में साधनाहेतु विराजमान थे। वहाँ भगवान् ने "भिक्षुओ" सम्बोधन से भिक्षुओं को अपने सम्मुख बुलाया। "हाँ, भन्ते!" कहकर भिक्षु भगवान् के सम्मुख आये। भगवान् ने उनको यह उपदेश किया—

"भिक्षुओ! मरणस्मृति की साधना एवं अभ्यास करने पर वह अतिशय फलदायिनी तथा विशेष माहात्म्य वाली, अमृत (निर्वाण) तक पहुँचाने वाली होती है, तथा अमृत (निर्वाण) ही उसकी सीमा है। अत: भिक्षुओ! तुमको भी मरणस्मृति की भावना निरन्तर करनी चाहिये।"

२. भगवान् द्वारा ऐसा उपदेश किये जाने पर वहाँ उपस्थित भिक्षुओं में से एक बोला— "भन्ते! मैं मरणस्मृति की भावना करता हूँ।"

"भिक्षुओ! तुम मरणस्मृति की भावना कैसे करते हो?"

"यहाँ, भन्ते! मुझको यह विचार होता है—'यदि मैं एक ही रात-दिन जीवित रहा और उतने

सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति। एवं खो अहं, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं'' ति।

[N.404] ३. अञ्ञतरो पि खो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—''अहं पि खो, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं'' ति।

''यथा कथं पन त्वं, भिक्खु, भावेसि मरणस्सतिं'' ति?

''इध मय्हं, भन्ते, एवं होति—'अहो वताहं दिवसं जीवेय्यं, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति। एवं खो अहं, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं'' ति।

४. अञ्ञतरो पि खो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—''अहं पि खो, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं'' ति।

''यथा कथं पन त्वं, भिक्खु, भावेसि मरणस्सतिं'' ति?

''इध मय्हं, भन्ते, एवं होति—'अहो वताहं उपड्ढदिवसं जीवेय्यं, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति। एवं खो अहं, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं'' ति।

५. अञ्ञतरो पि खो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—''अहं पि खो, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं'' ति।

''यथा कथं पन त्वं, भिक्खु, भावेसि मरणस्सतिं'' ति?

''इध मय्हं, भन्ते, एवं होति—'अहो वताहं तदन्तरं जीवेय्यं यदन्तरं एकपिण्डपातं

---

समय तक मैं निरन्तर भगवान् के द्वारा किये गये उपदेशों का ही चिन्तन मनन करूँ तो इतना ही मेरे लिये बहुत होगा।' भन्ते! इस प्रकार चितन्तन-मनन करता हुआ मैं मरणस्मृति की भावना करता हूँ। (१)

३. किसी दूसरे भिक्षु ने भी भगवान् से यही निवेदन किया—''भन्ते! मैं भी मरणस्मृति की भावना करता हूँ।''

''भिक्षु! तुम इस मरणस्मृति की भावना कैसे करते हो?''

''यहाँ, भन्ते! मुझको यह विचार आता है—'भले ही मैं एक ही दिन जीऊँ, परन्तु तब तक मैं निरन्तर भगवदुपदिष्ट वचनों का ही चिन्तन-मनन करता रहूँ। इतने पर भी मैं समझूँगा कि मैंने बहुत कुछ कर लिया।' इस प्रकार, भन्ते! मैं मरणस्मृति की भावना करता हूँ। (२)

४. दूसरे किसी भिक्षु ने भी कहा—''भन्ते! मैं भी मरणस्मृति की भावना करता हूँ।''

''भिक्षु! तुम उस मरणस्मृति की भावना कैसे करते हो?''

''यहाँ, भन्ते! मुझको यह विचार होता है—'भले ही मैं आधा दिन ही जीवित रहूँ, परन्तु उतने समय तक मैं आपके द्वारा उपदिष्ट वचनों का ही निरन्तर चिन्तन करता रहूँ। इतने पर भी मैं समझूँगा कि मैंने बहुत कुछ कर लिया।' इस प्रकार मैं, भन्ते! मरणस्मृति की भावना करता हूँ।'' (३)

५. किसी दूसरे भिक्षु ने भी ...पूर्ववत्... जितने समय में मैं एक बार भोजन का एक ग्रास खाता हूँ, उतने समय तक भी ...पूर्ववत्...। (४)

भुञ्जामि, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति। एवं खो अहं, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं'' ति।

६. अञ्ञतरो पि खो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—''अहं पि खो, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं'' ति।

''यथा कथं पन त्वं, भिक्खु, भावेसि मरणस्सतिं'' ति?

''इध मय्हं, भन्ते, एवं होति—'अहो वताहं तदन्तरं जीवेय्यं यदन्तरं उपड्ढ- [R.318] पिण्डपातं भुञ्जामि, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति। एवं खो अहं, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं'' ति।

७. अञ्ञतरो पि खो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—''अहं पि खो, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं'' ति।

''यथा कथं पन त्वं, भिक्खु, भावेसि मरणस्सतिं'' ति?

''इध मय्हं, भन्ते, एवं होति—'अहो वताहं तदन्तरं जीवेय्यं यदन्तरं चत्तारो [B.137] पञ्च आलोपे सङ्खादित्वा अज्झोहरामि, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे [N.405] कतं अस्सा' ति। एवं खो अहं, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं'' ति।

८. अञ्ञतरो पि खो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—''अहं पि खो, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं'' ति।

''यथा कथं पन त्वं, भिक्खु, भावेसि मरणस्सतिं'' ति?

''इध मय्हं, भन्ते, एवं होति—'अहो वताहं तदन्तरं जीवेय्यं यदन्तरं एकं आलोपं सङ्खादित्वा अज्झोहरामि, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति। एवं खो अहं, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं'' ति।

९. अञ्ञतरो पि खो भिक्खु भगवन्तं एतदवोच—''अहं पि खो, भन्ते, भावेमि मरणस्सतिं'' ति।

''यथा कथं पन त्वं, भिक्खु, भावेसि मरणस्सतिं'' ति?

''इध मय्हं भन्ते, एवं होति—'अहो वताहं तदन्तरं जीवेय्यं यदन्तरं अस्ससित्वा वा

---

६. किसी दूसरे भिक्षु ने भी ...पूर्ववत्...जितने समय में भोजन का आधा भाग खाता हूँ, उतने समय तक भी ...पूर्ववत्...। (५)

७. किसी दूसरे भिक्षु ने भी ...पूर्ववत्... जितने समय में मैं भोजन के पाँच ग्रास खाता हूँ, उतने समय तक भी ...पूर्ववत्...। (६)

८. दूसरे किसी भिक्षु ने भी ...पूर्ववत्... जितने समय में मैं भोजन का एक ग्रास खाता हूँ, उतने समय तक भी ...पूर्ववत्...। (७)

९. किसी दूसरे भिक्षु ने भी... पूर्ववत्... जितने समय में मैं एक श्वास लेकर उसे छोड़ता हूँ, उतने समय तक भी ...पूर्ववत्...। इस प्रकार मैं मरणस्मृति की भावना करता हूँ। (८)

पस्ससामि, पस्ससित्वा वा अस्ससामि, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति। एवं खो अहं, भन्ते भावेमि मरणस्सतिं'' ति।

१०. एवं वुत्ते भगवा ते भिक्खू एतदवोच—''य्वायं, भिक्खवे, भिक्खु एवं मरणस्सतिं भावेति—'अहो वताहं रत्तिन्दिवं जीवेय्यं, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति; योपायं, भिक्खवे, भिक्खु एवं मरणस्सतिं भावेति—'अहो वताहं [R.319] दिवसं जीवेय्यं, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति; योपायं, भिक्खवे, भिक्खु एवं मरणस्सतिं भावेति—'अहो वताहं उपड्ढदिवसं जीवेय्यं, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति; योपायं, भिक्खवे, भिक्खु एवं मरणस्सतिं भावेति—'अहो वताहं तदन्तरं जीवेय्यं यदन्तरं एकपिण्डपातं भुञ्जामि, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति; योपायं, भिक्खवे, भिक्खु एवं मरणस्सतिं भावेति—'अहो वताहं तदन्तरं जीवेय्यं यदन्तरं उपड्ढपिण्डपातं भुञ्जामि, भगवतो सासनं [B.138] मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति; योपायं, भिक्खवे, भिक्खु एवं मरणस्सतिं भावेति—'अहो वताहं तदन्तरं जीवेय्यं यदन्तरं चत्तारो पञ्च आलोपे सङ्खादित्वा [N.406] अज्झोहरामि, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति—इमे वुच्चन्ति, भिक्खवे, 'भिक्खू पमत्ता विहरन्ति, दन्धं मरणस्सतिं भावेन्ति आसवानं खयाय'।

११. ''यो च ख्वायं, भिक्खवे, भिक्खु एवं मरणस्सतिं भावेति—'अहो वताहं तदन्तरं जीवेय्यं यदन्तरं एकं आलोपं सङ्खादित्वा अज्झोहरामि, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति; योपायं, भिक्खवे, भिक्खु एवं मरणस्सतिं भावेति—'अहो वताहं तदन्तरं जीवेय्यं यदन्तरं अस्ससित्वा वा पस्ससामि, पस्ससित्वा वा अस्ससामि, भगवतो सासनं मनसि करेय्यं, बहु वत मे कतं अस्सा' ति—इमे वुच्चन्ति, भिक्खवे, 'भिक्खू अप्पमत्ता विहरन्ति, तिक्खं मरणस्सतिं भावेन्ति आसवानं खयाय'।

---

१०. इन सब भिक्षुओं द्वारा उपर्युक्त रीति से अपने अपने विचार प्रस्तुत करने के बाद भगवान् ने उन के विचारों की समीक्षा करते हुए कहा—''भिक्षुओ! इन में से जो इस मरणस्मृति की भावना इस प्रकार चिन्तन कर करता है—'मैं एक रात-दिन जीऊँ'... मैं एक दिन जीऊँ... 'मैं आधा दिन जीऊँ'... 'मैं एक बार भोजन करने जितने समय तक जीऊँ'... 'मैं एक बार आधा भोजन करने जितने समय तक जीऊँ'... 'मैं चार पाँच ग्रास खाने तक के समय ही जीऊँ'...। ऐसा विचार कर मेरे उपदेशों पर चिन्तन मनन कर मरणस्मृति की भावना करने वाले ये भिक्षु प्रमादी (असावधान) हैं तथा उनकी यह मरणस्मृति की भावना भी धूमिल है। अत: ऐसी साधना से आश्रवों के क्षय में बहुत विलम्ब लगेगा।''

११. ''परन्तु अन्त के दो साधक भिक्षु; जिन में एक साधक एक ग्रास खाने तक के समय को बहुत कुछ मानकर साधना करता है, तथा दूसरा जो एक श्वास लेने के समय को बहुत कुछ मानकर साधना करता है—ये दोनों साधक ही मरणस्मृतिभावना के अप्रमत्त (सावधान) साधक माने जाते हैं। इन की यह तीक्ष्ण मरणस्मृति की साधना ही आश्रवक्षय में समर्थ हो सकती है।''

१२. ''तस्मातिह, भिक्खवे, एवं सिक्खितब्बं—'अप्पमत्ता विहरिस्साम, तिक्खं मरणस्सतिं भावयिस्साम आसवानं खयाया' ति। एवं हि वो, भिक्खवे, सिक्खितब्बं'' ति॥

४. **दुतियमरणस्सतिसुत्तं** : १. एकं समयं भगवा नातिके विहरति [R.320] गिञ्जकावसथे। तत्र खो भगवा भिक्खू आमन्तेसि ...पे०... मरणस्सति, भिक्खवे, भाविता बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना।

२. ''कथं भाविता च, भिक्खवे, मरणस्सति कथं बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना? इध, भिक्खवे, भिक्खु दिवसे निक्खन्ते रत्तिया पतिहिताय इति पटिसञ्चिक्खति—'बहुका खो मे पच्चया मरणस्स—अहि वा मं डंसेय्य, विच्छिको वा मं डंसेय्य, सतपदी वा मं डंसेय्य; तेन मे अस्स कालङ्किरिया। सो मम अस्स अन्तरायो। उपक्खलित्वा वा पपतेय्यं, भत्तं वा मे भुत्तं ब्यापज्जेय्य, पित्तं वा मे [B.139] कुप्पेय्य, सेम्हं वा मे कुप्पेय्य, सत्थका वा मे वाता कुप्पेय्युं, मनुस्सा वा मं उपक्कमेय्युं, अमनुस्सा वा मं उपक्कमेय्युं; तेन मे अस्स कालङ्किरिया। सो मम अस्स अन्तरायो' ति। तेन, भिक्खवे, भिक्खुना इति पटिसञ्चिक्खितब्बं—'अत्थि नु खो मे पापका अकुसला [N.407] धम्मा अप्पहीना ये मे अस्सु रत्तिं कालं करोन्तस्स अन्तरायाया' ति।

३. ''सचे, भिक्खवे, भिक्खु पच्चवेक्खमानो एवं जानाति—'अत्थि मे पापका अकुसला धम्मा अप्पहीना ये मे अस्सु रत्तिं कालं करोन्तस्स अन्तरायाया' ति, तेन, भिक्खवे, भिक्खुना तेसंयेव पापकानं अकुसलानं धम्मानं पहानाय अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं।

---

१२. ''अतः भिक्षुओ! तुमको यह सीखना चाहिये—'हम अप्रमत्त होकर ही साधना करेंगे। तथा आश्रवक्षय के लिये तीक्ष्ण मरणस्मृति की ही भावना करेंगे।' भिक्षुओ! ऐसा तुम को सीखना चाहिये॥''

**४. द्वितीय मरणस्मृति सूत्र** : :

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) नादिका में... पूर्ववत् अमृत (निर्वाण) ही उसकी सीमा है।

२. ''कैसे, भिक्षुओ! मरणस्मृति ...पूर्ववत्... अमृत की सीमा है? यहां, भिक्षुओ! कोई भिक्षु दिन निकलने पर तथा रात्रि बीत जाने पर यों सोचता है—'मेरी मृत्यु के बहुत से कारण हो सकते हैं—मुझको कोई साँप या कोई विच्छु डँस ले, कोई कनखजूरा या गोह (कनखजूरा, शतपदी) डँस ले, इससे मेरी मृत्यु हो सकती है, यह मेरी साधना में विघ्न ही होगा। या हो सकता है—मैं ठोकर खाकर गिर पड़ूँ, खाया हुआ भोजन, किसी कारण, दूषित हो जाय, पित्त या कफ कुपित हो जाय, तीव्र वायु कुपित हो जाय, मनुष्य कोई धोखा कर दें, भूत-प्रेतों का आक्रमण हो जाय इससे भी मेरी मृत्यु हो सकती है। ऐसी मृत्यु से भी मेरी साधना में विघ्न ही पड़ेगा।' अतः भिक्षुओ! तुमको यह विचार करना चाहिये—'मेरे पापमय अकुशल धर्म प्रहीण नहीं हुए हैं जो मेरे लिये, रात्रि में मेरे देहपात से विघ्नस्वरूप ही होंगे।'''

३. ''यदि, भिक्षुओ! ऐसा चिन्तन करने वाले भिक्षु को ऐसा अनुभव हो—'मेरे अप्रहीण

४. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, आदित्तचेलो वा आदित्तसीसो वा तस्सेव चेलस्स वा सीसस्स वा निब्बापनाय अधिमत्तं छन्दं च वायामं च उस्साहं च उस्सोळिहं च अप्पटिवानिं च सतिं च सम्पजञ्ञं च करेय्य; एवमेव खो, भिक्खवे, तेन भिक्खुना तेसंयेव पापकानं [R.321] अकुसलानं धम्मानं पहानाय अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं।

५. ''सचे पन, भिक्खवे, भिक्खु पच्चवेक्खमानो एवं जानाति—'नत्थि मे पापका अकुसला धम्मा अप्पहीना ये मे अस्सु रत्तिं कालं करोन्तस्स अन्तरायाया' ति, तेन, भिक्खवे, भिक्खुना तेनेव पीतिपामोज्जेन विहातब्बं अहोरत्तानुसिक्खिना कुसलेसु धम्मेसु।

६. ''इध पन, भिक्खवे, भिक्खु रत्तिया निक्खन्ताय दिवसे पतिहिते इति पटिसञ्चिक्खति—'बहुका खो मे पच्चया मरणस्स—अहि वा मं डंसेय्य, विच्छिको वा मं डंसेय्य, सतपदी वा मं डंसेय्य; तेन मे अस्स कालङ्किरिया। सो मम अस्स अन्तरायो। उपक्खलित्वा वा पपतेय्यं, भत्तं वा मे भुत्तं ब्यापज्जेय्य, पित्तं वा मे कुप्पेय्य, सेम्हं वा मे कुप्पेय्य, सत्थका वा मे वाता कुप्पेय्युं, मनुस्सा वा मं उपक्कमेय्युं, अमनुस्सा वा मं उपक्कमेय्युं; तेन मे अस्स कालङ्किरिया। सो मम अस्स अन्तरायो' ति। तेन भिक्खवे, भिक्खुना इति पटिसञ्चिक्खितब्बं—'अत्थि नु खो मे पापका अकुसला धम्मा अप्पहीना ये मे अस्सु दिवा कालं करोन्तस्स अन्तरायाया' ति।

[B.140] ७. ''सचे, भिक्खवे, भिक्खु पच्चवेक्खमानो एवं जानाति—'अत्थि मे पापका अकुसला धम्मा अप्पहीना ये मे अस्सु दिवा कालं करोन्तस्स अन्तरायाया' ति, तेन, [N.408] भिक्खवे, भिक्खुना तेसंयेव पापकानं अकुसलानं धम्मानं पहानाय अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं।

८. ''सेय्यथापि, भिक्खवे, आदित्तचेलो वा आदित्तसीसो वा तस्सेव चेलस्स वा

---

पापमय अकुशल धर्म, रात्रि या दिन में मेरी मृत्यु के बाद, मेरे लिये विघ्नस्वरूप ही होंगे'—यह सोच कर उस भिक्षु को अपने उन पापमय अकुशल धर्मों के प्रहाण के लिये तीव्र इच्छा, प्रयत्न, उत्साह, पीछे न हटने वाली स्मृति एवं सम्प्रजन्य का सहारा लेना चाहिये।

४. ''जैसे, भिक्षुओ! किसी के वस्त्रों में या शिर पर अग्नि जल उठे ...पूर्ववत्...।

५. ''यदि, भिक्षुओ! तब भी वह भिक्षु समीक्षा करता हुआ ऐसा जाने—'मेरे ये पापमय अकुशल धर्म प्रहीण नहीं हुए तो ये रात्रि में मृत्यु के बाद मेरे लिये विघ्नस्वरूप ही होंगे', तब उस भिक्षु को उन कुशल धर्मों के प्रति प्रीति प्रामोदय के साथ साधना में लग जाना चाहिये।'''

६. ''यहाँ, भिक्षुओ! कोई भिक्षु दिन बीत जाने पर तथा रात्रि आ जाने पर यों सोचता है—...पूर्ववत्...।'' (इसी सूत्र का पैरा सं० २ देखें।)

७. ''यदि, भिक्षुओ! भिक्षु समीक्षा करता हुआ ऐसा समझता है—मेरा अप्रहीण पापमय अकुशल धर्म, रात्रि में मेरी मृत्यु के बाद मेरे लिये परलोक में विघ्नभूत ही होंगे ...पूर्ववत्...।

८. ''जैसे, भिक्षुओ! किसी के वस्त्रों में या शिर पर अग्नि जल उठे ...पूर्ववत्...।''

सीसस्स वा निब्बापनाय अधिमत्तं छन्दं च वायामं च उस्साहं च उस्सोळ्हिं च अप्पटिवानिं च सतिं च सम्पजञ्ञं च करेय्य; एवमेव खो, भिक्खवे, तेन भिक्खुना तेसंयेव पापकानं अकुसलानं धम्मानं पहानाय अधिमत्तो छन्दो च वायामो च उस्साहो च उस्सोळ्ही च अप्पटिवानी च सति च सम्पजञ्ञं च करणीयं।

९. "सचे पन, भिक्खवे, भिक्खु पच्चवेक्खमानो एवं जानाति—'नत्थि मे पापका अकुसला धम्मा अप्पहीना ये मे अस्सु दिवा कालं करोन्तस्स अन्तरायाया' ति, तेन [R.322] भिक्खवे, भिक्खुना तेनेव पीतिपामोज्जेन विहातब्बं अहोरत्तानुसिक्खिना कुसलेसु धम्मेसु। एवं भाविता खो, भिक्खवे, मरणस्सति एवं बहुलीकता महप्फला होति महानिसंसा अमतोगधा अमतपरियोसाना" ति॥ ●

**५. पठमसम्पदासुत्तं** : १. "अट्ठिमा, भिक्खवे, सम्पदा। कतमा अट्ठ? उट्ठानसम्पदा, आरक्खसम्पदा, कल्याणमित्तता, समजीविता, सद्धासम्पदा, सीलसम्पदा, चागसम्पदा, पञ्ञासम्पदा—इमा खो, भिक्खवे, अट्ठ सम्पदा ति।

"उट्ठाता कम्मधेय्येसु, अप्पमत्तो विधानवा।
समं कप्पेति जीविकं सम्भतं अनुरक्खति॥
"सद्धो सीलेन सम्पन्नो, वदञ्ञू वीतमच्छरो।
निच्चं मग्गं विसोधेति, सोत्थानं सम्परायिकं॥
"इच्चेते अट्ठ धम्मा च, सद्धस्स घरमेसिनो।
अक्खाता सच्चनामेन, उभयत्थ सुखावहा॥
"दिट्ठधम्महितत्थाय, सम्परायसुखाय च।
एवमेतं गहट्ठानं, चागो पुञ्ञं पवड्ढती" ति॥ ●

**६. दुतियसम्पदासुत्तं** : १. "अट्ठिमा, भिक्खवे, सम्पदा। कतमा [N.409,B.141]

---

९. "यदि, भिक्षुओ! भिक्षु समीक्षा करता हुआ ...पूर्ववत्... प्रीति प्रामोद्य के साथ कुशल धर्मों की साधना में लग जाना चाहिये। भिक्षुओ! इस प्रकार साधना की गयी यह मरणस्मृति की भावना ...पूर्ववत्... अमृत (निर्वाण) तक पहुँचा देती है।" ●

**५. प्रथम सम्पदासूत्र : : आठ सम्पदाएँ**

१. "भिक्षुओ! ये आठ सम्पदाएँ होती हैं। कौन सी आठ? (१) उत्थानसम्पदा, (२) आरक्षसम्पदा, (३) कल्याणमित्रता, (४) समजीविता, (५) श्रद्धासम्पदा, (६) शीलसम्पदा, (७) त्यागसम्पदा एवं (८) प्रज्ञासम्पदा—भिक्षुओ! ये आठ सम्पदाएँ कहलाती हैं॥"

"जो अपने लौकिक कर्मों को ...पूर्ववत्... पुण्यवृद्धि ही होती है॥" ●

*(पूर्ववर्णित दीर्घजानुसूत्र के समान यहाँ भी विस्तार कर लें।)*

**६. द्वितीय सम्पदासूत्र : : आठ सम्पत्तियाँ**

१. "भिक्षुओ! ये आठ सम्पदाएँ होती हैं। कौन सी आठ? (१) उत्थानसम्पदा, (२)

अट्ठ? उट्ठानसम्पदा, आरक्खसम्पदा, कल्याणमित्तता, समजीविता, सद्धासम्पदा, सील-सम्पदा, चागसम्पदा, पञ्ञासम्पदा।

कतमा च, भिक्खवे, **उट्ठानसम्पदा**? इध, भिक्खवे, कुलपुत्तो येन कम्मट्ठानेन [R.323] जीविकं कप्पेति—यदि कसिया यदि वणिज्जाय यदि गोरक्खेन यदि इस्सत्तेन यदि राजपोरिसेन यदि सिप्पञ्ञतरेन—तत्थ दक्खो होति अनलसो, तत्रुपायाय वीमंसाय समन्नागतो, अलं कातुं संविधातुं ति। अयं वुच्चति, भिक्खवे, उट्ठानसम्पदा।

२. ''कतमा च, भिक्खवे, **आरक्खसम्पदा**? इध, भिक्खवे, कुलपुत्तस्स भोगा होन्ति उट्ठानविरियाधिगता बाहाबलपरिचिता सेदावक्खित्ता धम्मिका धम्मलद्धा ते आरक्खेन गुत्तिया सम्पादेति—'किन्ति मे भोगे नेव राजानो हरेय्युं, न चोरा हरेय्युं, न अग्गि डहेय्य, न उदकं वहेय्य, न अप्पिया दायादा हरेय्युं' ति। अयं वुच्चति, भिक्खवे, आरक्खसम्पदा।

३. ''कतमा च, भिक्खवे, **कल्याणमित्तता**? इध, भिक्खवे, कुलपुत्तो यस्मिं गामे वा निगमे वा पटिवसति, तत्थ ये ते होन्ति गहपती वा गहपतिपुत्ता वा दहरा वा वुद्धसीलिनो वुद्धा वा वुद्धसीलिनो सद्धासम्पन्ना सीलसम्पन्ना चागसम्पन्ना पञ्ञासम्पन्ना, तेहि सद्धिं सन्तिट्ठति सल्लपति साकच्छं समापज्जति; यथारूपानं सद्धासम्पन्नानं सद्धासम्पदं अनुसिक्खति... यथारूपानं सीलसम्पन्नानं सीलसम्पदं अनुसिक्खति... यथारूपानं चाग-सम्पन्नानं चागसम्पदं अनुसिक्खति... यथारूपानं पञ्ञासम्पन्नानं पञ्ञासम्पदं अनुसिक्खति, तेहि सद्धिं सन्तिट्ठति सल्लपति साकच्छं समापज्जति। अयं वुच्चति, भिक्खवे, कल्याण-मित्तता।

४. ''कतमा च, भिक्खवे, **समजीविता**? इध, भिक्खवे, कुलपुत्तो आयं च भोगानं विदित्वा वयं च भोगानं विदित्वा समं जीविकं कप्पेति नाच्चोगाळ्हं नातिहीनं—'एवं मे आयो वयं परियादाय ठस्सति, न च मे वयो आयं परियादाय ठस्सती' ति। सेय्यथापि, भिक्खवे, तुलाधारो वा तुलाधारन्तेवासी वा तुलं पग्गहेत्वा जानाति—'एत्तकेन वा ओनतं, [N.410, R.324] एत्तकेन वा उन्नतं' ति; एवमेव खो, भिक्खवे, कुलपुत्तो आयं च भोगानं विदित्वा वयं च भोगानं विदित्वा समं जीविकं कप्पेति नाच्चोगाळ्हं नातिहीनं—'एवं मे आयो वयं परियादाय ठस्सति, न च मे वयो आयं परियादाय ठस्सती' ति। सचायं, [B.142] भिक्खवे, कुलपुत्तो अप्पायो समानो उळारं जीविकं कप्पेति, तस्स भवन्ति वत्तारो 'उदुम्बरखादी वायं कुलपुत्तो भोगे खादती' ति। सचे पनायं, भिक्खवे, कुलपुत्तो महायो समानो कसिरं जीविकं कप्पेति, तस्स भवन्ति वत्तारो—'अजेट्ठमरणं वायं कुलपुत्तो

---

आरक्षसम्पदा, (३) कल्याणमित्रता, (४) समजीविता, (५) श्रद्धासम्पदा, (६) शीलसम्पदा, (७) त्यागसम्पदा एवं (८) प्रज्ञासम्पदा। ...पूर्ववत्... ॥''

*(गौतमीवर्ग के दीर्घजानुसूत्र के समान इस सूत्र का भी अविकल अनुवाद कर लें।)*

मरिस्सती' ति। यतो च खोयं, भिक्खवे, कुलपुत्तो आयं च भोगानं विदित्वा वयं च भोगानं विदित्वा समं जीविकं कप्पेति नाच्चोगाळ्हं नातिहीनं—'एवं मे आयो वयं परियादाय ठस्सति, न च मे वयो आयं परियादाय ठस्सती' ति। अयं वुच्चति, भिक्खवे, समजीविता।

५. "कतमा च भिक्खवे, **सद्धासम्पदा**? इध, भिक्खवे, कुलपुत्तो सद्धो होति, सद्दहति तथागतस्स बोधिं—'इति पि सो भगवा ...पे०... सत्था देवमनुस्सानं बुद्धो भगवा' ति। अयं वुच्चति, भिक्खवे, सद्धासम्पदा।

६. "कतमा च, भिक्खवे, **सीलसम्पदा**? इध, भिक्खवे, कुलपुत्तो पाणातिपाता पटिविरतो होति ...पे०... सुरामेरयमज्जपमादट्ठाना पटिविरतो होति। अयं वुच्चति, भिक्खवे, सीलसम्पदा।

७. "कतमा च, भिक्खवे, **चागसम्पदा**? इध, भिक्खवे, कुलपुत्तो विगत-मलमच्छेरेन चेतसा अगारं अज्झावसति ...पे०... याचयोगो दानसंविभागरतो। अयं वुच्चति, भिक्खवे, चागसम्पदा।

८. "कतमा च, भिक्खवे, **पञ्ञासम्पदा**? इध, भिक्खवे, कुलपुत्तो [R.325] पञ्ञवा होति ...पे०... सम्मा दुक्खक्खयगामिनिया। अयं वुच्चति, भिक्खवे, पञ्ञासम्पदा। इमा खो, भिक्खवे, अट्ठ सम्पदा ति।

"उट्ठाता कम्मधेय्येसु, अप्पमत्तो विधानवा।
समं कप्पेति जीविकं, सम्भतं अनुरक्खति॥
"सद्धो सीलेन सम्पन्नो, वदञ्ञू वीतमच्छरो।
निच्चं मग्गं विसोधेति, सोत्थानं सम्परायिकं॥
"इच्चेते अट्ठ धम्मा च, सद्धस्स घरमेसिनो। [N.411]
अक्खाता सच्चनामेन, उभयत्थ सुखावहा॥
"दिट्ठधम्महितत्थाय, सम्परायसुखाय च।
एवमेतं गहट्ठानं, चागो पुञ्ञं पवड्ढती" ति॥ ●

**७. इच्छासुत्तं** : १. तत्र खो आयस्मा सारिपुत्तो भिक्खू आमन्तेसि—[B.143] "आवुसो भिक्खवो" ति! "आवुसो" ति खो ते भिक्खु आयस्मतो सारिपुत्तस्स पच्चस्सोसुं। आयस्मा सारिपुत्तो एतदवोच—

२. "अट्ठिमे, आवुसो, पुग्गला सन्तो संविज्जमाना लोकस्मिं। कतमे अट्ठ? इधावुसो, भिक्खुनो पविवित्तस्स विहरतो निरायत्तवुत्तिनो इच्छा उप्पज्जति लाभाय। सो

---

**७. इच्छासूत्र** : : **अष्टविध इच्छायुक्त पुद्गल**

१. वहाँ आयुष्मान् सारिपुत्र ने भिक्षुओं को "भिक्षुओ" कहकर अपने सम्मुख बुलाया। भिक्षु भी "हाँ, आयुष्मन्!" कहते हुए उन के सम्मुख गये। आयुष्मान् सारिपुत्र ने उन को यह उपदेश किया—

उट्ठहति घटति वायमति लाभाय। तस्स उट्ठहतो घटतो वायमतो लाभाय, लाभो नुप्पज्जति। सो तेन अलाभेन सोचति किलमति परिदेवति, उरत्ताळिं कन्दति, सम्मोहं आपज्जति। अयं [R.326] वुच्चतावुसो, 'भिक्खु इच्छो विहरति लाभाय, उट्ठहति घटति वायमति लाभाय, न च लाभी, सोची च परिदेवी च, चुतो च सद्धम्मा'।

३. ''इध पनावुसो, भिक्खुनो पविवित्तस्स विहरतो निरायत्तवुत्तिनो इच्छा उप्पज्जति लाभाय। सो उट्ठहति घटति वायमति लाभाय। तस्स उट्ठहतो घटतो वायमतो लाभाय, लाभो उप्पज्जति। सो तेन लाभेन मज्जति पमज्जति पमादमापज्जति। अयं वुच्चतावुसो, 'भिक्खु इच्छो विहरति लाभाय, उट्ठहति घटति वायमति लाभाय, लाभी च, मदी च पमादी च, चुतो च सद्धम्मा'।

४. ''इध पनावुसो, भिक्खुनो पविवित्तस्स विहरतो निरायत्तवुत्तिनो इच्छा उप्पज्जति लाभाय। सो न उट्ठहति न घटति न वायमति लाभाय। तस्स अनुट्ठहतो अघटतो अवायमतो लाभाय, लाभो नुप्पज्जति। सो तेन अलाभेन सोचति किलमति परिदेवति, उरत्ताळिं कन्दति, सम्मोहं आपज्जति। अयं वुच्चतावुसो, 'भिक्खु इच्छो विहरति लाभाय, न उट्ठहति न घटति न वायमति लाभाय, न च लाभी, सोची च परिदेवी च, चुतो च सद्धम्मा'।

५. ''इध पनावुसो, भिक्खुनो पविवित्तस्स विहरतो निरायत्तवुत्तिनो इच्छा उप्पज्जति [N.412] लाभाय। सो न उट्ठहति न घटति न वायमति लाभाय। तस्स अनुट्ठहतो अघटतो अवायमतो लाभाय, लाभो उप्पज्जति। सो तेन लाभेन मज्जति पमज्जति पमादमापज्जति। [B.144] अयं वुच्चतावुसो, 'भिक्खु इच्छो विहरति लाभाय, न उट्ठहति न घटति न वायमति लाभाय, लाभी च, मदी च पमादी च, चुतो च सद्धम्मा'।

६. ''इध पनावुसो, भिक्खुनो पविवित्तस्स विहरतो निरायत्तवुत्तिनो इच्छा उप्पज्जति लाभाय। सो उट्ठहति घटति वायमति लाभाय। तस्स उट्ठहतो घटतो वायमतो लाभाय, लाभो [R.327] नुप्पज्जति। सो तेन अलाभेन न सोचति न किलमति न परिदेवति, न उरत्ताळिं कन्दति, न सम्मोहं आपज्जति। अयं वुच्चतावुसो, 'भिक्खु इच्छो विहरति लाभाय, न उट्ठहति न घटति न वायमति लाभाय, न च लाभी, न च सोची न च परिदेवी, अच्चुतो च सद्धम्मा'।

७. ''इध पनावुसो, भिक्खुनो पविवित्तस्स विहरतो निरायत्तवुत्तिनो इच्छा उप्पज्जति लाभाय। सो न उट्ठहति घटति वायमति लाभाय। तस्स उट्ठहतो घटतो वायमतो लाभाय लाभो उप्पज्जति। सो तेन लाभेन न मज्जति न पमज्जति न पमादमापज्जति। अयं वुच्चतावुसो, 'भिक्खु इच्छो विहरति लाभाय, न उट्ठहति न घटति न वायमति लाभाय, लाभी च, न च मदी न च पमादी, अच्चुतो च सद्धम्मा'।

---

२. ''भिक्षुओ! लोक में ये अष्टविध पुद्गल होते हैं। ...पूर्ववत्... ॥''

*(पूर्ववर्णित भूमिचालवर्ग के प्रथम इच्छासूत्र के समान ही इस सूत्र का हिन्दी रूपान्तर कर लें।)*

८. ''इध पनावुसो, भिक्खुनो पविवित्तस्स विहरतो निरायत्तवुत्तिनो इच्छा उप्पज्जति लाभाय। सो न उट्ठहति न घटति न वायमति लाभाय। तस्स अनुट्ठहतो अघटतो अवायमतो लाभाय, लाभो नुप्पज्जति। सो तेन अलाभेन न सोचति न किलमति न परिदेवति, न उरत्ताळिं कन्दति, न सम्मोहं आपज्जति। अयं वुच्चतावुसो, 'भिक्खु इच्छो विहरति लाभाय, न उट्ठहति न घटति न वायमति लाभाय, न च लाभी, न च सोची न च परिदेवी, अच्चुतो च सद्धम्मा'।

९. ''इध पनावुसो, भिक्खुनो पविवित्तस्स विहरतो निरायत्तवुत्तिनो इच्छा उप्पज्जति लाभाय। सो न उट्ठहति न घटति न वायमति लाभाय। तस्स अनुट्ठहतो अघटतो अवायमतो लाभाय, लाभो उप्पज्जति। सो तेन लाभेन न मज्जति न पमज्जति न पमादमापज्जति। अयं वुच्चतावुसो, 'भिक्खु इच्छो विहरति लाभाय, न उट्ठहति न घटति न वायमति [R.328] लाभाय, लाभी च, न च मदी न च पमादी, अच्चुतो च सद्धम्मा'। इमे खो, [N.413] आवुसो, अट्ठ पुग्गला सन्तो संविज्जमाना लोकस्मिं'' ति॥ ●

**८. अलंसुत्तं :** १. तत्र खो आयस्मा सारिपुत्तो भिक्खू आमन्तेसि ...पे०... [B.145] छहावुसो, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं अत्तनो, अलं परेसं। कतमेहि छहि? इधावुसो, भिक्खु खिप्पनिसन्ति च होति कुसलेसु धम्मेसु; सुतानं च धम्मानं धारणजातिको होति; धातानं च धम्मानं अत्थूपपरिक्खिता होति; अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो च होति; कल्याणवाचो च होति कल्याणवाक्करणो, पोरिया वाचाय समन्नागतो विस्सट्ठाय अनेलगळाय अत्थस्स विञ्ञापनिया; सन्दस्सको च होति समादपको समुत्तेजको सम्पहंसको सब्रह्मचारीनं। इमेहि खो, आवुसो, छहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं अत्तनो, अलं परेसं।

२. ''पञ्चहावुसो, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं अत्तनो, अलं परेसं। कतमेहि पञ्चहि? इधावुसो, भिक्खु न हेव खो खिप्पनिसन्ति च होति कुसलेसु धम्मेसु; ...पे०... धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो च होति; कल्याणवाचो च होति ...पे०... सन्दस्सको च होति ...पे०... सब्रह्मचारीनं। इमेहि खो, आवुसो, पञ्चहि धम्मेहि समन्नागतो [R.329] भिक्खु अलं अत्तनो, अलं परेसं।

३. ''चतूहावुसो, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं अत्तनो, नालं परेसं। कतमेहि चतूहि? इधावुसो, भिक्खु खिप्पनिसन्ति च होति कुसलेसु धम्मेसु; सुतानं च धम्मानं

---

**८. अलंसूत्र** : : **स्व-परहितसम्पादन में समर्थ भिक्षु**

१. वहाँ आयुष्मान् सारिपुत्र ने भिक्षुओं को यह उपदेश किया—''छह धर्मों से सम्पन्न भिक्षु अपना तथा दूसरों का हित कर सकता है। किन छह धर्मों से? ...पूर्ववत्... ॥'' ●

*(पूर्ववर्णित भूमिचालवर्ग के द्वितीय **अलंसूत्र** के समान ही यहां भी हिन्दी अनुवाद समझ लें।)*

धारणजातिको होति; धातानं च धम्मानं अत्थूपपरिक्खिता होति; अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो च होति; नो च कल्याणवाचो होति ...पे०... नो च सन्दस्सको होति ...पे०... सब्रह्मचारीनं। इमेहि खो, आवुसो, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं अत्तनो, नालं परेसं।

४. ''चतूहावुसो, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं परेसं, नालं अत्तनो। कतमेहि चतूहि? इधावुसो, भिक्खु खिप्पनिसन्ति च होति कुसलेसु धम्मेसु; सुतानं च धम्मानं धारणजातिको होति; नो च धातानं धम्मानं अत्थूपपरिक्खिता होति; नो च अत्थमञ्ञाय [N.414] धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो होति; कल्याणवाचो च होति ...पे०... [B.146] सन्दस्सको च होति ...पे०... सब्रह्मचारीनं। इमेहि खो, आवुसो, चतूहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं परेसं, नालं अत्तनो।

५. ''तीहावुसो, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं अत्तनो, नालं परेसं। कतमेहि तीहि? इधावुसो, भिक्खु न हेव खो खिप्पनिसन्ति च होति कुसलेसु धम्मेसु; सुतानं च [R.330] धम्मानं धारणजातिको होति; धातानं च धम्मानं अत्थूपपरिक्खिता होति; अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो च होति; नो च कल्याणवाचो होति ...पे०... नो च सन्दस्सको होति ...पे०... सब्रह्मचारीनं। इमेहि खो, आवुसो, तीहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं अत्तनो, नालं परेसं।

६. ''तीहावुसो, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं परेसं, नालं अत्तनो। कतमेहि तीहि? इधावुसो, भिक्खु न हेव खो खिप्पनिसन्ति च होति कुसलेसु धम्मेसु; सुतानं च धम्मानं धारणजातिको होति; नो च धातानं धम्मानं अत्थूपपरिक्खिता होति; नो च अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो होति; कल्याणवाचो च होति ...पे०... अत्थस्स विञ्ञापनिया, सन्दस्सको च होति ...पे०... सब्रह्मचारीनं। इमेहि खो, आवुसो, तीहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं परेसं, नालं अत्तनो।

७. ''द्वीहावुसो, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं अत्तनो, नालं परेसं। कतमेहि द्वीहि? इधावुसो, भिक्खु न हेव खो खिप्पनिसन्ति च होति कुसलेसु धम्मेसु; नो च सुतानं धम्मानं धारणजातिको होति; धातानं च धम्मानं अत्थूपपरिक्खिता होति; अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो च होति; नो च कल्याणवाचो होति ...पे०... नो च सन्दस्सको होति ...पे०... सब्रह्मचारीनं। इमेहि खो, आवुसो, द्वीहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं अत्तनो, नालं परेसं।

[R.331] ८. ''द्वीहावुसो, धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं परेसं, नालं अत्तनो। कतमेहि द्वीहि? इधावुसो, भिक्खु न हेव खो खिप्पनिसन्ति च होति कुसलेसु धम्मेसु; नो च सुतानं धम्मानं धारणजातिको होति; नो च धातानं धम्मानं अत्थूपपरिक्खिता होति; नो च [N.415] अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो होति; कल्याणवाचो च होति

कल्याणवाक्करणो, पोरिया वाचाय समन्नागतो विस्सट्ठाय अनेलगळाय अत्थस्स [B.147] विञ्ञापनिया; सन्दस्सको च होति समादपको समुत्तेजको सम्पहंसको सब्रह्मचारीनं। इमेहि खो, आवुसो, द्वीहि धम्मेहि समन्नागतो भिक्खु अलं परेसं; नालं अत्तनो'' ति॥ ●

९. **परिहानसुत्तं** : १. ''अट्ठिमे, भिक्खवे, धम्मा सेखस्स भिक्खुनो परिहानाय संवत्तन्ति। कतमे अट्ठ? कम्मारामता, भस्सारामता, निद्दारामता, सङ्गणिकारामता, इन्द्रियेसु अगुत्तद्वारता, भोजने अमत्तञ्ञुता, संसग्गारामता, पपञ्चारामता—इमे खो, भिक्खवे, अट्ठ धम्मा सेखस्स भिक्खुनो परिहानाय संवत्तन्ति।

२. ''अट्ठिमे, भिक्खवे, धम्मा सेखस्स भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ति। कतमे अट्ठ? न कम्मारामता, न भस्सारामता, न निद्दारामता, न सङ्गणिकारामता, इन्द्रियेसु गुत्तद्वारता, भोजने मत्तञ्ञुता, असंसग्गारामता, निप्पपञ्चारामता—इमे खो, भिक्खवे, अट्ठ धम्मा सेखस्स भिक्खुनो अपरिहानाय संवत्तन्ती'' ति॥ ●

१०. **कुसीतारम्भवत्थुसुत्तं** : १. ''अट्ठिमानि, भिक्खवे, कुसीतवत्थूनि। [R.332] कतमानि अट्ठ? इध, भिक्खवे, भिक्खुना कम्मं कत्तब्बं होति। तस्स एवं होति—'कम्मं खो मे कत्तब्बं भविस्सति। कम्मं खो पन मे करोन्तस्स कायो किलमिस्सति। हन्दाहं निपज्जामी' ति। सो निपज्जति, न विरियं आरभति अप्पत्तस्स पत्तिया अनधिगतस्स अधिगमाय असच्छिकतस्स सच्छिकिरियाय। इदं, भिक्खवे, पठमं कुसीतवत्थु।

---

**९. परिहाणसूत्र : : आठ परिहाण एवं आठ अपरिहाण धर्म**

१. ''भिक्षुओ! ये आठ धर्म शैक्ष्य भिक्षु के लिये परिहाणिकारक होते हैं। कौन से आठ? (१) कर्मारामता (सांसारिक कार्यों में चित्त की प्रवृत्ति), (२) भाष्यारामता (बात को व्यर्थ चढाकर कहने की प्रवृत्ति), (३) निद्रारामता (निद्राप्रियता), (४) सङ्गणिकारामता (जनसमूह में रहने की प्रवृत्ति), (५) इन्द्रियों में अगुसद्वारता (इन्द्रियों पर संयम न रखने की प्रवृत्ति); (६) भोजन में अमात्राज्ञता (भोजन की मात्रा न जानना), (७) संसर्गारामता (लोक से संसर्ग रखने की प्रवृत्ति) तथा (८) प्रपञ्चारामता (लौकिक प्रपञ्चों में फँसे रहने की प्रवृत्ति)। भिक्षुओ! ये आठ धर्म शैक्ष्य भिक्षु के लिये परिहाणकारक होते हैं।''

२. (परन्तु) ''भिक्षुओ! ये आठ धर्म शैक्ष्य भिक्षु के लिये अपरिहाणकारक होते हैं। कौन से आठ? (१) कर्मारामता का अभाव, (२) भाष्यारामता का अभाव, (३) निद्रारामता का अभाव, (४) सङ्गणिकारामता का अभाव, (५) इन्द्रियों में गुसद्वारता, (६) भोजन में मात्राज्ञता, (७) असंसर्गारामता, (८) निष्प्रपञ्चारामता भिक्षुओ! ये आठ धर्म शैक्ष्य भिक्षु के लिये अपरिहाणकारक होते हैं॥'' ●

**१०. कुसीदारम्भवस्तु सूत्र : : आठ कुसीदवस्तुएँ**

१. भिक्षुओ! ये **आठ कुसीद** (आलस्य) **की उत्पादक वस्तुएँ** होती हैं। कौन सी आठ?

''किसी भिक्षु को कोई कार्य करना होता है। तब वह सोचता है—'यह कार्य मुझ को करना है; परन्तु इसके करने से मेरे शरीर को क्लेश होगा, अतः क्यों न मैं चुपचाप लेटा रहूँ।' और वह लेट

२. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खुना कम्मं कतं होति। तस्स एवं होति—'अहं खो कम्मं अकासिं। कम्मं खो पन मे करोन्तस्स कायो किलन्तो। हन्दाहं निपज्जामी' ति। सो निपज्जति, न विरियं आरभति अप्पत्तस्स पत्तिया अनधिगतस्स अधिगमाय असच्छिकतस्स सच्छिकिरियाय। इदं, भिक्खवे, दुतियं कुसीतवत्थु।

[N.416,B.148] ३. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खुना मग्गो गन्तब्बो होति। तस्स एवं होति—'मग्गो मे गन्तब्बो भविस्सति। मग्गं खो पन मे गच्छन्तस्स कायो किलमिस्सति। हन्दाहं निपज्जामी' ति। सो निपज्जति, न विरियं आरभति अप्पत्तस्स पत्तिया अनधिगतस्स अधिगमाय असच्छिकतस्स सच्छिकिरियाय। इदं, भिक्खवे, ततियं कुसीतवत्थु।

४. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खुना मग्गो गतो होति। तस्स एवं होति—'अहं खो मग्गं अगमासिं। मग्गं खो पन मे गच्छन्तस्स कायो किलन्तो। हन्दाहं निपज्जामी' ति। सो निपज्जति, न विरियं आरभति अप्पत्तस्स पत्तिया अनधिगतस्स अधिगमाय असच्छिकतस्स सच्छिकिरियाय। इदं भिक्खवे, चतुत्थं कुसीतवत्थु।

५. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु गामं वा निगमं वा पिण्डाय चरन्तो न लभति [R.333] लूखस्स वा पणीतस्स वा भोजनस्स यावदत्थं पारिपूरिं। तस्स एवं होति—'अहं खो गामं वा निगमं वा पिण्डाय चरन्तो नालत्थं लूखस्स वा पणीतस्स वा भोजनस्स यावदत्थं

---

जाता है, और अप्राप्त की प्राप्ति, अज्ञात के ज्ञान तथा अदृष्ट को देखने के लिये उस कार्य को आरम्भ नहीं करता। भिक्षुओ! यह हुई **प्रथम आलस्योत्पादक वस्तु**।" (१)

२. "पुनः भिक्षुओ! कोई भिक्षु किसी कार्य को कर चुका होता है। तब वह सोचता है—'यह कार्य मैने कर दिया। परन्तु इस कार्य को करने से मेरा शरीर कष्ट पा रहा है। तो क्यों न मैं चुपचाप लेट जाऊँ।' और वह अप्राप्त की प्राप्ति, अज्ञात के ज्ञान तथा अदृष्ट को देखने के लिये आगे उस कार्य की पूर्ति के लिये श्रम नहीं करता, अपितु चुपचाप लेट जाता है। भिक्षुओ! यह हुई **द्वितीय आलस्योत्पादक वस्तु**। (२)

३. "पुनः, भिक्षुओ! किसी भिक्षु को किसी मार्ग पर चलना होता है, तब उस को यह विचार होता है—'मुझको इतना मार्ग पार करना है, परन्तु इतना मार्ग पार करने से मेरा शरीर थक जायगा, तो क्यों न मैं चुपचाप लेट जाऊँ।' वह चुपचाप लेट जाता है और वह अप्राप्त की प्राप्ति ...पूर्ववत्... श्रम नहीं करता। भिक्षुओ! यह हुई **तृतीय आलस्योत्पादक वस्तु**।" (३)

४. "पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु किसी मार्ग पर कुछ दूर चल लिया होता है, तब उसको यह विचार होता है—'मैने इतना मार्ग पार कर लिया, अब आगे चलने में मेरा शरीर कष्ट मान रहा है, तो क्यों न चुपचाप लेट जाऊँ।' और वह लेट जाता है तथा अप्राप्त की ...पूर्ववत्... श्रम नहीं करता। भिक्षुओ! यह हुई **चतुर्थ आलस्योत्पादक वस्तु**।" (४)

५. "पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु किसी ग्राम या निगम में भिक्षाटन करता हुआ रूखी या प्रणीत कुछ भी भिक्षा नहीं प्राप्त कर पाता। तब उसको यह विचार होता है—'मुझे इस ग्राम या निगम में बहुत प्रयास के बाद भी पूरी भिक्षा नहीं मिली। मैं थक भी गया हूँ। क्यों न आगे कोई प्रयास न

पारिपूरिं। तस्स मे कायो किलन्तो अकम्मञ्ञो। हन्दाहं निपज्जामी' ति। सो निपज्जति, न विरियं आरभति ...पे०... इदं, भिक्खवे, पञ्चमं कुसीतवत्थु।

६. ''पुन च पुरं, भिक्खवे, भिक्खु गामं वा निगमं वा पिण्डाय चरन्तो लभति लूखस्स वा पणीतस्स वा भोजनस्स यावदत्थं पारिपूरिं। तस्स एवं होति—'अहं खो गामं वा निगमं वा पिण्डाय चरन्तो अलत्थं लूखस्स वा पणीतस्स वा भोजनस्स यावदत्थं पारिपूरिं। तस्स मे कायो गरुको अकम्मञ्ञो मासाचितं मञ्ञे। हन्दाहं निपज्जामी' ति। सो निपज्जति, न विरियं आरभति ...पे०... इदं, भिक्खवे, छट्ठं कुसीतवत्थु।

७. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खुनो उप्पन्नो होति अप्पमत्तको आबाधो। तस्स एवं होति—'उप्पन्नो खो मे अयं अप्पमत्तको आबाधो अत्थि कप्पो निपज्जितुं। हन्दाहं निपज्जामी' ति। सो निपज्जति, न विरियं आरभति ...पे०... इदं, भिक्खवे, सत्तमं कुसीतवत्थु।

८. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु गिलाना वुट्ठितो होति अचिरवुट्ठितो गेलञ्ञा। तस्स एवं होति—'अहं खो गिलाना वुट्ठितो अचिरवुट्ठितो गेलञ्ञा। तस्स मे कायो दुब्बलो अकम्मञ्ञो। हन्दाहं निपज्जामी' ति। सो निपज्जति, न विरियं आरभति [N.417,B.149] अप्पत्तस्स पत्तिया अनधिगतस्स अधिगमाय असच्छिकतस्स सच्छिकिरियाय। इदं, भिक्खवे, अट्ठमं कुसीतवत्थु। इमानि खो, भिक्खवे, अट्ठ कुसीतवत्थूनि। (क)

९. ''अट्ठिमानि, भिक्खवे, आरम्भवत्थूनि। कतमानि अट्ठ? इध, भिक्खवे, [R.334] भिक्खुना कम्मं कत्तब्बं होति। तस्स एवं होति—'कम्मं खो मे कत्तब्बं भविस्सति। कम्मं

---

कर चुपचाप लेट जाऊँ।' वह लेट जाता है और कोई प्रयास नहीं करता...। यह **पञ्चम आलस्योत्पादक वस्तु** है।'' (५)

६. ''या पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु ...पूर्ववत्... पूर्ण भिक्षा प्राप्त कर लेता है। तब वह सोचता है '...पूर्ण भिक्षा प्राप्त कर ली है, परन्तु मेरा शरीर थक गया है, भारी हो गया है, क्यों न मैं लेट जाऊँ।' और वह लेट जाता है तथा...। यह **षष्ठ आलस्योत्पादक वस्तु** है।'' (६)

७. ''या पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु किसी साधारण रोग से ग्रस्त हो जाता है। वह सोचता है—'मैं कुछ अस्वस्थ हो गया हूँ अतः मेरे लिये कुछ समय लेटना उचित रहेगा, क्यों न मैं लेट जाऊँ।' और वह लेट जाता है तथा...। यह **सप्तम आलस्योत्पादक वस्तु** है।'' (७)

८. ''या पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु किसी रोग से तत्काल ही मुक्त हुआ हो, अतः वह दुर्बल हो। तब वह सोचता है—'मैं रोग के कारण दुर्बलता अनुभव कर रहा हूँ। इस कारण मेरा शरीर थक गया है, क्यों न मैं कुछ समय लेट लूँ।' वह लेट जाता है, तथा... यह **अष्टम आलस्योत्पादक वस्तु** है।'' (८)

''इस प्रकार, भिक्षुओ! ये आठ आलस्योत्पादक वस्तुएँ कहलाती हैं॥'' (क)

९. ''भिक्षुओ! ये आठ **आरम्भ** (कार्य में प्रवृत्ति) **वस्तु** होती हैं। कौन सी आठ?''

''यहाँ, भिक्षुओ! किसी भिक्षु को कोई कार्य करना होता है। तब वह विचार करता है—'मुझे

खो मया करोन्तेन न सुकरं बुद्धानं सासनं मनसि कातुं। हन्दाहं पटिकच्चेव विरियं आरभामि अप्पत्तस्स पत्तिया अनधिगतस्स अधिगमाय असच्छिकतस्स सच्छिकिरियाया' ति। सो विरियं आरभति अप्पत्तस्स पत्तिया अनधिगतस्स अधिगमाय असच्छिकतस्स सच्छि-किरियाय। इदं, भिक्खवे, पठमं आरम्भवत्थु।

१०. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खुना कम्मं कतं होति। तस्स एवं होति—'अहं खो कम्मं अकासिं। कम्मं खो पनाहं करोन्तो नासक्खिं बुद्धानं सासनं मनसि कातुं। हन्दाहं विरियं आरभामि अप्पत्तस्स पत्तिया अनधिगतस्स अधिगमाय असच्छिकतस्स सच्छिकिरियाया' ति। सो विरियं आरभति। इदं, भिक्खवे, दुतियं आरम्भवत्थु।

११. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खुना मग्गो गन्तब्बो होति। तस्स एवं होति—मग्गो खो मे गन्तब्बो भविस्सति। मग्गं खो पन मे गच्छन्तेन न सुकरं बुद्धानं सासनं मनसि कातुं। हन्दाहं विरियं ...पे०... इदं, भिक्खवे, ततियं आरम्भवत्थु।

१२. "पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खुना मग्गो गतो होति। तस्स एवं होति—अहं खो मग्गं अगमासिं। मग्गं खो पनाहं गच्छन्तो नासक्खिं बुद्धानं सासनं मनसि कातुं। हन्दाहं विरियं आरभामि ...पे०... इदं, भिक्खवे, चतुत्थं आरम्भवत्थु।

---

यह कार्य करना है। परन्तु यह कार्य करता हुआ मैं बुद्धशासन (धर्मसाधना) में मन कैसे लगा सकूँगा, अतः क्यों न मैं पहले ही इस कार्य को पूर्ण कर दूँ, जिससे मुझको अप्राप्त की प्राप्ति, अज्ञात का ज्ञान तथा अदृष्ट का दर्शन भी हो जाय।' यह सोच कर वह उस कार्य को पूर्ण करने के लिये इस प्रकार उद्योग (आरम्भ) करता है कि उसको अप्राप्त की प्राप्ति, अज्ञात का ज्ञान एवं अदृष्ट का दर्शन भी हो जाता है। इस प्रकार, भिक्षुओ! यह **प्रथम आरम्भवस्तु** है।" (१)

१०. "पुनः, भिक्षुओ! उस भिक्षु द्वारा कोई कार्य पूर्ण कर लिया होता है। तब वह सोचता है—'मैने यह कार्य पूर्ण किया, इस कार्य को पूर्ण करते समय मैं बुद्धशासन के पालन में मन नहीं लगा सका; अतः मैं ऐसा उद्योग करूँ कि मुझको अप्राप्त की... दर्शन हो जाय।' अतः वह बुद्ध अनुशासन के पालन का आरम्भ करता है। भिक्षुओ! यह **द्वितीय आरम्भवस्तु** है।" (२)

११. "पुनः, भिक्षुओ! किसी भिक्षु को किसी कार्य की पूर्ति हेतु अन्यत्र जाने के लिये मार्ग चलना पड़ता है। तब उसको यह विचार होता है—'मुझे मार्ग में चलना है। मार्ग चलते समय धर्मसाधना भली भाँति नहीं की जा सकती अतः मैं ऐसा कुछ करूँ कि मैं शीघ्र ही मार्ग चलकर कार्य पूर्ण कर धर्मसाधना में मन लगाऊँ, जिससे अप्राप्त की... दर्शन हो जाय।' अतः वह मार्ग को शीघ्र चलकर पूर्ण करने से मन लगाता है...। भिक्षुओ! यह **तृतीय आरम्भवस्तु** है।" (३)

१२. "पुनः, भिक्षुओ! किसी भिक्षु द्वारा किसी कार्य की पूर्ति के लिये मार्ग चलकर पूर्ण किया होता है। तब वह सोचता है—'मैने इतना समय मार्ग चलने में बिताया, इस अन्तराल में बुद्धानुशासन के पालन में बाधा पड़ी। अतः मैं इस बाधा की पूर्ति हेतु बुद्धानुशासन के पालन में उद्योग करूँ, जिससे अप्राप्त की प्राप्ति... दर्शन हो जाय'। तब वह ...पूर्ववत्...। यह **चतुर्थ आरम्भवस्तु** है।" (४)

१३. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु गामं वा निगमं वा पिण्डाय चरन्तो न [R.335] लभति लूखस्स वा पणीतस्स वा भोजनस्स यावदत्थं पारिपूरिं। तस्स एवं होति—अहं खो गामं वा निगमं वा पिण्डाय चरन्तो नालत्थं लूखस्स वा पणीतस्स वा भोजनस्स यावदत्थं पारिपूरिं। तस्स मे कायो लहुको कम्मञ्ञो। हन्दाहं विरियं आरभामि ...पे०... इदं, [N.418] भिक्खवे, पञ्चमं आरम्भवत्थु।

१४. '' पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु गामं वा निगमं वा पिण्डाय चरन्तो [B.150] लभति लूखस्स वा पणीतस्स वा भोजनस्स यावदत्थं पारिपूरिं। तस्स एवं होति—अहं खो गामं वा निगमं वा पिण्डाय चरन्तो अलत्थं लूखस्स वा पणीतस्स वा भोजनस्स यावदत्थं पारिपूरिं। तस्स मे कायो बलवा कम्मञ्ञो। हन्दाहं विरियं आरभामि ...पे०... इदं, भिक्खवे, छट्ठं आरम्भवत्थु।

१५. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खुनो उप्पन्नो होति अप्पमत्तको आबाधो। तस्स एवं होति—उप्पन्नो खो मे अयं अप्पमत्तको आबाधो। ठानं खो पनेतं विज्जति यं मे आबाधो पवड्ढेय्य। हन्दाहं पटिकच्चेव विरियं आरभामि ...पे०... इदं, भिक्खवे, सत्तमं आरम्भवत्थु।

१६. ''पुन च परं, भिक्खवे, भिक्खु गिलाना वुट्ठितो होति अचिरवुट्ठितो गेलञ्ञा। तस्स एवं होति—'अहं खो गिलाना वुट्ठितो अचिरवुट्ठितो गेलञ्ञा। ठानं खो पनेतं विज्जति यं मे आबाधो पच्चुदावत्तेय्य। हन्दाहं पटिकच्चेव विरियं आरभामि अप्पत्तस्स पत्तिया अनधिगतस्स अधिगमाय असच्छिकतस्स सच्छिकिरियाया' ति। सो विरियं आरभति अप्पत्तस्स पत्तिया अनधिगतस्स अधिगमाय असच्छिकतस्स सच्छिकिरियाय। इदं, भिक्खवे, अट्ठमं आरम्भवत्थु। इमानि खो, भिक्खवे, अट्ठ आरम्भवत्थूनी'' ति॥ (ख) ●

**यमकवग्गो अट्ठमो॥**

---

१३. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु ग्राम या निगम में भिक्षा करने निकलता है। वहाँ उसको रूखी या अच्छी किसी भी प्रकार की भिक्षा पूरी नहीं मिलती। तब उसको वह विचार होता है—'मुझको... भिक्षा भी पूरी नहीं मिली, बुद्धानुशासन में भी ध्यान नहीं लगा सका। तो अब मैं बुद्धानुशासन में ध्यान लगाऊँ, जिससे... दर्शन हो जाय।'... भिक्षुओ! यह **पञ्चम आरम्भवस्तु** है।'' (५)

१४. ''पुन: भिक्षुओ! कोई भिक्षु ग्राम या ...पूर्ववत्... पूर्ण भिक्षा पा जाता है। तब उसको यह विचार होता है—'...भिक्षा तो पूर्ण मिल गयी, परन्तु ...पूर्ववत्... भिक्षुओ! यह **षष्ठ आरम्भवस्तु** है।''' (६)

१५. ''पुनः, भिक्षुओ! किसी भिक्षु को कोई साधारण रोग हो जाता है। उसकी चिकित्सा में उसका समय व्यर्थ नष्ट हो जाता है। तब वह सोचता है—...पूर्ववत्... दर्शन हो जाय। भिक्षुओ! यह **सप्तम आरम्भवस्तु** है।'' (७)

१६. ''पुनः, भिक्षुओ! कोई भिक्षु किसी रोग से मुक्त होकर वह तथ्य ढूँढने के प्रयास में लगता है। तब उसको यह विचार होता है—'मैं रोग से अभी मुक्त हुआ हूँ। अच्छा हो कि मैं शीघ्र

**तस्सुद्दानं**

[R.336] द्वे सद्धा द्वे मरणस्सती, द्वे सम्पदा अथापरं।
इच्छा अलं परिहानं, कुसीतारम्भवत्थूनी ति॥ ●

## ९. सतिवग्गो

**१. सतिसम्पजञ्ञसुत्तं :** १. ''सतिसम्पजञ्ञे, भिक्खवे, असति सतिसम्पजञ्ञविपन्नस्स हतूपनिसं होति हिरोत्तप्पं। हिरोत्तप्पे असति हिरोत्तप्पविपन्नस्स हतूपनिसो होति [N.419] इन्द्रियसंवरो। इन्द्रियसंवरे असति इन्द्रियसंवरविपन्नस्स हतूपनिसं होति सीलं। [B.151] सीले असति सीलविपन्नस्स हतूपनिसो होति सम्मासमाधि। सम्मासमाधिम्हि असति सम्मासमाधिविपन्नस्स हतूपनिसं होति यथाभूतञाणदस्सनं। यथाभूतञाणदस्सने असति यथाभूतञाणदस्सनविपन्नस्स हतूपनिसो होति निब्बिदाविरागो। निब्बिदाविरागे असति निब्बिदाविरागविपन्नस्स हतूपनिसं होति विमुत्तिञाणदस्सनं। सेय्यथापि, भिक्खवे,

---

ही स्वस्थ हो जाऊँ, जिससे मैं बुद्धानुशासन के पालन में अधिक से अधिक समय लगा सकूँ; जिससे अप्राप्त की ...पूर्ववत्... दर्शन हो जाय। तब वह ऐसा उद्योग आरम्भ करता है। भिक्षुओ! यह **अष्टम आरम्भवस्तु** है॥'' (८)

''भिक्षुओ! ये आठ आरम्भवस्तु होती हैं॥'' (ख) ●

**यमकवर्ग अष्टम सम्पन्न॥**

**इस वर्ग ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची**

१. प्रथम श्रद्धासूत्र, २. द्वितीय श्रद्धासूत्र, ३. प्रथम मरणस्मृतिसूत्र, ४. द्वितीय मरणस्मृतिसूत्र, ५. प्रथम सम्पदासूत्र, ६. द्वितीय सम्पदासूत्र, ७. इच्छासूत्र, ८. अलंसूत्र, ९. परिहाणसूत्र, १०. कुसीदारम्भवस्तुसूत्र॥

## ९. स्मृतिवर्ग

**१. स्मृतिसम्प्रजन्यसूत्र : : आठ अन्योन्याश्रित धर्म**

१. ''भिक्षुओ! स्मृति एवं सम्प्रजन्य के न होने पर, स्मृतिसम्प्रजन्यविहीन भिक्षु को ह्री (लज्जा) एवं अवत्राप्य (पापभीरुता) भी नहीं रह जाते; ह्री एवं अवत्राप्य के न रहने पर उसका इन्द्रियसंयम भी नष्ट हो जाता है; इन्द्रियसंयम के न रहने पर उसके शील का रहना भी असम्भव है। शीलरहित भिक्षु का सम्यक्समाधि में ध्यान लगना भी असम्भव मानना चाहिये। सम्यक्समाधि के विना उसको यथाभूत ज्ञान का साक्षात्कार कैसे हो पायगा! यथाभूत ज्ञानदर्शन के विना उसके चित्त में उत्पन्न संसार के प्रति निर्विदा (ग्लानि) एवं वैराग्य स्वतः नष्ट हो जायँगे। निर्विदा एवं वैराग्य के

रुक्खो साखापलासविपन्नो। तस्स पपटिका पि न पारिपूरिं गच्छति, तचो पि... फेग्गु पि .. सारो पि न पारिपूरिं गच्छति। एवमेव खो, भिक्खवे, सतिसम्पजञ्ञे असति सति-सम्पजञ्ञविपन्नस्स हतूपनिसं होति हिरोत्तप्पं; हिरोत्तप्पे असति हिरोत्तप्पविपन्नस्स हतूपनिसो होति ...पे०... विमुत्तिञाणदस्सनं।

२. "सतिसम्पजञ्ञे, भिक्खवे, सति सतिसम्पजञ्ञसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति हिरोत्तप्पं। हिरोत्तप्पे सति हिरोत्तप्पसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति इन्द्रियसंवरो। इन्द्रियसंवरे सति इन्द्रियसंवरसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति सीलं। सीले सति सीलसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति सम्मासमाधि। सम्मासमाधिम्हि सति सम्मासमाधिसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति यथाभूतञाणदस्सनं। यथाभूतञाणदस्सने सति यताभूतञाणदस्सन-सम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति निब्बिदाविरागो। निब्बिदाविरागे सति निब्बिदा- [R.337] विरागसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति विमुत्तिञाणदस्सनं। सेय्यथापि, भिक्खवे, रुक्खो साखापलाससम्पन्नो। तस्स पपटिका पि पारिपूरिं गच्छति, तचो पि... फेग्गु पि... सारो पि पारिपूरिं गच्छति। एवमेव खो, भिक्खवे, सतिसम्पजञ्ञे सति सतिसम्पजञ्ञसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नं होति हिरोत्तप्पं; हिरोत्तप्पे सति हिरोत्तप्पसम्पन्नस्स उपनिससम्पन्नो होति ...पे०... विमुत्तिञाणदस्सनं" ति॥ ●

२. **पुण्णियसुत्तं** : १. अथ खो आयस्मा पुण्णियो येन भगवा तेनुपसङ्कमि; उपसङ्कमित्वा भगवन्तं अभिवादेत्वा एकमन्तं निसीदि। एकमन्तं निसिन्नो खो आयस्मा पुण्णियो भगवन्तं एतदवोच—"को नु खो, भन्ते, हेतु को पच्चयो येन अप्पेकदा [N.420] तथागतं धम्मदेसना पटिभाति, अप्पेकदा न पटिभाती" ति?

---

नष्ट होने पर उसका विमुक्तिज्ञानदर्शन भी नष्ट हुआ समझो। जैसे, भिक्षुओ! कोई शाखा एवं पत्र रहित वृक्ष हो ...पूर्ववत्... विमुक्तिज्ञानदर्शन।" (क)

२. "भिक्षुओ! स्मृतिसम्प्रजन्य से सम्पन्न भिक्षु को उस (स्मृतिसम्प्रजन्य) के साथ लगे हुए ह्री एवं अवत्राप्य भी होते हैं। ह्री एवं अवत्राप्य से सम्पन्न भिक्षु को इन्द्रियसंयम होना अनिवार्य है। इन्द्रियसंयम से सम्पन्न भिक्षु के इन्द्रियसंयम के साथ शील का लगे रहना सम्भव ही है। शीलसम्पन्न भिक्षु के शील के साथ सम्यक्समाधि रहेगी ही। सम्यक्समाधिसम्पन्न भिक्षु को समाधि के साथ यथाभूत ज्ञान का साक्षात्कार भी रहता ही है। यथाभूतज्ञानदर्शनसम्पन्न भिक्षु के ज्ञानदर्शन के साथ निर्विदा एवं विराग भी रहेंगे ही। तथा निर्विदाविरागसम्पन्न भिक्षु के निर्विदा एवं विराग के साथ विमुक्तिज्ञानदर्शन भी रहेगा। जैसे, भिक्षुओ! कोई शाखापलाशयुक्त वृक्ष हो ...पूर्ववत्... विमुक्तिज्ञानदर्शन भी रहेगा ही॥" (ख) ●

**२. पुण्णियसूत्र : : तथागत द्वारा धर्मदेशना के आठ अनुकूल अवसर**

१. तब आयुष्मान् पुण्णिय भगवान् के पास आये... पूर्ववत्... उन ने यह जिज्ञासा की—"भन्ते! क्या कारण है कि आप तथागत को कभी किसी के प्रति धर्मदेशना करना उचित लगता है? और कभी नहीं?"

''सद्धो च, पुण्णिय, भिक्खु होति, नो चुपसङ्कमिता; नेव तथागतं धम्मदेसना [B.152] पटिभाति। यतो च खो, पुण्णिय, भिक्खु सद्धो च होति, उपसङ्कमिता च; एवं तथागतं धम्मदेसना पटिभाति। सद्धो च, पुण्णिय, भिक्खु होति, उपसङ्कमिता च, नो च पयिरुपासिता ...पे०... पयिरुपासिता च, नो च परिपुच्छिता... परिपुच्छिता च, नो च ओहितसोतो धम्मं सुणाति... ओहितसोतो च धम्मं सुणाति, नो च सुत्वा धम्मं धारेति... सुत्वा च धम्मं धारेति, नो च धातानं धम्मानं अत्थं उपपरिक्खति... धातानं च धम्मानं अत्थं उपपरिक्खति, नो च अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो होति; नेव ताव तथागतं धम्मदेसना पटिभाति।

[R.338] २. ''यतो च खो, पुण्णिय, भिक्खु सद्धो च होति, उपसङ्कमिता च, पयिरुपासिता च, परिपुच्छिता च, ओहितसोतो च धम्मं सुणाति, सुत्वा च धम्मं धारेति, धातानं च धम्मानं अत्थं उपपरिक्खति, अत्थमञ्ञाय धम्ममञ्ञाय धम्मानुधम्मप्पटिपन्नो च होति; एवं तथागतं धम्मदेसना पटिभाति। इमेहि खो, पुण्णिय, अट्ठहि धम्मेहि समन्नागता एकन्तपटिभाना तथागतं धम्मदेसना होती'' ति॥

**३. मूलकसुत्तं :** १. ''सचे, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एवं पुच्छेय्युं— 'किंमूलका, आवुसो, सब्बे धम्मा, किंसम्भवा सब्बे धम्मा, किंसमुदया सब्बे धम्मा, किंसमोसरणा सब्बे धम्मा, किंपमुखा सब्बे धम्मा, किंअधिपतेय्या सब्बे धम्मा, किंउत्तरा सब्बे धम्मा, किंसारा सब्बे धम्मा' ति, एवं पुट्ठा तुम्हे, भिक्खवे, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं किन्ति ब्याकरेय्याथा'' ति?

---

''पुण्णिय! मेरे पास आने वाला भिक्षु केवल पास आने वाला ही न हो, वह श्रद्धालु भी होना चाहिये; पुण्णिय जब मेरे पास आने वाला भिक्षु श्रद्धालु होता है तभी मैं उसको धर्मोपदेश करता हूँ। परन्तु, पुण्णिय! जो आनेवाला भिक्षु श्रद्धालु हो, परन्तु पर्युपासना (सेवा) करने वाला न हो ...पूर्ववत्... पर्युपासना करनेवाला तो हो, परन्तु धर्म के विषय में कोई प्रश्न न करता हो ...पूर्ववत्... धर्म के विषय में प्रश्न भी करता हो, परन्तु उसका उत्तर मन लगाकर न सुनता हो ...पूर्ववत्... सुन भी लेता है तो उस धर्म को धारण नहीं करता ...पूर्ववत्... धर्म को धारण कर लेता है तो उसका अर्थपरीक्षण नहीं करता... अर्थपरीक्षण भी कर लेता है तो उसके अनुसार आचरण नहीं करता। पुण्णिय! ऐसे श्रोता को उपदेश करने का मेरा मन नहीं करता। (क)

२. (परन्तु) ''पुण्णिय! जो पास आने वाला श्रद्धालु होता है, सेवा करता है, धर्मविषयक प्रश्न करता है, मन लगाकर धर्मोपदेश सुनता है, उसको धारण करता है, धर्म का अर्थपरीक्षण करता है, अर्थपरीक्षण कर उसके अनुसार आचरण करता है। पुण्णिय! इन आठ धर्मों से युक्त सर्वज्ञानसम्पन्न तथागत की धर्मदेशना होती है॥'' (ख)

**३. मूलकसूत्र : : धर्म के आठ स्थल**

''भिक्षुओ! यदि दूसरे धर्म के अनुयायी तुमसे यह पूछें—'आयुष्मानो! आपके सभी धर्मों का क्या मूल है? इनके उत्पादक कौन हैं? इनका समुदय (उत्पत्ति) कैसे होता है? ये कैसे एकत्र

"भगवम्मूलका नो, भन्ते, धम्मा, भगवन्नेत्तिका भगवम्पटिसरणा। साधु, भन्ते, भगवन्तंयेव पटिभातु एतस्स भासितस्स अत्थो। भगवतो सुत्वा भिक्खू [N.421] धारेस्सन्ती" ति।

"तेन हि, भिक्खवे, देसेस्सामि। तं सुणाथ, साधुकं मनसि करोथ; भासिस्सामी" ति।

"एवं, भन्ते" ति खो ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं। भगवा एतदवोच—"सचे, भिक्खवे, अञ्ञतित्थिया परिब्बाजका एवं पुच्छेय्युं—'किंमूलका, आवुसो, सब्बे धम्मा, किंसम्भवा सब्बे धम्मा, किंसमुदया सब्बे धम्मा, किंसमोसरणा सब्बे धम्मा, किंपमुखा सब्बे धम्मा, किंअधिपतेय्या सब्बे धम्मा, किंउत्तरा सब्बे धम्मा, किंसारा सब्बे [B.153. R.339] धम्मा' ति? एवं पुट्ठा तुम्हे, भिक्खवे, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं एवं ब्याकरेय्याथ—'छन्दमूलका, आवुसो, सब्बे धम्मा, मनसिकारसम्भवा सब्बे धम्मा, फस्ससमुदया सब्बे धम्मा, वेदनासमोसरणा सब्बे धम्मा, समाधिप्पमुखा सब्बे धम्मा, सताधिपतेय्या सब्बे धम्मा, पञ्ञुत्तरा सब्बे धम्मा, विमुत्तिसारा सब्बे धम्मा' ति, एवं पुट्ठा तुम्हे, भिक्खवे, तेसं अञ्ञतित्थियानं परिब्बाजकानं एवं ब्याकरेय्याथा" ति॥ ●

४. **चोरसुत्तं** : १. अट्ठहि, भिक्खवे, अङ्गेहि समन्नागतो महाचोरो खिप्पं परियापज्जति, न चिरट्ठितिको होति। कतमेहि अट्ठहि? अप्पहरन्तस्स पहरति, अनवसेसं

---

होते हैं? इन धर्मों का प्रमुख (ज्येष्ठ) कौन है? इन धर्मों का आधिपत्य (ऐश्वर्य) क्या है? इनसे आगे या इनका अग्रज कौन है? इनका सार (बल) क्या है?' ऐसा पूछे जाने पर, भिक्षुओ! तुम उन अन्य धर्मावलम्बियों को क्या उत्तर दोगे?"

"भन्ते! हमारे धर्मज्ञान के विषय में आप ही मूल हैं, आप ही मार्गदर्शक हैं, इसके लिये हम आपकी ही शरण में आते हैं; अत: अच्छा हो, भन्ते! आपही इसका उत्तर (अर्थ) हमें बता दें। आपसे सुनकर हम भिक्षु लोग उसको धारण कर लेंगे।

"तो, भिक्षुओ! मैं ही बताता हूँ। तुम उसे सुन लो। और ठीक से मन में बैठा लो। बताता हूँ॥

"अच्छा भन्ते!" कहकर भिक्षुओं ने भगवान् की आज्ञा शिरोधार्य की। भगवान् यह बोले—

"यदि, भिक्षुओ! तुमको कोई अन्य धर्मावलम्बी यह पूछें—'तुम्हारे धर्मों का क्या मूल है? ...पूर्ववत्... इनका सार क्या है?' ऐसा पूछे जाने पर तुम उन अन्य धर्मावलम्बियों को यह उत्तर देना—'छन्द (इच्छा) ही सब धर्मों का मूल है, मन में बैठाना ही उनकी उत्पत्ति है... स्पर्श उनका उत्पत्ति कारण है, वेदना के कारण ही सब धर्म एकत्र होते हैं, समाधि ही इन धर्मों की प्रमुख है, स्मृति का ही इन पर ऐश्वर्य है, प्रज्ञा ही इनका अग्र है तथा इन सब धर्मों का विमुक्ति ही सार है।' भिक्षुओ! अन्य धर्मावलम्बियों (परिव्राजकों) द्वारा वैसा पूछे जाने पर तुम इसका यह उत्तर देना॥"

**४. चौरसूत्र** : : **चौर के आठ कर्म (अङ्ग)**

१. "भिक्षुओ! इन आठ अङ्गों से युक्त कोई बड़ा चौर कार्य तो तत्काल कर लेता है, परन्तु

आदियति, इत्थिं हनति, कुमारिं दूसेति, पब्बजितं विलुम्पति, राजकोसं विलुम्पति, अच्चासन्ने कम्मं करोति, न च निधानकुसलो होति। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहङ्गेहि समन्नागतो महाचोरो खिप्पं परियापज्जति, न चिरट्ठितिको होति।

२. ''अट्ठहि, भिक्खवे, अङ्गेहि समन्नागतो महाचोरो न खिप्पं परियापज्जति, चिरट्ठितिको होति। कतमेहि अट्ठहि? न अप्पहरन्तस्स पहरति, न अनवसेसं आदियति, न इत्थिं हनति, न कुमारिं दूसेति, न पब्बजितं विलुम्पति, न राजकोसं विलुम्पति, न अच्चासन्ने कम्मं करोति, निधानकुसलो च होति। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहङ्गेहि समन्नागतो महाचोरो न खिप्पं परियापज्जति, चिरट्ठितिको होति'' ति॥

[N.422, R.340] **५. समणसुत्तं** : १. '''समणो' ति, भिक्खवे, तथागतस्सेतं अधिवचनं अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स। 'ब्राह्मणो' ति, भिक्खवे, तथागतस्सेतं अधिवचनं अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स। 'वेदगू' ति, भिक्खवे, तथागतस्सेतं अधिवचनं अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स। 'भिसक्को' ति, भिक्खवे, तथागतस्सेतं अधिवचनं अरहतो सम्मा-सम्बुद्धस्स। 'निम्मलो' ति, भिक्खवे, तथागतस्सेतं अधिवचनं अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स। 'विमलो' ति, भिक्खवे, तथागतस्सेतं अधिवचनं अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स। 'ञाणी' ति, भिक्खवे, तथागतस्सेतं [B.154] अधिवचनं अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स। 'विमुत्तो' ति, भिक्खवे, तथागतस्सेतं अधिवचनं अरहतो सम्मासम्बुद्धस्सा ति।

---

वह अधिक काल तक नहीं ठहरता। किन आठ अङ्गों से? प्रहार न करनेवाले पर भी प्रहार करता है, सब कुछ छीन लेता है, स्त्री को भी मार देता है, कुमारी कन्या का चरित्र दूषित कर देता है, संन्यासियों को भी लूट लेता है, राजा के खजाने को भी चुरा लेता है, बहुत समीप रहकर भी चौर्य कर्म करता है, परन्तु प्राप्त धन की रक्षा करने में चतुर नहीं होता। भिक्षुओ! इन आठ अङ्गों से युक्त महाचौर कार्य तो तत्काल पूर्ण कर लेता है, परन्तु वह अधिक काल तक नहीं ठहरता। (क)

२. भिक्षुओ! इन आठ अङ्गों से युक्त महाचौर अपने कार्य में सफल तो देर से होता है किन्तु उसका कार्य चिरस्थायी होता है। किन आठ अङ्गों से? प्रहार न करने वाले पर प्रहार नहीं करता, किसी का सब कुछ नहीं चुरा लेता कि उसको भोजन भी दुर्लभ हो जाय, स्त्री को नहीं मारता, कुमारी को चरित्रभ्रष्ट नहीं करता, संन्यासी को नहीं लूटता, राजकोष में चौरी नहीं करता, अपने वास के समीप चौरी नहीं करता, परन्तु अपने प्राप्त धन को छिपाने में चतुर होता है। भिक्षुओ! इन आठ अङ्गों से युक्त कोई बड़ा चौर अपना कार्य शीघ्र तो पूर्ण नहीं कर पाता, परन्तु उसका कार्य चिरस्थायी होता है॥'' (ख)

**५. श्रमणसूत्र : : तथागत के आठ नाम (पर्याय)**

''भिक्षुओ! 'श्रमण' यह तथागत अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध की ही संज्ञा है। 'ब्राह्मण', 'वेदज्ञ', 'भिषक्' (वैद्य), 'निर्मल', 'विमल', 'ज्ञानी', एवं 'विमुक्त'—ये सब तथागत अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध के ही नाम (पर्याय) हैं।

"यं समणेन पत्तब्बं, ब्राह्मणेन वुसीमता।
यं वेदगुना पत्तब्बं, भिसक्केन अनुत्तरं॥
"यं निम्मलेन पत्तब्बं, विमलेन सुचीमता।
यं ञाणिना च पत्तब्बं, विमुत्तेन अनुत्तरं॥
"सोहं विजितसङ्गामो, मुत्तो मोचेमि बन्धना।
नागोम्हि परमदन्तो, असेखो परिनिब्बुतो" ति॥

**६. यससुत्तं** : १. एकं समयं भगवा कोसलेसु चारिकं चरमानो महता भिक्खुसङ्घेन सद्धिं येन इच्छानङ्गलं नाम कोसलानं ब्राह्मणगामो तदवसरि। तत्र सुदं भगवा इच्छानङ्गले विहरति इच्छानङ्गलवनसण्डे। अस्सोसुं खो इच्छानङ्गलका ब्राह्मणगहपतिका—"समणो खलु भो गोतमो सक्यपुत्तो सक्यकुला पब्बजितो इच्छानङ्गलं अनुप्पत्तो इच्छानङ्गले विहरति इच्छानङ्गलवनसण्डे। तं खो पन भवन्तं गोतमं एवं कल्याणो कित्तिसद्दो [R.341] अब्भुग्गतो—'इति पि सो भगवा अरहं सम्मासम्बुद्धो ...पे०... साधु खो पन तथारूपानं अरहतं दस्सनं होति'" ति।

२. अथ खो इच्छानङ्गलका ब्राह्मणगहपतिका तस्सा रत्तिया अच्चयेन पहुतं खादनीयं भोजनीयं आदाय येन इच्छानङ्गलवनसण्डो तेनुपसङ्कमिंसु; उपसङ्कमित्वा बहिद्वारकोट्ठके अट्ठंसु उच्चासद्दा महासद्दा। तेन खो पन समयेन आयस्मा नागितो भगवतो उपट्ठाको [N.423] होति। अथ खो भगवा आयस्मन्तं नागितं आमन्तेसि—"के पन ते, नागित, उच्चासद्दा महासद्दा केवट्टा मञ्ञे मच्छविलोपे" ति?

---

"जो श्रमण, धर्मसाधना पूर्ण कर चुके ऐसे ब्राह्मण, वेदज्ञ, भिषक्, निर्मल, शुद्धिसम्पन्न, विमल, ज्ञानी एवं विमुक्त द्वारा जो कुछ भी प्राप्तव्य है, वह मैंने प्राप्त कर लिया है।

क्योंकि मैं (मार से) संग्राम जीत चुका हूँ। मैं मुक्त हूँ और दूसरों को भी सांसारिक बन्धनों से मुक्त कराता हूँ। मैं अतिशय शिक्षित नाग (निष्पाप) हूँ। मैं अशैक्ष्य एवं परिनिर्वृत हो चुका हूँ॥"

**6. यशःसूत्र** :: **आठ साधनास्थल**

१. एक समय भगवान् (बुद्ध) कौसल देश में विशाल भिक्षुसङ्घ के साथ चारिका करते हुए कौसल देश के इच्छानङ्गल ग्राम में पहुँचे। वहाँ इच्छानङ्गल के वनषण्ड में साधनाहेतु विराजे। तब इच्छानङ्गल के ब्राह्मणगृहपतियों ने सुना—"शाक्यकुल से प्रव्रजित शाक्यपुत्र श्रमण गौतम इस समय इच्छानङ्गल के वनषण्ड में साधनाहेतु विराजमान हैं। उन भगवान् गौतम का यह यशःशब्द लोक में फैला हुआ है—'वे भगवान् अर्हत् सम्यक्सम्बुद्ध ...पूर्ववत्... बुद्ध भगवान् हैं। ऐसे अर्हतों के दर्शन मङ्गलमय होते हैं।' "

२. तब वे इच्छानङ्गलवासी ब्राह्मणगृहपति, उस रात्रि के बीतने पर, (प्रातः) बहुत से खाद्य, भोज्य पदार्थ तैयार कर इच्छानङ्गल वनप्रदेश में पहुँचे। पहुँचकर बाह्य द्वार पर खड़े होकर तीव्र कोलाहल करने लगे। उस समय आयुष्मान् नागित भगवान् के उपस्थायक (वैयक्तिक सहायक)

"एते, भन्ते, इच्छानङ्गलका ब्राह्मणगहपतिका पहुतं खादनीयं भोजनीयं आदाय बहिद्वारकोट्ठके ठिता भगवन्तंयेव उद्दिस्स भिक्खुसङ्घं चा" ति।

"माहं नागित, यसेन समागमं, मा च मया यसो। यो खो, नागित, नयिमस्स नेक्खम्मसुखस्स पविवेकसुखस्स उपसमसुखस्स सम्बोधसुखस्स निकामलाभी अस्स अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, यस्साहं नेक्खम्मसुखस्स पविवेकसुखस्स उपसमसुखस्स [B.155] सम्बोधसुखस्स निकामलाभी अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, सो तं मीळ्हसुखं मिद्धसुखं लाभसक्कारसिलोकसुखं सादियेय्या" ति।

"अधिवासेतु दानि, भन्ते, भगवा। अधिवासेतु सुगतो। अधिवासनकालो दानि, भन्ते, भगवतो। येन येनेव दानि, भन्ते, भगवा गमिस्सति तन्निन्ना व भविस्सन्ति ब्राह्मणगहपतिका नेगमा चेव जानपदा च। सेय्यथापि, भन्ते, थुल्लफुसितके देवे वस्सन्ते [R.342] यथानिन्नं उदकानि पवत्तन्ति; एवमेव खो, भन्ते, येन येनेव दानि भगवा गमिस्सति तन्निन्ना व भविस्सन्ति ब्राह्मणगहपतिका नेगमा चेव जानपदा च। तं किस्स हेतु? तथा हि, भन्ते, भगवतो सीलपञ्ञाणं" ति।

३. "माहं, नागित, यसेन समागमं, मा च मया यसो। यो खो, नागित, नयिमस्स नेक्खम्मसुखस्स पविवेकसुखस्स उपसमसुखस्स सम्बोधसुखस्स निकामलाभी अस्स अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, यस्साहं नेक्खम्मसुखस्स पविवेकसुखस्स उपसमसुखस्स

---

थे। तब भगवान् ने आयुष्मान् नागित को बुलाकर पूछा—"नागित! ये कौन लोग बाह्य द्वार पर इतना तीव्र कोलाहल कर रहे हैं, मानो केवटों का मछली बाजार लगा हुआ हो।"

"भन्ते! ये इच्छानङ्गलवासी बहुत से ब्राह्मण गृहपति प्रभूत (अत्यधिक) खाद्य भोज्य पदार्थ तैयार कराकर आपको तथा भिक्षुसङ्घ को दान करने हेतु यहाँ लाये हैं। वे ही बहिर्द्वार पर खड़े होकर ऐसा कोलाहल कर रहे हैं।"

"नागित! मैं यश से बँधा हुआ नहीं हूँ, न यश ही मुझसे बँधा हुआ है। नागित! जो इस स्वत:प्राप्त सुख, एकान्त साधनासुख, शान्तिसुख एवं ज्ञानसुख का पूर्ण लाभी न हो वही इस मलिन सुख वाले लौकिक लाभ, सत्कार एवं यश के बन्धन में फँसे। मैं तो उक्त निष्कामसुख, एकान्त-साधनासुख, शान्तिसुख एवं ज्ञानसुख का पूर्ण लाभी हूँ, अत: मुझको इस तुच्छ लौकिक लाभ, सत्कार एवं यश की कुछ भी आवश्यकता नहीं है।"

"भन्ते! भगवान् अभी आप इसे स्वीकार कर लें। सुगत! इसे स्वीकार कर लें। यह स्वीकार करने का समय है। भन्ते! लोक में आप जैसा आचरण करेंगे, लोक (ये ब्राह्मण गृहपति) भी आपका अनुकरण करते हुए वही आचरण करेंगे। जैसे, भन्ते! तीव्र मेघ-वर्षा से गिरा हुआ जल नीचे की ओर ही जाता है; उसी प्रकार भगवान् जो आचरण करेंगे, लोक भी उसी का अनुकरण करेगा। ये ब्राह्मण गृहपति और यहाँ के निगमों तथा ग्रामों के वासी भी वैसा ही आचरण करेंगे। वह किसलिये? क्योंकि आपका आचरण आदर्श (अनुकरणीय) माना जाता है।"

३. "नहीं, नागित! नहीं; मैं यश से बँधा हुआ नहीं हूँ।...पूर्ववत्...।

सम्बोधसुखस्स निकामलाभी अकिच्छलाभी अकसिरलाभी, सो तं मीळ्हसुखं मिद्धसुखं लाभसक्कारसिलोकसुखं सादियेय्य।

४. "देवता पि खो, नागित, एकच्चा नयिमस्स नेक्खम्मसुखस्स पविवेकसुखस्स उपसमसुखस्स सम्बोधसुखस्स निकामलाभिनियो अस्सु अकिच्छलाभिनियो अकसिर-लाभिनियो, यस्साहं नेक्खम्मसुखस्स पविवेकसुखस्स उपसमसुखस्स निकाम- [N.424] लाभी अकिच्छलाभी अकसिरलाभी। तुम्हाकं पि खो, नागित, सङ्गम्म समागम्म सङ्गणिक-विहारं अनुयुत्तानं विहरतं एवं होति—'न हि नूनमे आयस्मन्तो इमस्स नेक्खम्मसुखस्स पविवेकसुखस्स उपसमसुखस्स सम्बोधसुखस्स निकामलाभिनो अस्सु अकिच्छलाभिन अकसिरलाभिनो, यस्साहं नेक्खम्मसुखस्स पविवेकसुखस्स उपसमसुखस्स सम्बोध-सुखस्स निकामलाभी अकिच्छलाभी अकसिरलाभी। तथा हि पन मे [B.156,R.343] आयस्मन्तो सङ्गम्म समागम्म सङ्गणिकविहारं अनुयुत्ता विहरन्ति।

५. "इधाहं, नागित, भिक्खु पस्सामि अञ्ञमञ्ञं अङ्गुलिपतोदकेन सञ्जग्घन्ते सङ्कीळन्ते। तस्स मय्हं, नागित, एवं होति—'न हि नूनमे आयस्मन्तो इमस्स नेक्खम्म-सुखस्स पविवेकसुखस्स उपसमसुखस्स सम्बोधसुखस्स निकामलाभिनो अस्सु अकिच्छ-लाभिनो अकसिरलाभिनो, यस्साहं नेक्खम्मसुखस्स पविवेकसुखस्स उपसमसुखस्स सम्बोधसुखस्स निकामलाभी अकिच्छलाभी अकसिरलाभी। तथा हि पनमे आयस्मन्तो अञ्ञमञ्ञं अङ्गुलिपतोदकेन सञ्जग्घन्ति सङ्कीळन्ति।

६. "इध पनाहं, नागित, भिक्खू पस्सामि यावदत्थं उदरावदेहकं भुञ्जित्वा सेय्यसुखं पस्ससुखं मिद्धसुखं अनुयुत्ते विहरन्ते। तस्स मय्हं, नागित, एवं होति—'न हि नूनमे आयस्मन्तो इमस्स नेक्खम्मसुखस्स पविवेकसुखस्स उपसमसुखस्स सम्बोधसुखस्स निकामलाभिनो अस्सु अकिच्छलाभिनो अकसिरलाभिनो, यस्साहं नेक्खम्मसुखस्स पविवेकसुखस्स उपसमसुखस्स सम्बोधसुखस्स निकामलाभी अकिच्छलाभी अकसिर-

---

४. "नागित! यहाँ अच्छे अच्छे प्रभावशाली देवता भी इस स्वत:प्राप्त सुख ...पूर्ववत्... के लाभी नहीं है जो मुझको प्राप्त है। नागित! तुम लोगों को भी यह अनुभव होता होगा कि जनसमूह में आते जाते रहने के कारण तुम लोगों को भी यह स्वत:प्राप्त सुख ...पूर्ववत्... उपलब्ध नहीं है जो मुझको (एकान्तवास के कारण) उपलब्ध है; क्योंकि तुम लोग प्राय: जनसमूह से सम्पृक्त रहते हो। (१)

५. "नागित! यहाँ मैं भिक्षुओं को, एक दूसरे को अंगुलियों से बींधते हुए परस्पर हास परिहास करते हुए, देखता हूँ। उनको देखकर नागित मुझे यह विचार होता है—'अवश्य ही ये आयुष्मान् उस स्वत:प्राप्त सुख के उतने लाभी नहीं हैं, जितना... मैं हूँ'; क्योंकि ये एक दूसरे को अंगुलियों से बींधते हुए परस्पर हास परिहास करते रहते हैं।

६. "नागित! यहाँ मैं कुछ ऐसे भिक्षुओं को देखता हूँ जो भरपेट खाकर, मञ्च पर आलस्यवश

लाभी। तथा हि पन मे आयस्मन्तो यावदत्थं उदरावदेहकं भुञ्जित्वा सेय्यसुखं पस्ससुखं मिद्धसुखं अनुयुत्ता विहरन्ति।

७. ''इधाहं, नागित, भिक्खुं पस्सामि गामन्तविहारिं समाहितं निसिन्नं। तस्स मय्हं, नागित, एवं होति—'इदानि इमं आयस्मन्तं आरामिको वा उपट्ठहिस्सति समणुद्देसो वा। [N.425, R.344] तं तम्हा समाधिम्हा चावेस्सती' ति। तेनाहं, नागित, तस्स भिक्खुनो न अत्तमनो होमि गामन्तविहारेन।

८. ''इध पनाहं, नागित, भिक्खुं पस्सामि आरञ्ञकं अरञ्ञे पचलायमानं निसिन्नं। तस्स मय्हं, नागित, एवं होति—'इदानि अयमायस्मा इमं निद्दाकिलमथं पटिविनोदेत्वा [B.157] अरञ्ञसञ्ञंयेव मनसि करिस्सति एकत्तं' ति। तेनाहं, नागित, तस्स भिक्खुनो अत्तमनो होमि अरञ्ञविहारेन।

९. ''इध पनाहं, नागित, भिक्खुं पस्सामि आरञ्ञकं अरञ्ञे असमाहितं निसिन्नं। तस्स मय्हं, नागित, एवं होति—'इदानि अयमायस्मा असमाहितं वा चित्तं समादहिस्सति, समाहितं वा चित्तं अनुरक्खिस्सती' ति। तेनाहं, नागित, तस्स भिक्खुनो अत्तमनो होमि अरञ्ञविहारेन।

१०. ''इध पनाहं, नागित, भिक्खुं पस्सामि आरञ्ञकं अरञ्ञे समाहितं निसिन्नं। तस्स मय्हं, नागित, एवं होति—'इदानि अयमायस्मा अविमुत्तं वा चित्तं विमुच्चिस्सति, विमुत्तं वा चित्तं अनुरक्खिस्सती' ति। तेनाहं, नागित, तस्स भिक्खुनो अत्तमनो होमि अरञ्ञविहारेन।

११. ''इध पनाहं, नागित, भिक्खुं पस्सामि गामन्तविहारिं लाभिं चीवरपिण्डपात-

---

करवटें बदलते हुए साधना करते हैं। उनको देखकर भी मुझको ऐसा लगता है—'ये इस स्वत: प्राप्त सुख ...पूर्ववत्... का उतना लाभ नहीं कर पाते हैं, जितना... सुख का लाभ मुझको हो रहा है।'

७. ''नागित! जब मैं किसी भिक्षु को ग्राम के बाहर समाधिनिष्ठ देखता हूँ तब उसको देखकर मुझको यह होता है—'अभी इसके पास कोई आराम में रहने वाला भिक्षु या कोई श्रमणोद्देश आ जायगा और वह इसको समाधि से च्युत कर देगा।' अत: नागित! मैं उस भिक्षु की ग्राम के बाहर की जाती हुई इस साधना से सन्तुष्ट नहीं होता।

८. (परन्तु) ''नागित! मैं जब ऐसे किसी आरण्यक भिक्षु को अरण्य में तन्द्रामग्न हुए बैठे देखता हूँ तब उसे देखकर मुझको यह होता है—'अब यह आयुष्मान् अपने निद्राजन्य आलस्य को त्याग कर अरण्यसंज्ञा की ही एकान्तत: भावना करेगा।' नागित! उस भिक्षु की इस अरण्यसाधना से मैं सन्तुष्ट होता हूँ।

९. ''नागित! जब मैं किसी आरण्यक भिक्षु को ...पूर्ववत्... 'अब यह अपने असमाहित चित्त को समाहित कर लेगा'। नागित! मैं उसकी इस आरण्यसाधना से सन्तुष्ट होता हूँ।

१०. ''नागित! जब मैं देखता हूँ किसी आरण्यक भिक्षु को ...पूर्ववत्... अविमुक्त चित्त को मुक्त कर लेगा'। नागित! मैं उसकी इस अरण्यसाधना से सन्तुष्ट होता हूँ।

सेनासनगिलानप्पचचयभेसज्जपरिक्खारानं। सो तं लाभसक्कारसिलोकं निकामयमानो रिञ्चति पटिसल्लानं, रिञ्चति अरञ्ञवनपत्थानि पन्तानि सेनासनानि; गामनिगमराजधानिं ओसरित्वा वासं कप्पेति। तेनाहं, नागित, तस्स भिक्खुनो न अत्तमनो होमि गामन्तविहारेन।

१२. "इध पनाहं, नागित, भिक्खुं पस्सामि आरञ्ञकं लाभिं चीवरपिण्डापत-सेनासनगिलानप्पच्चयभेसज्जपरिक्खारानं। सो तं लाभसक्कारसिलोकं पटिपणामेत्वा न रिञ्चति पटिसल्लानं, न रिञ्चति अरञ्ञवनपत्थानि पन्तानि सेनासनानि। तेनाहं, नागित, तस्स भिक्खुनो अत्तमनो होमि अरञ्ञविहारेन।

१३. "यस्माहं, नागित, समये अद्धानमग्गप्पटिपन्नो न कञ्चि पस्सामि पुरतो वा पच्छतो वा, फासु मे, नागित, तस्मिं समये होति अन्तमसो उच्चारपस्सावकम्माय" ति॥ ●

७. **पत्तनिकुज्जनसुत्तं** : १. "अट्ठहि, भिक्खवे, अङ्गेहि [B.158,R.345] समन्नागतस्स उपासकस्स आकङ्खमानो सङ्घो पत्तं निक्कुज्जेय्य। कतमेहि अट्ठहि? भिक्खूनं अलाभाय परिसक्कति, भिक्खूनं अनत्थाय परिसक्कति, भिक्खूनं अवासाय परिसक्कति, भिक्खू अक्कोसति परिभासति, भिक्खू भिक्खूहि भेदेति, बुद्धस्स अवण्णं भासति, धम्मस्स अवण्णं भासति, सङ्घस्स अवण्णं भासति। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहङ्गेहि समन्नागतस्स उपासकस्स आकङ्खमानो सङ्घो पत्तं निक्कुज्जेय्य।

२. "अट्ठहि, भिक्खवे, अङ्गेहि समन्नागतस्स उपासकस्स आकङ्खमानो सङ्घो पत्तं

---

११. "नागित! मैं किसी भिक्षु को ग्राम से बाहर साधना करते हुए भी चीवर, पिण्डपात, शयनासन आदि का लाभ प्राप्त करते देखता हूँ। वह उस चीवर आदि के लाभ में ही सुख मानता हुआ साधना में ढीला पड़ जाता है, तब उसको अरण्य के वास या एकान्त शयनासन में कोई रुचि नहीं रह जाती और वह ग्राम, निगम या किसी बड़े नगर (राजधानी) जाकर रहने लगता है। नागित! उस भिक्षु के इस क्रियाकलाप से मैं सन्तुष्ट नहीं होता।

१२. "नागित! मैं किसी आरण्यक भिक्षु को चीवर, पिण्डपात, शयनासन आदि का लाभ प्राप्त करते देखता हूँ। वह उस लाभ-सत्कार से मन हटाकर अपनी एकान्तसाधना में ही लगा रहता है। अरण्य, वनप्रस्थ एवं एकान्त शयनासन को भी नहीं छोड़ता। ऐसे भिक्षु की अरण्यसाधना से मैं सन्तुष्ट होता हूँ।

१३. "नागित! जब मुझको मार्ग में चारिका करते हुए मल एवं मूत्र के उत्सर्जन की इच्छा होती है, तब यदि मैं अपने आगे पीछे किसी को न देखूँ तो मुझको उक्त क्रियाएँ करने में सुविधा होती है॥" ●

**७. पात्रनिकुज्जनसूत्र : : आठ अङ्गों से युक्त उपासक का सङ्घ से बहिष्कार करना**

१. "भिक्षुओ! आठ अङ्गों से युक्त उपासक का, सङ्घ यदि चाहे तो, पात्र उलटा कर सकता है। (सङ्घ से निकाल सकता है।) किन आठ अङ्गों से? जो भिक्षुओं की हानि का, भिक्षुओं को वासविहीन करने का प्रयत्न करता है, भिक्षुओं की निन्दा या उनको अपशब्द बोलता है, एक भिक्षु का दूसरे भिक्षु से कलह कराता है, बुद्ध की निन्दा करता है, धर्म की निन्दा करता है, सङ्घ की निन्दा

उक्कुज्जेय्य। कतमेहि अट्ठहि? न भिक्खूनं अलाभाय परिसक्कति, न भिक्खूनं अनत्थाय परिसक्कति, न भिक्खूनं अवासाय परिसक्कति, न भिक्खू अक्कोसति परिभासति, न भिक्खू भिक्खूहि भेदेति, बुद्धस्स वण्णं भासति, धम्मस्स वण्णं भासति, सङ्घस्स वण्णं भासति। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहङ्गेहि समन्नागतस्स उपासकस्स आकङ्खमानो सङ्घो पत्तं उक्कुज्जेय्या'' ति॥ ●

**८. अप्पसादपवेदनीयसुत्तं** : १. ''अट्ठहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतस्स भिक्खुनो आकङ्खमाना उपासका अप्पसादं पवेदेय्युं। कतमेहि अट्ठहि? गिहीनं अलाभाय परिसक्कति, गिहीनं अनत्थाय परिसक्कति, गिही अक्कोसति परिभासति, गिही गिहीहि भेदेति, बुद्धस्स अवण्णं भासति, धम्मस्स अवण्णं भासति, सङ्घस्स अवण्णं भासति, अगोचरे च नं [N.427] पस्सन्ति। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहिं धम्मेहि समन्नागतस्स भिक्खुनो आकङ्खमाना उपासका अप्पसादं पवेदेय्युं।

[R.346] २. ''अट्ठहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतस्स भिक्खुनो आकङ्खमाना उपासका पसादं पवेदेय्युं। कतमेहि अट्ठहि? न गिहीनं अलाभाय परिसक्कति, न गिहीनं अनत्थाय परिसक्कति, न गिही अक्कोसति परिभासति, न गिही गिहीहि भेदेति, बुद्धस्स वण्णं भासति, [R.347] धम्मस्स वण्णं भासति, सङ्घस्स वण्णं भासति, गोचरे च नं पस्सन्ति। इमेहि खो,

---

करता है—भिक्षुओ! इन आठ अङ्गों से युक्त किसी उपासक का, सङ्घ यदि चाहे तो, पात्र उलट सकता है। (क)

२. ''भिक्षुओ! आठ अङ्गों से युक्त उपासक का, सङ्घ यदि चाहे तो, पात्र सीधा कर सकता है (उसे सङ्घ में मिला सकता है।) किन आठ अङ्गों से? जो (उपासक) भिक्षुओं की हानि का, भिक्षुओं के अनर्थ का, भिक्षुओं को वासहीन करने का प्रयत्न नहीं करता, भिक्षुओं की निन्दा नहीं करता, न उनको अपशब्द बोलता है, एक भिक्षु का दूसरे भिक्षु से कलह नहीं कराता, बुद्ध, धर्म एवं सङ्घ की निन्दा नहीं करता। ऐसे आठ अङ्गों से युक्त उपासक का, सङ्घ यदि चाहे तो, पात्र सीधा कर सकता है॥'' (ख) ●

**८. अप्रसादवेदनीयसूत्र : : आठ अङ्गों से युक्त भिक्षु के प्रति अप्रसाद बोधन**

१. ''भिक्षुओ! आठ अङ्गों से युक्त भिक्षु के प्रति, उपासक यदि चाहें तो, अपना असन्तोष (अप्रसाद) प्रकट कर सकते हैं। किन आठ अङ्गों से? गृहस्थों की हानि का, या उन के अनर्थ का प्रयास करता है, गृहस्थों की निन्दा करता है, या उनको अपशब्द बोलता है, एक गृहस्थ का दूसरे गृहस्थ से कलह कराता है, बुद्ध, धर्म एवं सङ्घ की निन्दा करता है, या उस भिक्षु को, भिक्षु के लिये अनुचित स्थानों पर, देखता है। भिक्षुओ! इन आठ अङ्गों से युक्त भिक्षु के प्रति, उपासक यदि चाहें तो अपना असन्तोष प्रकट कर सकते हैं। (क)

२. भिक्षुओ! आठ अङ्गों से युक्त भिक्षु के प्रति, यदि उपासक चाहें तो, अपना सन्तोष प्रकट कर सकते हैं। किन आठ अङ्गों से? जो (भिक्षु) गृहस्थों की हानि, या उन के अनर्थ के लिये प्रयत्न नहीं करता, न किसी गृहस्थ की निन्दा या किसी को अपशब्द नहीं बोलता, न एक गृहस्थ का दूसरे

भिक्खवे, अट्ठहि धम्मेहि समन्नागतस्स भिक्खुनो आकङ्खमाना उपासका पसादं पवेदेय्युं'' ति॥ ●

**९. पटिसारणीयसुत्तं** : १. ''अट्ठहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतस्स भिक्खुनो आकङ्खमानो सङ्घो पटिसारणीयकम्मं करेय्य। कतमेहि अट्ठहि? गिहीनं अलाभाय परिसक्कति, गिहीनं अनत्थाय परिसक्कति, गिही अक्कोसति परिभासति, गिही गिहीहि भेदेति, बुद्धस्स अवण्णं भासति, धम्मस्स अवण्णं भासति, सङ्घस्स अवण्णं भासति, धम्मिकं च गिहिपटिस्सवं न सच्चापेति। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहि धम्मेहि समन्नागतस्स भिक्खुनो आकङ्खमानो सङ्घो पटिसारणीयं कम्मं करेय्य।

२. ''अट्ठहि, भिक्खवे, धम्मेहि समन्नागतस्स भिक्खुनो आकङ्खमानो सङ्घो पटिसारणीयकम्मं पटिप्पस्सम्भेय्य। कतमेहि अट्ठहि? न गिहीनं अलाभाय परिसक्कति, न गिहीनं अनत्थाय परिसक्कति, न गिही अक्कोसति परिभासति, न गिही गिहीहि भेदेति, बुद्धस्स वण्णं भासति, धम्मस्स वण्णं भासति, सङ्घस्स वण्णं भासति, धम्मिकं च [R.347] गिहिपटिस्सवं सच्चापेति। इमेहि खो, भिक्खवे, अट्ठहि धम्मेहि समन्नागतस्स भिक्खुना आकङ्खमानो सङ्घो पटिसारणीयकम्मं पटिप्पस्सम्भेय्या'' ति॥ ●

**१०. सम्मावत्तनसुत्तं** : १. ''तस्सपापियसिककम्मकतेन, भिक्खवे, [N.428] भिक्खुना अट्ठसु धम्मेसु सम्मा वत्तितब्बं—न उपसम्पादेतब्बो, न निस्सयो दातब्बो, न

---

गृहस्थ से कलह कराता है, बुद्ध, धर्म एवं सङ्घ की निन्दा नहीं करता, और जो उचित स्थानों पर ही दिखायी पड़ता है। भिक्षुओ! इन आठ अङ्गों से युक्त भिक्षु के प्रति, उपासक चाहें तो, सन्तोष प्रकट कर सकते हैं॥'' (ख) ●

**९. प्रतिसारणीयसूत्र : : आठ अङ्गों से युक्त भिक्षु का प्रतिसारणीय कर्म**

१. ''भिक्षुओ! आठ धर्मों से युक्त भिक्षु का सङ्घ यदि प्रतिसारण कर्म (सङ्घ में बोलचाल बन्द) करना चाहे तो कर सकता है। किन आठ धर्मों से? जो गृहस्थों की हानि के लिये, अनर्थ के लिये यत्न करता है, जो गृहस्थों को अपशब्द बोलता है, या उनकी निन्दा करता है, एक गृहस्थ का दूसरे गृहस्थ के मतभेद कराता है, बुद्ध, धर्म एवं सङ्घ की निन्दा करता है, गृहस्थ के धार्मिक वचनों का प्रतिश्रवण (स्वीकृति) नहीं करता। भिक्षुओ! ऐसे धर्मों से युक्त भिक्षु का, यदि सङ्घ चाहे तो, प्रतिसारणीय कर्म कर सकता है।

२. भिक्षुओ! आठ धर्मों से युक्त भिक्षु का, सङ्घ यदि चाहे तो, प्रतिसारणीय कर्म रोक सकता है। किन आठ धर्मों से? जो गृहस्थों की हानि या अनर्थ के लिये प्रयत्न नहीं करता, गृहस्थों की निन्दा या उनको अपशब्द नहीं बोलता, एक गृहस्थ का दूसरे गृहस्थ से मतभेद नहीं कराता, बुद्ध, धर्म एवं सङ्घ की निन्दा नहीं करता, तथा गृहस्थ के धार्मिक वचनों का प्रनिश्रवण करता है। भिक्षुओ! इन आठ धर्मों से युक्त भिक्षु का, सङ्घ यदि चाहे तो, प्रतिंसारणीय कर्म रोक सकता है।''●

**१०. सम्यग्वर्तनसूत्र : : आठ धर्मों से युक्त सम्यग्व्यवहार**

१. ''भिक्षुओ! तस्यपापीयसिका कर्म के अपराधी भिक्षु के साथ इन आठ धर्मों में यह

सामणेरो उपट्ठापेतब्बो, न भिक्खुनोवादकसम्मुति सादितब्बा, सम्मतेन पि भिक्खुनियो न ओवदितब्बा, न काचि सङ्घसम्मुति सादितब्बा, न किस्मिञ्चि पच्चेकट्ठाने ठपेतब्बो, न च तेन मूलेन वुट्ठापेतब्बो। तस्सपापियसिककम्मकतेन, भिक्खवे, भिक्खुना इमेसु अट्ठसु धम्मेसु सम्मावत्तितब्बं'' ति॥ ●

सतिवग्गो नवमो॥

**तस्सुद्दानं**

[B.160] सतिपुण्णियमूलेन, चोरसमणेन पञ्चमं।
यसो पत्तप्पसादेन, पटिसारणीयं च वत्तनं ति॥ ●

## १०. सामञ्ञवग्गो

**१-२६.** अथ खो बोज्झा उपासिका, सिरीमा, पदुमा, सुतना, मनुजा, उत्तरा, मुत्ता, [R.348] खेमा, रुची, चुन्दी, बिम्बी, सुमना, मल्लिका, तिस्सा, तिस्समाता, सोणा, सोणाय

---

सम्यग्वर्तन (सम्यग्व्यवहार=उचित व्यवहार) करना चाहिये—१. उसको उपसम्पदा (सङ्घ के द्वारा दी जानेवाली धर्माचरण की शिक्षा) नहीं देनी चाहिये, २. उसको निश्रय (आश्रय=संरक्षण) नहीं देना चाहिये, ३. श्रामणेर हो तो उसको अपना उपस्थायक (परिचायक) नहीं बनाना चाहिये, ४. ऐसे भिक्षु को भिक्षुणियों को धर्मोपदेश करने की अनुमति नहीं देनी चाहिये, ५. सहमति प्राप्त होने पर भी भिक्षुणियों को धर्मोपदेश नहीं करने देना चाहिये, ६. सङ्घ को उससे सामान्य परामर्श भी नहीं करना चाहिये, ७. न किसी भी प्रत्येक स्थान में उसको बैठाना चाहिये; ८. परन्तु उसको मूल अधिकार से नहीं हटाना चाहिये। इस प्रकार तस्यपापीयसिक कर्म के अपराधी भिक्षु के साथ इन आठ धर्मों में यह सम्यग्वर्तन करना चाहिये॥'' **स्मृतिवर्ग नवम सम्पन्न॥** ●

**इस सूत्र ( में व्याख्यात सूत्रों ) की सूची**

१. स्मृतिसम्प्रजन्यसूत्र, २. पुण्णियसूत्र, ३. मूलकसूत्र, ४. चोरसूत्र, ५. श्रमणसूत्र, ६. यशःसूत्र, ७. पात्रनिकुज्जनसूत्र, ८. अप्रसादवेदनीयसूत्र, ९. प्रतिसारणीयसूत्र, एवं १० सम्यग्वर्तनसूत्र॥ ●

## १०. श्रामण्यवर्ग

१.-२६. १. ''बोध्या उपासिका, २. सिरीमा उपासिका, ३. पद्मा उपासिका, ४. सुतना उपासिका, ५. मनुजा उपासिका, ६. उत्तरा उपासिका, ७. मुक्ता उपासिका, ८. क्षेमा उपासिका, ९. रुचि उपासिका, १०. चुन्दी उपासिका, ११. बिम्बी उपासिका, १२. सुमना उपासिका, १३. मल्लिका उपासिका, १४. तिष्या उपासिका, १५. तिष्यमाता उपासिका, १६. सोणा उपासिका,

माता, काणा, काणमाता, उत्तरा नन्दमाता, विसाखा मिगारमाता, खुज्जुत्तरा उपासिका, सामावती उपासिका, सुप्पवासा कोलियधीता, सुप्पिया उपासिका, नकुलमाता गहपतानी॥

**सामञ्ञवग्गो दसमो॥**

**दुतियो पण्णासको समत्तो॥ ●**

## ११. रागपेय्यालं

१. "रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय अट्ठ धम्मा भावेतब्बा। कतमे [N.429. B.161] अट्ठ? सम्मादिट्ठि, सम्मासङ्कप्पो, सम्मावाचा, सम्माकम्मन्तो, सम्माआजीवो, सम्मा-वायामो, सम्मासति, सम्मासमाधि—रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय इमे अट्ठ धम्मा भावेतब्बा" ति॥

२. "रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय अट्ठ धम्मा भावेतब्बा। कतमे अट्ठ? अज्झत्तं रूपसञ्ञी बहिद्धा रूपानि पस्सति परित्तानि सुवण्णदुब्बण्णानि, तानि अभिभुय्य 'जानामि पस्सामी' ति एवंसञ्ञी होति। अज्झत्तं रूपसञ्ञी बहिद्धा रूपानि पस्सति अप्पमाणानि सुवण्णदुब्बण्णानि, तानि अभिभुय्य 'जानामि पस्सामी' ति एवंसञ्ञी होति। अज्झत्तं अरूपसञ्ञी बहिद्धा रूपानि पस्सति परित्तानि सुवण्णदुब्बण्णानि, तानि अभिभुय्य 'जानामि पस्सामी' ति एवंसञ्ञी होति। अज्झत्तं अरूपसञ्ञी बहिद्धा रूपानि पस्सति अप्पमाणानि सुवण्णदुब्बण्णानि, तानि अभिभुय्य 'जानामि पस्सामी' ति एवंसञ्ञी होति। अज्झत्तं अरूपसञ्ञी बहिद्धा रूपानि पस्सति नीलानि नीलवण्णानि नीलनिदस्सनानि [R.349]

---

१७. सोणा की माता, १८. काणा, १९. काणा की माता, २०. उत्तरा नन्दमाता, २१. विशाखा मृगारमाता, २२. कुब्जत्तरा उपासिका, २३. सामावती उपासिका, २४. सुप्रवासा कोलियधीता, २५. सुप्रिया उपासिका, २६. नकुलमाता गृहपत्नी॥" ●

**श्रामण्यवर्ग दशम सम्पन्न॥**

**द्वितीय पञ्चाशत्क सम्पन्न॥**

## ११. रागपेय्याल

१. "भिक्षुओ! राग के अभिज्ञान के लिये आठ धर्मों की भावना करनी चाहिये। कौन से आठ? (१) सम्यग्दृष्टि...पूर्ववत्... सम्यक्समाधि—भिक्षुओ! राग के अभिज्ञान के लिये इन आठ धर्मों की भावना करनी चाहिये।

२. "राग के अभिज्ञान के लिये इन आठ धर्मों की भावना करनी चाहिये। कौन से आठ? भिक्षुओ! कोई पुरुष अध्यात्म में रूपसंज्ञी होकर बाहर कुछ सुवर्ण या दुर्वर्ण रूपों को देखता है। वह 'उनको अभिभूत (लुप्त) कर जानता हूँ, देखता हूँ'—ऐसी संज्ञा वाला होता है। (१)

नीलनिभासानि ...पे०... पीतानि पीतवण्णानि ...पे०... लोहितकानि लोहितवण्णानि ...पे० ... ओदातानि ओदातवण्णानि ...पे०... ओदातनिभासानि, तानि अभिभुय्य 'जानामि पस्सामी' ति एवंसञ्ञी होति—रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय इमे अट्ठ धम्मा भावेतब्बा"॥

३. "रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय अट्ठ धम्मा भावेतब्बा। कतमे अट्ठ? रूपी रूपानि पस्सति, अज्झत्तं अरूपसञ्ञी बहिद्धा रूपानि पस्सति, सुभं तेव अधिमुत्तो होति, सब्बसो रूपसञ्ञानं समतिक्कमा पटिघसञ्ञानं अत्थङ्गमा नानत्तसञ्ञानं अमनसिकारा 'अनन्तो आकासो' ति आकासानञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति, सब्बसो आकासानञ्चायतनं समतिक्कम्म 'अनन्तं विञ्ञाणं' ति विञ्ञाणञ्चायतनं उपसम्पज्ज विहरति, सब्बसो

---

"भिक्षुओ! कोई पुरुष अध्यात्म में रूपसंज्ञी होकर बाहर अप्रमाण (अत्यधिक) सुवर्ण या दुर्वर्ण रूपों को देखता है। वह ...पूर्ववत्...। (२)

"कोई पुरुष अध्यात्म में अरूपसंज्ञी होकर बाहर कुछ सुवर्ण दुर्वण रूपों को देखता है। वह ...पूर्ववत्...। (३)

"कोई पुरुष अध्यात्म में अरूपसंज्ञी बाहर अत्यधिक (अप्रमाण) सुवर्ण एवं दुर्वर्ण रूपों को देखता है। वह ...पूर्ववत्...। (४)

"कोई पुरुष अध्यात्म में अरूपसंज्ञी होकर नील, नीलवर्ण, नीलनिदर्शन एवं नीलनिर्भास रूपों को देखता है। वह ...पूर्ववत्...। (५)

"कोई पुरुष अध्यात्म में अरूपसंज्ञी होकर पीत, पीतवर्ण, पीतनिदर्शन एवं पीतनिर्भास रूपों को देखता है। वह ...पूर्ववत्...। (६)

"कोई पुरुष अध्यात्म में अरूपसंज्ञी होकर लोहित (रक्त) लोहितवर्ण, लोहितनिदर्शन एवं लोहितकनिर्भास रूपों को देखता है। वह ...पूर्ववत्...। (७)

"कोई पुरुष अध्यात्म में अरूपसंज्ञी होकर अवदात (श्वेत), अवदातवर्ण, अवदातनिदर्शन, एवं अवदातनिर्भास रूपों को देखता है। वह...पूर्ववत्...। (८)

"इस प्रकार, भिक्षुओ! राग के ज्ञान के लिये आठ धर्मों की भावना करनी चाहिये॥"

३. "राग के अभिज्ञान के लिये इन आठ धर्मों की भावना करनी चाहिये। कौन से आठ धर्म?

"स्वयं रूपवान् होता हुआ रूपों को देखता है। (१)

"कोई अध्यात्म में अरूपसंज्ञी होकर बाहर रूपों को देखता है। (२)

"कोई शुभ (शुभ्र=उज्ज्वल) ही से मुक्त (अधिमुक्त) हुआ होता है। (३)

"कोई रूपसंज्ञाओं को सर्वथा अतिक्रान्त कर, प्रतिघसंज्ञा के अस्त हो जाने से नानात्वसंज्ञाओं को मन में न करने से 'आकाश अनन्त है'—इस आकाशानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। (४)

"कोई इस आकाशानन्त्यायतन को भी सर्वथा अतिक्रान्त कर 'विज्ञान अनन्त है'—इस विज्ञानानन्त्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। (५)

विञ्ञाणञ्चायतनं समतिक्कम्म 'नत्थि किञ्ची' ति आकिञ्चञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति, सब्बसो आकिञ्चञ्ञायतनं समतिक्कम्म नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं उपसम्पज्ज विहरति, सब्बसो नेवसञ्ञानासञ्ञायतनं समतिक्कम्म सञ्ञावेदयितनिरोधं उपसम्पज्ज विहरति— रागस्स, भिक्खवे, अभिञ्ञाय इमे अट्ठ धम्मा भावेतब्बा''॥ [N.430] ●

४-३०. ''रागस्स, भिक्खवे, परिञ्ञाय ...पे०... परिक्खयाय... [B.162] पहानाय... खयाय...वयाय...विरागाय...निरोधाय...चागाय...पटिनिस्सग्गाय ...पे०... इमे अट्ठ धम्मा भावेतब्बा''॥

३१-५१०. ''दोसस्स ...पे०... मोहस्स...कोधस्स...उपनाहस्स...मक्खस्स... पलासस्स...इस्साय...मच्छरियस्स...मायाय... साठेय्यस्स... धम्मस्स... सारम्भस्स [R.350] ...मानस्स...अतिमानस्स...मदस्स...पमादस्स अभिञ्ञाय ...पे०... परिञ्ञाय...परिक्खयाय ...पहानाय...खयाय...वयाय...विरागाय...निरोधाय...चागाय...पटिनिस्सग्गाय ...पे०... इमे अट्ठ धम्मा भावेतब्बा'' ति॥ ●

**रागपेय्यालं निट्ठितं॥**

**अट्ठकनिपातपालि निट्ठिता॥**

●

---

''कोई इस विज्ञानानन्त्यायतन को भी सर्वथा अतिक्रान्त कर 'कुछ भी नहीं है'—इस आकिञ्चन्यायतन को प्राप्त कर साधना करता है। (६)

''कोई इस आकिञ्चन्यायतन को भी सर्वथा अतिक्रान्त कर 'न संज्ञा है न असंज्ञा'—इस नैवसंज्ञानासंज्ञायतन को प्राप्त कर साधना करता है। (७)

''तथा कोई इस नैवसंज्ञानासंज्ञायतन को भी सर्वथा अतिक्रान्त कर 'जहाँ संज्ञा ही लुप्त हो जाती है'—इस संज्ञावेदयितनिरोध को प्राप्त कर साधना करता है।

''भिक्षुओ! राग के अभिज्ञान के लिये इन आठ धर्मों की भावना करनी चाहिये॥ (८)

४-३०. ''भिक्षुओ! राग के परिज्ञान के लिये ...पूर्ववत्... परिक्षय के लिये... प्रहाण के लिये... क्षय के लिये... व्यय के लिये... विराग के लिये... निरोध के लिये... त्याग के लिये... प्रतिनिसर्ग के लिये ...पूर्ववत्... इन आठ धर्मों की भावना करनी चाहिये॥

३१-५१०. द्वेष के... मोह के... क्रोध के... उपनाह के... म्रक्ष के... प्रदाश के... ईर्ष्या के... मात्सर्य के... माया के... शाठ्य के.... धर्म के.... सारम्भ के... मान के... अतिमान के... मद के... प्रमाद के अभिज्ञान के लिये ...पूर्ववत्... परिज्ञान के लिये... परिक्षय के लिये... प्रहाण के लिये... क्षय के लिये... व्यय के लिये... विराग के लिये... निरोध के लिये... त्याग के लिये ...पूर्ववत्... इन आठ धर्मों की भावना करनी चाहिये॥'' ●



**रागपेय्याल सम्पन्न॥**

**अष्टकनिपातपालि सम्पन्न॥**

**बौद्धभारती**

**पो. बाक्स नं. 1049, वाराणसी-221 001**

E-mail : bauddhabhrti@satyam.net.in